ख़ान
अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ां

ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ां

लेखक

डी॰ जी॰ तेन्दुलकर

प्रकाशक

सर्वोदय-साहित्य-प्रकाशन

बुलानाला, वाराणसी

समर्पण

जीवनका मूल्यवान समय जेलोंमें और शेष सम्पूर्ण जीवन अनवरत कार्य करनेमें बितानेवाले खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँका जीवन-कार्य और उस संदर्भमेंसे परिस्थितियोंका मूल्यांकन इस पुस्तकमें बहुत ही अच्छे ढंगसे संगृहीत है। वैसे इस पुस्तकका हिन्दी संस्करण बहुत पहले ही प्रकाशित हो जाना चाहिए था, किन्तु अनुवादकी कठिनाइयाँ और प्रकाशनके दूसरे नियमोंके कारण विलम्ब हुआ, फिर भी भारतमें उनके रहते-रहते इसका प्रकाशन हो रहा है, यह गौरवकी बात है।

हमारी नयी पीढ़ी, जिसने गांधीजीको नहीं देखा है, सरहदी गांधीको देखकर यह अवश्य अनुभव करेगी कि गांधी पुनः अपने देशमें लौट आया है। आजकी राजनयिक परिस्थितियों और विषमताओंके बीच, गांधीकी वही भाषा, वही जीवन और वही विचार देनेवाले बादशाह खाँ-को यह देश कभी नहीं भूलेगा। उन्होंने हिन्दुस्तान हो या पख्तूनिस्तान अथवा पाकिस्तान, अपना स्पष्ट मत, खुला विचार तथा खुला जीवन लोगों-के सामने रखा है।

इस पुस्तकमें काल-क्रमानुसार न केवल जीवन-चरित्र ही अपितु पार्श्व-भूमिकी समस्त भूमियोंका मूल्यांकन है। इसके लिए पत्रकार और लेखक श्री जी० डी० तेन्दुलकरके हम आभारी हैं और श्रद्धापूर्वक यह ग्रंथ प्रकाशनकी ओरसे उन्हें अर्पित कर रहे हैं।

वाराणसी
२९-११-१९६९

तरुण भाई
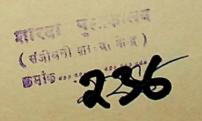
महामानव

"सीमांत गांधी वह महान व्यक्ति हैं जो संकीर्ण वर्गवाद और गुटबन्दी-की परिधिसे बहुत दूर हैं। शान्ति और मानवताके पुजारी हैं। जीवनके शाश्वत मूल्यका पोषण इनके जीवनका सर्वप्रथम लक्ष्य है। ऐसा व्यक्ति समूची मानव जातिकी श्रद्धाका केन्द्र होता है।

यदि संसारमें किसीको महामानवकी संज्ञा दो जा सकती है तो वे हैं खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ क्योंकि वे संकीर्ण वर्गवाद अथवा गुटबन्दोके पोषक न होकर जीवनके शाश्वत मूल्योंके पोषक हैं जिनका हर युगमें महत्त्व रहेगा। वास्तवमें बादशाह खाँ सरलता और नैतिक शुद्धताके अवतार हैं और उनमें वे सभी मानवीय गुण विद्यमान हैं, जिन्हें हम श्रेष्ठ मानते हैं।"

नयी दिल्ली
१५ नवम्बर १९६९

वाराह वेंकट गिरि
(राष्ट्रपति, भारत)
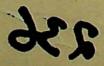
राष्ट्रपति भवन
नई दिल्ली–४
१५ जून १९६७

मुझे इस बातकी बड़ी प्रसन्नता है कि मेरे मित्र श्री डी० जी० तेन्दुलकरने ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके एक प्रामाणिक जीवन-चरित्रकी रचना की है। महात्मा गांधीके जीवन वृत्तपर एक शाश्वत कृतिके प्रणयनसे श्री तेन्दुलकरका नाम विख्यात हो गया है, अतः निश्चित रूपसे प्रस्तुत कृति मौलिक होनेके साथ ही साहित्यिक महत्त्वकी भी सिद्ध होगी।

मानव-प्रयासोंमें जो कुछ भी सत् और महान है, बादशाह ख़ाँ जिस नामसे कि ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ प्यारसे पुकारे जाते हैं, उसके प्रतीक हैं। जहाँ कि हम लोगोंको, जो उनकी पीढ़ीके हैं और जो उनके नेतृत्वमें काम करनेका सौभाग्य प्राप्त कर चुके हैं, बादशाह ख़ाँके त्याग और सेवामय जीवनका परिचय प्राप्त है, वहाँ श्री तेन्दुलकरकी यह पुस्तक तरुण पीढ़ी और भावी पीढ़ियोंके लोगोंको इस बातसे अवगत करायेगी कि कभी बादशाह ख़ाँ नामकी कोई हस्ती थी जिसने जिस बातको सही समझा, उसपर अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया।

मैं आशा करता हूँ कि श्री तेन्दुलकरकी पुस्तक लोकप्रिय होगी।

—ज़ाकिर हुसेन
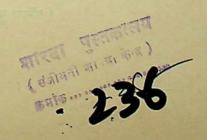
प्रिय श्री तेन्दुलकर,

मैं आपके सभी पत्रोंके लिए आभारी हूँ। आप मेरा जीवन वृत्त और हमारे आन्दोलनका इतिहास लिखनेके लिए जो श्रम कर रहे हैं, उसके लिए भी मैं आपका आभारी हूँ।

आपको अबतक न लिख पानेका कारण मेरी अस्वस्थता और बहुत-सी दूसरी व्यस्तताएँ रही हैं। बहरहाल, मैं इस विलंबके लिए क्षमा-प्रार्थी हूँ।

मेरी याददाश्तमें जितनी पुरानी बातें थीं, उन सबके साथ श्री नारंग आपके पास जा रहे हैं। पाकिस्तानमें मैंने जो जीवन बिताया है उसपर यदि आप कुछ लिखना चाहें, तो मैं आपको लिख भेजूँगा, हालाँकि यह ब्यौरा होगा बड़ा ही दर्दनाक।

मैं आपकी पुस्तकके लिए संदेश भेज दूँगा, जिसकी कि आपने माँग की है। और जिस चीज़की भी आपको ज़रूरत हो, मुझे सूचित करें। ऐसी किसी भी स्थितिमें, मुझे लिखिए अवश्य। मैंने कुछ कारणोंसे पख्तू-निस्तानके विषयमें कुछ कहनेसे किनारा किया है। कुछ समय बाद शायद इस विषयपर कुछ कह सकूँ।

मैं अपने स्नेहके प्रतीकके रूपमें आपके पास अपनी एक तस्वीर दस्त-ख़त करके भेज रहा हूँ और एक मेज़पोश भी भेज रहा हूँ जो मुझे हाल में ही मेरे एक मित्रने दी थी। मैं कभी तोहफ़े क़बूल नहीं करता, मगर महज़ आपके लिए मुझे यह करना पड़ा।

सारी शुभकामनाओं और स्नेहके साथ—

काबुल
५-५-१९६५

ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ

आमुख

आठ जिल्दोंमें महात्मा गांधीकी जीवनी प्रस्तुत करनेमें मुझे एक दशाब्दीसे कुछ अधिक ही समय लगा और खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँपर यह ग्रंथ तैयार करने में मुझे पूरे चार वर्षोंतक व्यस्त रहना पड़ा। वैसे तो मैं राजनीतिज्ञोंको पसंद नहीं करता परंतु इस सरल और अजेय पठानने मुझे आकर्षित कर लिया। मेरे लिए हिंसा या अहिंसा कोई सिद्धांत नहीं है। मैं हो ची मिन्हकी भी उतनी ही सराहना करता हूँ, जितनी कि बादशाह ख़ाँकी। व्यक्तिके कृतित्वको संचालित करनेवाली भावना ही मुझे बरबस अपनी ओर खींचती है।

गांधीजी और खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँ एक दूसरेकी ओर अत्यधिक आकृष्ट हुए। यद्यपि इन दोनोंका परिवेश भिन्न था और लालन-पालन भी बहुत भिन्न प्रकारसे हुआ था परंतु समान परिस्थितियोंमें दोनोंकी प्रतिक्रिया और बातें एक जैसी होती थीं। बादशाह ख़ाँ अपनी जनताके आराध्य है परन्तु उनकी इस लोकप्रियताने उनका मस्तिष्क कभी असंतुलित नहीं किया। वे सत्ता और टीम-टामको अपने पास फटकने नहीं देते। उन्हें तो बस पठानोंको आज़ाद करनेकी तीव्र इच्छा है। वे चाहते हैं कि पठान मानव-समाजकी भलाई करें और एशियाई मामलोंमें सम्मानजनक भूमिका निभायें। उन्हें गुलामीसे नफरत है और उनका हृदय दीन दशाको देखकर रो पड़ता है। अगर उनका वश चले, तो वे इस धरतीपर दमन और अत्याचारको रहने ही न दें। इस्लामका उनके लिए यही अर्थ है। वे एक महान धर्मयोद्धा हैं।

यह भाग्यकी विडंबना है कि विदेशी हुकूमतसे इस उपमहाद्वीपको मुक्त करनेमें बादशाह ख़ाँ अपनी आज़ादीसे वंचित रह गये और उनकी ग़ैरतमंद जनता पख़्तून, सर्वतोमुखी विकासकी संभावनाओंसे दूर रह गये। आज़ादीकी लड़ाईमें उनका और उनकी जनताका अंशदान इतिहासका अंग बन गया है।

पंडित जवाहरलाल नेहरूने मुझे खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँका जीवन-वृत्त तैयार करनेका यह काम अंतिम सौंपा। विभाजनका एक पक्ष होनेके कारण उनको एक चुभन अनुभव हो रही थी। जवाहरलालजी उत्सुक थे कि मैं बादशाह ख़ाँ पर लिखूँ। जीवन-चरित लिख सकूँ इसके लिए उन्होंने मुझे विदेश मंत्रालय और अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीसे संबंधित सामग्री दिलायी और कांग्रेस कार्यकारिणी समितिकी काररवाइयोंके विवरण भी दिलाये। वे मेरे मनोबलके बढ़ाने

में बड़े सहायक थे और उसी आभारको मानते हुए, यह ग्रंथ मैं उनकी स्मृतियों-को अर्पित करता हूँ।

मैंने बादशाह खाँपर लिखते हुए वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण बनाये रखनेकी प्रामाणिक चेष्टा की है। हालमें ही हुए भारत-पाक संघर्षके दरम्यान मैंने प्रेसिडेण्ट अयूब खाँसे लिखकर याचना की कि वे मुझे बादशाह खाँपर सामग्री मुहैया करें। लेकिन मुझे उनसे कोई उत्तर नहीं मिला। मैंने सामग्री एकत्र करनेके लिए हर संभव चेष्टा की है और जिन लोगोंने मुझे प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपसे सामग्री जुटायी है उन सबको मैं धन्यवाद देता हूँ।

मैं श्री आर. आर. दिवाकरका भी आभारी हूँ। उनकी भी राय थी कि मुझे यह काम करना चाहिए। इसके पूर्व हीरक जयंती ग्रंथ और महात्माजीका विस्तृत जीवनचरित लिखनेके लिए भी उन्होंने मुझे प्रेरणा दी थी। गांधी शांति प्रतिष्ठान के अध्यक्ष और विशेषतः एक पुराने मित्र, और नासिक जेलमें साथी होनेके कारण उन्होंने मुझे मदद करनेकी कोशिश की। स्वभावतः मैं किसी समिति या प्रतिष्ठानकी ओरसे कार्य संपन्न करनेवाला नहीं हूँ। बिना उनकी सहायताके मैं गांधी शांति प्रतिष्ठानके साथ शायद चल न सकता।

अपने अनुसंधान कार्यमें मुझे सौभाग्यसे ही के. बी. नारंगकी सहायता मिल गयी जो कि एक समर्पित खुदाई खिदमतगार हैं और पश्चिमोत्तर सीमाप्रांत विधान-सभाके सदस्य रह चुके हैं। उन्होंने नयी दिल्लीके राष्ट्रीय अभिलेखागारमें दस्तावेजोंका अध्ययन करके मुझे महत्त्वपूर्ण आँकड़े दिये। 'पख्तून' में प्रकाशित बादशाह खाँके कुछ भाषणों और लेखोंके अनुवाद भी मेरे लिए उन्होंने किये। बादशाह खाँके सौजन्यसे काबुल लायब्रेरीसे 'पख्तून' के कुछ अंक मिल गये। काबुल में बादशाह खाँसे उनके जीवनकी कुछ घटनाओंका,—विशेषतः प्रारंभिक जीवन का श्रुतलेख प्राप्त करनेका श्रेय भी नारंगजीको है। वे सारी घटनाएँ यहाँ पहली बार प्रकाशित हो रही हैं। वास्तवमें बादशाह खाँने ही मुझे इस पुस्तककी रूप-रेखा प्रस्तुत कर दी। उनके मूल्यवान् सहयोगके लिए मैं उनका आभारी हूँ। उनके पुत्र ग़नीने 'दि पठान्स' नामक लघु गौरवग्रंथ रचा है और मैंने उसका खुलकर उपयोग किया है।

राष्ट्रीय अभिलेखागारके अतिरिक्त, जहाँ कि राष्ट्रीय आन्दोलन संबंधी अभिलेख मिलते हैं, मुझे भूतपूर्व बंबई सरकारके गृहमंत्रालयकी दो पुलिस फाइलें प्राप्त हो गयीं, जिनमें खाँ अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ संबंधी अखबारी कतरनें थीं। मेरे लिए आवश्यक है कि मैं श्री बी. एन. पाठकके प्रति उनके सहयोगके लिए आभार

मानूँ । इसी प्रकार श्री बाबूराव पटेल और सुश्री सुशीला रानीके प्रति मैं आभारी हूँ जिन्होंने मुझे अखबारोंकी कतरनें उधार दीं। 'दि टाइम्स ऑव् इंडिया'के संदर्भ अनुभागने मुझे अपनी संदर्भ-सामग्री और मेरी पुस्तकके लिए छायाचित्र दिये, एतदर्थ मैं उसका आभार मानता हूँ। मैं सर्वश्री पी. के. राय, रमेश संजगीरी, आर. एस. कोलटकर और 'दि टाइम्स ऑव इंडिया'के अन्यान्य लोगोंका ऋणी हूँ, जिनका सहयोग मैंने जब चाहा, मिला।

एशियाटिक लायब्रेरी और बंबई विश्वविद्यालयकी लायब्रेरीके पुस्तकालयाध्यक्ष श्री डी. एन. मार्शलको मैं प्रभूत धन्यवाद देता हूँ, जहाँसे और जिनसे मुझे किताबें बराबर मिलती रहीं।

मैं गांधी शांति प्रतिष्ठानकी प्रकाशन समितिके अन्यतम सदस्य श्री प्यारेलालका आभारी हूँ जिन्होंने 'दि स्टेट्समैन', 'दि इलस्ट्रेटेड वीकली ऑव इंडिया' और 'हरिजन'में प्रकाशित अपने लेखोंका इस्तेमाल करनेकी मुझे अनुमति दी।

प्रस्तुत ग्रंथको तैयार करनेमें मुझे सुश्री अनु बंद्योपाध्यायका शाश्वत सहयोग मिला, जैसा कि 'महात्मा' तैयार करनेमें मिला था। बादशाह खाँके कुछ संस्मरणों और 'पख्तून'में प्रकाशित उनके कुछ लेखोंका उन्होंने नारंगजीकी सहायतासे अनुवाद किया और पश्तो कविताओंका अंग्रेजी अनुवाद भी किया। उन्होंने अनुक्रमणिका बनानेमें भी मेरी सहायता की है।

मेरी पांडुलिपि सर्वश्री डी. एस. बखले, डी. जी. पलेकर, एन. जी. जोग और अनु बंद्योपाध्यायने पढ़ी और उनके सुझावोंके लिए उन्हें मैं धन्यवाद देता हूँ। कुछ अध्यायोंको श्री शामलालने देखा। मैं उन्हें भी धन्यवाद देता हूँ। यद्यपि सुझावोंके लिए मैं अपने मित्रोंका ऋणी हूँ परन्तु पुस्तकके इस रूपमें प्रकाशित होनेके लिए मैं स्वयं उत्तरदायी हूँ।

शब्दावलीके संशोधनके लिए और इस्लामिक शब्दोंके अंग्रेजी अनुवादके लिए मैं डॉ० जाकिर हुसैनका, कानूनी और सांस्कृतिक विषयोंपर परामर्शके लिए वी. एस. बखलेका, मेरे शोधकार्यमें रुचि प्रदर्शित करनेके लिए डॉ. एन. बी. परुलेकरका और श्रीमती इंदिरा गांधी, निर्मलकुमार वसु, पुलिन बिहारी सेन, विश्वरूप बोस, डी. आर. डी. वाडिया, पी. एन. शर्मा, ओ. एन. वर्मा, रामभद्रचारी, रंगाचारी, पी. के. जैन, सदानंद भटकल, रामदास भटकल और वी. आर. नारायणका आभारी हूँ। मैं श्री आर. के. करंजियाको उनसे मिली सहायताके लिए और उनके सहयोगी श्री पी. एस. परशुरामनको हजार पृष्ठोंसे अधिककी पांडुलिपिका टंकण करनेके लिए धन्यवाद देता हूँ।

—डी. जी. तेन्दुलकर

विषय-सूची

प्रस्तावना

खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँको, जिन्हें 'सीमान्त गांधी' के नामसे जाना जाता है, महात्मा गांधी आदरपूर्वक "ईश्वरके पुरुष" कहा करते थे "अपने—उद्देश्यमें अपनी समग्र आत्माको उड़ेलकर भी वे उसके फलकी ओरसे अनासक्त रहते हैं। उनके लिए यह महसूस कर लेना काफ़ी रहा है कि अहिंसाको पूर्ण रूपसे स्वीकार किये बिना पठानकी मुक्ति नहीं है। इस बातमें वे कोई गौरव अनुभव नहीं करते कि पठान अच्छा लड़ाका है। वे उसकी वीरताकी कद्र करते हैं लेकिन उनका विचार है कि अधिक प्रशंसासे उसे बिगाड़ दिया गया है। उनका यह विश्वास है कि पठानको अज्ञानमें रखा गया है। वह पठानको और भी अधिक वीर बनाना चाहते हैं और उससे यह अपेक्षा करते हैं कि वह अपनी वीरतामें सच्चे ज्ञानका समावेश करे। उनका यह खयाल है कि वह ज्ञान केवल अहिंसा द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।"

शरीर और मनके सीधे, विश्वस्त और सरल, कृपालु और सज्जन, निर्भीक, निष्ठावान् और सच्चे, एक मैत्री-भावनासे पूर्ण, तराशे हुए-से चेहरेके, उन्नत व्यक्तित्ववाले तथा लम्बे कष्टों और पीड़ामय परीक्षाओंकी ज्वालामें तपकर निखरे हुए चरित्रवाले खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँ भारतकी स्वाधीनताके हेतु विदेशी सत्ता और शोषणसे लोहा लेनेवाले विशिष्ट सेनानियोंमेंसे एक रहे हैं। एक दर्जन बारसे भी अधिक उनको जेलमें डाला गया—पहले अंग्रेजोंके द्वारा और फिर पाकिस्तानियोंके द्वारा। शांत और उदात्त प्रवृत्तियोंके इस उन्यासी वर्षीय दृढ़-निश्चयी योद्धाको तीस वर्षके जेल-जीवनका श्रेय प्राप्त है। वे झुकेंगे नहीं।

पठानोंकी अदमनीय आत्माका सबसे प्रारम्भका तथा सबसे विशिष्ट प्रसंग उस लड़ाईमें मिलता है जो तक्षशिलाके मैदानमें सिकन्दर और भारतीय साधु दण्डेमिस के बीच हुई थी। प्राचीन यूनानी अभिलेखकारके अनुसार, "यद्यपि वह बूढ़ा और नंगा था तथापि अनेक राष्ट्रोंके विजेता सिकन्दरको उसके रूपमें अपना एकमात्र समबलशाली प्रतिद्वन्द्वी मिला था।" सिकन्दरके दूतोंने उसे ज़ियस[1] के पुत्रके

---

१. यूनानका एक प्रधान पौराणिक देवता।

पास जानेका आमंत्रण दिया। उन्होंने उसे वचन दिया कि यदि वह उनके आमंत्रणको स्वीकार कर लेगा तो उसे उपहार दिये जायँगे और अस्वीकार करनेपर दण्ड दिया जायगा। फिर भी वह साधु सिकन्दरके पास नहीं गया। उसने दूतोंसे कहा कि सिकन्दर ज़ियसका पुत्र नहीं है क्योंकि वह अबतक विश्वके बड़े अर्धांशका स्वामी भी नहीं बना है। जहाँतक उसका अपना सम्बन्ध है, वह किसी ऐसे व्यक्तिसे कोई उपहार ग्रहण नहीं करना चाहता, जिसकी स्वयंकी आकांक्षाएँ अतृप्त हैं। उसने कहा कि उसे धमकियोंका कोई भय नहीं है। यदि वह जीवित रहा तो भारत उसके लिए काफ़ी भोजन देता रहेगा और यदि उसे मार डाला गया तो उसको अपनी बुढ़ापेसे जीर्ण इस कष्टदायिनी कायासे मुक्ति मिल जायगी और वह इसके बदलेमें एक अधिक श्रेष्ठ और पवित्र जीवन पा लेगा।

यह क्षेत्र, पेशावरकी यह घाटी, जो प्राचीन कालमें गंधारके नामसे प्रसिद्ध थी, जहाँ कि एक नग्न साधुने एक शक्ति-सम्पन्न सम्राट्को ललकार दी थी, खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँकी जन्मस्थली है। 'गंधार' शब्द सबसे पहले ऋग्वेदमें प्राप्त होता है। यह शब्द परवर्ती आर्केमीनियन, हेलनिस्टिक और रोमन युगोंके मूल ग्रन्थोंमें भी मिलता है। यह उस भू-खण्डका सूचन करता है जो भारतकी पश्चिमोत्तर सीमापर स्थित था। ऋग्वेदमें इस क्षेत्रके निवासियोंको 'पख्त' कहा गया है। पख्तून या पठान, जैसा कि वे आज कहलाते हैं, उसीका रूप है। पठान अभिधान पख्तूनका भारतीय रूपान्तर है और पुख्तन शब्दका बहुवचन है। पठानों की भाषाके दो मुख्य प्रकारांतर हैं—पख्तू, जो उत्तर-पूर्वी जन-जातियोंमें बोली जाती है और उसका अपेक्षाकृत मृदुरूप पश्तू है जिसका दक्षिण-पश्चिममें प्रचलन है। भाषाके इन दो रूपोंके भौगोलिक विभाजनमें 'पेशावर' शब्दमें पख्तूके प्रति पक्षपात किया गया है। वास्तवमें यह नगर 'पेखावर' के नामसे जाना जाता है।

पख्तून आर्य हैं और पख्तू एक इंडो-ईरानियन आर्यभाषा है जिसका संस्कृत और जेण्ड भाषाओंसे घनिष्ठ सम्बन्ध है। पन्द्रहवीं शताब्दीतक इसके लेखनका प्रचलन नहीं था। अब यह फारसी लिपिमें लिखी जाती है और अफ़गानिस्तान, पाकिस्तान तथा भारतकी लगभग एक करोड़ जनता द्वारा बोली जाती है। यह भाषा पख्तूनोंकी पहचान और पख्तूनोंके गर्वका एक अति स्पष्ट प्रतीक है। इसका साहित्य धनी है। इसके कवि रहमान बाबाकी रहस्यपूर्ण कविताएँ और खुशाल खटकके प्रेम और देशभक्तिपूर्ण गीत दूर-दूरतक प्रसिद्ध हैं।

पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तका वर्णन कर सकना कठिन है। इस क्षेत्रका एक

लघु खण्ड भी अपने पड़ोसीके सदृश नहीं है। सीमासे बीस मीलकी दूरीके बाद ऐसी भूमि नहीं मिलेगी। पहले मीलोंतक फैली हुई चट्टानें और पथरीली ढलानें दिखलाई देती हैं जिन्होंने बीच-बीचमें खुले पंखों जैसे खेतोंके लिए स्थान छोड़ दिया है। उनके पीछे भी चट्टानोंकी शृंखला चली है। कहीं पर्वतोंके बीचमें बहती हुई नदियोंकी संकीर्ण धाराएँ हैं जो देवदारुसे ढके हुए पर्वतोंसे बहकर आती हैं और उन पहाड़ियोंपर गिरती हैं जो झाड़ियोंके कारण फूली हुई-सी लगती हैं, अथवा वे उन खाली चरागाहोंमें बहती हैं जिनके एक ओर रिक्त, नीची पहाड़ियाँ हैं और जिनकी भूमिमें गहरे खड्ड और दरारें हैं। यह एक भयावह किन्तु चित्तको अपनी ओर खींचनेवाला 'केन्वस' है, जिसके विरोधमें पठान अपना जीवन-नाटक खेलते हैं—एक ऐसा 'केन्वस' जिसपर जलवायु अपने त्वरित और निर्दय परिवर्तनोंसे गहरे, उभारदार दृश्य कोरती है। इस 'टेपेस्ट्री' के तानेबाने यहाँके लोगोंकी देह और आत्माओंमें बुन गये हैं। बहुतसा कर्कश है परन्तु सब सशक्त ध्वनियों द्वारा खींचकर लाया गया है, जो श्वासको पकड़ता है।

भारतके इस सीमान्तके देशकी कथा भारतके अतीतके इतिहासके संक्षिप्त रूपमें अनेक प्रकारसे उपयोगी हो सकती है। पुरातन कालमें यहाँ एशियाकी तीन महान् संस्कृतियोंका संगम हुआ था—भारतीय, चीनी और ईरानी। यहीं यूनान और भारतकी संस्कृति और दर्शनके क्षेत्रोंमें भी मैत्री स्थापित हुई थी। अनेक देशोंसे ज्ञानके अन्वेषी इसके महान् विश्वविद्यालय तक्षशिलातक आते थे। खैबर के दर्रेसे, जो अवरोधकारी होते हुए भी एक आमंत्रण देनेवाला प्रवेश-द्वार था, बहुतसे जन और बहुत-सी जातियाँ अपनी विशिष्ट देनें लेकर इस देशमें आयीं, फिर भी अन्तमें उन्होंने अपनेको भारतकी मानवताके सागरमें समाहित कर दिया। यह सीमा-प्रान्त, जो अनेक शताब्दियोंतक भारतीय संस्कृतिका एक केन्द्र रहा था, समस्त भारतमें इतना प्रख्यात हो गया था कि जब दक्षिण-पूर्वी एशियाके पूर्वीय सागरोंमें अपने उपनिवेश बसानेके लिए दक्षिण भारतसे शौर्यपूर्ण अभियान हुए तब उनमेंसे अनेक द्वीपोंका नामकरण काबुल नदीकी उपत्यकाके स्थानोंपर किया गया।

उत्तर-पश्चिममें स्थित इस सरहदी सूबेकी सीमाएँ समय-समयपर बदलती रही हैं। प्रारम्भिक आर्य-कालमें उनका विस्तार सिन्ध-घाटीसे सुदूरवर्ती मध्य-एशियातक हुआ था और उसमें अधिकांश वर्तमान अफ़गानिस्तान, आधुनिक पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्त, सिन्धु नदकी पश्चिमी घाटी और बलूचिस्तानका भूखण्ड भी सम्मिलित था। लगभग छठी शताब्दी ईसा-पूर्वके पश्चात् यह पश्चिमोत्तर

प्रदेश, जो पहले ईरानके महा-साम्राज्यका भी एक अंग रहा था, यूनानी, कुषाण, गुप्त, तुर्क, ग़ोरी, मुग़ल और अंतमें सन् १८१९ ई० तक दुर्रानी सम्राटोंके अधिकारमें रहा। सन् १८४९ ई० में; सिखोंके राज्यमें लगभग बीस सालतक रहनेके बाद यह अंग्रेजोंके अधिकारमें आ गया। उन्होंने इसको बन्दोबस्ती जिलों [सेटिल्ड डिस्ट्रिक्ट्स] का नाम दिया। सीमाके परिवर्तनके बाद बनी हुई यह रेखा, जिसको 'डूरेण्ड रेखा' कहते हैं, सन् १८९४ ई० में निश्चित की गयी। अफ़-ग़ान युद्धोंके पश्चात् सुलेमानके पर्वत-शिखरोंके साथ ख़ैबर, मोहमंद, कुर्रम और वज़ीरिस्तानकी जन-जातियोंको लेकर यह भू-प्रदेश अंग्रेजोंके प्रभाव-क्षेत्रमें आ गया। इस प्रकार पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेशमें दो सीमा-रेखाएँ बन गयीं—एक अंतर्राष्ट्रीय सीमा रेखा जिसका प्रतिनिधित्व 'डूरेण्ड रेखा' करती थी और जो ब्रिटिश भारतको अफ़ग़ानिस्तानसे पृथक् करती थी तथा दूसरी प्रशासनिक रेखा। यह रेखा उस क्षेत्रकी सीमा निर्धारित करती थी जो वस्तुतः अंग्रेजोंके शासना-धिकारमें था। वह भू-खण्ड, जो इन दोनोंके बीचमें पड़ता था और जो 'कबीलोंकी पेटी' [ट्रायबल बेल्ट] कहलाता था, किसीके स्वामित्वमें न था। यों मान-चित्रमें वह भारतका ही एक अंग प्रदर्शित किया जाता था, परन्तु वास्तवमें वह उसके अन्तर्गत था नहीं। उसकी जनता ब्रिटेनके सम्राट्के प्रति कोई प्रत्यक्ष राज-निष्ठा नहीं रखती थी और न अपने क्षेत्रमें अंग्रेजोंके अधिकारको बढ़ने ही देती थी। सैनिक मार्गोंके उस पार कबीलोंके लोग वही करते थे, जो उनको अपनी दृष्टिमें उचित प्रतीत होता था। वे अपने स्त्री-बच्चोंके साथ अपने खेतोंके निकट गढ़ियाँ बनाकर रहते थे। उनके साथ ब्रिटेनकी प्रजा जैसा व्यवहार भी नहीं किया जाता था अपितु वे उसके द्वारा 'संरक्षित' जन समझे जाते थे। जबतक वे निष्क्रिय रहते थे तबतक स्वाधीन नागरिक थे परन्तु ज्यों ही वे सक्रिय होने लगते थे त्यों ही उनको संरक्षित जन समझा जाने लगता था। पुलिसके कार्य; आरक्षणके लिए अंग्रेजी सरकार इन कबायली लोगोंपर ह[illegible]ई जहाज़से बम बरसाना अपना अधिकार समझती थी।

अपनी वर्तमान स्थितिमें पश्चिमोत्तर सीम[illegible] प्रदेश उत्तरमें हिन्दूकुश पर्वत-श्रेणीसे, दक्षिणमें बलूचिस्तानसे, पूर्वमें कश्मीर [illegible] पंजाबसे तथा पश्चिममें अफ़गा-निस्तानसे घिरा हुआ है। इसका क्षेत्रफल [illegible],००० वर्ग मील है और इसकी जनसंख्या पचास लाखसे ऊपर है। इस[illegible] मुसलमानोंका अतिशय बहुमत है। यहाँ अल्पसंख्यकोंमें केवल पाँच प्रतिशत हिन्दू, सिख और ईसाई थे परन्तु भारतके विभाजनके उपरान्त उनकी संख्या शून्यके तुल्य रह गयी है। इस क्षेत्रकी

अधिकतम लम्बाई ४०८ मील है और अधिकतम चौड़ाई २७९ मील। भौगोलिक दृष्टिसे इसके तीन भाग किये जा सकते हैं—हज़ाराका सिन्धु नदके तटका समतल ज़िला, सिन्धु नद और पहाड़ियोंके बीचकी संकीर्ण पट्टी जिसमें सिन्धु नदके उस ओरके पेशावर, कोहाट, बन्नू, मरदान और डेरा इस्माईलखाँके पाँच ज़िले सम्मिलित हैं और तीसरा इन ज़िलोंकी सरहदों और अफ़गानिस्तानकी पूर्वीय सीमाके मध्यका ऊँचा-नीचा पर्वतीय क्षेत्र। इस प्रदेशका तृतीयांशसे भी अधिक भाग 'बन्दोबस्ती ज़िले' घेर लेते हैं। शेष दो-तिहाई या २५,००० वर्गमील था तो 'कबाइलियोंकी' पेटी है, अथवा 'स्वाधीन क्षेत्र'। यह उन जन-जातियोंके अधिकारमें है जिन्होंने एक शताब्दीके लगभग अंग्रेजी सत्ताके दमनको झेला है। भारत के विभाजनसे पहले प्रशासनिक कार्यकी सुविधाकी दृष्टिसे पिछड़ा क्षेत्र मालाकण्ड, कुर्रम, खैबर, उत्तरी वज़ीरिस्तान और दक्षिणी वज़ीरिस्तानकी पांच एजेन्सियोंमें बाँट दिया गया था।

इस क्षेत्रका अधिकतर भाग अभीतक कुंआरी धरती है जिसकी खनिज सम्पत्तिका उत्खनन नहीं हुआ है। इसमें पहाड़ी नमक, तेल, चुनियाई पत्थर, संगमर्मर तथा रांगा मुख्य हैं। यहाँ अल्प मात्रामें सोना और लोहा भी मिला है। इस प्रदेशमें श्रम-शक्ति सुलभ है और जलागारोंके कारण इसकी जल-शक्ति भी अमित है। यहाँ दो बरसातें होती हैं और वर्षाका औसत प्रतिवर्ष २० इंचके लगभग रहता है। यहाँकी फसलोंकी मुख्य उपज मकई, जौ, गेहूँ, चावल, चना, गन्ना, कपास और तम्बाकू हैं। बादशाह बाबरका दावा था कि हस्तनगरमें सबसे पहले उन्होंने गन्नेकी फसल शुरू करायी थी। इस भू-प्रदेशके अधिकतर भागमें सिंचाईके काफी अच्छे साधन हैं और यहाँ वन-सम्पदा भी प्रचुर है। इस प्रकार वसंत और शरद् ऋतुओंमें यह क्षेत्र एक ऐसे चित्रकी झलक प्रस्तुत करता है, जिसमें अनाजकी लहलहाती हुई फसलें और फलोंकी मुस्कराती वाटिकाएँ हैं और जिसको ऊँची-नीची पहाड़ियोंके चौखटेसे घेर दिया गया है। यहाँके हर एक घर में भेड़ और बकरियाँ पली हुई हैं।

यहाँके अधिकांश निवासी खेतिहर हैं। साधारण रूपसे उनका भोजन खिचड़ी है, जिसको वे चावल, दाल और सब्जी मिलाकर तैयार करते हैं। जिस समय भी उनके लिए सम्भव होता है, वे घरमें पकायी गयी गेहूँकी रोटी 'नान' के साथ अपना मांसका प्रिय आहार करते हैं। सामान्यतया पठान संयमी होता है और शहरसे दूर गाँवोंमें अफीम अथवा शराब जैसे मादक द्रव्योंका खान-पान बदनामी का एक कारण समझा जाता है। चाय और धूमपान तो विश्वभरमें प्रचलित

हैं। किसानोंकी वेश-भूषामें साफ़ा, एक ढीली कमीज़, ढीला पाजामा और एक चादर होती है जिसको वे अपनी कमरमें लपेट लेते हैं या अपनेको धूपसे बचानेके लिए उसे सिरपर डाल लेते हैं। शरीरके ऊपरके भागमें स्त्रियाँ चोली और कुर्ती पहनती हैं जो एकमें ही सिली हुई होती हैं। वे नीचे एक घेरदार पाजामा पहनती हैं और ऊपर एक शॉल डाल लेती हैं। उनके बाल यत्नसे गुँथे हुए रहते हैं। स्त्री-पुरुष सभी घास या चमड़ेकी बनी हुई चप्पलें पहनते हैं। दक्षिणकी ओरके निवासियोंमें पुरुष सामान्य रूपसे बड़े बाल रखते हैं और कभी-कभी छल्ले डालकर उनको घुँघराले भी बना लेते हैं। वे कानोंमें एक फूल लगाते हैं और आँखोंमें सुरमा डालते हैं। उनके ओंठ अखरोटकी छालसे रँगे हुएसे लाल रहते हैं। उनके कंधेपर एक बन्दूक लटकी रहती है और एक हाथमें सितार रहता है। वे लड़ाईके मौकेपर किसी वस्तुकी ओट नहीं लेते और संकटकी घड़ियोंमें भी सदैव हँसते-मुस्कराते रहते हैं। एक पठान अपनी एकांत घाटीमें या अपने छोटेसे गाँवमें आदि-मानव जैसा जीवन जीता है। वह स्वभावसे ईमानदार होता है। उसका हृदय अत्यंत कोमल होता है परन्तु अपनी बाह्य रूक्षतामें वह उसको छिपानेकी चेष्टा करता है। पेशावरके पठान अपने सिरको मुँडवा लेते हैं और दाढ़ी बढ़ा लेते हैं। इससे उनका व्यक्तित्व अधिक प्रभावशाली लगने लगता है।

एक किसानके मिट्टीके घरमें एक छोटी कोठरी होती है। जो भी सामान सरलतासे मिल जाता है, उसीसे उसको तैयार कर लिया जाता है। भूमिकी पट्टीदारी जमींदारकी रहती है। किसान या तो किसी खानका नौकर होता है या गाँवकी हथियारबन्द सेनाकी एक इकाई। इन कबीलेवालोंको अपने अस्तित्व की रक्षाके लिए स्वाभाविक रूपसे अपने घर किले या गढ़ी सरीखे रखने पड़ते हैं। यदि वे घाटीमें बनाये जाते हैं तो उनको सुरक्षाकी दृष्टिसे चहारदीवारीसे घेर दिया जाता है, जिसमें बुर्ज होते हैं। प्राचीरमें बन्दूककी गोलियोंके लिए छेद बने रहते हैं। यह घर यदि पहाड़ियोंकी मध्यवर्ती रिक्त भूमिमें बनाये जाते हैं तो अपनी स्थितिके कारण सहज रूपमें सुदृढ़ और सुरक्षित समझे जाते हैं। परन्तु दोनों ही स्थितियोंमें वे उन वीर, साहसी सशस्त्र सैनिकोंसे रक्षित रहते हैं जो किसी युद्धमें विधिवत् सैनिक शिक्षण प्राप्त किये होते हैं।

पठान लोक-नृत्य, संगीत और कविताका प्रेमी होता है। उसको मर्दानी खेलोंमें भी काफ़ी रुचि रहती है, जैसे बाजको लेकर शिकार खेलने जाना, शिकारी कुत्तोंको साथ लेकर जाना अथवा बन्दूकसे निशाना साधना। यहाँके एक बच्चेको

भी अपने कंधेपर बन्दूक लटकानेका चाव होता है। कवाइली पठानकी गतिकी शक्तिके लिए 'गतिशीलता' शब्द बहुत दुर्वल जान पड़ता है। ये लोग पहाड़ियों की ओरसे वड़े, गोल, चिकने पत्थरकी भाँति नीचे गिरते हुए आते हैं—दौड़ते हुए नहीं, वल्कि लुढ़कते हुए। एक पत्थरसे दूसरे पत्थरपर पैर जमाते हुए वे अपने शाब्दिक अर्थमें दर्रोंमें गिरते हैं। वे लोहेकी कीलकी भाँति कड़े हैं। वे अत्यंत स्वल्पजीवी लोग हैं। एक पठान अपने साथ एक राइफ़ल, एक चाकू और अल्प खाद्य-सामग्रीके अलावा कुछ नहीं रखता। इनका प्रत्येक व्यक्ति एक सिपाही होता है। सन् १९३७ ई०में इन लोगोंके पास २,५०,००० से कम आधुनिक पद्धतिसे निर्मित शस्त्रास्त्र नहीं थे। उन विभिन्न शासकोंने भी, जिन्होंने अतीत कालमें सीमा-प्रदेशपर शासन करनेका दावा किया है, अपने अधिकारका विस्तार मैदानी क्षेत्रोंतक और पहाड़ी दर्रोंमें एक या दो पथोंतक ही कर पाया था। यहाँतक कि उनको पहाड़ोंमेंसे गुज़रनेवाले किसी मुख्य पथपर भी उन हठी कवाइलियों-के विरुद्ध वलपूर्वक ही अपना अधिकार स्थिर रखना पड़ता था, जो उस मार्गको अपने व्यवहारमें ला रहे होते थे। इसमें भी कभी-कभी वड़ी कठिनाईका सामना करना पड़ता था। यह तथ्य इस ओर स्पष्ट इंगित करता है कि यह समूची 'कवाइलियोंकी पेटी', किसी वाह्य शक्तिके अधिकारसे अपने-आपको कैसे वचाती रही है। यही कारण है कि वह भू-प्रदेश, जो अनगिनत आक्रमणकारियोंके मार्गमें पड़ता था, अपने समाजके जन-जातीय रूपको वनाये रख सका। इन आक्रमण-कारियोंमें सिकन्दर, चंगेज़ खाँ और तैमूरलंग जैसे समूचे इतिहासके अति प्रसिद्ध विजेता भी सम्मिलित हैं। सम्राट् अशोककी सीमा-नीति अपने पड़ोसियोंके साथ शान्तिपूर्ण सम्वन्ध वनाये रखनेकी थी। उसने अपनी एक धर्म-लिपिमें यह उत्कीर्ण कराया है, "सीमान्तके निवासी, जो किसीके अधिकारमें नहीं हैं, मुझसे भय न करें। वे मुझपर विश्वास रखें। उनको मुझसे प्रसन्नता ही मिलेगी, दुःख नहीं।"

पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तकी आवादी मुख्य रूपसे पठानोंकी है। लोग अपनेको 'पख़्तून' कहते हैं। पठानोंके देश और शेष उप महाद्वीप; भारतके वीचमें सिन्धु नद एक ऐसी सीमा है जिसके दोनों ओर दो अलग-अलग जातियोंके लोग वसते हैं। कवाइलियोंकी पेटीमें चार महत्त्वपूर्ण जन-जातियाँ वसती हैं—अफरीदी, मामुन्द, वज़ीरी और महसूद। अन्य जन-जातियोंमें ओरकज़ई, यूसुफ़जई, भिटान्नी, शिनवारी तथा अन्य कवीलोंकी गिनती है। मुहम्मदज़ई वुनेरमें तथा पेशावरकी घाटीके उस पार पहाड़ी देशमें रहते हैं। पेशावरके पश्चिमोत्तरमें कावुल और स्वात नदियोंके मध्यमें मामुन्दोंका निवास है। खैवरके निकट और उसके दक्षिणमें

अफरीदियोंकी आवास-भूमि है। तिराहके दक्षिणकी ओरके गाँवोंमें इनसे कुछ भिन्न जन-जातियाँ बसती हैं, जिनको सम्मिलित ढंगसे ओरकज़ई अर्थात् खोयी हुई जातियाँ कहते हैं। कुर्रम और गोमलके मध्यमें वज़ीरिस्तान पड़ता है, जिसको पहाड़ों और घाटियोंकी दुर्गम भूल-भुलैयाँ कहा जा सकता है। इसमें वज़ीरी लोग रहते हैं। दक्षिणकी ओरकी जन-जातियोंमें पविन्द कवीलोंके लोग हैं जो सदा एक स्थानसे दूसरे स्थानपर विचरण करते रहते हैं। प्रति वर्ष २,००,००० से अधिक घुमन्तू ग़िलज़ई अफ़ग़ान अपने पहाड़ी प्रदेशसे भारतके मैदानोंमें उतर आते हैं। भिटान्नी उस क्षेत्रमें बसे हुए हैं जो वज़ीरिस्तानके पूर्वी किनारेके साथ-साथ गोमलसे मर्वततक चला गया है। वन्नूसे कोहाटतक खटक लोगोंकी भूमियाँ फैली हुई हैं। वन्नूमें वन्नूचिज़ और मर्वत लोग रहते हैं और डेरा इस्माईल-खाँमें पठानोंकी जन-संख्या कुल आबादीका तृतीयांश है। इसी तरह हज़ारा ज़िलेमें भी पठानोंकी संख्या अधिक नहीं है। उनमें पंजाबी मुसलमान, गोखार तथा अन्य जातियोंके लोग हैं। जन-जातियोंके थोड़ेसे अपवादोंको छोड़कर शेष सब परम्परानिष्ठ सुन्नी सम्प्रदायके मुसलमान हैं। वे मुहम्मद साहबके सारे उत्तरा-धिकारियोंको मानते हैं और केवल कुरान ही नहीं, हदीसके उस परम्परागत उपदेशको भी आदरकी दृष्टिसे देखते हैं जो कुरानमें शामिल नहीं है। प्रजा-तीय, भाषाशास्त्रीय और भौगोलिक, प्रत्येक दृष्टिसे, यहाँतक कि परम्परा और इतिहाससे भी पठानोंके कवीले पंजाबके निवासियोंसे बिलकुल भिन्न हैं।

पठान लोग कई दर्जन अलग-अलग कबीलोंमें बँटे हुए हैं, जिनमेंसे प्रत्येक में हज़ारोंसे लेकर लाखों लोगतक हैं। इसी तरहसे कवीले खैलों में बँट गये हैं, जिनको मोटे तौरपर कुल कहा जा सकता है। प्रत्येक खैल विभिन्न छोटे-बड़े आकारों और जटिल ग्रंथियोंवाले परिवारोंमें विभाजित हो गया है। सिद्धांत रूपमें एक ही पूर्वजके वंशज होनेके कारण वे सब आपसमें सम्बन्धित हैं। आज़ाद कवीलोंमेंसे कतिपय, विशेष रूपसे मुहम्मदज़ई और मोहमंदोंमेंसे कुछ लोग 'वन्दोवस्ती ज़िलों' और 'कवाइली इलाके'में जाकर बस गये हैं। वस्तुतः आज़ाद कवीलोंने पख़्तून समाजके मूल स्वरूपको सुरक्षित रखा है। वे अपनेको अफरीदी, वज़ीरी और महसूद आदि कहते हैं। इनकी प्रथम निष्ठा सहज रूपसे अपने कुलके प्रति रहती है। वे अपने कानूनके अनुसार चलते हैं जिसको 'पख़्तून-वली' या 'पठानोंका मार्ग' कहा जाता है। इन लोगोंमें एक प्रकारकी कठोर और अबाधनीय लोकतंत्रीय भावना रहती है, जो केवल थोड़ेसे परिवारोंके लिए शिथिल पड़ती है—कुछ ऐसे परिवारोंके लिए जिनको कुलक्रमानुगत प्रतिष्ठा प्राप्त

है, अथवा किसी मलिक, ख़ान या कबीलेके सरदारके लिए । यह प्रतिष्ठा व्यक्तिविशेषकी बुद्धिमत्ता, वीरता और समाजमें उसकी शक्तिपर भी आश्रित रहती है ।

बन्दोबस्ती ज़िलोंके पठानोंने अपनी भाषा, संस्कृति और अपनी पड़ोसी जन-जातियोंसे अपनी विशिष्टताकी चेतनाको सुरक्षित रखा है । बन्दोबस्ती ज़िलों के परिवारतक अपनी धार्मिक विधियोंके अनुसार नहीं बल्कि अपने रूढ़ि-आचार के अनुसार चलते हैं । आचारकी विलक्षण श्रृंखलाओंके द्वारा आदिम मानवने समाजके ढाँचेको जकड़कर रखनेकी चेष्टा की है । कबाइलियोंके क्षेत्रमें जहाँ बिना अदालतों, न्यायाधीशों, वकीलों यहाँतक कि बिना पुलिसके लगभग चालीस लाख लोग रहते हैं, व्यभिचार या हत्याकी कोई घटना शायद ही कभी सुनी गयी हो । स्त्री अपहरण तो ऐसा अपराध है जो यदा-कदा ही होता है । इसके अपराधीको एक बहुत बड़ी विपत्तिका सामना करना पड़ता है और उसका भारी मूल्य चुकाना पड़ता है । यदि लड़का और लड़की विवाह कर लेते हैं तो दोषकी मात्रा कुछ कम हो जाती है और अपराधीकी खोज शिथिल पड़ जाती है परन्तु इस स्थितिमें भी अपहरणकर्त्ताको अपने परिवारकी दो या तीन कन्याएँ उस परिवारको देनी पड़ती हैं, जिसमेंसे उसने एक लड़की भगायी थी । किन्तु यदि वह अपहृताको धोखा देता है या उसको त्याग देता है तो फिर उसको जीवित नहीं रहने दिया जाता । कन्या पक्षका पूरा कबीला उसका शिकार करने निकल पड़ता है और दोषीके अपने कबीलेके लोग भी उसकी रक्षा करनेसे इनकार कर देते हैं । समाजका आचार, आचार-भंग करनेवालेको क्षमाकी अनुमति नहीं देता । उसको अकेले रह जाना पड़ता है और अपने अपराधका अकेले ही मूल्य चुकाना पड़ता है । उसके मित्रतक उसकी शव-यात्रामें जानेसे कतराते हैं । यह प्रथा निर्मम और पाशविक है परन्तु वहाँ प्रचलित तो है ही ।

पख्तून वली, जिसको बहुधा पठानोंकी संहिता कहा जाता है, न्यायके मामले में सर्वोच्च शक्ति मानी जाती है । उसका प्रथम आदेश 'बदल' या बदला है । अन्याय अथवा अनुचित कार्यके लिए प्रतिशोधका उत्तरदायित्व उस व्यक्तिका ही नहीं होता जिसने कि कष्ट सहा है अपितु उसके लिए प्रतिशोध लेनेका उत्तरदायित्व उसके परिवार और कबीलेके सदस्योंपर भी आ जाता है । घटना हो जानेपर प्रतिशोधको रोका नहीं जा सकता और उसके अपमान और प्रति-कारकी लपेटमें दोषी ही नहीं, उसका पूरा कुल आ जाता है । इससे रक्तपातपूर्ण झगड़े बढ़ते हैं । बहुतसे झगड़े जो आज दिखलाई दे रहे हैं, कई पीढ़ियाँ पुराने

हैं। बहुधा वैमनस्य और झगड़ेके तीन ही कारण होते हैं—'ज़र, जोरू और ज़मीन'—अर्थ, स्त्री और भूमि।

इन प्रकारके झगड़े प्रायः तभी मिटते हैं, जब दो परिवारोंमेंसे एक या दोनों नष्ट हो जाते हैं। ऐसे अवसर बहुत कम आते हैं जब दुर्बल पक्ष झगड़ेको निब-टानेके लिए अपनेको शत्रुकी दयापर छोड़ देता है। इसको 'ननवताई' कहा जाता है। इसे मान-हानिकी सबसे गिरी हुई स्थिति माना जाता है। झगड़ेको निबटानेवाला दुर्बल पक्ष अपने घरकी औरतोंको लेकर, अपने शत्रुके घर जाता है। स्त्रियोंके सिरपर कुरान रखा रहता है। दुर्बल पक्ष सबल पक्षको कुछ भेड़ें भेंट करता है और उससे क्षमा माँगता है।

"इस रक्तपातपूर्ण वैमनस्यने पठान-जीवनके कलेजेको चुन डाला है।" प्रसिद्ध ईसाई मिशनरी डाक्टर पैन्नेलने, जिन्होंने सीमान्त क्षेत्रमें सोलह वर्ष बिताये थे और जिनके पठान प्रशंसक रहे हैं, लिखा है, "यह देश तबतक प्रगति नहीं कर सकता, जबतक कि प्रतिशोधके प्रश्नपर यहाँका जन-मत परिवर्तित नहीं होता।"

दूसरा आदेश 'मेलमस्तिया' अर्थात् अतिथि-सत्कार है। पठानोंके जीवनपर इसका भी वैसा ही व्यापक प्रभाव है, जैसा कि प्रथम आदेशका। सम्पन्न गृह-स्वामी निर्धन अतिथिके साथ भोजनके आसनपर बैठता है और उसको अपने हाथोंसे खाना परोसता है। 'हुज्रा' यानी अतिथिगृह 'मेलमस्तिया' को व्याव-हारिक रूप देनेमें मुख्य साधन बनता है। इसमें एक या दो कमरे रहते हैं। हुज्रा अतिथि-गृहके अतिरिक्त स्थानीय लोगोंके लिए 'क्लब' का काम भी देता है। वे लोग यहाँ आकर चाय पीते हैं, चिलम फूँकते हैं और सामाजिक विषयोंपर चर्चाएं करते हैं। गांवके क्वांरे युवक 'हुज्रा' में आकर सोया करते हैं क्योंकि पठानोंका सामाजिक आचार वयस्क हो जानेपर उनको घरमें सोनेकी अनुमति नहीं देता।

आतिथ्यके नियमानुसार पठानका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह अतिथिकी सुरक्षाका उत्तरदायित्व स्वीकार करे और उसे वे सब सुविधाएँ दे, जिनको पानेका अतिथि अधिकारी होता है। इस विशेष स्थितिमें 'मेलमस्तिया' (अतिथि-सत्कार) 'बदल' (प्रतिशोध) से प्राथमिकता ले लेता है। यहाँतक कि यदि शत्रु भी शरणार्थीके रूपमें आता है तो उसे शरण दी जाती है और उस अतिथि की उसका पीछा करनेवालेसे रक्षा की जाती है।

पठानोंके प्रदेशमें गाँवका पुरोहित, मुल्ला एक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति होता है। जैसा कि अन्य मुसलमानोंमें होता है, पठानोंका मुल्ला विधिपूर्वक कोई दीक्षा

नहीं लेता। जो भी व्यक्ति अपने हृदयमें ईश्वरकी वाणीका अनुभव करता है, मुल्ला बन जाता है। बहुत बार गाँवका मुल्ला परम्परागत मुल्ला-परिवारका ही होता है।

'जिरगा' सम्भवतः पठानोंकी सबसे महत्त्वपूर्ण संस्था है। इसे वयोवृद्धोंकी सभा कहा जा सकता है। वस्तुतः यह पंचायतका काम करता है। जिस कबीलेमें जितनी अधिक लोकतंत्रीय भावना होती है, उसका जिरगा उतना ही बड़ा होता है। उसमें मतदान नहीं लिया जाता और उसके निर्णय प्रायः सर्वसम्मतिसे ही होते हैं। वे सभाका अभिप्राय समझकर लिये जाते हैं। सामान्य रूपसे जिरगा किसीपर अपराध नहीं लादता और न किसीके लिए दण्डका विधान ही करता है। वह पठानोंकी निश्चित परम्पराओंके अनुसार उभयपक्षमें एक समझौता करानेका प्रयत्न करता है।

माउन्ट स्टुअर्ट एलफिस्टनने, जो पेशावरमें पहुँचनेवाले पहले अंग्रेज थे, सार-रूपमें पठानके ये लक्षण बतलाये हैं : "प्रतिहिंसा, स्पर्द्धा, लोभ, लुटेरापन और हठवादिता उसके स्वभावके दोष हैं किन्तु दूसरी ओर वह स्वतंत्रता-प्रेमी, अपने मित्रोंके प्रति विश्वासी, अपने आश्रितोंके प्रति दयालु, अतिथिसेवी, वीर, दृढ़, मितव्ययी, परिश्रमी और विवेकी होता है। अपने पड़ोसी देशोंके निवासियोंकी अपेक्षा उसमें झूठ बोलनेकी, षड्यन्त्र रचनेकी और धोखा देनेकी प्रवृत्तियाँ बहुत ही कम होती हैं। मैं एशियामें ऐसे अन्य लोगोंको नहीं देखता जिनमें पठानोंसे कम चरित्र-दोष हों और जो उनसे कम विलासी और कम आचारहीन हों।"

सन् १८५७ ई० मे भारतमें विद्रोहकी ज्वालाएँ सुलग उठीं। सीमान्तके ऊपरसे यह लहर हलकेसे निकल गयी। जिस समय विद्रोह चल रहा था, उस समय अंग्रेजोंकी स्थितिसे लाभ उठानेकी बातको पठानोंने तिरस्कारकी दृष्टिसे देखा। परन्तु उसके तुरन्त बाद ही उनकी अंग्रेजोसे लड़ाई छिड़ गयी। सन् १८५८ ई० और सन् १९०२ ई० के बीच अंग्रेजोंने उनकी भूमिपर अधिकार करनेके लिए चालीससे भी अधिक युद्ध-अभियान किये। सन् १८९७ ई० में अफरीदी और ओरकज़ई कबीलोंके विरुद्ध जिन सैनिकोंकी नियुक्ति की गयी, उनकी संख्या चालीस हज़ार थी। अफरीदियोंसे और रूसके आक्रमणकी आशंकासे अंग्रेज ऐसे भयभीत थे, मानो प्रेतसे डरे हुए हों। साइमन कमीशनने ज़ोर देते हुए लिखा था, "पश्चिमोत्तर सीमांत भारतका सीमांत ही नहीं हैं बल्कि सैनिक दृष्टिसे यह एक प्रथम महत्त्वका अन्तर्राष्ट्रीय सीमान्त है। यह भारतका प्रवेश-द्वार है।"

अंग्रेजोंने इस सीमान्तपर अपने अधिकारका पंजा सदा कसा हुआ रखा।

उन्होंने पेशावर प्रान्तके मुख्य-मुख्य नगरों और उन सड़कोंको, जो उन्हें मिलाती थीं, अपने अधीन कर लिया। प्रमुख दर्रे, जिनमें ख़ैबर भी एक था, अबतक पर्वतीय क्षेत्रके कबाइली लोगोंके हाथमें थे। उनमेंसे कुछ अफ़गानिस्तानके अमीरके प्रति राजभक्तिकी एक क्षीण-सी भावना रखते थे। ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, अंग्रेज सिन्धु नद और पहाड़ियोंके बीचके सारे जिलोंपर कर लगाते गये और उनमें अपनी अदालतें खोलते गये। उन्होंने अपने प्रभावका विस्तार दर्रोंतक कर लिया। पठानोंने कर एकत्रित करनेवाले अधिकारी; कलेक्टरको मारकर और ब्रिटिश सेनापर छिटफुट हमले करके अंग्रेजोंकी नीतिके प्रति अपना विरोध व्यक्त किया। अंग्रेज अधिकारी नगरोंमें ही बैठे रहते और यदि कभी पर्वतीय क्षेत्रमें आते भी तो अपने प्राणोंकी जोखिम लेकर।

उन्नीसवीं शताब्दीके अंततक स्थितिमें परिवर्तन आ गया। ज़ारके शासनमें रूसने बहुत दूरतक—बुखारा, समरकंद और खिवातक अपने बलका विस्तार कर लिया। रूसने भारतके सम्बन्धमें अंग्रेजोंको जो धमकियाँ दीं, उनसे वे भयभीत हो उठे। किपलिंगने जिसको बड़ी खुशीके साथ 'एक महान् खेल' कहा था, वह विस्तारवादी देशोंके मध्य स्वार्थ-पूर्तिके हेतु एक उन्मत्त दौड़ बन गया। जो सत्ता भारतपर राज्य कर रही थी, उसका सीमान्त प्रदेशकी शांति और प्रगतिसे दूरका नाता था। उसका उद्देश्य था मात्र अपनी सुरक्षा। यहाँतक कि अफ़गानिस्तान इन दो महान् शक्तियोंके धक्केको रोकनेवाला एक मध्यवर्ती राज्य—'बफ़र स्टेट' समझा जाने लगा। सिन्धु नदको अपने साथ लेते हुए 'बन्दोबस्ती जिले' पूर्ण रूपसे भारतके एक भाग समझे जाने लगे। पहाड़ियोंमें 'कबाइलियोंका क्षेत्र' वह सीमा-भूमि थी जिसपर प्रभाव बनाये रखना आवश्यक था। दर्रोंके ऊपर अधिकार कर लिया गया। नयी सड़कें बनायी गयीं। किले स्थापित किये गये और उनमें दुर्ग-रक्षक टुकड़ियाँ—गैरिसन रखी गयीं। यह योजना अंग्रेजोंकी अग्रनीतिका एक अंग थी। कोलिन डेविसके शब्दोंमें—"सीमान्तके पठानके लिए एक बहुत बड़े, बलिष्ठ किन्तु छिपे हुए ऐसे घूंसेकी कल्पना यथार्थ हुई, जिसकी उँगलियाँ, पठानपर आघात करनेके लिए उन्नीसवीं सदीके अन्तिम चरणमें कसती जा रही थीं। सूने किलोंको फौजियोंसे भर दिया गया। उस क्षेत्रमें दौड़नेवाले समस्त व्यापारिक पथोंपर अधिकार कर लेनेके आदेश दे दिये गये। पठानके छोटेसे गाँव और चौरस खेतको भृकुटी चढ़ाकर देखा गया। पहाड़ियोंके ऊपर बनीं उसकी गढ़ियोंके बीचमें मार्ग रोकनेवाली सर्पिणी जैसी चमचमाती, सफेद सड़कें बिछा दी गयीं। सीमाको कायम रखनेवाली भावनाको सतत रूपसे जागृत रखनेके लिए सीमा-

स्तम्भोंकी पंक्तियाँ खड़ी कर दी गयीं, जो कि उसके देशको घेरे हुए थीं और उसकी स्वाधीनताको, जिसपर उसे अति गर्व था, घुड़कियाँ-सी दे रही थीं।"

स्वाभिमानी पठानकी प्रतिक्रिया सहज रूपसे उग्र हुई। उसने कार्य-रूप ले लिया और एक या दूसरे समयमें सीमाके प्रत्येक कबीलेने अपने हथियारोंको उठा लिया। आतिथ्य और धर्मपरायणताने आक्रोशका रूप ले लिया। अनेक सिविल अफ़सरोंपर हमले किये गये और उनकी हत्या कर दी गयी। अंग्रेजोंने भी वैसा ही जवाब दिया। कबाइली लोगोंको कालेपानीकी सजा देकर अण्डमान द्वीप-समूहमें भेज दिया गया। गाँव और खेतोंको फसलें जला दी गयीं। कुएँ और फलदार वृक्ष नष्ट कर दिये गये। स्त्रियों और बच्चोंको सेनासे घिराव कराकर भूखा मारा गया।

अंग्रेजोंने अपनी सुरक्षाको जीत लिया। विद्रोहका दमन कर दिया गया। दर्रों और मार्गोंको अपने अधिकारमें कर लिया गया यद्यपि पहाड़ोंके ऊपर अंग्रेज अपना आधिपत्य कभी भी स्थापित न कर सके। सन् १९०१ ई० में तत्कालीन वाइसराय लार्ड कर्ज़नने एक नये प्रान्तका प्रारम्भ करके शासनको नवीनतम स्वरूप दे दिया। इस प्रान्तको नार्थ वेस्टर्न फ्रण्टियर प्राविन्स [पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेश] का नाम दिया गया और इसके ऊपर एक चीफ़ कमिश्नर नियुक्त कर दिया गया। उसमें सिन्धु नदके उस पारके पाँचों 'बन्दोबस्ती ज़िलों'को सम्मिलित कर दिया गया। इस प्रकार इस प्रदेश और अफ़गानिस्तानके बीचकी पेटी 'कबीलोंके इलाके' का प्रारम्भ हुआ जिसका शासन सीधा भारत सरकारके हाथोंमें रखा गया। इससे पूर्व यह समस्त क्षेत्र पंजाब प्रदेशका एक अंग समझा जाता था। शासनका यह आदेश हुआ कि यह नवीन प्रदेश एक मुहरबन्द पुस्तक जैसा,—जन-साधारणके लिए अप्रवेश्य रहेगा और सेना तथा पोलिटिकल विभागके अधिकारी यहाँ शिकारके लिए जाया करेंगे। इन पाँच बन्दोबस्ती ज़िलोंके लिए ६,००० सिपाहियोंकी नियुक्ति की गयी जिनपर प्रतिवर्ष ३० लाख रुपया व्यय किया जाता था। 'सीमान्त प्रदेश अपराध विनियम' (फ्रण्टियर क्राइम रेगुलेशन) के अन्तर्गत बिना न्यायालयमें भेजे हुए ही अभियुक्तको आजीवन कारावासका दण्ड दिया जा सकता था। आरोपीको अपनी रक्षाके लिए वकीलसे कानूनी सलाह लेनेकी सुविधा न थी और न वह अपना बचाव ही कर सकता था। कुछ अंग्रेज़परस्त बड़े जमीदारों और व्यापारियोंको बुलाकर उनको हत्या जैसे गम्भीर अपराधोंको निबटानेके अधिकारतक दे दिये गये थे जब कि सिद्धान्त रूपमें तथ्यों के निष्कर्षका उत्तरदायित्व 'जिरगा' को सौंपा गया था। उसकी खोजके निष्कर्ष

यदि सर्वसम्मतिसे स्वीकृत होकर आये तो उसको डिप्टी कमिश्नरको मान लेना चाहिये था, परन्तु जहाँतक व्यवहारका प्रश्न था, 'जिरगा' सरकारकी अपनी गढ़ी हुई चीज़ थी जिसको यह पहले ही बतला दिया जाता था कि उससे किस प्रकारके निष्कर्षकी अपेक्षा की जा रही है। दोष सिद्ध हो जानेपर अपराधीको पुनर्विचारकी प्रार्थनाकी आज्ञा न दी जाती थी। केवल चीफ़ कमिनश्रसे यह अपेक्षा की जाती थी कि वही यदि उचित समझे तो इस प्रकारके आदेशको संशोधित कर दे।

सन् १९०९ ई० में सारे भारतमें मार्ले-मिण्टो सुधार और १९१९ ई० में मांटेग्यू चेम्सफोर्ड सुधार लागू किये गये परन्तु उनमें सीमान्त प्रदेशकी पूर्ण रूपसे उपेक्षा की गयी। सीमाप्रदेश अपराध विनियम उनके खिलाफ़ काममें लाया गया जिन्होंने उस प्रदेशमें सुधारोंकी मांगका समर्थन किया। इस विनियमकी धारा ४० के अन्तर्गत लोगोंसे शांति बनाये रखनेके लिए भारी-भारी ज़मानतें देनेको कहा गया और जो उनको न भर सके उनको किसी भी अवधिके लिए, जो अधिक से अधिक तीन वर्ष हो सकती थी, जेलमें डाल दिया गया।

प्रथम विश्व-युद्धके पश्चात् भारतमें एक ओरसे दूसरी ओरतक राजनीतिक अशांतिकी जो हवाएँ चल रही थीं, उनका स्पर्श सीमा-प्रदेशमें भी अनुभव किया गया। खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँके नामकी ओर सन् १९१९ ई० में देशवासियों का ध्यान तब विशेष रूपसे आकृष्ट हुआ जब कि उन्होंने देशके समवेत स्वरके साथ रॉलेट एक्टका विरोध किया और उसके प्रति अपना असंतोष व्यक्त करनेवाले एक विराट् प्रदर्शनका नेतृत्व किया। इस कानूनने भारतकी राजनीतिक चेतनापर अपने प्रतिबन्धों द्वारा कठोर आघात किया। खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँ शीघ्र ही एक जनप्रिय नेता समझे जाने लगे और सन् १९३४ ई० में उनसे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसका सभापतित्व स्वीकार कर लेनेका अनुरोध किया गया परन्तु अपनी सहज विनम्रताके साथ वे यह कहकर पीछे हट गये कि मैं तो गांधीजीके निकट एक शिक्षार्थी मात्र हूँ। अभी मैं अखिल भारतीय ख्यातिका नेता नहीं हूँ यद्यपि बात ऐसी न थी। पंडित जवाहरलाल नेहरूने लिखा है : "उन दिनों खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँ निश्चय ही एक बड़े नेता थे जो 'फख्रे-अफ़गान', 'फख्रे पठान' (पठानों के गौरव) 'गान्धिए-सरहद' (सीमान्त गांधी) के नामसे जाने जाते थे। वे शेष भारतवासियोंकी दृष्टिमें उस वीर, दुर्जेय जनताके साहस और त्यागका प्रतीक बनते गये, जिसने हमारे संघर्षमें कंधे-से-कंधा मिलाकर भाग लिया।"

खाँ अब्दुल गफ्फ़ार खाँने सन् १९४२ में कहा था :

"पख्तून अत्यन्त स्वातंत्र्यप्रिय जाति है और किसी भी प्रकारकी अधीनता से उसको रोष आता है, फिर भी उसके अधिकांश लोग यह समझने लगे हैं कि भारतीय जनताकी मुक्तिमें ही उनकी स्वाधीनता निहित है। यही कारण है कि उन्होंने भारतको कई राज्योंमें विभाजित कर देनेकी योजनाका समर्थन न करके, स्वाधीनताके इस समान संघर्षमें अपने देशवासियोंका पूरा साथ दिया। उन्होंने अनुभव किया कि आजकी दुनियामें भारतके विभाजनसे इस देशके सभी भागोंमें एक व्यापक दुर्बलता आ जायगी और इसके किसी भी भागके पास इतने यथेष्ट साधन और क्षमताएँ न रह जायँगी कि वह अपनी आज़ादीको चिर-स्थायी रख सके। अकेलेपनका युग बीत गया। अन्तर्राष्ट्रीय सहकारिता और सहयोगकी एक नयी संकल्पना जन्म ले रही हैं। पख्तून अपनी इच्छाके विरुद्ध लादी गयी किसी बाध्यता या किसी प्रकारके निर्देशको घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं परन्तु अपनी निज की स्वतन्त्र इच्छासे वे अन्य लोगोंके साथ एकता और सहयोगके साथ कार्य करने-को सदैव तत्पर हैं। वे अपने शेष देशवासियोंके साथ काम करनेको तैयार हैं और कबाइली क्षेत्रके अपने बन्धुओंके साथ भी। उनको ऐसी जिन्दगी जीनेको विवश कर दिया गया है जो किसी भी जनताके लिए उचित नहीं कही जा सकती। परन्तु इस समय, जब कि मैं अपनी पख्तून जनताके साथ आपकी भाव-नाओंमें साझीदार हो रहा हूँ, क्षणभरके लिए भी इस बातसे इनकार नहीं कर सकता कि प्रत्येकको आत्म-निर्णयका अधिकार है। किसीके भी सिद्धांतमें बलपूर्वक परिवर्तन नहीं किया जा सकता और समय आनेपर प्रत्येक इकाईको अपने भविष्य के निर्णयके लिए अपने आत्म-विवेकपर ही निर्भर होना पड़ता है। फिर भी भारतकी इस आकांक्षाकी अवहेलना नहीं की जा सकती कि वह बाहरी दमनको रोकनेके लिए अपने समग्र रूपमें घनिष्ठताके सम्बन्धोंका विकास करे और एशिया-के लोगोंका एक शक्तिशाली संघ बनाये; न इस बातसे इनकार किया जा सकता है कि वह एक प्रधान निमित्तके रूपमें पृथक् रहनेवाली शक्तियोंको भिन्न प्रकारसे सोचनेको विवश करे और परस्पर विरोधी लोगोंके बीचमें निकटताके सम्पर्क स्थापित करे। एशियाके देश अपने-आप किसीपर आक्रमण नहीं करेंगे और न किसीको क्षति ही पहुँचायेंगे। वे मैत्रीके पारस्परिक सूत्रोंको दृढ़ करेंगे, परन्तु एक बात निश्चित है कि वे वर्तमान स्थितिको ज्योंका त्यों नहीं चलने देंगे और न श्रमिक वर्गको ही ऐसी विपरीत स्थितियोंमें रहने देंगे। हमें यह देखकर प्रोत्साहन मिलता है कि पूर्वमें ऐसे बहुतसे देश हैं जो सुशान्ति और स्वाधीनताके ऐसे संगठन

की राह देख रहे हैं और नये युगके इस उदयकी ओर आशापूर्ण दृष्टिसे निहार रहे हैं। सीमान्त प्रदेशकी स्थिति कुछ इस प्रकारकी है कि पुरातन कालकी भाँति वह पुनः अनिवार्यतः इन समस्त महान् परिवर्तनों और मेल-मिलापका केन्द्र एवं मध्य-विन्दु बन जायगा और न केवल स्वतंत्र भारतमें बल्कि स्वतन्त्र एशियामें एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायेगा।"

सन् १९४७ ई० में भारतका विभाजन हो गया। खान अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँ व्यग्र हो उठे। उन्होंने गांधीजीसे कहा, "भारतके लोग पख्तूनोंको भेड़ियोंकी दयापर छोड़ रहे हैं।" गांधीजीने उनको उत्तर दिया, "यदि पाकिस्तानके लोग आप लोगोंके साथ सद्व्यवहार न करेंगे तो हम उनके साथ लड़ेंगे.....यह सच है कि मैं अहिंसा-में विश्वास करता हूँ परन्तु यह भारतकी सरकारका कर्त्तव्य होगा कि वह पठानों-को उनके आत्म-सम्मान और आत्म-निर्णयकी रक्षा करनेमें सहयोग दे।"

ख़ाँन अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँने सन् १९४७ ई० के वादसे १५ वर्ष पाकिस्तानकी जेलोंमे नज़रवन्दीकी स्थितिमें विताये और वहाँसे छूटनेके वाद वे अपने पाकिस्तानी भाइयोंके अन्तरके दमन और अन्यायकी वृत्तियोंसे जूझते रहे। सन् १९५५ ई० में पश्चिमी पाकिस्तानकी एक इकाई वनानेके लिए पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेशको सिन्ध, पंजाव और वलूचिस्तानमें मिला दिया गया और इस प्रकार इतिहासके पृष्ठोंपरसे पख्तूनोंका नाम सदाके लिए मिटा दिया गया। ३१ अगस्त सन् १९६५ ई० के दिन कावुलमें पख्तूनिस्तान दिवस मनाते हुए खान अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँने कहा था कि पख्तूनोंने एक राष्ट्रका निर्माण किया है। यह उनके वलिदान और संघर्षका ही फल है कि स्वराज्य मिला और अंग्रेज़ निकल गये। "पाकिस्तानका सर्जन हमने किया है।" उन्होंने वल देते हुए कहा, "वह पख्तूनोंके रक्तसे वना है। हम पाकिस्तानसे मैत्रीके सम्वन्ध रखना चाहते हैं। पख्तून केवल अपने घरको वनानेकी मांग कर रहे हैं।"

कवि इक़वालने कहा है, "एक 'मोमिन' विश्वासी, विना तलवारके भी अन्त तक लड़ता है।" खान अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँका जीवन एक प्रेरणाप्रद वीर-गाथा है—एक ऐसी आत्माकी विजय है जो वल-प्रयोगको नहीं पहचानती और जिसकी समस्त विजयें उसकी अजेय सज्जनताके वलपर जीती गयी हैं।

परम्परा

१८९०

हस्तनगरके, जिसको अब अश्तंगर [अष्ट नगर] कहा जाता है, उत्तमंजई गाँवमें सन् १८९० ई० में खान बहराम खाँके यहाँ अब्दुल गफ्फ़ार खाँका जन्म हुआ। पठानोंमें नवजात शिशुका जन्म-दिवस लिखकर रख लेनेकी प्रथा नहीं है। यों भी उनमें बहुत कम लोग लिख-पढ़ सकते हैं, इसलिए उनमें जन्मकी तारीख लेखाबद्ध नहीं हो पाती। खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँने अपने सम्बन्धमें बतलाया, "मेरी माँ मुझसे यह कहा करती थीं कि सन् १९०१ ई० में जब मेरे बड़े भाई डाक्टर खान साहबका विवाह हुआ, तब मेरी आयु ग्यारह वर्षकी थी। उसीके आधारपर मैं आपसे यह कह रहा हूँ कि मेरा जन्म सन् १८९० ई० में हुआ है। मैं आपको अपने जन्मका वर्ष बतला सकता हूँ परन्तु निश्चित तारीख नहीं। मैं चन्द्रमास जेठके अनुसार तिथि भी बतला सकता हूँ परन्तु अंग्रेज़ी तारीख नहीं। जितनी हम जानते हैं, उससे कह अधिक हमारी और आपकी बातें मिलती हैं। हमारी परम्पराएँ वस्तुतः एक ही हैं और कुछ भी हो, हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि सदियोंतक हमारे इस क्षेत्रके लोगोंका धर्म बौद्ध मत रहा है। हमारे जिलेमें बौद्ध युगके अनेक स्मृति-अवशेष बिखरे पड़े हैं और हमारे नगरोंमेंसे कुछके नाम बौद्ध अथवा हिन्दू हैं। पख्तूके बहुतसे शब्द संस्कृत भाषासे लिये गये हैं।"

खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँकी माता लम्बी देहकी, नीली आँखोंवाली एक सुन्दर महिला थीं और पिता अभिजात कुलके मंझोले कदके बलिष्ठ और कुछ अधिक आयुके खान थे। खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँ अपने पिताकी चौथी संतान हैं। पठानों में सामान्यतः दो नाम होते हैं और पुत्रका नाम पिताके नामपर कभी नहीं रखा जाता। खान बहराम खाँ एक धनी ज़मींदार थे और वे अपने गाँवके सबसे प्रतिष्ठित खान समझे जाते थे। उनको अपने मुहम्मदज़ई कुलके होनेका या अश्तंगरके प्रमुख खान होनेका गर्व अथवा अहंकार नहीं था। वे ईश्वरसे डरनेवाले, नम्र और आत्मसंयमी व्यक्ति थे। लोग उनके ऊपर इतना अधिक विश्वास करते थे कि मामूली गृहस्थ उनके पास अपनी बचतकी रक़म जमा कर जाते थे। उनकी बात

लिखा-पढ़ीसे कम पक्की न समझी जाती थी। उनके मित्रोंकी संख्या बड़ी थी परन्तु शत्रु कोई न था। उनके साथ किसीका झगड़ा न था। किसी भी खानके लिए यह एक विरल विशिष्टता थी। उन्होंने अपने सारे शत्रुओंको क्षमा कर दिया था। प्रतिरोधकी भावनासे मानो उनका परिचय ही न था। उनका विश्वास था कि धोखा देनेमें अप्रतिष्ठा है, किसीसे धोखा खानेमें नहीं। वे अपने वचनके धनी थे और उनका हृदय स्फटिक-सा स्वच्छ था। वे लोगोंके इतने विश्वासपात्र थे कि न तो कोई उनकी बातका अविश्वास करता था और न किसीमें उनकी बातको काटनेकी हिम्मत थी। वे कभी झूठ नहीं बोले थे और वे यह जानते भी न थे कि झूठ बोला कैसे जाता है। जब गाँवमें कोई झगड़ा हो जाता तो वे सदैव निर्बल, सताये गये व्यक्तिका पक्ष लेते थे। अधिकारियोंकी खुशामदमें उनका विश्वास न था परन्तु वे सब उनको आदरकी दृष्टिसे देखते थे। अंग्रेज़ अधिकारी उनको 'चाचा' कहकर सम्बोधित करते थे। उन्हें भी वे लोग अच्छे लगते थे, यद्यपि वे उनके नाम कभी याद न रख पाते थे। ख़ान बहराम ख़ाँको घोड़े प्रिय थे और वे नब्बे वर्षकी उम्रतक घुड़सवारी करते रहे। किसी भी दोष अथवा भूलको वे बड़े सहज रूपसे, हंसी-खुशीसे लेते थे और हास्य-विनोद उनके स्वभावका एक अंग था। एक लम्बी, पकी आयुतक, लगभग सौ वर्षतक वे खेती कराते, हंस-हंस-कर क़समें खाते हुए जीवित रहे।

खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँकी माता और पितामें कोई साक्षर न था। लौकिक जगत्‌की अपेक्षा वे आध्यात्मिक संसारमें अधिक रहा करते थे। माँ बहुधा नमाज़ पढ़ चुकनेके बाद एकान्तमें ध्यानके लिए बैठ जाती थीं। वे एक बहुत बड़े पात्रमें सब्जी पकाती थीं और उसे निर्धन पड़ोसियोंके यहाँ भी भेजा करती थीं। यद्यपि उनके घरमें नौकरोंकी एक अच्छी-खासी पलटन थी परन्तु खान बहराम ख़ाँ इस बातका आग्रह करते थे कि उधरसे गुज़रनेवाले पथिकोंको भोजन करानेके लिए वे स्वयं हिज्रा जायेंगे और वे अपने सिरपर नानरोटियोंसे भरी टोकरी और सब्जीका बड़ासा पात्र लेकर जाते भी थे। वे अक्सर यह कहा करते थे, "यात्रा करते हुए पथिक, जिनको हम नहीं जानते और जिनकी हम चिन्ता नहीं करते, वास्तवमें ईश्वरके भेजे हुए अतिथि हैं। इसीलिए उनके लिए भोजन ले जाना मुझे अच्छा लगता है।" खान अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँने कहा :

"मेरी माता और मेरे पिता एक सच्चे धार्मिक जीवनके आदर्श रूपमें मेरी स्मृतिमें अब भी सजीव हैं। यद्यपि पिता अपनी आयु नहीं बता पाते थे किन्तु वे सन् १८५७ के ग़दरके बड़े सजीव संस्मरण सुनाते थे। संघर्षके उन दिनोंमें

पठानोंने जो भूमिका निभायी, उसपर उनको गर्व न था। जिस समय वे यह स्मरण करते थे कि उनके बड़े भाईने चारसद्दाके खज़ानेके सैनिक रक्षकोंके अधिकारीके रूपमें अंग्रेज़ोंकी नौकरी की तब उनको किसी प्रकारकी लज्जाका बोध न होता हो, ऐसी बात न थी। कबीलेके लोगोंके साथ जब कभी अंग्रेज़ोंकी मुठभेड़ हुई और जब भी अंग्रेज़ोंने उनका दमन करना चाहा तब खान बहराम ख़ाँके पिता सैफुल्ला ख़ाँने अपने उन सताये जानेवाले बन्धुओंका पक्ष लिया। सैफुल्ला ख़ाँके पिता अबीदुल्लाह ख़ाँको जाति-उद्बोधन और देशभक्तिके लिए तत्कालीन दुर्रानी शासकोंने फांसीपर लटका दिया था। वे अपनी जातिके एक अत्यन्त प्रभावशाली, सामर्थ्यवान् और जन-प्रिय नेता थे।''

ख़ान अब्दुल गफ़्फ़ार ख़ाँके पूर्व पुरुषोंको भाँति ही उनकी जन्म-भूमि कई दृष्टियोंसे स्मरणीय है। पेशावर ज़िलेकी चारसद्दा तहसीलका एक भू-भाग हस्तनगर, ज़मीन की उस पतली पट्टीमें स्थित है जो स्वात नदीके पूर्वकी ओर दस मीलतक चली गयी है और उत्तरकी ओरकी पहाड़ियोंसे नीचे दक्षिणमें काबुल नदीतक अपनेको फैलाये हुए है। इसके निवासी मुहम्मदज़ई हैं। मुहम्मदज़ई पठानोंकी एक छोटी परन्तु व्यवस्थित ढंगसे बसी हुई खैल है। हस्तनगरकी पश्तू अपने मुहावरों तथा उच्चारणकी शुद्धताके लिए प्रसिद्ध है। यह क्षेत्र दो भागोंमें विभक्त हो गया है; एक निचली ज़मीन जिसकी सिंचाई स्वात नदीके जलसे होती है और दूसरा ऊपर की ओरका मैदान जिसको स्वात नदीकी नहर दो भागोंमें विभाजित करती है। चारसद्दाके दो टीलोंमें जो बड़ा है, उसी स्थानपर गंधारके कुषाण-पूर्व कालकी राजधानी बसी थी। तत्पश्चात् कुषाण-सम्राटोंने पेशावर अर्थात् प्राचीन पुरुषपुरको अपना शासन-केन्द्र बनाया। चारसद्दा पेशावरसे बीस मीलकी दूरीपर स्थित है और उत्तमंज़ई चारसद्दासे चार मीलकी दूरीपर बसा हुआ एक सुन्दर गाँव है। स्वात नदीके इस तटवर्ती गाँवमें ५००० से अधिक लोग रहते हैं। इसके पश्चिममें बीस मीलकी दूरीपर मोहमंद कबीलेका इलाका है, जिसमेंसे होकर अफ़गानिस्तानमें प्रवेश किया जा सकता है। इस परिवेशमें जन्मे और पले हुए खान अब्दुल गफ़्फ़ार ख़ाँ प्रकृतिके एक बालक हैं।

''पृथ्वीपर इतना रमणीक अन्य कोई स्थान नहीं है।'' उन्होंने कहा। पेशावरकी इस उपत्यकामें सब प्रकारके फल होते हैं—खूबानी, संतरे, बेर और नाशपाती। इसके खेतोंमें गेहूं, चावल और गन्ना उत्पन्न होता है। चारसद्दा उन नदियोंकी भूल-भुलैयोंसे भरा हुआ है जो एक विशाल मैदानको हरा-भरा और उर्वर बनाती हैं। तटोंकी हरीतिमाके मध्य नहरें शांत, मन्थर गतिसे बहती

जाती हैं। उनके किनारे झुके हुए सरकारी वृक्ष हैं। यह मैदान अपनी कृषि-सम्पत्तिके कारण इस उप-महाद्वीप भारत और पुरातन विश्वके बीचके मार्गपर एक विशिष्ट महत्त्वकी स्थली रहा है।

सन् १८४९ ई० से लेकर सन् १९०१ ई० तक पश्चिमोत्तर सीमांतका यह क्षेत्र पंजाबमें जुड़ा रहा। अंग्रेज़ोंने पंजाबियोंके लिए अनेक पाठशालाएँ स्थापित कीं किन्तु उन्होंने सीमान्त प्रदेशके निवासियोंको शिक्षाकी कोई सुविधा नहीं दी। अंग्रेज और पंजाबी दोनोंने पख्तूनोंकी उपेक्षा की। सीमान्त प्रदेशके किसी गाँवमें शायद ही कहीं कोई पाठशाला रही हो। भारतके अन्य प्रान्तोंमें अंग्रेज़ सरकार क्षेत्रीय भाषाओंके माध्यमसे शिक्षा देती थी। केवल पठान जाति ही ऐसी भाग्यहीन क़ौम थी जिसको शायद ही कभी पढ़ाई-लिखाईका कोई अवसर दिया गया और यदि उसको कभी कोई अवसर दिया भी गया तो यह कि पठानोंके बालकोंको एक अन्य क्षेत्रीय भाषा उर्दू पढ़ायी गयी।

मस्जिदोंमें पख्तून बालकोंकी धार्मिक शिक्षाकी व्यवस्था थी परन्तु वह भी 'मुल्ला' या 'इमाम' बनानेके उद्देश्यसे दी जाती थी। अब्दुल गफ़्फ़ार खाँने बतलाया :

"साधारण रूपसे पठानोंको ऐसी शिक्षा में कोई रुचि न थी। इस्लामके आगमनसे पहले पख्तून हिन्दू थे और हमारे यहाँ भी यह परम्परा चल रही थी कि शिक्षाको ब्राह्मणों के लिए सुरक्षित रखा जाय।" उन्होंने कहा, "यह बहुत खेदकी बात है कि अंग्रेज़ोंने हमारे लिए कोई विद्यालय नहीं खोला। यदि कहीं कोई स्कूल था भी तो मुल्ला लोग उसके विरोधमें यह प्रचार करते थे कि उसमें पढ़ाना पाप है। उनकी यह इच्छा थी कि पठान सदैव निरक्षर रहें और सदा अज्ञानके अंधकारमें डूबा रहे। यही कारण है कि हमारा पठान समाज सारे भारतमें सबसे पिछड़ा रह गया। कैसी दयनीय स्थिति आ गयी, हमारे देशपर, जो इतिहासके विभिन्न कालोंमें शिक्षा और संस्कृतिका एक केन्द्र रहा था, दुर्भाग्य-जन्य परिस्थितियों तथा मुल्लाओंकी मूर्खता तथा जड़ताके कारण उसके बुरे दिन आ गये। इसका फल यह हुआ कि हमारे समाजका इतना पतन हो गया कि किसी भी श्रेष्ठ कार्यके प्रति उसका झुकाव ही न रहा।"

खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँने गर्व सहित कहा :

"हमारा देश विभिन्न संस्कृतियोंका साक्षी रहा है। पूर्व कालमें यह आर्य-सभ्यताका पालना रहा है। परवर्ती कालमें इसने बौद्ध धर्मको विकसित होते हुए देखा। इस कालमें यह बड़ी शीघ्रतासे प्रगतिकी सीढ़ियाँ चढ़ा। हमारे बीच

उन युगोंके स्मृति-चिह्न अब भी बिखरे पड़े हैं। अबतक बामियानमें सजीव चट्टानमेंसे कोरी हुई बुद्धदेवकी दो विशालकाय प्रस्तर-प्रतिमाएँ विद्यमान हैं। सम्भवतः वे विश्वभरमें भगवान् बुद्धकी सबसे बड़ी मूर्तियाँ हैं। पहाड़ीकी गोदमें इन मूर्तियोंको घेरे हुए एक विशाल गुहा-समूह है जहाँ किसी समय बौद्ध भिक्षुओं और नव-दीक्षित श्रमणेरोंका आवास था। बामियानकी बगलमें जलालाबादके निकट 'अड्डा' (प्राचीन हिड्डा नगर) था, जहाँ एक विशाल बौद्ध विश्वविद्यालय था। उसके अवशेष अब भी यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं। यही बात तक्षशिलाके बारेमें भी है। प्रस्तर-प्रतिमाओंका अंकन और वास्तुकलाका रचना-कौशल्य यह प्रमाणित करता है कि पठानोंकी एक महान् सभ्यता और संस्कृति रही है। मध्य एशियाके माध्यमसे उसका सुदूर-पूर्वमें प्रसार हुआ। हमने समस्त विश्वमें भगवान् बुद्धका पुण्य-संदेश मुखरित किया था। अभी कुछ दिनों पहले ही पुरातत्त्व विभागने सम्भवतः कुषाण कालका एक विशाल नगर खोजकर निकाला है। यदि हम इतिहासका सूत्र पकड़कर और पीछे जायँ तो हम देखेंगे कि पख्तूनोंका यह देश ही महान् मानव-सभ्यताका भी एक पालना रहा है। अनेक विद्वानोंका मत है कि आर्योंने आमू नदीके तटोंपर ही प्रथम दिवा-आलोक देखा था और यहीं उन्होंने अपनी संस्कृतिका एक उच्च स्तरतक विकास किया था। जब उनकी संख्या अधिक बढ़ गयी और जब उनको अपने इस क्षेत्रमें स्थानाभाव अनुभव होने लगा तब उन्होंने शनैः-शनैः नये देशोंमें स्थानान्तरण किया। उनमेंसे एक शाखा ईरान होती हुई यूरोप चली गयी और दूसरे समूहने भारतकी ओर प्रयाण किया। यहाँ आकर वे अलग-अलग समाजोंमें विभक्त हो गये। भूगोल तथा जलवायुकी स्थितियोंके अनुसार उन्होंने विभिन्न संस्कृतियों और भाषाओंका विकास किया। परन्तु जब वे अपने मूल देश 'आर्यानावेजो' अर्थात् आधुनिक अफ़गानिस्तान और पख्तूनिस्तानमें रहते थे, तब वे एक भाषा, जिसको 'आर्यिक' भाषा कहा जाता है, बोला करते थे। पख्तू इस भाषाके बहुत निकट है। यह वही आर्यानावेजो था, जिसमें इतिहासके सर्वप्रथम माने जानेवाले ज़रथुस्तने जन्म लिया था। वे बलखके निवासी बतलाये जाते हैं। बलखसे वे ईरान चले गये। बलखकी प्रशंसामें लिखी गयी उनकी कविताएँ इस तथ्यकी साक्षी हैं। यही वह देश है जहाँ कि हिन्दुओंके वैदिक सूक्तोंकी रचना हुई और इसी देशमें संस्कृतके प्रथम व्याकरणकार पाणिनिने जन्म लिया। पाणिनि सिन्धु नदके तटपर स्थित वर्तमान 'सवाबी' तहसीलके निवासी थे। 'इंडस' शब्द और इसी प्रकार 'हिन्दू' शब्द की व्युत्पत्ति पख्तू शब्द 'सिन्द' से हुई है, जिसका अर्थ नदी है।

"इस महास्थानान्तरके उपरान्त आर्य भाषा-परिवारकी केवल दो शाखाएँ पख्तून और बलूच अपने मूल स्थानमें रह गयीं, जिनको मानो इस महान् परम्परा की रक्षाका कर्त्तव्य-भार सौंप दिया गया।

"बादमें इस देशमें इस्लाम आया। जबतक इस्लाम यहाँ पहुँचा तबतक अरबोंने अपना वह आत्मिक सत्त्व, ईश्वरीय ज्ञान और आत्मसंयम खो दिया था जिसको पैगम्बर (मुहम्मद साहब) ने उनमें बूँद-बूँद करके संचय किया था और जिसका परवर्ती कालमें अबूबक़र और उमर जैसे महान् व्यक्तियोंने प्रचार किया था। अरबोंसे सबसे बड़ी भूल यह हुई कि वे अपने साम्राज्यको बढ़ाने और उसपर अपना स्वामित्व जमानेमें लग गये। तब भी, जब कि इस्लाम यहाँ आया, वे उसका विस्तार करते जा रहे थे। अपने इस विस्तारमें वे रसूलपाकके पवित्र उपदेशोंमें बतलाये गये उच्चादर्शोंको और उनके सद्गुणोंके विस्तारकी बातको भूल चुके थे।

"इसका परिणाम यह हुआ कि हम अपनी मूल महान् संस्कृतिसे तो अपरि-चित रह ही गये, हमें इस्लामकी सच्ची मूल भावना भी बदलेमें नहीं मिली। इतना होनेपर भी अनेक विद्वान् और ईश्वर-भक्तोंने इस्लामके मूल तत्त्वोंकी खोजके लिए समस्त इस्लामी जगत्में पर्यटन किया और इस्लामी दर्शन, विद्वत्ता और विचारके क्षेत्रोंमें अपना एक सम्मानजनक स्थान बनाया जिसके लिए हम आज भी गर्वका अनुभव कर सकते हैं।"

प्रारम्भिक वर्ष

१८९५-१९०९

खान वहराम ख़ाँ स्वयं पढ़े-लिखे नहीं थे परन्तु वे विद्वत्ताका आदर करते थे। उनके पुत्र अब्दुल गफ्फ़ार जव पाँच-छ: सालके हुए तव उनको एक मस्जिदमें मुल्लाके पास पढ़ने भेज दिया गया। वेचारा मुल्ला भी विद्वत्ताके क्षेत्रमें अजनवी था। उसके लिए लिखनातक कठिन था। उसने कुरान शरीफ़की कुछ सुरहें (सूरतें) कंठस्थ कर ली थीं। वह कुरान पढ़ तो लेता था परन्तु उसके अर्थ न समझ पाता था। खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँके शिक्षारम्भपर उनके माता-पिता वहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने एक समारोह मनाया जिसमें लोगोंको वहुतसे खाद्य-पदार्थ और मिठाइयाँ वांटी गयीं। मुल्लाने वालकको पहले अक्षर-ज्ञान नहीं कराया वल्कि उसने 'सिपरह' को शुरू कराया। इसमें उस वेचारेका भी कोई दोष नहीं था क्योंकि उन दिनों शिक्षाकी यही पद्धति प्रचलित थी। मुल्ला कठोर स्वभावका निर्दयी व्यक्ति था और वह अपने छात्रोंको वहुत बुरी तरह मारता-पीटता था। कुछ दिनोंमें अव्दुल गफ्फ़ारने कुरानका पाठ पूरा कर लिया। इससे उनके माता-पिताको अत्यन्त हर्ष हुआ और उन्होंने पुनः एक जश्नका आयोजन किया। उसमें निर्धनोंको वड़ी उदारताके साथ दान दिया गया। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मुल्लाको भी इस दानमेंसे एक अच्छा खासा हिस्सा मिला।

पठानोंमें शिक्षाके प्रति चाव था और अधिकतर लोग अपने वच्चोंको पढ़ने के लिए मस्जिदमें भेजा करते थे। गाँवमें अन्य कोई विद्यालय तो था नहीं। यदि कहीं कोई था भी तो मुल्ला लोग उस शिक्षासे लाभान्वित नहीं होने देते थे। उनका कहना था कि इन विद्यालयोंकी पढ़ाई इस्लाम-विरोधी; 'कुफ्र' है। उन्होंने अपने शिष्योंको तथा अन्य अशिक्षित लोगोंको एक कविता सिखलायी थी, जिसको वे लोग वड़े उत्साह के साथ वाज़ारों और गलियोंमें गाते थे :

सवक़ चि: द मद्रसे वाई। द पारह द पैसे वाई।
जन्नत के व: ज़ाए नवी। दोजख के व: घंसे वही॥

इसका अर्थ यह था :

"जो मदरसेमें पढ़ते हैं, वे पैसेके लिए पढ़ते हैं। उनको स्वर्गमें कोई स्थान नहीं मिलेगा और वे लोग नरकमें जायँगे।"

अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके सौभाग्यसे उनके पिता एक निर्भीक, विशाल हृदयके व्यक्ति थे और माता एक पुण्यशील, ममतामयी महिला। उन्होंने मुल्ला लोगोंके फतवे और उनके अनुयायियोंकी बातोंपर कोई ध्यान नहीं दिया। समूचे हस्त-नगरमें खान साहब पहले बालक थे जिनको किसी विद्यालयमें पढ़ने भेजा गया था। उस समय उनकी वय आठ वर्षकी थी। मुल्ला लोग पीठ पीछे बहराम खाँके परिवारकी बुराई किया करते थे परन्तु उन लोगोंमें इतना साहस न था कि खानके विरुद्ध खुला कुफ्र फतवा दे सकते। बहराम खाँ गाँवके सबसे बड़े और लोकप्रिय खान थे।

अब्दुल गफ्फ़ारको कहानियाँ बहुत अच्छी लगती थीं। वे कहानियोंकी पुस्तकें पढ़ते थे और दूसरोंके मुँहसे भी बड़े चावसे सुनते थे। फर्राशके लड़के उनके खेलके साथी थे। उनके अन्य सहपाठी प्रायः उनसे कहा करते, 'ये तो भंगी हैं। तुम इनके साथ क्यों खेलते हो?' लेकिन वे किसीकी बात न सुनते थे और न उन लोगोंकी रोकथाम अब्दुल गफ्फ़ारके मनपर कोई प्रभाव ही डाल पाती थी। यहाँतक कि बड़े हो जानेपर भी उनका दस्तकार लोगोंसे विशेष सम्बन्ध रहा जैसे कुम्हार, जुलाहे या बढ़ई।

उन्होंने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा म्युनिसिपल बोर्ड हाई स्कूलकी प्रारम्भिक कक्षाओंमें प्राप्त की और फिर उन्होंने पेशावरके ही एडवर्ड्स मेमोरियल हाई स्कूल में अपना प्रवेश ले लिया। इस विद्यालयके प्रधानाध्यापक रैवरेण्ड ई० एफ० ई० बिगरम थे। अब्दुल गफ्फ़ार खाँके बड़े भाई खान साहब भी वहीं पढ़ रहे थे। उन्होंने इसी विद्यालयसे सन् १९०५ ई० में पंजाब विश्वविद्यालयकी मैट्रीकुलेशन परीक्षा उत्तीर्ण की। तबतक सीमा-प्रान्तमें अपना कोई विश्वविद्यालय न था। पेशावरका एडवर्ड्स मेमोरियल मिशन कालेज सारे पश्चिमोत्तर प्रदेशमें अकेला महाविद्यालय था जो सन् १९०३ ई० में लाहौरके पंजाब विश्वविद्यालयसे सम्बद्ध हुआ था। सीमान्त प्रदेशमें सन् १८९१ ई० में मैट्रीकुलेशन परीक्षोत्तीर्ण विद्यार्थियोंकी संख्या कुल पन्द्रह थी और सन् १९०३ ई० में ७१। सारे प्रान्तमें उन दिनों मुश्किलसे एक दर्जन हाई स्कूल होंगे। उनमें भी पेशावर और बन्नूके हाई स्कूल सबसे अच्छे और चुने हुए समझे जाते थे जिनकी व्यवस्था रैवरेण्ड मि० वेगरम और रैवरेण्ड डाक्टर पैन्नेलके हाथोंमें थी।

सीमाप्रान्तमें मिशन स्कूलोंकी स्थापनाके समय मुल्लाओंने यह फ़तवा दिया कि जो भी व्यक्ति अपने बालकोंको इन ईसाई स्कूलोंमें भेजेंगे, उनका जातिसे बहिष्कार कर दिया जायगा। फिर उनका यह आदेश हुआ, "बालकोंको इन

स्कूलोंमें जाने दिया जाय परन्तु इस बातका ध्यान रखा जाय कि वे लोग अंग्रेजी भाषा न सीखने पायें क्योंकि वह उनको अपने धर्मकी निन्दा सिखलायेगी। वह निश्चित ही उनकी आत्माओंका हनन कर देगी।" बादमें मुल्लाओंका आदेश इन रूपमें बदल गया, "बच्चोंको इन स्कूलोंमें तबतक अंग्रेजी पढ़ने दी जाय जबतक कि वे ईसाइयतकी धर्म-पुस्तकें नहीं पढ़ते क्योंकि ईसाई इन्हीं पुस्तकोंके द्वारा हमारे विचारोंको दूषित करते हैं और इन पुस्तकोंको पढ़ना मुसलमानोंके लिए विधि-संगत नहीं है।"

मिशन स्कूलमें पढ़ाईका प्रारम्भ छात्रोंकी हाज़िरीसे होता था। उस समय प्रधानाध्यापक धर्म-पुस्तक बाइबिलका कोई अंश पढ़कर सुनाते थे। यद्यपि खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँ विद्यालयकी प्रवृत्तियोंमें भाग लेते थे फिर भी वे बहुधा अपने निजके विचारोंमें डूबे रहते थे और एक शांत जीवन विताते थे। उनकी खेलोंमें विशेष रुचि न थी, यद्यपि वे क्रिकेट और फुटबॉल खेला करते थे। वे अपने साथियोंके पास गेंद-बल्ले तथा खेलका सामान पहुंचाकर उनकी खेलमें सहायता करते थे। वे कभी-कभी अपनी बन्दूक लेकर शिकारको भी निकल जाते थे परन्तु वे किसी पशु-पक्षीका आखेट नहीं करते थे। उनके घनिष्ठ मित्र अब्दुल रहमान थे जो बादमें सन् १९११ ई० में डाक्टर एम० ए० अन्सारीके साथ उनके 'रैड क्रीसेन्ट मिशन' में तुर्की गये। फिर वे वहीं ठहर गये और कमाल अतातुर्कके एक प्रसिद्ध सहयोगी बने।

सन् १९०६ में अब्दुल गफ्फ़ारके बड़े भाई मेडिकल कॉलेजमें प्रवेश लेनेके लिए बम्बई गये। उन दिनों अब्दुल गफ्फ़ार खाँ छठी कक्षाके विद्यार्थी थे। उनकी पढ़ाई अपने उसी स्कूलमें चलती रही। उन दिनों उनके पास एक नौकर बारानी काका रहा करता था। वह सेनाकी नौकरीकी चमक-दमककी ओर विशेष रूपसे आकृष्ट था। वह अब्दुल गफ्फ़ार खाँके चित्तको भी उसी ओर खींचनेका निरन्तर प्रयत्न करता रहता था। बारानी काकाको वे फौज़ी अफसर अच्छे लगते थे, जो चुस्त वर्दी पहनकर, अपनी कमरमें तलवार लटकाये हुए अनुशासित सैनिकोंके आगे-आगे चलते थे। कुछ बारानी काका का आग्रह और कुछ अपनी स्वयंकी इच्छासे बिना माता-पितासे आज्ञा लिये ही उन्होंने भारतके प्रधान सेनापतिके पास सेनामें आयोगके लिए एक प्रार्थना-पत्र भेज दिया। प्रत्येक पठान जन्मजात सिपाही होता है। अब्दुल गफ्फ़ार खाँके पक्षमें कई बातें थीं। सबसे मुख्य बात यह थी कि वे एक प्रतिष्ठित परिवारके तरुण थे। उनके सम्बन्धमें सरकारी तौर-पर छानबीन कर ली गयी और वे सरकारके निर्णयकी प्रतीक्षा करने लगे। उस

समय वे दसवीं कक्षामें पढ़ रहे थे। जिस समय उनकी मैट्रीकुलेशन परीक्षा चल रही थी और आधे प्रश्नपत्र हो चुके थे, उस समय उनको यह सरकारी सूचना मिली कि उनका कमीशन स्वीकृत हो चुका है और उनके लिए अगले दिन प्रातः दस बजे भर्ती करनेवाले अधिकारीके आगे उपस्थित होना आवश्यक है। अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँको यह आदेशपत्र पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई। उन्होंने परीक्षाको बीचमें ही छोड़ दिया और भर्तीके कार्यालयमें पहुँच गये। वहाँ उनकी जाँच हुई और उनका नाम कार्यालयकी सीधी नियुक्ति-सूचीमें आ गया।

मरदानमें रिसाला और पैदल सेना दोनोंकी छावनी थी। ये लोग सारे भारतमें 'गाइड्स'के नामसे प्रसिद्ध थे। उसमें धनी और प्रभावशाली व्यक्तियोंके लड़के भी बड़ी कठिनाईसे सिपाहीके स्थानपर भर्ती हो पाते थे। यह सेना विश्वस्त, स्थानीय लोगोंसे तैयार की गयी थी और वह युद्धके मैदानमें स्थल-सेनाकी आँख-कानका काम देती थी। इन लोगोंमें बहुत अर्सेसे गहरे लाल रंगकी वर्दी चल रही थी लेकिन इसी दृष्टिसे उसको हटाकर उसके स्थानपर धूलके रंगकी वर्दी, जिसे 'ख़ाकी' कहा गया, दे दी गयी थी। बादमें वही वर्दी राष्ट्रमंडलकी समूची स्थल-सेनाकी लड़ाईकी वर्दी बन गयी।

'गाइड्स'का प्रथम संवर्ग सन् १८४६ ई० में पेशावरमें संगठित किया गया और कुछ वर्षोंके पश्चात् यह कोर मरदान आ गयी। अब्दुल गफ्फ़ार खाँकी नियुक्ति 'गाइड्स'में की गयी थी क्योंकि वे एक अच्छे प्रभावशाली व्यक्तित्वके चुस्त युवा समझे गये थे। उनकी लम्बाई छः फुट तीन इंच थी और उनका परिवार धनी और प्रतिष्ठित था। इस नियुक्तिसे उनके पिताको अत्यधिक प्रसन्नता हुई।

अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँ एक दिन अपने एक मित्रसे मिलनेके लिए पेशावर गये, जो वहाँके रिसालेमें एक अधिकारी था। जब वे लोग खड़े हुए आपसमें बात-चीत कर रहे थे तबतक एक अंग्रेज, जो सेनामें 'सब आल्टर्न'[1] था, वहाँ आया। अब्दुल गफ्फ़ार खाँका मित्र नंगे सिर था और उनके सिरपर अंग्रेज़ी ढंगसे कटे और संवारे हुए बाल थे। अंग्रेज़ अधिकारी इससे चिढ़कर बोला, "वैल, सरदार साहब तुम भी अंग्रेज़ बनना चाहते हो?" उसकी यह बात सुनकर सरदार साहब का चेहरा एकदम निस्तेज, पीला पड़ गया परन्तु उनमें इतना साहस न हुआ कि पलटकर उस अंग्रेज़को जवाब दे सकें। अब्दुल गफ्फ़ार खाँके मनपर इस घटना की बड़ी तीव्र प्रतिक्रिया हुई और उन्होंने यह निश्चय कर लिया कि अब मैं सेनामें

१. एक मध्य श्रेणीका सैनिक अधिकारी।

रहकर अंग्रेज़ोंकी नौकरी नहीं करूँगा। "निश्चित ही सेनाका अपना एक आकर्षण था।" अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँने कहा, "मेरे वहाँ कई परिचित लोग थे जो उच्च पदों पर कार्य कर रहे थे। मैंने आत्म-प्रशंसा करके मनको समझाना भी चाहा कि मैं सब प्रकारसे उन लोगों जैसा हूँ और इस योग्य हूं कि अंग्रेजोंके बीच उनके समान स्तर और स्थितिको बनाकर चल सकूँ। परन्तु ईश्वरकी इच्छा इसके विपरीत थी।"

उन्होंने शीघ्रतामें जो निर्णय लिया, उसका उनके पिता बहराम ख़ाँने घोर विरोध किया और वे उनसे रुष्ट हो गये। उनकी दृष्टिमें 'गाइड्स' की जिस जगहको अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँ ठुकरा रहे थे, वह अनेक लोगोंके लिए एक प्रलोभन थी। अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँको सेनाकी नौकरी में अब कोई रुचि न रही थी। अपितु इसके विपरीत वे उसे अपने लिए एक अपमानजनक तथा हेय वस्तु समझने लगे थे। अपना नैतिक समर्थन प्राप्त करनेके लिए उन्होंने अपने बड़े भाई डॉ० ख़ान साहबको विस्तारसे एक पत्र लिखा। डॉ० ख़ान साहबने उनके विचारोंकी पुष्टि करते हुए अपने पिताको चिट्ठीमें यह लिखा, "कृपया आप इनके ऊपर अपना दबाव न डालिए और न इनसे किसी प्रकारसे असंतुष्ट ही होइए।"

इसके पश्चात् अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँ अपने अध्ययन-क्रमको चालू रखनेके लिए अपने एक साथीके साथ कैम्बलपुर रवाना हो गये और उन्होंने वहाँके एक विद्यालयमें प्रवेश ले लिया, परन्तु कैम्बलपुर एक अति उष्ण स्थान था। स्वास्थ्यकी दृष्टिसे उनको वहाँकी जलवायु अनुकूल न लगी। उन्हीं दिनों उनके मनमें अरबी भाषा सीखनेकी उत्कंठा जागी। कादियानके मौलवी नूरुद्दीनके यशने उनके मनको अपनी ओर खींच रखा था। अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँ अपने प्रान्तको छोड़कर अपने एक मित्रके साथ उनके पास चले गये परन्तु वहाँका वातावरण भी उनको अपने अनुकूल न लगा। उन्होंने वहाँ एक रातको एक विचित्र स्वप्न देखा। उन्होंने देखा कि मैं एक कुएँमें गिर पड़ा हूँ। उसी समय एक आदमी मेरे पास आया और उसने अपनी बाँह नीचे झुकाकर मुझको कुएँमेंसे खींच लिया। फिर वह मुझसे बोला: "क्या तुम यह कुआँ नहीं देख रहे हो जिसमें तुमने अपने आपको गिरा लिया था? सवेरे जब वे जागे तब उन्होंने अपना यह सपना अपने साथीको सुनाया। फिर उन दोनोंने अपने गाँव लौट आनेका निश्चय कर लिया।

कुछ दिनोंके बाद अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँ अलीगढ़ चले आये और उन्होंने वहाँ अपना दाख़िला ले लिया। वे शहरके एक होटलमें रहकर पढ़ने लगे। अलीगढ़में एक वर्ष रहनेके पश्चात् वे गर्मियोंकी छुट्टियोंमें अपने घर लौटे। उन्हीं दिनों उनके

पिताको अपने बड़े पुत्रका एक पत्र मिला। खान साहब उन दिनों इंगलैण्डमें चिकित्सा शास्त्रका अध्ययन कर रहे थे। उन्होंने अपने इस पत्रमें लिखा था कि यदि उनके छोटे भाईको इंजीनियरिंगकी पढ़ाईके लिए इंगलैण्ड भेज दिया जाय तो ठीक रहेगा। अब्दुल गफ्फ़ार खाँका गणित बहुत अच्छा था और उसमें विशेष रूपसे ज्यामिति। इसीलिए खान साहबने उनको यह राय दी थी।

बहराम खाँने यह निश्चित कर लिया कि उनका दूसरा पुत्र भी अध्ययनके लिए इंगलैण्ड जायगा। उन्होंने खान साहबको यह सूचना भी दे दी, और खान साहबने अपने भाईके लिए पी० एण्ड ओ० स्टीमशिपमें स्थान सुरक्षित करा लिया। अब्दुल गफ्फ़ार खाँके पिताने उनको समुद्र-यात्राकी तैयारी कर लेनेके लिए तीन हज़ार रुपये दिये। अब्दुल गफ्फ़ार खाँ जब अपनी मातासे विदेश जानेकी अनुमति लेने गये तो वे रोने लगीं। वे उनको किसी प्रकार विदेश भेजनेको राज़ी न थीं। अब्दुल गफ्फ़ार खाँने उनकी स्वीकृति प्राप्त करनेके लिए बहुतसे तर्क दिये परन्तु कोई परिणाम नहीं निकला। लोगोंने उनकी मातासे यह कहा था और स्वयं भी उनको यह विश्वास हो गया था कि उस विलक्षण देश, विलायतमें जो भी जाता है, वह वहींका हो जाता है। फिर वह अपनी जन्म-भूमिमें लौटकर नहीं आता। लोगोंने उनसे कहा, "तुम्हारा एक पुत्र तो विदेश गया ही है। अब वह अपने देशमें लौटकर नहीं आयेगा। यदि तुम्हारा दूसरा लड़का भी चला गया तो सच-मुच यह तुम्हारा दुर्भाग्य होगा। तुम बिलकुल अकेली रह जाओगी।" उन लोगों-को डर था कि विदेश जाकर कहीं अब्दुल गफ्फ़ार ईसाई न हो जायें अथवा किसी अंग्रेज़ लड़कीसे विवाह करके अपने परिवारसे सम्बन्ध न तोड़ लें। इसके अलावा बहराम खाँके खानदानमें कुछ मौतें भी हो गयीं थीं। उनको एक अप-शकुन समझा गया और उनका प्रभाव भी अब्दुल गफ्फ़ार खाँकी विदेश-यात्रापर अच्छा न पड़ा। उनकी माता अपने पुत्रको न भेजनेके निश्चयपर दृढ़ थीं। अब्दुल गफ्फ़ार खाँके मनमें अपनी माताके प्रति अतिशय प्रेम था और वे भी उनको बहुत चाहती थीं। अपनी माँके हृदयको ठेस लगाकर उन्हें विदेश जाना अच्छा न लगा।

अब्दुल गफ्फ़ार खाँ मि० विगरमसे विशेष प्रभावित थे। बहुत छोटी उम्रमें ही विगरम साहबके ईसाइयतके आदर्शने उन्हें प्रेरणा दी थी और उनको अपने देशके लिए सर्वस्व निछावर करनेकी भावनासे परिचित कराया था। अब्दुल गफ्फ़ार खाँने कहा :

"मैंने अपनी शिक्षा मिशन स्कूलमें ली थी, और मेरे अन्य साथी इस्लामिया स्कूलमें पढ़ते थे। मेरी शिक्षाने मेरे मनमें जाति और देशके प्रति एक स्वार्पणकी

भावना भर दी परन्तु मेरे साथियोंमेंसे किसीका भी इस ओर झुकाव न हुआ। इसका श्रेय मेरे उन शिक्षकोंको है जिन्होंने मेरे मनपर अपना गहरा प्रभाव डाला था। जिस अध्यापकने मुझपर सबसे अधिक प्रभाव डाला और मेरे मनमें ईश्वरके सब जीवोंके प्रति सेवाकी एक भावना जाग्रत की वे एक अंग्रेज सज्जन रैवरेण्ड मिस्टर ई० एफ० ई० विगरम थे। उनके एक भाई डॉक्टर थे। वे एक विख्यात परिवारके थे और दोनों भाइयोंने मिशनको अपना जीवन अर्पित किया था। उनके माता-पिता उनका पूरा व्यय वहन करते थे। बड़े भाई एडवर्ड्स मेमोरियल मिशन हाई स्कूलके प्रधानाध्यापक थे और छोटे भाई मिशनके चिकित्सालयका कार्य-भार संभाले हुए थे। दोनों भाई जिस प्रेम और उत्साहसे जनताकी सेवा कर रहे थे, उसका मैं एक प्रत्यक्ष साक्षी था। मैं उनके बंगलेके निकट छात्रावासमें रहता था। हमारे हेडमास्टर विगरम साहब तीन-चार निर्धन छात्रोंको अपने पास-से छात्रवृत्ति देते थे। मेरे ऊपर इसका भी गहरा प्रभाव पड़ा था। मैंने अपने मन-में कहा, 'हम पख्तूनोंको अपने निर्धन भाइयोंसे कोई सहानुभूति नहीं है—वस्तुतः चाहिए तो हमें परन्तु ये लोग जो बाहरसे आये हैं तथा जिनका राष्ट्र और धर्म भी हमसे भिन्न है, मानवताके नाते हमारे यहाँके लोगोंसे सहानुभूति रखते हैं!' यही कारण था कि मैं उनके रंगमें रँग गया। फारसीमें एक कहावत है—

"खर्बूज़ा खर्बूज़ा दीदा रंगकी गरिद्" खरबूजाको देखकर खरबूजेका रंग पलटता है।

"जब मेरी माताने मुझको इंगलैण्ड जानेकी अनुमति नहीं दी तब मैंने यह निश्चय कर लिया मैं ईश्वरके सब जीवोंकी सेवा करूँगा—विशेष रूपसे अपने यहाँ के लोगोंकी जो इस समय अपनी मूढ़ता और पिछड़ेपनके कारण दुर्भाग्य और विनाशकी ओर बढ़ते जा रहे हैं।

सुधारक

१९१०–१५

मुल्लाओंको यह डर लगा कि यदि जनता जाग्रत हो गयी तो उनको दान और भेंटें मिलनी बन्द हो जायंगी। अब्दुल गफ्फ़ार खाँने उनको समझाया कि जनताकी सफलता और समृद्धिमें ही उनका कल्याण निहित है और किसी राष्ट्रकी प्रगति जन-जाग्रतिपर निर्भर होती है। ब्रिटिश मुल्लाओं, धर्म-प्रचारकोंकी सब प्रकारकी सारी व्यवस्था की जाती है और वे एक आरामका जीवन बिताते हैं। इसका कारण यह है कि ब्रिटेन एक सफल और समृद्ध देश है। इस्लामने शिक्षा प्राप्त करनेको प्रत्येक स्त्री-पुरुषका धर्म बतलाया है। मुहम्मद साहबने कहा है कि ज्ञानकी खोज करो, भले ही तुम्हें उसके लिए चीन जैसे दूर देशमें जाना पड़े। अब्दुल गफ्फ़ार खाँने मुल्ला लोगोंसे कहा, "अशिक्षित बने रहनेसे यह कहीं अच्छा है कि लोग अंग्रेजोंके खोले हुए स्कूलोंमें अपने बालकोंको पढ़ायें। यदि तुम यह कहते हो कि लोगोंको अंग्रेज़ोंके स्कूलोंमें नहीं जाना चाहिए तो तुम उनके लिए अपने विद्यालय खोलो।" उन्होंने मुल्लाओंको सब प्रकारसे समझाया और उनमें जाग्रति लानेका प्रयत्न किया परन्तु उनको सफलता नहीं मिली। उन्होंने सोच लिया, "यदि ईश्वरकी इच्छा नहीं है कि इन मुल्लाओंको समझ आये तो भला मैं क्या कर सकता हूँ?"

अब्दुल गफ्फ़ार खाँ और उनके कतिपय सहयोगियोंने आपसमें मिलकर विचार-विमर्श किया। वे लोग संगठित होकर शिक्षाका प्रसार करना चाहते थे। इस कार्यमें तरंगज़ईके हाजी साहबने, जो स्वयं एक विद्वान् और धार्मिक वृत्तिके पुरुष थे, बहुत सहायता की। तरंगज़ई उत्तमंज़ईसे केवल एक मीलकी दूरीपर बसा हुआ गाँव है। सन् १९११ ई० में जब हाजी साहबने शिक्षा-प्रचारके उद्देश्यसे अपने विद्यालय खोलने प्रारम्भ कर दिये तब उनकी ख्याति और भी बढ़ गयी। अब्दुल गफ्फ़ार खाँ और उनके साथियोंने हाजी साहबके संरक्षणमें 'दार-उल-उलम' नामक संस्थाकी स्थापना की। उसकी व्यवस्थाका कार्य मौलवी ताज मुहम्मदको सौंपा गया था। मौलवी फज़ल रब्बी और मौलवी फज़ल मुहम्मद इस कार्यमें उनके सहयोगी थे। इस संस्थाका उद्देश्य शिक्षाका प्रचार था और उसके व्यापक प्रसार के लिए गाँवोंमें विद्यालय खोलना था। अब्दुल गफ्फ़ार खाँ और मौलवी अब्दुल

अजीज़ने सन् १९१० में उत्तमंजईमें एक विद्यालय खोला। थोड़े ही दिनोंमें सारे प्रदेशमें ऐसे अनेक विद्यालय खुल गये। उनमें काफ़ी विद्यार्थियोंने दाखिला भी लिया।

अब्दुल गफ्फ़ार खाँ तथा उनके सहयोगियोंने देशके कतिपय प्रमुख इस्लामी शिक्षा-संस्थाओंसे अपना संपर्क स्थापित किया। उनके साथी फज़ल रब्बी साहब और फज़ल मखफी साहबने अपनी शिक्षा देवबन्दमें ग्रहण की थी जो कि उन दिनों एक प्रधान शिक्षा-केन्द्र समझा जाता था। मौलवी महमूदुल हसन उसके प्रधानाचार्य थे। वे स्वयं एक प्रख्यात विद्वान् तथा धर्मपरायण व्यक्ति थे। उन्हींने अब्दुल गफ्फ़ार खाँका परिचय मौलवी अबीदुल्लाह सिंधीसे कराया था, जो दिल्लीकी फतहपुरी मस्जिदमें अंग्रेज़ी पढ़े-लिखे युवकोंको कुरान शरीफ़ पढ़ाया करते थे। वे हर एक पढ़नेवालेको पचास रुपये महीने वजीफ़ा दिया करते थे। उनकी धारणा यह थी कि समाजका अंग्रेजी पढ़ा-लिखा वर्ग धार्मिकतासे दूर है। यदि वह इस्लामकी सच्ची भावनासे परिचित हो जाय तो वह समाजकी अपेक्षाकृत अधिक सेवा कर सकता है। देवबन्दका शिक्षा-संस्थान अलीगढ़की ब्रिटिशपोषक विचारधारासे टक्कर लेनेके लिए खड़ा किया गया था और उसने देशमें कई विद्यालय स्थापित किये थे। सीमाप्रान्तके अनेक लोगोंने अपनी धार्मिक शिक्षा देवबन्दमें ली थी। अब्दुल गफ्फ़ार खाँ और उनके कुछ साथी, समय-समयपर गुप्त रूपसे देवबन्द जाया करते थे और वहाँ पहुँचकर आवश्यक विषयोंपर राय लेते थे तथा उन लोगोंके साथ विस्तारसे विचार-विमर्श करते थे। अंग्रेज सरकारने उस संस्थामें अपने गुप्तचर छोड़ रखे थे जो उसके पास वहाँके सारे समाचार पहुँचाते रहते थे।

अब्दुल गफ्फ़ार खाँका उन धर्मोपदेशकोंसे भी सम्पर्क था जो अत्यन्त क्रान्तिकारी विचारोंके लोग समझे जाते थे। अब्दुल गफ्फ़ार खाँके बहुतसे साथी उन लोगोंके शिष्य रह चुके थे। अब्दुल गफ्फ़ार खाँ उर्दू पत्र 'ज़मींदार' और उर्दू साप्ताहिक पत्र 'अल हलाल' के नियमित रूपसे ग्राहक थे। 'अल हलाल' का सम्पादन मौलाना अबुल कलाम आज़ाद किया करते थे। इस पत्रका प्रकाशन उर्दू पत्रकारिताके क्षेत्रमें एक नया मोड़ था। इसका प्रथम अंक जून १९१२ में निकला और प्रकाशित होते ही उसने जनतामें एक हलचल पैदा कर दी। 'अल-हलाल' की मांग इतनी अधिक हुई कि पहले तीन महीनोंके उसके सारे पुराने अंक फिर छापने पड़े क्योंकि ग्राहक पत्रके शुरूसे पूरे अंक चाहते थे।

मुस्लिम राजनीतिका नेतृत्व उस समय अलीगढ़ दलके हाथोंमें था और

उसके लोग स्वयंको सर सैयद अहमद ख़ाँकी नीतियोंका 'ट्रस्टी' समझते थे। उनका बुनियादी सिद्धान्त यह था कि मुसलमान ब्रिटेनके सम्राट्के प्रति राजभक्त रहें और अपने-आपको स्वाधीनताके आन्दोलनसे अलग रखें। जब 'अल हलाल' ने एक अलग नारा उठा लिया और उसकी लोकप्रियता तथा खपत बढ़ गयी तब उन लोगोंने यह समझा कि उनके नेतृत्वको चुनौती दी गयी है। वे इसीलिए 'अल हलाल' का विरोध करने लगे और यह विरोध इतना बढ़ गया कि उन्होंने पत्रके सम्पादक मौलाना आज़ादको जानसे मार डालनेकी धमकीतक दे डाली। पुराने नेतृत्वने 'अल हलाल' का जितना विरोध किया, वह उतना ही लोकप्रिय होता गया। दो वर्षमें 'अल हलाल' की साप्ताहिक खपत २६,००० प्रतियोंतक पहुँच गयी। यह एक ऐसी संख्या थी जो उर्दू पत्रकारिताके क्षेत्रमें अबतक सुनी न गयी थी।

जो 'अल हलाल' के ग्राहक बने थे, उनका नाम पुलिसकी काली सूचीमें दर्ज था। अब्दुल गफ़्फ़ार ख़ाँ केवल इस साप्ताहिकके नियमित ग्राहक एवं पाठक ही नहीं थे बल्कि वे उसे पढ़कर औरोंको सुनाते भी थे। लोग इस पत्रको बहुत पसंद करने लगे थे।

बहराम ख़ाँ अपने पुत्रकी इन प्रवृत्तियोंके कारण एक बेचैनीका अनुभव कर रहे थे। उनकी दो पुत्रियोंका विवाह अच्छे घरोंमें हो चुका था। उनके बड़े पुत्र ख़ान साहब भी विवाहित थे। वे इंगलैण्डमें अपना डाक्टरीका अध्ययन पूरा कर चुके थे। बहराम ख़ाँकी यह सबसे छोटी संतान—अब्दुल गफ़्फ़ार ख़ाँ अपने कमीशनसे त्यागपत्र दे चुके थे और उन्होंने खेती, धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन और गाँवोंमें शिक्षा-प्रसारके कार्यको अपना लिया था। उनकी ये बातें बहराम ख़ाँ की समझमें न आती थीं। सबसे छोटी संतान होनेके कारण अब्दुल गफ़्फ़ार माँ के अधिक लाड़ले थे। वे अपने बूढ़े पिताको अत्यधिक प्यार करते थे। अपने कार्योंके लिए वे पिताके आगे कोई न कोई उचित कारण रख देते थे और वृद्ध पिता उनको क्षमा कर दिया करते थे। माँ हमेशा अब्दुल गफ़्फ़ारके पक्षमें रहती थीं। शायद वे पिताकी अपेक्षा उनके विचारोंको अधिक समझती थीं और जिसे वे ठीक समझती थीं उसीको वास्तवमें ठीक समझा भी जाता था। बहराम ख़ाँने एक गाँवकी व्यवस्था अब्दुल गफ़्फ़ार ख़ाँको सौंप दी; जिस लड़कीके साथ वे शादी करना चाहते थे, उससे उनकी शादी कर दी। फिर यह आशा करने लगे कि उनका पुत्र अपने निराले विचारोंको त्याग देगा और अन्य लोगोंकी भाँति व्यवस्थित जीवन बितायेगा।

अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँका विवाह सन् १९१२ ई० में हो गया और दूसरे वर्ष उनके एक पुत्र ग़नी उत्पन्न हुआ। उनकी पत्नी उदार प्रकृतिकी ममतामयी नारी थीं। वे अपनी पत्नीको अत्यन्त प्रेम करते थे। वे एक अभिजात परिवारकी कन्या थीं और उनका लालन-पालन बड़े स्नेहसे हुआ था। अब्दुल गफ़्फ़ार ख़ाँ अपने पुत्रसे भी स्नेह करते थे परन्तु बहुत बार अलावके पास बैठे हुए जब वे उसे प्यारसे खिला रहे होते तब उसकी ओर ध्यान न देकर अन्य विचारोंमें खो जाते थे। उनकी पत्नी उनके चित्तकी इस अन्यमनस्कताको देखती थीं, इन लम्बी चुप्पियों को भी देखती थीं और वे उनको बिलकुल अच्छी न लगती थीं। धीरे-धीरे उनको यह आभास होने लगा कि कोई ऐसी चीज़ ज़रूर है जिसके कारण उनके शक्ति और सौन्दर्य-सम्पन्न पतिने उनकी सुन्दर आँखों और लाड़ले बेटेको भुला रखा है। अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ कम बोलते थे और कोई उनके मनकी थाह न ले पाता था।

पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तमें इन दिनों सरकारके डरसे राजनीतिक सभाएँ नहीं होती थीं। अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँ अपने प्रिय समाचारपत्रोंके माध्यमसे देशकी सामयिक घटनाओंकी जानकारी रखते थे। सन् १९१३ की बात है। उन्होंने आगरामें मुस्लिम लीगके वार्षिक अधिवेशनका समाचार प्रकाशित देखा, जिसका सभापतित्व सर इब्राहीम रहीमतुल्लाह कर रहे थे। मौलाना आज़ाद तथा अन्य प्रमुख व्यक्तियोंके नाम भाषण-कर्त्ताओंकी सूचीमें थे। अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ इस अधिवेशनमें गये और वह उनको अच्छा लगा। इसके बाद वे दिल्ली रुके और तत्पश्चात् अपनी शिक्षा-सम्बन्धी प्रवृत्तियोंको चलानेके लिए अपने गाँवमें लौट आये।

सन् १९१४ में मौलाना मोहमेदुल हसनके अनुरोधपर वे अपने सहयोगी फ़ज्ले मुहम्मद और मौलवी फ़ज्ले रब्बीके साथ देवबन्द गये। वहाँ मौलवियोंकी एक सभा हुई जिसमें यह निश्चय किया गया कि पश्चिमोत्तर प्रदेशके कबायली इलाके में एक केन्द्र खोला जाय और अंग्रेजोंकी दासतासे भारतको मुक्त करनेके लिए वहींसे संघर्षकी तैयारियाँ शुरू की जायँ।

इस उद्देश्यको लेकर पहले भी बुनरमें एक केन्द्र स्थापित किया गया था परन्तु कुछ समयके पश्चात् यह पता चला कि जिन लोगोंके हाथोंमें कार्यभार सौंपा गया है, वे सही किस्मके आदमी नहीं हैं। तथाकथित धर्म-युद्धकर्त्ता निष्क्रिय लोग थे और स्थानीय जनतासे उनका कोई सम्पर्क न था। उनके बीचमें कुछ मुख़बिर भी थे। अब यह कार्य ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँ और मौलवी फ़ज्ले

मोहमंदको सौंपा गया। उनको बाजोड़में ऐसी जगह चुननी थी जो सब प्रकारसे उपयुक्त हो और निरापद भी हो। इस केन्द्रके स्थानके चयनका अंतिम निर्णय मुख्य रूपसे मौलाना ओबेदुल्लाह सिन्धीपर छोड़ दिया गया।

अपने गाँवमें पहुँचनेके कुछ समय बाद ही खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ और उनके साथी चुपचाप बाजोड़ चल दिये। वे ट्रेनसे दरगई पहुँचे और वहाँसे टमटमपर मालाकण्डकी सीमापर, जहाँ कि सशस्त्र सैनिकोंका पहरा था। इस चौकीके सिपाहियोंका काम यह था कि वे हर एक व्यक्तिकी, चाहे वह पैदल हो या किसी सवारीपर, तलाशी लें और छानबीन करें। यदि उनको किसी मनुष्यपर तनिक भी सन्देह हो जाय तो वे उसे तत्काल गिरफ्तार कर लें। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ टमटमकी पिछली सीटपर बैठे थे और उन्होंने अपनेको एक चादरसे ढँक लिया था। उनकी सूरत-शक्ल और डीलडौल ऐसा था कि उसका छिप सकना कठिन था और जब एक सिपाही टमटमके पास आया तब वे व्यग्र हो उठे। शामका समय था और रात तेज़ीसे घिरती आ रही थी। चतुर टमटमवालेने सवारियों-का पक्ष लिया। उसने सिपाहीसे कहा, "साहब टमटममें कुछ नहीं है।" उनके साथी टमटमसे पहले ही उतर पड़े थे। वह सिपाही टमटमके पास आया और उसके भीतर एक दृष्टि डालकर बोला, "ठीक है, जा सकते हो।" वे लोग थोड़ी दूरतक गाड़ीमें गये और फिर एक गाँवमें रात बितानेके लिए टमटमसे उतर आये। वहाँ रात व्यतीत करके उन्होंने दूसरे दिन बहुत सवेरे ही चलना प्रारम्भ कर दिया। सारा दिन पैदल चलनेके बाद संध्याके समय वे लोग एक छोटी नदी के निकट पहुँच गये। उन दिनों जाड़ेके दिन थे और नदीमें पानी बहुत कम था। उन लोगोंने उसे पार किया और मौलवी फज्ले मुहम्मदके गाँवमें पहुँच गये। ये लोग बहुत थक चुके थे इसलिए इन्होंने रातको और दूसरे दिन पूर्ण विश्राम किया। फज्ले मुहम्मद मौलाना ओबेदुल्लाह सिन्धीको बुलाने चले गये और अपने फुफेरे भाईको खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके पास उनकी देखभालके लिए छोड़ दिया।

कठोर भू-प्रदेशमें तीन दिनकी दुःसाध्य पैदल यात्राके पश्चात् वे लोग बाजोड़ पहुँच गये। उत्तरमें बाज़ोड़की सीमा पंचकोरा नदी निश्चित करती थी। पूर्व और दक्षिणकी ओरसे वह मामुन्द कबीलोंके इलाकेसे घिरा था और पश्चिममें कुनार नदीकी धारा थी जो बाज़ोड़को अफ़गानिस्तानसे अलग करती थी। इस क्षेत्रकी जन-संख्या १,००,००० थी और उसका क्षेत्रफल ५,००० वर्गमील था। ख़ान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँ इस इलाकेके प्रायः प्रत्येक गाँवमें गये और अपना केन्द्र बनाने के लिए उन्होंने मामुन्दोंके इलाकेका ज़गई गाँव चुना। वहाँ उन्होंने ओबेदुल्लाह

सिन्धीकी काफ़ी दिनोंतक प्रतीक्षा की। उनपर गाँववालोंको कही सन्देह न हो जाय, इसलिए वे एक मस्जिदके पासकी छोटी-सी कोठरीमें चले गये और 'चिल्ला' (४० दिनका धार्मिक व्रत) रखने लगे। इस अवधिके पश्चात् भी जब ओबेदुल्लाह साहब नहीं आये तब ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँ और उनके साथी मालाकण्डकी ओर चल दिये।

मालाकण्डमें 'पोलिटिकल एजेण्ट' (राजनीतिक अभिकर्त्ता) का इतना आतंक जमा हुआ था कि वहाँके प्रभावशाली लोग भी एक सामान्य अंग्रेजको देखकर कांप उठते थे। उसको देखते ही वे झुककर दूरसे सलाम करते थे। यदि कोई कबायली किसी अंग्रेजको बिना सलाम किये निकल जाता तो उसे गिरफ्तार कर लिया जाता था और हथकड़ियाँ कस दी जाती थीं। अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँ मालाकण्डसे चल दिये और इस सतत श्रमसाध्य यात्राको पूरा करनेके बाद अपने गाँव लौट आये। उनसे मिलनेके लिए बहुतसे लोग आने लगे क्योंकि घरसे चलते समय उन्होंने यह कह रखा था कि वे तीर्थयात्राके लिए अजमेर शरीफ़ जा रहे हैं।

इसके कुछ अर्सेके बाद प्रथम विश्व-युद्ध छिड़ गया और क्रांतिकारी प्रवृत्तियोंके इस केन्द्रकी योजना कार्यान्वित नहीं हो सकी। देवबन्दके मौलाना मोहमेदुल हसन हजके लिए मक्का चले गये। उन्हें वहीं बन्दी बनाकर ब्रिटिश सरकारको सौंप दिया गया। ओबेदुल्लाह साहब अफ़ग़ानिस्तान चले गये और उनके साथ ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँके कई निकट सहयोगी भी। हाजी साहब अपनी शैक्षणिक प्रवृत्तियोंको सजग रखना चाहते थे। जनताने उनको अनुकूल सहयोग भी दिया था परन्तु मुल्ला लोगोंने उनके विरुद्ध षड्यंत्र रचा। मुल्लाओंका कुचक्र यह था कि उनको अंग्रेज़ सरकारको सौंप दिया जाय और फिर आरोप लगाये जायँ। किसी प्रकारसे हाजी साहबको इसकी सूचना मिल गयी और वे मामुन्दोंके इलाकेमेंसे बचकर निकल गये। अंग्रेज अधिकारियोंने उनके विद्यालय बन्द करा दिये और अध्यापकोंको गिरफ्तार कर लिया। इस प्रकार ख़ान अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँका अपना एक विश्वस्त प्रभावशाली मित्र एवं सहयोगी खो गया।

सन् १९१५ के दिसम्बर मासमें उनके दूसरे पुत्र वलीके उत्पन्न होनेके बाद उनका बड़ा लड़का ग़नी बीमार पड़ गया और उसकी दशा गम्भीर हो गयी। उन दिनों देशभरमें इन्फ्लूएंजाकी बीमारी व्यापक रूपसे फैली हुई थी। ग़नी भी उसी रोगसे पीड़ित हो गया और उसकी दशा इतनी बिगड़ गयी कि वह अचेत हो गया। उसके उठकर खड़े होनेकी सारी आशाएँ धूमिल हो गयीं। संध्याका समय था। ख़ान अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँ अपनी नमाज़ पढ़ चुकनेके बाद उसी चटाईपर

बैठे प्रभुसे कृपाकी याचना कर रहे थे। सामने चारपाईपर ग़नी लेटा हुआ था। तभी ग़नीकी माँ भीतर आयीं। उन्होंने अपने पुत्रकी चारपाईकी एक परिक्रमा की और फिर ग़नीके सिरहाने जाकर खड़ी हो गयीं। उनके हाथ प्रार्थनाके लिए ऊपर उठे हुए थे और नेत्रोंसे आंसू झर रहे थे। उन्होंने विनत भावसे सर्वशक्तिमान् ईश्वरसे प्रार्थना की, "ऐ अल्लाह ! मेरे बच्चेकी यह तक़लीफ और यह रोग उसकी जगह मुझे दे दे और इस बच्चेकी ज़िन्दगी बचा ले।" वह रात बहुत कष्टमें बीती। दूसरे दिन सबेरेसे ग़नीकी हालत धीरे-धीरे सुधरने लगी और उसकी माँ बीमार पड़ गयीं। ग़नी नीरोग हो गया लेकिन उसकी माताकी मृत्यु हो गयी। उस समय उनकी आयु पचीस वर्षकी भी न हुई थी।

खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँकी बेचैनी बढ़ने लगी। उन्होंने दोनों बच्चोंको उनकी दादीके ऊपर छोड़ दिया, अपनेको कार्यव्यस्ततामें खो दिया और निजके दुःखको जन-सेवामें विस्मृत कर दिया। उनको प्रेमका एक नया पात्र–उनकी जनता मिली। पख़्तूनोंको मिलकर रहना चाहिए, संगठित होना चाहिए, शिक्षित होना चाहिए और उनकी दशामें सुधार होना चाहिए। जनताका ध्यान उन्होंने उसके जीवनमें व्याप्त कष्ट तथा अज्ञानके अंधकारकी ओर आकर्षित किया। उन्होंने यह चेष्टा की कि पख़्तून अपने जीवनके सम्बन्धमें गम्भीरतासे विचार करें। उनको काफी हदतक सफलता भी मिली। हस्तनगरके सीधे-सादे पठान एक दिन एक मस्जिदमें एकत्र हुए और उन्होंने यह घोषणा की कि खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँ उनके हृदय-सम्राट् 'बादशाह' हैं। इस प्रकार वे 'बादशाह ख़ाँ' बन गये और सामान्यतः उनको इसी उपाधिसे जाना भी जाता है।

डुबकी

१९१५-१६

सन् १९१४ में युद्धकी घोषणा सीमा-प्रान्तकी जनताके मनको अपनी ओर उतना आकृष्ट न कर सकी और न उसमें उतनी हलचल ही पैदा कर सकी जितनी कि उससे अपेक्षा की जा रही थी। पेशावर ज़िलेसे लगभग १२,००० व्यक्तियोंने सेनाकी भर्तीमें अपने नाम लिखवाये। सन् १९१८ की सन्धिके रूपमें यूरोपमें शत्रुताकी समाप्तिसे एक विश्वव्यापी उल्लास छा गया परन्तु इस उल्लास का मुख्य कारण युद्धमें मित्र-राष्ट्रोंकी विजय उतनी न थी जितनी कि वस्तुओंके चढ़े हुए मूल्योंके तेज़ीसे नीचे गिरनेकी सम्भावना; एक आशा जो बादमें कटु निराशा में बदल गयी। सुधारोंके लिए आकुलता और ऊँचे मूल्योंके भारके कारण जो वातावरण भारतमें था वह सीमा-प्रान्तमें भी पहुँच गया।

भारतको यद्यपि युद्धकी लपटोंने स्पर्श नहीं किया परन्तु उसके प्रभाव तो साक्षी रूपमें थे ही। सन् १९१८ ई० के जुलाई मासमें 'मॉन्टेग्यू चेम्सफोर्ड रिपोर्ट' बाहर आयी। उसमें पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तके अपवादको छोड़कर, भारतके शेष समस्त प्रान्तोंमें एक उत्तरदायी शासनका नया प्रयोग करनेकी सिफारिश की गयी थी। उसमें पठानोंके लिए मताधिकार नहीं था, निर्वाचन नहीं था, विधानसभा नहीं थी, मंत्रिमण्डल नहीं था; यहाँतक कि स्थानीय संस्थाओंके चुनाव भी नहीं थे। पठानोंने इस सौतेले व्यवहारके प्रति अपना रोष व्यक्त किया।

सन् १९१९ ई० का साल भारतके इतिहासमें सर्वाधिक यातनापूर्ण वर्षोंमेंसे था। जनताका प्रत्येक अंग लड़ाई छेड़नेके लिए तैयार था। किसान वर्ग ऊँचे मूल्योंके कारण अत्यंत कष्ट उठा रहा था। उद्योगोंमें लगा हुआ श्रमिक वर्ग भय उत्पन्न करनेवाली उन शर्तोंके कारण क्षुब्ध था, जिनके अन्तर्गत उसको कार्य करना था। परिणामस्वरूप वर्षके प्रारम्भसे ही ऐसी हड़तालें होनी शुरू हो गयी थीं जो इससे पहले कभी न हुई थीं। पराजित खलीफाके प्रति ग्रेट-ब्रिटेनने जो व्यवहार किया, उससे मुसलमान ब्रिटेनके ऊपर क्रोधित थे। इधर भारतीय कांग्रेसके उग्रवादी तत्त्व आश्वासन भंग कर दिये जानेके कारण शासनसे रुष्ट थे।

भारतकी अंग्रेज़ सरकार यह अनुभव कर रही थी कि उसकी लोकप्रियता घटती जा रही है। परन्तु वह विद्रोहकी आवाज़को चुप कर देना चाहती थी।

राजद्रोहके अपराधपर विचार करनेवाली समिति 'सेडिशन कमेटी' की सिफ़ारिशोंका समावेश करते हुए सन् १९१९ ई० में 'रॉलट बिल्स' जनताके समक्ष आये। 'भारत-रक्षा नियम' [डिफेन्स ऑफ इंडिया रूल्स] की अवधि समाप्त हो जानेके कारण जो स्थिति उत्पन्न हो गयी थी, उसे संभालनेके लिए किया गया यह एक अस्थायी उपाय था। दूसरे विधेयकका उद्देश्य देशके अपराध-क़ानूनमें एक स्थायी परिवर्तन करना था। राजद्रोहकी भावनाको जगानेवाले किसी भी पर्चेको, प्रकाशित और प्रसारित करनेके लिए अपने पास रखना एक ऐसा दंडनीय अपराध निश्चित किया गया था जिसके लिए कारावास दंड दिया जा सकता था। इसपर गांधीजीने सत्याग्रहकी प्रतिज्ञा करते हुए यह कहा :

"ये अधिनियम अनुचित हैं। ये स्वाधीनता और न्यायके सिद्धांतोंका हनन करनेवाले और व्यक्तिके उन मूलभूत अधिकारोंको मिटा देनेवाले हैं, जिनके ऊपर समग्र रूपसे लोक, समाज और शासनकी सुरक्षा आधारित है। हमारा यह दृढ़ निश्चय है कि इन विधेयकोंके कानून बननेकी स्थितिमें अथवा इनके वापस न लिये जानेपर, हम बड़ी विनम्रताके साथ इन कानूनोंकी अवज्ञा करेंगे। हम अपना यह निश्चय भी व्यक्त करते हैं कि इस संघर्षमें हम बड़ी निष्ठाके साथ सत्यके पथका अनुसरण करेंगे और किसी व्यक्तिके जीवन या उसकी सम्पत्तिके लिए किसी भी प्रकारकी हिंसाको प्रश्रय न देंगे।"

गांधीजी उस समयतक देशके सार्वजनिक जीवनमें सबसे प्रमुख स्थान ले चुके थे। आनेवाले सुधारोंके फल लोगोंकी दृष्टिसे ओझल होकर पृष्ठ-भूमिमें चले गये और 'रॉलट बिल्स', जिनको 'शासन-सत्ताके शरीरके गहरे, जमे हुए रोगका निश्चित लक्षण' कहा गया, जनताकी कटु आलोचना और रोषके लक्ष्य बन गये।

सभी निर्वाचित भारतीय सदस्योंके सम्मिलित विरोधके होते हुए भी बदनाम 'रॉलट बिल्स', मार्च सन् १९१९ में स्वीकृत हो गये। श्री श्रीनिवास शास्त्री, मि० मुहम्मद अली जिना, सरदार वल्लभभाई पटेल तथा अन्य अनेक नेताओंने शासनके इस क़दमको ग़लत बतलाया। गांधीजीने भारतकी जनताका आह्वान किया और कहा कि वह हजारोंकी संख्यामें आन्दोलन करे और शासनको यह विश्वास दिला दे कि इस कानूनके फलस्वरूप उसे निकट भविष्यमें उससे क्या आशा रखनी चाहिये। देशव्यापी हड़तालकी तारीख़ मूल रूपसे ३० मार्च निश्चित की गयी थी, परन्तु बादमें वह बदलकर ६ अप्रैल कर दी गयी। भूलसे दिल्लीमें यह हड़ताल एक सप्ताह पहले ही, अपनी पूर्वनिश्चित तारीखको मना ली गयी। यह हड़ताल अत्यंत सफल रही। आर्यसमाजके एक महान् नेता स्वामी

श्रद्धानन्दने दिल्लीकी प्रसिद्ध जामा मस्जिदके आगे एक बहुत बड़ी सभामें भाषण किया। पुलिस और सेनाने वहाँ एक विशाल जुलूसको भंग कर देनेकी कोशिश की। इस मौकेपर गोली चली और कुछ लोग हत हुए। दिल्लीके चाँदनी चौकमें स्वामी श्रद्धानन्दने, जो काफ़ी लम्बे थे और जो अपने संन्यासी वेशमें अत्यंत भव्य प्रतीत होते थे, अपने नग्न वक्षपर गोरखोंकी संगीनोंके वार झेले। इस दुर्घटनासे सारे भारतमें एक सनसनी फैल गयी।

६ अप्रैलकी राष्ट्रव्यापी हड़ताल पूर्ण रूपसे सफल रही। उसकी विशेषता थी, एक अभूतपूर्व उत्साह! इधर-उधर हिंसाकी भी कुछ छिटफुट घटनाएँ हुईं और शासनने दमनकी दिशामें अत्यधिक कठोर कदम उठाये। १३ अप्रैलको अमृतसरके जलियाँवाले बाग़में एक शान्तिपूर्ण सभा हो रही थी कि गोली चला दी गयी और ये गोलियाँ तबतक बरसती ही रहीं जबतक कि खत्म नहीं हो गयीं! सैंकड़ोंकी संख्यामें निहत्थे शान्त नागरिक, पुरुष, स्त्रियाँ और बच्चे मारे गये। अमृतसर शब्द 'कत्ले आम' का पर्यायवाची बन गया। समूचे पंजाबमें कहीं-कहीं इससे भी जघन्य, इससे भी अधिक लज्जाजनक कुकृत्य हुए। सारे प्रदेशमें फौजी कानून (मार्शल लॉ) घोषित कर दिया गया।

भारतके स्वाधीनता आन्दोलनमें पश्चिमोत्तर प्रदेशने पूरी तरहसे भाग लिया। ६ अप्रैलको उत्तमंजईमें एक सभा हुई जिसमें काफ़ी संख्यामें लोग उपस्थित थे। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने इस जन-सभामें भाषण किया। इस सभामें 'रॉलेट बिल्स' के सम्बन्धमें भर्त्सनाका एक प्रस्ताव भी स्वीकृत किया गया। यह एक ऐतिहासिक अवसर कहा जा सकता है जब कि खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके ९० वर्षके वृद्ध पिता खान बहराम खाँ अपने जीवनमें पहली बार किसी भी राजनीतिक सभामें उपस्थित हुए।

ब्रिटिश सरकारने जनतामें अपना आंतक फैलाना शुरू कर दिया। उसी समय अफ़गानिस्तानके साथ युद्ध भी छिड़ गया। अफ़गानिस्तानके शाह अमानुल्लाह खाँ-का रुख भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके प्रति सहानुभूतिपूर्ण था। तत्काल ही पेशावर जिलेमें 'फ़ौजी कानून' घोषित कर दिया गया। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ और उनके कतिपय सहयोगी अपना घर छोड़कर मोहमंदोंके इलाकेमें चले गये जहाँसे उनका इरादा अफ़गानिस्तानकी ओर बढ़ जानेका था। ये लोग मोहमंदोंके इलाकेमें पहुँचे ही थे कि उनके पीछे-पीछे खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँके पिता भी पहुँच गये। उन्होंने इन लोगोंको अफ़गानिस्तान नहीं जाने दिया और उन्हें उत्तमंजई वापस ले आये। अधिका-रियोंके डरसे ये लोग दिनमें बाहर छिपे रहते थे और रातके समय घर आते थे।

किन्तु पुलिसको इन लोगोंकी उपस्थितिका पता चल गया। उसने खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको गिरफ्तार कर लिया और उनको मरदान ले गयी। वे मरदानकी जेलमें रख दिये गये और दूसरे दिन पुलिस-अधीक्षकके आगे उपस्थित किये गये। उसने खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके पाँवोंमें बेड़ियाँ डाल देनेकी आज्ञा दी अतः उनको फिर जेलमें ले जाया गया। जेलमें उनके पैरोंकी नापकी, इतनी बड़ी बेड़ियाँ न थीं। जेलके अधिकारियोंने बड़ी कठिनाईसे उनके पाँवोंमें बेड़ियाँ डालीं। फिर उनको ले जाकर एक मोटर-कार में बैठा दिया गया। मरदानके पुलिस-अधीक्षक और सहायक आयुक्त उनको अपने साथ पेशावर ले गये और वहाँ उनको पेशावरके पुलिस-अधीक्षकके सामने प्रस्तुत किया गया। बादमें उनको ले जाकर पेशावरकी छावनीमें बन्दी बना दिया गया। उनके पाँवोंसे, जिनमें कि बेड़ियाँ पड़ी थीं, रक्त बह रहा था। दूसरे दिन एक अफरीदी दरोग़ा उनकी कोठरीमें आकर बोला, "बाहर आ जाओ। तुमको अदालतके सामने हाजिर होना है।" इस उद्दंड अधिकारीसे बहस करनेका कोई अर्थ न था, इसलिए उन्होंने उससे केवल इतना कहा, "मेरे पाँवोंमें बहुत दर्द है, इसलिए मैं वहाँ पैदल नहीं जा सकता। यदि तुम एक ताँगा ले आओ तो चला चलूँगा, वरना नहीं जाऊँगा।" अंतमें वे एक ताँगेमें बैठकर न्यायालय गये जहाँ कि तीन-चार अंग्रेज़ बैठे हुए थे। उन लोगोंने खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँसे कुछ प्रश्न किये। उन्होंने पूछा, "क्या तुम घूम-घूमकर, लोगोंको सरकारके खिलाफ़ भड़काते हो ?" खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँने उनको उत्तर दिया, "जिन लोगोंमें मैं घूमता हूँ, वे सब आपके राज-भक्त खान और मलिक हैं।" प्रश्नोंको पूछ चुकनेके बाद वे लोग फैसला करनेके लिए बैठ गये और इस बीचमें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको बाहर भेज दिया गया। एक घंटेके पश्चात् उनको कारागार ले जाया गया और उस बैरक में रख दिया गया जिसमें बहुतसे पठान बंदी थे।

खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँने अपनी गिरफ्तारी, मुकदमेकी विचारणा और तत्पश्चात् जेल भेजे जानेका वर्णन इस प्रकार किया है :

"मेरे जेल भेजे जानेका कारण सत्याग्रह नहीं था। अधिकारीवर्गके लिए इतना काफ़ी था कि मैंने ६ अप्रैलको उत्तमंज़ईकी सार्वजनिक सभामें भाषण किया था। यद्यपि मुझे गिरफ्तारकर लिया गया परन्तु मेरे आरोपपर विचार नहीं किया गया। मुझसे पूछा गया कि क्या मैं पठानोंका बादशाह हूँ ? मैंने कहा कि मैं यह नहीं जानता। मैं केवल इतना जानता हूँ कि मैं एक समाज-सेवक हूँ और दूसरी बात यह कि हम लोग रॉलट बिल्सको बर्दाश्त नहीं करेंगे। मेरे ऊपर जिरगाका

सदस्य-मण्डल प्रतिनियुक्त किया गया। उसने मुझे सब तरहकी धमकियाँ दीं और मुझसे तरह-तरहके खुले तर्क किये। इन लोगोंने मुझसे एक तर्क यह किया कि 'सीमान्त-अपराध विनियम' [फ्रन्टियर क्राइम रेग्यूलेशन], जो इस समय भी इस प्रदेशमें लागू है, क्या 'रॉलेट बिल' से भी बदतर नहीं है ? और यदि पठानोंको इसके विरोधमें कोई शिकायत नहीं है तो क्या इसे उचित ठहराया जा सकता है कि वे रॉलेट एक्टके विरोधमें आयोजित सार्वजनिक सभाओं और आन्दोलनोंमें भाग लें ? इसके अलावा ब्रिटिश भारतके लोगोंने पठानोंके प्रति शायद ही कभी सहानुभूति दिखलायी हो। ऐसी स्थितिमें पठान ही क्यों ब्रिटिश भारतके उन कृतघ्न लोगोंके लिए कोई खतरा मोल लेनेको तैयार हों ?"

"उनके यह सब तर्क मुझपर निष्फल सिद्ध हुए। मैं अपने संकल्पपर दृढ़ रहा, इसलिए अन्य अनेक लोगोंके साथ गिरफ्तार कर लिया गया।"

"मैं साधारण नहीं बल्कि सबसे खतरनाक अपराधी समझा गया। मुझे हथकड़ियाँ डालकर जेलमें ले जाया गया और जबतक मैं कारावासमें रहा, मेरे पैरोंमें बेड़ियाँ पड़ी रहीं। मेरा वज़न २२० पाउण्ड था और जेलमें मेरे पाँवकी नापकी बेड़ियाँ न थीं। मेरे लिए विशेष बेड़ियाँ बनवायी गयीं या नहीं, यह मैं नहीं जानता लेकिन मेरे पाँवकी बेड़ियाँ खोजनेमें जेलवालोंको काफ़ी दिक्कत हुई। जब उन्होंने मेरे पाँवोंमें बेड़ियाँ पहनायीं तब मेरे टखनेके ऊपरका मांस छिल गया और उसमेंसे काफी खून निकलने लगा। प्रत्यक्ष रूपसे जेलके अधिकारी इससे चिन्तित न जान पड़े। उन्होंने कहा कि थोड़े ही दिनोंमें मैं इनका अभ्यस्त हो जाऊँगा। मानो यह सब भी काफ़ी नहीं था। उन्होंने मुझको एक गम्भीर अपराध की लपेटमें लेनेका भी दुष्टतापूर्ण प्रयास किया। मेरे गाँवके एक पठानपर टेली-ग्राफके तार काटनेका आरोप लगाया गया था। उसके अपराधकी सुनवाई हुई और उसे दंड देनेका निश्चय हुआ। उससे पूछा गया कि क्या वह मुझको जानता है ? उसने इसे स्वीकार किया और कहा कि मेरी अपीलपर ही उसने इस आन्दोलनमें हिस्सा लिया है। उस पठानसे अगला प्रश्न किया गया, "अच्छा, तो क्या इन्होंने तुमको तार काटनेके लिए प्रेरित किया ?" इसके उत्तरमें उसने जोर देकर कहा, "नहीं।" बादमें जब मेरे पिता मुझसे मिलनेके लिए आये तो मुझको देखकर उन्हें अत्यन्त आनन्द हुआ। मेरे बारेमें फाँसीपर लटका दिये जानेकी अफ़वाह उड़ गयी थी।"

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ और उनके साथियोंको गिरफ्तार करनेके लिए सेनाकी टुकड़ी उत्तमंज़ई गयी थी। उन लोगोंने गाँवको घेर लिया और सब गाँववालोंको

आज़ाद स्कूलके अहातेमें एकत्र कर लिया। फिर उन्होंने अपनी बन्दूकोंको उठाया और उनको तेज़ीसे भरने लगे। लोगोंने समझा कि बस, अब वे गोलीसे उड़ा दिये जायंगे इसलिए वे ईश्वरसे अन्तिम प्रार्थना करने लगे। वास्तवमें यह चाल गाँवके लोगोंको डरा देनेके लिए चली गयी थी। इसके बाद सेना गाँवको लूटनेमें लग गयी। उत्तमंजई गाँवके ऊपर ३०,००० रुपयेका दण्ड-कर निश्चित किया गया था लेकिन १,००,००० से भी अधिक रुपयोंकी ज़बरदस्ती उगाही की गयी। १५० व्यक्तियोंको तबतकके लिए जेलमें बन्धककी भाँति रखा गया जबतक कि वे दण्ड-कर न चुका दें। बहराम खाँ और उनके कई सम्बन्धियोंको भी तीन मासतक जेलमें रखा गया। बहराम खाँको इस बातकी बड़ी खुशी थी कि उनको उसी जेलमें रखा गया था, जिसमें कि उनके पुत्र थे। "अगर ऐसा न होता तो मैं अपने बेटेको न जाने कब, कितने दिनों या सालोंमें देख पाता!"

अंग्रेजोंके लिए यह बड़ी उद्विग्नताका समय था क्योंकि देशमें आन्दोलन चल रहा था और उसके साथ ही उन दिनों अफगानिस्तानके आक्रमणकी सम्भावनाएँ भी बढ़ गयी थीं। अंग्रेज पठानोंके ऊपर अपना आतंक जमाकर पश्चिमोत्तर प्रदेश में आन्दोलनको कुचल देनेका पक्का इरादा कर चुके थे। परन्तु तत्कालीन चीफ़ कमिश्नर सर जॉर्ज रोसकेपलने, जो एक सुयोग्य और जनताके प्रति सहानुभूति रखनेवाले शासक थे, इस दमन-चक्रको रोक दिया। छः मासके कारावासके पश्चात् खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको रिहा कर दिया गया।

हिज्रतकी हलचल

१९२०

जब ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ जेलसे बाहर आ गये तब उनके वृद्ध माता-पिताने उनकी सगाई तय कर दी और उनके शीघ्र विवाहकी इच्छा करने लगे। एक दिन ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ अपने चचेरे भाई अब्बास ख़ाँके साथ इसी सम्बन्धमें कुछ खरीदारीके लिए पेशावर जा रहे थे। वे सरदरयाब पहुँच पाये थे कि उनको पुलिसके सिपाही पुलके निकट प्रतीक्षा करते हुए मिले। उन्होंने दोनों भाइयोंको गिरफ़्तार कर लिया। इन लोगोंको वापस चारसद्दा थाने ले आया गया। वहाँसे ये लोग सी० आई० डी० के मुख्य अधिकारी मि० शार्टके बंगलेपर ले जाये गये और वहाँ जाड़ेकी कड़कड़ाती सर्दीमें उनको बाहर सड़कपर खड़ा रखा गया। शामका समय था। शार्ट शराब पीकर आरामसे अपनी अंगीठीके पास बैठा था।

"हम लोगोंको किसलिए गिरफ्तार किया गया है? जिस समय मुझे पुलिसके अफ़सरके आगे हाज़िर किया जाय, उस समय मैं क्या कहूं?" सर्दीमें ठिठुरते हुए अब्बास ख़ाँ ने अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँसे पूछा। उन्होंने कहा कि आप निडर होकर सच-सच बोलिए और कोई झूठा बयान न दीजिए।

काफ़ी रात बीत जानेके बाद मि० शार्टने, जो एक अहंकारी अफ़सर समझे जाते थे, उन दोनोंको पूछ-ताछके लिए बुलवाया। इन लोगोंको नौशेराके एक बम-काण्डमें शरीक होनेके सन्देहमें पकड़ा गया था। जिस समय बिना किसी व्यग्रताके ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ उनके प्रश्नोंका उत्तर दे रहे थे, उस समय मि० शार्टने ज़ोरसे कहा, "धीमे बोलो।" ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ बोले, "जब मैं ज़ोरसे बोलता हूं, तब आप मुझे धीमे बोलनेके लिए कहते हैं और जब मैं धीमे बोलता हूं तो आप मुझे ज़ोरसे बोलनेके लिए कहते हैं। कृपया आप ही मुझे बोलकर बतला दीजिये कि कैसे बोला जाय?" यह बात सुनकर मि० शार्ट क्रोधित हो गये और उन्होंने इन लोगोंको पुलिसके सिपाहियोंको सौंप दिया। उन्होंने ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ और अब्बास ख़ाँको ले जाकर अलग-अलग कोठरीमें बन्द कर दिया। अब्बास ख़ाँ अब्दुल ग़फ्फार ख़ाँसे अलग हो गये। उस रातको इन लोगोंको खाना नहीं दिया गया।

कोठरीका फर्श सीमेन्टका था और उसका दरवाजा छड़दार था। उसके फर्शपर दो कम्बल पड़े हुए थे। बड़ा भयानक शीत था। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ उन कम्बलोंको ओढ़नेके लिए विवश थे। जब वे सवेरे सोकर उठे तब उनके सारे कपड़ोंमें जूँ भरी हुई थीं। वे उनको एक-एक करके बीनने और बाहर फेंकने लगे। उस हवालातमें उनको एक सप्ताहतक रखा गया और इसके बाद एक अंग्रेजके सामने उपस्थित किया गया। अंग्रेज़ने दोनों भाइयोंको रिहा कर दिया।

"मुझको किसलिए गिरफ़्तार किया गया था ?" खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने उससे पूछा।

"मैं तुम्हारे मामलेकी जाँच कर रहा था।" उसने लापरवाहीसे उत्तर दिया।

"क्या आप मुझे गिरफ़्तार करनेसे पहले जाँच नहीं कर सकते थे ?"

"यह मेरे ऊपर निर्भर है कि पहले गिरफ़्तार करके पूछ-ताछ करूँ या पहले पूछ-ताछ करके गिरफ़्तार करूँ।" अंग्रेजने प्रत्युत्तर दिया।

"कुछ भी हो, मैं भी एक इंसान हूं।" अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ ने कहा, "कुछ मेरी स्थितिको सोचिए। आपने व्यर्थ मुझको परेशानीमें डाल दिया। मैं भाग नहीं रहा था। मेरा अपराध निश्चय करनेके बाद भी आप मुझे गिरफ्तार कर सकते थे।"

"क्या आप अपनी स्थितिकी कथा सुनाने लगे ?" अंग्रेजने बातको संक्षेपमें खत्म करते हुए कहा। यहींपर आकर बात समाप्त हो गयी और खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ अपने गाँवको वापस लौट आये।

अपने माता-पिताकी इच्छाके अनुसार अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने दूसरा विवाह कर लिया। फिर वे सार्वजनिक कल्याणकी प्रवृत्तियोंमें डूब गये। जेलके अनुभव ने उनको राजनीतिके निकट ला दिया था। वे सन् १९२० के प्रारम्भमें खिलाफ़त सम्मेलनमें सम्मिलित होनेके लिए दिल्ली चले आये जिसमें कि महात्मा गांधी, मौलाना आज़ाद, हकीम अजमल ख़ाँ, अली बन्धु (मौलाना शौकत अली और मुहम्मद अली) तथा कई प्रमुख मुसलमान नेता भाग ले रहे थे। विश्व-युद्ध-की सन्धिकी शर्तोंमें एक ऐसा प्रस्ताव भी था जिसके अनुसार तुर्कीके खलीफ़ाकी उन शक्तियोंमें, जो कि उनको अपने धार्मिक पदकी प्रधानताके कारण मिली हुई थीं, कटौती की गयी थी। खलीफा तुर्कीके सुलतान भी थे। मुसलमानोंने इसे अपने धर्मके विरुद्ध माना और इसे ब्रिटिश सरकारकी ओरसे प्रतिज्ञा-भंगका कार्य

समझा। भारतके मुसलमान धर्माचार्योंने, जिनकी ऐक्यशक्ति और प्रभाव सन् १८५७ के ग़दरके बाद बिखर चुके थे, पुनः संगठन-शक्तिकी आवश्यकताका अनुभव किया। मौलाना अबुल कलाम आज़ाद अपनी गहन-विद्वत्ता, धार्मिक निष्ठा और वक्तृत्व शक्तिके साथ अपने आधुनिक दृष्टिकोणको लेकर क्षेत्रमें उतरे थे। उन्हीं दिनों उनको नज़रबन्दीसे रिहा किया गया था। मुसलमान नेताओंमें सबसे कम वयके होनेपर भी गांधीजीके लिए वे एक बड़े शक्ति-स्तम्भ थे। मौलाना आज़ादने ख़िलाफ़तके प्रश्नको लेकर असहयोग आन्दोलनके कार्यको प्रारम्भ करनेका प्रस्ताव रखा था।

हिज्रत, खिलाफ़त आन्दोलनकी एक निकटकी शाखा थी। ब्रिटेनने तुर्कीके खलीफ़ाके सम्बन्धमें जो नीति अपनायी थी, उससे अपनी असहमति प्रकट करनेके हेतु अनेक भारतीय मुसलमानोंने स्वदेश-त्यागका निश्चय कर लिया। भारत उनके लिए 'दार-उल-हर्ब', (युद्धका देश) बन गया। उन्होंने अपना सर्वस्व त्यागकर इसे छोड़ देना और 'हिज्रत' (धर्म-यात्रा) करके 'दार-उल-अलम' (शांतिके देश)में चले जाना अपना धार्मिक कर्त्तव्य समझा। उनकी दृष्टिमें वही सच्चे विश्वासियोंका देश था। जिन लोगोंने इस त्यागका संकल्प कर लिया, वे पेशावर होते हुए खैबर दर्रातक गये और वहाँसे होकर अफ़ग़ानिस्तानमें प्रवेश कर गये। पेशावरमें एक 'हिज्रत समिति' का गठन हो गया था। देशान्तरण करके अफ़ग़ानिस्तान जानेवाले उसीके द्वारा जाते थे। यह समिति 'मुहाजरीनों' अर्थात् देश-त्याग करके जानेवालोंको सब प्रकारकी सुविधाएँ देती थी। अंग्रेज़ सरकारने अपने नागरिकोंको पहले हिज्रतके लिए निरुत्साहित किया। बादमें वह भी लोगोंको अधिकसे अधिक संख्यामें देश छोड़कर जानेके लिए उत्साहित करने लगी। उसने सोचा कि अपना देश छोड़कर दूसरे देशमें जानेवाले इन उत्प्रवासियोंके पहुँच जानेसे अफ़ग़ानिस्तान अपने ऊपर एक बड़े बोझका अनुभव करने लगेगा। वह स्वयं भी भारतके इन राजनीतिक कार्यकर्त्ताओंसे छुटकारा पाना चाहेगा। अंग्रेज़ सरकारने देश त्यागकर अफ़ग़ानिस्तान जानेवाले इन लोगोंमें अपने कुछ गुप्तचर भी भेज दिये। मुल्लाओंने फतवा दिया कि जो लोग 'हिज्रत' नहीं करेंगे, उनका अपनी पत्नियोंके ऊपर कोई अधिकार नहीं रहेगा। बहुत-सी महिलाओंने भी अपने पतियोंका साथ दिया। पेशावर ज़िलेके कई हज़ार निवासी अफ़ग़ानिस्तान चले गये और प्रदेशके अन्य ज़िले भी थोड़े-बहुत अंशोंमें इससे प्रभावित हुए। अगस्त, सन् १९२० में १८,००० पठानोंने अपने खेत, घरबार और दूकानें बेच दीं तथा काबुल चले गये। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने 'मुहाजरीनों' के एक बड़े दलका

नेतृत्व किया। उनके ९० वर्षीय वृद्ध पिता भी इस दलके साथ चलनेको उत्सुक थे परन्तु बहुत प्रयत्नके बाद उनको आग्रहपूर्वक घरपर रोका गया।

शाह अमानुल्लाहकी यह इच्छा थी कि अपने देशमें आनेवाले इन लोगोंको वे उपजाऊ भूमि और नौकरी दें तथा व्यापारके लिए भी सुविधाएँ दें। परन्तु गुप्त-चरोंने वहाँ जानेवाले लोगोंको गुमराह कर दिया। लोग कहने लगे कि हम यहाँ काम करनेके लिए नहीं बल्कि एक पवित्र युद्धमें जूझनेके लिए आये हैं। मुझमें इतनी शक्ति नहीं है कि मैं अंग्रेजोंके विरोधमें युद्ध छेड़ सकूँ परन्तु मैं आप लोगों-को एक अलग बस्तीमें बसा सकता हूँ। अमानुल्लाह ख़ाँने कहा, "अंग्रेज़ोंके विरोधमें युद्ध छेड़नेके लिए आप अपना बल अर्जित कीजिए। मैं आपको पूरी सहायता दूँगा क्योंकि अंग्रेज़ उस काले नागकी भाँति हैं जो मुझको कभी शान्तिसे नहीं बैठने देंगे।" उन्होंने इन प्रवासियोंकी सहायताकी पूरी कोशिश की परन्तु वह व्यर्थ गयी। हिज्रत-आन्दोलन असफल हो गया।

जिन दिनों ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँ काबुलमें थे, उन्हीं दिनों उन्होंने शाह अमानुल्लाह ख़ाँसे भेंट की। शाह पश्तूको छोड़कर कई भाषाएँ जानते थे। ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँने शाहका ध्यान, उनकी अपनी मातृभाषा तथा उनके देशकी राष्ट्रभाषाके प्रति उनकी अनभिज्ञताकी ओर आकृष्ट किया। यह बात उनके मनको छू गयी और उन्होंने तुरन्त कुछ समयमें ही पश्तू सीख ली। ख़ान अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँको अफ़गान मंत्रियों और विश्वविद्यालयके छात्रोंसे भी फ़ारसीमें बोलना पड़ता था। उन्होंने इन लोगोंका ध्यान भी इस ओर खींचा। उन्होंने कहा, "पश्तू आपकी राष्ट्रीय भाषा है। प्रत्येक पठानको यह सीखनी चाहिए।"

अफ़ग़ानिस्तान पहुँचनेवाले उत्प्रवासियोंकी भीड़ने शाह अमानुल्लाह ख़ाँको घबरा दिया। उन्होंने ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँसे कहा कि स्वदेशका त्याग करके बाहर की ओर भागना और वहाँ जाकर शरण खोजना बिल्कुल व्यर्थ है। उनकी यह बात ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँकी समझमें आ गयी। उन्होंने इस प्रश्नपर पुनर्विचार किया और नये पथकी खोज की। अफ़गानिस्तान पहुँचनेवाले धर्मयुद्धकर्ताओंका मायाजाल टूट गया और वे अपने-आपको नितान्त निराश्रित अनुभव करने लगे। वे धीरे-धीरे भारत वापस लौटने लगे। ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँके साथियोंमेंसे कुछ ताशकंदकी ओर बढ़ गये और वे स्वयं अपने अन्य कुछ साथियोंके साथ बाज़ोड़ चले आये। वहाँ उनका विचार आज़ाद कबीलोंके बीच एक स्कूल खोलनेका हुआ। स्कूल खुल गया और इस विद्यालयने आसपासके इलाकेके अनेक विद्यार्थियोंको अपनी ओर आकृष्ट भी किया, परन्तु पोलिटिकल एजेन्टने दीरके नवाबको बुला-

कर यह आदेश दिया कि वे इस विद्यालयको तुरन्त बन्द करा दें। अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके सब साथी बिखर गये। दीर तथा बाजोड़के अनेक स्थानोंमें घूमते हुए वे अपने गाँव उत्तमंज़ई लौट आये और उन विद्यालयोंको फिरसे खुलवानेका प्रयत्न करने लगे, जिनको कि प्रथम विश्वयुद्धमें ब्रिटिश शासनने बन्द करा दिया था।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने कांग्रेसके उस महत्त्वपूर्ण अधिवेशनको देखा जो दिसम्बर १९२० में नागपुरमें आयोजित हुआ था। उसमें सारे देशसे १४,००० से भी अधिक प्रतिनिधि सम्मिलित हुए थे और उसमें अनेक नेताओंने भाषण भी किये थे। इनमें सी० आर० दास, पंडित मदनमोहन मालवीय, मुहम्मद अली जिना, लाला लाजपतराय, पंडित मोतीलाल नेहरू, अली बन्धु (मौलाना शौकत अली और मुहम्मद अली) तथा अबुल कलाम आज़ाद प्रमुख थे। कांग्रेस अब भारतकी जनताकी प्रतिनिधि संस्था थी जिसका गांधीजी नेतृत्व कर रहे थे। इस अधिवेशनके शुरूके प्रस्तावोंमें एक प्रस्ताव कांग्रेसके उद्देश्यके बारेमें स्वीकृत हुआ। "कांग्रेसका लक्ष्य समस्त वैध और शान्तिपूर्ण उपायोंसे भारतकी जनताके लिए स्वराज्यकी प्राप्ति है।" कांग्रेस संगठनने अपनी ढुलमुल नीतिको छोड़ दिया था और अब वह एक ऐसे नवीन दलके रूपमें विकसित हो गयी थी जिसकी इकाइयाँ गाँवोंतकमें पहुँच गयी थीं और जिसकी स्थायी कार्यसमितिके अखिल भारतीय ख्यातिके पन्द्रह बड़े-बड़े नेता सदस्य थे।

नागपुर अधिवेशनसे पहले कलकत्तामें कांग्रेसकी जो बैठक हुई थी, उसमें असहयोगका कार्यक्रम घोषित किया गया था। गांधीजीने उसे नागपुरमें अन्तिम रूप देनेका निश्चय किया। इस बार अपने सारे कार्यमें उनको उन्हीं लोगोंका सहयोग मिला जिन्होंने कलकत्तामें आंशिक रूपमें उसका विरोध किया था। असहयोग सम्बन्धी यह ऐतिहासिक प्रस्ताव संशोधन सहित इन शब्दोंमें स्वीकार किया गया :

"कांग्रेसकी दृष्टिमें वर्तमान भारत सरकारने देशका विश्वास खो दिया है और देशकी जनताने स्वतंत्रताको प्राप्त करनेका पूर्ण निश्चय कर लिया है क्योंकि अबतक उसने जिन उपायोंका आश्रय लिया है, वे उसको उसके अधिकार तथा स्वाधीनताकी स्वीकृति दिलानेमें असमर्थ सिद्ध हुए हैं। सरकारने अनेक गम्भीर भूलें की हैं जिनमें खिलाफ़त आन्दोलन और पंजाबकी घटनाओंका विशेष रूपमें उल्लेख किया जा सकता है। अब, जब कि कांग्रेस अहिंसात्मक असहयोगका प्रस्ताव स्वीकार कर रही है, अपने सम्पूर्ण या आंशिक रूपमें अहिंसाकी इस योजनाकी घोषणा करती है। वह एक ओर शासनके साथ स्वेच्छासे असहयोग करेगी और दूसरी ओर सरकारको कर नहीं देगी। यह योजना भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस अथवा अखिल

भारतीय कार्यकारिणी समितिके अनुसार ही कार्यान्वित होगी। इस अवधिमें देश-को तैयार करनेके लिए, वह जो भी उचित समझेगी, प्रभावशाली कदम उठायेगी।"

नागपुर-अधिवेशनमें कांग्रेसके लक्ष्यपर विस्तारपूर्वक विचार-विमर्श हुआ। जो विधान गांधीजीने तैयार किया था, उसके अनुसार कांग्रेसका ध्येय ब्रिटिश शासनके अन्तर्गत और यदि आवश्यक समझा जाय तो उसके बाहर भी स्वाधीनता-की प्राप्ति था। कांग्रेसका एक दल, जिसका नेतृत्व मालवीयजी तथा जिना साहब कर रहे थे, स्वराज्यके लक्ष्यको केवल ब्रिटिश साम्राज्यके अन्तर्गत ही सीमित रखना चाहता था। परन्तु इन लोगोंको बहुत कम समर्थन प्राप्त हुआ।

संविधानके प्रारूपमें यह कहा गया था कि स्वतंत्रताकी प्राप्तिके समस्त साधन वैध तथा शांतिपूर्ण हों। जिना साहबने इस प्रस्तावका यह कहकर विरोध किया कि "समस्त वैध और शान्तिपूर्ण उपायों द्वारा स्वराज्यकी प्राप्ति शब्द कांग्रेसके लक्ष्यकी उपलब्धिके लिए तर्क-संगत नहीं हैं। न उनमें राजनीतिक दृष्टिसे दृढ़ता है और न इन शब्दोंको रखना बुद्धिमत्तापूर्ण ही कहा जा सकता है। उन्होंने निर्भीक होकर यहाँतक कह डाला कि बिना रक्त बहाये भारतको अपनी स्वतन्त्रता कभी नहीं मिलेगी और देशकी न तो इतनी इच्छा-शक्ति है और न उसमें इतनी सामर्थ्य है कि वह हिंसाका आश्रय ले सके। अतः पूर्ण स्वराज्यकी घोषणा एक शीघ्रतामें किया गया निर्णय होगा।" जिना साहब इस बातसे सहमत नहीं हुए कि स्वीकृत प्रस्तावको सबका समर्थन प्राप्त करनेके लिए लचीला रखा गया है एवं उन सब लोगोंका, जो ब्रिटेनके साथ सम्बन्ध बनाये रखना चाहते हैं और उनका भी जो उसको तोड़ देना चाहते हैं, इस प्रस्तावसे एक मंचपर खड़े होना सम्भव होगा। गांधीजीसे यह अपील करते हुए कि वे पूर्ण स्वराज्यकी पुकार न करें, जिना साहब ने अपना भाषण पूरा किया।

ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ गांधीजीकी विचार-धाराकी ओर विशेष रूपसे आकृष्ट हुए थे परन्तु स्वभावसे वे इतने लज्जाशील और नम्र थे कि वे पृष्ठ-भूमिमें ही रहना चाहते थे। इन्हीं दोनों बातोंने उस समय उनको गांधीजीसे दूर रखा। उनका स्वभाव अल्पभाषी था। अधिक बातों और कोलाहलसे उन्हें घृणा थी। उन्होंने भारतीय स्वाधीनताकी रूप-रेखाके अन्तर्गत ही सीमान्त जनताकी मुक्ति देखी। किसी भी वस्तुको पानेके लिए सक्रियता आवश्यक होती है। गांधी-जीने शान्तिपूर्ण ढंगसे कार्य करनेका जो महत्त्वपूर्ण पथ दिखलाया था वह उनको अच्छा लगा। नागपुरका कांग्रेस-अधिवेशन उनके लिए राजनीतिका एक विशेष शिक्षण था। इसके बाद जिना साहब कांग्रेसके किसी अधिवेशनमें नहीं देखे गये।

एक आदर्श क़ैदी

१९२१–२४

नागपुरके कांग्रेस-अधिवेशनके तुरन्त बाद सन् १९२१ ई० में अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने अपने गाँव उत्तमंज़ईमें आज़ाद हाई-स्कूलकी स्थापना करके रचनात्मक प्रवृत्तिकी एक आधार-शिला रख दी। काज़ी अतातुल्लाह, मियाँ आदम शाह, हाजी अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ, ख़ान अहमद ख़ाँ, अब्दुल अकबर ख़ाँ, ताज मुहम्मद ख़ाँ, अब्दुल्ला शाह और ख़ारिम मुहम्मद अकबर इस विद्यालयके शिक्षक थे। विद्यालयके कोषमें इतनी निधि न थी कि अध्यापक-वर्गको समुचित वेतन दिया जा सकता और प्रशिक्षित शिक्षक उस अल्प वेतनपर आनेके लिए तैयार न थे। अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ भी विद्यार्थियोंको पढ़ाते थे। सारी पढ़ाई पख़्तू भाषाके माध्यमसे होती थी। इस्लामके सिद्धान्त, पख़्तूनोंका इतिहास एवं सभ्यता भी अन्य विषयोंके साथ पढ़ाईके विषय थे। पाठ्यक्रममें बुनाईको भी स्थान दिया गया था। यह एक बिलकुल नवीन विषय था। शिक्षाके कार्यको विधिवत् चलानेके लिए इन लोगोंने एक संस्था 'अंजुमन-इस्लाह-उल अफ़गानिया' बनायी थी। उसके उद्देश्य आर्थिक और सामाजिक प्रगतिसे सम्बन्धित थे। राजनीतिसे उसका कोई नाता न था। यह संस्था शुद्ध रूपसे एक मिशनरी प्रयास था।

रचनात्मक कार्यके साथ अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ खिलाफ़त आन्दोलनमें भी सक्रिय भाग ले रहे थे। जनता सामान्य रूपसे 'ख़िलाफ़त' का अर्थ ब्रिटिश शासनके विरोधसे लेती थी। बहुतसे नये रंगरूट, जो कांग्रसके लिए कार्य करते थे, एक अलग ही नशेमें डूबे रहते थे। उनके इस मदमें राष्ट्रप्रेम, धार्मिकता और रहस्यवादिताका सम्मिश्रण हुआ था। अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ ख़िलाफ़त आन्दोलनमें भाग लेनेके लिए लाहौर गये। वहाँ उनकी अमीर मुख़्तार ख़ाँसे मुलाक़ात हुई। उनके साथ उनके दो लड़के अमीर मुमताज़ और मक़सूद जान भी थे, जो पेशावरके इस्लामिया कॉलेजमें बी० ए० में पढ़ते थे परन्तु दोनों भाइयोंने आन्दोलनमें अपना अध्ययन छोड़ दिया था। अमीर मुख़्तार ख़ाँने अपने दोनों पुत्रोंको खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके विद्यालयको अर्पित कर दिया। मकसूद जान उत्तमंज़ईके आज़ाद हाई स्कूलके पहले हेडमास्टर बने। जब वे अपनी पढ़ाईको फिरसे चालू करनेके लिए कॉलेजमें भर्ती हो गये तब उनके बड़े भाई अमीर मुमताजने उनके

पदका कार्यभार सँभाला। पुलिसने आज़ाद स्कूलमें पढ़ानेवाले शिक्षकोंको डरानेकी बहुत कोशिश की। परन्तु जब उसको इसमें सफलता न मिली तब सरकारने उन अध्यापकोंको अधिक वेतनकी नौकरियाँ देकर अपनी ओर खींचना चाहा। पुलिस आजाद हाई स्कूलके नये शिक्षकोंको बराबर तंग करती रहती थी।

खिलाफ़त समितिके भीतरके असंतुष्ट दलोंने अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँसे पेशावर की 'खिलाफ़त समिति' की अध्यक्षता स्वीकार कर लेनेका आग्रह किया क्योंकि वही ऐसे एकमात्र व्यक्ति थे जिनका नाम सबको समान रूपसे मान्य था। संस्थामें लगातार झगड़े चल रहे थे और कोई ठोस कार्य नहीं हो पा रहा था। अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने इस पदको इस शर्तपर स्वीकार कर लिया कि सीमा-प्रान्तकी इस खिलाफ़त समितिके द्वारा चंदेके रूपमें जो भी निधि एकत्र की जायगी उसका व्यय केवल शैक्षणिक प्रवृत्तियोंमें होगा। उनके लिए शिक्षाका प्रसार एक भावनात्मक कार्य था, जिसकी सफलताके लिए उन्होंने अपनी सारी शक्ति लगा दी थी। उन्होंने जनतासे अपने सम्पर्क फिर नये करनेके लिए और अपने उन बन्द विद्यालयोंको फिरसे खोलनेके लिए दौरे प्रारम्भ कर दिये थे, जिन्होंने मालाकण्ड, बाजोड़ और स्वातके निकटवर्ती क्षेत्रोंके बालकोंको अपनी ओर आकृष्ट किया था।

अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँकी प्रवृत्तियोंसे अधिकारी-वर्ग आशंकित हो उठा। उनके ज़िलेके दौरोंपर आपत्ति की गयी। उनके उत्तमंज़ई विद्यालयको खुले हुए अभी केवल छः महीने हुए थे कि चीफ़ कमिश्नर सर जौन मैफ़ेने अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ-के पिताको बुलाकर इस बातके लिए उकसाया कि वे अपने पुत्रपर ज़ोर डाल-कर इस विद्यालयको बन्द करा दें। चीफ़ कमिश्नरने बूढ़े खानको बतलाया कि यह काम अंग्रेजी सरकारके खिलाफ है। चीफ़ कमिश्नरने उनसे कहा, "जब और कोई इस काममें दिलचस्पी नहीं ले रहा है तब आपके पुत्रने ही इस स्कूल-को जमानेका काम अपने ऊपर क्यों ले रखा है? आपके पुत्र एक गाँवसे दूसरे गाँवमें पहुँचकर पाठशालाएँ खोलते हैं। आप उनसे कहिए कि वे इस कामको बन्द कर दें तथा अन्य लोगोंकी भाँति अपने घरपर रहें। अन्यथा आप दोनों-को इसका फल भुगतना पड़ेगा।"

बहराम खाँको अंग्रेज बहुत अच्छे लगते थे। वे लोग उन्हें 'चाचा' कहा करते थे। बहराम खाँ अंग्रेजोंके बारेमें प्रायः कहा करते, "अंग्रेज़ हमारे बीचमें देवदूतकी भाँति आये हैं। ईश्वरने उनको हमारे ऊपर उपकार करनेको भेजा

है।" उन्होंने अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको अलग बुलाया और उन्हें चीफ़ कमिश्नरके साथ अपनी भेंटकी सब बातें बतलायीं। फिर उन्होंने धीरेसे कहा, "जो काम और लोग नहीं कर रहे हैं, उसे तुम भी मत करो। तुम भी अपने घरपर आराममें रहो।" उनकी यह बात सुनकर अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने अपने मनमें बड़े क्लेशका अनुभव किया। उन्होंने अपने मनमें सोचा कि अंग्रेज़ स्वार्थके लिए पिता और पुत्रके बीच भी भेद उत्पन्न कर रहे हैं! उन्होंने अपने पितासे, जो अति धार्मिक थे, यह कहा, "मान लीजिए कि बाकी लोग नमाजमें रुचि नहीं लेतें तो क्या आप मुझे उसको छोड़ देने और धर्म-विमुख होनेको कहेंगे ?"

"कभी नहीं" बहराम ख़ाँने उत्तर दिया, "मैं तुमसे यह कभी नहीं कहूँगा कि तुम अपने धार्मिक कर्त्तव्यको छोड़ दो, अन्य लोग भले ही कुछ भी करें।"

"तब ठीक है बाबा, राष्ट्रीय शिक्षाका यह काम भी वैसा ही है। यदि मैं अपनी नमाज़ छोड़ सकता हूँ तो स्कूल चलाना भी छोड़ सकता हूँ। जिस प्रकार नमाज़ पढ़ना मेरा एक कर्त्तव्य है उसी प्रकार जनताकी सेवा और शिक्षाका प्रसार भी मेरा एक कर्त्तव्य है।"

उनके पिता बोले, "अब मैं समझ गया। यदि तुम इसे अपना कर्त्तव्य मानते हो तो खुशीसे करते रहो।" बहराम ख़ाँने चीफ़-कमिश्नरसे कह दिया कि उनका पुत्र अपने धार्मिक कर्त्तव्यको नहीं छोड़ सकता। इसके पश्चात् वे भी निर्भीक भावसे अपने पुत्रकी प्रवृत्तियोंका समर्थन करने लगे।

जब अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने अपने पक्षका समर्थन करते हुए शासकोंसे कहा कि शिक्षा कोई अपराध नहीं है, बल्कि इस कामको करके हम शासनको सहयोग ही दे रहे हैं तब उन लोगोंसे उन्हें यह उत्तर मिला, "लेकिन अगर आपको समाज-सुधारके नामपर पठानोंको संगठित करनेकी अनुमति दे दी जाती है तो इस बातका क्या भरोसा कि यह संगठन शासन और उसके हितोंके विरुद्ध काममें नहीं लाया जायगा ?"

"आप मुझपर विश्वास कीजिए" अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने उत्तर दिया। शासकोंका कहना था, "नहीं, आप इसके लिए क्षमा माँगिए और इस बातकी जमानत दीजिए कि आप भविष्यमें यह कार्य नहीं करेंगे।"

"मैं इस बातकी ज़मानत दूँ कि मैं अपने लोगोंको प्यार करना और उनकी सेवा करना छोड़ दूँगा ?" उन्होंने अधिकारियोंसे प्रश्न किया। अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने मिशन स्कूलमें शिक्षा पायी थी और वे ईसाइयतकी न्याय-भावना और उदारताको भली भाँति समझते थे। अधिकारियोंका कहना यह था कि यह देश-सेवा

नहीं बल्कि विद्रोह है। सार यह कि अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको गिरफ्तार कर लिया गया और उनको 'सीमान्त अपराध विनियम' की ४०वीं धाराके अनुसार १७ दिसम्बर, सन् १९२१ को कठोर कारावासका दण्ड दे दिया गया। जिन कष्टोंका प्रारम्भ सन् १९१९ में हुआ था और जिन संकटोंसे वे गुज़र रहे थे उनकी यह मानो बप्तिस्मा, धर्म-दीक्षा थी। अब्दुल गफ़्फ़ार ख़ाँने एक मर्मस्पर्शी कथा सुनायी :

"मेरे गाँवके एक पिता और उसके पुत्रको साथ-साथ जेल भेजा गया। जब उनको जेलके कपड़े पहनाकर खड़ा किया गया तब पुत्र अपने पिताको मुश्किलसे पहचान सका। वह उसे पुकारकर बोला, 'बाबा, तुम कहाँ गये ?' यह सुनकर पिताने कहा, 'मैं यहीं तुम्हारे पास ही तो खड़ा हूँ।' फिर मुझ जैसे लम्बे-तगड़े आदमीकी क्या बात पूछते हैं। जब मुझे जेलके कपड़े पहनाये गये तब पाजामा मेरे पाँवकी नलीतक पहुँच सका और कमीज तो नाभितक भी नहीं पहुँची। जब मैं अपनी नमाज़ पढ़ता था तब पाजामा बार-बार घुटनोंपर फट जाता था और कमीज़ मेरी पसलियोंमें चिपक जाती थी। नियमके अनुसार हर एक कैदी-को प्रतिदिन चक्कीपर २० सेर अनाज पीसना पड़ता था। उसके पाँवोंमें बेड़ियाँ पड़ी रहती थीं और गलेमें लोहेका एक छल्ला, जिसमें काठकी एक तख्तीपर उसके दंडका प्रकार और अवधि खुदी रहती थी, लटकता रहता था। मेरा जेलर हिन्दू था। वह एक ईमानदार व्यक्ति था और कैदियोंके लिए उसका व्यवहार सहानुभूतिपूर्ण था। उसने मुझे एक अकेली कोठरीमें रख दिया। उसने मुझसे चक्की नहीं पिसवायी और न मेरे पाँवोंमें बेड़ियाँ ही डलवायीं। यद्यपि उसने मुझे जेलका ही भोजन दिया परन्तु वह अपेक्षाकृत स्वच्छ था और दाल एवं सब्जियाँ स्वादिष्ट थीं। मेरी कोठरीका दरवाज़ा उत्तरकी ओर था और उसमें कभी धूप नहीं आती थी। सर्दी भयानक थी। मुझे ओढ़ने-बिछानेको तीन पुराने कम्बल और एक चटाई दी गयी थी। यह मेरे लिए अपर्याप्त था। मुझको दिन-रात उसी कोठरी-में नज़रबन्द रखा जाता था। जब एक पहरेदार, जो कुछ दयालु था, पहरेपर होता था तब वह मुझको कभी-कभी कोठरीसे बाहर निकालता था और मुझे लग-भग आधा घंटाके लिए धूप सेंकने देता था।

रातमें भी मुझे शान्तिसे सोने नहीं दिया जाता था। प्रत्येक तीन घंटेके बाद पहरेदारकी ड्यूटी बदलती थी। वह काफ़ी शोरगुल करता था और हम लोगोंको ज़ोरसे आवाज़ देता था। जबतक हम लोग जाग न जायँ और उसकी पुकारका जवाब न दे दें, तबतक वह आगे नहीं बढ़ता था। यदि कोई उसकी पुकारपर

तुरंत नहीं बोलता था तो उसको दूसरे दिन दण्ड दिया जाता था। जब मैं गिरफ्तार हुआ और पेशावर जेलमें ले जाया गया तब मुझको हवालातमें बन्द न करके एक अकेली कोठरीमें रख दिया गया। जब मैं कोठरीमें घुसा तब उसमेंसे दुर्गन्ध आ रही थी। मिट्टीके सफाईके तसलेमें ऊपरतक मल भरा हुआ था। मैंने कोठरीसे बाहर निकलकर अधिकारीसे कहा कि इस कोठरीकी बदबू तो सही नहीं जा रही है। इसपर उसने मुझको भीतर ढकेल दिया और बाहरसे ताला बन्द कर दिया।

मेरी गिरफ्तारीके पश्चात् खिलाफ़त-आन्दोलनके मेरे अन्य साथी भी पकड़ लिये गये। पूरे चौबीस घंटे हमको एकान्त कोठरियोंमें नजरबन्द रखा जाता था। हमारा भोजन छड़ोंमेंसे अन्दर पहुँचा दिया जाता था। कोठरीका द्वार केवल सफ़ाई करनेवाले मेहतरके लिए खुलता था। हमारे साथ कोई बातचीत न करे या पत्र-व्यवहार न करे इसके लिए हमारी कोठरीकी पूरी चौकसी रखी जाती थी। इस कड़े व्यवहारके कारण ही हमारे बहुतसे साथी जमानत दे देनेके लिए तैयार हो गये। मुझको दस दिनोंके बाद जेलसे निकाला गया और डिप्टी कमिश्नरके सामने उपस्थित किया गया, जो कि एक विलक्षण स्वभावका अंग्रेज था। पुलिसके अनुसार मेरा पहला अपराध यह था कि मैं हिज्रत करनेके लिए अफ़गानिस्तान गया था और दूसरा यह कि मैंने आजाद स्कूल खोला था। अंग्रेज अधिकारी पुलिससे बार-बार पूछ रहा था कि जब ये हिज्रत करके चले गये तब इनको इस देशमें वापस क्यों आने दिया गया? मैंने उसे बीचमें ही टोककर कहा, "आपने तो हमारे देशपर अपना अधिकार जमा रखा है और अब हमारे लिए उसमें घुसनेपर भी रोक लगा रहे हैं?" मेरी इस बातपर वह क्रोधित हो गया और उसने पुलिससे मुझे ले जानेको कहा। साथ ही उसने मुझे तीन वर्षका कारावास-दंड भी सुना दिया।

डॉ० खान साहब तथा अन्य लोग जेलमें मुझसे मिलनेके लिए आये। वे मेरे लिए सरकारका यह सन्देश भी लाये कि मैं विद्यालय तो चला सकता हूँ, परन्तु मुझको अपने दौरे रोक देने होंगे।

जेलके बन्दियोंमें बहुतसे तथाकथित पवित्र धर्मयुद्धकर्त्ता भी थे। वे आपसमें ही लड़ गये। उनमें एक ऐसा आदमी भी था जिसे पूरा कुरान कंठस्थ था। पुलिसने उसको अपनी ओर कर लिया। वह अच्छे कार्यकर्त्ताओंको पुलिससे मिल जानेके लिए प्रलोभन देता था। कारागारमें धर्मयुद्धकर्त्ताओंकी स्थिति बड़ी दयनीय थी। मेरे वहाँ पहुँचनेके बाद इस दशामें बहुत कुछ सुधार हो गया।

साधारण रूपसे क़ैदी इन एकान्त कोठरियोंमें एक सप्ताहतक रखे जाते थे परन्तु मुझको वहाँ दो मासतक रखा गया और इसके बाद मेरा तबादला डेरा इस्माईल ख़ाँको कर दिया गया। इस कारागारमें वे ही बंदी रखे जाते थे जो जेल-जीवनके अभ्यासी हो चुके होते थे। मुझको वहाँ बेड़ियाँ डालकर ले जाया गया। जिस समय मुझको कोठरीमें बन्द किया गया, उस समय मेरी बेड़ियाँ खोल दी गयीं। दूसरे दिन मुझको पीसनेके लिए २० सेर अनाज दिया गया। भाग्यसे वह कीड़ोंका खाया हुआ था। उसको पीसनेमें मुझको कोई कठिनाई नहीं हुई। डेरा इस्माईल ख़ाँका जेलर एक अधेड़ उम्रका मुसलमान था जो पहले एक सिपाही रहा था। वह अंग्रेजी नहीं जानता था और कुछ ही दिनोंमें पेन्शन लेकर घर जानेवाला था। कारागारका अधीक्षक एक अंग्रेज था जो केवल अंग्रेजी जानता था इसलिए जेलका सारा कामकाज सहायक जेलर गंगाराम देखता था। गंगाराम एक धूर्त व्यक्ति था। रिश्वत बटोरनेके लिए वह कैदियोंको आपसमें लड़ाता रहता था और दुराचरणके लिए उनके पास कम उम्रके लड़कोंको भेजता था।

जिस समय मैं चक्की पीस रहा था, उस समय मुसलमान जेलर मेरे पास आया और बोला, "आप चक्की न पीसिये। जब अल्लाह मुझसे पूछेगा कि जिस जेलमें १४०० कैदी थे उसमें तुमने मेरे आदमीसे चक्की क्यों पिसवायी, तब मैं उसको क्या जवाब दूंगा?" उसके मनको संतोष देनेके लिए मैंने उस समय चक्की पीसना बन्द कर दिया परन्तु ज्यों ही वह मेरे पाससे हटा मैं फिर चक्की पीसने लगा। वह कोठरीके बाहर खड़ा-खड़ा दरवाज़ेके एक छेदमेंसे मुझे देख रहा था। वह फिर मेरी कोठरीमें घुस आया और पूछने लगा कि मैं चक्की क्यों पीस रहा हूँ? मेरे ठीक सामने एक अन्य कैदी अनाज पीस रहा था। मैंने जेलरसे कहा कि इस-पर हत्याका अभियोग है और यह अपने इस जघन्य अपराधके लिए चक्की पीस रहा है, फिर मेरा तो एक पवित्र मिशन है। मैं अपने पवित्र उद्देश्यके लिए कार्य-च्युत क्यों होऊँ? जिसे चक्कीका काम सौंपा गया था उस व्यक्तिको जेलरने आदेश दिया कि मुझे पीसनेके लिए गेहूँकी जगह गेहूँका आटा दे दिया जाय। दूसरे दिन वह आदमी मेरे लिए पीसनेको थोड़ा-सा अनाज और बाक़ी पिसा हुआ आटा ले आया। उसने मुझसे कहा कि पूछनेपर मैं जेलके अधीक्षकसे झूठ बोल जाऊँ वरना उसको नौकरीसे निकाल दिया जायगा। मैंने उससे कहा, "मैं नहीं चाहता कि तुम अपनी नौकरीसे हाथ धोओ। तुम मुझे पीसनेके लिए अनाज दो। मैं झूठ नहीं बोल सकता।"

"जेलकी रोटीमें मिट्टी मिली रहती थी। उसको चबाया भी नहीं जा सकता

था। पकायी गयी सब्जियाँ इतनी बेस्वाद होती थीं कि भूखी बिल्ली भी उनको न छुए। जेलरने मुझसे कहा कि मैं उसके घरका बना हुआ खाना खाने लगूँ, लेकिन मैं इसपर तैयार नहीं हुआ। मैंने दूध लेना भी मंजूर नहीं किया क्योंकि वह मेरी जेलकी भोजन-सूचीमें शामिल नहीं था।

गङ्गारामने अपने सिखाये-पढ़ाये लोगोंको मेरे पास भेजा। उन्होंने मुझे उस अकेली कोठरीसे बाहर आनेके लिए रिश्वत देनेपर तैयार करना चाहा। गङ्गारामके उन दलालोंने मुझसे कहा, 'आपकी नज़रबन्दीसे और चक्की पीसनेसे पेशावरवालोंको लज्जा आती है। वे आपके लिए गङ्गारामको रिश्वत देनेको तैयार हैं।' मैंने उन लोगोंसे कह दिया कि रिश्वत देना कोई भला काम नहीं है। मैं इसके लिए रिश्वत नहीं दूँगा और न वे लोग मेरी ओरसे गङ्गारामको कुछ दें। यदि मुझे रिश्वत ही देनी होगी तो ज़मानत ही न दे दूँगा। मैं तो ज़मानत देकर छूट सकता हूँ। एक दिन जब मैं अनाज पीस रहा था, तब जेलका अंग्रेज अधी-क्षक मेरी कोठरीमें आया। एक कोनेमें रखी पकी हुई सब्जीकी ओर इशारा करके मैंने उससे कहा, 'मैंने इसे एक बिल्लीके आगे रखा था लेकिन उसने भी इसे नहीं छुआ और इसे आप एक इंसानको देते हैं!' अधीक्षक बोला, 'यह सब्जी तो बिलकुल ठीक है।' इसके बाद मैंने कहा, 'सामनेकी कोठरीमें जो कैदी है उसकी बेड़ियोंकी ओर देखिए और मेरी बेड़ियोंपर भी दृष्टि डालिए। वह रोज़ बीस सेर अनाज पीसता है और इतना ही मैं भी। उसीकी तरह मुझे भी एक अलग कोठरीमें बन्दी बनाकर रखा गया है। अब आप मेरे अपराधपर भी विचार कीजिए। आप लोग अपने देशमें क्या मुझ जैसे बन्दियोंके साथ ऐसा ही व्यवहार किया करते हैं?' वह मुझसे उत्तरमें एक शब्द भी न बोला और चुपचाप मेरी कोठरीसे चला गया। दूसरे दिन मेरे कार्यमें परिवर्तन कर दिया गया। मुझको लिफ़ाफे बनानेके लिए 'वर्कशॉप' में भेज दिया गया। जब अंग्रेज़ अधीक्षक दूसरी बार मेरे पास आया तो उसने मुझसे कहा, 'शीघ्र ही मैं आपको इस अकेली कोठरीसे भी हटवा दूँगा।'

"वर्कशॉपमें सीमा-प्रान्तके तीन कैदी थे। वे लड़कोंको लेकर आपसमें लड़ते-झगड़ते रहते थे। मैंने इस बातकी चेष्टा की कि वे इस प्रकारका पापपूर्ण कृत्य न करें।

"मैंने सिपाहियोंसे भी, जो कि सचमुच गरीब थे, यह कहा कि वे रिश्वतके पैसोंसे अपने हाथोंको कलुपित न करें। उनमेंसे एकने अपने दोपको स्वीकार करते हुए कहा कि 'मेरे लिए रिश्वत छोड़ देना असम्भव है क्योंकि उसके बिना मेरा

निर्वाह नहीं हो सकता ।' मैंने उससे कहा :

"मैं तुमसे यह नहीं कहूँगा कि तुमको क्या करना चाहिए । परन्तु मैं तुमसे इतना ही कह सकता हूँ कि तुम जो कुछ कर रहे हो, वह अनैतिक है ।" और उसने इस्तीफा दे दिया । "मेरे कारण गङ्गारामकी आमदनी कम हो रही थी इसलिए उसने मुझे जेलसे हटानेके लिए एक षड्यंत्र रचा । अधीक्षकसे मेरी शिकायत करते हुए उसने कहा कि मैं वर्कशॉपमें अव्यवस्था उत्पन्न कर रहा हूँ और यदि मुझको वहाँसे न हटाया गया तो कैदियोंमें अनुशासन बनाये रखना कठिन हो जायगा । जब अधीक्षकने इस सम्बन्धमें मुझसे पूछा तो मेरी बात सुनकर वह समझ गया कि गंगाराम झूठ कहता है, परन्तु अनुशासन बनाये रखनेके लिए एक अंग्रेज कुछ भी करनेको तैयार हो जाता है इसलिए दो महीने इस जेलमें और दो महीने पेशावरकी जेलमें काटनेके बाद मेरा तबादला डेरा गाज़ी ख़ाँके कारागारमें कर दिया गया ।

"पुलिसकी एक गाड़ी, जिसमें सब ओर पर्दे पड़े हुए थे, कारागारके द्वारपर आकर खड़ी हो गयी । इस गाड़ीसे मुझको स्टेशन ले जाया गया । उस समय मेरे पाँवोंके टखनोंमें बेड़ियाँ पड़ी थीं और मेरी कलाइयोंमें हथकड़ियाँ थीं । मेरे गलेमें लोहेका एक छल्ला पड़ा हुआ था और मैं तंग, छोटे कपड़े पहने हुए था । स्वयं मेरे लिए यह एक विचित्र दृश्य था, फिर औरोंको वह कितना विचित्र लगता होगा । हमारी ट्रेन छूट गयी और हमें सारी रात स्टेशनपर ही बितानी पड़ी । मुझे किसीके पास जाने नहीं दिया गया और न किसीको मेरे निकट आनेकी आज्ञा दी गयी । जब हम गाज़ीघाट स्टेशनपर पहुँचे तब एक हिन्दू अधिकारीने, जो गारदका प्रधान था, मुझे अपनी सुपुर्दगीमें ले लिया और कहा, 'आप यहाँ टहलिए ।' मैं स्टेशनपर घूमने लगा तब नासिर ख़ाँ, जो मुझे लेकर आया था, उस हिन्दू अधिकारीके पास जाकर बोला, 'यह आपने क्या कर डाला ? अरे, मैं तो मारा गया ।' हिन्दू अफसरने उससे कहा, 'अब यह मेरी हिरासतमें है । आप जा सकते हैं । फिक्र न कीजिए ।'

"हमने एक नावपर सवार होकर सिन्धु नदको पार किया । उसके बाद हमें एक ताँगेमें डेरा गाज़ीख़ाँ जेलतक ले जाया गया । जेलके भीतर जाकर मेरी बेड़ियाँ खोल दी गयीं । मेरे लिए यह एक अत्यन्त सुखद अनुभव था । वह एक छोटी-सी जेल थी जिसमें केवल दो बैरकें थीं । उनमें पंजाबके राजनीतिक कैदी रखे जाते थे । मुझको यहाँ 'सी' क्लासके कैदियोंके साथ रखा गया क्योंकि हमारे प्रदेशके सब राजनीतिक कैदियोंके लिए केवल यह सबसे निचली

श्रेणी ही थी। जेलका अधीक्षक एक भला मुसलमान था।

'सी' श्रेणीके सब वन्दी हिन्दू अथवा सिख थे और वे सब मेरा आदर किया करते थे। मुझको रस्सी बँटनेका काम दिया गया लेकिन मैं उसे कर न सका। मैंने जेलके अधीक्षकसे प्रार्थना की कि वे मुझे अन्य कोई काम दे दें और उन्होंने मुझे सूत कातनेका काम दे दिया। जब विशेष श्रेणीके वन्दियोंको मेरे वारेमें ये सब वातें मालूम हुईं तब उन्होंने अधीक्षकसे इस बातका आग्रह किया कि वे मेरा तबादला उनकी वैरकमें कर दें। सचमुच यह मेरे ऊपर ईश्वरकी अति कृपा हुई कि मुझको तबादला करके इस जेलमें भेज दिया गया वरना शायद मैं जीवित भी न बचता। यहाँ मुझको पंजाबके लोगोंके निकट सम्पर्कमें आनेका और एक दूसरे-के विचारों और विश्वासोंको जानने-समझनेका अनूठा अवसर मिला।

"डेरा इस्माईल खाँकी जेलके दोषपूर्ण भोजनके कारण मेरे दाँत बुरी तरहसे खराब हो गये थे। मेरा वज़न ५५ पौंड कम हो गया था और मेरी कमरका दर्द बढ़ गया था। मुझको 'स्कुर्वी' नामक रक्त-रोग भी हो गया था। अधीक्षकने मुझे उपचारके लिए लाहौर भेजा। जेलके कार्यालयमें ही डॉ० प्रेमनाथने मेरे दाँतोंका परीक्षण किया। उन्होंने मेरे दो दाँत निकाल दिये और शेषकी सफ़ाई कर दी। उन्होंने मुझको बतलाया कि मैं पायोरियाके पुराने स्थायी रोगसे ग्रस्त हूँ। उन्होंने मेरे लिए दवाइयाँ तथा उचित भोजन लिख दिया। मैंने उनसे कहा कि मैं एक ऐसा रोगी हूँ जो फीस दे सकता है। आप मुझसे अपनी उचित फीस ले सकते हैं। उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया। जब मैंने अधिक आग्रह किया तब वे मुझसे बोले, 'आपको देश-भक्तिके कारण कारावास-दण्ड मिला है। मैं आपके त्यागकी तुलना तो नहीं करता लेकिन कमसे कम मुझे इतना तो कर लेने दीजिये।' यह कहकर उन्होंने अपना थैला उठा लिया और चले गये।

"इस जेलमें मुझको लाला लाजपतराय और कांग्रेस तथा खिलाफत आन्दोलनके कार्यकर्त्ताओंसे विचार-विनिमयका अवसर मिला। मलिक लाल ख़ाँके साथ मैंने क़ुरान शरीफ़का श्रमपूर्वक अध्ययन किया। परन्तु कुछ दिनोंके बाद ही उन्होंने यह क्रम भङ्ग कर दिया यानी मूलकी स्वतः व्याख्याके लिए मुझे अकेला छोड़ दिया। वे परम्पराके कट्टर अनुयायी थे और स्वतन्त्र व्याख्या अथवा विवेचनके लिए जो ज्ञान अथवा बुद्धि अपेक्षित थी, वह उनमें न थी।

"कुछ दिनोंके बाद मुझको लाहौरसे डेरा गाज़ी ख़ाँ जेल वापस भेज दिया गया। मेरी वैरकमें बहुतसे हिन्दू और सिख थे और कुछ मुसलमान भी थे। गुरुदत्तमल हमारे आदरणीय शिक्षक थे। वे अपनी प्रार्थनाके अंतमें 'शान्ति,

शान्ति' कहा करते थे, परन्तु वे स्वयं एक शान्तिवादी न थे। उनको बहुत शीघ्र क्रोध आ जाता था। जब सिख लोग अपनी प्रार्थनाके लिए एकत्र होते थे तब वे सब मिलकर यह नारा लगाते थे, 'सर जावे, तन जावे, मेरा सिक्ख धरम न जावे।' उनके इस नारेने मुझको बहुत प्रभावित किया। मैं इस परिणामपर पहुँचा कि सिखोंमें हिन्दुओं और मुसलमानोंकी अपेक्षा धार्मिक चेतना है। इसका कारण यह है कि उनका धर्म-ग्रन्थ, जो उनकी मातृभाषामें लिखा गया है, उनके हृदयको स्पर्श करता है और उनके धर्म तथा प्रार्थनाके सच्चे अर्थको उनके आगे खोलता है। हिन्दू और मुसलमान अपनी प्रार्थनाओंके मूल अर्थोंको इस प्रकारसे ग्रहण नहीं कर पाते क्योंकि वे संस्कृत और अरबीमें लिखी गयी हैं और आजकी उनकी मातृभाषामें नहीं हैं।

"मैंने यहाँ गीताको पहली बार पढ़ा और ग्रन्थ साहब तथा बाइबिलका भी अध्ययन किया। इसके लिए मैं अपने साथियोंका जितना आभार प्रकट कर सकूँ, उतना ही कम है। यदि मैंने उनके धर्म-ग्रन्थोंको न पढ़ा होता, तो न तो मैं उन लोगोंको ठीक ढंगसे समझ पाता और न उनकी मित्रताका यथार्थ मूल्यांकन ही कर पाता। मुझको यह स्वीकार करना ही होगा कि कुछ भी कहिए, भगवद्गीता उन दिनों मेरी पहुँचसे ऊपर थी। मेरे बौद्धिक साधन उसके लिए अक्षम थे अथवा मेरा मन उसको ग्रहण न कर पाता था। वास्तवमें अण्डमानके पंडित जगतराम-जीने मुझको सन् १९३० में गीता पढ़ायी। उन्होंने मुझे उसकी मूल भावनासे अवगत कराया। उनके मनमें गीताके प्रति एक भावना-जन्य श्रद्धा थी।

"एक बार कारागारोंके महानिरीक्षक हमारी जेलमें आये। राजनीतिक कैदियोंके प्रति वे अपने मनमें एक विरोध-भाव रखते थे। उनका व्यवहार भी कठोर था। जब वे हमारी बैरकमें घुसे और उन्होंने हिन्दुओंके सिरपर गांधी-टोपी और सिखोंके सिरपर काले साफे देखे तो उन्होंने जेलरको झिड़कते हुए कहा, 'इनको आपने यह पहननेकी अनुमति क्यों दे रखी है?' तब हमारा अधीक्षक, जो एक अंग्रेज था, बीच में ही बोला, 'सर, यह जेलरकी नहीं, मेरी ग़लती है।' इसपर महानिरीक्षक बैठकसे तुरन्त चल दिये परन्तु वे यह आदेश देते हुए गये कि इन लोगोंकी गांधी टोपियाँ और काले साफे उतरवा दिये जायँ। कारागारके अधीक्षकने हम लोगोंको उनका आदेश-पत्र भी पढ़कर सुनाया। इस आदेश-पत्रपर सरदार खड्ग सिंहने आपत्ति उठायी कि हम लोग विशेष श्रेणीके बन्दी हैं और नियमोंके अनुसार हमको अपने वस्त्र पहननेकी अनुमति है। इसपर जेलके अंग्रेज अधीक्षकने कहा, 'मैं महानिरीक्षकके आदेशको कार्यान्वित करूँगा।'

जब वह हम लोगोंके पाससे चला गया तब हमने मिलकर यह सलाह की कि हम उसके आदेशको नहीं मानेंगे। दूसरे दिन वन्दियोंको एक-एक करके जेलके कार्यालय में ले जाया गया और बलपूर्वक उनकी गांधी टोपियों और काले साफोंको उतारा गया। इसपर हम लोगोंने निश्चय किया कि हम केवल लुंगी ही पहनेंगे। मुझको उन लोगोंने वही कपड़े पहननेकी छूट दे दी जो कि साधारण रूपसे मैं पहना करता था। इस झगड़ेसे केवल पंजाबियोंका ही सम्बन्ध था। सीमाप्रान्तके निवासीके लिए भावनात्मक दृष्टिसे टोपी अथवा साफेका इतना महत्त्व न था।

"कुछ दिनोंके बाद उपायुक्त डेरा गाज़ी खाँकी जेलमें आये। सरदार खड्ग सिंहने अपना तर्क उनके सामने रखा। उनकी बात सुनकर उपायुक्तने कहा कि यह नियम टोपियों और साफोंपर लागू नहीं होता। सरदार साहबका आग्रह था कि सिरको ढँकनेवाला वस्त्र वेशभूषाका ही एक भाग है। इसके बाद नारे लगाये गये। उपायुक्त घबरा गया और भागकर जेलके कार्यालयमें चला गया। उसने यह आदेश दिया कि नारे लगानेवाले कैदियोंको सज़ा दी जाय। दूसरे दिन जेलके अधीक्षकने यह आज्ञा दी कि वन्दी अपनी पोशाक ठीकसे पहनें अन्यथा उनको दंड दिया जायगा। मुसलमान कैदियोंने इसे स्वीकार कर लिया परन्तु हिन्दुओं और सिखोंने इस आदेशको माननेसे इनकार कर दिया। इसके बाद दण्डाधिकारीने जेलमें आकर, सबको अलग-अलग बुलाकर तीन-तीन मासका अतिरिक्त कारावास-दण्ड सुना दिया।

"डेरा गाज़ी खाँके वन्दियोंमें मेरी सज़ा सबसे लम्बी थी। अधिकांश कैदी ऐसे थे जो जेलमें छः महीने रहनेके बाद मुक्त कर दिये जानेवाले थे और यदि कपड़ोंकी यह घटना न हुई होती तो औरोंको इसके थोड़े दिन बाद ही रिहा कर दिया जाता। नौ महीनेकी अवधि बीत जानेके पश्चात् अधीक्षकने उनको फिर चेतावनी दी। 'आप लोग कपड़े पहन लीजिए वरना आपकी सज़ा और बढ़ जायगी।' हिन्दू और मुसलमानोंने इस आदेशको मान लिया परन्तु सिख अपने निश्चयपर अडिग रहे। फलतः उनकी सज़ा नौ मास और बढ़ा दी गयी। उन लोगोंने, जो अपनी पोशाक पहननेको तैयार हो गये थे, जेलके अधीक्षकसे प्रार्थना की कि उनका तबादला किसी अन्य कारागारमें कर दिया जाय। उनकी यह प्रार्थना तुरन्त ही स्वीकार कर ली गयी। नौ महीनेकी इस अतिरिक्त अवधिके पूर्ण हो जानेके बाद सिखोंने यह अनुभव किया कि उनका कारावास-दण्ड और बढ़ा दिया जायगा। उनका मनोबल क्षीण हो चुका था। उन्होंने भी अपना तबादला दूसरे कारागारमें कर देनेकी प्रार्थना की, जो कि तत्काल स्वीकार कर ली

गयी। केवल मैं और सरदार खड्ग सिंह वहाँ रह गये। कारागारोंका महानिरीक्षक फिर हमारी बैरकमें आया। कैदियोंके मनोबलके गिर जाने और दूसरी जेलोंमें चले जानेके कारण उसके गर्वका पार न था। आते ही उसने सरदारजी से कहा 'वेल, खड्ग सिंह !' सरदार खड्ग सिंहने भी उसी दर्पसे उत्तर दिया, ''एस, ह्वाट' (हाँ, कहिए)। महानिरीक्षक यह अपेक्षा न करता था। वह क्रोधित हो गया और उसने आज्ञा दी कि सरदार खड्ग सिंहको अकेली कोठरीमें भेज दिया जाय। उनको अबतक दूध दिया जाता था, वह बन्द कर दिया गया। वे मुझसे अलग कर दिये गये और जेलके अस्पतालकी एक एकान्त कोठरीमें रख दिये गये। मैं बैरकमें अकेला छूट गया। मेरी बैरक अस्पतालके निकट पड़ती थी। अस्पतालमें दरवाजेके एक छेदमेंसे हम लोग एक-दूसरेकी झलक देख लिया करते थे। खड्ग सिंह बहुत दुर्बल हो गये थे। मैं बहुधा उस छेदमेंसे उनको खानेकी चीजें भी पहुँचा दिया करता था। वे एक बहादुर आदमी थे। वे इतने कष्टों और यातनाओंके बाद भी प्रसन्न-चित्त रहते थे।

''कुछ दिनोंके बाद मेरा स्थानान्तर मियाँवालीकी जेलमें कर दिया गया जिसमें केवल छोटी-छोटी कोठरियाँ थीं, बैरकें नहीं। कांग्रेस, खिलाफ़त आन्दोलन और गुरुके बाग़-आन्दोलनके बहुतसे कैदी बदलकर डेरा गाजी खाँकी जेलसे यहाँ आ गये थे। उन्होंने जेलके अधिकारियोंसे अच्छे सम्बन्ध बना लिये थे। मियाँवालीमें बेहद गर्मी पड़ रही थी। वहाँ आँधियाँ भी बहुत आती थीं। जेलके कुएँका जल काफी शीतल था। हमारे जेलरका स्वभाव बहुत विचित्र था। वह कैदियोंको नहानेके लिए कुँएपर ले जाता था। शामके समय कैदियोंकी गिनती कर चुकनेके बाद वह बहुधा घंटाघरके नीचेके चबूतरेपर विश्राम करनेके लिए बैठ जाता था और राजनीतिक कैदी भी उसके साथ पालथी मारकर बैठ जाते थे। मैं उन लोगोंके साथ नहीं जाता था। जीवनभर कैदियोंके साथ रहनेसे जेलके अधिकारियोंमें एक विचित्र मनोवृत्ति विकसित हो जाती है। वे समझने लगते हैं कि कुछ भी हो, है तो एक कैदी, कैदी ही। एक दिन, जब कि जेलर और राजनैतिक कैदी बैठे हुए थे तभी जेलका डॉक्टर वहाँ आ गया। वहाँ कोई कुर्सी खाली न थी। यह देखकर जेलरने कैदियोंसे कहा कि वे कुर्सियाँ खाली कर दें और चले जायँ। उनके इस अपमानसे मेरे मनपर एक गहरी ठेस लगी परन्तु उन लोगोंने इसकी कोई परवाह नहीं की। दूसरे दिन मैंने उनको जेलके कार्यालयके पास प्रतीक्षा करता हुआ पाया। वे चपरासीसे यह कह रहे थे कि वह जेलरसे उस ठंडी जगहपर जाकर बैठनेकी सिफारिश कर दे। जब आप एक सिद्धांतके

साथ समझौता करते हैं तब आप सत्यसे ही समझौता नहीं करते बल्कि अपने आत्म-सम्मानसे भी समझौता करते हैं।

"जब मेरी रिहाईके थोड़े दिन शेष रह गये तब मुझको पेशावर जेलमें भेज दिया गया। वहाँ मुझको उपायुक्तके आगे उपस्थित किया गया। उसने पुलिसको यह आदेश दिया कि मुझको गाँव ले जाय और वहाँ जाकर रिहा कर दे। उन लोगोंने मुझको आज़ाद स्कूलके निकट छोड़ दिया। स्कूल बन्द होनेका समय था। बालकोंने जब मुझे आता हुआ देखा तब वे मेरी ओर दौड़े। गाँवोंके लोग यह योजना बना रहे थे कि मेरी रिहाईपर वे सब मुझको लेनेके लिए अटकके पुलतक जायँगे और एक विराट् जुलूसके साथ मुझे घोड़ेपर बिठाकर लायेंगे। यह उत्साहपूर्ण प्रदर्शन न हो इसलिए सरकारने मुझको रिहाईकी अवधिसे पहले छोड़ दिया।"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने नज़रबन्दीके कष्टोंको सहन किया। उनके हाथों और पाँवोंमें हथकड़ियाँ-बेड़ियाँ डाली गयीं। उनको अशुचिता और मलिनताके वातावरणमें रहना पड़ा। उनको जूँओंसे तकलीफ़ उठानी पड़ी और भूखा रहनेका कष्ट भी झेलना पड़ा। इन सबसे बढ़कर यह कि उनको निचले स्तरकी घृणित मनोवृत्तिकी अंग्रेज नौकरशाहीके अपमान झेलने पड़े, ठोकरें खानी पड़ीं। फिर भी वे सदैव एक आदर्श बन्दी बने रहे। शक्तिवान् होते हुए भी वे कृपालु रहे और उन्होंने शत्रुओंसे भी सदैव सज्जनताका व्यवहार किया। उन्होंने हर एकको, हर एक बातके लिए क्षमा किया। असीम धैर्य उनका चिरसहचर रहा। जिन लोगोंने उनको जेलमें डाला, उनके प्रति यदि कभी उनके मनमें तिरस्कारकी भावना भी आयी तो उसमें एक उन्नत शालीनता रही।

हज़पर

१९२४-२८

सन् १९२४ में जब खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँ जेलसे छूटे तब उनका शरीर टूट चुका था और वे बहुत दुर्बल हो चुके थे। परन्तु उनकी आत्मा अपराजित थी। उनकी आँखोंमें उन सतत यातनाओंके लिए गर्व झलकता था जो कि उन्होंने दृढ़ निश्चय और उदासीन वृत्तिके साथ झेली थीं। उनके वृद्ध पिता बहराम ख़ाँके उत्साहका पारावार न था। उन्होंने मिलनेके लिए आनेवाले सैंकड़ों लोगोंको अपने हाथसे चाय पिलायी और अंग्रेजोंके सम्बन्धमें कई प्रशंसात्मक बातें कहीं। पठानोंने अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँकी ओर अतिशय श्रद्धाकी दृष्टिसे देखा। उन्हें उनका नेता मिल गया, अंग्रेज़ोंको इसके लिए धन्यवाद !

तीन सालतक वे इस प्रकार नज़रबन्द रहे जैसे कि किसी मक़बरेमें बन्द रहे हों। तीन महीनेमें केवल एक बार वे अपने सम्बन्धियोंको पत्र भेज सकते थे और एक बार ही उनका पत्र प्राप्त कर सकते थे। वे अपने सम्बन्धियोंसे इस अवधिमें केवल एक बार मिल सकते थे। इन भेंटोंके द्वारा ही उनको बाहरी संसारकी कुछ झलकियाँ मिल पाती थीं। उन्होंने सुना कि समूचे भारतमें आन्दोलनकी चिनगारियाँ तेज होती जा रही हैं। सीमान्त-प्रदेशमें सरकारने सार्वजनिक सभाओंपर रोक लगा दी थी और लोगोंको ऐसे आयोजनोंसे डर लगने लगा था। परन्तु आज़ाद स्कूल प्रगति कर रहा था और उनकी संस्था सक्रिय थी। उनके विद्यालयके अध्यापक और छात्र प्रत्येक पर्व और त्योहार, जैसे कि मस्जिदोंमें मौलूद शरीफ़ आदिको बड़े उत्साहसे मनाते थे और उनमें भाषण किया करते थे। अन्य विद्यार्थियोंके साथ ग़नी भी, जिसकी वय ९ वर्षकी थी, भाषण किया करता था। वह उपस्थित जनतासे कहता, 'सरकारसे पूछिये कि मेरे पिताको किसलिए जेलमें डाला गया? उन्होंने क्या अपराध किया था?' उसका छोटा भाई वली इस प्रकारके समारोहोंमें बड़े प्रभावोत्पादक ढंगसे कुरानका पाठ किया करता था। ऐसे कार्यक्रमोंका लोगोंके हृदयोंपर प्रभाव पड़ता था और उनमें एक नवीन चेतना आती जा रही थी। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँका विचार है, "मेरी जेल-यात्रा पख़्तूनोंके लिए बड़ी हितकारी सिद्ध हुई। उनका रुख आज़ाद स्कूलके प्रति अधिक सहानुभूतिपूर्ण हो गया और वे उसे अपेक्षाकृत अधिक आर्थिक सहयोग देने लगे।"

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँकी माताकी मृत्युके समाचारको उनसे एक वर्षसे भी अधिक समयतक छिपाया गया। "मेरी गिरफ्तारीसे मेरी माता वहुत अधिक उद्विग्न हो गयीं। तीन मासमें जव कभी भी मुझको एक पत्र लिखनेकी अनुमति मिलती थी तव मैं उसमें अपनी माताके लिए कुछ-न-कुछ अवश्य लिखा करता था। उनकी यह वड़ी इच्छा थी कि वे मुझसे मिलनेके लिए जेलमें आयें परन्तु वे वहुत वृद्ध थीं, हमारे घरसे डेरा गाज़ी खाँ काफ़ी दूर था और वीचमें सिन्धु नदा पड़ता था। उनको कष्ट और परेशानीसे वचानेके लिए मैंने उनसे सदैव प्रार्थना की कि वे मुझसे मुलाक़ात करनेके लिए न आयें। परन्तु शोक है, मैं यह नहीं जानता था कि सर्वशक्तिमान् ईश्वर उनको मुझसे शीघ्र ही छीन लेगा। सन् १९२३ में वे वीमार पड़ीं और कुछ दिनों वाद ही उनकी मृत्यु हो गयी। उनकी वीमारी ओर मृत्युकी मुझे कोई सूचना नहीं दी गयी। वह मुझसे छिपायी गयी। मैंने उनके विषयमें समाचारपत्रोंमें पढ़ा और मेरा मन अत्यंत दुःखी हो गया। अपनी रिहाईके वाद जव मैं अपने गाँवमें पहुँचा तव मेरी वहिनने मुझसे कहा कि अंतिम घड़ियोंमें उनकी जिह्वापर मेरा ही नाम था। उनके आख़िरी शब्द थे, "ग़फ्फ़ार कहाँ है ?"

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके वड़े भाई डॉ० खान साहव अपने परिवारके लोगोंसे तेरह वर्षसे अलग थे। लन्दनके सेन्ट थॉमस अस्पतालसे एम० आर० सी० एस० की उपाधि प्राप्त कर चुकनेके पश्चात् उनको फ्रांसके युद्ध-स्थलमें चला जाना पड़ा। अपने छोटे भाई और वृद्ध पिताके सम्बन्धमें वे नितान्त अनभिज्ञ थे। भारतसे भेजे जानेवाले पत्रोंमेंसे उन्हें एक भी नहीं मिला। जिस समय वे इंगलैण्डमें थे, उन्होंने एक अंग्रेज महिलाके साथ अपना दूसरा विवाह कर लिया जिससे कि उनके एक पुत्र जेन उत्पन्न हुआ। जेन खाँकी शिक्षा पहले वहाँके पब्लिक स्कूलमें हुई और फिर आक्सफोर्डमें। लन्दनके अपने दीर्घ प्रवासमें डॉ० खान साहव जवाहरलाल नेहरूसे मिले और फिर वे दोनों एक दूसरेके निकटतम मित्र वन गये। डॉ० खान साहवने स्वदेश लौटनेका प्रयत्न किया परन्तु उनको लन्दनमें तवतक छः मास प्रतीक्षा करनी पड़ी, जवतक कि उनको सन् १९२० में जहाज़पर सवार होनेका आदेश नहीं मिल गया। इस प्रकार जव उनके पिता, भाई और अन्य सम्वन्धी जेलमें थे तव वे फ्रांसमें अंग्रेज़ोंकी सेवा कर रहे थे और अधिकारियों द्वारा अपने घरकी घटनाओंके सम्वन्धमें जान-वूझकर अनभिज्ञ रखे जा रहे थे। मार्च सन् १९२० में भारत लौटनेपर उनकी नियुक्ति मरदानकी गाइड्स रेजीमेंन्टमें की गयी। अवतक जिन तथ्योंको छिपाया गया था, वे प्रकाशमें आ गये

और उनसे उनका चित्त अत्यन्त खिन्न हो गया। सन् १९२१ में उनके यूनिटको वज़ीरी लोगोंके विरुद्ध कार्यवाही करनेका आदेश दिया गया। डॉ० ख़ान साहबने वहाँ जाकर अपने स्वजातीय बन्धुओंके खिलाफ़ कार्य करना अस्वीकार कर दिया। उन दिनों वे इंडियन मेडिकल सर्विसमें कैप्टेनके पदपर कार्य कर रहे थे। बहुत अधिक कठिनाईके बाद उनको अपने आयोग (कमीशन) से त्यागपत्र देनेकी अनुमति मिली। तुरन्त ही उन्होंने पेशावरमें अपना चिकित्साका कार्य जमा लिया और उनकी गणना वहाँके नामी डाक्टरोंमें होने लगी। जिस समय बड़े भाई पेशावरमें अपनी डॉक्टरी जमा रहे थे, उस समय छोटे भाई राजनीति और रचनात्मक कार्यक्रममें अपने-आपको अधिकाधिक निमग्न करते जा रहे थे।

ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँकी रिहाईकी आशामें आज़ाद स्कूलका वार्षिक अधिवेशन स्थगित कर दिया गया था। जिस समय यह समारोह मनाया गया, उस समय इलाकेके हज़ारों लोग वहाँ उपस्थित थे। उनमें अपने तरुण नेताके प्रति उत्साह, प्रेम और श्रद्धाकी उमंगें हिलोरें ले रही थीं। जन-समुदायकी ओरसे उनकी विशिष्ट सेवाओंके लिए उन्हें एक पदक प्रदान किया गया और उसके साथ ही उनको 'फ़ख़्रे-अफ़गान' (पठानोंके गर्व) की उपाधि भी दी गयी। इस सभा में उन्होंने एक छोटा-सा व्याख्यान दिया :

"एक बार एक गर्भिणी बाघिनने भेड़ोंके एक झुण्डपर आक्रमण किया। उसने वहीं एक बच्चेको जन्म दिया और मर गयी। वह व्याघ्र शिशु भेड़ोंके बीचमें बड़ा हुआ और उसने उन्हींकी आदतों और ढंगोंको अपना लिया। एक बार एक व्याघ्रने भेड़ोंके उस झुण्डपर हमला किया। तब उसने देखा कि भेड़ोंके दलके साथ एक व्याघ्र-शिशु भी मिमियाता हुआ दौड़ता जा रहा है। व्याघ्रको उसे मिमियाते हुए देखकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ। व्याघ्रने उस बच्चेको भेड़ोंके झुण्डसे अलग कर लिया और वह उसको एक तालाबके निकट ले गया, जहाँ कि वह जलमें अपनी छाया देख सके और यह समझ सके कि वह भेड़ नहीं, बल्कि एक व्याघ्र है। व्याघ्रने उस शावकसे कहा, 'तुम एक व्याघ्र हो, भेड़ नहीं। मिमियाओ मत, बल्कि एक बाघकी भाँति गर्जना करो।'

"पख़्तून बन्धुओ, तुम भेड़ नहीं, बाघ हो। तुम्हारा गुलामीमें पालन-पोषण हुआ है, मिमियाओ मत, बाघकी भाँति गरजो!"

जनताने उनके भाषणके लिए जो उत्साह प्रदर्शित किया उससे अधिकारी लोग चिढ़ गये। प्रदेशका वातावरण उत्साहसे परिपूर्ण होता जा रहा था और ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँ अपने विस्तृत दौरेके कार्यक्रममें लग रहे थे।

वहराम खाँ, जो लगभग शतायु हो गये थे, सन् १९२६ ई० में वीमार पड़े और उनकी मृत्यु हो गयी। अपने अंतिम समयतक वे सक्रिय रहे और टहलना और घुड़सवारी उनको प्रिय रही। उनके दोनों पुत्रोंने उनकी असीम उदारताके लिए उन्हें सदैव स्मरण किया।

वहराम खाँके अन्तिम संस्कारमें पर्याप्त दानकी आशासे वहुतसे मुल्ला आ जुड़े। परन्तु जव उनको दान नहीं मिला तो वे क्रोधित हो गये। अंतिम संस्कार; मृत देहको समाधिमें रखते समय उन्होंने खान अव्दुल ग़फ्फ़ार खाँकी निन्दा की। उन्होंने कहा कि दिवंगत व्यक्तिके प्रति उनका व्यवहार अनुचित है और वह उसकी प्रतिष्ठाको हानि पहुँचानेवाला है। उनको भय हुआ कि अन्य लोग भी इसी आदर्शका पालन करने लगेंगे और इससे उनकी आय शीघ्र ही कम हो जायगी। खान अव्दुल ग़फ्फ़ार खाँने इस अवसरपर एकत्रित लोगोंको सम्वोधित करते हुए कहा :

"समय वदल चुका है और निश्चय ही हमको भी वदलना चाहिए। पहले समयमें मुल्ला लोग केवल परोपकारके लिए धार्मिक उपदेश दिया करते थे परन्तु अव वे उनके लिए पारिश्रमिक लेते हैं। दान देनेकी पुरानी रूढ़ियोंको भी अव परिवर्तित होना चाहिए। मैं दान देनेका विरोधी नहीं हूँ। मैं अपने दिवंगत पिताकी पुण्य-स्मृतिमें २००० रुपये देना चाहता हूँ। क्या मैं आप लोगोंमें वाँटनेके लिए इस निधिका गुड़ या सावुन मँगवा लूँ या मैं पख्तून वालकोंकी शिक्षाके लिए यह धन गाँवके विद्यालयको दान कर दूँ?"

उपस्थित जन-समुदाय जोरसे चिल्ला उठा, "निश्चित ही आप इसे स्कूलको दान कर दीजिए।" इससे मुल्ला लोग अत्यन्त निराश हो गये। वे लोग सदासे खान अव्दुल ग़फ्फ़ार खाँको पसन्द नहीं करते थे। अव उनका विरोध और भी वढ़ गया।

वड़ी वहिनने हजके लिए जाना निश्चय किया था और उनके अनुरोधपर खान अव्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने भी उनके साथ सपत्नीक चलना स्वीकार कर लिया। यात्रियोंका यह दल कराचीसे जहाजपर सवार हुआ। इन लोगोंको जहाजके ऊपरके डेकका यात्री वनना पड़ा क्योंकि उनको भीतर जहाजमें स्थान नहीं मिल सका। सागर-यात्राके अधिकांश समयमें ये लोग समुद्रकी वीमारीसे ग्रस्त रहे। खान अव्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँको इन्फ्लुएन्जा हो गया। एक अरव यात्रीकी इनपर कृपा हो गयी और उसने इन्हें अपनी कोठरी (केविन) में ठहरा लिया। सचमुच उसीने इनकी जीवन-रक्षा की। जिद्दामें ये लोग जहाजसे उतर गये और फिर एक मार्गदर्शक

पंडेने इन लोगोंकी सँभाल की। इन लोगोंके पास बहुत अधिक सामान था। वह उस पंडेकी लापरवाहीसे ही खो गया या शायद उसीने चुरा लिया। जिद्दासे ये लोग मक्का चले गये। उन दिनों गर्मीकी ऋतु थी। दिन काफी उष्ण होते थे और रातें ठंडी। बहुतसे निर्धन यात्री बीमार पड़ गये और मौसमके अति विषम परिवर्तनके कारण मर गये। इस वर्ष, सन् १९२६ ई० में अरबके सुलतान इब्न सऊदने मक्कामें समस्त विश्वके ख्यातिप्राप्त मुसलमानोंको आमंत्रित किया था। कई भारतीयोंके साथ खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने भी इस सम्मेलनमें भाग लिया। वहाँ चर्चा अनावश्यक छोटी-छोटी बातोंपर आकर समाप्त हो गयी जिनके कारण परस्पर झगड़े भी उठ खड़े हुए। इस सम्मेलनमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँकी मुस्लिम देशोंके ऐसे कई प्रतिनिधियोंसे मुलाकात हुई जिन्होंने उन्हें अपने देशों-की स्थितिका सही-सही परिज्ञान कराया।

अपने उद्देश्य, हजको पूरा करके वे तथा उनकी पत्नी तैफ़की ओर बढ़ गये और उनकी बहिन मदीना चली गयीं जहाँसे वे स्वदेशको लौट आयीं। तैफ़ एक रमणीक, दर्शनीय, ठंडी जगह थी। यात्राके दौरान उनकी एक पख्तूनसे मित्रता हो गयी थी। उसीके आरामदेह मकानमें रहकर उन्होंने स्वास्थ्य लाभ किया। एक दिन जब वे नगरसे बाहर कुछ दूर टहलनेके लिए गये थे तभी उनको एक अपरिचित व्यक्तिने, जिसकी दाढ़ी लम्बी थी और जो एक लम्बा चोग़ा पहने था, दूरसे अपनी ओर बुलाया। जब खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ उसके पास पहुँचे तब वह बोला, "यही वह स्थान है जहाँ कि पैग़म्बर (मुहम्मद साहब) की दाढ़ीका एक बाल और उनके चरण-चिह्न सुरक्षित हैं।" 'मैं यहाँ इन सब चीजोंको देखनेके लिए नहीं आया हूँ।' खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने कहा, 'मैं यहाँ पैग़-म्बरके धैर्य और साहसको स्मरण करने आया हूँ जो कि उन तैफ़के लोगोंका कल्याण करने, मक्कासे ७५ मील दूर इस स्थानपर आये थे, जिन्होंने उनके ऊपर पत्थर फेंके थे, कुत्ते दौड़ाये थे और उन्हें पीटा था। बिना क्षुब्ध हुए, शांत भाव-से पैगम्बर (मुहम्मद साहब) ने इनके लिए प्रार्थना की थी, "अल्लाह, मेरे लोगोंको सच्चा मार्ग दिखलाओ।"

तैफ़से वे मक्का गये और मक्कासे जिद्दा होते हुए मदीना चले गये। इन यात्रियोंके दलमें चार स्त्रियाँ और छः पुरुष थे। इस कारवाँने रातके समय रेगि-स्तानमें ऊँटोंपर यात्रा की। मदीनामें कुछ समय व्यतीत करके वे यरूशलम चले गये, जहाँ कि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँकी पत्नीका पाँव एक सीढ़ीपर फिसल गया। वे गिर पड़ीं और उनकी वहीं मृत्यु हो गयी। वे अपने पीछे एक बालिका

और एक पुत्र छोड़ गयीं। खान अब्दुल गफ़्फ़ार ख़ाँने इस दुःखको बहुत गहराईसे अनुभव किया। उन्होंने फिर विवाह नहीं किया यद्यपि वे अभी युवा थे।

उन्होंने कुछ दिन, फिलस्तीन, लेबनान, सीरिया और इराकमें व्यतीत किये और वहाँकी स्थितियोंका अध्ययन किया। बग़दादमें थोड़े दिन ठहरनेके बाद वे बसरा चले गये और वहाँसे एक स्टीमर द्वारा कराची वापस आ गये। कराचीसे वे अपने गाँव आये। उनके मनमें अपने देश और उसके निवासियोंकी सेवा करनेकी भावना भरी थी।

देशसे बाहर जो कुछ महत्त्वपूर्ण घटनाएँ हो रही थीं, उन्हें अपने मुस्लिम देशोंके दौरेमें उन्होंने देखा। इन घटनाओंने उनकी आँखें खोल दीं। इस बातको उन्होंने ध्यानसे देखा कि किस प्रकार 'केवल मुसलमान' का विचार दृढ़ राष्ट्रीयताके रूपमें परिवर्तित हो जा रहा है। उन्होंने यह भी देखा कि तुर्कीसे खलीफा का शासन कैसे हट गया और उसके स्थानपर कमाल अतातुर्कके प्रगतिशील नेतृत्वमें एक शक्तिशाली गणराज्यका कैसे उदय हुआ ? मिस्र, ईरान और अरबका जग़लुल पाशा, रज़ा शाह और इब्न सऊद जैसे राष्ट्रवादी नेताओं द्वारा कैसे कायापलट हो गया ? वहाँ यह अत्यन्त व्यापक रूपसे अनुभव किया जा रहा था कि भारतकी मुक्ति मध्य-पूर्व और अन्य स्थानोंके निवासियोंको भी ब्रिटिश आधिपत्यसे मुक्ति पानेके लिए प्रेरणा और नेतृत्व देगी।

सन् १९२४ ई० और १९२९ ई० के बीचकी अवधि स्वाधीनताके संघर्षके लिए कठिन परीक्षाकी घड़ी थी। साम्प्रदायिक भावना ऊपर उठती जा रही थी। अनेक लोगोंने अपना संतुलन खो दिया तथा वे किंकर्त्तव्य विमूढ़ हो गये। ख़ाँन अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने संकीर्ण साम्प्रदायिक भावनाकी सभी प्रवृत्तियोंकी ओर से अपने आपको बड़े कठोरतापूर्वक बचाये रखा। 'मैं किसी धर्मकी शक्तिको उसके अनुयायियोंके सिरोंकी गणना करके नहीं मापता।' उन्होंने कहा, 'वह विश्वास क्या है जो लोगोंके जीवनसे व्यक्त न हो ? यह मेरी आन्तरिक धारणा है कि इस्लाम 'अमल, यकीन और मुहब्बत; सदाचार, विश्वास और प्रेम' है और बिना इनके अपनेको मुसलमान कहना वैसा ही निरर्थक है, जैसी कि पीतल की आवाज़ या झाँझकी झनकार। पवित्र कुरानमें यह स्पष्ट रूपसे लिख दिया गया है कि एक ही ईश्वरमें एकनिष्ठ विश्वास और भले कार्य किसी व्यक्तिको मुक्ति दिलानेके लिए यथेष्ट हैं।'

सारे देशमें साम्प्रदायिक दंगोंकी एक लहर दौड़ गयी थी। सितम्बर सन् १९२४ में पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेशके कोहाट नगरमें भयानक साम्प्रदायिक झगड़े

हुए। कोहाटके सारे हिन्दू उसे छोड़कर चले गये। इन दंगोंका तात्कालिक कारण पैगम्बर (मुहम्मद साहब) के जीवनके सम्बन्धमें एक आपत्तिजनक अश्लील पुस्तक 'रङ्गीला रसूल' का प्रकाशन था। उसके हिन्दू लेखककी तुरन्त ही हत्या कर डाली गयी। गांधीजीने दिल्लीमें मुहम्मद अलीके निवासस्थानपर इक्कीस दिनका अनशन रखा। कोहाटके दंगों और अन्य समस्याओंपर गांधीजी और अली-बन्धुओंके बीच मूलभूत मतभेद हो गया और वे लोग एक-दूसरेसे दूर हट गये। सन् १९२६ में सामान्य चुनावके अभियानके समय साम्प्रदायिक भावनाओंकी एक अपील अपने पीछे कटु स्मृतियोंके पद-चिह्न छोड़ गयी। हिन्दू शुद्धि और संगठनपर बल देने लगे और मुसलमान उनसे स्पर्द्धा करने लगे। दिसम्बर सन् १९२६ में स्वामी श्रद्धानन्दजीकी, जो कि असहयोगके दिनोंमें जन-नायक समझे जाते थे, एक मुसलमानने हत्या कर डाली। 'मुसलमानोंमें तलवारका प्रयोग अधिक होने लगा है।' गांधीजीने कहा, 'यदि इस्लामके मूल उद्देश्य—शांतिकी रक्षा करनी है, तो उनको तलवारको म्यानमें ही रखना चाहिए।' सन् १९२७ में महात्मा गांधीने कहा, 'मैं हिन्दू-मुस्लिम समस्याको छूनेका साहस नहीं कर सकता। वह मनुष्यके हाथोंसे निकल गयी है और ईश्वरके हाथोंमें पहुँच गयी है। हम आपसमें घृणा करते हैं, परस्पर अविश्वास करते हैं, एक दूसरेकी जबान काटने दौड़ते हैं और यहाँतक कि हत्यारे बन जाते हैं। हम परम प्रभुसे प्रार्थना करें कि वे हमें विचार-शक्ति और बुद्धि प्रदान करें।'

ख़ाँन अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यका उपदेश दे रहे थे, तभी एक मुसलमान धर्मोपदेशक बोला, 'अरे, यह कैसा व्यर्थका प्रयास है ? हिन्दू मूर्तिपूजक हैं। भला हम उनसे कोई व्यवहार कैसे रख सकते हैं ?' ख़ाँन अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ ने उसका प्रतिवाद करते हुए कहा, 'यदि वे मूर्तिपूजक हैं, तो हम क्या हैं ? मकबरोंकी यह पूजा क्या है ? भला कोई यह कैसे कह सकता है कि वे ईश्वरके प्रति आस्थावान नहीं हैं, जब कि मैं जानता हूँ कि वे एक ही ईश्वरपर विश्वास करते हैं ? आप हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यसे इतने निराश क्यों हैं ? कोई सच्चा प्रयत्न व्यर्थ नहीं जाता। इन खेतोंकी ओर दृष्टि डालिए। इनमें जो अनाज बोया गया है, उसे कुछ समयतक धरतीमें पड़े रहना होगा। फिर उसमेंसे अंकुर फूटेगा और अपने उचित समयमें वह अपने जैसे असंख्य दाने प्रदान करेगा। एक भले उद्देश्यके लिए किया जानेवाला प्रत्येक प्रयास ऐसा ही है।'

पख्तून

१९२८

हजसे वापस आनेके तत्काल बाद पख्तूनोंतक समाज-सुधार और राजनीतिक जाग्रतिका सन्देश पहुँचानेके लिए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने लम्बे और कष्ट-साध्य पैदल दौरे शुरू कर दिये। ९८ प्रतिशत पठान पढ़े-लिखे न थे और उनके लिए लिखा हुआ पर्चा कोई अर्थ न रखता था। अतः वे एक गाँवसे दूसरे गाँव, लोगोंसे चर्चा करते हुए बढ़ते जाते थे।

पख्तूनोंमें जन-जाग्रतिके लिए वे पख्तू-भाषियोंका सहयोग चाहते थे। पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेश, जन-जातियोंके क्षेत्र तथा अफ़ग़ानिस्तानमें कुल मिलाकर एक करोड़से अधिक पख्तून निवास करते हैं। पठान संसारके अनेक नगरोंमें फैले हुए हैं। वे हिन्द महासागरके अस्पष्ट, अप्रसिद्ध बन्दरगाहोंमें किनारेके जहाजोंमें सामान लादते हैं। बहुतसे पख्तून पूर्वी पाकिस्तानमें पुलिस विभागमें अधिकारी हैं। अनेक कलकत्ता, बम्बई, कराची और लन्दनके बन्दरगाहोंमें जहाजोंपर माल चढ़ाने और उतारनेका काम करते हैं। बड़े नगरोंमें वे घरों और दूकानोंमें सुरक्षाका कार्य, जमादारी करते हैं। अनेक पठान भारतके गाँवोंमें व्याजपर रुपया बाँटनेका काम करते हैं। पठान लोग सारे दक्षिण-पूर्वी एशियामें बिखरे हुए हैं। आस्ट्रेलियामें पठानोंकी एक अलग बस्ती है। कैलीफोर्नियाके सबसे समृद्ध कृषकोंमें पख्तून लोग भी हैं। समस्त संसारमें बिखरे हुए पठान-समाजतक, विशेष रूपसे पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेशके शिक्षितोंतक अपनी आवाज़ पहुँचानेके लिए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने पख्तू भाषामें एक पत्र प्रकाशित करनेका निश्चय किया।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने लिखा है, "तबतक पख्तूनोंमें अपनी भाषाके लिए प्रेम जाग्रत नहीं हुआ था। उनमें यह चेतनातक न आयी थी कि पख्तू उनकी अपनी मातृभाषा है। वे जहाँ कहीं भी पहुँचे, उन्होंने वहींकी स्थानीय भाषाको अपना लिया और अपनी बोलीको भूल गये। उन्होंने अन्य लोगोंको अपनी भाषा नहीं सिखलायी और न स्वयं पख्तूमें लिखने और पढ़नेपर ध्यान दिया। अनपढ़ोंको तो छोड़ दीजिए, जब मैंने सुशिक्षित पख्तूनोंसे, पख्तूनोंके लिए विशेष रूपसे निकाले गये पत्रके ग्राहक बनने और उसे पढ़नेका आग्रह किया तब उन्होंने टीका करते हुए कहा, "पख्तूमें पढ़ने और जाननेके योग्य है ही क्या ?" मैंने अपनी

बातपर बल देते हुए कहा, "निश्चित ही इसमें पख्तू भाषाका कोई दोष नहीं है। अन्य देशोंमें हम जिन भाषाओंका अस्तित्व देखते हैं वे भी कभी अविकसित ही रही हैं। जो व्यक्ति इस योग्य थे और जिनमें स्वार्पणकी भावना थी, उन्होंने अपनी मातृ-भाषाओंके स्वरूपको सँवारा और उनको उन्नतिके शिखरतक पहुँचाया। क्या हममेंसे कभी किसीने पख्तू भाषाको गढ़नेका और उसको विकसित करनेका प्रयत्न किया है? बल्कि इसके सर्वथा विपरीत मुल्ला लोगोंने पख्तूके विरोधमें यह प्रचार किया कि पख्तू नरककी भाषा है। पख्तून समाज इतना निर्बुद्धि था कि उसने मुल्लाओंसे यह भी नहीं पूछा कि उन्हें यह सूचना कैसे मिली और वे नरकसे बाहर कैसे आये? इस प्रकारकी परिस्थितियोंमें 'पख्तून' पत्रका जन्म हुआ और वह बहुत थोड़े ही समयमें न केवल पख्तूनोंके देशमें अपितु सारे विश्वमें, जहाँ कहीं भी पख्तून बसते थे, लोक-प्रिय हो गया। अमेरिकामें रहनेवाले पख्तूनोंने न केवल उसकी खपतमें ही मदद की अपितु उन्होंने उसको आर्थिक सहायता भी दी।"

सन् १९२८ तक पख्तू भाषामें किसी राजनीतिप्रधान पत्रका प्रकाशन नहीं हुआ था। पंजाबसे उर्दू और अंग्रेजीके जो समाचार-पत्र प्रकाशित होते थे, पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेशमें भी उन्हींकी खपत थी। अंग्रेजीका 'सिविल एण्ड मिलिटरी गज़ट' और उर्दूका 'ज़मींदार' ही अधिकतर सीमान्त प्रदेशमें भी पढ़ा जाता था। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ समाचारपत्रोंके नियमित पाठक थे और वे मौलाना आज़ादके 'अल हिलाल' और 'अल बेलाग़' तथा गांधीजीके 'यंग इंडिय' को संगृहीत करते थे। मई सन् १९२८ ई० में उन्होंने अपने सम्पादनमें पख्तूके एक मासिक पत्र 'पख्तून' का प्रकाशन प्रारम्भ कर दिया। उसमें उनके लेख उनके हस्ताक्षर 'अब्दुल ग़फ़्फ़ार' के साथ छपते थे। उसका वार्षिक शुल्क चार रुपये था और वह विद्यार्थियोंको केवल ढाई रुपये चन्देमें दिया जाता था। यह मासिक पत्र मंझोले आकारके अठपेजी 'ओक्टेवो' आकारमें छपता था और उसमें चौवालीस पृष्ठ रहते थे। यह पहले रावलपिण्डीसे मुद्रित हुआ, फिर अमृतसरसे और तत्पश्चात् पेशावरसे। आरम्भके अंकोंमें मुख-पृष्ठपर एक मस्जिदका रेखाचित्र रहता था और उसके साथ दो झण्डे, एक उगता हुआ चाँद और एक तारा दिखलाया जाता था। उसके नीचे खादिमकी एक लघु कविता लिखी रहती थी, 'गुलामीमें बिताये गये दासके कई वर्ष, स्वाधीनतामें व्यतीत किये गये मात्र एक घण्टेकी तुलनामें नगण्य हैं। भले ही वह घण्टा मृत्युकी अति यंत्रणामें काटा गया हो।' तदनन्तर, पत्रके मुख-पृष्ठपर ही एक नवोदित चन्द्र, तारा और

ग़नीकी निम्नांकित मर्मस्पर्शी पंक्तियाँ छपी रहती थीं—

> "यदि मैं एक दास होऊँ, जो एक चमकदार समाधि-स्थलमें एक कब्र-के नीचे लेटा है, तो मेरा सम्मान न करना और उस समाधिपर थूक देना। यदि मैं मरूँ और मेरा शरीर शहादतके रक्तसे सना हुआ न पड़ा हो, तो मेरे लिए ईश्वरसे प्रार्थनाएँ करके, अपनी जिह्वाको मलिन न करना। हे माता, तू मेरे लिए कौनसा मुँह लेकर विलाप करेगी, यदि मेरा शरीर अंग्रेजोंकी बन्दूकोंसे चिथड़े-चिथड़े न हो गया हो? या तो मैं अपनी दुरवस्था-में पड़े देशको देवलोकके उद्यानमें बदल दूँगा, या फिर पख्तूनोंके घर और गलियोंके चिह्नतक मिटा डालूँगा।"

'पख्तून पत्रका संरक्षण और उसकी सफलता पख्तूनोंके लिए प्रतिष्ठाका एक कारण बने।' एक लघु टिप्पणीमें कहा गया था, 'इस पत्रको पख्तूनोंके लिए निकाला गया है, इसलिए हमने निश्चय किया है कि इसके प्रकाशनसे जो भी लाभ होगा, उसका उपयोग राष्ट्रीय प्रवृत्तियोंमें किया जायगा। जितनी अधिक बिक्री होगी, लाभका अंश उतना ही अधिक रहेगा। हम पख्तूनोंसे यह अपील करते हैं कि वे इस प्रकाशनको सफल बनायें।'

'पख्तून' के प्रवेशांकमें पचीससे भी अधिक रचनाएँ थीं, जिनमें लेख और कविताओं आदिका समावेश था। आरम्भकी एक टिप्पणीमें कहा गया था, "यह एक मिथ्या धारणा बन गयी है कि पश्तू भाषामें किसी भी विचारकी यथावत् अभिव्यक्ति कठिन है। यहाँ दो पद्यमय उक्तियाँ प्रस्तुत हैं। इनको पढ़नेके पश्चात् पाठक स्वयं यह अनुभव करेंगे कि कोई व्यक्ति अपने विचारको प्रभावपूर्ण ढंगसे कैसे व्यक्त कर सकता है।"

सम्पादकीय लेखमें कहा गया था, 'अधिकांश पख्तू-भाषी क्षेत्रोंमें 'पख्तून' के प्रकाशनका समाचार पहुँच चुका है। पख्तून जनताकी ओरसे जिस उत्साहके साथ उसका स्वागत किया गया है, उसकी साक्षी उन लेखोंकी संख्या है, जो हमें अब-तक प्राप्त हो चुके हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि जनता पख्तू भाषामें ऐसे प्रकाशन-के लिए बड़ी उत्सुकतासे प्रतीक्षा कर रही थी। हमको यह विश्वास हो गया है कि 'पख्तून' अति शीघ्रताके साथ प्रगति करेगा। जनताने उदारतापूर्वक हमें जो उत्तर दिया है, वह उसकी भावनाके पुनर्जीवनका एक स्पष्ट प्रमाण है। यह उसका अपना पत्र है और इसकी प्रगति और प्रतिष्ठाके प्रति उसका उत्तरदायित्व है। पत्रके अनुरूप हम प्रत्येक रचनाका स्वागत करेंगे, चाहे वह किसीकी भी हो। उसकी भाषा सरल होनी चाहिए। पत्रकी प्रतिष्ठा उसकी सामग्रीपर निर्भर होती

है। हमारे पत्रका यह प्रथम कर्त्तव्य होगा कि वह पख्तूनोंकी आकांक्षाओंको निर्भीक रूपमें वाणी दे और उस खतरेके प्रति, जो उनके सन्निकट है, उनको सावधान करे। यह गूँगे बनकर बैठनेका समय नहीं है। जीवन गतिशीलताके द्वारा ही व्यक्त होता है और प्रकृति भी कर्मपर बल देती है, शब्दोंपर नहीं। हम मनोयोगपूर्वक कार्य करें और अपनेको व्यर्थ चर्चाओंमें न लगायें। ऐसे लेखों और भाषणोंके दिन बीत चुके हैं जिनके पीछे कोई सिद्धान्त न हो। सफलताको प्राप्त करनेके लिए हमको कठोर संघर्ष करना होगा।

"पख्तून अफ़गानिस्तानमें रहनेवाले पख़्तूनोंको भी सम्मिलित करके अपने आपमें एक राष्ट्र हैं। यह दुर्भाग्यकी बात है कि अफ़गानिस्तानमें 'पख्तू' में, जो सारे पठानोंकी भाषा है, कोई पत्र प्रकाशित नहीं हो रहा है। पख्तून जनताके कल्याणके लिए 'पख्तून' का प्रकाशन किया जा रहा है। यह किसीके लिए भी सम्भव नहीं है कि वह एक-एक व्यक्तिसे मिले और उसको अपनी दृष्टिसे अवगत करे। परन्तु एक पत्रिकाके माध्यमसे हम हज़ारों लोगोंतक अपनी बात पहुँचा सकते हैं। पत्रोंका श्रेष्ठ स्तर एक रातमें नहीं बनता। कुछ प्रख्यात पत्र तो कई शताब्दी पुराने हैं। लन्दनके 'टाइम्स'का प्रथम प्रकाशन सन् १७८५ ई० में हुआ था। पख्तूनके उत्तरदायित्वका यह भार हम सब मिलकर धैर्य और साहससे वहन करें। हमें यह लिखते हुए खेद है कि इस दिशामें हमको अपने अफ़गान बन्धुओंसे निराशा मिली है। भाषा, परम्परा और आचारकी दृष्टिसे अफ़गानिस्तान एक पख्तून राष्ट्र है, परन्तु उसकी भाषा 'फारसी' है। हमारी उससे यह अपेक्षा सर्वथा उचित है और हम चाहते हैं कि वह इसपर गम्भीरतापूर्वक विचार करे। आइए, हम पख्तून जनता और उसके एक मात्र पत्र 'पख्तून' की प्रगतिके लिए प्रभुसे प्रार्थना करें।

'पख्तून' में राजनीति विषयक अच्छे लेख प्रकाशित हुआ करते थे जैसे कि कबीली इलाकोंको धमकी, साइमन कमीशनका बहिष्कार, शाह अमानुल्लाकी यूरोप तथा सोवियत संघकी यात्राओंका महत्त्व आदि। उसमें स्वास्थ्यरक्षा, पौदोंके रोग और उनके निदानपर भी टिप्पणियाँ प्रकाशित होती थीं। चारसद्दा-की राजकीय शिक्षण-संस्थामें स्थानाभावके सम्बन्धमें एक विद्यार्थीकी शिकायत भी उसमें प्रकाशित हुई थी। एक पठान महिलाने अपने एक लघु लेखमें पख्तून बहिनोंकी अशिक्षापर दुःख प्रकट करते हुए, अपराधकी कोटिमें आनेवाली इस उपेक्षाके लिए पुरुषोंको दोषी ठहराया था। नगीना नामकी एक पख्तून बहिनने एक व्यंग्यपूर्ण गीतमें लिखा था कि पठान अपनी स्वयंकी स्वाधीनताको तो बहुत

प्रेम करते हैं परन्तु जिस समय महिलाओंको स्वतन्त्रता देनेकी बात आती है, तब वे उसको किस प्रकार अस्वीकार कर देते हैं, 'पख़्तून पुरुषोंके अतिरिक्त स्त्रियोंका कोई शत्रु नहीं है। वह चतुर होता है और वह महिलाओंका बड़े उत्साहके साथ दमन करता है। पख़्तूनोंने हमारे हाथ, पैर और मस्तिष्कको एक अस्वाभाविक दीर्घ निद्रामें सुला दिया है और हम लोगोंको अपने बलसे दबा रखा है। संसारके किसी अन्य पशुके लिए भी ऐसे कठोर कानून कभी नहीं गढ़े गये। पठान! जब तुम अपनी स्वाधीनताकी मांग करते हो, तब उसको अपने यहाँकी स्त्रियोंके लिए क्यों स्वीकार नहीं करते? यदि तुम हमसे यह अपेक्षा करते हो कि हम राष्ट्रीय प्रवृत्तियोंमें भाग लें तो शिक्षा द्वारा हमारे अंधेरेको दूर करो। एक पैशाचिक अध्यादेश हमपर लाद दिया गया है। हमारे साथ सहानुभूति रखना भी एक पाप बन गया है क्योंकि अभी कलकी ही बात है कि हमारे हेतुको लेकर खड़े होनेके कारण शाह अमानुल्ला खाँको एक काफ़िर घोषित कर दिया गया।'

एक लेखकने अपनी लययुक्त कवितामें लिखा था, 'अभिनेता अमानुल्लाह खाँ-ने जो भी भूमिका अभिनीत की हो, वह पठानोंको वीरता और साहसका पाठ पढ़ायेगी।' शाह अमानुल्लाह खाँकी यूरोपकी राजकीय यात्राके सम्बन्धमें लिखे गये एक लेखमें उनकी मलिकाकी वेशभूषाकी चर्चा करते हुए एक अन्य लेखकने लिखा था, 'पख़्तून राष्ट्रमें, जिसकी सुन्दरी पुत्रियाँ पहाड़ियोंमें ईंधन बीनती हैं और उसको अपने सिरपर ढोकर लाती हैं, फसलकी कटाई करती हैं और लड़ा-इयोंके मैदानमें घूमती हैं, पर्देका कोई स्थान नहीं है। पुरातन युगमें यहाँ परदा नहीं था, आज भी उसका अस्तित्व नहीं है और वह वहाँ भविष्यमें भी नहीं होगा। ऐसे देशकी मलिका, जिसकी बेटियाँ गोलियोंकी बौछारोंका सामना करती हैं, परदेमें कैसे ले जायी जा सकती थीं? सारे विश्वमें यदि ऐसे अवसरपर कोई आपत्ति उठाता है, तो वह केवल एक भारतीय मुसलमान ही। वह परदा प्रथा, जिसका भारतमें प्रचलन है, इस्लामी परदा नहीं कही जा सकती। इस्लाम ऐसी हानिकारक प्रथाकी कभी स्वीकृति नहीं दे सकता। वह तो दासताके तुल्य है। स्त्रियाँ शारीरिक श्रम करें, इसका इस्लाम निषेध नहीं करता, इससे उनके चलने-फिरनेकी स्वाधीनता स्वयं सिद्ध होती है।'

'इस्लाम और सीमान्तके पठान' शीर्षक लेखमें एक गुमनाम लेखकने लिखा था, 'किसीको भी यह देखकर आश्चर्य होता है कि अन्य राष्ट्रोंके निवासियोंकी तुलनामें पख़्तून अपमान और दीनताका जीवन किसलिए जी रहे हैं? सीमान्तके पठान अपनेको इस्लामका अनुयायी कहनेका दावा करते हैं और यह समझते हैं

कि विश्वके अन्य लोगोंकी अपेक्षा उनकी इस्लाममें अधिक निष्ठा है। किसी भी जीवित राष्ट्रके लिए जिन गुणोंकी आवश्यकता होती है उनमेंसे बहुतसे गुणोंको रखते हुए भी वे अनेक बातोंमें अत्यंत पिछड़े हुए हैं। अल्लाहने वचन दिया है कि जो कोई अपने भीतर विश्वास रखेगा और कर्म करेगा, वह उसकी अनुकम्पाका अधिकारी होगा। हम इस तथ्यका परीक्षण करें कि हम क्यों पिछड़े हुए हैं? इस्लामकी शिक्षाओंके प्रकाशमें हमें इसके कारणकी खोज करनी चाहिए।'

"ईश्वरने कहा है, 'असत्य मत बोलो, किसीकी हत्या मत करो, किसीको चोरी न करो, किसीको चोट मत पहुँचाओ, किसीके ऊपर अत्याचार मत करो और दूसरोंकी सम्पत्तिको छीनो मत। तुम दूसरोंका उपकार करो, दुष्कार्य न करो और अपने शरीर, अपने वस्त्र और अपने स्थानको सदा स्वच्छ रखो। दूसरोंके साथ कभी ऐसा व्यवहार न करो जिसको कि तुम अपने लिए नहीं चाहते। अन्य व्यक्तियोंके प्रति ऐसे कार्य करो और ऐसे ढङ्गोंको अपनाओ जिनको कि तुम उनसे अपने प्रति अपेक्षा रखते हो। यही इस्लाम धर्मके नियम और आज्ञाएँ हैं, जिनका पालन करनेका इस्लाम आदेश देता है। यही इस्लामके सिद्धान्त हैं और जो इनके अनुसार चलते हैं, वे ही सच्चे मुसलमान हैं। परन्तु जब तुम असत्य बोलते हो, चोरी करते हो, दूसरोंको चोट पहुँचाते हो, हत्या करते हो, अन्य व्यक्तिकी सम्पत्तिको छीनते हो, निर्दयताके काम करते हो, हमेशा शरारतके अवसरकी खोजमें रहते हो तथा शान्तिके एक शत्रु बन जाते हो तब तुम मुसलमान शब्दके वास्तविक अर्थमें अपनेको मुसलमान कहनेका दावा कर ही कैसे सकते हो? यह हमारा दुर्भाग्य है कि हम इस्लामके नियमों और सर्वशक्तिमान् ईश्वरके आदेशोंसे पूर्ण परिचित होते हुए भी वही करते हैं जो हम चाहते हैं। अपने पत्रके माध्यमसे हम यह प्रयास करेंगे कि प्रत्येक पख्तून इस्लामके धर्मादेश, क़ुरानकी मूल भावना तथा अल्लाह एवं पैगम्बर (मुहम्मद साहब) के दिखलाये हुए सत्पथकी ओर अग्रसर हो। हर एक पख्तून इस्लामकी सच्ची भावनाको ग्रहण करे और अपनेको उस वचनका सुयोग्य पात्र बनाये जो सर्वशक्तिमान् प्रभुने उसे दिया है। इस प्रकार वह इस तथा अन्य विश्वके समस्त लाभोंको प्राप्त करनेका पात्र बने।"

'पख्तून' में इस्लामके प्रख्यात पुत्रोंके जीवन-प्रसंग, रेखाचित्र एवं समाजकी घटनाओंपर आधारित छोटी कहानियाँ भी रहती थीं। इस पत्रका सबके प्रबल आकर्षण वे कविताएँ थीं, जिनकी रचना स्वयं उत्साही पाठक किया करते थे। इनमें स्त्री, पुरुष और स्कूलोंके बालक भी रहते थे। ग़नी 'पख्तून' में अपनी कविताएँ और गद्यके छोटे अंश दिया करते थे। अग्रांकित पंक्तियाँ उनके नमूने हैं:

ओह, दूल्हा देवदारके पेड़-सा लम्बा है,
और वधू गुलाबोंका झुरमुट है,
उसके सिरपर एक सुनहला दुपट्टा है,
उसकी ठोड़ीपर एक सुन्दर काला तिल है;
वह पुराने और फटे कपड़े पहने है।
ओह, फूलोंका बाग़, एक उजड़ा शहर है,
ओह, लड़का चिनार जैसा है
और लड़की गुलाबोंका झुरमुट है।

जब मौन प्रेमके द्वारा जीत लिया गया है, तब वह एक गीतमें बदल जाता है।

जब एक गीत हठीला बन जाता है, वह कोलाहलमें बदल जाता है।

जब एक विचार अपने विषयमें निश्चित हो जाता है, वह एक शब्दमें बदल जाता है।

जब एक गीत नाचनेकी इच्छा अनुभव करता है, वह संगीतमें बदल जाता है।

जब संगीत एक स्वप्न देखने चला जाता है, वह मौनमें बदल जाता है।

मौन ही आदि है और मौन ही अंत है।

संसारका सबसे बड़ा मूर्ख, सबसे बड़ा संत ही है।

उसको धोखा देना बहुत सरल है क्योंकि वह यह नहीं जानता कि धोखा कैसे दिया जाता है ?

उससे झूठ बोलना सरल है, क्योंकि वह नहीं जानता कि झूठ कैसे बोला जाता है ?

वह एक बहुत बड़े अवसरको खो देगा, यह देखनेके लिए कि मृत्युको चुनौती देनेके लिए साहससे, हँसते हुए कैसे खड़ा हुआ जाता है ?

वह शक्तिशालीके आगे ढीठ है और दुर्बलके प्रति कृपालु;

वह अपने भाईको प्रेम करता है और अपनी पत्नीके प्रति ईमानदार है।

वह संसारका सबसे बड़ा मूर्ख है।

वह आलुओंसे फूलोंको अधिक पसन्द करेगा और सुस्त राजाओंसे घुमक्कड़ोंको—वह एक गढ़े हुए स्वप्नके लिए जियेगा, एक राजकीय भोजके

लिए नहीं।

वह खानेसे सोचना पसन्द करेगा,

वह सोचनेसे नाचना पसन्द करेगा,

वह तब सोयेगा और खर्राटे लेगा

जब कि उसको अपनी धनी सासके पास बैठना चाहिए और उससे विनत भावसे बातें करनी चाहिए।

वह एक बालकके नन्हें सुकुमार हृदयको सांत्वना देना पसन्द करेगा;

बजाय इसके कि किसी अभिमानी शक्तिशालीके पास बैठकर उसके दर्पका तुष्टीकरण करे।

वह एक छोटेसे कुत्तेका बड़ा मित्र बनना पसन्द करेगा,

बजाय इसके कि वह एक बड़े आदमीका छोटा दोस्त बने।

वह परियोंकी और उछलनेवाले घासके कीड़ोंकी बातें पसन्द करेगा और वह आपकी जेबमें पड़े हुए सोनेकी अपेक्षा चाँदमें झलकनेवाले सोनेको अच्छा समझेगा।

वह संसारका सबसे बड़ा मूर्ख है।

अप्रैल, १९३० में शासन द्वारा रोक लगायी जाने और खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको जेल भेजे जानेतक 'पख्तून' एक मासिक पत्रके रूपमें प्रकाशित होता रहा। इसके एक वर्षके पश्चात् जब उनको रिहा कर दिया गया तब वह फिर प्रकट हुआ। परन्तु सन् १९३१ ई० में जैसे ही खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको जेल भेजा गया, 'पख्तून' के प्रकाशनपर भी तत्काल रोक लगा दी गयी। कई वर्षोंतक उनको अपने प्रदेशमें प्रवेश करनेकी अनुमति नहीं दी गयी। सन् १९३७ ई० में जब वे अपने प्रान्तमें वापस लौटे तब 'पख्तून' के एक मासमें तीन अंक प्रकाशित हुए। केवल एक वर्ष सन् १९४० ई० के अतिरिक्त पख्तूनका प्रकाशन सन् १९४२ ई० तक सतत रूपसे चलता रहा। फिर खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँकी गिरफ्तारीके कारण वह स्थगित हो गया। सन् १९४५ में उनकी रिहाईके तत्काल बाद उसका प्रकाशन पुनः प्रारम्भ हो गया और फिर अगस्त सन् १९४७ ई० तक चलता रहा, जबतक कि पाकिस्तान सरकारने उस पर स्थायी रोक न लगा दी। उसकी सारी उपलब्ध प्रतियोंको नष्ट करा दिया गया। सम्भवतः संसारके किसी पुस्तकालयमें या किसी व्यक्तिके निजी संग्रहमें 'पख्तून' की पूरी फ़ाइल नहीं है। शायद काबुलकी लायब्रेरी ही वह एकमात्र स्थान है जहाँ उसकी थोड़ी-बहुत प्रतियाँ प्राप्त हो सकती हैं।

ब्रिटिश सरकार केवल सम्पादकको गिरफ्तार कर लेनेके उद्देश्यसे 'पख्तून' के अंकोंकी छानबीन करती थी। 'पख्तून' की प्रकाशित सामग्रीका थोड़ा-सा अंश, वह भी अंग्रेजी अनुवादके रूपमें नयी दिल्ली स्थित राष्ट्रीय अभिलेखागार 'नेशनल अर्काइव्स'में उपलब्ध है। 'पख्तून' की ऐतिहासिक निधि शायद हमेशा-के लिए लुप्त हो गयी।

शाह अमानुल्लाह खाँके शासन-कालमें, अफ़गानिस्तानमें 'पख्तून' अत्यंत लोकप्रिय हो गया था। 'पख्तून' ने पख्तू भाषाके प्रति प्रेम और अभिरुचि जाग्रत कर दी थी और उसने अफ़गानिस्तानसे राजकीय संरक्षणमें प्रकाशित होनेवाले पत्र 'पख्तून फाग़' के प्रकाशनके लिए एक प्रेरणा दी थी। शाह अमानुल्लाह खाँ पख्तू भाषापर इतने मुग्ध थे कि उन्होंने तीन वर्षकी अवधिके अन्तर्गत समस्त राज-कर्मचारियोंको पख्तू सीख लेनेका आदेश दे दिया था। वे उसको राष्ट्रभाषा-का पद देना चाहते थे।

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने लिखा है, "सहसा अंग्रेजोंने इस आन्दोलनकी प्रगतिको रोक दिया। 'पख्तून फाग़' के तबतक नौ अंक ही निकल पाये थे कि अंग्रेजोंने मुल्लाओं और धर्मोपदेशकोंके सहयोगसे अफ़गानिस्तानमें अशान्तिका वातावरण खड़ा कर दिया। इन लोगोंने शाह अमानुल्लाह खाँको 'काफ़िर' घोषित कर दिया और उनको अपने प्रिय देशका त्याग कर देनेको विवश कर दिया।"

इस अनूठे पत्र 'पख्तून' में पख्तून जनताका चेहरा और मन दर्पणकी भाँति प्रतिबिम्बित होता था। इक़बालने संक्षिप्त रूपमें लिखा है: "अफ़गानोंमें तीन ऐसे गुण हैं जो औरोंका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करते हैं—उनकी गहरी धार्मिकता, जन्म और पदके भेद-भावसे उनका सर्वथा मुक्त होना, और उनका धार्मिक और राष्ट्रीय विचारोंके बीचका पूर्ण संतुलन। अफ़गानोंकी परिवर्तन विरोधिनी सनातनताकी यह प्रवृत्ति अपने आपमें एक चमत्कार है। एक ओर वह वज्रकी भाँति कठोर है और दूसरी ओर उसमें नवीन सांस्कृतिक शक्तियोंके प्रति भावना-शीलता और समीकरण करनेकी वृत्ति है और यही पठान जातिके आंतरिक क्रमिक विकासका रहस्य भी है।"

खुदाई ख़िदमतगार

१९२९

दिसम्बर सन् १९२८ ई० में खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खा अपने कुछ सहयोगियों के साथ खिलाफ़त कान्फ़ेन्समें भाग लेनेके लिए कलकत्ता चले गये। इस सम्मेलनमें अली बन्धुओं और पंजाबी नेताओंके बीच भी गम्भीर दरार स्पष्ट रूपसे सामने आ गयी। रातमें जिस समय अधिवेशनकी कार्यवाही चल रही थी, एक पंजाबी नेताने मौलाना मुहम्मद अलीकी अत्यंत तीखी आलोचना की। मुहम्मद अलीके निकट ही खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ भी मंचपर बैठे हुए थे। मुहम्मद अली अपनी उग्र आलोचनाको सहन न कर सके और क्रोधमें उन्होंने उस पंजाबी नेताको कुछ अपमानजनक शब्द कहे। उन्हें सुनकर एक अन्य पंजाबी नेता, जो मंचपर बैठा हुआ था, सहसा उठ खड़ा हुआ। उसने अपना चाकू खोल लिया और उसने भी मुहम्मद अलीको कुछ अपशब्द कहे। मंचके ऊपर हो-हल्ला मच गया। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके साथियोंने किसी प्रकार मामलेको शान्त किया और उन लोगोंसे मुहम्मद अलीको छुटकारा दिलाया।

जिन दिनों कलकत्तामें खिलाफ़त कान्फ्रेंस चल रही थी, उन्हीं दिनों वहाँ कांग्रेसका अधिवेशन भी हो रहा था। मुहम्मद अलीने हिन्दुओंकी सभ्यता, संस्कृति और आचार-व्यवहारका उपहास करते हुए उनपर आक्रमण किया। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके लिए यह एक अप्रिय प्रसंग था और उन्होंने खिलाफ़त कान्फ्रेंसको छोड़कर कांग्रेसके अधिवेशनमें शामिल होनेका निश्चय कर लिया। कांग्रेसका अधिवेशन उनके लिए एक अनूठा अनुभव था। "गांधीजी विषय निर्वाचिनी समितिकी बैठकमें भाषण कर रहे थे कि एक उद्धत युवक अपने आलोचनापूर्ण व्यंग्योंसे बार-बार उनके भाषणमें बाधा डालने लगा, फिर भी उसके इस व्यवहारसे गांधीजीको क्रोध नहीं आया। एक बार वे उसकी किसी बातपर खिलखिलाकर हँस पड़े और उन्होंने अपना भाषण फिर चालू कर दिया। मैं इस घटनासे विशेष प्रभावित हुआ और अपने कैम्पमें लौटकर मैंने अपना यह अनुभव अपने साथियोंको सुनाया। मैंने उन लोगोंका ध्यान हिन्दुओंके नेता महात्मा गांधीके शांत भाव और उसके सर्वथा विपरीत हम मुसलमानोंके नेता मुहम्मद अलीके उग्र व्यवहारकी ओर आकृष्ट किया। इसके पश्चात् हम लोगोंने मुहम्मद अलीके साथ बातचीत

की। मैंने उनको यह प्रसंग बतलाया कि व्यवधान और आलोचनाके होते हुए भी गांधीजीने किस प्रकार बिना किसी व्यग्रताके, हँसते हुए अपना भाषण पूरा किया। मैंने मुहम्मद अलीसे कहा, 'आप हमारे नेता हैं। हम चाहते हैं कि आप और भी महान् बनें। यदि आप सहनशीलता और आत्म-संयमको कुछ अधिक अपना लेते तो कितना अच्छा होता।' इसपर वे क्रोधसे जल उठे और बोले, 'ओह! तुम जंगली पठान मुहम्मद अलीको शिक्षा देनेके लिए आये हो?' क्रोधके उद्वेग-में वे उस स्थानको छोड़कर चले गये। उनके इस व्यवहारसे हमारे मनपर एक गहरी चोट लगी। इसके पश्चात् मैं ख़िलाफत कान्फ्रेन्सकी बैठकोंमें नहीं गया और अपने गाँव वापस लौट आया।''

सन् १९२८ ई० में अमानुल्लाहके पतनके पश्चात् राजसत्ता एक लुटेरेके हाथमें चली गयी, जिसका नाम बच्चा-सक्काव था और नादिर शाह फ्रांससे इस बातकी कोशिशके लिए आ गये कि अफ़गानिस्तानकी गद्दी फिर मुहम्मदज़इयोंके हाथोंमें आ जाय। नादिर शाह और उनके भाई इस दिशामें संयुक्त रूपसे कार्य कर रहे थे और अधिकांश लोग यह समझने लगे थे कि वे अमानुल्लाहके लिए ही काम कर रहे हैं। नादिर भी अमानुल्लाहकी भाँति एक मुहम्मदज़ई था। महसूद और वज़ीरी लोग नादिर शाहको आगे बढ़ानेमें विशेष रूपसे सहायक हुए। उन्होंने उसके लिए काबुलपर अधिकार किया और उन्हींके कारण दुर्रानी राज-वंशकी पुनःस्थापना सम्भव हो सकी।

इन घटनाओंपर टिप्पणी करते हुए ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने लिखा है: ''अमानुल्लाह ख़ाँने पठानोंकी समृद्धि और उनके कल्याणके लिए कार्य किया। परन्तु वे लोग एक मित्र और एक शत्रुके बीच पहचान न कर सके और उन्होंने उसके विरोधमें विद्रोह खड़ा कर दिया। उन्होंने अफ़गानिस्तानसे उनका नाम-निशान ही मिटा दिया। यह मात्र एक कृतघ्न भावना थी। ईश्वरकी दृष्टिमें कृतघ्नता एक महापाप है। ईश्वरने उन लोगोंके ऊपर बच्चा-सक्कावको थोपकर मानों उन्हें इसका दण्ड दिया। देश और समाजकी प्रगति और कल्याणकार्य उसी जगह रुक गये और वे सब विनाशकी ओर बढ़ने लगे। हम पख़्तूनोंने अफ़गानि-स्तानके विनाशको अपना स्वयंका विनाश समझा। अंग्रेजोंने हमारे कारण अफ़-गानिस्तानको बर्बाद कर डाला क्योंकि अफ़गानिस्तानकी उन्नतिका हमारे ऊपर निश्चित ही एक प्रभाव पड़ता। परन्तु जो स्थिति बनी, वह अंग्रेज भी नहीं चाहते थे। धन और जनसे जितना कुछ भी हो सका, हमने अफ़गानिस्तानकी सहायता की और यह मदद तबतक चलती रही जबतक कि नादिर शाहको विजय प्राप्त

नहीं हो गयी। इस अशांति कालमें मैंने अफ़गानिस्तानके मामलेपर बल देनेके लिए व्यापक दौरे किये। पंजाबमें मैं इक़बाल और अन्य पंजाबी नेताओंसे मिला। मेरे खिलाफ़त आन्दोलनके सहयोगियोंने मुझसे पूछा, 'आपने इक़बालसे भेंट क्यों की ? वे तो किसी भी कामके आदमी नहीं हैं। वे केवल कविताएँ लिख लेते हैं।' इक़-बालकी मृत्युके पश्चात् हर एक व्यक्तिने उनकी प्रशंसा की। संसारका यही प्रच-लित नियम है कि जीवित राष्ट्र जीवित लोगोंको सम्मान देते हैं और पतनोन्मुख राष्ट्र मरे हुओंको। हम मुसलमान लोग सदैव मृतकोंको प्रतिष्ठा देते हैं और जीवितोंके गुणोंकी सराहना नहीं करते।

"लाहौरसे मैं लखनऊ चला गया जहाँ सन् १९२९ ई० में कांग्रेस अधि-वेशन होने जा रहा था। यहाँ मैं गांधीजी और जवाहरलालजीसे पहली बार मिला। मैं उनसे पहलेसे परिचित न था। परन्तु जवाहरलालजी और डॉ० खान साहब एक दूसरेके घनिष्ठ मित्र थे। वे दोनों इंगलैण्डमें साथ रहे थे और लन्दन विश्वविद्यालयमें साथ-साथ पढ़े थे। मेरे भाईने मेरे लिए जवाहरलालजीके नाम एक परिचयपत्र दे दिया था। मैंने अफ़गानिस्तानके मामलोंपर जवाहरलालजीके साथ विस्तारसे चर्चा की।

"उसके बाद मैं दिल्ली चला आया। एक शुक्रवारको मेरी मुहम्मद अलीसे एक मस्जिदमें भेंट हुई। वे एक शिष्ट व्यक्ति थे और मेरे ऊपर अत्यन्त कृपालु थे। उनके भाई शौकत अली अच्छे आदमी नहीं थे और उन्होंने अपने भाईको गुमराह कर दिया था, विशेष रूपसे अफ़गानिस्तानके प्रश्नपर। उनकी इस बातसे मुझको कष्ट हुआ था और मैं बहुधा उनसे मिलनेके मौक़ोंको टाल देता था। जब मुहम्मद अलीने मुझे देखा, तब वे मेरी ओर मुस्कराते हुए बढ़ आये और बोले, 'हम लोग पठानोंकी चिन्ता नहीं करते।' मैंने भी उनको वैसा ही उत्तर दिया, 'हम भी ऐसे नेताओंकी चिन्ता नहीं करते जो दूसरोंसे गुमराह हो जाते हैं। कृपया, यह तो याद कीजिए कि अमानुल्लाह खाँके सम्बन्धमें आपने भी वे ही बातें कही हैं जो अंग्रेज लोग कहा करते हैं।' मेरा बड़े प्रेमसे आलिंगन करते हुए उन्होंने कहा, 'भाई, मुझको सारे तथ्य बताओ।' फिर वे मुझको अपने घर ले गये।

"अमानुल्लाह खाँके यूरोप जानेके अवसरपर मौलाना शौकत अलीने उनके लिए एक बहुत बड़े समारोहका आयोजन किया था, जिसमें उन्होंने शाहको एक अभिनन्दनपत्र भी भेंट किया था। इस अवसरपर मैं भी वहाँ उपस्थित था। कहा जाता है कि शौकत अलीको अमानुल्लाह खाँसे वह धन-राशि नहीं मिली,

जिसकी कि वे उनसे आशा कर रहे थे, इसीलिए वे उनसे रुष्ट हो गये।

"कुछ दिनोंके बाद मुझको नादिर शाहका एक तार मिला जिसमें उनकी जीतका समाचार था। आनन्दके इस अवसरको हम लोगोंने हस्तनगरके उत्तरी और दक्षिणी कोनोंसे दो प्रभावोत्पादक जुलूस निकालकर मनाया। उत्मंज़ईमें आकर वे दोनों जुलूस मिल गये। वहाँ हम लोगोंने एक बहुत बड़ी सभाका आयोजन किया। मैंने उपस्थित जनसमुदायसे कहा, 'किसी भी राष्ट्रकी प्रगतिके दो मूल कारण होते हैं, धर्म और देशभक्ति। यद्यपि अमेरिका और यूरोपने धर्मकी उपेक्षा की है परन्तु उनमें राष्ट्रीयताकी बहुत बड़ी भावना है अत: वे समृद्धिको पा चुके हैं। हमारे पतनका कारण यह है कि हमारे भीतर राष्ट्रीय और धार्मिक भावनाओंकी कमी है। मुझको दूरपर एक बहुत बड़ी जन-क्रान्ति आती दिखलाई दे रही है। परन्तु आप लोग अभीतक उसके प्रति सचेततक नहीं हैं। उप महाद्वीप (भारत) की अपनी पिछली यात्रामें मैंने यह लक्ष्य किया कि भारतके स्त्री और पुरुष उसके लिए पूर्ण रूपसे तैयार हैं। स्त्रियोंकी बात तो जाने दीजिए, हमारे पुरुष भी देश और समाजके हितके प्रति पूर्ण रूपसे सावधान नहीं हैं। क्रांति एक बाढ़की भाँति होती है। उससे एक राष्ट्र उन्नति कर सकता है और उसी प्रकार नष्ट भी हो सकता है। वह राष्ट्र, जो काफ़ी जाग्रत हो चुका है, जिसके भीतर भ्रातृत्वकी भावना पनप गयी है, जिसमें पारस्परिक मैत्री और राष्ट्रीयताकी भावनाएँ हैं, निश्चित ही क्रान्तिसे लाभान्वित होगा। जिस राष्ट्रमें इन गुणोंकी कमी है, वह उसकी बाढ़में बह जायगा। यदि हम यह समझते हैं कि समृद्ध राष्ट्र स्वर्गसे गिरते हैं, तो हम भूलमें हैं। वही राष्ट्र प्रगति किया करता है जिसने अपने निजके लिए आराम और सुखोपभोगको अस्वीकार कर देनेवाले नागरिकोंको जन्म दिया है—ऐसे लोगोंको, जिन्होंने अपने राष्ट्रको आगे बढ़ानेके लिए अपने निजके सामाजिक स्तर और भविष्यकी आशाओंको दाँवपर लगा दिया है। हम लोगोंमें ऐसे आदमी नहीं हैं। यही कारण है कि हम लोग पिछड़े हुए हैं। जो आगेकी ओर बढ़ते जा रहे हैं, वे यह जानते हैं कि उनकी वास्तविक सफलता, उनके राष्ट्रकी प्रगतिमें ही निहित है। हम केवल अपने निजके लाभको ओर देखते हैं, भले ही देश रसातलमें चला जाय। हम इस बातको समझ सकनेमें असमर्थ हैं कि हमारी वैयक्तिक सफलता हमें अपनी राष्ट्रीय सफलताकी ओर नहीं ले जाती। जब एक राष्ट्र सफल होता है, तब उसका प्रत्येक नागरिक उससे लाभान्वित होता है। हम केवल अपने निजी लाभको ही देखते हैं। अपने अकेले अस्तित्वको बनाये रखनेका प्रयास, पशुओंका तरीक़ा है। जानवर अपने निजके

लिए रहनेका आश्रय बनाते हैं, अपना संगी चुनते हैं और अपनी संतानको पालते हैं। यदि हम भी यही करते हैं तो हम उनसे श्रेष्ठ प्राणी कैसे हुए ? यदि आप यह चाहते हैं कि आपका देश प्रगति करे और सफल हो तो आपको व्यक्तिगत अस्तित्वकी अपेक्षा सामाजिक जीवन जीना होगा।

"मैंने यह सुना है कि अमानुल्लाह खाँ कहा करते थे, 'मैं पख्तूनोंका क्रांतिकारी बादशाह हूँ।' सचमुच, वे ही ऐसे व्यक्ति थे, जिन्होंने हमारे भीतर क्रान्तिकारी भावनाको भरा। और वस्तुस्थिति यह है कि स्वयं अफ़गानोंकी अपेक्षा हम उनसे अधिक लाभान्वित हुए क्योंकि अफ़गान सो रहे थे और हम पूर्ण रूपसे जाग्रत थे।

"इस सभाका श्रोताओंके ऊपर गहरा प्रभाव पड़ा। दूसरे दिन एक युवक मेरे पास आकर बोला कि पठान समुदायकी सेवा और उसके सुधारके लिए वह एक संगठन प्रारम्भ करना चाहता है। हम लोगोंने इस विषयपर चर्चा की और काफ़ी विचार-विमर्श किया। हम लोग 'अंजुमन-इस्लाह-उल अफ़गानिया' संस्थाकी स्थापना कर चुके थे। यह संस्था शिक्षा-प्रसारकी दिशामें कार्य कर रही थी। हमने निश्चय किया कि वही इस महत्त्वपूर्ण कार्यको भी अपने हाथमें ले ले। अपने पिछड़े हुए समाजकी सामाजिक कमियोंको दूर करनेके लिए हमने एक अन्य संगठन 'खुदाई खिदमतगार' अर्थात् 'ईश्वरके सेवक' प्रारम्भ किया था। आरम्भमें यह एक पूर्णतया अराजनीतिक संगठन था परन्तु ब्रिटेनकी दमन नीतिने उसको राजनीतिमें भाग लेनेको विवश कर दिया। यह एक आत्म-विरोधकी स्थिति थी कि अंग्रेज ही हमें और कांग्रेसको निकट लानेके माध्यम बने।

"हम लोगोंमें पारिवारिक कलह, कुटिल षड्यन्त्र, शत्रुता, रूढ़ियाँ और झगड़े-दंगे फैले हुए थे। पख्तून जो कुछ कमाते थे वह हानिकारक प्रथाओं, कुरीतियों और मुकदमेबाजियोंमें खर्च कर डालते थे। अधभूखे और अधनंगे पख्तून एक दयनीय जीवन जी रहे थे। न हम धनी व्यापारी थे और न अच्छे खेतिहर। काफ़ी लम्बे विचार-विनिमयके पश्चात् सितम्बर सन् १९२९ में हम 'खुदाई खिदमतगार' संगठनकी नींव रखनेमें सफल हो गये। हमने संस्थाका यह नाम एक प्रयोजन-विशेषके कारण रखा था; हम ईश्वरके नामपर पख्तूनोंमें अपने समाज और देशकी सेवाकी एक भावना और एक चेतना भरना चाहते थे। हमको इस भावनाकी आवश्यकभा भी थी। पख्तूनोंका हिंसामें विश्वास था और वह भी अपने विरोधियोंके लिए नहीं बल्कि अपने निजके बन्धुओंके लिए। सबसे निकट और प्रियजन ही उनकी हिंसाके शिकार थे। आपसी षड्यन्त्रों और मतभेदोंने उनके हृदय

विदीर्ण करके उनको अलग-अलग कर दिया था। उनकी अन्य बहुत बड़ी कमियाँ प्रतिहिंसा अथवा बदलेकी भावना तथा उनमें चरित्र और अच्छी आदतोंका अभाव थीं।

जो व्यक्ति भी अपने अन्तरमें खुदाई खिदमतगार बननेकी प्रेरणाका अनुभव करता था वह इस गम्भीर और पवित्र शपथको ग्रहण करता था :

"मैं एक खुदाई खिदमतगार हूँ और ईश्वरको मेरी किसी सेवाकी आवश्यकता नहीं है अतः मैं उसके प्राणियोंकी निःस्वार्थभावसे सेवा किया करूँगा। मैं कभी किसीसे प्रतिकार या प्रतिहिंसावश बदला नहीं लूँगा और उसको भी क्षमा कर दूंगा जिसने मेरे विरुद्ध मेरा शोषण किया है अथवा जिसने मुझपर अनुचित दवाव डाला है। मैं किसी षड्यन्त्र, पारिवारिक कलह या शत्रुतामें भाग नहीं लूँगा और मैं प्रत्येक पठानको अपना भाई और साथी समझूँगा। मैं सारी कुप्रथाओं और कुरीतियोंका त्याग कर दूंगा। मैं एक सरल जीवन अपनाऊँगा। मैं दूसरोंका उपकार करूँगा और अपने-आपको दुष्कर्मोंसे बचाऊँगा। मैं अपनेमें एक श्रेष्ठ चरित्र को विकसित करूँगा और अच्छी आदतें उत्पन्न करूँगा। मैं सुस्त वनकर जीवन नहीं बिताऊँगा। मैं अपनी सेवाओंके लिए कोई पुरस्कार नहीं चाहूँगा। मैं निर्भीक रहूंगा और किसी भी त्यागके लिए सदैव तत्पर रहूंगा।"

यह खुदाई ख़िदमतगार संस्थाके संस्थापकके शब्दोंमें उसके जन्मकी कथा है।

ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँ पख़्तूनोंसे चर्चा करते हुए एक गाँवसे दूसरे गाँवको चले जाते थे। उनके साथियोंको ऐसा लगा कि हमारे सफ़ेद कपड़े बहुत शीघ्र मैले हो जाते हैं इसलिए उन लोगोंने अपने कपड़ोंको रंग लेनेका निश्चय कर लिया। उनमेंसे एक आदमी अपनी कमीज, पाजामा और साफा एक स्थानीय चमड़ा तैयार करनेके कारखानेमें ले गया और उन्हें चीड़की छालसे बनाये गये उस घोलमें डुबो लाया जो चमड़ेको रंगनेके लिए तैयार किया गया था। फल यह हुआ कि उसके कपड़ोंका रङ्ग कुछ कत्थईपन लिये हुए गहरा लाल हो गया। दूसरोंने भी यही किया। जब अगले अवसरपर उन लोगोंका दल बाहर निकला तव उनके वस्त्रोंके असामान्य रंगने दूसरोंका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। लोगोंने अपने हलोंको खेतमें ही छोड़ दिया और वे लाल रङ्गके कपड़े पहने हुए इन लोगोंको देखनेके लिए दौड़े आये। 'वे आये, उन्होंने देखा और उन्होंने जीत लिया।' खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँने अपने कार्यकर्त्ताओं,—खुदाई ख़िदमतगारोंके लिए इसी गहरे लाल रङ्गको अपना लिया, इसीलिए ये लोग 'लाल कुर्तीवाले' भी कहे जाते हैं। उनका ध्येय स्वतंत्रता और उनका कार्य लोक-सेवा

था। खुदाई खिदमतगारोंकी सेना कूचके समय यह प्रयाण-गीत गाया करती थी :

हम ईश्वरकी सेना हैं।
हम मृत्यु (के भय) और धन (के प्रलोभन) के आगे अविचलित हैं।
हम लोग कूच कर रहे हैं, हमारे नेता और हम लोग,
हम मरनेको तैयार हैं।
हम सेवा करते हैं और हम प्रेम करते हैं—
अपनी जनताको और अपने ध्येयको।
स्वाधीनता हमारा लक्ष्य है,
और उसका मूल्य हम जीवन देकर चुकाते है।

यह महत्त्वपूर्ण संगठन, जो अपने कई गुणोंके कारण अनूठा कहा जा सकता है, खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँकी समाज-संगठन करनेवाली प्रतिभाका परिचायक है। उन्होंने प्रत्येक गाँवमें स्थानीय लोगोंकी समितियोंका एक सूत्र-जाल बुन दिया था, जिनको कि जिरगा कहा जाता था। उसके ऊपर कई गाँवोंकी एक समिति 'टप्पा' गठित की गयी थी। इसके बाद तहसील और ज़िला समितियाँ थीं और उन सबके ऊपर प्रान्तीय जिरगा था, जिसको पख्तूनोंकी गैरसरकारी पार्लमेन्ट कहा जा सकता है। सभी समितियोंका गठन निर्वाचन द्वारा होता था। स्वयं-सेवकोंके संगठनमें अवश्य चुनाव-पद्धतिका उपयोग नहीं होता था क्योंकि वहाँ अनुशासन ही सबसे प्रधान वस्तु थी; और कलहकी भावनाको न आने देनेके लिए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको खुदाई खिदमतगारोंका 'सालार-ए आज़म' या कमाण्डर-इन-चीफ़ नियुक्त किया गया था। यह सर्वोच्च अधिकारी ही अन्य अफ़सरोंकी नियुक्ति करता था। ये सब अफ़सर और खुदाई खिदमतगार संस्थासे बिना कुछ लिये हुए उसे अपनी सेवाएँ प्रदान करते थे। यहाँतक कि वर्दीके लिए भी वे संगठनसे कुछ नहीं लेते थे। संस्थाके लिए ये स्वयंसेवक सदैव महान् शक्तिके स्रोत थे। वे आन्दोलनकी प्रवृत्तियोंको आगे बढ़ाते थे और उसके निर्णयोंको कार्यान्वित करते थे। उन्होंने यह शपथ ली थी कि वे निःस्वार्थ भावसे बिना पारश्रमिक लिये जनताकी सेवा करेंगे और अवसर आनेपर बड़ेसे बड़ा बलिदान देंगे। स्वसेवकोंको झण्डे दिये गये थे, पहले लाल रङ्गके और फिर तिरङ्गे। उनको वर्दियोंपर लगायी जानेवाली पट्टियाँ भी दी गयी थीं और मशक बाजा तथा ढोल भी। खुदाई खिदमतगारोंमें पुरुषोंकी वर्दी लाल और स्त्रियोंकी काली थी। वे सार्व-जनिक सभाओंमें व्यवस्था बनाये रखते थे। गाँववालोंकी आवश्यकताके समय वे उनकी सहायता करते थे। वे लोग नियमित रूपसे ड्रिल करते थे और उनको

सेना जैसे लम्बे 'मार्च' करना भी सिखलाया जाता था परन्तु वे शस्त्र धारण नहीं करते थे और न अपने साथ हथियार लेकर चलते थे, यहांतक कि लाठी भी नहीं लेते थे।

खुदाई खिदमतगारोंके आन्दोलनका लक्ष्य पख्तूनोंमें आत्म-सम्मान और ईश्वर से भयकी भावना जाग्रत करना था—एक ऐसा भय जो शेष सारे भयोंसे मुक्ति देता है। खुदाई खिदमतगारोंकी इस संस्थाका उद्देश्य पख्तूनोंको उद्योगशीलता तथा मितव्ययिता सिखलाना था और उनमें आत्म-विश्वास भरना था।

स्वाधीनताकी पुकार

१९२८–३१

लाहौर कांग्रेससे कुछ पूर्व कांग्रेस और अंग्रेज सरकारके मध्य समझौतेका एक आधार खोजनेका अंतिम प्रयास किया गया। २३ दिसम्बर सन् १९२९ का दिन भेंटके लिए निश्चित हुआ परन्तु उसी दिन जब कि लार्ड इरविन दिल्ली वापस आ रहे थे, रेलकी पटरीके किनारे एक बम-विस्फोट हुआ जिसमें वाइसराय बाल-बाल बच गये। इसके बाद महात्मा गांधी, पं० मोतीलाल नेहरू, विट्ठलभाई पटेल, तेज बहादुर सप्रू और मिस्टर जिना उनसे मिले। बम-विस्फोटके विषयमें बातचीत होनेके बाद वाइसरायने पूछा, 'प्रारम्भ कैसे किया जाय? क्या हम सबसे पहले बन्दियोंकी रिहाईका प्रश्न उठायें?' गांधीजीने सीधा प्रश्न किया, 'प्रस्तावित गोलमेज़ कांफ्रेंस क्या पूर्ण डोमिनियनके आधारको लेकर आगे बढ़ेगी?' लार्ड इरविन उन्हें इसका कोई आश्वासन न दे सके। उनकी अनिश्चयात्मक टिप्पणीके पश्चात् चर्चा वहीं समाप्त हो गयी।

"हम अब एक नवीन युगमें प्रवेश कर रहे हैं।" गांधीजीने कहा, 'पूर्ण स्वराज्य हमारा दूरका लक्ष्य नहीं अपितु तात्कालिक ध्येय है। यदि हम अहिंसा और उसके सहवर्ती गुणोंसे लाखों लोगोंमें स्वाधीनताकी सच्ची भावनाको विकसित कर देंगे तो क्या हमारा ध्येय मूर्तिमंत नहीं हो जायगा? गुप्त हिंसात्मक षड्यंत्रोंके द्वारा अंग्रेजोंके जीवनको जोखिममें डालना अथवा उन्हें देशसे निकाल देना ही यथेष्ट नहीं है। यह दृष्टिकोण हमको स्वाधीनताके निकट नहीं ले जायगा बल्कि एक अव्यवस्थाको जन्म देगा। हम अपनी आंतरिक ऐक्य-भावनाको विकसित करके और उसके द्वारा उनके हृदय और मस्तिष्कपर अपना प्रभाव डालकर अपने और उनके बीचके मतभेदको दूर कर सकते हैं और स्वाधीनताकी स्थापना कर सकते हैं। जिन लोगोंको हम अपनी प्रगतिके पथके बाधक समझते हैं, उनको आतंकित करके या उनकी हत्या करके नहीं बल्कि अपने धीरज और सद्-व्यवहार द्वारा उनका हृदय-परिवर्तन करके ही हमें स्वाधीनता प्राप्त करनी है। अतः हम जनताके समक्ष सविनय अवज्ञाका पथ प्रस्तुत कर रहे हैं।"

सन् १९२९ ई० में क्रिसमसके सप्ताहमें लाहौरके निकट, रावी नदीके तटपर जब कांग्रेसका अधिवेशन हुआ तब वातावरणमें एक कसाव था। ३०,००० दर्शकों

और प्रतिनिधियोंमें पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तके उन लोगोंकी भी काफ़ी संख्या थी जो खान अब्दुल गफ़्फ़ार ख़ाँके नेतृत्वमें पिछले कई वर्षोंसे कांग्रेसके अधिवेशनोंमें सम्मिलित होते आ रहे थे। अली-बन्धु सन् १९२४ ई० से कांग्रेससे शनैः-शनैः दूर हटते जा रहे थे। यद्यपि वे कांग्रेसके इस अधिवेशनमें शामिल हुए थे परन्तु केवल गांधीजीको यह चेतावनी देनेके लिए कि मुसलमान लोग उनको सविनय अवज्ञाके अभियानमें सहयोग नहीं देंगे। डा० अन्सारी तथा अन्य कई मुस्लिम नेता कांग्रेसके साथ थे परन्तु वे इस स्थितिके परिणामसे भय खा रहे थे और इसीलिए उनका उत्साह भंग था, परन्तु मौलाना आज़ादने कांग्रेसके समर्थनमें अपनी सारी शक्ति लगा दी। उनको इस बातपर तनिक भी सन्देह न था कि सामान्य रूपसे मुस्लिम जनता स्वाधीनताकी पुकारका यथोचित उत्तर देगी। खान अब्दुल गफ़्फ़ार ख़ाँने खिलाफत कमेटीसे त्याग-पत्र दे दिया क्योंकि वह कांग्रेस विरोधी संस्था बन चुकी थी।

पं० मोतीलाल नेहरूने कांग्रेसकी अध्यक्षताका कार्यभार अपने पुत्र जवाहरलालको सौंप दिया जो कि घोड़ेकी पीठपर बैठकर पंडालमें आये थे। लम्बे मार्गपर अपार जन-समूहमें लाखोंकी संख्यामें लोग एकत्रित थे और वे उनके ऊपर फूलोंकी वर्षा कर रहे थे। उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषणमें अपनेको एक समाजवादी और रिपब्लिकन घोषित किया। उन्होंने कहा, 'हमारे लिए स्वाधीनताका अभिप्राय ब्रिटेनकी प्रभु-सत्ता और ब्रिटेनके साम्राज्यवादसे पूर्ण रूपसे मुक्त होना है। मुझको इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि अपनी स्वाधीनताको प्राप्त कर लेनेके पश्चात् भारत विश्व-सहयोग और विश्व-संघके सारे प्रयासोंका स्वागत करेगा और अपनेसे बड़े एक समूहको, जिसका वह एक सदस्य होगा, अपनी स्वतःकी स्वाधीनताके एक अंशको देनेको भी तत्पर हो जायगा। सभ्यताके नामपर मुक्त सहयोग और पारस्पकि आश्रयके पथपर संकीर्ण राष्ट्रीयता और अंधेरे पक्ष खड़े कर दिये गये हैं।"

कलकत्ताके सन् १९२८ ई० के विगत कांग्रेस अधिवेशनमें पूर्ण स्वराज्यकी मांगको स्थगित करनेके लिए अपनेको उत्तरदायी ठहराते हुए गांधीजीने एक ऐतिहासिक प्रस्ताव प्रज्ञापित कियां, जिसमें यह घोषणा की गयी कि कांग्रेसके संविधानके प्रथम अनुच्छेदमें आये हुए स्वराज्य शब्दसे पूर्ण स्वराज्यका अभिप्राय लिया जाय। प्रस्तावके प्रवर्ती अंशमें कहा गया : 'वर्तमान परिस्थितियोंमें प्रस्तावित गोलमेज़ कांफ्रेसमें प्रतिनिधित्व करनेसे कांग्रेसको कुछ भी लाभ नहीं होगा। स्वतन्त्रता-अभियानको संगठित करनेकी दिशामें उठाये गये प्रारम्भिक कदमके रूपमें

तथा परिवर्तित 'क्रीड' के साथ कांग्रेसकी नीतिको यथासम्भव अनुरूप बनानेके लिए, कांग्रेस विधान-सभाओं और सरकार द्वारा गठित समितियोंके पूर्ण बहिष्कार का प्रस्ताव रखती है और कांग्रेसजनों तथा उन सब लोगोंसे, जो राष्ट्रीय आन्दोलनमें भाग ले रहे हैं, यह आग्रह करती है कि वे भविष्यमें होनेवाले चुनावोंमें भाग न लें। साथ ही वह वर्तमान सदस्योंको यह आदेश भी देती है कि वे अपने पदोंसे त्यागपत्र दे दें। यह कांग्रेस राष्ट्रसे अनुरोध करती है कि वह कांग्रेसके रचनात्मक कार्यक्रमको उत्साह सहित कार्यान्वित करे। वह अखिल भारतीय कांग्रेस समितिको यह अधिकार देती है कि वह जिस समय भी अनुकूल समझे सविनय अवज्ञा आन्दोलन छेड़ दे जिसमें कि चुने हुए क्षेत्रमें या सर्वत्र सरकारी करोंको न देना भी शामिल है और वह इस कार्यमें जो भी उचित समझे, सुरक्षा बरते।"

गांधीजीने इस प्रस्तावको कांग्रेसके भविष्यके कार्यके मूलाधारकी संज्ञा दी। ३१ दिसम्बर सन् १९२९ की अर्द्ध रात्रिमें बारह बजेके घंटेके साथ यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। सन् १९३० के आगमनके साथ ही भारतीय स्वाधीनताका तिरंगा ध्वज फहराया गया। 'इन्क़िलाब जिन्दाबाद'—'क्रान्ति चिरजीवी हो' के गगनभेदी नारोंसे आकाश गूँज उठा। सीमान्तके स्वयंसेवक आनन्दातिरेकसे नाच उठे और उस नाचमें जवाहरलाल नेहरूने भी पठानोंका साफ़ा बाँधकर भाग लिया। वे तथा उनकी पत्नी कमलाजी सीमाप्रान्तके लोगोंके द्वारा दिये गये एक विशिष्ट भोजमें सम्मिलित हुए।

लाहौरके कांग्रेस अधिवेशनमें सीमाप्रान्तके कई सौ लोग शामिल हुए। प्रदेश के प्रतिनिधि तो कांग्रेस अधिवेशनोंमें सदैव आया करते थे परन्तु लाहौरमें सीमाप्रान्तके उत्साही तरुणोंके एक बहुत बड़े दलने अखिल भारतीय राजनीतिकी धाराओंका प्रथम बार स्पर्श किया। उनके खुले, ताजे दिमाग़ उससे अत्यधिक प्रभावित हुए और वे स्वाधीनताके संघर्षमें शेष भारतके साथ एकताकी भावनाका अनुभव करते हुए अपने घर लौटे। उनके मनमें अपूर्व उत्साह था। ये लोग सरल थे परन्तु कार्य-साधक थे। अन्य प्रान्तके लोगोंकी अपेक्षा वे कम बातें करते थे और उनमें उतना वाक्-छल भी न था। वे अपनी जनताको संगठित करने लगे और उसमें नये विचार फैलाने लगे। ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ अपने साथी खुदाई ख़िदमतगारोंके साथ सरल तथा प्रभावपूर्ण पश्तू भाषामें लोगोंको उद्बोधित करते हुए पैदल या कभी-कभी घोड़ेपर एक गाँवसे दूसरे गाँवको जाते थे। वे लोगोंको उनके गौरवपूर्ण अतीतका स्मरण दिलाते थे और उन्हें यह बतलाते थे

कि मध्य एशिया और भारतके इतिहासमें उन्होंने कितनी उल्लेखनीय भूमिका निभायी है। वे अपने प्रदेशके लोगोंसे कहते कि आप लोग निर्भीक और साहसी हैं तथा मृत्युसे नहीं डरते, फिर भी आप गुलाम हैं। वे उनसे उनके रक्तपातपूर्ण झगड़ोंको त्यागने, लड़के-लड़कियोंको पढ़ाने, महिलाओंके प्रति कृपालु होने, विवाहके खर्चेको घटाने, सारे शोषकोंका विरोध करने तथा सदैव शोषित व्यक्तिका पक्ष लेनेके लिए कहते थे। वे लोगोंसे ऐसी बातें कहते हुए, जो उनसे पहले कभी किसीने न कही थीं, प्रान्तके एक छोरसे दूसरे छोरतक कई बार पैदल घूमे। उनके प्रान्तमें लगभग तीन हजार गाँव थे परन्तु ऐसा कोई गाँव न बचा था, जिसमें वे स्वयं न गये हों। तरुण उनके झण्डेके नीचे आकर खड़े हो जाते थे, लाल पोशाक धारण कर लेते थे और अपने नेताके समस्त उचित आदेशोंका पालन करनेकी शपथ लेते थे। इस संगठनका स्वरूप सैनिक पद्धतिपर था और उसमें एक उच्च स्तरका अनुशासन बनाये रखना अत्यावश्यक था। वे ईश्वर, समाज और मातृभूमिके प्रति निष्ठावान् रहनेकी पवित्र शपथ लेते थे और अहिंसाको पूर्ण रूपसे पालनेकी भी प्रतिज्ञा करते थे। उन्होंने अपने अति प्रिय शस्त्र राइफल, रिवाल्वर और तलवार त्याग दिये थे। इस संगठनमें किसी भी जातिका व्यक्ति भर्ती हो सकता था। पहले इन स्वयंसेवकोंकी प्रवृत्तियाँ समाज-सुधारके कार्योंतक ही सीमित रहीं। लोगोंको शराब पीनेसे रोकना, उनमें सचाई और एकताकी भावनाको विकसित करना, खादीको प्रोत्साहित करना, पारस्परिक झगड़ोंको रोकना और धर्मके या अन्य किसी प्रकारके भेद-भावके बिना मानव-मात्रकी सेवा करना उनके कर्त्तव्य थे। लाहौर कांग्रेसके बाद ख़ान अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँने अपने कार्यकर्त्ताओंके इस छोटेसे दलको कांग्रेसके कार्यक्रमको आगे बढ़ानेके लिए एक पूर्ण संस्थाके रूपमें बदल दिया। अप्रैल सन् १९३० तक खुदाई खिदमतगारोंकी संख्या ५०० से अधिक नहीं थी परन्तु छः महीनोंके बाद ही वह बढ़कर ५०,००० तक पहुँच गयी। यह संगठन बड़ी तेजीके साथ फैलता चला गया और कबीलोंके इलाकेमें भी पहुँच गया। वह इतना लोकप्रिय हो गया कि जिस गाँवमें भी ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँ पहुँचे, वहीं उन्होंने पहलेसे जिरगा स्थापित देखा।

२६ जनवरी सन् १९३० ई० को प्रथम स्वाधीनता दिवसकी संध्याको गांधीजीने अपने ये विचार व्यक्त किये :

"हम इस विचारसे अत्यधिक भयभीत हैं कि ब्रिटेनसे हमारा सम्बन्ध टूटते ही हिंसात्मक उपद्रव होने लगेंगे। मैं अहिंसाका उपासक हूँ, फिर भी यदि मुझसे यह पूछा जाय कि इस चिरदासत्व और उपद्रवके विवश साक्षीकी दो स्थितियों-

मेंसे आप किसे पसन्द करेंगे तो मैं बिना किसी हिचकके कहूँगा कि मैं भारतकी इस चिरदासताकी अपेक्षा उपद्रवकी स्थितिको अधिक पसन्द करूँगा। इससे भी कहीं अधिक, इस रोजकी मुलम्मेदार गुलामीको देखनेसे यह कहीं अच्छा है कि हिन्दू और मुसलमान आपसमें लड़कर मर जायँ। जिस समय हम अपनी स्वाधीनताकी बात कहते हैं उस समय हमारे आगे कई खेमोंसे अफ़गान-हमलेका भ्रम खड़ा कर दिया जाता है। जब हमने इतने वर्ष अंग्रेजोंकी दासतामें काटे हैं, तब हमारे लिए अफ़गान आक्रमणका क्या भय है? मैं एक दृढ़ आशावादी हूँ और मेरा यह अटल विश्वास है कि रक्तहीन क्रान्तिके द्वारा ही भारत विजय प्राप्त कर सकता है। यदि आप अपनी शपथके प्रति सच्चे हैं तो यह बिलकुल सम्भव है।"

स्वाधीनता दिवस मनानेके लिए सारे भारतमें बड़ी-बड़ी सभाएँ हुईं जिनमें पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेश भी सम्मिलित था। इन विशाल सार्वजनिक सभाओंमें यह प्रस्ताव पढ़ा गया :

"हमारा विश्वास है कि किसी भी देशकी जनताकी भाँति हम भारतीयोंका यह अविच्छिन्न अधिकार है कि हम अपनी स्वाधीनताको प्राप्त करें, अपने श्रमका फल पायें और मानव-जीवनकी समस्त सुविधाको ग्रहण करें ताकि हमको अपने विकासके सारे पूर्ण अवसर प्राप्त हो सकें। हमारा यह भी विश्वास है कि यदि कोई शासन किसी जनताको उसके अधिकारोंसे वंचित करता है तो जनताको स्वतः यह अधिकार मिल जाता है कि वह उसे बदल दे या मिटा दे। अंग्रेजी सरकारने भारतमें उसके निवासियोंको न केवल स्वाधीनताके अधिकारोंसे वंचित किया है अपितु उसका आधार शोषण रहा है। उसने आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और आत्मिक सभी दृष्टियोंसे भारतको बरबाद किया है इसलिए हमारी यह मान्यता है कि भारतको निश्चित ही ब्रिटेनसे अपना सम्बन्ध-विच्छेद कर देना चाहिए और पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करना चाहिए। हम इसे मानव और ईश्वर दोनोंके प्रति एक अपराध मानते हैं कि हम किसी ऐसे शासनके अधीन रहें, जिसने हमारा चतुर्दिक् विनाश किया है। फिर भी हम यह स्वीकार करते हैं कि हमारी स्वाधीनताप्राप्तिका सबसे प्रभावशाली पथ हिंसाका नहीं है। हमारे लिए जितना अधिकाधिक सम्भव हो, हम अपने सारे स्वेच्छिक सहयोगको ब्रिटिश सरकारसे हटा लें और अपने आपको सविनय आज्ञा भंग आन्दोलनके लिए तैयार करें, जिसमें शासनको करोंका न देना भी शामिल है। हम यह भली भाँति समझ चुके हैं कि हमें हिंसात्मक कार्यके लिए कितना भी उत्तेजित किया जाय, यदि

हम शासनसे अपने स्वेच्छिक सहयोगको हटा लेंगे और करोंको नहीं देंगे तो इस अमानवीय शासनका अंत होकर ही रहेगा। इसलिए यह हमारा गम्भीर निश्चय है कि हम समय-समयपर प्राप्त होनेवाले कांग्रेसके आदेशोंका पूर्ण पालन करेंगे क्योंकि वे ही हमको पूर्ण स्वराज्यके ध्येयकी ओर निरन्तर प्रेरित करेंगे।"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ और उनके सहयोगी कार्यकर्त्ताओंके पीछे पुलिसके गुप्तचर छायाकी भाँति लगे रहते थे। कभी-कभी सार्वजनिक सभाओंमें अंग्रेज अधिकारी और हथियारबन्द सिपाहियोंका दस्ता भी मौजूद रहता था। इन सब लोगोंको इस बातका बड़ा आश्चर्य था कि क्रान्ति आयी तो कैसे आयी? वे अपने-आपको बहुत असमर्थ अनुभव कर रहे थे। उनका ख़याल था कि यह आन्दोलन तो केवल चार महीनेसे चला है—वे उसको उस अवधिका ही समझते थे जिसमें कि कड़ा काम हुआ था और तूफ़ानी दौरे किये गये थे। तभी अचानक एक दिन पेशावरके उपायुक्त (डिप्टी कमिश्नर) मि० मेटकॉफ़ने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके पास ख़बर भिजवायी कि वे उनसे आकर मिल लें। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने जब जानेसे इनकार कर दिया तब उन्होंने लिखित आदेश भिजवाया। उन्होंने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको लिखा, 'यह आप क्या कर रहे हैं? इसे बन्द कीजिये।' खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने उत्तर दिया, 'मूल रूपसे यह एक सामाजिक कार्य है, राजनीतिक नहीं। वस्तुतः यह काम सरकारको करना चाहिए। मैं तो आप लोगोंका ही काम कर रहा हूँ। इसमें तो आपको मुझे सहयोग और सहायता देनी चाहिए।' डिप्टी कमिश्नरने इसपर टिप्पणी की, 'मैं यह स्वीकार करता हूँ कि इस समय आप सामाजिक कार्यमें लगे हुए हैं परन्तु इस बातका क्या भरोसा कि आप पख़्तूनोंको संगठित करके उनका हमारे विरुद्ध उपयोग नहीं करेंगे?' खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने उत्तर दिया, 'यह तो पारस्परिक विश्वासपर आधारित है। आप हमपर भरोसा कीजिए और हम आपपर करें। मैं यह देख रहा हूँ कि क्रान्ति सन्निकट है। क्रांति एक वेगवान् जल-प्रवाहकी भाँति होती है। हम पख़्तूनोंको इसलिए संगठित कर रहे हैं कि कहीं वे उस बाढ़के आगे बह न जायँ।'

१२ मार्च सन् १९३० को गांधीजीने नमक-कानून भंग करनेके लिए डांडी-की ओर प्रयाण किया। यह एक ऐतिहासिक घटना थी। १४ अप्रैलको कांग्रेसके अध्यक्ष पं० जवाहरलाल नेहरू गिरफ्तार कर लिये गये।

आधिकारिक रूपसे खुदाई खिदमतगारोंकी पहली सभा १८ और १९ अप्रैल सन् १९३० को उत्मानज़ईमें हुई, जिसमें लगभग २०० लाल वस्त्रधारियोंने भाग लिया। २३ अप्रैलको खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने उत्मानज़ईमें एक सार्वजनिक

सभाको सम्बोधित किया। अपने भाषणमें उन्होंने जनताको सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें भाग लेनेकी सलाह दी। इस सम्मेलनके पश्चात् वे आन्दोलनके संगठनके संबंधमें मोटरकार द्वारा पेशावर जा रहे थे लेकिन वहाँ पहुँचनेसे पहले ही उनको नाकी थानेपर गिरफ्तार कर लिया गया और वापस चारसद्दा ले आया गया। उनके साथ ही अफ़गान यूथ लीगके मंत्री मियाँ अहमद शाह, अध्यक्ष अब्दुल अकबर ख़ाँ तथा सभाके संयोजक सालार सर फ़राज़ ख़ाँ और शाहनिवाज ख़ाँको भी बन्दी बना लिया गया। नाकीके निवासियोंने कहा कि हमारे इलाकेमें बादशाह ख़ानको गिरफ्तार करके अंग्रेजोंने हमारा अपमान किया है और यह घोषणा की कि आजसे हम सभी लोग खुदाई खिदमतगार हैं।

'उन्होंने अंग्रेजोंकी दृष्टिमें मेरा सम्मान बढ़ा दिया।' ख़ान अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँने लिखा है, 'जब मेरी गिरफ्तारीका समाचार जनतातक पहुँचा तब चारसद्दाके हजारों लोगोंने एकत्रित होकर इस कार्यके लिए अपनी असम्मति प्रकट की। उसी दिन मेरे कुछ सहयोगी पेशावरमें गिरफ्तार कर लिये गये और उन गिरफ्तारियोंके कारण किस्साख़ानी बाजारमें एक बहुत बड़ा काण्ड हो गया। इसमें पुलिसने गोलियाँ चलायीं और बहुतसे लोग मारे गये। चारसद्दामें भी जनताकी बहुत बड़ी भीड़ने जेलको घेर लिया। डॉ० ख़ान साहब तुरन्त उस स्थानपर पहुँच गये और उन्होंने भीड़को समझा-बुझाकर शांत किया। लोग हमारी अहिंसाकी शिक्षाके प्रति सच्चे रहे और उन्होंने कोई हिंसात्मक कार्य नहीं किया। दोपहरके बाद हमको एक पुलिस गाड़ीमें ले जाकर बिठा दिया गया और एक सैनिक जत्थेकी निगरानीमें मरदान जेल ले जाया गया। पुलिसकी उस गाड़ीको रोकनेके लिए बहुतसे लोग सड़कपर जाकर लेट गये। मैंने उनको समझाया कि वे मुझे फौजके साथ जाने दें और मुझे इस प्रयासमें सफलता भी मिली। सायंकाल हम लोग मरदान जेल पहुँच गये। उसके अगले दिन हम लोगोंको रिसालपुर ले जाया गया और एक मजिस्ट्रेटके आगे उपस्थित किया गया जिसने हम सबको सीमाप्रान्त अपराध विनिमयकी धारा ४० के अन्तर्गत तीन-तीन वर्षका कठोर कारावास दंड दिया।

'वहाँसे हमें पंजाबकी गुफर जेलमें पहुँचा दिया गया। हमारे पेशावरके कार्यकर्त्ताओंमेंसे बहुतसे लोग वहाँ पहलेसे बंदी थे। इस कारागारमें पंजाब, दिल्ली और सीमान्त प्रदेशके कुछ राजनीतिक नेता भी थे।'

ऐसी ही एक अन्य घटनाका सजीव वर्णन करते हुए डा० ख़ान साहबने लिखा है :

"दूसरे दिन उस्मानज़ईमें एक सभाका आयोजन था और उसमें यह सम्भावना थी कि कहीं उपद्रव न भड़क उठे। इस आशंकाके कारण मैं पेशावरसे मोटर-कार द्वारा उत्मानज़ई पहुँच गया। सभाके निश्चित समयसे कुछ घंटों पूर्व ही मैं उस स्थलपर पहुँच गया था। आस-पासके गाँवोंके जो लोग सभाके लिए इकट्ठे हुए थे, उनमेंसे जिनके पास जो भी हथियार थे, वे मैंने उनसे ले लिये। यहाँ मैंने किसी सार्वजनिक स्थानमें पहली बार राजनीतिक भाषण किया। जिस समय मेरा व्याख्यान समाप्त हुआ, कोई व्यक्ति मेरे पास पहुँचा और उसने मुझे बतलाया कि 'गाइड्स' का रिसाला आ गया है। मैंने ऐलान किया कि जो लोग इस स्थितिका सामना करनेको तैयार न हों वे सभाको त्याग दें। लेकिन कोई व्यक्ति सभाको छोड़कर नहीं गया। मैंने लाल कुर्ती दल (खुदाई खिदमतगारों) से मंचपर आ जानेके लिए कहा। रिसालेके कमांडरने ऐलान किया कि वह गोली चलाने जा रहा है इसलिए सभा भंग कर दी जाय और लोग तितर-बितर हो जायँ। लेकिन लोगोंने उसकी ओर ध्यान दे दिया। तब कमांडरने मुझसे कहा कि यदि सम्भव हो तो मैं उसे मदद दूं। मैंने उससे कहा, 'सभाकी कार्यवाही पूरी हो चुकी है। आपके लिए सबसे अच्छी बात यह है कि आप वापस लौट जायँ और हम भी अपने गंतव्य स्थानपर कूच कर जायँगे। परन्तु यदि आप गोली ही चलाना चाहते हैं तो उसे अभी शुरू कर दीजिए क्योंकि जब हम एक बार इस स्थानको छोड़ देंगे तब गोली चलाना कोई बहुत बड़ी बहादुरीकी बात नहीं होगी।' कमांडरने मेरे साथ चाल खेलनी चाही परन्तु अंतमें वह अपने आदमियोंके साथ वापस चला गया और खुदाई खिदमतगार भी अपने बैंड बाजेके साथ कूच करके मस्जिदके पासकी एक जगहको चले गये। वहाँ पहुँचकर उनको टुकड़ियोंमें बँट जानेका और अपने-अपने स्थानोंपर लौट जानेका आदेश दे दिया गया। जिस समय वे जा रहे थे, ब्रिटिश रिसालेके एक 'स्क्वॉड' ने उनके ऊपर हमला कर दिया। लाल कुर्ती दलके कमांडर मुहम्मद अस्लम खाँने अपने लोगोंको भूमिपर लेट जानेकी आज्ञा दी। रिसालेने उन लोगोंपर आक्रमण किया परन्तु पहली पंक्तिके पास पहुँचकर उसके सिपाही रुक गये। ऐसे ही कई बार आक्रमण करनेके बाद वे लोग चले गये। इस घटनाने अधिकारियोंके क्रोधको और भी भड़का दिया और दमन और भी अधिक बढ़ गया परन्तु इसका परिणाम यह निकला कि सितम्बरके अंततक हमारे स्वयंसेवकोंकी संख्या ८०,००० से ऊपर हो गयी।"

गांधीजीने अप्रैलमें डांडीमें नमक कानूनको भंग कर दिया और उसके तुरन्त बाद उन्होंने एक वक्तव्य दिया :

"व्यवहार रूपमें तथा एक समारोहके रूपमें नमक कानून भङ्ग किया जा चुका है अतः अब प्रत्येक व्यक्तिको यह छूट दी जाती है कि वह अपने चालानका जोखिम लेकर जहाँ चाहे और जहाँ उसे सुविधाजनक प्रतीत हो नमक तैयार कर सकता है।" देशमें अग्नि-ज्वालासी जल उठी थी। कलकत्ता, दिल्ली, मद्रास, लाहौर, इलाहाबाद और पेशावर आदिमें जनताने हजारोंकी संख्यामें ब्रिटिश कानूनको भंग किया। बम्बईमें सविनय अवज्ञा आन्दोलनने एक आश्चर्यजनक रूप ले लिया। वहाँ लगभग दस लाख व्यक्ति नमक-कानून तोड़नेके लिए सागर तटपर पहुँचे। कलकत्तामें लगभग ८०,००० लोगोंने, मद्रासमें ५०,००० ने, लाहौरमें २०,००० ने और पेशावरमें तो प्रायः समूची जन-संख्याने ही उसे तोड़ा।

शीघ्र ही यह बात स्पष्ट हो गयी कि सरकारको एक दृढ़, राष्ट्रवादी विप्लव-का सामना करना होगा; ऐसा राष्ट्रीय विप्लव जो भारतमें इससे पहले देखा-सुना नहीं गया। पेशावर अशांतिके सबसे प्रमुख केन्द्रोंमेंसे एक था। वहाँ काफ़ी दिनोंसे तारोंके ऊपर कड़ा सेन्सर रखा जा रहा था। भारतवासियों और अंग्रेजोंके बीचके वैमनस्यने गम्भीर रूप धारण कर लिया था। ब्रिटिश शासन 'सुलेमान जाँच समिति'की नियुक्तिके लिए विवश हो गया। पेशावरकी अशान्तिके एक पखवारेके भीतर ही कांग्रेसने भी श्री विट्ठलभाई पटेलकी अध्यक्षतामें एक जाँच समितिकी नियुक्ति कर दी। श्री विट्ठलभाई पटेलने अंग्रेजोंकी दमन-नीतिके कारण विधान-सभाकी अध्यक्षता तथा सदस्यतासे त्याग-पत्र दे दिया था। शासन द्वारा कई अध्यादेशोंकी घोषणा की गयी जिनमें 'प्रेस आर्डिनेन्स' भी शामिल था। इसका परिणाम यह हुआ कि गांधीजीका 'यंग इण्डिया' और खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँका 'पख्तून' बन्द हो गया। 'यङ्ग इण्डिया' साइक्लोस्टाइलपर छपकर निकलता था। इसके साथ ही 'कांग्रेस बुलेटिन' भी बन्द हो गयी। सरकारने उसे गैर-कानूनी करार दे दिया। उसके साथ प्रान्तीय कांग्रेस समितियों द्वारा एक परिशिष्ट भी निकलता था। पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तके कांग्रेस संगठनसे भी एक परिशिष्ट निकलता था।

पेशावर जाँच समितिको, जिसके अध्यक्ष श्री विट्ठलभाई पटेल थे, सीमा-प्रान्तमें प्रवेश करनेकी अनुमति नहीं दी गयी और उसको एक सप्ताहतक रावलपिण्डी-में अपनी बैठकें करनी पड़ीं। ७९ गवाहोंकी जाँच हुई, बहुतसे वक्तव्य लिये गये तथा उनको लेखाबद्ध कर लिया गया। इस रिकार्डमें वे अति आवश्यक विज्ञप्तियाँ भी सम्मिलित कर ली गयीं जिन्हें सरकारने समय-समयपर निकाला था और पत्रोंके वे विवरण भी, जिनमें कि 'सुलेमान समिति' द्वारा लेखाबद्ध की गयी

साक्षियोंका सारांश प्रकाशित हुआ था। कांग्रेसकी जाँच समिति द्वारा प्रकाशित विवरण पुस्तिका तत्काल ही सरकार द्वारा जब्त कर दी गयी परन्तु इससे पहले ही उसकी काफ़ी प्रतियाँ दूर-दूरतक पहुँच चुकी थीं। श्री विट्ठलभाई पटेलने ३५० पृष्ठोंकी जो रिपोर्ट प्रस्तुत की थी, उसका सारांश यह है :

"स्थानीय कांग्रेस समितिने यह निश्चय किया था कि शीघ्र ही पेशावर नगर-की शराबकी दूकानोंपर धरना दिया जाय और उसने इसके लिए ५ अप्रैल सन् १९३० का दिन निर्धारित किया था। शराबके कुछ ठेकेदारोंने कांग्रेस समितिसे प्रार्थना की कि उनको पन्द्रह दिवसकी अवधि और दी जाय ताकि वे इस बीच अपना एकत्रित माल निकाल दें। इस आधारपर ही कांग्रेस समितिने शराबके ठेकेदारोंको सूचित किया कि यह कार्यवाही २३ अप्रैलको प्रारम्भ की जायगी। २२ अप्रैलको प्रातः अखिल भारतीय कांग्रेस समितिके उस प्रतिनिधिमंडलको अटकमें ही रोक लिया गया जो 'सीमा-प्रान्त अधिनियम' (नार्थ-वेस्ट फ्रन्टियर रेगुलेशन) के अन्तर्गत की गयी कार्यवाहीकी जाँचके लिए पेशावर आ रहा था। उसको सीमान्त प्रदेशमें प्रवेश नहीं करने दिया गया। जब पेशावर शहरमें यह समाचार पहुचा तब वहाँ विराट् जुलूस निकाला गया जो नगरमें घूमनेके पश्चात् सायंकाल शाही बाग़की एक बहुत विशाल सार्वजनिक सभामें परिणत हो गया। इस सभामें शासनके आदेशपर असम्मति प्रकट की गयी और यह भी निश्चय किया गया कि मद्यकी दूकानोंपर कल प्रातःकाल (२३ अप्रैल) से धरना प्रारम्भ कर दिया जाय, जैसा कि पूर्वनिश्चित था। २३ अप्रैलके सवेरे, बहुत तड़के ही सरकारने कांग्रेस-के प्रमुख सदस्योंमेंसे नौको गिरफ्तार कर लिया। दिन निकलनेपर जब लोगोंको इन गिरफ्तारियोंका पता चला तब वे कांग्रेस समितिके कार्यालयमें गये। वहाँ उनको ज्ञात हुआ कि अभी दो नेताओंके नाम वारन्ट और हैं। शराबकी दूकानों-पर धरना देनेकी व्यवस्था कार्यान्वित की गयी। सारे शहरमें दूकानदारोंने अपनी इच्छासे ही पूर्ण हड़ताल कर दी। ९ बजेके लगभग जब लोग भीड़में खड़े हुए, धरना देनेके लिए जानेवाले स्वयंसेवकोंका जय-जयकार कर रहे थे, तभी पुलिसका एक दरोगा अपने साथ लॉरीमें हथियारबन्द सिपाहियोंकी एक टुकड़ीको लेकर आया। कांग्रेस कार्यालयमें पहुँचकर उसने यह सूचित किया कि उसके पास दो वारन्ट और हैं। यह सूचना पाकर वे नेता, जिनके नाम वारन्ट थे, कार्यालयसे नीचे उतर आये और आकर लॉरीमें बैठ गये। वे अभी कुछ ही दूर पहुँच सके थे कि लॉरीके एक पहियेमें पन्चर हो गया। दरोगा दूसरी गाड़ी मँगवानेकी बात सोच रहा था, तभी बंदी नेताओंने उससे कहा कि यदि उसको कोई आपत्ति न

हों तो वे अपने-आप ही पुलिस थाने चले जायँ और वहाँ पहुँचकर अपनेको हाजिर कर दें। दरोगाने उनकी यह बात मान ली और चला गया। लोगोंका एक जुलूस नेताओंको अपने साथ लेकर चला और काबुली दरवाज़ा थानेतक पहुँच गया। उन्होंने देखा कि थानेका फाटक बन्द है। लगभग आधे घण्टेतक उसको खुलवानेकी कोशिश की गयी परन्तु प्रयत्न निष्फल हुए। जब भीड़ने नारे लगाना शुरू किया तब पुलिसका सहायक अधीक्षक (असिस्टेन्ट सुपरिण्टेण्डेण्ट) एक घोड़ेपर चढ़ा हुआ आया। नारोंसे वह क्रोधित हो गया और रोषमें भरा हुआ ही चला गया। इस बीच वह दरोगा, जिसने कि नेताओंको गिरफ्तार किया था, लोगोंको शांत हो जाने और तितर-बितर हो जानेकी सलाह देता रहा। दोनों नेता पुलिस थानेके भीतर चले गये और भीड़ 'इन्क़लाब जिन्दाबाद', 'महात्मा गांधी की जय' के नारे लगाकर धीरे-धीरे छँटने लगी। तभी अचानक हथियारबन्द सैनिकोंसे भरी हुई दो या तीन कारें पीछेसे बड़ी तेज़ीसे आयीं। उन्होंने लोगोंको सावधानतक न किया और न इसके परिणामको ही सोचा। वे भीड़पर चढ़ गयीं। बहुतसे लोग उनके नीचे कुचल गये और कुछकी तो वहीं मृत्यु हो गयी। जुलूसके लोग बिलकुल निहत्थे थे। किसीके पास कुछ न था, न लाठी, न कुल्हाड़ियाँ, न पत्थर और ईंटें। भीड़ने संयमसे काम लिया। जनता आहत लोगोंको उठा-उठाकर लाने लगी और मृत देहोंको इकट्ठा करने लगी। कुछ लोगोंने एक कारको आगेसे घेर लिया और वे उसे रोकनेके लिए प्रार्थना करने लगे। भीड़के कारण वह पीछे लौटी। उसी समय एक अंग्रेज अधिकारी बड़ी तेज़ीसे मोटरसाइकिलपर आया। उसकी मोटरसाइकिलकी हथयारबन्द कारोंमेंसे एकमें टक्कर लगी। वह गिर पड़ा और कारके नीचे आ गया। तभी किसीने कारमेंसे एक गोली चलायी और घटना कुछ ऐसी हुई कि उससे संयोगवश दूसरी कारमें आग लग गयी। डिप्टी कमिश्नर अपनी उस हथियारबन्द कारमेंसे बाहर निकला और जैसे ही वह थानेकी ओर बढ़ने लगा, वह अचेत होकर थानेकी सीढ़ियोंपर गिर पड़ा। परन्तु क्षणभरमें उसकी संज्ञा लौट आयी और उसने गाड़ियोंके सैनिकोंको गोली चलानेका आदेश दे दिया। गोली चलनेके परिणामस्वरूप काफी लोग मारे गये और अनेक आहत हुए। भीड़को बहुत दूरतक खदेड़ दिया गया। साढ़े ग्यारह बजेके लगभग एक या दो बाहरी व्यक्तियोंने स्थितिको सुलझानेका भरसक प्रयत्न किया। उन्होंने भीड़से हट जानेके लिए और अधिकारियोंसे गाड़ियाँ और सैनिक हटा लेनेके लिए ज़ोर दिया। जनता इस शर्तपर चली जानेके लिए तैयार हो गयी कि उसे मृत देहोंको तथा घायल लोगोंको अपने साथ ले जानेकी इज़ाजत दी जाय।

वह यह भी चाहती थी कि सैनिक और हथियारबन्द गाड़ियाँ हटा ली जायँ। दूसरी ओर अधिकारी इस बातपर अड़े हुए थे कि वे उनको नहीं हटायेंगे। फल यह हुआ कि भीड़ तितर-बितर नहीं हुई और जनता अपनी छातीपर गोलियाँ खानेके लिए तथा अपने प्राण दे देनेके लिए तैयार हो गयी।

"इसके बाद दूसरी बार गोली चली और फिर थोड़ी-थोड़ी देरमें न केवल किस्साखानी बाज़ारमें बल्कि उसके गली-कूचोंमें भी तीन घंटेसे अधिक समय तक गोली चलती रही। लोग बहुत बड़ी संख्यामें मारे गये और घायल हुए। खिलाफ़त समितिके पाँच-छः स्वयंसेवक भी, जो अन्य लोगोंके साथ घायलों तथा मृतकोंके शरीरोंको एकत्रित करनेमें जुटे हुए थे, मारे गये; इसीलिए बहुतसी लाशें हटायी नहीं जा सकीं और यह निश्चयपूर्वक कहा जाता है कि वे एक लॉरीमें भर-कर किसी अज्ञात स्थानमें ले जायी गयीं और नष्ट कर दी गयीं। खिलाफ़त आन्दो-लनके स्वयंसेवकोंको लगभग साठ मृत शरीर मिले, जिनमेंसे अधिकांश उनके कार्यालयके आस-पासके गली-कूचोंमें पड़े हुए थे। उस कार्यालयमें काफ़ी बड़ी संख्यामें घायल लोग लाये गये और डा० खान साहब द्वारा मरहम-पट्टी की जानेके बाद उनको लेडी रीडिंग अस्पताल भेज दिया गया। सरकारने घायलोंको प्राथमिक चिकित्साकी कोई सुविधा नहीं दी। उसने अपनी सारी शक्ति इस बातमें लगा दी कि इस निर्दय गोलीकांडसे जो विनाश हुआ है उसको छोटेसे छोटे रूपमें कैसे दिखलाया जाय। शामको लगभग छः बजे फ़ौजने कांग्रेसके कार्या-लयपर छापा मारा और वह अपने साथ कांग्रेसके झण्डे तथा बिल्ले आदि उठा ले गयी। रातको वह फिर आयी और ख़िलाफ़त कार्यालयमेंसे उन दो लाशोंको ले गयी जो कि शामको कुछ देरमें वहाँ लायी गयी थीं और उसके पासके स्कूलमें रखी गयी थीं। गोरे सैनिकों की क्रूरताके कारण अगले दो-तीन दिनतक पेशावर नगर अपने निवासियोंके लिए रौरव नरक बन गया। २५ अप्रैलकी रातको अधि-कारियोंने अचानक ही न केवल सेनाको बल्कि उस सामान्य पुलिसको भी हटा लिया जो शहरकी रक्षा कर रही थी। पेशावर नगर, सीमाके उस पारके हमला-वरों और लुटेरोंकी दयापर छोड़ दिया गया। सेना और पुलिसके हट जानेपर कांग्रेस और खिलाफ़त समितिके स्वयंसेवक आगे आये। उन्होंने पेशावरके नगर-द्वारोंकी रखवाली करके बड़े वीरतापूर्वक स्थितिको संभाल लिया और किसी प्रकारकी कोई घटना नहीं हुई। २८ अप्रैलकी रातको पुलिस पुनः प्रकट हुई और उसने स्वयंसेवकोंसे चार्ज ले लिया। तत्पश्चात् ४ मईको सहसा सेनाका नगर पर अधिकार हो गया। उसी दिन सवेरे सैनिकोंने कांग्रेस और खिलाफ़त समिति

के कार्यालयोंपर छापा मारा और उनको वहाँ कागज़ और रुपया-पैसा, जो भी मिला, उसे वे अपने साथ उठा ले गये। उस समय वहाँ बहुतसे स्वयंसेवक थे। सेनाने उनको भी बड़ी निर्ममताके साथ मारा-पीटा। सैनिकोंने कांग्रेस कार्यालयके पासकी एक दूकानको भी लूट लिया। उस दिनके बाद सारे काम-काजके लिए पेशावर शहर 'मार्शल लॉ' (फौज़ी कानून) के अधिकारमें आ गया। पेशावरमें किसी नागरिकका जीवन, उसकी व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सम्पत्ति सुरक्षित न रही। ३१ मईके दिन, जब कि 'सुलेमान जाँच समिति' पेशावरमें नागरिकोंसे पूछताछ कर रही थी, सेनाने उन निरीह लोगोंपर गोलियाँ चलायीं जो दो छोटे-छोटे बच्चोंको दफनाने जा रहे थे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि ये निरीह बालक दुर्घटनावश किसी अंग्रेज़ सैनिककी बन्दूककी गोलियोंके निशाना बन गये थे। जनतापर गोली चलानेके फलस्वरूप कमसे कम दस आदमियोंके प्राण गये और लगभग बाईस व्यक्ति घायल हुए। एक लम्बे अर्सेतक पेशावरमें आतंकका अधिकार रहा। बाहरी संसारके लिए वह एक अप्रवेश्य क्षेत्र बना दिया गया। इन कुत्सित, अशोभनीय घटनाओंको जनताकी दृष्टिसे ओझल रखनेके लिए उसे शेष भारतसे अलग-सा कर दिया गया। किसी भी नेताको उसमें क़दम रखनेकी अनुमति नहीं दी गयी क्योंकि सरकारको यह भय था कि कहीं वे सारी स्थितिको अपनी आँखोंसे न देख लें और शासनके इस अमानुषिक व्यवहारका भंडाफोड़ न कर दें। नगरके अलावा पेशावर ज़िलेके अन्य भागों तथा प्रदेशके उन ज़िलोंमें, जहाँ कि कांग्रेसका प्रभाव था, ऐसा रवैया अपनाया गया, ऐसे तरीके उपयोगमें लाये गये जिनको मात्र अमानवीय क्रूरताकी संज्ञा दी जा सकती है। कांग्रेसके सारे संगठनों, यूथ लीग और उसकी सम्बद्ध संस्थाओंको ग़ैर-कानूनी घोषित कर दिया गया। इतना सब होनेपर भी जनताका मनोबल नहीं टूटा और अहिंसाका बड़ी निष्ठाके साथ पालन किया जाता रहा।"

जिन दिनों पेशावरमें अशांति और अव्यवस्था फैली थी, उन्हीं दिनों एक गौरवपूर्ण घटना हुई। गढ़वाल राइफल्सकी एक पल्टनने निहत्थी, शांत जनतापर गोली चलानेसे इनकार कर दिया। यह पल्टन अपनी राज-भक्तिके लिए अति प्रसिद्ध थी। तत्काल ही उसके सिपाहियोंको बन्दी कर लिया गया और उनके शस्त्र छीन लिये गये। जिस समय फौज़ी अदालतमें उनको उपस्थित किया गया, उस समय उन लोगोंने कहा, 'हम अपने निहत्थे देशवासियोंपर गोली नहीं चलायेंगे क्योंकि भारतकी सेना केवल भारतके शत्रुओंसे युद्ध करनेके लिए है। यदि आप चाहें तो हमको तोपके गोलेसे उड़वा सकते हैं।' इन सब सिपाहियोंको दण्ड

दिया गया—एकको आजन्म कालेपानीकी सज़ा, दूसरेको पन्द्रह वर्षका कठोर कारावास और शेष लोगोंको तीनसे लेकर दस सालतक कठोर कारावास।

ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँके गाँवकी घटनाओंका किसी प्रत्यक्षदर्शी द्वारा लेखाबद्ध कराया गया वर्णन पटेल महोदयकी रिपोर्टमें इस प्रकार दिया गया है :

"१३ मई सन् १९३० के सबेरे तीन बजे, जब कि घोर अंधेरा छाया था, सरकारकी सेनाने उत्मानज़ई गाँवको घेर लिया। भोर होनेपर डिप्टी कमिश्नर, गोरे और हिन्दुस्तानी सैनिकोंके साथ गाँवमें घुसा। आठ सौ हथियारबन्द अंग्रेज सैनिक गाँवको चारों ओरसे घेरे हुए थे। उनके साथ भारतीय रिसालेकी एक रेजीमेंट भी थी, जिसमें सिख, मुसलमान और डोगरा सिपाही थे। उनके अलावा वहाँ तीन सौ हट्टे-कट्टे शिया सिपाही भी मौजूद थे, जिनकी भर्ती केवल गाँवके लोगोंको पीटनेके लिए की गयी थी। वे सब सीमान्तके उस पारके निवासी थे। गाँवके बाहर चार लेविस तोपें और बहुत-सी तोपें तथा बन्दूकें थीं। डिप्टी कमिश्नर खुदाई खिदमतगारोंके कार्यालयके पास गया और उसने अपने साथके गोरे और शिया सिपाहियोंको उस दूकानके दरवाजे तोड़नेको कहा जिसके ऊपर उक्त कार्यालय स्थित था। उन लोगोंने दरवाजा तोड़नेकी बहुतेरी कोशिश की परन्तु उनको सफलता नहीं मिली। कुछ सिपाही दीवारसे चढ़कर ऊपर पहुँच गये और उन्होंने छज्जेको घेर लिया। नीचे खड़े जवान दूकानके दरवाज़ेको तोड़ते रहे।

"उसके बाद दरवाजा टूट जानेपर डिप्टी कमिश्नर छज्जेके पासतक गया और उसने उन खुदाई खिदमतगारोंको, जो वहाँ अपनी ड्यूटीपर तैनात थे, नीचे उतरनेका आदेश दिया। उसने उन्हें लाल वर्दी उतारनेका भी हुक्म दिया। खुदाई खिदमतगारोंने कहा कि जबतक हमको अपने अफ़सरका हुक्म नहीं मिलेगा, हम नीचे नहीं उतरेंगे। जहाँतक कपड़े और वर्दी उतारनेकी बात है, हम उसको उतारनेकी अपेक्षा मर जाना अच्छा समझते हैं। इसपर खुदाई खिदमतगारोंके कमाण्डर रब्बनकज़ ख़ाँने 'इन्क़लाब ज़िन्दाबाद' के नारे लगाते हुए उन लोगोंको नीचे उतरनेका आदेश दिया। जिस समय वे ऊपरसे उतरकर नीचे आ रहे थे उस समय डिप्टी कमिश्नरने उनको नारे लगानेसे रोका। कार्यालयमें ही डिप्टी कमिश्नरने एक खुदाई खिदमतगारकी छातीसे अपनी पिस्तौल सटाते हुए उसे कपड़े उतारनेका हुक्म दिया। वह बोला, 'साहब, यह तो नामुमकिन है। किसी पठानका पाजामा तबतक नहीं उतारा जा सकता, जबतक कि उसके शरीरमें प्राण हैं।' उसकी इस बातपर डिप्टी कमिश्नरने उसे घूंसोंसे मारा और गोरे सिपाही अपनी राइफ़लोंके कुन्दोंसे उसे तबतक कुचलते रहे, जबतक कि वह अचेत होकर

गिर न पड़ा। जो भी गोरा सैनिक वहाँ मौजूद था उसने अचेतावस्थामें उसको एक ठोकर मारी। इसके बाद एकके बाद एक खुदाई खिदमतगारको निर्ममतासे पीटा गया और उसके कपड़े फाड़ दिये गये। कुछ खुदाई खिदमतगार छज्जेके ऊपरसे नीचे पक्की सड़कपर फेंक दिये गये। अब्दुल रज्जाकके पैरकी हड्डी टूट गयी और अन्य लोगोंको भी काफ़ी गहरी चोटें लगीं। कुछ सैनिकोंने खुदाई खिदमत-गारोंको संगीनकी नोकोंसे घायल कर दिया। खुदाई खिदमतगारोंके कप्तान मुह-म्मद सक्यूब खाँको बड़ी निमर्मतासे पीटा गया। उसकी कमीज जबरदस्ती उतार ली गयी लेकिन जब उसको अपना पाजामा उतारनेका आदेश दिया गया तब वह तड़पकर तेजीसे रिवाल्वर लानेके लिए अपने घरकी ओर दौड़ा। लेकिन उसके कमांडरने उसे बीचमें ही रोककर कहा, 'क्या तुम्हारा धीरज इतनी जल्दी खत्म हो गया कि हिंसासे बदला लेनेके लिए घर जा रहे हो ? तुमने तो जीवनपर्यन्त अहिंसावादी बने रहनेकी प्रतिज्ञा की थी।' यह सुनकर वह नंगे सिर, नंगे पाँव लौट आया और बन्दी बना लिया गया।

"इस हंगामे और मारपीटके दौरानमें चौदह वर्षका एक किशोर भी वर्दी पहने हुए खड़ा था। वह खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँका दूसरा पुत्र वली था। 'तुम कौन हो ?' डिप्टी कमिश्नरने उससे पूछा। 'मैं खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँका लड़का हूँ।' वलीने वैसे ही ज़ोरसे चिल्लाकर उत्तर दिया। डिप्टी कमिश्नरकी यह अव-हेलना देखकर एक गोरे सिपाहीने वलीकी ओर अपनी संगीन तानी लेकिन एक मुसलमान सिपाहीने, जो वहीं खड़ा यह सब देख रहा था, संगीनको रोकनेके लिए अपना हाथ आगे बढ़ा दिया। तब दूसरा गोरा सिपाही आगे बढ़ा लेकिन तबतक सरफ़राज़ खाँके भाई हसन खाँने, जिसको बन्दी लोग सौंपे गये थे, लपककर वलीको अपने हाथोंमें उठा लिया और उसको लिये हुए ही पासकी एक मस्जिद-में कूद गया। इस प्रकार उसने उस बालककी रक्षा कर ली।"

सैनिकोंने खुदाई खिदमतगारोंके कार्यालयमें आग लगा दी और गाँवमें लूटमार मचा दी। उन्होंने लोगोंको बाहर टट्टी-पेशाबतक करने जानेकी इज़ाज़त न दी और न उनके मवेशियोंको चरनेके लिए चरागाहतक जाने दिया। जो लोग भी उनको लाल वर्दी पहने हुए दिखलाई दिये उन्होंने उन सबको गिरफ्तार कर लिया और निर्दयतापूर्वक मारा-पीटा। "क्या कोई सुर्खपोश अभी और बाक़ी है ?" डिप्टी कमिश्नर गरजा। भयके कारण किसीकी बोलनेकी हिम्मत न पड़ी। गाँवके एक खान मुहम्मद अब्बास खाँ पास ही खड़े थे। डिप्टी कमिश्नरकी इस दम्भपूर्ण बात उनसे न सही गयी और वे तेज़ कदम रखते हुए अपने घर चले गये। वहाँ जाकर

उन्होंने पानीसे भरे डेगमें लाल रंग घोल दिया और अपने सारे कपड़े उतार उसी-में डुबो दिये। इसके बाद वे तथा उनके नौकर भींगे, लाल कपड़े पहने हुए उसी स्थानपर आये जहाँ कि फौजी सिपाही खड़े थे। डिप्टी कमिश्नरके सामने जाकर उन्होंने निर्भीकतासे कहा, 'अभी ये सुर्खपोश और हैं।' तबतक वे खुदाई खिद-मतगार नहीं थे। उनके इस शौर्यपूर्ण कार्यने जनतामें इतना उत्साह भर दिया कि कठोरसे कठोर दमन भी लाल वर्दीको हटा न सका।

"अंग्रेजोंने अपनी सेनाके साथ गाँवोंको घेर लिया और गाँववालोंको अपने घरोंसे बाहर निकलनेको विवश कर दिया। उन्होंने गाँवोंके निवासियोंको चिल-चिलाती धूपमें बिठा दिया और इस इकरारके साथ कि हम खुदाई खिदमतगार नहीं हैं, उनको अँगूठेका निशान लगानेका आदेश दिया।

"सचमुच हम खुदाई खिदमतगार नहीं हैं।" उन्होंने कहा। वास्तवमें वे थे भी नहीं परन्तु जब उनके ऊपर अंगूठेका निशान लगानेका जोर दिया गया तो उन्होंने इससे इनकार कर दिया।

अंग्रेजोंका यह व्यवहार सारे स्त्री-पुरुषोंको इतना अपमानास्पद लगता था कि यदि कोई उनकी बातसे सहमत होकर अंगूठेका निशान लगा देता था तो सब उसे हेय दृष्टिसे देखने लगते थे। खान अब्दुल गफ्फार खाँने इसका इन शब्दोंमें वर्णन किया है, "हमारे गाँवके एक आदमीने अँगूठेका निशान लगा दिया। जब वह अपने घर पहुँचा तो उसकी स्त्री काठका एक डण्डा लेकर कपड़े धो रही थी। उसने अपने पतिसे पूछा, 'तुमको घर कैसे आने दिया गया?' वह बोला कि मुझको छोड़ दिया गया। स्त्रीने आशंका प्रकट की, 'यह कैसे सम्भव है? और लोगोंको नहीं छोड़ा गया। तुम मुझे अपना अँगूठा दिखलाओ, जान पड़ता है कि तुम अपना निशान देकर आये हो।' उसने अपने कपड़े धोनेके डण्डेको ऊपर उठा लिया और अपने पतिको बाहर खदेड़ दिया। वह आदमी फिर उसी जगह पहुँचा और अपने गाँववालोंके साथ जा बैठा। जब उससे पूछा गया कि तुम क्यों वापस लौट आये, तब उसने कहा कि मेरी स्त्री मुझको घरमें घुसने ही नहीं देती। मेरे ही गाँवकी एक अन्य घटना है। हाजी शाहनवाज खाँ, जो हमारे साथ जेलखानेमें थे, जमानत देकर अपने घर पहुँचे। लोगोंने इसके लिए उनको इतने ताने दिये कि शर्मसे उन्होंने आत्महत्या कर ली।"

सारे पश्चिमोत्तर प्रदेशमें बड़ी उग्रतासे दमन-चक्र चल रहा था लेकिन लाल कुर्तीदलके स्वयंसेवक काफी संख्यामें शराबकी दूकानोंमें धरना देते थे और गाँवमें 'मार्च' करते थे। खुदाई खिदमतगारोंके इस संगठनमें पुरुषों, स्त्रियों और बालकों-

के अलग-अलग दल थे। उन सबका नारा 'इन्क़िलाब जिन्दाबाद' था। अंग्रेजी सरकारने यातनाके विलक्षण ढंग निकाले थे। अल्पायु बालकोंकी पीठको नंगा करके जेलमें उनको तीस बेंत लगाये जाते थे। स्वयंसेवकोंको काँटोंके ऊपर बिठाया जाता था, कपड़े उतारकर चाबुकोंसे उनकी खाल उधेड़ दी जाती थी। अंग्रेज सिपाही उनसे, अपने किसी नेता अथवा अधिकारीकी समाधिके लिए बड़े-बड़े भारी पत्थर एक पहाड़ीके ऊपरतक उठवा ले गये। वहाँ उनका ढेर लग गया। किसी खुदाई ख़िदमतगारने 'अल्लाह्-ओ-अकबर' का धार्मिक नारा लगाया तो उसे एक गोरे द्वारा यह अपशब्द सुनने पड़े, 'तुम्हारा अल्लाह्-ओ-अकबर वह पत्थरकी कब्र-के नीचे सोया पड़ा है।' उसने पत्थरोंके उस ढेरकी ओर संकेत करते हुए कहा जिसे कि संगीनकी नोकपर बेगार कराकर जमा किया गया था। खुदाई ख़िदमत-गारोंके नेताओंके घर और जिरगे जला दिये गये। बन्नू शहरको घेर लिया गया और उसकी चहारदीवारीके फाटक बन्द कर दिये गये। डेरा इस्माईल खाँमें आन्दोलनकी गति अत्यन्त तेज़ थी। वहाँ पियारा खान और उसकी पत्नी यशोदा देवीके नेतृत्वमें पुरुषों, महिलाओं और बालकोंके कई विराट् जुलूस निकले। वहाँ एक दिन एक बहुत बड़ा जुलूस निकल रहा था, जिसमें अधिकांश महिलाएँ थीं। सीमान्त पुलिसके महानिरीक्षक (इंस्पेक्टर जनरल ऑफ पुलिस) मि० आइस मोंगरने उसे रोका और शीघ्र ही बिखर जानेका आदेश दिया। जब जनताने उनकी आज्ञाको माननेसे इनकार किया तो वे क्रुद्ध हो उठे। उन्होंने अपना रिवाल्वर निकाल लिया और गोली दागनेके लिए उसे जुलूसकी महिलाओंके आगे ताना। तभी एक सिख तरुण भगवान सिंह झपटकर आगे आ गया और उसने मि० आइस मोंगरकी पिस्तौलवाली कलाई पकड़कर कहा, 'आपको स्त्रियोंके ऊपर गोली दागते हुए शर्म नहीं आती ?' अंग्रेज अफसर असमर्थ हो गया। उसका रिवाल्वर नीचे भूमिपर गिर गया। उसे उठाकर लज्जित हो वह तुरन्त ही वहाँसे चला गया। एक सालके बाद, जब कि साम्प्रदायिक दंगे चल रहे थे, उसने भगवान सिंहको एक हत्याके मामलेमें झूठा फँसाकर इसका प्रतिशोध लिया।

इन घटनाओंके बाद ही कबाइली इलाकेमें अशांति फैल गयी। वहाँके उप-द्रवोंसे अंग्रेज अपनेको स्थितिको संभालनेमें असमर्थ अनुभव करने लगे। तरंग-ज़ईके हाजी साहबको अंग्रेजी सत्ताके दमनसे इतना विक्षोभ हुआ कि उन्होंने अपने सीमान्तके बन्धुओंको एक सन्देशमें लिखा कि वे अपने संकल्पपर दृढ़ रहें और अपने मनमें किसी प्रकारका भय न करें, अंग्रेजोंको उनके कुकृत्यका दण्ड

देनेके लिए हम शीघ्र ही हथियारोंसे लैस एक सेना तैयार कर रहे हैं।' कबाइली क्षेत्रमें जगह-जगह उत्तेजना फैली हुई थी और आपात् स्थितिका सामना करनेके लिए वहाँ एक काफी बड़ा ब्रिटिश सैन्य-बल तैयार रखा गया था। तरंगज़ईके हाजी साहब और उनके अनुयायियोंके गुप्त स्थानोंपर बम बरसाये जा रहे थे। कमसे कम एक घटना तो ऐसी निश्चित ही हुई जब कि पहाड़ी दर्रोंकी उन गुफाओंके मुँहके आगे तोपें सटा दी गयीं जिनमें कि वे लोग मौजूद थे और फिर गोलोंकी भीषण वर्षा की गयी। अगस्तके महीनेमें अफरीदी लोग सीमाके इस पार बढ़ आये। उनके लिए एक काफ़ी विशाल सेना भेजी गयी और उनके ऊपर हवाई जहाजसे एक दिनमें सैकड़ों बम गिराये गये। जब गाँवोंके लोग अफरीदियोंको सहायता देने लगे तब संकट और भी बढ़ गया। कई स्थानोंपर तार और टेलीफोनकी संचार-व्यवस्था भंग कर दी गयी। अधिकारियोंने दमन-चक्रको अधिक गति दी परन्तु इससे आन्दोलन नहीं रुका।

सीमाप्रान्तके अधिकारियोंने सारे प्रदेशको एक बारूदखाना समझ लिया, इसलिए उन्होंने यह निश्चय कर लिया कि वहाँकी जनताको किसी प्रकारकी कोई स्वतंत्रता न दी जाय और जो कोई जन-प्रिय आन्दोलन वहाँ उठे, उसका तत्काल दमन कर दिया जाय। कांग्रेसके प्रभावको नष्ट करनेके लिए सीमाप्रान्तके मुख्य आयुक्त (चीफ़ कमिश्नर) ने १० मई सन् १९३० को पेशावर ज़िलेके खानों, कबाइलियोंके मुखियों तथा अन्य प्रतिष्ठित व्यक्तियोंके नाम एक विज्ञप्ति प्रचारित की :

"आप व्यक्तिगत रूपसे इस बातके साक्षी हैं कि कांग्रेस समितियोंने कानून द्वारा स्थापित शासन-पद्धतिको उलटनेकी चेष्टा की है और अब भी उनके लोग यह प्रयत्न कर रहे हैं। क्या कांग्रेस आपके पास आपकी भूमि-सम्पत्ति, आपके 'जिरगा' और आपकी 'मुजाहिब' (वेतन, पेन्शन आदि) रहने देगी ? आप कांग्रेसके उन स्वयंसेवकोंको, जो लाल जाकेट पहनते हैं, अपने गाँवमें कभी प्रवेश न करने दीजिए। वे अपने-आपको खुदाई खिदमतगार अर्थात् ईश्वरका सेवक कहते हैं परन्तु वास्तवमें वे गांधीके सेवक हैं। वे रूसके क्रांतिकारी बोल्शेविकोंकी पोशाक पहनते हैं और वास्तवमें वे बोल्शेविकोंके अतिरिक्त कुछ हैं भी नहीं। वे यहाँ भी बोल्शेविकोंके देश जैसा ही वातावरण उत्पन्न कर देंगे।"

पश्चिमोत्तर सीमन्त प्रदेशमें शासनने एक विशाल सैन्य बलका प्रयोग किया था। उसके लिए अपने बचावमें उसने कहा कि "यह भी दयालुताका ही एक कार्य था क्योंकि उसके द्वारा लाल वस्त्रधारियोंको हिंसायुक्त उपद्रवका अवसर

दिये बिना ही दबा दिया गया। पशुओंपर तो पशवत् लोगों द्वारा ही पाशविकता से शासन किया जाना चाहिए।"

भारतकी सरकारने अपने प्रकाशन 'इंडिया इन १९३०-३' में सीमाप्रदेशकी गम्भीर स्थितिका विवरण सार-रूपमें इस प्रकार दिया :

"सरकारको सन् १९३० के अगस्त मासमें फ़ौज़ी कानून (मार्शल लॉ) लगाना पड़ा और उसे अगली जनवरीतक चालू रखना पड़ा। पेशावरमें दंगोंकी जो घटनाएँ हुईं, उनके तुरन्त बाद ही समस्त पश्चिमोत्तर सीमान्तमें; हज़ारा ज़िलेसे लेकर डेरा इस्माईल खाँ तक अशांतिके लक्षण प्रकट होने लगे। राजकीय वायुसेना (रॉयल एयरफोर्स) ने मई और सितम्बरके बीचकी अवधिमें कबाइ-लियोंके क्षेत्रमें अंतिम रूपसे शांतिकी पूर्वावस्था लानेमें बड़ी सहायता की। इस सारे कालमें, जब कि अलग-अलग कबीली इलाकोंमें विद्रोह और उपद्रवकी घट-नाएँ हो रही थीं, प्रदेशके सारे 'बन्दोबस्ती ज़िलों' (सेटिल्ड डिस्ट्रिक्ट्स) में असैनिक अधिकारियोंको शासन स्थिर रखनेमें सहयोग देनेके लिए सेनामें भी अत्यधिक नियुक्तियाँ करनी पड़ीं। जिन गाँवों और नगरोंमें शासनके प्रति अधिक वैमनस्य था, उनमें सामान्यतया फ़ौज़ द्वारा रातमें भी घिराव डालना पड़ा क्योंकि दिन निकल आनेके बाद गिरफ्तारियाँ करनेपर उनका प्रभाव सिविल अधिका-रियोंपर भी पड़नेकी सम्भावना थी। स्थिति और अवसर-विशेषको देखते हुए यह अत्यावश्यक समझा गया कि विरोधके केन्द्रोंके आस-पास लगातार कुछ दिनोंके लिए थोड़ी-थोड़ी दूरपर सैनिकोंको तैनात कर दिया जाय। इस वर्षमें सीमाप्रान्त-के उपद्रवोंको शान्त करनेमें प्रशासनको अनेक असुविधाओंका सामना करना पड़ा क्योंकि उपद्रवोंके कारण प्रकट रूपसे असामान्य थे। यदि १९१९ की कुछ थोड़ी सी घटनाओं या प्रसंगोंको छोड़ दिया जाय तो यह मानना पड़ेगा कि इससे पूर्व इस क्षेत्रका कोई बलवा शेष देशके राजनीतिक आन्दोलनों और हलचलोंसे घनिष्ठ रूपसे इतना सम्बन्धित नहीं था। अबतक सीमाप्रान्तके निवासीका ध्यान मुख्य-तया अपने पड़ोसीसे या स्थानीय शासनसे लड़ने-झगड़नेपर केन्द्रित था। उसे इस बातकी कोई चिन्ता न थी कि अन्यत्र क्या हो रहा है। यदि उसका ध्यान कभी किसी ओर जाता भी था, तो वह भारतकी घटनाओंपर नहीं बल्कि पश्चिमके मुस्लिम देशोंकी गतिविधियोंकी ओर जाता था। कुछ भी हो, इस बार असंदिग्ध रूपसे यह कहा जा सकता है कि इस बलवेका प्रत्यक्ष कारण कांग्रेस दलकी प्रवृत्तियाँ रहीं। सारे विस्फोटकी सबसे विचित्र बात यह रही कि कांग्रेस-संगठनने मुख्य रूपसे मुसलमानोंपर अपना व्यापक प्रभाव सिद्ध कर दिया जब कि अबतक

मुस्लिम-समाजमें उसके अनुयायियोंकी संख्या अत्यंत नगण्य रही थी। इसके अतिरिक्त, सुर्खपोशोंके संगठन ने, जिसको खड़ा करनेकी जिम्मेदारी मुख्य रूपसे खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँपर है, देहाती क्षेत्रोंमें दूर-दूरतक उत्तेजनात्मक विचारोंको फैलाया। यह एक ध्यान आकर्षित करनेवाला तथ्य है कि 'बन्दोबस्ती ज़िलों' (सेटिल्ड डिस्ट्रिक्ट्स) में इस अवधिमें जितने भी उपद्रव हुए उनमें क़बाइली लोगोंने कोई लूटमार नहीं की जैसा कि उनका आम तौरपर ढंग रहा है कि वे जिस गाँवसे गुज़रते थे, उन्हें लूटते जाते थे। अफरीदी लोग जिस समय अधिकारियोंसे समझौतेकी चर्चाएँ कर रहे थे उस समय वे मि० गांधीकी रिहाईकी और भारतमें कुछ विशेष अध्यादेशोंको भंग करनेकी माँगें भी उनके सामने रख रहे थे। ये सब बातें स्पष्ट रूपसे बतलाती हैं कि सीमान्तके उस पार भी कांग्रेसके एजेन्ट सक्रिय रहे हैं।''

कबीलेवालोंने अंग्रेजी सरकारको यह अंतिम चेतावनी दी थी : ''बादशाह खान और मलंग बाबा (नंगे फ़क़ीर, गांधीजी) को रिहा करो, खुदाई खिदमतगारोंको छोड़ दो और पख्तूनोंके ऊपर जो दमन और अत्याचार कर रहे हो, उसे बन्द कर दो। यदि तुम ऐसा नहीं करोगे तो हम तुम्हारे साथ युद्ध घोषित कर देंगे।'' उन्होंने यह समझकर कि 'इन्क़लाब' भी कोई व्यक्ति है, उसकी रिहाईकी भी मांग की। कबीलेवालोंमें भी 'इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद' एक लोकप्रिय नारा था।

ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँ पंजाबकी गुजरात जेलमें पहली बार किसी एक स्थानपर अधिक समयतक रखे गये और उनको पंजाब, दिल्ली और सीमान्तके समान विचारोंवाले व्यक्तियोंसे, जो उस जेलमें बन्दी थे, मिलने-जुलनेकी अनुमति दी गयी। इन्हीं सज्जनोंमेंसे कुछ भविष्यमें उनके निकट सहयोगी बने। जान पड़ता है कि इस समयसे ही उनके लिए उनके प्रशंसकों द्वारा स्नेहभावसे या विरोधियों द्वारा व्यंग्यसे 'सीमान्त गांधी' नामका प्रयोग शुरू हुआ। इसी जेलमें उन्होंने गांधीजीकी आत्मकथाका मनोयोगपूर्वक विवेचनात्मक अध्ययन किया और उस पुस्तकके कुछ अंशको अपने जीवनमें आत्मसात् करनेका प्रयत्न भी किया। अपनी कारावासकी इस अवधिमें वे न केवल सप्ताहमें एक बार उपवास रखते थे बल्कि सप्ताहमें एक दिन मौन भी रहा करते थे। अपने जेल-जीवनके सम्बन्धमें उन्होंने लिखा है : ''हिन्दू, मुसलमान और सिख सभीका व्यवहार सद्भावनापूर्ण था और स्वभावसे वे सब लोग गम्भीर थे। मैंने उनसे धार्मिक, साहित्यिक और राजनीतिक लाभ प्राप्त किये और उनके साथ कारागारमें मुझे जो परम आनन्द

मिला वह मेरे समस्त जेल-जीवनका अपने ढंगका अकेला सुखद अनुभव है। ऐसे ज्ञानशील पुरुषोंके सान्निध्यमें अपने दिन बितानेका सौभाग्य मुझको अन्य किसी जेलमें नहीं मिला। डॉ० अंसारीके मार्ग-दर्शनमें हम लोगोंने अपनी पार्लमेंट बनायी थी ताकि हम शासन करनेमें संसदीय वैधानिक तरीके सीख सकें। उनका विश्वास था कि हम लोगोंके ऊपर निकट भविष्यमें ही शासन-भार आनेवाला है। डॉ० गोपीचंद भार्गव हम लोगोंके लिए लाहौरसे पुस्तकें मँगवा दिया करते थे। हंसराजकी पत्नी जब जेलमें उनसे भेंट करनेके लिए आती थीं तो हम लोगों के लिए भाँति-भाँतिकी खानेकी चीजें लाया करती थीं। पं० जगतराम, जो अंड-मानसे इस जेलमें आये थे, गीताकी कक्षाएँ लिया करते थे और मैं क़ुरानकी। मौलाना ज़फर अली खाँ और डॉ० सैफुद्दीन किचलू इस पार्लमेण्टमें महत्त्वपूर्ण पदोंके लिए सदा झगड़ते रहते थे और सीमा प्रदेशके राजनीतिक बन्दियोंको अपनी ओर मिलानेका प्रयत्न करते रहते थे क्योंकि हम लोग जिस पक्षमें भी जाते थे, अंतमें उसीकी जीत होती थी। देवदास गांधी हम लोगोंके साथ कई मास रहे। हममेंसे कुछ लोग पकौड़े तथा अन्य स्वादिष्ट वस्तुएँ बनाया करते थे। हम सभी कैदी भाग्यशाली थे। उन दिवसोंकी सुखद स्मृतियोंको मैं अब भी अपने मनमें संजोये हूँ।

"जिन दिनों हम लोग जेलमें थे उन दिनों अत्याचारी सरकार अमानवीय कृत्योंमें लगी थी। मियाँ जफर शाह और अब्दुल शाहने, जो हम लोगोंसे जेलमें मुलाकात करने आये, हमें सीमान्त प्रदेशकी सारी स्थितिकी जानकारी करायी। हमने उनसे निवेदन किया कि वे मुस्लिम लीगके नेताओंको जनताकी इस दुर्दशासे अवगत करनेके लिए और उनकी सहायता लेनेके लिए लाहौर, दिल्ली और शिमला जानेकी कृपा करें। कमसे कम वे वाह्य जगत्को सीमाप्रान्तकी स्थितिसे परिचित तो करायें। कुछ महीनोंके बाद वे हमारे पास फिर भेंट करने आये। उन्होंने बतालाया कि मुस्लिम लीगके नेता हमारी सहायता नहीं करना चाहते क्योंकि हम अंग्रेजोंके कार्यमें बाधा डाल रहे हैं। वे अंग्रेजोंका विरोध करनेको तैयार नहीं हैं, बल्कि हिन्दुओंसे लड़ना चाहते हैं। तबतक हम लोग कांग्रेसमें शामिल नहीं हुए थे। डूबता हुआ आदमी तिनकेका सहारा पकड़ता है। मुस्लिम लीगके विरोध करनेपर हमने अपने इन दो सहयोगियोंसे प्रार्थना की कि अब वे सहायताके लिए राष्ट्रीय कांग्रेसके नेताओंके पास जायें। ये लोग कांग्रेसके नेताओंसे भी मिले। यदि वे भारतके स्वाधीनता संग्राममें सक्रिय भाग लें तो वे हमको हर प्रकारकी सहायता देनेको तैयार थे; हम लोगोंने अपने साथियोंसे कहा

कि वे सीमा प्रदेशमें जाकर खुदाई खिदमतगारोंके प्रान्तीय जिरगेमें कांग्रेसके इस प्रस्तावको विचारार्थ प्रस्तुत करें। जिरगाने सर्वसम्मतिसे कांग्रेसका साथ देनेका निश्चय किया और फिर सार्वजनिक रूपसे कांग्रेसमें शामिल हो जानेकी घोषणा की।

"जब अंग्रेजोंको कांग्रेसके साथ पख्तूनोंके संयुक्त मोर्चेका समाचार ज्ञात हुआ तब उनको होश आया। उन्होंने मेरे पास मिलने और समझौता करनेका सन्देश भेजा। उन्होंने कहा कि वे सारे सुधार, जो भारतमें कार्यान्वित हुए हैं, तुरन्त ही सीमा प्रदेशमें भी लागू कर दिये जायँगे। यदि हम कांग्रेसके साथ नहीं जायँगे तो हमको केवल ये सुविधाएँ ही नहीं मिलेंगी बल्कि भविष्यमें भी सुधारों-के मामलेमें हमारे प्रदेशको शेष भारतसे प्राथमिकता दी जायगी। मैंने जेलके सभी राजनीतिक बन्दियोंको इकट्ठा किया और उनको यह सारी कथा सुनाकर उनकी सलाह माँगी। उनमेंसे अधिकतर लोगोंकी यह राय थी कि मैं इस मौकेका लाभ उठा लूँ। उन लोगोंका कथन था कि मैं कूटनीतिका मार्ग ग्रहण करूँ और अंग्रेजोंके इस प्रस्तावको स्वीकार कर लूँ। उनकी यह सम्मति सुनकर मैंने कहा कि मैं अवसरवादी नहीं हूँ। न अंग्रेज ही इस योग्य हैं कि उनके ऊपर भरोसा किया जा सके। इसके अतिरिक्त हमें उस प्रतिज्ञासे भी च्युत नहीं होना है जो कि हमने कांग्रेसके साथ की है और नैतिक रूपमें हम जिससे बँधे हुए हैं। मैंने ब्रिटिश सरकारको अपना यह उत्तर लिख भेजा, "आप लोगोंने हमपर विश्वास नहीं किया इसलिए हम लोग भी आपपर विश्वास नहीं करेंगे।"

प्रथम गोलमेज़ कान्फ्रेंसने लन्दनमें अपना कार्य जनवरी सन् १९३१ तकके लिए स्थगित कर दिया। वहाँ लगभग दस सप्ताहतक साइमन-कमीशन द्वारा बतलायी गयी नीतिका आधार लेकर संविधानके सम्बन्धमें भिन्न-भिन्न समितियों-की बैठकें होती रहीं। कांग्रेसकी शक्ति और उसके द्वारा भारतकी बहुसंख्यक जनताके प्रतिनिधित्वकी बात एकके बाद दूसरे वक्ता द्वारा दुहरायी गयी और स्वीकार की गयी। ब्रिटेनके प्रधान मंत्री रेमज़े मैकडोनाल्डने कहा, 'महामहिम सम्राट्की सरकारको कान्फ्रेन्सकी प्रकृतिको देखते हुए और लन्दनमें उसे दिये जाने-वाले सीमित समयको देखते हुए यही उचित प्रतीत होता है कि उसके कार्यको इसी जगह तबतकके लिए स्थगित कर दिया जाय जबतक कि अबतकके कार्यपर भारतवासियोंकी सम्मति नहीं ले ली जाती और उन कठिनाइयोंपर, जो उसके कामके बीचमें आ खड़ी हुई हैं, विजय पानेके लिए प्रयास नहीं किये जाते।"

२५ जनवरी सन् १९३१ को भारतके वाइसराय लार्ड इरविनने एक वक्तव्य

दिया। उन्होंने महात्मा गांधी और कांग्रेसकी कार्यकारिणीके सदस्योंकी बिना शर्त रिहाईकी घोषणा करते हुए कहा, "हमारा यह कार्य इस हार्दिक इच्छासे प्रेरित है कि वह शान्तिपूर्ण स्थितियोंके निर्माणमें सहायक बने। वह शासनको प्रधान मंत्रीके इस वचनको पूरा करनेकी सामर्थ्य दे कि यदि शान्तिकी घोषणा की गयी और उसे बनाये रखनेका आश्वासन दिया गया तो उसके प्रत्युत्तरमें सरकार भी पीछे न रहेगी।"

गांधीजीने कहा, "कांग्रेस कार्य-समितिके सदस्योंकी मात्र रिहाईसे स्थिति कठिन एवं निश्चित रूपसे दुरूह बन गयी है और इस स्थितिमें कार्यसमितिके सदस्योंके लिए कोई कार्य प्राय: असम्भव हो गया है। शासकवर्गने प्रत्यक्ष रूपसे यह नहीं समझा कि जनताके मनपर आन्दोलनका इतना गहरा प्रभाव पड़ चुका है कि कांग्रेसका नेता, चाहे वह कितना ही बड़ा क्यों न हो, उसे अपने विशेष कार्य-पथपर चलानेमें बिलकुल अक्षम है। जहाँतक मेरा सवाल है, मैं शान्तिका उत्कट अभिलाषी हूँ; यदि वह सम्मानपूर्वक प्राप्त हो सके। इसलिए मैं गोलमेज़ कान्फ्रेंस-के परिणामोंपर ही उसका निष्कर्ष निकालूँगा।"

समस्त देशमें स्वाधीनता दिवसकी प्रथम वर्षगांठ, विशाल सभाओंका आयोजन करके मनायी गयी जिसमें स्वाधीनताके प्रस्तावको दुहराया गया और एक स्मृति-प्रस्ताव स्वीकृत किया गया :

"हम भारतके उन पुत्रों और पुत्रियोंके प्रति अपना गर्व और साभार आदर व्यक्त करते हैं जिन्होंने भारतके स्वाधीनता संग्राममें भाग लिया, मातृभूमिको बन्धनमुक्त करनेके लिए कष्ट सहे और बलिदान किये; अपने महान् और प्रिय नेता गांधीजीके प्रति, जो हमारे लिए सतत प्रेरणा-स्रोत रहे और जिन्होंने हमें सदैव उच्च आदर्श और महत् कार्यका पथ दिखलाया; अपने उन सैकड़ों वीर युवकोंके प्रति, जिन्होंने अपने जीवनको स्वाधीनताकी वेदीपर चढ़ा दिया; पेशावर और पश्चिमोत्तर प्रदेश, शोलापुर, मेदिनीपुर और बम्बईके शहीदोंके प्रति; उन हजारों लोगोंके प्रति जिन्होंने शत्रु-सेनाके निर्मम लाठी-प्रहारोंका सामना किया और उनको झेला; गढ़वाली रेजीमेन्टके तथा सरकारकी सेना और पुलिसके अन्य भारतीय जवानोंके प्रति, जिन्होंने स्वयं अपने जीवनका खतरा उठाकर अपने स्वदेशवासियोंपर गोली चलानेसे या उनके विरुद्ध कोई कार्यवाही करनेसे इनकार कर दिया; गुजरातके उन अदमनीय किसानों तथा भारतके अन्य भागोंके उन वीर और दीर्घ यातना सहनेवाले कृषकोंके प्रति, जिन्होंने संघर्षके दमनका प्रत्येक प्रयत्न होते हुए उसमें सक्रिय भाग लिया; उन व्यापारियोंके प्रति और व्यवसायी

वर्गके उन अन्य सदस्योंके प्रति जिन्होंने स्वयं हानि सहते हुए भी राष्ट्रके स्वाधीनता संग्राममें अपना सहयोग दिया विशेष रूपसे विलायती कपड़े और ब्रिटेनके मालका बहिष्कार करके; उन दस लाख स्त्री-पुरुषोंके प्रति जो जेलोंमें चले गये और जिन्होंने जेल-जीवनकी सब प्रकारकी यातनाओंको सहन किया, यहाँतक कि जेलकी दीवारोंके भीतर ही उनपर हमले किये गये और उनको निर्दयतापूर्वक पीटा गया; उन साधारण स्वयंसेवकोंके प्रति विशेष रूपसे, जिन्होंने भारतके एक सच्चे सेनानीकी भाँति बिना यश अथवा पुरस्कारकी चिन्ता किये हुए, केवल अपने महान् उद्देश्यपर ध्यान केन्द्रित करते हुए अनवरत श्रम किया और बड़ी शान्तिके साथ कष्टों और कठिनाइयोंको झेला।

"हम भारतकी नारियोंके प्रति अपनी श्रद्धा और गहरा सम्मान व्यक्त करते हैं जिन्होंने मातृभूमिके संकटकी घड़ीमें दृढ़ साहस और सहन-शक्तिके साथ अपने घरोंके आश्रयको त्याग दिया और जो स्वाधीनता संग्रामके बलिदानों और विजयोंमें समान भाग बँटानेके लिए हमारी राष्ट्रीय सेनामें पुरुषोंके साथ कंधोंसे कंधा मिलाकर, प्रथम पंक्तिमें आकर खड़ी हो गयीं। हम अपने राष्ट्रके युवकोंके लिए अपना गर्व प्रकट करते हैं और उस वानर सेनाके लिए भी जिसके सदस्योंकी सुकुमार वय उसको स्वाधीनताकी लड़ाईमें भाग लेनेसे न रोक सकी।

"हम इस तथ्यको साभार स्वीकार करते हैं कि भारतके बड़े और छोटे सभी समाज और वर्ग इस महान् संग्राममें भाग लेनेके लिए एक साथ मिल गये और उन्होंने अपने इस उद्देश्यके लिए अधिक-से-अधिक त्याग किया। इसमें भारतने जो त्याग किया, जो यातनाएँ सहीं उनके गरिमामय और प्रेरणाप्रद आदर्शके साथ हम अपनी स्वाधीनताकी शपथको दुहराते हैं और अपना यह दृढ़ निश्चय व्यक्त करते हैं कि जबतक भारत पूर्ण स्वाधीन नहीं हो जाता हम अपने इस संघर्षको चलाते रहेंगे।"

काफी विचार-विमर्शके पश्चात् ५ मई सन् १९३१ को लार्ड इरविन और महात्मा गांधीके एक समझौतेपर हस्ताक्षर हुए। एक विज्ञप्तिमें कहा गया, 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन कार्यरूपमें प्रभावपूर्ण ढंगसे स्थगित कर दिया जायगा और सरकार भी पारस्परिक सहयोगके रूपमें तदनुरूप कार्य करेगी।'

भारतीय उद्योगोंको प्रोत्साहन देनेकी दृष्टिसे विदेशी मालका बहिष्कार सरकारने मान लिया परन्तु एक राजनीतिक अस्त्रके रूपमें नहीं। इस सन्धिके अन्तर्गत विदेशी वस्त्रोंकी दूकानों और मादक-द्रव्योंकी दूकानोंपर शान्तिपूर्ण ढंगसे धरने भी चलते रहे।

गांधी-इरविन समझौतेके फल-स्वरूप ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँके अलावा शेष सब राजनीतिक कैदियोंको गुजरात जेलसे रिहा कर दिया गया। जब उन्होंने जेलके सुपरिण्टेण्डेण्टसे पूछा कि केवल मुझको ही क्यों नहीं छोड़ा गया तब उनको उत्तर मिला कि सर फज़्ले हसन और नवाब सैयदज़ादा सर अब्दुल मय्यूम सरीखे कुछ प्रमुख मुस्लिम नेता आपसे मिलना चाहते हैं। ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँने कहा, "मैं उनसे नहीं मिलना चाहता। जब हम विपत्तिमें थे, तब उन्होंने हमारी कोई सहायता नहीं की और अब, जब कि समझौता हो चुका है, उनको अचानक मेरी याद आयी है। कृपया उनसे कह दीजिए कि वे मुझसे मिलनेके लिए यहाँ न आयें।"

पश्चिमोत्तर प्रदेशके चीफ़ कमिश्नर सर स्टुअर्ट पियर्स ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँकी रिहाईके विरोधी थे। उन्होंने वाइसरायको सूचित किया कि सीमा-प्रान्तमें दो बेमेल व्यक्ति एक साथ नहीं रह सकते, 'वे अथवा मैं, दोनोंमेंसे एक ही आदमी इस प्रदेशमें रहेगा।'

गांधीजीने इस बातपर ज़ोर दिया कि ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँ कांग्रेसके व्यक्ति हैं, इसलिए उनको रिहा कर देना चाहिए। वाइसरायने जवाब दिया कि पख़्तून आपको धोखा दे रहे हैं। उनका अहिंसामें विश्वास नहीं है। आप उनके प्रान्तकी स्थितियोंका अध्ययन करनेके लिए वहाँ जाइये। अंतमें ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँको छोड़ दिया गया।

अपनी रिहाईके तत्काल बाद ही ११ मार्च सन् १९३१ को ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँने इरविन-गांधी-सन्धि-वार्ताको एक अस्थायी समझौतेका नाम दिया और आवश्यकता पड़नेपर जनताको संघर्षके लिए तैयार रहनेकी सलाह दी। उन्होंने यह घोषणा भी की कि वे खुदाई खिदमतगारोंकी संख्या बढ़ाकर एक लाखतक पहुँचा देना चाहते हैं। वे अचानक ही पेशावर पहुँचे और वहाँ एक विशाल जन-समुदायने अपनी अन्तर्प्रेरणासे ही उनका भव्य स्वागत किया। उन्होंने पेशावर नगरमें कई स्थानोंपर भाषण किये जिनमें शहीदोंके अस्थायी स्मारककी चर्चा भी शामिल थी।

अपने गाँव उत्मानज़ई पहुँचनेपर ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँका अत्यंत उत्साहके साथ स्वागत किया गया। उन्होंने अपना एक क्षण भी व्यर्थ नहीं खोया और खुदाई खिदमतगारोंके संगठनके कामको उठा लिया। उन्होंने अपने कई व्याख्यानोंमें कहा, 'फिरंगीका एक सींग तो टूट ही चुका है। अब तुम लोग उठो और उसका दूसरा सींग तोड़नेके लिए तैयार हो जाओ। यह तुम्हारा अपना देश है

जिसे ईश्वरने तुम्हें बख्शा है। लेकिन तुम्हारी आपसकी फूटके कारण फिरंगियोंने इसपर अपना अधिकार जमा लिया है। तुम्हारे बच्चे भूखे और प्यासे मर रहे हैं जब कि उनके बच्चे आरामकी ज़िन्दगी बिता रहे हैं और जो कुछ वे चाहते हैं, उनको वह मिलता है।'

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने अपने भाषणोंमें जो बार-बार टूटे हुए सींगका उल्लेख किया था, उसके कारण अंग्रेज उनसे बहुत रुष्ट हो गये और सन्धिके होते हुए भी उनको एक बहुत बड़ा द्वेषी समझने लगे। अंग्रेज कहने लगे कि खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ निर्माणके लिए नहीं बल्कि विध्वंसके लिए कार्य कर रहे हैं। उन्होंने सीमाप्रान्तके नेताओंसे कहा, 'आप लोग सुशिक्षित व्यक्ति हैं। खान अब्दुल ग़फ्फार खाँ आपकी भाँति पढ़े-लिखे नहीं हैं। काम आप लोग करते हैं और उसका श्रेय उनको मिलता है। वे अपनी प्रवृत्तियोंसे आप लोगोंके लिए एक मुसीबत खड़ी कर देते हैं।' इस मिथ्या प्रचारने खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके निकट सहयोगियोंपर भी अपना प्रभाव डाला। उन लोगोंने मरदानमें काज़ी अताउल्लाहके यहाँ एक बैठक की। उन्होंने खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँसे आग्रह किया कि वे अपने दौरे रोक दें और अंग्रेजोंके टूटे हुए सींगको बजाना बन्द कर दें। 'तब मैं उन लोगोंसे क्या कहूँ?' खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने उन लोगोंसे पूछा। वे बोले, 'अब हम लोगोंने अंग्रेजोंके साथ सन्धि कर ली इसलिए अब हमें एक दूसरेकी ओर मित्रताका हाथ बढ़ाना चाहिए।' खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने इसका प्रतिवाद करते हुए कहा कि इससे पख्तूनोंमें चेतनाकी भावना जाग्रत नहीं होगी और इस बातपर बल दिया कि यह सन्धि स्थायी नहीं है। 'ईश्वरने हम लोगोंको काम करनेका एक अच्छा अवसर दिया है। उसे हमें नष्ट नहीं करना चाहिए।'

मार्चके अंतमें कराचीमें कांग्रेस अधिवेशन हुआ। उसमें सन्धिको और भी स्थायित्व दिया गया। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ लगभग सौ खुदाई खिदमतगारों-के साथ वहाँ पहुँचे। इनकी सुर्ख वर्दियाँ लोगोंपर बड़ा प्रभाव डाल रही थीं और इनके साथ उनका बैण्ड बाजा था। इन लोगोंको कांग्रेसके वार्षिक अधिवेशनमें पहली बार आमंत्रित किया गया था और इनको ठहरनेके लिए कांग्रेस नगरमें एक पृथक् शिविर दिया गया था।

कराचीमें राष्ट्रके जन-नायक भगत सिंहकी फांसीके दिन कांग्रेसका पण्डाल प्रतिनिधियोंसे खचाखच भरा हुआ था। वातावरणमें एक कसाव-सा भरा हुआ था। पिछले दिनों हुए साम्प्रदायिक दंगोंने, जिनमेंसे एकमें श्री गणेश शंकर

विद्यार्थीकी मृत्यु हुई थी, समूचे अधिवेशनपर अपनी अंधकारपूर्ण छाया डाल रखी थी। यद्यपि अधिकांश प्रतिनिधियोंने सन्धिका स्वागत किया फिर भी वह लोकप्रिय न बन सकी। लोगोंके मनमें यह भय था कि यह सन्धि कहीं कांग्रेस-को ऐसी स्थितियोंमें न डाल दे कि उसको सब प्रकारके समझौते करने पड़ें। जैसे ही गांधीजीकी ट्रेन कराची रेलवे स्टेशन पहुँची, नौजवान सभाके सदस्योंने, जो लाल कमीज़ें पहने हुए थे, ज़ोरसे नारे लगाना शुरू कर दिया, 'गांधी, वापस जाओ।' 'गांधीवादका पतन हो।' 'गांधीकी सन्धिने भगत सिंहको फांसीके तख्ते पर भेज दिया।' 'भगतसिंह जिन्दाबाद', 'इन्किलाब जिन्दाबाद'। गांधीजीने क्रोधित होनेकी बजाय तरुणोंको यह सदुपदेश दिया, "आत्म-दमन और कायरता-की सीमाको स्पर्श करनेवाली भीरुताके अपने इस देशमें अत्यधिक वीरता और ऐसा आत्म-बलिदान दुर्लभ है। भगत सिंहकी वीरता और आत्म-बलिदानके आगे प्रत्येक व्यक्तिका मस्तक झुक जायगा। परन्तु मैं नम्र, भली और अहिंसावादी जनतासे इससे भी अधिक वीरताकी इच्छा रखता हूं—वह वीरता, जो बिना किसी-को चोट पहुँचाये, बिना एक भी व्यक्तिकी भावनाको ठेस लगाये फांसीके तख्ते पर जा चढ़ती है।"

लोगोंको यह भय था कि प्रदर्शनकारियोंके कारण कांग्रेसकी कार्यवाही आगे बढ़ना प्रायः असम्भव हो जायगा। २६ मार्चके दिन लगभग ५०,००० श्रोताओंके समक्ष कांग्रेसके पण्डालमें पहला भाषण गांधीजीका हुआ। आकाशका खुला चंदोवा, जिसके नीचे कांग्रेसका अधिवेशन चल रहा था, उसे एक विशेष विमोहन दे रहा था। गांधीजीने तरुणोंको सम्बोधित करते हुए कहा :

"यदि आप मेरी सेवाएँ चाहते हैं तो आपको मेरी बात सुनी-अनसुनी नहीं करनी है। आपको यह जानना चाहिए कि एक हत्यारे, एक चोर अथवा एक डाकू को दण्ड देना भी मेरे मनके विरुद्ध है, इसलिए इस बातमें कोई सन्देह नहीं रह जाता कि मैं भगत सिंहको बचाना नहीं चाहता था। परन्तु मैं आपसे यह भी चाहता हूँ कि आप भगत सिंहकी गलतीको महसूस करें। यदि मुझको भगत सिंह और उनके साथियोंसे मिलनेका अवसर मिला होता तो मैंने उनसे यह कहा होता कि जो मार्ग उन्होंने ग्रहण किया है वह भ्रामक और अनिष्टकारी है। मैं यह बात स्पष्ट रूपसे कह देना चाहता हूँ कि हम अपने क्षुधा-पीड़ित करोड़ों लोगोंके लिए, अपने गूँगे, बहरे और पंगु लोगोंके लिए तलवारके रास्तेसे स्वराज्य नहीं ला सकते। ईश्वरको साक्षी करके मैं इस सत्यकी घोषणा कर देना चाहता हूँ कि हिंसाका मार्ग स्वराज्य नहीं ला सकता, वह केवल विनाशकी ओर ही ले जायगा। मैं तरुणोंसे उस सारे अधि-

कारके साथ, जिनसे कि एक पिता अपने पुत्रोंको समझाता है, कहना चाहता हूँ कि हिंसाका मार्ग केवल अधःपतनकी ओर ही प्रवृत्त करेगा। मैं तुम्हें इस समय विस्तारसे नहीं समझा सकता कि ऐसा क्यों? क्या आप ऐसा सोचते हैं कि ये सब महिलाएँ और बालक, जिन्होंने विगत संघर्षमें देशसे गौरव प्राप्त किया, हिंसाका पथ पकड़कर वह पा सकते थे? तब क्या ये यहाँ आज होते? यदि हममें हिंसाकी भावना रही होती तो क्या हमारी महिलाओंने, जो विश्वमें सबसे अधिक नम्र समझी जाती हैं, ऐसा अनूठा देश-सेवाका कार्य किया होता? हमने अहिंसाकी शपथ ली थी इसीलिए हम लाखों पुरुषों, स्त्रियों और बालकोंको स्वाधीनता-संग्रामका सैनिक बना सके।

"मैं युवकोंसे यह विनय करता हूं कि वे अपनेमें धैर्य और आत्म-संयम रखें। क्रोध हमको आगे नहीं ले जा सकता। मैंने अंग्रेजोंके विरुद्ध सत्याग्रहका प्रयोग किया परन्तु मैंने उनको कभी शत्रु नहीं समझा। हमें अंग्रेजोंको अपना शत्रु समझनेकी आवश्यकता भी नहीं है। मैं उनको बदलना चाहता हूँ और इस हृदय-परिवर्तन द्वारा जो प्रेमका एकमात्र पथ है। मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप मेरे चालीस वर्षके अहिंसाके सतत अभ्यासपर विश्वास करें।"

२९ मार्चको एक खुले हुए क्रीडांगनमें अधिवेशन हुआ, जो लगभग ३२०० प्रतिनिधियों और कई हज़ार दर्शकोंसे खचाखच भरा हुआ था। कांग्रेसके अध्यक्ष सरदार वल्लभभाई पटेलने एक जुलूसके साथ प्रवेश किया जिसमें आगे दो राष्ट्रीय ध्वज लिये हुए स्वयंसेवकोंकी टोली चल रही थी और उसके बाद ही खुदाई खिदमतग़ारोंका जत्था था जो बैण्ड बजाता चल रहा था। इस जुलूसमें गांधीजी, सुभाष बोस, खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ तथा कार्यकारिणीके अन्य सदस्य थे। सरदार पटेलके छोटेसे भाषणकी मूल भावना थी, 'कांग्रेस राष्ट्रकी कोटि-कोटि जनताका प्रतिनिधित्व करती है और उसका अस्तित्व उस जनताके ही निमित्त है।' अधिवेशनका मुख्य प्रस्ताव सन्धिकी शर्तों और गोलमेज़ कान्फ्रेन्सके सम्बन्धमें था। प्रस्तावके समर्थकोंमें ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ भी थे। 'इन्क़िलाब जिन्दाबाद' के नारोंके साथ वे मंचपर आये और उन्होंने संक्षेपमें प्रस्तावका समर्थन किया। उन्होंने कहा कि वे बीमार हैं परन्तु वे गांधीजीका आदेश नहीं टाल सकते। वे मात्र एक सैनिक हैं। जब कप्तानने सिपाहीसे पूछा कि वह क्या जानता है तब उसने उत्तर दिया कि वह केवल आदेश पालन करना जानता है। पख़्तूनोंका गांधीजीमें गहरा विश्वास है और उन्हींके कारण वे भारत और भारतीयोंके मित्र बने हैं।

ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके तुरन्त बाद गांधीजीने भाषण किया। वे अंग्रेजी

और हिन्दी दोनों भाषाओंमें बोले। उन्होंने ज़ोर देते हुए कहा, 'हम कोई प्रतिज्ञा नहीं कर सकते। यदि प्रतिनिधिमंडल यहाँ भारतमें अथवा इंगलैंडमें आयोजित कान्फ्रेन्समें जाता है और विचार-विमर्शमें भाग लेता है तो वह डेप्यूटेशन पूर्ण स्वराज्य लेकर ही आयेगा इसका वचन कैसे दिया जा सकता है? हाँ, वह तभी वापस आयेगा जब कि कांग्रेसका भारतीय जनताके प्रतिनिधित्वका पूर्ण अधिकार स्पष्ट हो जायगा; उससे क्षणभर पहले नहीं। यदि वह अपने साथ पूर्ण स्वराज्य लेकर लौटता है तो यह कांग्रेसकी सबसे महान् उपलब्धि समझी जायगी। स्वयं अपनी ओरसे और उस प्रतिनिधि-मंडलकी ओरसे, जिसको आप हमारे साथ भेजना चाहते हैं, मैं केवल विश्वासपूर्वक यह वचन दे सकता हूं कि हम किसी भी रूप अथवा प्रकारमें कांग्रेसके प्रति अविश्वासी नहीं होंगे।'

सीमाप्रान्तके लोगोंने स्वाधीनता संग्राममें जो शौर्यपूर्ण भूमिका निभायी थी, उसका स्थान-स्थानपर उल्लेख किया गया और उसके सम्बन्धमें दो प्रस्ताव स्वीकृत किये गये। एक प्रस्तावमें कहा गया, 'कहते हैं, सीमाप्रान्तमें यह प्रचार-कार्य चल रहा है कि कांग्रेसको वहाँके लोगोंके हितोंकी चिन्ता नहीं है, इसलिए यह उचित समझा जाता है कि कांग्रेस इस सन्देहके निराकरणके लिए कदम उठाये। यहाँ कांग्रेस अपना यह मत व्यक्त करती है कि किसी भी संवैधानिक योजनामें सीमाप्रान्तमें शासनका वही रूप होगा जो भारतके शेष अन्य प्रान्तोंमें होगा।'

अन्य प्रस्तावमें कांग्रेसने सीमाप्रान्तकी अग्रगामी नीति (फारवर्ड पॉलिसी) को अस्वीकृत किया। पं० जवाहरलाल नेहरूने कहा : "विगत वर्षोमें अफ़गान जनताको असभ्य, बर्बर लोगोंके रूपमें चित्रित किया गया है, जो कि हत्याओं और लूटमारके लिए घूमते रहते हैं। यह भ्रान्त धारणा फैलायी गयी है कि जिस दिन अंग्रेज सरकार भारतसे चली जायगी, उस दिन चारों ओर लूट-खसोट मच जायगी। इसी प्रकारसे भारतके बारेमें भी सीमांतमें मिथ्या धारणाएँ फैलायी गयी हैं। मैं पठानोंको अच्छी तरहसे जानता हूँ। वे हमारे ईमानदार, वीर और विश्वसनीय मित्र हैं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि स्वराज्यके भीतर सीमान्तकी जनताके साथ भारतके सम्बन्ध अत्यन्त सौहार्दपूर्ण रहेंगे। अंग्रेजोंकी सरकारने अपनी 'अग्रगामी नीति' के द्वारा उस देशकी जनताको, जिसपर किसीका अधिकार स्थापित नहीं है, अपना गुलाम बनानेका भरसक प्रयत्न किया है। भारतीय लोग, जो विदेशी जुयेके नीचे दबे हुए व्यथासे कराह रहे हैं, यह नहीं चाहते कि अन्य लोगोंपर भी वही दासता लाद दी जाय। हमारे मौनका आज गलत अर्थ लगाया जायगा इसलिए मैं आप सब प्रतिनिधियोंसे उस प्रस्तावको स्वीकार करने-

के लिए कह रहा हूँ जिसको कि मैं आपके समक्ष उपस्थित करने जा रहा हूं।"

खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँने प्रस्तावका समर्थन करते हुए कहा कि ब्रिटिश सरकार पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तके तथ्योंसे भारतीयोंको जान-बूझकर अपरिचित रख रही है। वे दिन लद गये जब कि अंग्रेज सरकार अफ़गान आक्रमणका भय दिखलाकर भारतीयोंको विभाजित रख सकती थी। आज पख्तूनोंका महात्मा गांधीपर पूर्ण विश्वास है और यदि उनको भविष्यमें सविनय अवज्ञा आन्दोलन छेड़ना पड़ा तो भारतको पूर्ण स्वराज्य दिलानेके प्रयत्नमें पख्तून किसीसे पीछे नहीं रहेंगे। 'हम यह दिखला देंगे कि वास्तवमें हम क्या हैं ?' खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने ज़ोरदार शब्दोंमें कहा। उन्होंने साम्प्रदायिक एकताकी अपील करते हुए लोगोंसे कहा कि गुलामोंका कोई धर्म नहीं होता। हिन्दुओं और मुसलमानोंको जातीय मामलोंको लेकर लड़ना नहीं चाहिए। उन्होंने उपस्थित जनतासे कहा कि अंग्रेज सरकार सीमाप्रान्तमें भारतके विरुद्ध प्रचार कार्य कर रही है। वह वहांके लोगोंसे यह पूछती है कि महात्मा गांधीकी रिहाईसे तुम्हें ऐसा क्या मिल जायगा जो पिछले बारह माससे तुम उनकी रिहाईकी मांग कर रहे हो ? गांधीजीने तुम पख्तून लोगोंके लिए क्या किया है ? अत: यदि आजका यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया तो सीमाप्रान्तकी जनताके लिए यह एक शुभ कामनाका संदेश होगा।

ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने अफ़रीदी लोगोंकी ओरसे गांधीजीको एक संदेश दिया जिसमें उन्होंने महात्माजीसे अपने प्रदेशमें आनेकी प्रार्थना की थी। उन्होंने लिखा था कि आप स्वयं यहाँ आकर यहाँकी स्थितिका अध्ययन कीजिए और देखिए कि भारतको दासताके बन्धनमें जकड़े रहनेके लिए किस प्रकार लाखों रुपयोंका अपव्यय किया जा रहा है। अफ़रीदी लोगोंने यह भी सुझाव दिया था कि यदि गांधीजीको उनकी मांगें न्याययुक्त प्रतीत हों तो वे ही उनके बीचमें मध्यस्थका कार्य करें। वे अंग्रेज सरकारपर इस बातका ज़ोर डालें कि वह उनके देशको छोड़ दे और उनको स्वतन्त्र कर दे। अपने भाषणके अन्तमें ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कहा कि केवल गांधीजी ही पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त और सरहदी इलाकेमें शान्तिकी स्थापना कर सकते हैं और इस प्रकार वे सेनाके एक लम्बे-चौड़े खर्चको बचानेमें भी सहायता कर सकते हैं।

कराचीमें मूलभूत अधिकारों सम्बन्धी एक प्रस्ताव उपस्थित किया गया, 'जनताके शोषणका अंत करनेके लिए राजनीतिक स्वतन्त्रतामें लाखों मरते हुए लोगोंकी वास्तविक आर्थिक स्वाधीनताका भी समावेश होना चाहिए।'

खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँ और उनके निकट सहयोगी कांग्रेससे अत्यधिक

प्रभावित हुए। उन्होंने वहाँ लोगोंसे विचार-विनिमय किया। इस बार वे नेहरू-जी तथा गांधीजीसे पूर्ण रूपसे परिचित हो गये। खुदाई खिदमतगार कर्त्तव्यपरायण और अनुशासित लोग थे और जहाँ भी कोई कठिन कार्य करना होता था, वहाँ उनको भेजा जाता था। वे भी उस कार्यको सुचारु रूपसे पूरा करते थे। वे बड़े लोकप्रिय हो गये। वे जहाँ भी गये वहाँ लोगोंने उनका हार्दिक स्वागत किया। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने अहिंसाके एक निष्ठावान् उपासकके रूपमें गांधीजीके मनपर एक छाप छोड़ दी।

पैगम्बरका कार्य

१९३१

कराचीमें ही गांधीजीको गोलमेज कान्फ्रेन्समें भारतका प्रतिनिधित्व करनेका आदेश-पत्र दे दिया गया। परन्तु लन्दनका रास्ता टेढ़ा-मेढ़ा था। इंगलैण्ड और भारत दोनों स्थानोंमें अधिकारोंके हित इस सन्धिके विरोधी थे। विन्सेन्ट चर्चिल ने कहा था, 'यह आश्चर्यजनक और अशोभनीय दृश्य है कि मिडिल टैम्पल कॉलेज पढ़ा हुआ राजद्रोही वकील, जो अब एक फ़क़ीरका स्वांग भरे हुए है, अध-नंगा वाइसरायके राजभवनकी सीढ़ियाँ चढ़ता जा रहा है। ऐसे फ़क़ीर 'पूर्व' में बहुत दिखलाई देते हैं। वह सम्राट् महोदयके प्रतिनिधिसे समान शर्तोंको लेकर चर्चा करना चाहता है, हालाँकि वह अबतक सविनय अवज्ञाके अभियानको संगठित कर रहा है और उसे कार्य-रूप दे रहा है।' भारतीय सिविल सर्विसका सर्वत्र यही दृष्टिकोण था।

पहला अवरोध, जिसको गांधीजीने हटानेका प्रयत्न किया, साम्प्रदायिक उलझन था। इस कार्यका आरम्भ गांधीजीने कराचीमें ही कर दिया जहाँ कि १ अप्रैल सन् १९३१ में मौलाना आज़ादके सभापतित्वमें 'जमायत-उल-उलेमाए-हिन्द' का वार्षिक अधिवेशन हुआ। उपस्थित जन-समुदायको सम्बोधित करते हुए गांधीजीने आगरा, बनारस, कानपुर, मिर्ज़ापुर तथा कुछ अन्य स्थानोंके साम्प्रदायिक दंगोंका उल्लेख किया, जिनमें हिन्दू और मुसलमान आपसमें शत्रुओं-की भाँति लड़े थे। गांधीजीने किसी एक ही जातिपर दोषारोपण नहीं किया। उन्होंने कहा, 'इस्लामके विद्वान् अध्यात्मवादियो, मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप अपने श्रेष्ठ पदका उपयोग करें और मुसलमानोंके भीतरसे साम्प्रदायिकताके विषको समूल नष्ट कर दें एवं उनको आपसी प्रेम और सहन-शक्तिके सिद्धांतकी शिक्षा दें। मैं ऐसे ही हिन्दुओंसे भी निवेदन करूँगा कि वे घूंसेका जवाब घूंससे न दें बल्कि मुसलमानोंको उस समय भी अपना भाई समझें जब कि उनकी ग़लती हो।' यह बात गांधीजीके मनमें पैठ चुकी थी कि केवल हिन्दू-मुस्लिम एकता ही भारतको स्वराज्य दिलवा सकती है और जबतक आपसकी साम्प्रदायिकताकी यह उलझन नहीं सुलझती तबतक गोलमेज़ कान्फ्रेन्समें जाना भी कोई अर्थ नहीं रखता। अपने निजके बारेमें उनका कहना था कि जो कुछ मुसलमान चाहते हैं

वह देकर भी मैं उनको अंगीकार किये रहनेको तैयार हूँ। उन्होंने कांग्रेसके मूलभूत अधिकारोंकी घोषणाका हवाला दिया और कहा कि वह स्वराज्य, जिसके लिए वे कार्य कर रहे हैं, गरीबोंके लिए स्वराज्य होगा। इसके पश्चात् उन्होंने उपस्थित जन-समुदायसे हिन्दू-मुस्लिम एकताके अपने उन प्रयासोंके लिए आशीर्वादोंकी प्रार्थना की, जिनके लिए वे अगले दिन दिल्ली जा रहे थे।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ, उन्नीस लाल कुर्तीवालोंके एक छोटेसे दलके साथ ४ अप्रैलको कराचीसे बम्बई आ गये। उतरते ही उनको फूल-मालाएँ पहनायी गयीं। एक हज़ारसे भी अधिक व्यक्तियोंने बन्दरगाहपर पहुँचकर उनका स्वागत किया और वे उनको एक विशाल जुलूसमें अपने साथ ले चले। इस जुलूसके आगे-आगे लाल कुर्तीवाले मसक बाजे और ढोल बजाते हुए चल रहे थे। उनके पीछे मुस्लिम स्वयंसेवकोंकी टोलियाँ थीं। सजी हुई मोटर-कारें और ट्रकें उनको तथा उनके साथियोंको चढ़ाकर ले जानेकी प्रतीक्षा कर रही थीं परन्तु उन्होंने जुलूसके साथ-साथ नगरमें पैदल चलना ही उचित समझा। अपने बम्बईके केवल दो दिनोंके प्रवासमें उन्होंने लगभग एक दर्जन सभाओंमें भाषण किये, जिनमें उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम एकताके पक्षका समर्थन किया, मुसलमानोंको कांग्रेसमें शामिल हो जानेकी सलाह दी और पठानोंके सम्बन्धमें जो मिथ्या धारणाएँ फैली हुई थीं, उनके निराकरणका प्रयास किया। रातको लगभग दस बजे उन्होंने डोंगरी मैदानमें एक सभामें भाषण किया। इस बस्तीमें पठान लोग विशेष रूपसे निवास करते थे। लगभग दस हज़ार श्रोताओंकी भीड़को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा :

"प्रिय भाइयो, मैं एक साधारण व्यक्ति हूँ। आप मेरे सम्बन्धमें बहुत ऊँचे विचार मत बनाइये। हम लोगोंमें यह आदत है कि हम दूसरोंका अत्यधिक मूल्यांकन करते हैं। हम लोग, विशेष रूपसे मुसलमान लोग बहुत निराशापूर्ण स्थितिमें हैं। जब भी कोई व्यक्ति मेरे लिए अत्यधिक आदर-भावना प्रदर्शित करता है तब मैं अपने-आपको लज्जित अनुभव करने लगता हूँ। मैं देखता हूँ कि मैंने कोई असामान्य कार्य नहीं किया। हम भारतीय यह नहीं जानते कि सेवा कैसे की जाती है और हम लोगोंमेंसे यदि कभी कोई थोड़ा-सा काम भी कर लेता है तो हम उसकी अति प्रशंसा करने लगते हैं। मैंने हमेशा यही कहा और माना है कि जो कुछ मैंने किया है उसे करना प्रत्येक मुसलमानका कर्त्तव्य है।

"मैं कोई वक्ता नहीं हूँ। मैं यह नहीं जानता कि बात कैसे की जाती है लेकिन मैं यह जानता हूँ कि काम कैसे किया जाता है। मैं आपको यह बतला देना चाहता हूँ कि अफ़गान राष्ट्र क्या है और पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेश क्या ?

और हम पख्तूनोंके तथा हमारे प्रान्तके विरुद्ध यह प्रचार-कार्य क्यों किया जा रहा है ? आप लोग समाचार-पत्रोंमें सीमान्त प्रदेशके विरुद्ध लेख पढ़ते होंगे और अलग-अलग मंचोंसे उनके खिलाफ़ किये जानेवाले भाषण सुनते होंगे। यदि आप कभी किसी पत्रके सम्पादकसे पूछें अथवा किसी नेतासे प्रश्न करें कि क्या उसने कभी सीमान्त प्रदेश देखा है और क्या उसकी वहाँके लोगोंके लोक-जीवन और संस्कृतिके सम्बन्धमें व्यक्तिगत जानकारी है, या क्या वह कभी अफ़ग़ानोंके बीचमें, उनके साथ रहा है, तो आपको इन प्रश्नोंका उत्तर नकारात्मक ही मिलेगा। भारतके नेता और पत्रकार सीमान्त प्रदेशके सम्बन्धमें कोई जानकारी नहीं रखते फिर भी वे सदैव उस प्रान्त और वहाँके निवासियोंके बारेमें लम्बे-लम्बे भाषण करते हैं और लेख लिखते हैं। मैं आपसे यह कहना चाहता हूँ कि यह सब अंग्रेजों-का प्रचार है। ब्रिटिश लोगोंने यह जान लिया है कि अफ़गान एक सैनिक जाति है। आरम्भमें हम अपनी स्थितिको नहीं समझ पाये लेकिन हमारा शत्रु हमारी स्थितिको भली भाँति पहचान गया और उसने सारे भारतवासियोंमें हम अफ़गान लोगोंको ही सबसे पहले बदनाम करनेकी कोशिश की। आप सब लोगोंने सीमान्त प्रदेशमें हुई डकैतियोंके समाचार अखबारोंमें पढ़े होंगे लेकिन मैं आपको बत-लाता हूँ कि वे सब राजनीतिक डकैतियाँ हैं। वे केवल हिन्दुओंके घरोंमें ही नहीं हुई बल्कि उनमें मुसलमानोंके घरोंको भी लूटा गया है। फिर केवल हिन्दुओंके लुटनेके समाचार ही क्यों प्रकाशित किये गये इसका कारण आप लोग भली भाँति समझ सकते हैं। अंग्रेजी सरकार इतने हवाई जहाजों और मशीनगनोंके रहते हुए भी सरहदी लुटेरोंसे हमारी रक्षा नहीं कर सकी और डकैतियाँ की गयीं। इसका अभिप्राय यह रहा है कि हम सीमान्त प्रदेशके निवासी सदैव अंग्रेजोंकी सहायताकी ओर देखते रहें और अफ़गानोंसे डरकर अंग्रेजोंके गुलाम बने रहें। मैं यह दावा नहीं करता कि अफ़गानोंके देशके सभी लोग भले हैं। दूसरे देशोंमें भी जहाँ अच्छे लोग हैं, वहाँ बुरे लोग भी हैं। यही बात अफ़गानोंके साथ है। सन् १९३० की आज़ादीकी लड़ाईमें पख्तून जनताने बहुत त्याग किया और सविनय अवज्ञा आन्दोलनकी ज्योतिको बुझने नहीं दिया। अंग्रेजोंने हमारे प्रान्तमें आन्दोलनको कुचल देनेकी बहुतेरी कोशिश की लेकिन वे सफल नहीं हो सके। अंग्रेज पिछले सौ वर्षोंके अनुभवसे यह जानते हैं कि यदि सीमा-प्रान्तकी जनताने आज़ादीकी लड़ाईमें शेष भारतवालोंका साथ दिया तो इससे उनकी शक्ति दुगुनी हो जायगी। यह एक ऐसा भेद था जिसको हम और आप नहीं जानते थे। अंग्रेज इसे अच्छी तरहसे समझते थे और यही कारण था कि उन्होंने हमको बद-

नाम करके भारतीयोंकी दृष्टिमें गिरा दिया। मैं अपने हिन्दू, सिख, पारसी, ईसाई और यहूदी बन्धुओंसे यह निवेदन करूँगा कि वे इस बातपर विचार करें और अफ़गानोंके सम्बन्धमें जो भ्रमपूर्ण विचार उन्होंने बना रखे हैं, उनको त्याग दें।

"मैं थका हुआ हूँ और मैंने सारे दिन विश्राम नहीं किया है इसलिए मैं अधिक विस्तारमें नहीं जाऊँगा। न यह ज़रूरी है कि मैं कांग्रेसके मामलोंपर विस्तारसे चर्चा करूँ। मुख्य बात यह है कि हमें कांग्रेससे जो निर्देश मिलें, हम उनके ऊपर चलें। यदि हम सारी रात बातें करते रहें और उनके अनुसार व्यव-हार न करें तो वे बातें निरर्थक होंगी। जब मैं अपने मुस्लिम बन्धुओंके मुखसे यह सुनता हूँ कि कांग्रेस हिन्दुओंकी जमात है तब मुझको आश्चर्य होता है। वास्त-विकता यह है कि कांग्रेस एक ऐसी जमात है जिसमें हिन्दू-मुसलमान, सिख, पारसी और ईसाई सभी लोग हैं और इसीलिए उसे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस नाम दिया गया है। उसका लक्ष्य भारतको स्वतंत्र करना है, भूखे भारत-वासियोंको भोजन देना और नग्न लोगोंको वस्त्र देना है। मुझे यह कहते हुए खेद है कि वास्तवमें यह कार्य मुसलमानोंका था, जिसको कि औरोंने अपने ज़िम्मे ले रखा है। मैं मुसलमानोंसे पूछता हूँ कि हिन्दुस्तान उनका अपना देश है या नहीं? और यदि स्वराज्य प्राप्त होता है तो वे उसमें भागीदार होंगे या नहीं? क्या वे अपने अधिकारोंकी मांग नहीं करेंगे? यदि मुसलमान कहते हैं कि यह उनका देश नहीं है और यदि उनके प्यारे अंग्रेज लोग यहाँसे जाते हैं तो क्या भारतके मुसल-मान भी उनके साथ जायँगे? मेरा कहना है कि वे उन अंग्रेजोंसे पूछकर देख लें कि क्या वे उनको अपने साथ जहाज़पर सफ़र करने देंगे? जहाँतक मेरा ख़याल है, वे काले आदमियोंको अपने उस जहाज़पर साथ रहनेकी अनुमति नहीं देंगे। जिस प्रकारसे यह देश आप लोगोंका है, उसी प्रकारसे यह हिन्दुओं, पठानों, सिखों और ईसाइयोंका भी है। मैं आपसे यह पूछता हूँ कि क्या अपने देशकी सेवा करना आपका कर्त्तव्य नहीं है? मैं आपका ध्यान इस ओर खींचना चाहता हूँ कि जो समाज समयके अनुसार नहीं चलते, वे नष्ट हो जाते हैं। मैं आपसे यह कहना चाहता हूँ कि पृथ्वीकी कोई शक्ति इस आन्दोलनको रोक नहीं सकती और भारत स्वतन्त्र होकर ही रहेगा। जब भारत स्वाधीन होगा और आप तथा हम इस मुल्कमें रहेंगे तब क्या आपको इस बातपर शर्म नहीं आयेगी कि आपने स्वराज्य-को पानेके लिए कोई कोशिश नहीं की? यह कहना अपमानजनक है कि कांग्रेस हिन्दुओंकी है। कांग्रेसका लक्ष्य भारतको स्वाधीन करना है और इस अत्याचारी

शासनका अन्त करना है। मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि आप रसूल पाकके उपदेशोंको भूल चुके हैं। मैं आपसे पूछता हूं कि 'जिहाद' क्या है ? महान् रसूल-की शिक्षाओंके अनुसार जिहाद अत्याचारी शासकके आगे सत्यको प्रकट करना है। यदि हम मुसलमान हैं तो हमको अपने पैगम्बर रसूलके उपदेशोंके अनुसार चलना चाहिये। आप कुरान शरीफ़का अध्ययन कीजिए और देखिए कि जहाँतक गुलामीका सम्बन्ध है, उसमें हमें क्या उपदेश मिलता है ? आप अपने मौलवियोंसे पूछकर देखिए कि दासता अपमानजनक वस्तु है या नहीं ? हमें इस बातको मह-सूस करना चाहिए कि आज हम लोग गुलाम हैं; कांग्रेस हम लोगोंको इस गुलामी से मुक्ति दिलाना चाहती है। क्या आप इस दासतासे मुक्त होना चाहते हैं ? आज आज़ादीका झण्डा महात्मा गांधीके हाथोंमें है। यह सचमुच हमारे लिए कैसी लघुताकी बात है ? आजादीका यह झण्डा तो मुसलमानोंके हाथोंमें होना चाहिए था, हमको इस आन्दोलनका नेतृत्व करना चाहिए था और संसारके देशोंको हमारे पीछे चलना चाहिए था। हमारे पैगम्बर साहबने हमको यह उपदेश दिया है कि हम सताये हुए लोगोंकी सहायता करें और अत्याचारियोंका नाश करें। आज हिन्दू, मुसलमान, सिख, पारसी और ईसाई सभी सताये हुए लोग हैं और अंग्रेज सरकार उनपर अत्याचार कर रही है जिसने कि हमारे देशमें ही हम सबके सारे अधिकारोंको छीन लिया है। यदि मुसलमान इस संसारमें एक सम्मानपूर्ण जीवन व्यतीत करना चाहते हैं तो उनको सताये हुए लोगोंकी सहायता करनी चाहिए। आपने कुरानमें इसराइलियों और हज़रत मूसाकी कथा पढ़ी होगी। जब उन्होंने इसराइलवालोंको यह आदेश दिया कि वे आगे बढ़कर अत्याचारीका सामना करें तब उन्होंने उत्तर दिया कि उनमें इतनी शक्ति नहीं है और वे शत्रु-के आगे खड़े नहीं हो सकेंगे। इसका फल यह हुआ कि इसराइलियोंको चालीस वर्षोंतक दासताके बन्धनमें रहना पड़ा। इस दासताका कारण उनका आलस्य और उनकी ईश्वरके विश्वासमें कमी थी। इस्लामने हमको सिखलाया है कि ईश्वर ही सर्वोच्च सत्ता है। मुसलमानोंका यह कर्त्तव्य है कि वे सारे विश्वमें ईश्वर और मनुष्यकी अभिन्नताके सिद्धान्तका प्रसार करें। वे राष्ट्र, जो आलसी हो जाते हैं, संसारमें अपना सब कुछ खो बैठते हैं। यदि आप इस संसारमें सम्मानके साथ रहना चाहते हैं तो जाग्रत रहिए और अपने समाजको संगठित कीजिए। आपको अपने बन्धुओंकी सहायता करनी चाहिए और अत्याचारी शासनको हटा देना चाहिए जो कि हम सबके ऊपर अपना अधिकार जमाये हुए है। आप यह क्यों कहते हैं कि हिन्दू बाईस करोड़ हैं और मुसलमान कुल सात करोड़। मैं कहता

हूँ कि संसारमें वहुसंख्यक और अल्प-संख्यकका प्रश्न ही नहीं उठता। वहाँ तो योग्यताके आधारपर मूल्य आंका जाता है। भारतमें इस समय केवल तीन लाख अंग्रेज हैं लेकिन वे वत्तीस करोड़ हिन्दुस्तानियोंपर शासन कर रहे हैं। यह सव अजीव ख़यालात इस सरकारने मुसलमानोंके मनमें उपजाये हैं। यह वहु-संख्या या अल्प-संख्याका प्रश्न नहीं है। यदि आप संगठित होकर अपने भीतर काफ़ी शक्ति पैदा कर लेते हैं तव जो कुछ भी आप चाहेंगे वह सव आपको मिलेगा। जो मार्ग आपने ग्रहण किया है वह आपको विनाशकी ओर ही ले जायगा। इस मार्गपर चलकर संसारके अनेक राष्ट्रोंका नाम-निशान मिट गया। केवल वे ही राष्ट्र, जो प्रयत्नशील होते हैं, आजके विश्वमें जीवित रह पाते हैं। यदि आप इस संसारमें अपने अस्तित्वको क़ायम रखना चाहते हैं तो आप अपने-को संगठित कीजिए और अपने देशको स्वतंत्र कीजिए। मुसलमान, सिख, पारसी और ईसाई सभी पीड़ित जन हैं। हमारा धर्म हमें यह शिक्षा देता है कि हम पीड़ितोंकी सहायता करें। हम उसे नहीं करते और आपसमें लड़ते-झगड़ते हैं। मैं आपसे पूछता हूं कि ये सव झगड़े कौन करा रहा है ? मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि ये सव झगड़े अंग्रेजोंके उकसानेसे होते हैं। सन् १९१५ में, जव कि नित्य होती हुई डकैतियोंको रोकना वहुत आवश्यक हो गया था, उस समय तो हम अंग्रेज़ोंके साथ थे। देशके जिस भागमें हम रहते हैं उसमें शायद ही कभी कोई ऐसी रात गयी हो, जिसमें पाँच-छः डकैतियाँ न हुई हों। एक वार जव मिस एलिसको अफ़रीदी लोग उठा ले गये तो उसको वापस लानेके लिए कोई उपाय वचाकर न रखा गया। उसके वादसे सुरक्षाका प्रवन्ध हुआ और कोई स्त्री भगायी न जा सकी। अंग्रेजी सरकारने मिस एलिसकी इस घटनापर हज़ारों रुपये खर्च किये और भगानेवालोंको मार डाला गया। ऐसा क्यों ? उसी सरकार ने हम लोगोंके लिए तो कभी कुछ नहीं किया। उसका सम्वन्ध केवल अपनी सुरक्षासे रहा। मैं सरकारसे यह कह देना चाहता हूँ कि यदि वह शान्ति वनाये रखनेमें असमर्थ है तो अपने अधिकार हम लोगोंको सौंप दे। हम उसे यह दिखला देंगे कि शान्ति कैसे वनाये रखी जाती है। मैं आपको सचेत कर देना चाहता हूँ। यहाँ ऐसी कोशिशें की गयी हैं कि हिन्दू और मुसलमान आपसमें लड़ें-झगड़ें। जवतक गोलमेज़ कान्फ़ेन्स वुलानेकी वात सामने नहीं आयी थी तव-तक हम लोगोंको आपसमें लड़ानेके प्रयत्न किये जाते रहे। अंग्रेजोंने अव इस उद्देश्यको लेकर हमसे सन्धि कर ली है।

"मस्जिदके सामने गाना-वजाना होता है तो उसपर मुसलमानोंको आपत्ति

होती है। यदि कहीं वहाँ वाजा वजता है तो मुसलमानोंका इस्लाम लोप हो जानेकी आशंका होती है। पीपलका एक पत्ता गिर जाता है तो हिन्दुओंको आपत्ति होती है। यह सब क्या है ? मैं कहता हूँ कि एक गुलामका कोई धर्म नहीं होता। जव यहाँ फौजी कानून लागू हो जाता है तो यहाँ कोई 'अज़ान' भी नहीं लगा सकता। धर्म नष्ट तभी होता है जव कि किसी मस्जिदके आगे वाजा वजता है या पीपलका एक भी पत्ता गिरता है। जहाँतक मैंने कुरान और गीताको पढ़ा है, मैंने यह पाया है कि प्रेम ही धर्म है। मैं तो इससे भी आगे बढ़कर यह घोषित करनेको तैयार हूँ कि जिसके दिमाग़में ऐसा पक्षपात भर गया है, वह तो एक इन्सानतक नहीं है। (इसी समय किसीने रोककर प्रश्न किया कि कानपुर और वनारसमें क्या हुआ ?) मेरे मुस्लिम वन्धु यह भी नहीं जानते कि किसी सार्वजनिक सभामे कैसे वैठा जाता है ? मैं यह स्वीकार करता हूँ कि वहुतसी जगह दंगे-फ़साद हुए और वनारस तथा कानपुरमें भी हुए। (फिर एक बार शोर-गुल उठा।) मैं आपसे प्रार्थना करूँगा कि आप ऐसे लोगों से दूर ही रहें जो इस्लामी वेशभूपा पहनकर घृणा फैलाते हैं। वे हम लोगोंको धोखा देते हैं और जनताको उत्तेजित करते हैं। मैं आपसे कहता हूँ कि जो कुछ हुआ और भविष्यमें भी जो कुछ होगा वह अंग्रेजोंके कारण ही होगा। यदि यहाँ कोई मुसलमान है तो वह आगे आये और अंग्रेजोंको हिन्दुस्तानसे वाहर निकाल-कर दिखलाये।

"मैं अपनी वातको अव ख़त्म करूँगा। ज़्यादा वोलकर मुझे दुःख ही होता है। कभी कोई आदमी खड़ा होता है और हिन्दुओंपर आरोप लगाता है कि वे हमें सताते हैं। मैंने एक किताव पढ़ी थी। उसके पढ़नेसे मालूम होता है कि अंग्रेजोंने तुर्कीमें क्या किया ? वहाँ उन्होंने निर्दोप वालकोंको मार डाला, स्त्रियों-के शीलका अपहरण किया और लोगोंको भाँति-भाँतिके कष्ट पहुँचाये। मिस्र, सीरिया, ईरान और अफ़गास्तिानको इस पीड़ादायक स्थितिका सवसे अधिक सामना करना पड़ा। यह सव किसने किया ? मैं कहता हूँ कि यह सव अंग्रेजों-के द्वारा हुआ। शायद अंग्रेज हमारे सम्वन्धी हैं और वे हिन्दू शत्रु, जो हमारे साथ रहते हैं। मैं आपसे कहता हूँ कि यदि आप सात करोड़ मुसलमान संगठित हो जायँ तो सारे इसलामी देशोंकी रक्षा कर सकते हैं। मेरे मुस्लिम वन्धुओ, मैं नेता नहीं हूँ और न मैं यह चाहता हूँ कि आप लोग मेरी 'जय' वोलें। मैं आपसे कह चुका हूँ कि मैं एक सिपाही हूँ। मैं किसीके ऊपर आश्रित नहीं हूँ। ईश्वरने मुझको धन दिया है। मैं अपनी रोटी खाता हूँ और अपने मुल्कके लिए काम

करता हूँ। कुछ लोग मुसलमानों जैसे वस्त्र पहनकर आते हैं और आकर घृणा फैलाते हैं। वे हिन्दुओंको मुसलमानोंसे लड़ानेकी कोशिश करते हैं। कुछ लोग हिन्दूकी वेशभूषामें आते हैं और कहते हैं कि मुसलमानोंने पीपलकी डाल काट ली। वे हिन्दुओं और मुसलमानोंको झगड़ा करनेके लिए उत्तेजित करते हैं। तीसरी ताक़त यह नहीं चाहती कि हम लोग हिल-मिलकर भाई-भाईकी तरह रहें। यदि हममें भाई-चारेकी भावना रहती है तो हमको गुलाम बनाकर नहीं रखा जा सकता। आपने एक शक्तिशाली सरकारके ऊपर जीत पायी है और अब, जब कि सफलताका समय सामने आ गया है, सरकार आपको विभाजित कर देना चाहती है और आपकी सफलताको विफलतामें बदल देना चाहती है। जो कुछ मैंने विचार किया, वह मैंने आपके सामने रखा। अब लाल कुर्तीवाले, जिन्होंने मातृ-भूमिको स्वाधीन करनेकी शपथ ली है, सलामी देंगे।"

५ अप्रैलको स्त्रियोंकी एक सभामें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने स्वाधीनताके राष्ट्रीय आन्दोलनमें प्रमुख भाग लेनेके लिए बम्बईकी महिलाओंके प्रति अपना सम्मान व्यक्त किया। उन्होंने कहा कि हमारे यहाँकी स्त्रियाँ भी आप जैसी ही नारियाँ हैं जिन्होंने पिछले सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें एक मुख्य भूमिका निभायी है। यद्यपि मुस्लिम महिलाओंमें पर्देका प्रचलन है फिर भी वे पीछे नहीं रहीं। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने पर्दा-प्रथाके बारेमें अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि पर्दा मुस्लिम महिलाओंकी प्रगतिके पथमें बाधक रहा है। इस्लामके पुराने इतिहासके संदर्भमें उन्होंने कहा कि प्राचीन इतिहास यह बतलाता है कि जब भी कभी राष्ट्रीय संघर्षका अवसर आया तब महिलाओंने भी अपना बहुत बड़ा योगदान दिया। उन्होंने इस बातपर बल दिया कि वर्तमान सामाजिक प्रथाओंमें आवश्यक सुधार होना चाहिए ताकि मुस्लिम महिलाएँ राष्ट्रके जीवनमें सक्रिय भाग ले सकें।"

उन्होंने इस बातपर बल दिया कि पठान लोग नारियोंको अत्यन्त सम्मानकी दृष्टिसे देखते हैं। एक पठान किसी स्त्रीके सम्मानकी रक्षाके लिए सब कुछ करनेको उद्यत हो जाता है। यहाँतक कि जिस किसी एलिसको कतिपय कबीलेवाले पकड़कर ले गये थे, उसके साथ भी उन्होंने कोई अभद्र व्यवहार नहीं किया। यह पठानोंकी वीरताकी भावनाको प्रदर्शित करता है। कैसी दयनीय बात है कि अंग्रेज लोग पुरुषोचित शौर्य और मर्यादाकी बढ़-चढ़कर बातें करते हैं परन्तु विगत स्वाधीनता संग्राममें जब उनको हमारी वीर महिला सैनिकोंसे व्यवहार करनेका अवसर मिला तब उन्होंने नारी-समाजके प्रति अपनी सम्मान-भावनाका

कोई परिचय नहीं दिया ।

अपने भाषणके निष्कर्ष रूपमें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कहा कि भारतीय महिलाओंने अपने बलिदानोंसे भविष्यमें बननेवाले किसी भी संविधानमें अपने अधिकारोंको सुरक्षित कर लिया है और सीमाप्रान्तके लोग, जो आज भारतकी स्वाधीनताके लिए संघर्ष कर रहे हैं, उनको अधिकार दिलानेके लिए भी लड़ेंगे और प्रयत्न करेंगे कि उनको उनके कार्यका उचित श्रेय प्राप्त हो ।

दिल्लीके लिए रवाना होनेसे पहले ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने मुसलमानोंकी एक विशाल सभाको सम्बोधित किया । उन्होंने कहा कि पिछली सभामें उन्होंने जो कुछ कहा उसको भ्रामक तथ्योंके रूपमें प्रस्तुत किया गया है । उन्होंने कहा, 'मैंने मस्जिदके सामने बाजा बजाने या गानेकी जो बात कही, उसका अर्थ यह निकाला गया कि स्वयं मुझको उसके ऊपर कोई आपत्ति नहीं है जब कि वस्तुतः मेरे कथनका अभिप्राय यह था कि हिन्दू और मुसलमानोंको छोटी-छोटी महत्त्वहीन बातोंको लेकर झगड़ा नहीं करना चाहिए; विशेष रूपसे उस दशामें जब कि दोनों ही परतन्त्रताके बन्धनोंमें जकड़े हुए हैं । स्वाधीनता पा लेनेके बाद इस प्रकारके साम्प्रदायिक दंगोंके अवसर नहीं आयेंगे । ये दंगे केवल इसलिए होते हैं कि देशमें एक तीसरी शक्ति मौजूद है । यह शक्ति दोनों जातियोंके बीचमें शत्रुताकी भावनाका पोषण करती रहती है ।

दिल्लीमें उन दिनों ऑल इंडिया मुस्लिम कान्फ्रेन्सका अधिवेशन चल रहा था । गांधीजीने वहाँ किसी समझौतेपर पहुँचनेके लिए उसके नेताओंसे सम्पर्क स्थापित किया परन्तु उनको सफलता न मिली । कान्फ्रेन्सने स्वतः पृथक् निर्वाचित सदस्योंके पक्षमें घोषणा की और कांग्रेसका विरोध करते हुए अपनेको उसके अनुकूल सिद्ध नहीं किया । मौलाना शौकत अलीने मुसलमानोंकी मांगोंका उल्लेख करते हुए कहा :

"ये मांगें पहली जनवरी सन् १९२९ को मुस्लिम कान्फ्रेन्समें सूत्र-बद्ध की गयी थीं । तत्पश्चात् मुस्लिम लीगने उनको बिना किसी संशोधनके पूरा, ज्योंका त्यों स्वीकार कर लिया और तबसे वे मिस्टर जिनाके चौदह मुद्दे कहलाने लगीं । हम उनपर आज भी दृढ़ हैं ।"

उन्हीं दिनों दिल्लीसे गांधीजीका एक वक्तव्य प्रसारित हुआ, जिसमें उन्होंने यह संकेत किया था कि हिन्दू-मुस्लिम समस्यापर सिख और मुसलमान सर्वसम्मतिसे अपनी जो भी इच्छा व्यक्त करेंगे, उसको वे पूर्ण रूपसे स्वीकार कर लेंगे । हिन्दुओंकी राय लेनेसे पहले उन्होंने इस सिद्धान्तको प्रयोगमें लाना चाहा

था परन्तु वह कार्यान्वित नहीं हुआ। स्वयं उनको भी ऐसा लगा कि साम्प्रदायिकतापर आधारित समस्याके किसी भी समाधानके साथ अपनेको सम्बद्ध करना उनके लिए सम्भव नहीं होगा। ख़ान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँने गांधीजीको पूरा सहयोग दिया।

मौलाना शौकत अली तथा कुछ अन्य नेता अधिकारियोंके सम्पर्कमें थे। शौकत अलीने दिल्लीमें ८ अप्रैलको विदेश-सचिव मिस्टर हॉवैलसे भेंट की। गृह-राजनीतिक विभागकी एक फाइलमें हॉवैलकी एक गोपनीय टिप्पणीने इस भेदको खोला है :

"कल प्रातःकाल मिस्टर शौकत अली मुझसे मिलने आये और मेरी उनके साथ काफ़ी देरतक बातचीत होती रही। अन्य विषयोंपर साधारण चर्चाके बाद अंतमें उन्होंने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ारकी बात उठायी, जिनसे कि मैं समझता हूँ, वे दिल्लीमें भेंट करते रहे होंगे। उन्होंने कहा कि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको अपने नामका तनिक भी मोह नहीं है और न कांग्रेससे उनका अत्यधिक लगाव ही है। वे साधारण रूपसे अधिकारी वर्गसे शान्तिपूर्ण सम्बन्ध रखना चाहते हैं परन्तु उसके रूखे व्यवहारके कारण यह कठिन स्थिति उत्पन्न हो गयी है। मैंने कहा कि स्वाभाविक रूपसे मैं इस घटना-तथ्योंको स्वीकार न कर सकूँगा। मुझे ऐसा लगा है कि खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँ और उनके प्रमुख सहयोगियोंकी वर्तमान प्रवृत्तियाँ पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेशमें, शान्ति स्थापित करनेमें कुछ भी सहयोग नहीं देतीं। चर्चाके दौरानमें मैंने कहा, 'यदि आपका खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके ऊपर कोई प्रभाव है तो आप उनसे यह क्यों नहीं कहते कि वे हिंसाको उत्तेजित करनेवाले कामोंका खुलकर विरोध करें और इस अनावश्यक आन्दोलनको रोकें, जो, यदि अनिश्चित कालतक चलता गया तो निश्चित रूपसे एक कष्टपूर्ण स्थितिको खड़ा कर देगा ? उन्होंने इसका तुरन्त उत्तर दिया, 'आप मुझको वहाँ जाने क्यों नहीं देते ? मैं अपने साथ दो या तीन लोगोंको ले जा सकता हूं। हम लोग वहाँ (पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त) जाकर सम्बन्धित लोगोंको यह समझायेंगे कि उनका कार्य कितना मूर्खतापूर्ण है ?' मैंने उनसे कहा कि मैं आपके सुझाव पर निश्चय ही विचार करूँगा। मैं वहाँ शान्तिपूर्ण स्थितिकी स्थापनाके लिए ही चिन्तित नहीं था अपितु मुझको यह भी चिन्ता थी कि किसी ग़लतफ़हमीके कारण वर्तमान उपद्रव ऐसा रूप न ले ले जिसका सरकारकी स्थितिपर प्रभाव पड़े। उदाहरणके लिए मैंने पिछले दिनों ही अपना यह कर्त्तव्य समझा कि मिस्टर गांधीको वहाँ जानेसे रोक दिया जाय। मुझको यह चिन्ता थी कि यदि मैंने स्वयं

प्रोत्साहित करके उनको वहाँ भेजा तो कहीं अनुचित आरोप लगाकर सरकारकी स्थितिको उघार न दिया जाय अथवा किसी अन्य दिशामें कोई हानि न हो जाय। इसका उन्होंने कुछ गर्मीसे उत्तर दिया : 'गांधी मुसलमानोंके मित्र नहीं हैं और वे सरकारके भी मित्र नहीं हैं। इस मामलेमें हम सरकारकी सहायता करनेको तैयार हैं क्योंकि हमारा विचार यह है कि उसके और हमारे हित एक हैं।' मैंने उनसे कहा कि मैं इसपर सोचूँगा और आपकी यह बात लार्ड विलिंगडनको भी बतलाऊँगा। उन्होंने कहा कि उनके पास मेरा निर्णय शीघ्र ही पहुँच जाना चाहिए क्योंकि यदि वे जाना भी चाहेंगे तो इस मासके अंतमें ही।

"इस प्रश्नपर मैंने इन कागज़ोंपर लिखी हुई टिप्पणीको पढ़ा। मैं भी इस बातके लिए कम उत्सुक नहीं हूँ कि उनको (मौलाना शौकत अलीको) वहाँ (सीमाप्रान्तमें) भेजा जाय। वास्तवमें मैं उनको रोकनेका कोई कारण नहीं पाता। उनकी तथा मि० गांधीकी स्थितिमें अंतर है जिसका प्रभाव पड़ता है। यदि मि० गांधी वहाँ जाते हैं तो समस्त पश्चिमोत्तर सीमाप्रांतमें यह सामान्य धारणा बन जायगी कि हमें शासनमें कांग्रेसका सहयोग लेना पड़ा है और उसको अधिकार देने पड़े हैं। मि० शौकत अलीके जानेकी अपेक्षा इससे कहीं अधिक अनावश्यक उत्तेजना फैलेगी। यह आपत्ति मि० शौकत अलीपर लागू नहीं होती। मैं जो इन दोनोंके प्रति अपने व्यवहारमें जो भेद रख रहा हूँ, उसका औचित्य आगेतक चलता है, जिसको मुझे सोचना है। सीमाप्रान्त जानेके सम्बन्धमें जिस समय मेरी और मि० गांधीकी चर्चा हुई थी उस समय यदि उनको आपत्ति होती तब आज हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्धोंके क्षीण होनेके कारण मेरे वे सब तर्क, जो उस समय मैंने उनके सामने रखे थे, निश्चय ही अधिक पुष्ट होते। इस समय मैं सर फज्ले हसन और मि० एमर्सनकी रायपर निर्भर कर रहा हूँ जिनको कि मैं उनको (मि० शौकत अली) भेजनेके पक्षमें लिख रहा हूँ और जिनको मैं इस टिप्पणीकी एक-एक प्रति भेज रहा हूँ।..."

साम्प्रदायिक प्रश्नके साथ ही उन दिनोंकी आर्थिक स्थिति भी खतरेके संकेत देने लगी थी। कृषिसे उत्पन्न वस्तुओंके मूल्योंमें जो स्थिर रूपसे गिरावट आ गयी थी उसका प्रभाव समूची कृषि-व्यवस्थाको छिन्न-भिन्न करनेकी धमकियाँ दे रहा था। खेतीकी पिछली फसल अच्छी हुई थी और खेतोंमें काफ़ी गल्ला उत्पन्न हुआ था। इससे एक बहुत बड़ी समस्या उठ खड़ी हुई थी। किसानके सामने दो ही रास्ते थे। या तो बढ़ोतरीका अनाज बिलकुल बेचा ही न जाय या बेचा जाय तो असाधारण अल्प मूल्यपर। काश्तकारों और असामियोंके आगे नक़द रुपया

पानेकी बहुत बड़ी कठिनाई आ गयी थी, जिससे कि उनको लगान अथवा माल-गुजारी जमा करनी थी। मार्चमें कराचीमें कांग्रेसका जो अधिवेशन हुआ था, उसमें कांग्रेसके बारह मूल उद्देश्योंमें भू-राजस्वकी पचास प्रतिशत छूट भी शामिल थी। छोटे असामियोंके लिए लगानको बिलकुल ही माफ़ करनेको कहा गया था। भू-राजस्वमें कटौतोके लिए कांग्रेसने भारतभरमें, विशेष रूपसे गुजरात, संयुक्त प्रदेश तथा पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तमें उत्साहपूर्ण अभियान छेड़ दिया था। सरकार पं० जवाहरलाल नेहरू और खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके विरुद्ध कड़ी कार्यवाही करनेकी बात सोच रही थी। गांधीजीने अप्रैल मासमें सरकारको तार द्वारा सूचित किया :

"मैं देखता हूँ कि ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके विरुद्ध एक उत्तेजना फैलायी जा रही है। वे कराचीमें मेरे ऊपर यह प्रभाव छोड़कर गये थे कि अहिंसाके व्रतमें उनकी पूर्ण रूपेण आस्था है। यदि उनके विरुद्ध शिकायतें हों तो उनको मेरे पास भेज दिया जाय ताकि मैं उनसे इस सम्बन्धमें सम्पर्क कर सकूँ। वे विश्वस्त हैं और न्याय पक्षको सरलतासे स्वीकार कर लेते हैं। यदि उनको अपनी सफ़ाईका अवसर दिये बिना ही गिरफ्तार कर लिया गया तो यह एक बड़ी दुःखद बात होगी। लार्ड इरविनकी यह इच्छा कि मैं सीमाप्रान्तमें न जाऊँ, मेरे लिए चिन्ताका एक अतिरिक्त विषय है। निश्चय मानिए, मेरी उपस्थिति वहाँ एक गम्भीर प्रभाव डालेगी।"

पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तके केन्द्रीय जिरगाकी एक विशेष बैठक मई मासके आरम्भमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके सभापतित्वमें उत्मानज़ईमें हुई जिसमें निम्नांकित प्रस्ताव स्वीकृत हुआ :

"यह सभा गांधी-इरविन सन्धिकी पुष्टि करती है और यह घोषित करती है कि अफ़गान जिरगा बड़ी निष्ठाके साथ उस शान्तिपूर्ण वातावरणको बनाये रखनेका प्रयत्न कर रहा है जो दिल्लीके समझौतेके द्वारा बना है किन्तु उसे इस बातका खेद है कि स्थानीय शासन अपनी वास्तविक भावनामें सन्धिकी शर्तोंके पालनमें असमर्थ रहा है।

"यह सभा पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तके सभी जिरगाओंका ध्यान विशेष रूपसे इस ओर आकर्षित करती है कि वे स्थानीय मांगकी पूर्तिके लिए अपनी शक्तिको खादीके उत्पादनमें लगायें और हिन्दू-मुस्लिम एकताके सूत्रोंको दृढ़ करें। केवल इनपर ही राष्ट्रकी सफलता निर्भर है।

"जिरगाका यह निश्चित मत है कि प्रान्तकी स्थानीय संस्थाओंमें जिस मात्रा-

में सुधार लागू किये गये हैं वे यदि जनताकी मांगकी पूर्ति नहीं कर पाते तो वह तबतक असंतुष्ट ही बनी रहेगी, जबतक कि उसमें वे समस्त सुधार नहीं लागू किये जाते जो शेष भारतमें लागू हैं।

"इस प्रदेशके शासनकी भावी रूपरेखाके सम्बन्धमें जिरगाकी राय है कि गोलमेज़ कान्फ्रेन्सकी उप-समितियों द्वारा तैयार किये गये प्रस्ताव इस प्रदेशकी जनताको मान्य नहीं हैं।"

गांधीजीने भारतकी सेवासे निवृत्त होकर विदेश लौटते हुए लार्ड इरविनको १८ अप्रैलको बम्बईमें बिदाई दी और तत्पश्चात् वे निकट भविष्यमें उनके उत्तराधिकारी लार्ड विलिंगडनकी भेंटके आमंत्रणकी प्रतीक्षा करने लगे। भारत-सरकार के सचिवालयने पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तके चीफ़ कमिश्नरको यह सूचना दी :

"लगभग ११ मईको सम्भवतः गांधी शिमला आ रहे हैं। शायद उनकी वाइसरायसे भेंट होगी और प्रत्येक दशामें एमर्सनको भी गांधीके साथ चर्चा करनी होगी। गत चर्चाओंमें एमर्सनने सीमाप्रान्तके मामलेमें सामयिक विषयोंके अतिरिक्त महत्त्वपूर्ण समस्याओंको जान-बूझकर टाल दिया। यदि गांधी स्थानीय सूत्रोंसे ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ारके द्वारा स्थितिकी सूचना न पाते तो यह कभी सम्भव न था कि वे सीमा-प्रान्तके प्रश्नको विशेष रूपसे उठाते। जो भी हो, इस सम्बन्धमें भारत-सरकारका रुख स्पष्ट है। वह अंतिम प्रयत्नके रूपमें ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार की गतिविधियोंको नियंत्रित करनेके लिए, जो पेशेकी दृष्टिसे गांधीके सहयोगी हैं, गांधीकी सहायता चाहेगी। इसका अपना औचित्य है। ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार और उनके संगठनके विरुद्ध कोई क़दम उठानेसे पहले सरकार यह उचित समझेगी कि वह इस सम्बन्धमें गांधीजीको पूर्व-सूचना दे दे। वह, तो भी, वास्तवमें यह अधिक अच्छा समझती है कि गांधीजीकी मध्यस्थताके बिना ही आप ख़ान अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँसे सीधा सम्पर्क करें। यदि सीमा-प्रान्तके मामलोंके निर्णयमें गांधीजीका भाग लेना आवश्यक ही समझा जाय तो यह सुझाव दिया जाता है कि एर्मसन यह कार्य-पद्धति ग्रहण करें :

"(अ) ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँकी गतिविधियों, उनके व्याख्यानों तथा लाल कुर्ती दलकी भर्तीके बारेमें गांधीजीको सूचित कर देना और उनके कारण सीमाप्रान्तके क्षेत्रमें जो असामान्य खतरे उत्पन्न हो सकते हैं, उनको स्पष्ट रूपमें समझा देना।

"(ब) गांधीजीको यह चेतावनी दे देना कि यदि ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ हिंसाके लिए उत्तेजित करनेवाले प्रचारसे अपनेको अलग नहीं कर लेते जैसे वान्ना-

खेल और अपने सहयोगियोंपर यही रुख अपनानेका दबाव नहीं डालते तो इन प्रवृत्तियोंके चलते रहनेसे निकट भविष्यमें या कालान्तरमें कबीलोंमें निश्चय ही एक उपद्रव प्रारम्भ होगा और परिणामस्वरूप सरकार इस बातके लिए विवश हो जायगी कि वह 'क्रिमिनल लॉ अमेण्डमेण्ट एक्ट' के द्वारा आवश्यक कार्यवाही करके उपद्रवको निर्मूल कर दे या इसके अतिरिक्त खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ और उनके संगठनके विरोधमें कड़ा क़दम उठाये ।

"(स) इस स्थितिमें गांधीजी सम्भवतः यह सुझाव देंगे कि उनको सीमा-प्रान्तमें जाने दिया जाय । उनको इसके लिए निश्चित रूपमें अनुत्साहित करना चाहिए । उनसे यह कहा जाय कि वे पत्र-व्यवहार द्वारा खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ-को सलाह दें । सबसे पहली बात यह कि खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ आपसे मुला-क़ात करें और आपसे तथा आपके अधिकारियोंसे सम्पर्क बनाये रखें । दूसरी बात यह कि वे भाषण करना बन्द कर दें और यदि बन्द न कर सकें तो कम अवश्य कर दें और उनमें आपत्तिजनक बातें न कहें……।"

"चीफ़ कमिश्नरने व्यक्तिगत रूपसे तथा अपने स्थानीय अधिकारियों द्वारा खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँसे सम्पर्क स्थापित करनेका प्रत्येक प्रयास किया लेकिन जब कभी भी चीफ़ कमिश्नरने उनको मिलनेके लिए बुलाया, उन्होंने इनकार कर दिया ।" सीमाप्रान्तके अधिकारियोंकी यह शिकायत थी, "आदेशके सर्वथा विप-रीत, उसका उल्लंघन करते हुए खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने एकके बाद अनेक सभाओंमें व्याख्यान दिये; उनके प्रत्येक भाषणमें जातिगत घृणा और विद्रोहकी तीव्र भावना व्यक्त होती है । उन्होंने यह बात खुलकर कही है कि उनका उद्देश्य अंग्रेजोंको भारतसे बाहर निकाल देना है ।"

लार्ड विलिंगडनसे अपनी भेंटके तुरन्त बाद ही गांधीजीने खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ और पं० जवाहरलाल नेहरूको विचार-विमर्शके लिए बारडोली बुलाया । जिस समय खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ रेलके थर्ड क्लासके डिब्बेसे नीचे उतरे, उस समय सरदार पटेल, देवदास गांधी तथा अन्य मित्र स्टेशनपर उपस्थित थे । 'मैं आपको अपने आनेकी खबर नहीं देना चाहता था', उन्होंने कहा, 'लेकिन बारडोली नयी जगह होनेके कारण मुझे तार देना ही पड़ा ।' उनके सामानमें केवल हाथका एक थैला था, जिसमें बदलनेके लिए एक जोड़ी कपड़े तथा कुछ काग़ज़ थे । उनके साथ बिस्तर नहीं था । उन्होंने सरदार पटेलसे पहली बात यह कही कि कुछ समयके लिए वे मित्रोंके साथ मुलाक़ात आदि नहीं कर सकेंगे क्योंकि उनका सारा कार्यक्रम गांधीजीपर ही निर्भर करेगा । वे वापस भी तभी जायेंगे जब कि उनको

गांधीजीसे छुट्टी मिल जायगी । जिस घड़ी वे स्वराज्य आश्रममें पहुंचे उन्होंने अपने चित्ताकर्षक व्यवहारसे सबको आनन्द और सन्तोष दिया । वे इस बातसे बड़े प्रसन्न थे कि उनको बारडोली बुलाया गया । उनके मनमें सन् १९२८ से ही, जबसे कि वह प्रसिद्ध हुई थी, बारडोली देखनेकी इच्छा थी ।

अपने आश्रममें पहुँचनेके कुछ मिनट बाद ही वे बड़े आवेशके साथ उन लोगों के विरुद्ध बोलते दिखलाई दिये जिन्होंने, 'इस्लामको घटाकर 'हाउरी[1]' और 'घिलमा[2]' तक ला दिया था । उन्होंने ज़ोर देकर कहा कि इस्लामका अर्थ ईश्वर की इच्छाके आगे पूर्ण समर्पण है; बिना जाति मत या रङ्गको ध्यानमें लाये हुए उसके प्राणियोंकी सेवाके द्वारा उसकी सेवा करना है तथा सत्य और न्यायके लिए सतत प्रयत्न करना है ।

संधिके अंतर्गत जो शर्तें रखी गयी थीं उनके सम्बन्धमें चर्चा करते हुए ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँने कहा : 'गाधीजीकी आज्ञाके अनुसार हमने प्रायः अपनी समस्त प्रवृत्तियोंको स्थगित कर दिया है । यद्यपि हम खुदाई ख़िदमतगारोंकी भर्ती करते हैं परन्तु थोड़ा-बहुत धरना देनेके अतिरिक्त हमारी गतिविधियाँ प्रायः शून्य हैं । जहाँपर कुछ हलचल है, वहाँ प्रत्येक गाँवमें केवल यही सामान्य कार्यक्रम रहता है कि सप्ताहमें एक बार जुमाकी नमाजके बाद हमारे कार्यकर्त्ता एकत्रित होते हैं । उस समय स्वयंसेवकोंको ड्रिल सिखलायी जाती है । उन लोगों-से यह कहा जाता है कि वे कोई ऐसा कार्य न करें जो कांग्रेस और सरकारके बीचके समझौतेके विरुद्ध हो । यहाँतक कि हम लोगोंने समस्त नारे लगाना भी छोड़ दिया है क्योंकि उनको समझौतेकी भावनाके विरुद्ध समझा जा सकता है । फिर भी दूसरा पक्ष हमको उत्तेजित करता और उकसाता रहता है । एक महीना हुआ, लगभग एक दर्जन विद्यार्थियोंको एक आपत्तिजनक नाटक खेलनेके अपराधमें गिरफ्तार कर लिया गया । हम उनके मुकदमेमें पैरवी कर रहे हैं । मुझको यह कानूनी सलाह दी गयी है कि इस नाटकमें ऐसी कोई बात नहीं है जिसके कारण उसको आपत्तिजनक ठहराया जा सके । परन्तु जनताको उत्तेजित करनेका गिरफ्तारियाँ सबसे छोटा उपाय हैं । ये गिरफ्तारियाँ भी एक विशाल सैन्य-प्रदर्शनके साथ हुई । हथियारबन्द गाड़ियों और सेनाकी टुकड़ियोंने गरीबों-के पशुओंके चारे और दैनिक उपयोगकी वस्तुओंको बलपूर्वक छीनकर फेंक दिया

---

१. हूर ।

२. गिलमा ।

और उनको एक बहुत बड़ी परेशानीमें डाल दिया। कुछ सैनिक तो घोड़ोंपर चढ़कर पतली गलियोंमें घूमे। लोगोंको इन बातोंपर क्रोध आना स्वाभाविक था। यह भी गांधीजीके अनुशासनका ही प्रभाव था जिससे उनको इस अवसरपर अपने अधीन रखा। इस सन्धिके बादमें ऐसी घटनाएँतक हुई हैं कि सैनिक लोगोंके घरोंमें बलात् घुस आये हैं। घरवालेको बिना चेतावनी दिये हुए पकड़-कर बाहर कर दिया गया है। यह भी हिंसाके लिए जनताको उत्तेजित करनेका एक ढंग था, जिसके लिए सालभरके करीबके अनुभवके बावजूद हम मुश्किलसे तैयार थे।'

देवदास गांधीने पूछा, 'आपके प्रान्तमें, आपके विचारमें अहिंसा कबतक बनी रहेगी ?' खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँने कहा, 'मुझको इस बातका निश्चय है कि हम सारे भारतमें गांधीजीके सबसे अच्छे शिष्य सिद्ध होंगे। हमको चाहे कितने ही कष्ट क्यों न सहन करने पड़ें, हम उनके लिए तैयार हैं। गांधीजीके लिए जितने शीघ्र सम्भव होगा, वे हमारे प्रान्तमें पहुँचेंगे और वहाँकी स्थितिको प्रत्यक्ष देखेंगे। मैं चाहता हूँ कि वे सीमाप्रान्तमें जायँ और वहाँके लोगोंके सीधे सम्पर्कमें आयें। गांधीजी वहाँ अवश्य जायेंगे, लोगोंमें बोलेंगे और उन लोगोंको भावी कार्यके सम्बन्धमें आदेश देंगे।'

''क्या अहिंसा मात्र एक साधन सिद्ध होगी ? एंग्लो-इंडियन पत्रों द्वारा 'लाल कुर्ती' आन्दोलनके विरोधमें यह कहकर प्रचार किया जाता है कि इसका उद्देश्य अंग्रेजोंके खिलाफ़ एक उग्र वातावरण खड़ा कर देना है। इस बारेमें आपके विचार क्या हैं ?'' इसके उत्तरमें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कहा :

''मेरी अहिंसा मेरे लिए प्रायः एक निष्ठाकी वस्तु बन गयी है। मैं बहुत पहले-से ही गांधीजीकी अहिंसामें विश्वास कर रहा था लेकिन मेरे प्रान्तमें उसके प्रयोग-को जो अतुलनीय सफलता मिली, उसने मुझको अहिंसाका एक दृढ़ योद्धा बना दिया। मुझे आशा है, यदि ईश्वरकी इच्छा रही तो मैं अपने प्रान्तको हिंसावादी होते नहीं देखूंगा। हमारे यहाँके रक्तपूर्ण झगड़ोंने हमको बदनाम कर डाला है। वास्तवमें हिंसाके कटु परिणामोंको सबसे अधिक हमने ही भोगा है। यों भी हमारे स्वभावोंमें हिंसा-वृत्ति अधिक है। यदि हम अहिंसाकी शिक्षा ग्रहण करते हैं तो वह हमारे हितकी ही बात है। एक बात और भी; पठान क्या प्रेम और उचित तर्कके वशीभूत नहीं हैं ? वह आपके साथ प्रेमसे नरकमें भी चला जायगा लेकिन आप उसको बलपूर्वक स्वर्गमें भी नहीं ले जा सकते। पठानपर प्रेमकी इतनी शक्ति है। मेरी इच्छा यह है कि पठान दूसरोंके साथ वही व्यवहार करना सीखें,

जिसकी वे अपने प्रति दूसरोंसे अपेक्षा करते हैं। सम्भव है कि मैं असफल हो जाऊँ और हिंसाकी एक लहर मेरे प्रान्तको बहा ले जाय परन्तु मैं उसको अपने विरुद्ध भाग्यका एक खेल समझकर ही सन्तोष पा लूँगा। उससे मेरी अहिंसाकी वह अंतिम निष्ठा डाँवाडोल न होगी जिसकी औरोंकी अपेक्षा अपने लोगोंको अधिक आवश्यकता है।

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँने देवदास गांधीके साथ ६ जूनको बारोलीके गाँवोंका दौरा किया। जिस शौर्य एवं साहससे वहाँके ग्रामीणोंने यंत्रणाओंको सहा उसके लिए खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँने उनको बधाई दी। उन्होंने उन लोगोंको सांत्वना देते हुए कहा कि जिन कष्टोंको आपने सहन किया है, वे मेरे प्रान्तके निवासियोंको भी सहने पड़े हैं। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँने उनकी उन भयानक यातनाओंके लिए तनिक भी खेद व्यक्त नहीं किया। जो भी व्यक्ति अत्याचारी शासनके लिए उत्तरदायी होते हैं, उनके प्रति सहज रूपसे अरुचिकी एक भावना रहती है परन्तु खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँने ब्रिटिश शासकोंको इस दृष्टिसे नहीं देखा। उन्होंने यह अनुभव किया कि ईश्वरने तपाकर निखारनेके लिए ही उन ग्रामीणोंको अग्नि-शिखाओंमें डाला था।

सभी गाँवोंकी अपेक्षा उनका ध्यान वेड्छी ग्रामने सबसे अधिक आकृष्ट किया। दिनभर दौरा करनेके पश्चात् उन्होंने देवदास गांधीसे कहा, "मैं चाहता हूँ कि श्रमिकों और कृषकोंके दल वेड्छीसे आदर्श ग्रहण करें। जनताकी उन्नतिको लेकर जो लम्बे-लम्बे भाषण किये जाते हैं और जो वृहदाकार ग्रन्थ लिखे जाते हैं उनकी अपेक्षा यह कार्य, जो यहाँ किया गया है, कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है। वेड्छीके निवासियोंने एक श्रेष्ठ जीवनकी अपनी ख्याति ही नहीं बढ़ायी, उन्होंने अपने पड़ोसके गाँव रानीपरजके उन ग्रामीणोंके जीवनको भी बदल दिया है जिन्होंने परस्पर मिलकर एक मतसे खादीको धारण करने और मादक द्रव्योंका बहिष्कार करनेका व्रत लिया है। यह एक ऐसा कार्य है जो मुझको बहुत प्रिय लगा है।"

आश्रमवासियोंने जब उनसे सार्वजनिक सभामें भाषण करनेको कहा तब वे बोले, 'मैं तो एक सिपाहीभर हूँ। मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप मुझको नेता न बनायें।' अंतमें जब सब लोगोंने अधिक आग्रह किया तब उन्होंने हिन्दुओं और मुसलमानोंकी एक संयुक्त सभामें भाषण किया। इस सभाकी अध्यक्षता कस्तूरबा गांधीने की।

"मुझको यह देखकर अत्यन्त आश्चर्य होता है कि मेरे मुस्लिम बन्धुओंमेंसे

कुछ कांग्रेसके नामभरसे चौंकते हैं। उनका विचार है कि कांग्रेस एक हिन्दू संस्था है इसलिए उनका उससे कुछ सम्बन्ध नहीं है। किसी भी ऐसे संगठनका, जो अपनी प्रकृतिमें मूल रूपेण राष्ट्रीय है, इससे अधिक मिथ्या वर्णन और कुछ नहीं हो सकता। मैं अपने बन्धुओंसे यह निवेदन करूँगा कि कांग्रेसके उद्देश्यों, नियमों तथा उसके संविधानको पढ़ें। संक्षेपमें कांग्रेसका उद्देश्य यह है कि जनता-को दासता और शोपणसे मुक्ति मिले। दूसरे शब्दोंमें कांग्रेसका लक्ष्य यह है कि भारतके करोड़ों भूखे लोगोंको भोजन और करोड़ों नंगे लोगोंको तन ढँकनेको कपड़ा मिले। मैं चाहता हूँ कि आप इस्लामके इतिहासका अध्ययन करें और इसपर विचार करें कि रसूल पाक (मुहम्मद साहव) के जीवनका उद्देश्य, मिशन क्या था : अत्याचारसे पीड़ितोंको मुक्ति दिलाना, निर्धनोंको भोजन दिलाना अथवा नंगोंको वस्त्र दिलाना ही उनका उद्देश्य था। और इसलिए कांग्रेसका कार्य उनके कार्यके अलावा और कुछ नहीं है। उसका इस्लामसे कहीं विरोध खड़ा नहीं होता। यह सब दिनके प्रकाशकी भाँति स्पष्ट है। उसको देखते हुए मैं वास्तवमें यह नहीं समझ पाता कि भला एक मुसलमान कांग्रेससे पृथक् रह ही कैसे सकता है ?

"अब हम अहिंसाके सिद्धान्तको लें। यदि एक मुसलमान या मुझ जैसा पठान उसे अंगीकार करता है तो निश्चय ही इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। वस्तुतः यह कोई नयी 'क्रीड' नहीं है। अबसे लगभग चौदह सौ वर्ष पहले इसे पैगम्बर (मुहम्मद साहव) ने उस समय अपनाया था जब कि वे मक्कामें थे और बादमें वह उन सबके द्वारा अपनायी गयी जिन्होंने अपने कंधेसे अत्या-चारीके जुएको उतार फेंकना चाहा। लेकिन हमने उसको इतना विस्मृत कर दिया कि जब महात्मा गांधीने उसे हमारे सम्मुख रखा तब हमने सोचा कि वे एक नवीन सिद्धांतका उत्तरदायित्व ग्रहण कर रहे हैं अथवा हमें कोई नवीन अनोखा शस्त्र प्रदान कर रहे हैं। उनको एक भूले हुए सिद्धांतको पुनः स्मरण दिलानेवाले और एक राष्ट्रकी पीड़ाके समय उसको औषध रूपमें प्रस्तुत करने-वाले प्रथम व्यक्तिका श्रेय है।

"मैं हिन्दुओं और मुसलमानोंसे यह कहूँगा कि स्वाधीनताका यह संग्राम दोनोंकी मुक्तिके लिए है। इस संघर्षमें भाग लेकर हिन्दू लोग किसीके ऊपर अह-सान नहीं कर रहे हैं और न हिन्दुओंका साथ देकर मुसलमान ही किसीके ऊपर अहसान कर रहे हैं। ऐसे अनेक प्रभाव हैं जो हम लोगोंको विभाजित कर देना चाहते हैं। आप लोग, जो हिन्दुस्तानमें हैं, अफगान-आक्रमणकी पुकारसे परिचित

हैं। हम लोग भी देरसे ही सही हिन्दू-राज्यकी पुकारसे परिचित हुए हैं—धनी हिन्दुओंका, शिक्षित हिन्दुओंका और राष्ट्रवादी हिन्दुओंका राज्य। मैं उन लोगों-से, जो मुझको हिन्दू-राज्यकी चेतावनी देने आते हैं, कहता हूँ कि किसी बिलकुल अजनबीकी अपेक्षा अपने पड़ोसीकी गुलामी अच्छी है।

चेतावनीके संकेत

१९३१

गांधीजी खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके साथ कांग्रेस कार्य-समितिकी ९ जूनकी बैठकमें भाग लेनेके लिए बम्बई चल दिये। जबतक भारतमें पहले हिन्दू-मुस्लिम समस्या न सुलझ जाय तबतक गांधीजी लन्दन जानेके पक्षमें न थे परन्तु समितिने निर्णय किया कि अन्य समस्त स्थितियाँ अनुकूल हैं इसलिए गोलमेज़ कान्फ्रेन्समें गांधीजीको भारतका प्रतिनिधित्व करना चाहिए।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ गांधीजीके साथ ठहरे। बम्बईके पठान बहुत बड़ी संख्यामें उनसे मिलनेके लिए आये। उन्होंने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके आगे झुक-कर और उनके हाथको चूमकर उनके प्रति अपना आदर दिखलाया और फिर वे उनको घेरकर बैठ गये। कुछ लोग तो उनके पास घंटों बैठे रहे। उन्होंने उन लोगोंको उत्तरदायित्वकी भावनाको विकसित करनेका और एक शांत नागरिककी भाँति जीवन व्यतीत करनेका सदुपदेश दिया। ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके प्रति उन लोगोंने जो निष्ठा प्रदर्शित की, वह मर्मको स्पर्श करती थी परन्तु ९ जूनकी रातकी डोंगरीकी सार्वजनिक सभाने उनके मनको अत्यन्त कड़ुवाहटसे भर दिया। यद्यपि उनकी इच्छा उस सभामें जानेकी न थी परन्तु उनको कर्त्तव्यवश जाना ही पड़ा। उनको बहुत पहले दिनमें ही यह पता लग गया था कि आज सभामें किसी-न-किसी प्रकारका उपद्रव होनेवाला है। यदि वे सभामें उपस्थित न होते तो लोगोंको भारी निराशाका सामना करना पड़ता। सभामें विघ्न डाला गया और एक ऐसे निरपराध हिन्दूका क्रूरताके साथ वध कर दिया गया, जो यह ऐलान सुनकर सभामें आया था कि वहाँ पं० जवाहरलाल नेहरू तथा अन्य नेताओंका भाषण होनेवाला है; यह खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके लिए बड़ा पीड़ादायक अनुभव था। उन्होंने अपने दर्द और दुःखको इन शब्दोंमें व्यक्त किया है :

"शत्रुताके इस प्रदर्शनको देखकर मुझको दुःख हो रहा है। क्या आप हम लोगोंका, इस संध्याके अपने अतिथियोंका अपने इस अशिष्ट आचरणसे स्वागत करना चाहते हैं ? क्या स्वयं आप अनुभव नहीं करते कि इस तरहका आचरण आपको अपयशके अतिरिक्त कुछ न दे सकेगा ? यह व्यवहार आपको विनाशके पथपर ही ले जायगा। मैं अत्यंत गम्भीरतासे आपसे यह प्रार्थना करूँगा कि आप

जो कुछ कर रहे हैं, उसपर विचार भी करें। इस अपराधका दोष आप किसी औरपर नहीं मढ़ सकते। यह तो इस्लामकी शिक्षाके अनुकूल आचरण नहीं है।"

बोलते समय उनके मनमें एक तीव्र अपमानकी अनुभूति सजग थी। उसी दिन उनके कानोंमें यह द्वेषपूर्ण आरोप भी पड़ा था कि कुछ मुसलमान कांग्रेससे रिश्वत खाते हैं। उन्होंने इस आरोपका तीखे शब्दोंमें खण्डन किया। इसपर चोट करते हुए उन्होंने निन्दापूर्ण शब्दोंमें कहा :

"मैं मुसलमानोंसे यह कहूँगा कि जो आरोप उनके ऊपर लगाया गया है, उसको ध्यानमें रखकर वे गम्भीरतापूर्वक अपनी स्थितिको सोचें। यदि हम इस दोषारोपणको सत्यरूपमें स्वीकार करते हैं तो इसका अभिप्राय यह होगा कि हम मुसलमानोंमें कर्त्तव्य-ज्ञान नहीं है। हम लोगोंमें देश-भक्ति नहीं है। पैसेके लिए हम सरकारका काम करते हैं और पैसेके लिए ही हम कांग्रेसका काम करते हैं। औरोंपर हम अपना यह कैसा प्रभाव छोड़ रहे हैं! इस घृणित आरोपका अर्थ यही है। यदि आपका यह विचार है कि आपके लिए यह आरोप सही नहीं है तो आप मुझे यह बतलाइये कि देशकी स्वाधीनताके लिए आप क्या कर रहे हैं? इस जगत्में इस्लामका प्रादुर्भाव किस उद्देश्यको लेकर हुआ? पीड़ितों और पददलितोंकी सहायताके लिए ही न? इसीलिए न कि भूखोंको खाना और नंगोंको कपड़ा मिले? क्या आपने इस्लामके इन उद्देश्योंके लिए कार्यरत होकर उसकी शिक्षाओंका पालन किया है? अंग्रेज हम सबके ऊपर शासन कर रहे हैं। उनको आपकी किसी सहायताकी आवश्यकता नहीं है। वे पददलित नहीं हैं फिर भी हम प्रतिपल अंग्रेजोंका साथ देनेके लिए कितने उत्सुक रहे हैं और दुःखकी बात है कि हमने अपने बन्धुओं; हिन्दुओंके प्रति अपने कर्त्तव्यकी जान-बूझकर उपेक्षा की है। स्वाधीनताके संग्रामको चलाते रहनेकी सारी जिम्मेदारी हमने अकेले उनपर डाल दी है। यह इस्लामकी शिक्षाओंको मूल रूपसे अस्वीकार करना है। वे हमको यह बतलाती हैं कि हमको सदैव दुर्बल पक्षका ही साथ देना चाहिए। मुसलमान अपने धार्मिक उपदेशों और विश्वासोंके द्वारा स्वाधीनता-प्राप्तिके लिए किये जानेवाले प्रत्येक प्रयाससे बँधे हुए हैं। और, वास्तवमें, हमें तो इस लड़ाईका नेतृत्व करना था—आगे रहकर रास्ता दिखलाना था। हमारी परम्पराओं और धार्मिक विश्वासोंके अनुसार इससे अल्प स्थान हमारे लिए उन परम्पराओं और विश्वासोंका विरोधी है। हम मुसलमान अपने-आपको इस कर्त्तव्य-भारसे मुक्त कैसे रख सकते हैं? सचमुच हमारी स्थिति बड़ी दयनीय है!"

उन्होंने अपने भाषणके अन्तमें निष्कर्ष-रूपमें कहा :

"हमको, हम लाखों तरुण अफ़ग़ानोंको गुलामीसे घृणा हो चुकी है। इस अपमानको हम अधिक दिनोंतक नहीं झेल सकते। हमको आज़ादी चाहिए। एक मुसलमान गुलाम कभी नहीं हो सकता। हम अत्याचारीका विरोध करना चाहते हैं और पीड़ितको मुक्ति देना चाहते हैं। इस्लामने हमको इसकी शिक्षा दी है और रसूल पाकने इसके ऊपर आचरण भी किया है। यदि कोई पारसी या सिख भाई अंग्रेजोंका विरोध करनेके लिए सामने आता है तब हम पारसी अथवा सिखका पक्ष लेंगे। यदि कोई हिन्दू अंग्रेजोंका विरोध करता है तब हम उसकी ओर होंगे और यदि कोई मुसलमान इसी कार्यके लिए हमारी सहायता चाहता है तो और भी अच्छा है। उसको आगे आने दीजिए। मैं अब अपने भाषणको समाप्त करूँगा। आप मुझको नुक़सान नहीं पहुँचा सकते। ऐसा करके आप अपने-आपको ही हानि पहुँचायेंगे। यदि आपको मेरी सेवाओंकी आवश्यकता है तो मैं तैयार हूँ अन्यथा मुझे उसकी चिन्ता नहीं है। आपको इस बातकी कोशिश करनी चाहिए कि इस तरहकी घटनाएँ आगे न होने पायें, क्योंकि ये सारे मुस्लिम-समाजके लिए अपमानपूर्ण हैं।"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ देवदास गांधीके साथ सत्याग्रह आश्रम देखनेके लिए अहमदाबाद गये। नगरके लघु प्रवासमें वे आश्रममें ही ठहरे। १४ जूनको उन्होंने एक सार्वजनिक सभामें कहा :

"इस सत्याग्रह आश्रमको देखनेकी मेरी तीव्र अभिलाषा थी परन्तु मनुष्य सोचता कुछ और है और ईश्वरकी अभिलाषा कुछ और होती है। कुछ भी हो, अंतमें मैंने यह अवसर प्राप्त कर ही लिया। आप सब लोगोंसे मिलकर मेरा चित्त अत्यन्त प्रसन्न हुआ है। आप सब कर्मशील व्यक्ति हैं अतः मुझे आपसे कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं है। मैं कोई नेता नहीं हूँ और न मैं बनना ही चाहता हूँ। मैं एक मामूली सिपाही हूं। मैं जेलमें दुःख और आनन्दकी मिश्रित भावनाओंके साथ बाहरके समाचार पढ़ा करता था। हमारे स्त्री-समाजपर जो अत्याचार हुआ, उसके वर्णन पढ़कर मेरा मन व्यथासे भर जाता था। मैं सोचता था कि हम पैंतीस करोड़ लोग मनुष्य नहीं हैं बल्कि वाणीहीन, निष्क्रिय व्यक्ति हैं जो मुँहसे बिना एक बात निकाले अत्याचारकी इन घटनाओंको अपनी आँखोंसे देख रहे हैं। मुझको यह विचार करके आनन्द भी होता था कि अत्याचार करनेवाली इस सरकारके अब इने-गिने दिन ही शेष रह गये हैं। यह शासन अब अधिक दिनोंतक चलनेवाला नहीं है। परन्तु भाषण करके या तालियाँ बजाकर इस सरकार-

को इस देशसे नहीं निकाला जा सकता । इसके लिए आपको कार्यमें लगना पड़ेगा । यह सरकार शक्तिके आगे झुकती है । यदि वह यह देखती है कि आप सुसंगठित हैं तो वह आपको माँगोंको सरलतासे स्वीकार कर लेती है । यदि आप अंग्रेजका चुम्बन लेंगे तो वह आपको लात मारेगा । इसलिए आप लोगोंको पूरी तरहसे संगठित होना चाहिए और हिन्दुओं तथा मुसलमानोंके बीच शान्ति तथा मित्रताके सम्बन्ध बनाये रखना चाहिए । हम अफ़गानोंने दिल्लीको लूटनेमें और बगदाद तथा यरूशलमके आक्रमणमें अंग्रेजोंकी सहायता की । लेकिन आप जानते हैं कि इसके बदलेमें हमें क्या मिला ? 'फ्रंटियर क्राइम रेग्यूलेशन', जो कि हम लोगोंके लिए एक धीमे जहरकी भाँति है । हमको अपने विचारोंके आदान-प्रदान-तकका अवसर कभी नहीं दिया गया । अब हमारे बच्चेतक क्रान्तिमें भाग लेनेके लिए उत्सुक हैं । अंग्रेज हमको यह धमकी दिया करते थे कि भारत अच्छी तरह-से संगठित है । यदि पठानोंने अपना सिर उठाया तो वहाँके लोग हमको अपने अधीन कर लेंगे । इसी प्रकार उन्होंने हिन्दुस्तानियोंसे कहा कि पठान बड़े शक्तिशाली लोग हैं और वे भारतपर चढ़ाई कर देंगे । लेकिन आप जानते हैं कि हम लोग भी इंसान हैं । हम गुलाम हैं और हम आजाद होना चाहते हैं । अपने लक्ष्यकी प्राप्तिके लिए हमको मिलकर साथ-साथ काम करना चाहिए । सन्धिका यह समय अल्प कालके लिए है । हमको भविष्यके लिए अपने-आपको तैयार रखना चाहिए । हमारी सन्धि हो चुकी है इसलिए हमको आलस्यमें बैठे नहीं रहना चाहिए । यदि गोलमेज़ कान्फ्रेन्स असफल हो जायगी तो हमारी लड़ाई फिर छिड़ जायगी । इसलिए यह हमारा कर्त्तव्य है कि हम इस स्थितिके लिए अपनेको तैयार रखें । मैं स्वयंसेवकोंकी भर्ती कर रहा हूँ । स्वतन्त्रताकी लड़ाईमें हिन्दू, मुसलमान, पारसी और ईसाई—कोई भी क्यों न हों, मैं सबकी सहायता करूँगा । मैं हिन्दुओं और मुसलमानोंको यह सलाह दूँगा कि वे आपसमें लड़ें-झगड़ें नहीं । इस बातका बहुत कम महत्त्व है कि हिन्दूराज होता है या मुस्लिमराज । जब हम सभी गुलाम हैं तो हमको अपनी गुलामीको दूर करना ही चाहिए और अंग्रेजोंको इस देशसे बाहर निकालना ही चाहिए । मैं आपको यह भी सलाह दूंगा कि आप कठोर अनुशासनका पालन करें । हमको इस बातपर ध्यान नहीं देना चाहिए कि सरकार सन्धिकी शर्तोंकी अवहेलना कर रही है । हमको अपने कर्त्तव्य-पालनसे च्युत नहीं होना है ।"

देवदास गांधी खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँको बोरसद ज़िले और बड़ौदा राज्यके गाँवोंके दौरेपर ले गये जहाँ कि उन्होंने कई सार्वजनिक सभाओंमें भाषण किये ।

जूनके तीसरे सप्ताहमें सीमाप्रान्तके लिए चल दिये। रास्तेमें उन्होंने अजमेर और दिल्लीमें सार्वजनिक सभाओंमें भाषण किये। उन्होंने २१ जूनकी अजमेरकी सार्वजनिक सभामें कहा :

"मैं नेता नहीं हूं। यह शब्द कहकर मैं अपने-आपको छोटा नहीं कर रहा हूं। मैं जहाँ भी जाता हूँ, वहाँ मुझको दो कार्य करने पड़ते हैं। एक तो मुझको अपने लिए आयोजित जुलूसमें भाग लेना पड़ता है और दूसरा सभाओंमें भाषण करना होता है। इन दोनों कार्योंमेंसे एक भी मेरी रुचिके अनुकूल नहीं है। उन राष्ट्रोंने, जो बहुत लम्बी-चौड़ी बातें करते हैं, कभी कोई ठोस कार्य नहीं किये। आप भाषणोंके ज़रिये स्वतंत्रताकी लड़ाईको नहीं जीत सकते। उन लोगोंको, जो ईश्वरपर भरोसा करके अपने देशकी ईमानदारीसे सेवा करनेके लिए उठ खड़े होते हैं, निश्चित ही सफलता प्राप्त होती है। मैं मुसलमानोंसे यह कहना चाहता हूँ कि वर्तमान आन्दोलन उससे भिन्न नहीं जिसे मक्कामें रसूल-पाकने प्रारम्भ किया था। आज भी अत्याचारी और शोषितके मध्य वैसा ही संघर्ष चल रहा है, जैसा कि उनके समयमें था। क्या भारत केवल हिन्दुओंके लिए रहेगा? नहीं। वह दोनों जातियोंके लिए होगा। आपको मिलकर खड़ा होना चाहिए। आपने अभी अंग्रेजोंको अच्छी तरहसे समझा नहीं है। वे हिन्दुओं और मुसलमानों में साम्प्रदायिक मतभेद उत्पन्न कराते हैं। हमने अंग्रेजोंको पूरी तरहसे समझ लिया है। हमने अपने पवित्र स्थलोंपर उनका झण्डातक लहराया। जितनी ही आप उनकी खुशामद करेंगे उतना ही वे आपका निरादर करेंगे। अंग्रेज भारतमें सभ्यताको लानेका दावा करते हैं परन्तु उन्होंने सीमा-प्रान्तमें शान्तिके साथ धरना देनेवालोंतकको गोलीसे मारा। हमने उनकी जो सेवाएँ की थीं उनके बदलेमें हमें यह मिला। हमने 'खुदाई ख़िदमतगार' आन्दोलन प्रारम्भ किया। अंग्रेजोंने हमारे विरुद्ध यह प्रचार प्रारम्भ किया कि हम लोग उनके प्रति वफ़ादार नहीं हैं। हम मिलकर काम नहीं कर सकेंगे। इसलिए उन्होंने हमको 'लाल कुर्तीवाला' नाम दिया। हमारा आन्दोलन तेज़ीसे फैल गया और अब वे हमारे मित्र बनना चाहते हैं। एक सज्जनने, जिनका नामोल्लेख मैं नहीं करना चाहता, मुझसे यह कहा कि उन्होंने हमारी वाइसरायसे सिफ़ारिश की है। मुझे उनपर हँसी आयी क्योंकि जब हम शक्तिशाली हो गये तब अंग्रेज स्वतः ही हमारे मित्र बनना चाहते हैं। वे अब हमारे चचेरे भाई बन गये हैं। यदि आप लोग सशक्त हैं तो निश्चय ही प्रत्येक व्यक्ति हमारी मांगोंको स्वीकार कर लेगा। अंग्रेज आचरणसे भ्रष्ट हैं। आप अपनी शक्तिको बढ़ाइए और अपनी लड़ाईको जारी रखिए और तब आप निश्चित ही

सफल होंगे ।"

२३ जूनको दिल्लीमें भाषण करते हुए सबसे पहले उन्होंने पत्रकारोंसे निवेदन किया कि उनके तथ्योंको भ्रामक रूपमें प्रस्तुत न किया जाय। उन्होंने कहा : "मैं अंग्रेजी समचार-पत्रोंके और विशेष रूपसे 'टाइम्स ऑफ इण्डिया' के सम्बन्धमें कुछ शब्द कहना चाहूँगा जिसने कि मेरे अहमदाबादमें किये गमें भाषणको एक अलग ही रङ्ग दिया है। इस पत्रने मोटे शीर्षक देकर यह प्रकाशित किया है कि मैं ब्रिटिश शासनका नाश चाहता हूँ परन्तु उसने यह स्पष्ट नहीं किया कि मेरी यह इच्छा क्यों है और अफ़गान ब्रिटिश सरकारके विरोधी क्यों हैं? हमने भी इस सरकारको अपनी महती सेवाएँ अर्पित की हैं। हमने उनकी आज्ञा स्वीकार करके दिल्ली, बग़दाद, यरूशलम और यहाँतक कि मक्कापर भी हमले किये हैं। इसके अतिरिक्त मैं आपको यह भी बता देना चाहता हूँ कि यदि कभी कोई विशेष स्वादिष्ट पदार्थ हमारे पास आया है, तब हमने स्वयं उसे नहीं चखा है और न उसको अपनी पत्नियों और बालकोंको दिया है, बल्कि उसको अंग्रेजके पास ले गये हैं और कहा है कि इसे आप खाइये। परन्तु बदलेमें उन्होंने हमको 'फ्रन्टियर क्राइम रेगूलेशन (सीमा-प्रान्त अपराध-विनियम) दिया। उदाहरणके रूपमें मैं आपको आगे हबीब नूरका एक मामला रख रहा हूँ जिसने खुदाई खिदमतगारोंपर अत्याचार करनेवाले अंग्रेज असिस्टेन्ट कमिश्नर (सहायक आयुक्त) को गोलीसे मार देनेका प्रयत्न किया और जिसको बिना मुक़दमेके—बिना विचारणाके तुरन्त फांसीके तख्तेपर लटका दिया गया। क्या इन दिनों आप यह कल्पना भी कर सकते हैं कि जंगलीसे जंगली लोगोंतकमें ऐसे कानून प्रचलित किये जा सकते हैं? सारे भारतमें सुधार लागू किये गये परन्तु हमको उनसे वंचित कर दिया गया। वह तो अब हम अंग्रेजोंको समझ सके हैं, लेकिन मैं यह नहीं जानता कि आप भी उनको समझ सके हैं या नहीं क्योंकि उनके साथ आपकी घनिष्ठ मित्रता है।"

"अंग्रेजोंका स्वभाव अत्यंत विलक्षण है।" उन्होंने कहा, "यदि आप उनकी प्रशंसा करेंगे तो वे आपको बड़ी निर्दयतासे अपने बंगलेसे ठोकर मारकर निकाल देंगे और जोरसे चिल्लाकर कहेंगे, 'निकल जाओ, काले आदमी!' परन्तु यदि आप अपनेको संगठित करेंगे और अपने अधिकारोंकी मांग करेंगे तो उनकी यह प्रकृति है कि वे आपके सामने झुक जायँगे। मैंने अपने भाषणमें कहा था कि हम अंग्रेजोंको समझ चुके हैं और हमारे नन्हें बच्चे भी उनके खिलाफ़ हो गये हैं। मैं आपको एक उदाहरण दूंगा। २९ मईको हम सीमाप्रान्तके एक गाँवमें अपने

प्रचार कार्यके लिए गये। हमसे एक छोटा-सा बालक आकर मिला जो कि भर्ती-के लिए अपना नाम लिखाना चाहता था। मैंने उस बालकसे पूछा कि मैं उसका नाम कहाँ लिखूँ ? उसने उत्तर दिया, 'इन्क़िलावमें'। यह सुनकर मैंने पुलिसके इंस्पेक्टरकी ओर देखा, जो कि हमारे साथ था। मैंने उससे कहा कि वह यह बात अपनी डायरीमें लिख ले कि एक पठान बालकतक 'इन्क़िलाव' चाहता है। मैंने उससे केवल इतना कहा लेकिन उसने इससे एक लम्बी कहानी गढ़ ली। मैंने मुसलमानोंसे यह कह दिया कि यदि आप लोग अंग्रेजोंका साथ देना चाहते हैं और इस आन्दोलनको कुचल देना चाहते हैं तो आपको सफलता नहीं मिलेगी। अंग्रेज अब शिथिल हो चुका है। वह अब अधिक समयतक यहाँ नहीं रह सकता। वह यहाँ रह ही कैसे सकता है जब कि पठानों जैसी विश्वस्त जाति अपनी स्त्रियों और बच्चोंतकके साथ उसकी विरोधी हो चुकी हो ? अंग्रेज झुकेगा और निकट भविष्यमें ही यह देख लेगा कि 'इन्क़िलाव' कैसा होता है ? पृथ्वीपर कोई ऐसी शक्ति नहीं है जो 'इन्क़िलाव' को रोक सके। उसके लक्षण तो आप आज भी देख रहे हैं।"

"मेरे मुसलमान बन्धुओ, मैं आपसे एक निवेदन करना चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि इसे हिन्दू लोग भी सुनें।" उन्होंने अपना भाषण जारी रखते हुए कहा, "मैं आपसे पूछ रहा हूँ, आप प्रायः यह कहा करते हैं कि एशिया अध्यात्मकी भूमि है। आपका धर्म आपको क्या सिखलाता है ? क्या किसी धर्मने किसी राष्ट्रको यह सिखलाया कि वह दासत्वको स्वीकार करे ? मैं कहता हूं कि प्रत्येक धर्मका मूल सिद्धांत मुक्त रहना है। वह उत्पीड़ितकी सहायता करनेकी शिक्षा देता है, अत्याचारीके विरुद्ध युद्ध छेड़नेका आदेश देता है। यह किसी भी मुसलमानकी इच्छापर निर्भर है कि वह अपने धर्मके आदेशानुसार किसी अंग्रेजका गुलाम रहे या स्वाधीन। हमने—हम अफ़गानोंने अबतक केवल अंग्रेजोंका दास बनना ही सीखा है परन्तु आज हम इस दासतासे छुटकारा पानेके लिए उत्सुक हैं। क्या मैं आपसे पूछ सकता हूँ कि यदि आपका धर्म आपको मुक्त रहनेकी सीख देता है तो आपने इस दिशामें कौनसे कदम उठाये हैं ? इस लक्ष्यकी प्राप्तिके लिए आपने कौनसे प्रयास किये हैं ? स्वतंत्रताकी उपलब्धिके लिए आप कौनसे रचनात्मक ठोस कार्य कर रहे हैं ? जब हम अफ़गानोंके पास कोई संगठन न था, जब हम लोगोंमें पर-स्पर एकता न थी, जब हमारे राजनीतिक आन्दोलनको बल नहीं मिला था तब हमारी ओर कोई देखतातक नहीं था। अब, जब कि हम कुछ कार्य कर चुके हैं और जब हमने कुछ शक्ति अर्जित कर ली है, तब अंग्रेज हमसे पूछते हैं, 'आप

क्या चाहते हैं ? आप लोग हमसे क्रोधित क्यों हैं ?' आप जो कुछ भी पाते हैं, शक्तिके द्वारा पाते हैं। कोई राष्ट्र तभी जीवित रह सकता है, जब कि उसके पास पर्याप्त शक्ति हो। आप कुरानको पढ़िए। उसमें ऐसे पतनोन्मुख राष्ट्रोंके अनेक उदाहरण मिलते हैं जिन्होंने कापुरुषता, दुराचार वृत्ति और विलासका जीवन व्यतीत कर अपने अस्तित्वको नष्ट कर दिया है। आप अपने तरुणोंमें राष्ट्रके प्रति एक निष्ठा और स्वाधीनताके प्रति एक लगन जाग्रत कीजिए और इन्हीं युवकोंके द्वारा आप शक्ति अर्जित करेंगे। अंग्रेज अब थक चुका है। वह यहाँ अधिक दिनोंतक नहीं रह सकता। उसके लिए अपनी स्वयंकी रक्षा करना ही कठिन हो रहा है, वह भला आपकी रक्षा कैसे कर सकेगा ? यह देश आपका और हिन्दुओं का दोनोंका है। आप लोगोंको कंधेसे कंधा मिलाकर कार्य करना चाहिए और अपनी मातृभूमिको दासताके कलंकसे मुक्त करना चाहिए।"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ जूनके तीसरे सप्ताहमें सीमाप्रान्तमें लौट आये। २५ जूनको डेह बहादुरमें उनके सम्मानार्थ एक सभाका आयोजन हुआ जिसमें छः हज़ारसे भी अधिक लोग उपस्थित थे। उनमें तीन हज़ार खुदाई खिदमतगार और दो सौ महिलाएँ थीं। इस सभामें उन्होंने अपने दो सहयोगियोंकी गिरफ्तारी-का उल्लेख करते हुए कहा कि सरकार सन्धिकी शर्तोंको भंग कर रही है और इस प्रकार जनताको उत्तेजित करना चाहती है ताकि आन्दोलनके दमनके लिए उसको कोई बहाना मिल सके। उन्होंने जनताको हिंसात्मक कार्योंसे दूर रहनेकी चेतावनी दी। उन्होंने उसे सन्धिकी शर्तोंका कठोरतापूर्वक पालन करनेकी सलाह भी दी। उन्होंने कहा कि जनता ब्रिटिश सत्ताके भवनकी नींवको हिला चुकी है। उन्होंने पुलिस विभागके सरकारी संवाददाताओंसे अपने इन शब्दोंको लिख लेने-के लिए कहा और यह भी कहा कि वे उनको अपने अधिकारियोंतक पहुँचा दें। जनता अब जेलों और मशीनगनोंसे डरती नहीं। जिस कार्यको उसने प्रारम्भ किया है, उसे वह पूर्ण करेगी ही। उन्होंने इस बातकी वकालत की कि स्त्रियोंको भी आन्दोलनमें भाग लेना चाहिए।

वे सीमा-प्रान्तकी जनतामें उत्साहकी एक लहर जाग्रत करते हुए और खुदाई खिदमतगारोंका संगठन करते हुए एक जगहसे दूसरी जगह गये। उन्होंने अनेक स्थानोंपर सभाओंमें व्याख्यान दिये—कभी आधी रातमें, कभी दोपहरमें और कभी सबेरे। उनमें उन्होंने लोगोंको सक्रिय होनेके लिए कहा। जनता अपने बादशाह खानको एक विलक्षण पुरुष समझकर, उनके भाषणको सुननेके लिए, बहुत बड़ी संख्यामें दूर-दूरसे आती थी। उनके दर्शन करके उसको धैर्य प्राप्त होता था।

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके प्रति उसका प्रेम असीम था। जनता 'फख्र-ए-अफ़गान' को एक संत समझने लगी। जिन कुओंका वे पानी पी लेते थे, उन्हें भीड़ घेर लेती थी और तत्काल रीता कर देती थी। उसका विश्वास था कि इस जलसे उसकी रोग-मुक्ति हो जायगी। अनेक रोगोंके निवारणके लिए उनके दर्शन औषध-के समान समझे जाने लगे थे। अपने प्रति इस विश्वासके लिए उन्होंने लोगोंको अनुत्साहित किया। एक सार्वजनिक सभामें उन्होंने कहा : "मेरी दृष्टिके आगे दो लक्ष्य हैं, एक देशको स्वतंत्र करना और दूसरा भूखोंको रोटी तथा नंगोंको वस्त्र देना। दूसरे अर्थोंमें स्वाधीनता इस्लाम है और इस्लाम स्वाधीनता है। जबतक आपको स्वाधीनताकी प्राप्ति न हो तबतक आप चैनसे न बैठिए। इसकी परवाह न कीजिए कि आपपर बम फेंके जाते हैं या तोप अथवा बन्दूकोंसे आपको भूना जाता है। अंग्रेजोंका, जो सारे कष्टोंके मूल कारण हैं, डटकर मुकाबला कीजिए। मित्र और शत्रुके बीच पहचान कीजिए। कांग्रेस एक हिन्दू संगठन नहीं अपितु एक राष्ट्रीय संस्था है। यह हिन्दू, मुसलमान, सिख, यहूदी, ईसाई और पार-सियोंका मिला-जुला जिरगा है। वह ब्रिटिश सत्ताके विरोधमें अपना कार्य कर रहा है। ब्रिटेन भारतका और पठानोंका शत्रु है। इसीलिए मैं कांग्रेसमें शामिल हो गया हूँ। आपको भी मेरे साथ मिलकर कार्य करना चाहिए। आप ऐसी कोशिश करें कि अंग्रेज जनतामें फूटकी भावनाको फैला न सकें।

खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँको पठानोंकी ओरसे पूरी तरहसे अनुकूल प्रत्युत्तर मिला। उनके परिवारके प्राय: प्रत्येक व्यक्तिने राष्ट्रीय आन्दोलनमें सक्रिय भाग लिया। उन लोगोंमें उनकी बहिन भी थीं जिन्होंने कि विशाल जन-सभाओंमें भाषण किये। डा० खान साहबने अपनी सारी शक्ति आन्दोलनमें लगा दी। सरकार भयसे त्रस्त हो उठी। उसने आपसी कलहके बीज बोनेकी कोशिश की, सुधारोंका प्रलोभन दिया। प्रतिद्वन्द्वी संगठन खड़े किये। खुदाई खिदमतगार आन्दोलनके सम्बन्धमें भ्रामक विचार फैलाये और बलप्रयोग किया। यहाँतक कि खान बन्धुओंपर प्रभावशाली मुस्लिम नेताओं द्वारा जोर डलवाया गया। अंग्रेज यह चाहते थे कि खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ कांग्रेसकी मान्यताको स्वीकार न करें तथा अपने दौरोंको रोक दें।

सीमाप्रान्तमें उन्होंने चमत्कार कर दिखलाया। उनमें एक चमत्कार महिला समाजकी जाग्रति भी थी। भाईजईकी महिलाओंकी एक सभामें अपने मानपत्रका उत्तर देते हुए खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कहा :

"मेरी बहनो, इस स्नेहपूर्ण मानपत्रके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।

यह पहला अवसर है जब कि मुझको एक नवीन, अनूठे सुखका अनुभव हो रहा है। इसका कारण यह है कि मैं जब कभी भारतमें गया तो मैंने वहाँ हिन्दू और पारसी महिलाओंमें राष्ट्रीय जागरण और देशभक्तिकी भावना देखी। उसे देखकर मैं अपने मनमें कहा करता था कि क्या कभी ऐसा अवसर भी आयेगा जब कि हमारी पख्तून नारियाँ भी जाग्रत होंगी और राष्ट्रसेवाके हेतु कमर कसकर तैयार होंगी? मैं इस आकांक्षाको बहुत दिनोंसे अपने मनमें सँजोये हुए था। आज ईश्वरको धन्यवाद है कि मेरी कामना पूर्ण हुई। यह उसीकी अनुकम्पा है कि हमारी अबोध और अशिक्षित महिलाएँ राष्ट्रसेवाके उद्देश्यको लेकर प्रत्येक सेवा-कार्यके लिए तैयार हैं।

"ईश्वरने पुरुषों और स्त्रियोंमें कोई भेद नहीं किया। यदि कोई दूसरेसे आगे बढ़ना चाहता है तो वह केवल अच्छे विचारों और श्रेष्ठ आचारको लेकर ही बढ़ सकता है। यदि आप इतिहासका अध्ययन करें तो आपको मालूम होगा कि महिलाओंमें भी अनेक विदुषियाँ और कवयित्रियाँ हुई हैं। हमने महिलाओंको हेय दृष्टि से देखा है। यह हमारी एक बहुत बड़ी भूल है। यदि आप अपनी तन्द्राको त्यागें, गाँवोंका दौरा करें और अपनी अबोध तथा पीड़ित बहनोंमें जागति उत्पन्न करें तो इससे आपका स्तर ऊँचा उठेगा।

"खुदाई खिदमतगारोंकी सेवाओंके कारण आज सर्वत्र पठानोंको आदरकी दृष्टिसे देखा जाने लगा है। वे आपके बालक हैं और आपके बन्धु हैं। हम उस प्रत्येक बहिन और माताको बधाई देते हैं जिसके भाइयों और बेटोंने सुर्ख वर्दीको पहना है और जो राष्ट्रकी सेवाके लिए कमर कसकर तैयार हैं।

"यदि आप इस्लामके इतिहासका अध्ययन करें तो आप देखेंगी कि पुरुषों और महिलाओंने इस्लामकी समान रूपसे सेवा की है। इसलिए राष्ट्रकी सेवामें आप मेरा साथ दीजिए। मैं गम्भीरताके साथ आपको वचन देता हूँ कि यदि हमको सफलता मिली और मातृभूमि स्वाधीन हुई तो आपको आपके सारे अधिकार दिये जायँगे। कुरान पाकमें आपको पुरुषोंका समान पद दिया गया है। आज आप पीड़ित हैं क्योंकि पुरुषोंने ईश्वर और पैगम्बर (मुहम्मद साहब) की आज्ञाओंकी अवहेलना की है। आज हम 'रिवाज़'—रीतियों और प्रथाओंके अनुयायी हैं और हम आपको सता रहे हैं। लेकिन ईश्वरको धन्यवाद है कि हमने यह समझ लिया है कि हमारा और आपका लाभ और हानि, उत्थान और पतन वस्तुतः एक है। आपको यह जान लेना चाहिए कि यदि आप हमारे साथ राष्ट्र-सेवाका संकल्प करती हैं तो निश्चित ही आपकी स्थितियोंमें सुधार होगा।

९ जुलाईको कोहाटकी एक मस्जिदमें आयोजित सभामें उन्होंने कहा :

"मैं आपको यह स्पष्ट समझा देना चाहता हूं कि ये लाल कुर्तीवाले कौन हैं और वे लाल रंगके वस्त्र क्यों पहनते हैं ? कुछ मुल्लाओंने यह निश्चय किया है कि ये लोग अपनी लाल वर्दीको पहनकर मस्जिदोंमें नमाज नहीं पढ़ सकते। यह एक प्रकारसे अंग्रेजोंका पक्ष लेना है। मैं पूछता हूँ कि इसमें अनुचित क्या है ? यदि उससे हमारी आज़ादीकी लड़ाईमें मदद मिलती है तो मुल्ला लोग जो भी वतलायें हम वही वस्त्र पहननेको तैयार हैं। क़ुरानमें यह लिखा है और रसूल पाक़ने भी कहा है कि एक गुलाम देश धरतीपर एक शापकी तरह है। प्रत्येक धर्म स्वाधीनता, शान्ति और समताको लेकर खड़ा है। ये लाल कुर्तीवाले; खुदाई खिदमतगार ईश्वर और देशकी सेवा करते हैं। ये लोग वर्दी पहनते हैं, इसलिए नहीं कि इनको सरकारसे कुछ सौ रुपये वेतन मिलते हैं बल्कि इसलिए कि वे एक 'मुज़ाहिद' वनकर राष्ट्रकी सेवा करते हैं। प्रत्येक सेनाकी अपनी एक वर्दी होती है, इसी तरहसे खुदाई खिदमतगारों, (ईश्वरके सेवकों) की भी अपनी यह विशेप पोशाक है।'

१९ जुलाईको खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने मेरठके जमायत-उल-उलेमाके अधिवेशनमें व्याख्यान दिया। उनका वह भापण, जिसको सरकारने आपत्तिजनक और अभियोग चलाने योग्य समझा, इस प्रकार था :

"मुसलमानोंके विरुद्ध यह सामान्य आरोप है कि उनमें बुद्धिकी कमी है। जिस रास्तेपर हिन्दू, सिख, ईसाई और पारसी चल रहे हैं, उसको देखिए और फिर अपने कार्योंपर भी एक दृष्टि डालिये। हिन्दू, सिख और पारसी भाइयोंमें भिन्न-भिन्न विचारोंके लोग हैं लेकिन उनमें कभी गालियोंका यह आदान-प्रदान, यह कलह-द्वेष, एक दूसरेका यह तिरस्कार और अपमानास्पद व्यवहार नहीं दिखलाई देता जैसा कि मुसलमानोंमें देखनेमें आता है। आपमें शिक्षाकी कमी है पर देखनेके लिए आपके पास आँखें तो हैं ही। उन्हें खोलिए और देखिए कि अन्य समुदाय क्या कर रहे हैं और आप क्या कर रहे हैं ? अन्य समाजोंके सदस्योंने नागरिकताके जिन गुणों और जिस नम्रताको अपनाया है, उसकी ओर दृष्टि डालिए और आप देखेंगे कि उनका आपसका व्यवहार कितना प्रेम और सौजन्यपूर्ण है ! अब आप अपने जाति-बन्धुओं और नेताओंकी ओर भी एक दृष्टि डालिए। मैंने मुसलमानोंकी वर्तमान स्थितिपर काफ़ी विचार किया है और मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि वे एक वर्गके रूपमें, परस्पर विरोधी दृष्टिकोणोंके लोग हैं। अन्य समुदायोंमें भी आपको विरोधी विचारधाराके लोग मिलेंगे लेकिन वे एक दूसरेके

प्रति ऐसा दुर्व्यवहार नहीं करते और न दुर्वचनोंके शस्त्रसे लड़ते ही हैं। इसका कारण यह है कि उनकी दृष्टिके सम्मुख समान लक्ष्य है, जिसको उन्हें प्राप्त करना है। उनमें भी ऐसे लोग हैं जिनकी अपनी-अपनी रायें हैं परन्तु लक्ष्य एक ही है। मैं उस (लक्ष्य) की व्याख्या या परिभाषा नहीं करना चाहता परन्तु मुस्लिम समाजकी शोचनीय स्थितिके मूल कारणको दुहरा देना चाहता हूँ। मैं पुनः कहता हूँ कि हम लोगोंके आगे एक सामान्य लक्ष्य नहीं है। आप लोग अपने हृदय टटोलिए। क्या आप चाहते हैं कि हिन्दुस्तानकी यह गुलामी सदा बनी रहे? क्या आपका लक्ष्य यही है? यदि वास्तवमें ऐसा ही है तो आप किसी अन्यको हानि नहीं पहुँचा रहे हैं बल्कि अपनी ही हानि कर रहे हैं। मुसलमानोंके आगे एक सामान्य लक्ष्यका न होना ही उनके इस कलह और विवादका कारण है। मेरे हृदयपर यह एक बहुत बड़ा भार है। मुसलमान पृथक् निर्वाचक वर्गकी मांग करते हैं। वे अपने अधिकारोंकी सुरक्षाके लिए चिल्ला रहे हैं। मैं उनसे यह कहना चाहता हूँ कि वे जोरसे चिल्लाकर या ऐसा व्यवहार करके, जैसा कि वे कर रहे हैं, अपने अधिकारोंको नहीं पा सकते। यह एक नियम है कि अधिकार केवल शक्तिसे ही प्राप्त किये जा सकते हैं। एक ऐसा समय था जब कि सीमाप्रान्तके लोगोंके पास शक्ति न थी और परिणामस्वरूप न मुसलमानोंनें और न हिन्दू भाइयोंने ही उनकी ओर ध्यान दिया। किसीने यह अनुभव नहीं किया कि उसका हमसे कोई सम्बन्ध है और न हमको कोई सहायता ही दी। आज, जब कि ईश्वरकी कृपासे हम अपने प्रान्तमें कुछ ठोस कार्य कर चुके हैं और जब कि हमारे पास एक लाखसे अधिक, अच्छी तरहसे अनुशासित स्वयंसेवक हैं तब सरकार यह जाननेको उत्सुक है कि हम क्या चाहते हैं? आज सरकारतकने हमारी ओर अपनी मित्रताका हाथ बढ़ाया है और हर एक हमारा दोस्त है। मैं आपको स्पष्ट रूपसे यह बतला देना चाहता हूँ कि वह अकेली वस्तु क्या है जिसने हमारे प्रति सबका व्यवहार बदल दिया है। वह शक्ति है। भले ही आपको स्वीकृत अधिकार मिल जायँ, पर जबतक आपकी यह वर्तमान स्थिति चल रही है, तबतक आप अपने अधिकारोंकी रक्षातक न कर सकेंगे। निर्माणात्मक कार्यके द्वारा आपको शक्ति प्राप्त करनी होगी। उसको भाषणों और प्रस्तावों द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता। आपको अपना संदेश लेकर गाँव-गाँव जाना चाहिए और जनताके बीचमें तेजीसे काम करना चाहिए। आप देशकी प्रगतिके लिए अवश्य कार्य करें।

"अब मुझे मुसलमानोंके एक अन्य दोषकी ओर आपका ध्यान आकृष्ट करना

चाहिए। वे उनतकको पीड़ा पहुँचाना चाहते हैं जो कि उनकी निःस्वार्थ भावसे सेवा किया करते हैं। आप उनसे किसी प्रकारके प्रोत्साहनकी आशा नहीं रख सकते। ऐसा समुदाय, इसीलिए कभी सफल नहीं हो सकता।

"मेरे कुछ मुसलमान बन्धु कहते हैं कि सीमाप्रान्तके लोग हिन्दुओंसे प्रभावित हैं। अन्य कुछ लोग कहते हैं कि हिन्दू उनको धन देते हैं। इस प्रकारके मिथ्या आरोप देश और समाजके हितोंको क्षति पहुँचाते हैं। हम इस आन्दोलनमें इसलिए शामिल हुए हैं कि हम अंग्रेजोंको देशसे बाहर निकालकर स्वतंत्र होना चाहते हैं। केवल पेशावर शहरमें एक लाख खुदाई खिदमतगार हैं। बन्नू और डेरा इस्माईल ख़ाँमें भी ऐसे लोगोंकी संख्या अत्यधिक है जो कि ठोस रचनात्मक कार्य कर रहे हैं। हम दोमेंसे केवल एक यहाँ रहेगा—या तो हम लोग या वे अंग्रेज जिन्होंने आत्मिक, नैतिक और आर्थिक रूपसे हमें बर्बाद किया है। अंग्रेज भी इस तथ्यको भली भाँति जानते हैं। हमारा उद्देश्य इस देशसे अंग्रेजोंको बाहर निकाल देना है या स्वयं नष्ट हो जाना है। मैं कांग्रेसके अतिरिक्त ऐसा कोई अन्य दल नहीं खोज सका जिसका लक्ष्य अंग्रेजोंको इस देशसे बाहर निकालना हो और पददलित लोगोंकी सहायता करना हो। हमारा लक्ष्य भी यही है।

"शायद आप मुझसे यह पूछना चाहें कि मुझको यह विचार कहाँसे मिला? मैं आपको यह बतलाता हूँ कि आप इसे अपने ग्रन्थ कुरान शरीफ़में पायेंगे। पैगम्बर साहब सताये हुए लोगोंकी सहायता करनेके लिए और मनुष्यको दासत्वसे मुक्ति दिलानेके लिए आगे आये। क्या दासत्व एक अभिशाप नहीं है? मैं यह स्पष्ट शब्दोंमें कह रहा हूँ कि अंग्रेज अत्याचारी हैं और हिन्दू, मुसलमान, सिख तथा पारसी उनके द्वारा सताये गये लोग हैं। इन पीड़ित लोगोंका अपना कोई देश नहीं है। उनका देश बलसे और कपटसे उनसे छीन लिया गया है। पैगम्बर साहबकी जीवनीको पढ़िए, कुरानके पृष्ठोंको पलटिए। हम किसी ऐसे दलकी ख़ोज में हैं जो हमें अपना सहयोग दे और उसके सहकारसे हम दमनकारियोंका अन्त कर सके। यदि आप मुझको कांग्रेस जैसा ही कोई अन्य दल बतला सकते हैं तो मैं उसके साथ मिलकर काम करनेको तैयार हूँ। हम स्वतंत्रता चाहते हैं। हम अंग्रेजोंको अपने देशसे बाहर निकाल देना चाहते हैं क्योंकि उनके व्यवहारसे हम अधीर हो उठे हैं, इसीलिए हम कोई कोई ऐसा सहयोगी दल चाहते हैं जिसका और हमारा लक्ष्य एक हो।

"मुझको उनकी बात सुनकर बहुत आश्चर्य होता है जो यह कहते हैं कि

कांग्रेस एक हिन्दू संगठन है। भारतमें हिन्दुओंकी संख्या अधिक है इसलिए किसी भी राष्ट्रीय संगठनमें उनका बहुमत होना स्वाभाविक है। जब हमने यह खोज लिया कि देशमें केवल एक ही ऐसी संस्था है जो पीड़ितोंको अपनी सहायता देना चाहती है और भारतको स्वतंत्र तथा समृद्ध बना देना चाहती है, तब हमने उसको अपना सहयोग दिया। इसके अलावा मैं आपसे यह भी कहना चाहता हूँ कि ब्रिटिश सरकार हम लोगोंको मिटा देना चाहती है। प्रायः हमारे खुदाई खिदमतगार मार दिये जाते हैं। हमारे कुछ लोग पत्थर बरसाकर मार डाले गये और कुछको गोलियोंसे भून दिया गया। एक प्रतिष्ठित व्यक्तिने मुझसे कहा कि उससे पुलिसके एक अधिकारीने मुझे मार डालनेको कहा क्योंकि मुझे (खुदाई खिदमतगारोंके) अध्यक्षका स्थान लेनेका कोई अधिकार न था। मैं एक ऐसे दलकी खोजमें हूँ जो स्वाधीनताकी इच्छा रखता हो और जो इस अत्याचारी शासनसे हमारी रक्षा करनेको तैयार हो। यदि कोई ऐसा मुसलमानोंका दल है जो हमको बचा सके और आज़ादीका झण्डा लेकर हमारे साथ कदमसे कदम मिलाकर चल सके तो हम उसके साथ मिलनेको तैयार हैं। परन्तु आप यदि और कुछ कहना चाहते हैं तो मैं आपसे कहूंगा कि हमने कांग्रेसके साथ बने रहनेका निश्चय किया है। हममेंसे हरएक स्त्री, पुरुष और बालक, सब अंग्रेजोंका तबतक विरोध करते रहेंगे जबतक कि हमारी जाति समाप्त नहीं हो जाती या अंग्रेजोंको भारतसे निकाल नहीं दिया जाता।"

अपने संगठनके प्रचारके सम्बन्धमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ सारे सीमा-प्रांतमें दौरे कर रहे थे और निर्भीक होकर भाषण कर रहे थे। सीमा-प्रान्तकी सरकार उनके स्पष्ट व्याख्यानोंसे घबरा उठी थी। कोहाट तो फ़ौजकी भर्तीका एक बड़ा केन्द्र था। सीमांत प्रदेशकी सरकारने लार्ड विलिंगडनकी सेवामें सूचित किया कि यदि खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँ अपना कोहाटका दौरा नहीं रोकेंगे तो उनको गिरफ्तार कर लेना पड़ेगा। वाइसरायने इस सम्बन्धमें गांधीजीको सूचना भेजी। उसपर गांधीजीने उन्हें चेतावनी दी कि ऐसी स्थितिमें सन्धिको भङ्ग हुआ समझा जायगा। गांधीजीने स्थितिका निकटसे अध्ययन करनेके लिए वाइसरायसे सीमा-प्रान्त जानेकी अनुमति मांगी जो अस्वीकृत हो गयी। इसके बाद गांधीजीने सुझाव दिया कि नेहरूजीको ही वहाँ जाने दिया जाय परन्तु वाइसरायने इसकी अनुमति भी नहीं दी। तीसरी बार गांधीजीने अपने पुत्र देवदास गांधीके नामका सुझाव भेजा जो बड़ी कठिनाइयोंके बाद इस शर्तपर स्वीकृत हुआ कि वे वहाँ न तो कोई भाषण कर सकेंगे और न मानपत्र ही स्वीकार कर सकेंगे। 'उनको भेजनेका मुख्य

उद्देश्य शान्तिकी वृत्तियोंको बढ़ावा देना था और यदि हो सके तो एक बहुत बड़ी विपत्तिको टालना था।' गांधीजीने लिखा, "उनकी उपस्थिति खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको चीफ़ कमिश्नरके आमंत्रणके अनुकूल उत्तर देनेमें सहायक होगी।"

सीमाप्रान्तकी स्थितिका निकटसे अध्ययन करनेके लिए छः दिवसके दौरेका कार्यक्रम लेकर देवदास गांधी जूनके अन्तिम सप्ताहमें पेशावर पहुँचे। इस दौरेके सम्बन्धमें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने लिखा है :

"हम लोग पेशावरसे एक ट्रकमें उत्मनजई रवाना हुए। जब हम शाही बाग़से आगे निकल गये तब एक मित्रकी मोटरकार हमारे पास पहुँची, जिसके ऊपर राष्ट्रीय झंडा लहरा रहा था। हम लोग ट्रकसे उतर पड़े और जाकर कार-में बैठ गये। दो खुदाई खिदमतगार, जो आकर्षक लाल वर्दी पहने थे, जाकर अगली सीटोंपर बैठ गये और मैंने, खुर्शीद बहन और देवदास गांधीने पीछेकी सीटको घेर लिया। जब हम चारसद्दा पहुँच गये तब हमें खबर मिली कि इलाके-के बदनाम डकैत काज़ीने उस ट्रकपर गोलियाँ चलायीं जिसको हमने छोड़ा था। काज़ी सरदरयावके पुलके पास एक जंगलमें बैठा हम लोगोंकी प्रतीक्षा कर रहा था। ट्रकको रोका गया और उसकी तलाशी ली गयी तो उसमें एक घायल आदमी मिला जो कि ट्रकमें रह गया था। चारसद्दाके अस्पतालमें हम उससे जाकर मिले और उसके साथ बातचीत की। वास्तवमें काज़ीको हमारे ऊपर गोली चलानेका काम सौंपा गया था और इसके लिए उसे कुछ रुपये दिये गये थे। नाकी थानेसे काज़ीको खबर दे दी गयी थी कि हम लोग एक ट्रकसे रवाना हो चुके हैं। इसे ईश्वरीय कृपा ही कहा जायगा कि हमने गाड़ी बदल दी और इस प्रकार बाल-बाल बच गये। मुझको यह भी पता चला कि काज़ी जब अफरीदी इलाकेमें पहुँचा तो उसको मार डाला गया। उसका यह कार्य पख़्तून परम्पराओं-के विरुद्ध समझा गया जिससे कि पख़्तून-समाज भारतीयोंकी दृष्टिमें गिर जाता।

"देवदासने हमारे साथ सारे क्षेत्रका दौरा किया और वे इस निर्णयपर पहुँचे कि सरकारकी हमपर नाराज़ीका मुख्य कारण हमारा पख़्तून जनतामें कार्य करना है।

"हमारे प्रदेशमें मुस्लिम लीगका कोई संगठन न था। हमारे आन्दोलनके प्रतिकारके लिए अंग्रेजोंको एक विरोधी संगठनकी आवश्यकता थी। उन्होंने पेशावरके गवर्नमेण्ट हाई स्कूलके प्रधानाध्यापक इनायतुल्लाह मशरिकीसे खाक़-सार संस्थाका प्रारम्भ कराया और उसको सहायता दी। खुदाई खिदमतगार जनतामें अत्यंत लोकप्रिय थे इसलिए खाकसार लोग सीमा-प्रान्तमें अपना विशेष

स्थान न बना सके परन्तु भारतके अन्य भागोंमें फैल गये। इनायतुल्लाह मशरिकी ने सरकारकी किसी बातपर उसे लखनऊमें क्षमाका प्रार्थना-पत्र दे दिया और इस प्रकार उन्होंने अपनी दुर्वलताको प्रकट करके खाकसार आन्दोलनकी मृत्युकी घंटियाँ बजा दीं। सीमाप्रान्तमें अनेक जाली संगठन खड़े किये गये परन्तु वे खुदाई खिदमतगारोंकी चुनौतीका सामना नहीं कर सके और शान्त पड़ गये। हम लोग जन-प्रवृत्तियोंमें यथेष्ट समय व्यय कर रहे थे और हमारा आन्दोलन जंगलकी आगकी भाँति फैलता ही जा रहा था। केवल कोहाट जिलेमें एक लाख-के लगभग खुदाई खिदमतगार थे। अंग्रेज मुझको उत्तेजित करना चाहते थे और उसके बाद मुझे गिरफ्तार कर लेना चाहते थे। उन्होंने गांधीजीके मनमें यह बात बैठानेकी कोशिश की कि सारा दोष मेरा है परन्तु उनको सफलता नहीं मिली। मेरे बारेमें लार्ड विलिंगडन और गांधीजीमें पत्र-व्यवहार हुआ। गांधीजी-ने मुझको मिलनेके लिए बारडोली बुलाया।

"बारडोली जाते हुए, मार्गमें मुझको मुहम्मद अलीके दामाद शोयब कुरैशी भोपाल स्टेशनपर मिल गये और उनके विशेष आग्रहपर मैं एक रातके लिए भोपालके नवाबका अतिथि बना। उस समय मौलाना शौकत अली भी वहाँ ठहरे हुए थे। उन्होंने मुझसे कहा, "यदि आप तैयार हों तो हम दोनों चलकर वाइस-रायसे मिलें। मुझे पूरा भरोसा है कि आप पख्तूनोंके लिए सुधारकी जो भी मांगें उनके सामने रखेंगे, उन सबको वे स्वीकार कर लेंगे।" वाइसरायसे भेंट करनेके उनके प्रस्तावको न मानते हुए मैंने कहा, "मुझे वाइसरायमें ऐसा विश्वास नहीं है। मैं बारडोलीके लिए रवाना हो रहा हूँ।"

"मेरी बारडोलीमें गांधीजीके साथ स्पष्ट चर्चा हुई। मैंने उनसे कहा कि सरकार मुझपर मिथ्या आरोप लगा रही थी। वे लोग यह चाहते हैं कि मैं जनता-में कार्य न करूँ। कृपया आप वाइसरायको यह सूचित कर दीजिए कि वे उन सब लोगोंको, जिनको मेरे विरुद्ध शिकायतें हैं, बुलवा लें। फिर आप तथा वे हम लोगोंका न्याय करें। यदि आपकी दृष्टिमें मैं दोषी समझा जाऊँगा तो आप लोग जो भी निर्णय करेंगे, वह मुझको मान्य होगा।" गांधीजीने मेरा प्रस्ताव वाइस-रायके पासतक पहुँचा दिया। उन्होंने वाइसरायको यह भी लिखा कि उनको सीमा-प्रान्तमें जानेकी अनुमति दी जाय ताकि वे स्थलविशेषपर स्थितिका अध्य-यन कर सकें। वाइसराय उन दिनों शिमलामें गर्मियाँ बिता रहे थे। गांधीजीने उनको यह भी लिखा कि यदि वे चाहें तो हम लोग शिमला आकर उनसे भेंट करें। वाइसरायके प्रत्युत्तरकी प्रतीक्षामें उन्होंने मुझको रोका। जब वाइसराय-

ने उनके निवेदनको अस्वीकार कर दिया तब वे मुझसे बोले, "मैंने वास्तविकता को समझ लिया। आप अपनी जगह सही हैं। आप अपने कामको लेकर आगे बढ़िए।"

देवदास गांधीने कांग्रेसकी कार्यकारिणी समितिके आगे अपने दौरेका विवरण प्रस्तुत किया, जिसमें उन्होंने लिखा :

"अपने कुछ दिन पहलेके छः दिनके दौरेमें मैंने पेशावरका प्रायः पूरा ज़िला और कोहाट तथा बन्नूके भागोंको देखा। पेशावर ज़िलेमें जनप्रिय आन्दोलन अत्यंत शक्तिशाली है और बन्नू तथा कोहाटमें उसकी शक्ति अपेक्षाकृत कुछ ही कम है। पिछले वर्ष सरकारने आन्दोलनको दबानेके लिए जो कठोर क़दम उठाये थे, वे ही इस वर्तमान स्थितिके—सर्वत्र व्याप्त इस बेचैनीके लिए उत्तरदायी हैं।

"आज समूचा पठान प्रदेश शेष भारतकी भाँति स्वाधीनताकी उत्कंठासे प्रतीक्षा कर रहा है। लोगोंने बहुत बड़ी संख्यामें खुदाई खिदमतगारोंमें अपना नाम लिखा लिया है और वे आन्दोलनके नेताओंके–विशेष रूपसे खान साहब अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके सीधे प्रभावके अन्तर्गत आ गये हैं। उन लोगोंके बीचमें खान साहबका व्यक्तित्व जादू जैसा असर करता है। उनके चरित्रकी सरलताने और पीड़ितों तथा निर्धनोंके प्रति उनकी गहरी सहानुभूतिने उनको लोगोंके हृदयोंमें प्रतिष्ठित कर दिया है। वे अपनेको बिलकुल आराम नहीं देते। आनेजानेके लिए वे लॉरीको काममें लाते हैं। उन्होंने यह नियम-सा बना लिया है। लारी परिवहनके लिए सबसे कम ख़र्चका साधन है। वे पैदल काफ़ी चलते हैं और घोड़ेपर भी सवारी करते हैं इसलिए दौरेके लगातार चलते रहनेपर भी उनका व्यय बहुत कम होता है। उनके आदर्शका अन्य लोगोंने भी अनुसरण किया है। किसी कार्य-कर्त्तामें निरर्थक वस्तुओं या विलासकी सामग्रीपर धन व्यय करनेका साहस नहीं है। इस प्रकार उनमें कठोरतम मितव्ययिता बरती जाती है और जो कुछ भी खर्च होता है वह स्वयं कार्यकर्त्ताकी ओरसे होता है। खान साहब और ऐसे ही अन्य कार्यकर्त्ता अपनी व्यक्तिगत आयका एक बहुत बड़ा अंश आन्दोलनपर व्यय करते हैं। उन्होंने लगभग सारे दौरेमें मेरे साथ रहनेकी कृपा की।

"भू-राजस्वकी वसूलीके सम्बन्धमें लोगोंको निर्दयताके साथ जो यातना दी गयी उसके कुछ मामले भी मेरी दृष्टिमें आये। चारसद्दा और मर्दान तहसीलके निवासियोंकी यातनाएँ भू-राजस्व कर न दे सकनेके कारण सर्वाधिक हैं। इस स्थितिको यदि और भी बिगड़नेसे शीघ्र बचाना है तो उस अवैध और उच्छृंखल

नीतिको तत्काल रोक देना होगा जिसे कुछ क्षेत्रोंमें राजस्व विभागके अधिकारियों-ने अपनाया है। मैंने ऐसी पर्दानशीन औरतें भी देखीं जिनको जीवनमें पहली बार राजस्व अधिकारियोंके बुलवानेपर विवश होकर अनेक लोगोंके सामने जाना पड़ा। उन महिलाओंके साथ सबकी उपस्थितिमें इसलिए अपमानास्पद व्यवहार किया गया कि वे कर दे सकनेमें असमर्थ थीं। मुझे भय है कि इन क्षेत्रोंमें इस प्रकारके बहुतसे मामले हुए हैं। एक-दो मामलोंको तो स्वयं मैंने देखा। एक पर्दानशीन महिलाने, जिसकी गोदमें एक नन्हीं बच्ची थी, खान साहबको रो-रोकर बतलाया कि दो-तीन दिनतक उसको सबेरेसे शामतक कड़ी धूपमें खड़ा रखा गया और उसको पानीतक नहीं पीने दिया गया। जान पड़ता है कि कारिंदे लगान वसूली-के लिए स्त्रियोंके साथ यातनाके इसी तरीकेको सबसे अधिक व्यवहारमें लाते हैं। इससे लज्जाजनक यातना और क्या हो सकती है कि ग्रीष्मके इन महीनोंमें, पेशा-वरकी कड़ी धूपमें स्त्रियोंको सुबहसे शामतक खड़ा या बैठा रखा जाय ?

"जिन स्त्रियोंको इस प्रकारसे कष्ट दिया गया था, उनके बयानोंको लिख लिया गया है। इन घटनाओंने सारे क्षेत्रमें एक अत्यंत व्यापक रोष फैला रखा है। स्वयं खान साहब इन प्रसंगोंसे अपने मनमें बड़ी व्यग्रताका अनुभव कर रहे हैं। लगान दे सकनेमें असमर्थ पुरुषोंके तो असंख्य मामले हैं। उनसे कर निचो-ड़नेके लिए उन्हें तिरस्कृत किया जाता है और उनके साथ निर्दयताका व्यवहार किया जाता है। समस्त देशमें सामान्य रूपसे जो आर्थिक संकट आया हुआ है उससे सीमाप्रान्त भी अछूता नहीं रहा है। यही कारण है कि अनेक लोग अपना भू-राजस्व कर चुका सकनेमें असमर्थ हो गये हैं।

इसी अपराधमें एक मनुष्यको एक ऐसी छोटी-सी कोठरीमें बन्द कर दिया गया, जिसमें छतपर बर्रे जैसे एक ज़हरीले कीड़े—हड्डुका छत्ता था। उस छत्तेके नीचे आग सुलगा दी गयी और उस व्यक्तिको जानबूझकर छेड़े गये हड्डुोंकी दया-पर छोड़ दिया गया। उसकी सारी देह सूज गयी और उसको कई दिनोंतक पीड़ा होती रही। जान पड़ता है कि इसी प्रकारसे कई मामले यहाँ हुए हैं। प्रमाण रूपमें इसे पंक्तिबद्ध कर लिया गया है। मैंने स्वयं ऐसे कुछ लोगोंको देखा है और उनसे बातचीत की है जिनको इस तरहके दंड दिये गये हैं।

"इस विशिष्ट व्यवहारके लिए खुदाई खिदमतगारोंको चुन लिया गया है। जो सरकारी पक्षके लोग हैं अथवा जिन्होंने यह स्वीकार कर लिया है कि उनका खुदाई खिदमतगारोंसे कोई सम्बन्ध नहीं है, उनसे इस करकी मांगतक नहीं की गयी है।

"मेरे सामने ऐसे भी कई मामले आये जिनमें अनुत्तेजित, शान्त, खुदाई खिदमतगारोंपर पुलिसवालोंने हमला किया।

"सरकारकी सामान्य नीतिका यह अंग लगता है कि उन सबको, जिनका खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ और उनकी संस्थासे कुछ भी सम्बन्ध है, आतंकमें रखा जाय। जिन व्यक्तियोंको इस आन्दोलनमें कुछ प्रसिद्धि मिल गयी है उनको भड़काकर किसी न किसी बहाने पीटा गया है।

"पेशावर ज़िलेके हर एक गाँवमें खुदाई खिदमतगारोंकी एक सेना है। उनकी पोशाक बहुत कुछ फौज़ी वर्दीके समान है। उनको यह वर्दी पहनना, सामूहिक व्यायाम [ड्रिल] करना और फौजी पद्धतिसे 'मार्च' करना बहुत प्रिय है। इन लोगोंमें सेनाके अनेक सेवा-निवृत्त लोग भी हैं। वे शिक्षक-वर्गमें हैं। गाँवोंके अबोध लोगतक बड़ी आसानीसे 'ड्रिल' और फौजी परेड करना सीख लेते हैं। जिस समय सेना प्रयाण करती है उस समय सामान्यत: ढोल और बिगुल बजते चलते हैं। इस सेनामें सभी शस्त्रोंका प्रयोग वर्जित है, यहाँतक कि लाठीका भी। अधिकारीगण अपने साथ एक बेंत रखते हैं जो बचावके शस्त्रकी जगह नहीं बल्कि उसके महत्त्वविशेषके द्योतककी जगह उपयोगमें आता है। इस प्रान्तमें प्राय: सभी लोगोंके पास आग्नेय अस्त्र (बन्दूक, पिस्तौल आदि) हैं इसलिए उनके लिए शस्त्रोंके साथ परेड करना अपेक्षाकृत सरल है परन्तु खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके आदेशके अनुसार उसपर रोक है। जो कुछ भी मैंने यहाँ देखा है, उसके आधारपर मैं यह कह सकता हूँ कि इन लोगोंने अहिंसापर पूरा बल दिया है। मुझे यह बतलाया गया कि अनेक खुदाई ख़िदमतग़ारोंने सिद्धान्त रूपमें शस्त्रोंका प्रयोग त्याग दिया है। स्थिति यहाँतक है कि यदि डाकू लोग उनपर आक्रमण करते हैं तब भी वे आत्मरक्षार्थ उनपर शस्त्र उठानेकी परवाह नहीं करते। अहिंसाके सम्बन्धमें उनके विचार जाननेके लिए मैंने कई स्वयंसेवकोंसे बातचीत की। मुझे इस सम्बन्धमें उनका दृष्टिकोण स्पष्ट और सुलझा हुआ प्रतीत हुआ। उन्होंने यह वचन दिया है कि उनको भले ही मृत्युपर्यन्त यंत्रणा दी जाय, वे किसीके विरुद्ध अपनी उँगली भी न उठायेंगे। गत वर्ष जब मद्य-निषेधके लिए दूकानोंपर धरने दिये गये तब उनको असह्य यातनाएँ दी गयीं और उनपर अशिष्ट हमले किये गये परन्तु उन्होंने उनको अत्यन्त शान्त भावसे सहा और इस प्रकार वे अहिंसाकी कसौटीपर खरे उतरे। जब एक पठान किसी बातका संकल्प करता है तब उसको कितना भी आत्म-पीड़न क्यों न झेलना पड़े, वह बिना किसी प्रतिक्रियाके उसको सहन कर लेता है। इन विषयोंपर मेरी खान साहबसे तथा अन्य

नेताओंसे विस्तारसे चर्चा हुई। वे अहिंसाकी उस व्याख्यासे, जो कांग्रेस करती है, पूर्णतया सहमत हैं। उन्होंने मुझे प्रतीति दिलायी कि वे उसका दृढ़तासे पालन करनेका हमेशा प्रयास करते हैं।

"कांग्रेसने रचनात्मक कार्यकी जो दिशा दी है, उसमें अबतक यहाँ कोई प्रयास नहीं किया गया है। लेकिन मुझको ऐसा जान पड़ता है कि यहाँ बहुत बड़े मानपर खादी उत्पादनका कार्य प्रारम्भ किया जा सकता है क्योंकि उसके लिए यहाँ पर्याप्त क्षेत्र है। आजकल जनमतके अत्यधिक अनुरूप होनेके कारण यदि सीमाप्रान्तमें खादी अति अल्प कालमें ही विदेशी वस्त्रोंकी जगह ले ले तो इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं होगी। खान साहब इस ओर कार्य करनेको उत्सुक हैं। वे इस रचनात्मक प्रवृत्तिको तत्काल प्रारम्भ कर देना चाहते हैं और इसके लिए विशेषज्ञोंका सहयोग प्राप्त करनेपर बल दे रहे हैं।

"अपने छः दिवसके परिभ्रमणमें मैंने खान साहबके सशक्त और प्रेरणाप्रद व्यक्तित्वका जो रूप देखा वह इससे पहले कभी न देखा था। उनके साथ कार्यकर्त्ताओंका एक अत्यन्त शक्तिशाली दल है जो उनके आदेशोंका तत्क्षण ही पालन करता है। खान साहबको उनके अपने प्रदेशमें लोगोंका जो गहरा स्नेह और सम्मान मिला है उसे देखते हुए तथा उनकी अविचलित आस्था तथा वक्तव्योंको देखते हुए मुझे यह निश्चित होता है इस आन्दोलनकी सम्भावनाएँ बहुत बड़ी हैं। मैंने अलग-अलग विचार-धाराके लोगोंसे बातचीत की तथा उसके मूलमें इस असंदिग्ध तथ्यको पाया कि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ सभीकी श्रद्धाके पात्र हैं—उनके भी जो उनके लाल कुर्ती आन्दोलनके आलोचक हैं।

दूसरा समझौता

१९३१

सीमा-प्रान्तके चीफ़ कमिश्नर सर स्टुअर्ट पियर्सने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ के साथ ३० जुलाई १९३० के दिन तीन घंटेसे अधिक समयतक बातचीत की। इस सम्बन्धमें मुख्य आयुक्तने अपने एक शासकीय लेख-पत्रमें लिखा है :

"इस चर्चामें मैंने कई बार यह प्रयत्न किया कि ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँका ध्यान भविष्यकी निर्माणात्मक प्रवृत्तियोंकी ओर जाय। मैंने बार-बार चर्चाका रुख उसी ओर मोड़ना चाहा परन्तु मुझको सफलता न मिली। मैंने उनसे कहा, 'ठीक है, पठान कुछ तो पाता जा रहा है। मैं देख रहा हूँ कि जिन सुधारोंकी उसने आशातक न की थी, जिनका उसने सपनातक न देखा था, वे सुधार उसे मिलने जा रहे हैं और वह भी अति शीघ्र!' 'सुधार? आपके सुधार?' उन्होंने कहा, 'आपके सुधार तो काग़ज़ी हैं। उनसे क्या अन्तर आयेगा? मैं जो चीज़ चाहता हूँ, वह तो हृदयका परिवर्तन है।' मैंने उनकी धर्मनिष्ठाकी गहराई को मापनेको कोशिश नहीं की लेकिन मन ही मन मैंने यह अनुमान लगा लिया कि मुझे इनको एक धार्मिक वृत्तिका मुसलमान तो नहीं ही समझना चाहिए। एक और चीज़, जिससे वे बुरी तरहसे ग्रसित हैं, उनके भीतरकी हीनताकी भावना है। इस हीन-ग्रन्थिके कारण ही जब वे पठानोंकी वर्तमान स्थितिकी बात करते थे, तब उसे 'गुलामीकी दशा' कहते थे। मैंने इस बातको उनसे एकसे अधिक बार कहा कि यदि आप मुझसे यह अपेक्षा करते हैं कि मैं पठानोंका अधिकाधिक हित करूँ तो जो कठिनाइयाँ हमारे सामने हैं, उनको दूर करनेमें आपको हमारी सहायता करनी चाहिए, बजाय इसके कि आप हमारे आगे नयी-नयी कठिनाइयाँ रोज़ खड़ी कर दें। उनको छोड़नेके लिए मैं दरवाजेतक गया और मैंने उनको यह कहकर विदा किया कि मैं आपके ऊपर भरोसा कर रहा हूँ। मैं आपसे यह आशा करूँगा कि और लोगोंके झगड़ेसे आप सीमा-प्रान्तको बचानेकी कोशिश करेंगे, चाहे वह झगड़ा जवाहरलालका हो या वल्लभभाई पटेलका। चलते समय जब हमने एक-दूसरेको अभिवादन किया तब मैंने ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको अन्तिम चेतावनी भी दे दी। मैंने उनसे कहा कि सर ई० होटसन और मि० गर्लिकपर जो घातक आक्रमण हुए; उन्होंने क्या सबक दिया, यह आपको बतलानेकी आवश्य-

कता नहीं है। मैं आपसे आशा करता हूँ, आप यह अनुभव करें कि इस प्रकार के आतंकवादी कार्योंसे इङ्गलैण्डमें कितना रोष फैला है। इसके अतिरिक्त अभी लगभग एक सप्ताह या उससे कुछ पहले एक अत्यन्त गम्भीर घटना हो गयी थी। आपके प्रान्तके ही एक व्यक्तिने एक यूरोपियन महिलापर हमला किया था। आपने अपने पिछले भाषणोंमें इन यूरोपियन महिलाका बार-बार जिक्र किया है। मैं आपको सलाह दे रहा हूँ कि अब आप ऐसा न करें।"

"हमारी विस्तारयुक्त चर्चाके प्रारम्भका अंश अंग्रेजीमें चला। जैसा कि मुझे बतलाया गया था, उसके विपरीत उनकी अंग्रेजी शुद्ध थी परन्तु वे असामान्य रूपसे धीरे-धीरे बोल रहे थे। ऐसा प्रतीत होता था कि वे सोच-सोचकर बोल रहे हैं। वार्तालापके प्रायः अन्तमें वे पख्तूपर आ गये। अब वे बड़ी सरलतासे और सहजतासे अपने विचार व्यक्त कर रहे थे। केवल एक बार वे कुछ उत्तेजित हुए। उस समय वे अंग्रेजी बोले और फिर उर्दू। उनकी उर्दू अधिक परिष्कृत नहीं थी।"

जुलाईके मध्यमें गांधीजीने गृह-सचिव मि० एमर्सनसे मिलकर उनको एक आरोप-पत्र दिया जो 'कांग्रेस चार्जशीट' के नामसे प्रसिद्ध हुआ। सरकार और गांधीजीके बीच पत्र-व्यवहार भी चला। जुलाईके अन्तमें जब चर्चा एक अत्यन्त नाजुक दौरसे गुज़र रही थी तब कुछ हिंसात्मक घटनाएँ हो गयीं। एक काण्डमें बम्बईके स्थानापन्न गवर्नर सर अर्नेस्ट हॉटसनके प्राण लेनेकी चेष्टा की गयी और उसके एक सप्ताहके भीतर ही अलीपुरके डिस्ट्रिक्ट जज मि० गर्लिकको उनके अदालतके कमरेमें ही मार दिया गया। गांधीजीने इन शब्दोंमें क्षोभ व्यक्त किया, 'भगत सिंहकी पूजा हो चुकी और अब उससे देशकी अपार हानि हो रही है।' इसके बावजूद उन्होंने प्रतिकारकी भावना और दमनके सम्बन्धमें सरकारको चेतावनी दी, 'जो रोगका कारण समझ सकेगा वही उसका निवारण कर सकेगा। जिनकी इस कार्यकी बलवती इच्छा नहीं है अथवा जिनमें इसे कर सकनेका साहस नहीं है, उनके लिए यही अच्छा है कि वे शेषको राष्ट्रके ऊपर छोड़ दें।'

बम्बईमें ६ अगस्तसे अखिल भारतीय कांग्रेस समितिकी त्रिदिवसीय बैठक प्रारम्भ हुई जिसमें राजनीतिक हत्याओंके विरोधमें सर्वसम्मतिसे निन्दाका एक प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। इस प्रस्तावमें अहिंसाके लिए एक व्यापक अभियान चलाने के लिए समस्त कांग्रेस संगठनोंका आह्वान किया गया था। इसका प्रालेख स्वयं गांधीजीने तैयार किया था। इसे प्रस्तुत करते हुए उन्होंने कहा :

"मुझसे यह पूछा गया है कि मैं तरुणोंके हिंसात्मक कार्योंकी निन्दा तो करता

हूँ लेकिन उसके साथ सरकारके वैसे ही कार्योंकी निन्दा भी क्यों नहीं करता ? वे लोग, जो इस प्रकारके तर्क करते हैं, कांग्रेसको नहीं जानते । कांग्रेस इस शासन-प्रणालीको खत्म कर देनेके लिए वचनबद्ध है । इस प्रणालीकी चाहे जितनी निन्दा की जाय वह उसके सुधारमें सहायक नहीं होगी । कांग्रेसका अस्तित्व उसकी स्थायी भर्त्सना है । राजनीतिक हत्याओंके प्रसंगमें सरकारके गलत कामोंकी आलोचना स्थितिको उलझा देगी और गर्म खूनवाले नौजवानोंको मार्ग-भ्रष्ट कर देगी । मैं इन युवकोंसे अत्यंत स्पष्ट शब्दोंमें कहना चाहता हूँ कि उन्हें हत्याओंको बन्द कर ही देना चाहिए । इस बातकी कोई चिन्ता नहीं कि दूसरी ओरसे उनको कितना उत्तेजित किया जा रहा है ।

"मुझसे अगला प्रश्न यह पूछा जाता है कि शासन-प्रणालीको आप अहिंसा-से कैसे समाप्त कर सकेंगे ? निश्चय ही, सन् १९२० से देशने जो प्रगति की है वह अहिंसाकी सफलताका पर्याप्त, स्पष्ट प्रमाण है । प्रश्न यह नहीं है कि हमको सफलता मिलेगी अथवा नहीं । कांग्रेसने एक सिद्धांत स्वीकार किया है और हमें पूरी निष्ठाके साथ उसे कार्य-रूप देना है ।

बम्बईमें कांग्रेसकी कार्यकारिणी समितिने एक महत्त्वपूर्ण कदम उठाया और वह हिन्दुस्तानी सेवा दल, सीमा-प्रान्तके कांग्रेस संगठन तथा खुदाई खिदमत-गार संस्थाका पुनर्गठन था ताकि वे कांग्रेसके कार्यक्रम और 'क्रीड' पर अधिक दृढ़ हो सकें । इस सम्बन्धमें निम्नांकित वक्तव्य प्रसारित किया गया । इसमें कार्य-समितिके निर्णयोंका समावेश किया गया था :

"सीमाप्रान्तके नेतागण इस बातपर सहमत हैं कि वर्तमान पश्चिमोत्तर प्रदेशकी कांग्रेस समिति और अफ़गान जिरगाका एकीकरण कर दिया जाय । इस नये प्रान्तीय संगठनका गठन, जो प्रदेशमें कांग्रेसका प्रतिनिधित्व करेगा, कांग्रेस संविधानके आधारपर किया जाय। यह नव निर्वाचित समिति सीमाप्रान्त कांग्रेस समिति होगी । प्रदेशकी भाषामें इसको सीमाप्रान्तका जिरगा भी कहा जा सकता है । इसी प्रकार जिला और स्थानीय समितियोंका जिरगा कहकर उल्लेख किया जा सकता है, परन्तु यह तथ्य स्पष्ट है कि वास्तवमें वे कांग्रेस समितियाँ हैं । कार्य-समितिके इस अद्यतन प्रस्तावके अनुसार यह स्वीकार किया गया कि खुदाई खिदमतगारोंको कांग्रेस स्वयंसेवकोंका संगठन समझा जाय, फिर भी उनका खुदाई खिदमतगार नाम बना रहने दिया जाय । समूचे संगठनका संचालन कांग्रेसके संविधान, नियमों तथा कार्यक्रमके अनुसार किया जाय तथा अबसे ध्वजके स्थानपर राष्ट्रीय ध्वजका प्रयोग किया जाय ।"

"कार्यसमितिकी प्रार्थनापर सीमा-प्रान्तके नेता खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने प्रदेशमें कांग्रेस आन्दोलनके नेतृत्वका भार अपने कंधोंपर ले लिया है।"

पेशावरके लिए रवाना होनेसे पहले ९ अगस्तको ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने गांधीजीके सचिव महादेव देसाईसे कहा :

"मैं आपसे दो-एक बातें कहनेको उत्सुक हूँ। आप अपने क्षेत्रोंमें भू-राजस्व-करकी स्थितिके सम्बन्धमें बातें करते हैं। ठीक है, परन्तु हमारे क्षेत्रमें उसकी स्थिति अत्यधिक असह्य हो गयी है। आपके प्रान्तोंमें राजस्व विभागके अधिकारी पुलिसकी सहायता लेते हैं परन्तु हमारे क्षेत्रमें वे स्वयं ही उसका कार्य करते हैं। हम लोगोंने सारे दमनको सहा है और आगे भी सहेंगे लेकिन यदि उन्होंने हमारी बहनोंको अत्याचारका लक्ष्य बनाया तो हमारे आगे भी एक मुश्किल आ खड़ी होगी। वास्तवमें उनका ध्येय हमारे यहाँकी महिलाओंको परेशान करना नहीं है बल्कि वे इस बहाने हमको उकसाना चाहते हैं। वे कुछ भी करें, हम उनके हाथोंमें खेलेंगे नहीं। खुदाई खिदमतगारोंके साथ जो भी व्यवहार होगा, उसके लिए हम यह भी नहीं चाहेंगे कि आप चिन्ता करें। जिस दिन भाई देवदास पेशावरसे चले थे, उसी दिन मैंने अपने दस कार्यकर्त्ताओंको कैम्बेलपुर भेजा था। उन लोगोंको बहुत बुरी तरह मारा-पीटा गया और उनको अत्यंत असहाय अवस्थामें अटककी सीमापर छोड़ दिया गया।"

१४ अगस्त सन् १९३१ को वाइसरायको भेजे गये अपने एक पत्रमें गांधीजीने लिखा : "पिछले दिनों घटनाओंका चक्र कुछ ऐसी तेज़ीसे चला कि मैं आपके ३१ जुलाईके कृपापत्रका प्राप्ति-स्वीकार भेजनेतकका अवकाश न निकाल सका। कार्यकारिणीका इरादा यह नहीं है कि सरकारके आगे एक विषम परिस्थिति खड़ी कर दी जाय अतः वह किसी भी सम्मानपूर्ण समझौतेपर आरूढ़ रहनेको तैयार है। निश्चित ही इस समझौतेकी स्थिरता प्रान्तीय सरकारोंके अपने दृष्टिकोण एवं व्यवहारपर निर्भर होगी। जैसा कि मैं अपने पत्र-व्यवहारमें तथा व्यक्तिगत चर्चामें भी कई बार आपसे कह चुका हूँ, शासन और कांग्रेसका पारस्परिक सम्बन्ध उत्तरोत्तर कम होता जा रहा है। कांग्रेस कार्यसमितिके कार्यालयमें सरकारकी गतिविधियोंकी जो लगातार सूचनाएँ मिलती रहती हैं उनकी व्याख्या संक्षेप रूपमें यह की जा सकती है कि सरकार द्वारा कांग्रेसकी प्रवृत्तियों तथा कांग्रेसके कार्यकर्त्ताओंको दबाया जा रहा है। यदि समझौतेको एक स्थिरता देनी है तो मैं इस दिशामें सोचनेका साहस कर सकता हूँ कि उन शिकायतोंके बारेमें, जो भेजी जा चुकी हैं, शीघ्र निबटारा किया जाय। जैसा कि मैं

आपको सूचित कर चुका हूँ, और भी शिकायतें आती जा रही हैं और मेरे साथ काम करनेवाले लोग यह ज़ोर डाल रहे हैं कि यदि समयपर सहायता न मिल सके तो कम-से-कम उनको यह अनुमति तो दे दी जाय कि वे अपनी सुरक्षाके उपायोंको प्रयोगमें ला सकें।"

सीमा-प्रान्त सम्बन्धी कांग्रेसके आरोप-पत्रमें यह लिखा गया था :

"मालाकण्ड एजेन्सीके तहसीलदारोंने हवालातमें बन्द मुजरिमोंसे यह कहा कि यदि वे खुदाई खिदमतगारोंको गोली मारनेको तैयार होंगे तो उनको छोड़ दिया जायगा। उनसे आगे यह भी कहा गया कि उनसे जितना भी अधिकसे अधिक सम्भव हो, खुदाई खिदमतगारोंको पकड़ लें और उनमेंसे हर एकसे सौ-सौ रुपये छीनकर उनको छोड़ दें। जो लोग ऐसा करनेपर राजी होंगे उनको भी छोड़ दिया जायगा। सेदन में एक खुदाई खिदमतगारके छुरा भोंक दिया गया और रुस्तममें ४ जुलाई १९३१ की रातमें एक खुदाई खिदमतगारकी संदिग्ध परिस्थितियोंमें हत्या कर दी गयी।

"चारसद्दाके दौलतपुर नामक स्थानमें बटग्रमके जैलदार अब्दुल्ला जानने पुलिसके सिपाहियोंकी सहायतासे बहुतसे स्वयंसेवकोंको पकड़ लिया जो लगानका कर चुका सकनेमें असमर्थ थे। उसने उनमेंसे छः आदमियोंको एक ऐसे कमरेमें बन्द कर दिया जिसमें कि हड्डोंका छत्ता था। कमरेमें धुआँ कर दिया गया ताकि हड्डे भड़क उठें। हड्डोंके काट लेनेसे उन बेचारे स्वयंसेवकोंके चेहरे बुरी तरहसे सूज गये। फिर उनको बाहर निकाला गया और घर जाते समय उनसे यह कहा गया कि वे अपनी पत्नियोंसे भू-राजस्व जमा करनेको कहें।

"३१ जुलाई १९३१ को ख़ान अब्दुल्ला जान और उसके साथियोंने लगान जमा न कर सकनेवाले कुछ खुदाई खिदमतगारोंको पकड़ लिया। उन्होंने स्वयंसेवकोंके हाथोंको कसकर पीछे पीठपर बाँध दिया और फिर उनको तेज़ धूपमें बैठे रहनेको विवश किया। जिस किसीने भी उनका विरोध किया, उसे उन लोगोंने रायफलोंके कुन्दोंसे बुरी तरह पीटा। परिणामस्वरूप उनमेंसे एक बूढ़ा व्यक्ति संज्ञाहीन हो गया।

"शबकदारमें अलमर और हामिद खाँने, जिनको सरकारसे जागीरें मिली हुई हैं, दो खुदाई खिदमतगारोंको पकड़ लिया और वे उन्हें 'पॉलिटिकल अफ़सर' के पास ले गये। उसने उन खुदाई खिदमतगारोंको कांग्रेसका कार्य न करनेकी आज्ञा दी। इनकार करनेपर उनको नंगा कर दिया गया और फिर उनको निर्दयतापूर्वक पीटा गया। उनमेंसे एकको बलपूर्वक तेज़ धूपमें धरतीपर लिटा दिया

गया और उसको रस्सियोंसे जकड़ दिया गया ताकि वह इधर-उधर न हिल सके। फिर उसका अपमान करनेके लिए उसकी गुदामें उंगलियाँ और काठके टुकड़े डाले गये। इस तरहका अपमान पठान अपने लिए मृत्युवत् समझता है।"

"खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके पख्तू पत्र 'पख्तून' की मई मासकी प्रतियाँ डाकघरके अधिकारियोंने रोक लीं। इस अंकमें केवल समाजसुधारके विषयोंपर सामग्री थी। खान साहबकी प्रतियाँ रोकनेका कोई कारण भी नहीं बतलाया गया।

"खलील और मोहमन्दके इलाकेमें तथा पेशावरकी तहसीलमें किसी भी प्रकार-की सभा या जुलूसपर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है।"

पेशावर लौटनेपर कांग्रेसके कार्यकर्त्ताओं तथा खुदाई खिदमतगारोंकी एक सभाको सम्बोधित करते हुए १३ अगस्तको खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँने कहा कि 'अकबर गाँवमें हमारे निर्दोष बन्धुओंको अत्यंन्त निर्ममतासे पीटा गया है।' इस घटनाने उनके मनको बहुत आघात पहुँचाया और इस प्रकरणका उल्लेख करते समय वे फूट पड़े। उन्होंने आगे कहा कि "मैंने महात्मा गांधीसे अपने इच्छानुसार कार्य करनेकी अनुमति मांगी थी परन्तु उन्होंने वह मुझे नहीं दी। अन्यथा मैं अंग्रेजोंको दिखला देता कि उनको पठानोंसे काम पड़ा है, किसी अन्यसे नहीं। विश्वासघातिनी सरकार सन्धिकी शर्तोंको क़दम-क़दमपर भंग कर रही है। अंग्रेज हमसे बदला ले रहे हैं। अंग्रेज सरकारको इसका ज्ञान होना चाहिए कि उसे लगानमें देनेके लिए लोगोंके पास कुछ भी नहीं है। वे भूखों मर रहे हैं लेकिन अंग्रेज शान-शौकतकी जिन्दगी बिता रहे हैं। सरकारको यह अच्छी तरहसे समझ लेना चाहिए कि पठान उसे लन्दन वापस जानेको विवश कर देंगे। फरोह जैसे अत्याचारी राजाका अंतमें विनाश हुआ। ईश्वर अत्याचारीकी कभी सहायता नहीं करता। लोगोंने अपने वस्त्र अपने खूनसे रंग लिये हैं और सारे विरोधोंके आगे वे यह दृढ़ निश्चय लेकर खड़े हैं कि अंग्रेजोंको बाहर निकालकर रहेंगे।"

गांधीजीकी इच्छा थी कि मध्यस्थ न्यायाधिकरणका किसी रूपमें गठन किया जाय और शासन तथा कांग्रेसके मध्य समझौतेको लेकर जो भी प्रश्न उठें, उनका उसीके द्वारा निबटारा हो। गांधीजी संयुक्त प्रदेश, सीमा-प्रान्त और गुजरातकी बढ़ती हुई विपरीत स्थितिके सम्पर्कमें थे। उनकी रायमें उसका कारण इन प्रान्तों की स्थानीय सरकारों द्वारा समझौतेका चरम सीमातक भंग किया जाना था। अगस्तके दूसरे सप्ताहमें उन्होंने वाइसरायको टेलीफोन किया कि स्थितिको देखते हुए उनका लन्दन जा सकना सम्भव नहीं होगा।

वाइसरायने गांधीजीको लिखा : "पिछले पाँच महीनोंसे अनेक दिशाओंमें कांग्रेसकी प्रवृत्तियाँ आपके पत्र एवं दिल्लीके समझौतेकी भावना–दोनोंके प्रतिकूल रही हैं। वे केवल समझौतेकी स्थिरताको ही नहीं, शांति-स्थापनके प्रयत्नोंको भी लगातार धमकियाँ देती रही हैं—विशेषतया संयुक्त-प्रदेश और सीमा-प्रान्तमें।" उन्होंने अपने पत्रमें गांधीजीको यह स्मरण दिलाया कि गोलमेज़ परिषद्में यदि कांग्रेसका प्रतिनिधित्व नहीं होता तो इसको 'उन मुख्य उद्देश्योंकी असफलता समझा जायगा, जिनको प्राप्त करना इस समझौतेका प्रयोजन था।'

गांधीजी सरदार पटेल, जवाहरलालजी नेहरू तथा खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँके साथ वाइसरायसे भेंट करनेके लिए २५ अगस्तको शिमला पहुँचे। वाइसराय और गांधीजीके विचार-विमर्शके पश्चात् २८ अगस्तको एक विज्ञप्ति प्रसारित की गयी। इस विज्ञप्तिमें, जिसको बहुत बार 'दूसरा समझौता' भी कहा गया, यह निर्दिष्ट किया गया था कि लंदनकी गोलमेज़ परिषद्में गांधीजी कांग्रेसका प्रतिनिधित्व करेंगे। ५ मार्चका समझौता पूर्ववत् क्रियान्वित होता रहेगा। कांग्रेसकी इस शिकायतकी कि सरकारने बारडोलीमें दमन किया है, जाँच की जायगी और भविष्य में जो भी शिकायतें होंगी, उनका निबटारा प्रशासनकी अपनी सामान्य कार्यविधि तथा व्यवहारके अनुसार होगा।

गांधीजीने इसपर टिप्पणी करते हुए कहा, "यदि प्रान्तीय सरकारें उतनी ही निर्दोष हैं, जितना कि वे दावा करती हैं तो वे निष्पक्ष जाँचसे क्यों बचना चाहती हैं? 'दूसरे समझौते' के अनुसार तो वे किसी भी प्रकार पूछ-ताछतकका सामना करनेको तैयार नहीं हैं। कांग्रेसने उनकी इस अस्वीकृतिको मान लिया है परन्तु उसने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि इस इनकारको स्वीकार कर लेना, उसमें निहित अन्यायको मंजूर कर लेना नहीं है। कांग्रेस जिसे राष्ट्रके हितमें नहीं मानेगी, उसे स्वीकार करना उसकी दृष्टिमें एक ग़लत काम होगा। यद्यपि समझौतेके अनुसार सविनय अवज्ञा आन्दोलनको स्थगित कर दिया गया है फिर भी आत्म-रक्षाके उपायके रूपमें वह इस अधिकारको सुरक्षित रख रही है। जब विचार-विमर्श, पारस्परिक चर्चा और याचिका असफल हो जायगी तब उसके आगे यही मार्ग शेष रह जायगा; फिर भी हमको यह आशा करनी चाहिए कि रक्षाके लिए भी सविनय अवज्ञा आन्दोलन आवश्यक नहीं होगा। जहाँतक मनुष्यके लिए संभव है, लन्दन-यात्राके परिणामतकके लिए उसे स्थगित करना ही उचित होगा परन्तु राष्ट्रके आत्म-सम्मान या हितके लिए न तो उसका सर्वथा त्याग किया जा सकता है और न उसको त्यागना ही चाहिए।"

जिन दिनों खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ शिमलामें थे, उन्हीं दिनों उनको भारत सरकारके परराष्ट्रसचिव मि० हॉवेलका पत्र मिला, जिसमें उनसे मिलनेकी प्रार्थना की गयी थी। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने अपने प्रत्युत्तरमें उनसे मिलनेकी असमर्थता प्रकट कर दी। हॉवेल साहबने इसकी सूचना गांधीजीको दे दी। गांधीजीने खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँसे इसका कारण पूछा। वे बोले, 'मैं एक दुर्बल मनुष्य हूँ। मैं यह नहीं चाहता कि फिसलनकी भूमिपर चलूँ और गिर पड़ूँ।' उनकी यह बात सुनकर गांधीजी खिलखिलाकर हँस पड़े। वे बोले, 'मैं क्या फिरंगियोंसे बात नहीं करता?' 'आप महात्मा हैं।' खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कहा लेकिन गांधीजीको राजी रखनेके लिए उन्होंने २९ अगस्तको मि० हॉवेलसे भेंट की। अपनी इस मुलाकातके सम्बन्धमें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने लिखा है :

"मि० हॉवेल एक सज्जन पुरुष थे और वे हमारे पश्चिमोत्तर प्रदेशमें रह चुके थे। उनके सहयोगी, उपपरराष्ट्रसचिव मि० वेली भी मेरे प्रान्तमें अधिकारी रह चुके थे और हम लोग एक-दूसरेसे परिचित थे। मि० हॉवेलने कहा कि अंग्रेजोंके पख़्तूनोंके साथ बहुत अच्छे सम्बन्ध थे परन्तु जोशीले भाषण करके वे ख़राब कर दिये गये। मैंने कहा कि जोशीले भाषणोंसे सम्बन्ध तो नहीं बिगड़ा करते। आप मि० वेलीसे पूछिये कि आप अंग्रेज लोगोंने पठानोंके साथ कितना दुर्व्यवहार किया है? 'आप चुप क्यों हैं?' मैंने वेली साहबसे पूछा, 'आप तो सब कुछ जानते हैं। उन दिनों आप पेशावर ज़िलेके डिप्टी कमिश्नर थे। आपने हमको कांग्रेसमें सम्मिलित हो जानेके लिए विवश कर दिया।' उसी समय एक टेलीफ़ोन आ गया और हमारी बातचीत रुक गयी। हॉवेल साहबने मुझे बतलाया कि यह गृह-सचिव मि० एमर्सनका टेलीफोन है। उन्होंने आपसे मिलनेके लिए सन्देश भेजा है। मि० एमर्सनने मेरे साथ मिलनेका समय निश्चित नहीं किया था इसलिए मैंने कहा कि मैं एमर्सन साहबसे नहीं मिलूँगा। हॉवेल साहबके सूचित करने पर मि० एमर्सनने मुझे टेलीफोन किया और थोड़ी देरके लिए ही सही अपने कार्यालयमें आनेका आग्रह किया। हॉवेल साहब बोले कि वापसीमें उनका कार्यालय आपके रास्तेमें पड़ेगा। यदि आप उनसे मिलते जायें तो अच्छा है। हॉवेल साहबसे बातचीत करनेके बाद मैं मि० एमर्सनके कार्यालयको चल दिया।"

मि० हॉवेलने अपनी फाइलमें इस भेंटका संक्षेप इस प्रकार दिया है :

"उन्होंने सारा दोष सरकारपर डाल दिया और हमने उनपर। फिर हमने उनसे कहा कि आरोप तथा प्रत्यारोप स्थितिको आगे नहीं बढ़ा सकते। 'आप जिन सुधारोंकी बात कहते हैं उनमेंसे अधिकांश प्रदेशकी जनताको प्रदान

करनेका सरकार पहलेसे ही निश्चय कर चुकी है। सरकारका सहयोग लेकर आप बहुत कार्य कर सकते हैं और उसके अभावमें अत्यल्प। शासनने अपार सहनशीलता दिखलायी है। आप क्या अब, जब कि गोलमेज़ परिषद्की बैठक चलनेवाली है, कोई ऐसा कार्य करके नहीं दिखला सकते ?' खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ वार्ताके दौरानमें अपने पुराने मार्गपर भटक गये। उन्होंने सरकारी कर्मचारियोंके बीच असमानताकी और लाल कुर्तीवालोंपर किये गये दमनकी चर्चा छेड़ दी। इसके जवाबमें मैंने उनसे कहा कि यदि लाल कुर्तीवालोंपर अत्याचार किया गया या उनके साथ दुर्व्यवहार हुआ तो वे उसके लिए न्यायालयमें जाकर मामला दायर कर सकते थे और अभियोग सिद्ध कर सकते थे। न्यायालयमें तो निष्पक्ष विचार किया जाता है। दूसरी बात यह कि यदि सरकारकी दृष्टि लाल कुर्तीवालोंके अनुकूल नहीं है तो इसमें केवल खान (अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ) का दोष है। उन्होंने अपने अनुयायियोंमें शासन और उसके कर्मचारियोंके प्रति घृणा तथा तिरस्कारकी भावनाएँ जगानेका भरसक प्रयत्न किया है। क्या इन भावनाओंकी किसी भी सीमातक एक प्रतिक्रिया स्वाभाविक नहीं है ? चर्चाके अन्तमें 'खान' से यह आग्रह किया गया कि वे चीफ़ कमिश्नरसे मिल लें और यह देखें कि वे उनके मध्य मार्गमें भी मिलनेको तैयार हैं।"

मि० एमर्सनसे अपनी बातचीतके सम्बन्धमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ लिखते हैं : "जैसे ही मैंने भीतर क़दम रखा मि० एमर्सनने तुरन्त ही मुझपर अपना मन्तव्य प्रकट कर दिया। उन्होंने कहा, 'आपने अपने मेरठके भाषणमें कहा है कि हम अंग्रेजोंके चेहरे गोरे हैं लेकिन हृदय काले हैं। यदि मैं इस भाषणका विवरण इंगलैंडमें प्रकाशित करा दूँ तो निश्चय ही अंग्रेज उन सब सुविधाओं और सुधारोंको वापस लौटा लेंगे जिनको देनेका उन्होंने वचन दिया है।'

"इसका मैंने उनको यह उत्तर दिया कि उस सभामें तो मैंने बहुत कुछ कहा है और मैं आपको इस बातकी अनुमति देता हूँ कि आप इंगलैंडके समाचार-पत्रोंमें इस भाषणका पूरा ब्यौरा प्रकाशित करा दें। मैंने अपने भाषणमें यह स्पष्ट कर दिया है कि अंग्रेजोंके साथ हमारे बहुत अच्छे सम्बन्ध थे और हमारा उनके प्रति अत्यंत अनुराग था। हमारे पास खानेकी जो भी अच्छीसे अच्छी चीज़ आती थी, उसे हम अपने बच्चोंको नहीं देते थे बल्कि हम उसे अंग्रेजोंको लाकर देते थे लेकिन फिर भी हम उनको प्रसन्न नहीं रख सके। भारतने जिन सुधारोंको अस्वीकार किया था, उनतकके लिए अंग्रेजोंने हमें इनकार कर दिया। इसीलिए मैंने कहा था कि मुझे जान पड़ता है, अंग्रेजोंके चेहरे गोरे हैं परन्तु उनका मस्तिष्क

कलुषित है ।

"हॉवेलका व्यवहार एमर्सनकी भाँति, जिन्होंने अपनी आयुका एक लम्बा अंश पंजाबमें बिताया था, अशिष्ट नहीं था ।"

एमर्सन साहबने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँसे अपनी बातचीतका सारांश इस प्रकार लिखा है :

"उन्होंने मुझको यह विस्तारपूर्वक बतलाया कि उनके आन्दोलनका कैसे प्रारम्भ हुआ । उन्होंने मुझे उसके तीन उद्देश्य बतलाये : (१) अफ़गानोंका एकत्रीकरण, (२) सामाजिक सुधार और (३) यदि भारतमें विद्रोह होता है, जिसकी कि प्रान्तकी सुरक्षाको धमकियाँ मिल रही हैं तो उस स्थितिमें अफ़गानोंके लिए सीमाप्रान्तका संरक्षण ।

"इससे पहले इस तीसरे उद्देश्यकी कोई चर्चा मैंने नहीं सुनी थी और न उसका कोई जिक्र मेरे आगे आया था । यह आन्दोलनकी तथाकथित अहिंसाकी प्रवृत्ति-की एक टीका थी । उन्होंने कहा कि उनका आन्दोलन किसी ब्रिटिश-विरोधी उद्देश्यको लेकर प्रारम्भ नहीं हुआ था परन्तु सन् १९३० में जो घटनाएँ हुईं उन्होंने उसे निश्चित रूपसे एक सरकार विरोधी रूप दे दिया यद्यपि वे स्वयं और उनके अनुयायी अब भी हमारे मित्र बननेको तैयार हैं । उन्होंने यह भी कहा कि अप्रैल १९३० तक उनके स्वयंसेवकोंकी संख्या १०००० थी परन्तु इस समय वह २,००,००० के लगभग है । मैंने बादकी इस संख्यापर अविश्वास करते हुए अतिशयोक्ति समझा ।

"उन्होंने आगे यह भी दावा किया कि उनके पक्षने सन्धिकी शर्तोंका पूरी तरहसे पालन किया है । इसे मैं स्वीकार नहीं करूँगा—उन्होंने अपने आन्दोलनकी अहिंसाकी वृत्तिपर बल दिया और इस बातका दृढ़ताके साथ विरोध किया कि लाल कुर्तीवालोंने कभी हिंसापूर्ण अपराध भी किये हैं । इसके विपरीत मैंने उनको कई उदाहरण दिये परन्तु हमेशाकी भाँति यही कहते रहे कि भारत सर-कारको जो सूचनाएँ दी गयी हैं वे प्रामाणिक नहीं हैं । उनके मनमें यह एक बिल-कुल ग़लत धारणा जमकर बैठ गयी है कि उनका अपने अनुयायियोंके ऊपर अत्यंत नियंत्रण है । इसके विपरीत मैंने उन्हें कई घटनाएँ बतलायीं, सरबन्दका प्रकरण, उन मोटर-कारोंको रोकनेका प्रयास जिनमें कि अंग्रेज अधिकारी बैठे हुए थे, सेना-के सामने ही, उसको उकसानेवाली लाल कुर्तीवालोंकी परेडें, मरदानकी वह घटना जिसमें कि 'रेजीमेन्टल गार्ड्स' के सामने, उसके बाहर 'एक क्वार्टर गार्ड' खड़ा कर दिया गया था और सामान्यतः नित्य लाल कुर्तीवालोंका पुलिसके थानोंके

सामने पहुँचकर आपत्ति जनक नारे लगाना। मैंने ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँसे कहा कि मैं इन घटनाओंका सम्बन्ध अहिंसाके सिद्धान्तसे नहीं जोड़ पाता। मैंने उनसे यह स्पष्ट कह दिया कि सरकारको उनके आन्दोलनके बारेमें यह बिलकुल भरोसा नहीं है कि इसका स्वरूप अहिंसक ही बना रहेगा। मैंने उनसे यह भी कहा कि पिछले दिनों जो सब जगह अनुभव प्राप्त हुए हैं उनसे यह सिद्ध हो गया कि अहिंसा, हिंसाके आगे तत्काल ही अपनी मर्यादाका त्याग कर देती है।

"उनके सारे तर्क इस आधारको लेकर चल रहे थे कि उन्होंने तो समझौतेका पालन किया है परन्तु स्थानीय प्रशासनने उनका उल्लंघन किया है। उन्होंने कहा कि इस समय प्रदेशमें जो शासन-पद्धति चल रही है, वह व्यावहारिक रूपमें फौजी क़ानूनका ही एक रूप है। उन्होंने बार-बार यह कहा कि लाल कुर्तीवालोंके खिलाफ़ बदलेकी नीतिको काममें लाया जा रहा है। भू राजस्व करकी उगाहीके सम्बन्धमें दूसरोंसे लाल कुर्तीवालोंके भेद-भावके कई उदाहरण देकर उन्होंने अपने कथनकी पुष्टि की। मैंने उनकी बातको पकड़कर कहा कि लाल कुर्तीवाले भी तो जनताको उकसा रहे हैं कि वह सरकारको भू-राजस्व कर न दे। उन्होंने इस तथ्यको स्वीकार नहीं किया और कहा कि मैंने अपना सारा राजस्व कर सरकारको चुका दिया है। यदि हम अन्य लोगोंको करका भुगतान न करनेके लिए प्रोत्साहित करते तो हम अपने करका भुगतान ही क्यों करते?

"...मैंने उनसे कहा कि आपके बहुतसे भाषणोंमें इतनी काफ़ी आपत्तिजनक सामग्री है कि आपके ऊपर अभियोग चलाया जा सकता है और अभियोग न चलाकर हद दर्जेकी सहनशीलता दिखायी जा रही है। सरकार इसलिए कार्यवाही नहीं कर रही है कि यह समझौतेके भंगकी दिशामें एक कदम होगा। वह जहाँतक सम्भव हो इस स्थितिको टालना चाहती है। सरकार जो अपनेको बचा रही है, उसका यह कारण नहीं है कि वह डर गयी है। यदि उसे लड़ना ही पड़ा तो सरकारको आन्दोलनसे निबटनेमें भी कोई कठिनाई नहीं होगी। उन्होंने कहा कि मेरे मनमें इस बातका बहुत दर्द है कि मुझको तो अभियोगसे मुक्त रखा गया और मेरे अनेक साथियोंपर मुक़दमे चलाते जा रहे हैं। वे स्वयं शान्ति रखनेके इच्छुक जान पड़े परन्तु जब बिना किसीको उत्तेजित किये ही लाल कुर्तीवालोंके साथ अनुचित व्यवहार होता है तब वे मौन नहीं रह पाते। मैंने उनको सलाह दी कि आप सप्ताहमें सात दिन मौन रहा कीजिए...मैंने उनसे कह दिया कि अगर आप लड़ाई करना चाहते हैं तो आपकी इच्छाकी भी अच्छी तरहसे पूर्ति की जा सकती है। यह समझना कि सरकार भयके कारण कोई कार्यवाही

करनेमें हिचक रही है, स्वयंको धोखेमें रखना होगा। चर्चाके बीचमें मैंने जब भी कभी उदाहरणके लिए या तुलना करते हुए किसी बाहरकी घटनाका उल्लेख किया तब उन्होंने मुझे बीचमें ही रोककर कहा कि उसमें उनको कोई दिलचस्पी नहीं है। उनका सम्बन्ध केवल सीमा-प्रान्तसे है। यह एक ऐसा विशेष लक्षण था जिससे ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ दिनोंमें या बादमें उनके तथा कांग्रेसके बीच एक दरार अवश्य पड़ जायगी।

"उनका व्यवहार मैत्री-पूर्ण था और वे विनोद करना भी जानते थे। मुझको ऐसा लगा कि वे कुछ हठधर्मी हैं और समस्याके केवल एक पक्षको देखते हैं। उनके मनमें यह धारणा पूरी तरह घर कर गयी है कि प्रशासन और उसके सारे अधिकारी उनका विरोध करनेके लिए तैयार खड़े हैं, हालाँकि जो कार्यवाही उनको करनी पड़ रही है उसका उन्हें कारण भी नहीं बतलाया जा रहा है। मेरा अनुमान है कि वे गांधीजीकी इस शिक्षाका पालन करनेकी चेष्टा करेंगे कि धीरे चलो; सारा कार्य शांतिसे धैर्यपूर्वक करो; परन्तु उनको इसमें सफलता नहीं मिल सकेगी क्योंकि जब भी कोई ऐसी घटना होगी, जिसको वे 'लाल कुर्तीवालों के ऊपर दमन' की संज्ञा दे सकें तब वे शान्तिसे न बैठ सकेंगे और उससे न अपने को अलग रख सकेंगे। मेरा अपना खयाल है कि वे दूसरोंको उत्तेजित करनेवाली या चिढ़ानेवाली बातोंको रोकनेकी कोशिश करेंगे लेकिन यदि उन्होंने अपने संगठनके लिए कठोर श्रम करना रोक दिया तो मुझको अत्यधिक आश्चर्य होगा। उनकी इस प्रवृत्तिपर ही अधिक सचेत होकर दृष्टि रखनेकी आवश्यकता है।"

शिमलाकी एक सार्वजनिक सभामें बोलते हुए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने कहा कि वे एक अभागे प्रान्तके रहनेवाले हैं जहाँ कि सरकारके द्वारा जनता-को रोज़ नये-नये कष्ट मिलते रहते हैं। ब्रिटिश सरकारने गांधीजीको एक आरोप-पत्र भेजा था। उसका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि जो लोग कांचके घरों-में रहते हों उनको दूसरोंके ऊपर पत्थर नहीं फेंकना चाहिए। उन्होंने कहा कि मुझे इस आचरणपर हँसी आती है। सरकारकी मनोवृत्ति उस वकील जैसी है जो अभियुक्तको दोषी समझते हुए बचावके लिए उसकी पैरवी करता है। अकबरपुर-की घटनाका ज़िक्र करते हुए उन्होंने कहा कि फौज़ियोंने गाँववालोंके साथ जैसा व्यवहार किया है वैसा संसारकी कोई असभ्यसे असभ्य सरकार भी नहीं करेगी। न उससे यह अपेक्षा की जा सकती है। उन्होंने यह भी कहा कि इस दुःखान्त घटनाके समय जब स्त्रियाँ और बच्चे घायलोंके लिए पानी लानेको कुओंपर गये तब अंग्रेज अधिकारियोंके उकसानेपर उनके घड़ोंको फोड़ दिया गया। एक ओर

तो लोगोंको पीटा गया और दूसरी ओर उनको गिरफ्तार भी कर लिया गया। यह ब्रिटिश सभ्यताका एक नमूना है। उन्होंने सरकारको चुनौती दी कि यदि वह कर सके तो इस आरोपका प्रतिवाद करे।

गांधीजीने मि० एमर्सनको एक पत्र लिखा, जिसमें उन्होंने लिखा : "पिछले दिनों मैं इतना अवकाश न निकाल सका कि मैं खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँसे अकबरपुरके सम्बन्धमें और उन कैदियोंके साथ हुए व्यवहारके बारेमें एक वक्तव्य ले लेता, जिनको कि मैं अन्य किसी उपयुक्त शब्दके न मिल सकनेके कारण 'राजनीतिक बन्दी' कहूँगा। खान साहबने मुझको पेशावर जेलके उन कैदियोंका मर्मस्पर्शी विवरण भेजा है जिनको एक नाटक अभिनय करनेके अपराधमें सज़ा हुई है। आपको स्मरण होगा, उनके बारेमें मेरी आपसे चर्चा भी हुई थी। खान साहब लिखते हैं कि उन बन्दियोंके वेड़ियाँ डाल दी गयी हैं और उनसे 'खरस' चलाने (पत्थर कूटने) का काम लिया जाता है। हट्टे-कट्टे व्यक्तियोंसे कड़ा काम लेनेमें मुझे कोई आपत्तिकी बात नहीं लगती परन्तु बलिष्ठसे बलिष्ठ मनुष्यकी भी अपनी एक सीमित कार्यक्षमता हुआ करती है और उस समय, जब कि किसीके पैरमें वेड़ियाँ हों, पत्थर कूटना हँसी-खेल नहीं है। मैं आपको इस पत्रके साथ ही श्रीमती खुर्शेद बहिनका एक वक्तव्य भेज रहा हूँ। यह अकबरपुरके उन घायल पुरुष और स्त्रियोंके सम्बन्धमें है जिनको कि स्वयं उन्होंने देखा है। मैं आपसे आशा करता हूँ कि आप इन सब वक्तव्योंको मिथ्या या अतिशयोक्तिपूर्ण कहकर एक ओर न रख देंगे। ..."

शिमलामें विद्यार्थियोंकी दी हुई एक दावतमें फीरोज़ ख़ाँ नूनने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँसे कहा : 'आप पख़्तून लोगोंने मुसलमानोंको बहुत बड़ी हानि पहुँचायी है।' 'लेकिन इसमें हमारा क्या दोष है?' खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने कहा, 'सबसे पहले हम आपके पास आये। जब हमने यह देख लिया कि आप हमारी सहायता नहीं करना चाहते तब हम कांग्रेसके पास गये। हम गुलामीसे तंग आ चुके हैं और अब हम आज़ादी चाहते हैं। यदि आप भी स्वाधीनताके इच्छुक हैं तो हम अब भी आपके साथ हैं।' 'हम अपने साथियोंसे परामर्श करनेके बाद आपको इसका उत्तर देंगे।' फीरोज़ ख़ाँ नूनने कहा और इस चर्चाके लगभग पन्द्रह वर्ष पश्चात् बिहारके दंगोंके समयमें वे खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँसे पटनामें मिले।

शिमलामें 'सिविल एण्ड मिलिट्री गज़ट' के एक संवाददाताने उस भेंटके बारेमें, जो ब्रिटिश अधिकारियों और खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँमें हुई थी, एक

ग़लतफ़हमी पैदा कर दी। उसने अपने पत्रमें यह भ्रामक समाचार प्रकाशित करा दिया कि पेशावरकी घटनाओंकी जाँचके बारेमें कांग्रेसकी कार्यकारिणीने खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँकी बातोंको स्वीकार नहीं किया है इसलिए वे उससे त्याग-पत्र दे देंगे। इस समाचारसे पंजाब और सीमाप्रान्तमें हलचल फैल गयी। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ जब लाहौर पहुँचे तब उनको नवाब साहब खान अब्दुल क़ैयूमका भेजा हुआ एक आदमी मिला। उन्होंने सीमाप्रान्तसे यह सन्देश भिजवाया था कि आप कांग्रेससे अलग न हों। यदि आपने कांग्रेसको छोड़ दिया तो अंग्रेज सरकार सीमाप्रान्तको कोई सुधार नहीं देगी।

शिमलासे लौटकर खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने देखा कि अंग्रेजोंने उनके कुछ सहयोगियोंके मनमें भय और रोषके बीज बो दिये हैं और वे गुप्त रूपसे उनके विरोधमें काम कर रहे हैं। कतिपय साथियोंको यह लगा कि आपसकी इस दरार-से आन्दोलनको हानि पहुँचेगी। उन्होंने मतभेदको दूर करनेके लिए मियाँ जाफ़र शाहके मकानपर एक बैठकका आयोजन किया। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके विरो-धियोंका कहना था कि उनका हिन्दुओंके ऊपर विश्वास नहीं है और उनको भय है कि गोलमेज़ परिषद्में कहीं उनके अधिकारोंकी उपेक्षा न कर दी जाय। उन लोगोंकी राय थी कि उनको इस आशयका एक प्रस्ताव स्वीकृत कर लेना चाहिए। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने उनसे कहा कि हिन्दुओंने अबतक तो हमारे साथ कोई अविश्वसनीय कार्य नहीं किया है और इस मौकेपर तो हमें इस प्रकारकी कोई अड़चन खड़ी ही न करनी चाहिए। उन्होंने यह गम्भीर घोषणा की, 'यदि हिन्दुओंने हमारे विश्वासको भंग किया तो हम सब खुदाई खिदमतगार आपके नेतृत्वको स्वीकार कर लेंगे और आपके आदेशानुसार चलेंगे।'

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने इस घटनाका वर्णन करते हुए लिखा है, "रातमें जब हमारे मतभेद अंतिम रूपसे दूर हुए समझ लिये गये तब हम लोगोंने एक मित्रके रूपमें एक-दूसरेसे बिदा ली। सवेरेके समय जब हम लोग चाय पी रहे थे तब प्रान्तीय जिरगाके जनरल सेक्रेटरी मियाँ जाफ़र शाहने कहा कि 'यह बात सिद्धांततः ग़लत है कि सारे लोग एक व्यक्तिके नेतृत्वको स्वीकार करें और उसके आदेशानुसार कार्य करें।' मैंने उनसे कहा, 'मियाँ साहब, एक व्यक्तिके नेतृत्वमें काम करना किसी भी देशके लिए कल्याणकारी है और विश्वभरमें इसे स्वीकार किया जाता है। यह अवश्य है कि यह इस बातपर निर्भर करता है कि वह व्यक्ति देशके हितके लिए काम कर रहा है या स्वार्थकी पूर्तिके लिए। यदि वह सारा कार्य निजी लाभके लिए कर रहा है तो वह देशकी हानि कर रहा है

और उसका विरोध न्यायसंगत है। यदि आप ऐसा सोचते हैं कि मैं व्यक्तिगत स्वार्थके लिए काम कर रहा हूँ तो आपको मेरा विरोध करना चाहिए परन्तु यदि आपका यह विचार है कि मैं राष्ट्रके हितके लिए काम कर रहा हूँ तो आपको हमारा साथ देना चाहिए। विरोधी पक्षके लोग तो वाद-विवाद करनेपर तुले हुए थे। मियाँ अहमदशाह और हमारे अध्यक्ष खान अब्दुल अकबर खाँ न केवल हम लोगोंसे अलग हो गये बल्कि हमारे विपक्षी बनकर कार्य करने लगे।"

अहमद अकबर खाँ और मियाँ अहमदशाहने सितम्बर सन् १९३१ में एक छोटी पुस्तिकाके रूपमें अपना एक लम्बा वक्तव्य प्रकाशित किया जिसमें यूथ लीग और खुदाई खिदमतगारोंके भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसमें विलयके लिए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको पूर्ण उत्तरदायी ठहराया। इस पुस्तिकामें खान अब्दुल गफ्फार ख़ाँके विरुद्ध यह शिकायत की गयी थी :

"९ अगस्त सन् १९३१ को खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने बम्बईमें कांग्रेसके साथ एक समझौता किया। इस समझौतेके अनुसार यह निश्चय हुआ कि सीमाप्रान्त अफ़गान जिरगा सीमाप्रान्तकी कांग्रेस समिति हो जायगा। खुदाई खिदमतगार कांग्रेस स्वयंसेवक समझे जाने लगेंगे और अफ़गानोंके काले झण्डेकी जगह कांग्रेसका झंडा ले लेगा। एक बात अवश्य हुई, वह यह कि अपने आपको कांग्रेसकी आलोचनासे बचानेके लिए कांग्रेसकी कार्यकारिणी समितिने सीमाप्रान्तके नेताओंको यह अधिकार अवश्य दे दिया कि वे 'जिरगा' और 'खुदाई खिदमतगार' शब्दोंको बनाये रख सकते हैं परन्तु असलियत यह है कि यह जिरगा पुराना जिरगा नहीं होगा और न खुदाई खिदमतगार ही वे खुदाई खिदमतगार होंगे। हमने अपनी शक्तिभर इस बातकी बहुत चेष्टा की कि इस संस्थाका अस्तित्व विलय न हो क्योंकि प्रत्येक व्यक्तिकी अपने दलमें ही सम्मानपूर्ण स्थिति रहती है; परन्तु हमारी बात किसीने नहीं सुनी। उन सब लोगोंने, जो २३ अगस्तकी 'अफ़गान सेण्ट्रल जिरगा' की बैठकमें उपस्थित थे, इस निर्णयको स्वीकार कर लिया। हम लोगोंने विचार किया कि इस मामलेपर खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँसे पुनः चर्चा कर ली जाय। वे १२ सितम्बरको वापस लौटे और हम कुछ मित्रोंके साथ इस सम्बन्धमें उनसे बातचीत करने उनके पास गये। उनके सामने बहुतसे प्रस्ताव रखे गये परन्तु उन्होंने किसीको स्वीकार न किया। अंतमें यह निश्चय किया गया कि हम लोगोंको एक वक्तव्य देना चाहिए :

"यह बात राष्ट्रकी जानकारीमें होनी चाहिए कि हम लोगोंने न तो त्यागपत्र दिये हैं और न हमने अपना कार्य ही रोका है। हमारी खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार

ख़ाँके साथ कोई व्यक्तिगत शत्रुता नहीं है और हम उनको अबतक अपने प्रिय मित्रोंमेंसे एक समझते हैं। उनके लिए हम लोगोंके मनमें आदर है। हम यह कह सकते हैं कि हम जमायत-उल-उलेमा अथवा सिख लीगकी भाँति कांग्रेसको अपना सहयोग देते रहेंगे परन्तु अपने अस्तित्वको विलीन नहीं करेंगे। बम्बईके समझौतेने मांस-मांस ले लिया है और हड्डियोंको हमारे लिए छोड़ दिया है। हम यह कहना चाहते हैं कि यदि राष्ट्रको हमारी सेवाओंकी आवश्यकता होगी तो हम उनसे इनकार नहीं करेंगे परन्तु हमारी यह इच्छा है कि पुराना जिरगा बना रहे····।"

इसका उत्तर देते हुए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने सारे तथ्योंको २१ सितम्बर को इन शब्दोंमें जनताके सामने रखा :

"समाचारपत्रोंमें कई बार मेरे ऊपर व्यक्तिगत हमले हुए और मेरे विरोध-में अनेक आपत्तियाँ उठायी गयीं। मैं उन सबका तबतक उत्तर देना आवश्यक नहीं समझता जबतक मैं यह नहीं समझता कि उनसे देशको हानि पहुँच सकती है। मैंने इस वक्तव्यका भी कभी प्रतिवाद न किया होता परन्तु मैं यह समझ रहा हूँ कि इससे राष्ट्रमें एक भ्रम उत्पन्न होगा और इस अवसरपर मेरा मौन एक अपराध समझा जायगा।

"अपने इस वक्तव्यमें मेरे मित्रोंने जनताको मार्ग-भ्रष्ट करनेके लिए इधर-उधरकी बहुतसी बातें कही हैं परन्तु उनकी असली आपत्ति यह है कि 'फ्रण्टियर लोइ जिरगा' से बिना पूर्व अनुमति लिये यूथ लीगको कांग्रेससे क्यों मिला दिया गया? तथ्य इस प्रकार हैं :

"हमारी यूथ लीगकी स्थापना सन् १९२९ में हुई। उसमें हमने अपना यह उद्देश्य निश्चित किया कि हम इस संस्थाके द्वारा पठान राष्ट्ररूपी भवनका निर्माण करेंगे और हमारे समाजमें जो बड़े-बड़े दोष हैं उनको दूर करनेका प्रयत्न करेंगे। इसी भावनासे प्रेरित होकर हमने जिरगे कायम किये और सीमा-प्रान्तमें खुदाई खिदमतगारोंकी भर्ती शुरू की। अप्रैल १९३० में हम लोग गिरफ्तार कर लिये गये। इसके पश्चात् सरकारने हमारे कार्यकर्ताओं और खुदाई खिदमतगारोंपर जो दमन किया, वह एक अवर्णित कथा है। जब हमारे जिरगेकी कार्यकारिणीने यह पूरी तरहसे समझ लिया कि शासन हम पख्तूनोंको मिटा देनेपर तुल गया है तब उसने पख्तूनोंको बचानेके लिए भारतकी भिन्न-भिन्न संस्थाओंसे नैतिक सहा-यताकी खोज की। परन्तु कांग्रेसको छोड़कर शेष कोई उसे अपना सहयोग देनेको तैयार न हुआ। हमारे अफ़गान राष्ट्रके प्रति कांग्रेसकी सहानुभूति बढ़ती गयी

और जितना उसके लिए सम्भव था, उसने हमारी सहायता की अर्थात् उसने समाचार-पत्रों और भाषणोंके द्वारा हमपर किये जानेवाले दमनको संसारके सामने खोलकर रख दिया। अप्रैल १९३० की घटनाकी जाँचके लिए उसने एक समिति नियुक्त की और अन्य कई प्रकारसे हमारे प्रति अपनी सहानुभूति दिखलायी। हमारे जिरगाके दो ज़िम्मेदार सदस्य मियाँ अब्दुल शाह तथा मियाँ जाफ़र शाहने इन्हीं कारणोंसे, मियाँ अब्दुल अकबर खाँ, मियाँ अहमद शाह और मेरी रायसे अंग्रेजी-में एक छोटी किन्तु तथ्यपूर्ण पुस्तिका प्रकाशित की। इसमें उन लोगोंने यह घोषित किया कि अफ़गान लीग कांग्रेसका एक अंग है। अफ़गान सेन्ट्रल जिरगाने भी इसको बल देते हुए एक वक्तव्य प्रकाशित किया। इसके बाद सरकारने कई तरह-से, अनेक बार यह प्रयत्न किया कि हमारा जिरगा कांग्रेससे अपने सम्बन्ध तोड़ ले। यहाँतक कि जब हम जेल भेज दिये गये तब भी हमको वहाँ सूचना दी गयी कि यदि हम कांग्रेससे अपने सम्बन्धोंको तोड़ लें तो हम लोगोंके साथ पृथक् रूपसे एक सन्धि की जा सकती है। परतु जब मियाँ अहमद शाह, अब्दुल अकबर खाँ और मैंने मिलकर इस प्रश्नपर विचार किया तब हम लोग इस परिणामपर पहुँचे कि यदि हमारा जिरगा कांग्रेससे सम्बन्ध तोड़ लेता है तो सरकार हमें कहींका न रखेगी। अतः हमने इस प्रस्तावको स्वीकार नहीं किया।

"सन्धिके पश्चात् हम लोग जेलसे बाहर आ गये। मियाँ अहमद शाहको यह बात अच्छी तरह स्मरण होगी कि 'दि सिविल एण्ड मिलिटरी गज़ट' के मिथ्या प्रचारका खण्डन करनेके लिए मैंने जो प्रतिवाद प्रकाशित कराया था, उसमें उनके आग्रहसे ही मैंने जिरगाको कांग्रेसका एक अंग स्वीकार किया। मियाँ साहब ने उस समय स्वयं ज़ोर देकर कहा, 'हम लोगोंको कांग्रेसमें सम्मिलित हो जाना चाहिए अन्यथा सरकार हमारे जिरगेका नाम-निशान मिटा देगी। वे यह अच्छी तरह समझते हैं कि एक ओर जिरगाको कांग्रेसका एक अंग स्वीकार करनेका और दूसरी ओर यह वक्तव्य प्रकाशित करनेका कि कांग्रेससे हमारी केवल सन्धि हुई थी या उससे एक सम्बन्ध मात्र था, क्या अर्थ होता है?

"बादमें पेशावर कांग्रेस समितिके सदस्य आपत्तियाँ उठाने लगे। हम लोगोंने उनके साथ वाद-विवाद किये। खान अब्दुल अकबर खाँ और मियाँ अहमद शाह यह स्वीकार करनेको तैयार थे कि पेशावरके जिरगोंको तो कांग्रेस समितियाँ कहा जाय परन्तु गाँवोंके जिरगोंका वही नाम रहे और उनका प्रधान कार्यालय उत्मान-ज़ईमें हो। पेशावरियोंने इस प्रस्तावको नहीं माना। गुत्थी उलझती गयी और अन्ततः दोनों दलोंको बम्बई जाना पड़ा। अब्दुल अकबर खाँ और मियाँ अहमद

शाहने मुझसे यह प्रार्थना की कि हमें पेशावरियोंसे छुटकारा दिलवाइए और मुझपर जोर डाला कि मैं इस बातकी पूरी कोशिश करूँ कि कांग्रेस जिरगेका वही पुराना नाम बनाये रखे। हम लोग बम्बई गये। मियाँ अहमद शाह बम्बईमें रुके नहीं और वापस चले आये। उनका विचार था कि देवदास गांधीका उनके प्रति व्यवहार यथेष्ट आदरपूर्ण नहीं था। इतनी साधारण-सी बातपर क्रोधित होकर लौट आना मियाँ अहमद शाहकी एक दुर्बलता ही कही जायगी जब कि वे एक आवश्यक प्रश्न के निबटारेके लिए बम्बई गये थे। यदि मियाँ साहबके मनमें राष्ट्रके लिए उतनी ही सहानुभूति है, जितनी कि उन्होंने अपने वक्तव्यमें प्रदर्शित की है तो निश्चित ही उन्हें किसी निजी मामलेसे एक राष्ट्रीय उद्देश्यको अधिक अहमियत देनी चाहिए थी। उस स्थितिमें सब समस्याएँ उनके सामने ही सुलझ जातीं। जब मियाँ साहब वापस चले आये तब मैंने जो भी समझौता राष्ट्रके लिए कल्याणकारी समझा, वह कर लिया। यदि प्रान्तीय केन्द्रीय समितिने, जो नियम और व्यवस्थाके अनुसार अकेला 'लोइ जिरगा' है, उसे सर्व-सम्मतिसे स्वीकार न कर लिया तो मैं अपना समझौता बादमें निष्फल भी कर देता। मियाँ साहबके इस प्रकारके गुप्त प्रचारसे और प्रत्येक सदस्यके पास अलग-अलग पहुँचकर यह कानाफूसी करनेसे कि यह समझौता ग़लत है, कितनी हानि हो सकती है! और फिर इस प्रकारका अनुचित वक्तव्य प्रकाशित करना कितना बड़ा राष्ट्रीय अपराध है! मेरे भाइयो, इस सम्बन्ध में जो कुछ भी हुआ है वह विधिवत् नियमोंके अनुसार हुआ है। मियाँ साहबने सारे प्रदेशसे जिरगाके सदस्योंको बुलवाया और उन लोगोंने समझौतेको सर्व-सम्मतिसे स्वीकार करके उसकी पुष्टि की। यह 'लोइ जिरगा' है। नियमोंमें किसी अन्य 'लोइ जिरगा' की चर्चा नहीं है जिसका कि मियाँ साहबने उल्लेख किया है। यह बात अवश्य है कि वहाँ यह लिखा हुआ है कि 'लोइ जिरगा' वर्षमें एक बार हुआ करेगा परन्तु उसका अभिप्राय वार्षिक अधिवेशनसे है।

"इसके अतिरिक्त यह कहना भी ग़लत है कि हमारे सम्बन्ध कांग्रेसके साथ वैसे ही होंगे जैसे कि जमायत-उल-उलेमा-ए-हिन्द या सिख लीगके हैं। उन्होंने तो कभी यह नहीं कहा कि वे कांग्रेसके एक अङ्ग हैं, जब कि हमारा जिरगा कांग्रेसका एक अङ्ग होनेकी घोषणा कर चुका है।

"अब झण्डेके बारेमें भी दो शब्द: मेरा कथन है कि इस समयतक हमारे जिरगाने अपना कोई झण्डा निश्चित नहीं किया। प्रत्येक स्थानपर झण्डेका अनियमित व्यवहार हुआ है। प्रत्येक दलने अपने झण्डेको अपने मनचाहे रङ्गमें रंग लिया। बहुतसे दल कांग्रेसके ध्वजको अपना झण्डा मान रहे हैं। अबसे,

यदि प्रान्तीय जिरगाने कांग्रेसके झण्डेको चुन लिया तो इसमें क्या हानि है ? यह कहना बिलकुल ग़लत है कि जिरगाने काले झण्डेको अपने ध्वजके रूपमें मान्यता दी है । यह कहना भी बिलकुल गलत है कि हमारा जिरगा कांग्रेसमें वैसे ही घुल जायगा जैसे कि पानीमें शक्कर, जैसा कि मियाँ साहब सोचते हैं ।

"मेरी तुच्छ सम्मतिमें यह एक नया समझौता नहीं है । यह स्वीकार किया जा चुका है कि जिरगा तथा कांग्रेसके उद्देश्य, सिद्धान्त, नीतियाँ तथा विरोध एक तथा समान हैं । हमारे बीचमें केवल यह अन्तर था कि हमारा दल जिरगा कहलाता था और हमारे स्वयंसेवक खुदाई खिदमतगार, जिनकी वर्दी लाल थी । इस समझौतेके बाद भी ये सब चीजें पहले जैसी ही चलती रहेंगी । मियाँ अहमद शाह और खान अब्दुल अकबर खाँका भीतरी मतलब क्या है, यह मैं नहीं जानता । मेरा विचार है कि वे कार्यको छोड़नेके लिए कुछ बहाने खोज रहे हैं क्योंकि जिरगाकी प्रायः प्रत्येक बैठकमें इन लोगोंने अपने त्याग-पत्र दिये हैं और वे स्वीकार नहीं किये गये हैं । यदि मात्र यही उद्देश्य है तो इसके लिए राष्ट्रमें एक फूट डालनेकी क्या आवश्यकता है ? इन लोगोंको स्वेच्छासे, शान्तिपूर्वक अपने कामको छोड़ देना चाहिए और उन अन्य लोगोंके कार्यमें, जो राष्ट्र-सेवामें लगे हैं, विघ्न नहीं डालना चाहिए ।

"मैं बड़ी विनम्रतासे निष्कर्षके रूपमें यह कहूंगा कि मैंने अपने जीवनका सबसे अच्छा समय; लगभग इक्कीस वर्ष पठान-राष्ट्रकी सेवामें अर्पण किये हैं । मैंने सारे विश्राम और सुखको, स्वास्थ्य और धनकी समस्त सुविधाओंको अपने लिए 'हराम' माना है । पठान राष्ट्रकी सेवा करते हुए मैंने यह कभी नहीं देखा कि यह रात है या दिन, सर्दी है या गर्मी, पानी बरस रहा है अथवा क्या मैं बीमार हूँ ? मैंने जेल-जीवनकी कठिनाइयोंकी भी कोई परवाह नहीं की । मेरी दृष्टिके आगे यह लक्ष्य रहा कि पठान सुखी और समृद्ध हो और विश्वके अन्य राष्ट्रोंके बीचमें सम्मानसे खड़ा हो । मेरे लिए यह बिलकुल असम्भव है कि मैं पठानके उस सम्मान और विशिष्टताको और लोगोंके हाथों बेच दूं जिसको कि उन्होंने संसारमें अपने त्यागोंके फलके रूपमें पाया है ।

"यदि आपको मेरी निष्कपटतापर विश्वास है तो मैं आपसे कहूँगा कि आप मुझपर भरोसा कीजिए । इस समय हमारे लिए यही भला और हितकारी है कि हम लोग कांग्रेसमें सम्मिलित हो जायें । अपनी एकता और संगठनके बलपर ही अब हम विश्वका आदर पाने लगे हैं । यदि हम दलोंमें बँट गये तो हमारा अनादर होने लगेगा । सारी दुनिया हमारे ऊपर हँसेगी । मैंने वर्षोंतक राष्ट्रकी जो

सेवा की है और पठानोंके लिए जो कुछ त्याग किया है वह सब व्यर्थ हो जायगा ।

"मैं आपको यह आश्वासन देता हूँ कि यदि कांग्रेसके साथ हमारा मिलाप पठानोंके लिए किसी भी प्रकारसे अहितकर सिद्ध हुआ या किसी प्रकारसे उनके विश्वासको छला गया तो मैं कांग्रेससे अपना सम्पर्क तोड़ देनेवाला पहला व्यक्ति होऊँगा । मैं आपको यह आश्वासन दे रहा हूँ कि यदि पठानोंके हितोंकी रक्षाके लिए मुझे संसारसे लड़ना पड़े तो भी मैं न हिचकूँगा और उसके विरुद्ध शान्तिमय युद्ध घोषित करनेवाला मैं पहला व्यक्ति होऊँगा । कांग्रेस हमारे साथ जो प्रतिज्ञाएँ कर चुकी है, उनके अनुसार वह हमें प्रत्येक सहायता देनेको वचनबद्ध है । यदि कांग्रेस अपनी प्रतिज्ञाको भङ्ग करती है तो हम अपने-आपकी वापसीके अधिकार-को सुरक्षित रखते हैं । किसीने हमारे हाथ नहीं बाँध रखे हैं ।

"बन्धुओ, आप स्वयं इस बातका निर्णय कीजिए कि क्या कांग्रेसमें सम्मिलित होनेसे हमारी हानि होगी ? बल्कि इसके विपरीत, मैं तो यह कहता हूँ कि कांग्रेस-के मिलापसे हमारी शक्ति बढ़ी है । कांग्रेस हमारी एक शक्तिशालिनी मित्र है ।"

सन्धिका उल्लंघन

१९३१

२९ अगस्त १९३१ को गांधीजी गोलमेज परषद्में भाग लेने चले गये और उसके बाद यहाँ एक अल्पकालीन शान्ति छा गयी। अब राजनीतिक हलचलका केन्द्र लन्दन हो गया। सितम्बरके पिछले पखवारेमें जो आर्थिक संकट आया उसने ब्रिटिश सरकारको इस बातके लिए विवश कर दिया कि वह सोनेके सम्बन्धमें अपने सिद्धान्तको त्याग दे और रुपयेका सम्बन्ध 'स्टर्लिंग' से जोड़नेका निर्णय घोषित कर दे। भारत सरकारके कार्यक्रममें बोझिल तथा विविध प्रकारके करोंको लगाना भी शामिल था। किसानोंको अपना राजस्व कर चुकानातक कठिन हो गया और उसके भुगतानके लिए सरकारको कड़ी कार्यवाही करनी पड़ी। विशेष रूपसे पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेशमें इस दिशामें सरकारने बड़े कठोर क़दम उठाये। राजस्व करकी वसूलीके सन्दर्भमें एक बड़े ज़मीदार माजुल्ला खाँका मामला विशेष रूपसे उल्लेख करने योग्य है। वे खुदाई खिदमतगार भी थे। वे अपने ऊपर बकाया राजस्व करका भुगतान नहीं कर सके और इसी अपराधमें उनको हवालात भेज दिया गया। उन्होंने अधिकारियोंको सूचित किया कि उनकी इच्छा सरकारी रुपया रोकनेकी नहीं है और जितने शीघ्र भी उनके लिए सम्भव होगा, वे उसे भरनेका प्रयत्न करेंगे। उनके ऊपर केवल कुछ हज़ार रुपये ही निकलते थे, जिनके लिए उनकी एक मोटर-कार, एक ताँगा, एक घोड़ा तथा तीन भैंसें कुर्क कर ली गयीं। जब वे छोड़ दिये गये, उनकी फसल कुर्क कर ली गयी और अंतमें उनकी भूमि भी, जिसका मूल्य १५,००० रुपये कूता जाता था, ज़ब्त कर ली गयी।

दूसरा उदाहरण डॉ० खान साहबके दूसरे पुत्र ओबेदुल्ला खाँका है। उनके नामपर जो भूमि चढ़ी थी, उसके लिए भू-राजस्व करके रूपमें उनको एक लम्बी रक़म चुकानी पड़ी। उन्होंने सारे करका भुगतान कर दिया और केवल ३०० रुपये बकाया रह गये जिनके लिए उनको गिरफ्तार करके चारसद्दा जेलमें भेज दिया गया। जेलमें उनकी रहनेकी जगह बहुत गन्दी थी। वहाँ रहनेसे उन्होंने भोजनका पूर्ण परित्याग ही अच्छा समझा। उनको एक मास पन्द्रह दिनका कारावास दिया गया था। उन्होंने ३८ दिवसका अनशन किया तब स्थितिमें सुधार किया गया। इसके कुछ दिन बाद उनको छोड़ दिया गया। अपने पिता डॉ० खान

साहबकी देखरेखमें उनका एक मासतक इलाज चलता रहा, तब कहीं जाकर वे पुन: स्वस्थ हो सके। इसके पश्चात् वे अपने गाँव चले गये जहाँ कि 'आर्डिनेन्स' के सिलसिलेमें उनको फिर गिरफ्तार कर लिया गया।

इन दिनों सारी राजनीतिक गतिविधियाँ सुपुप्त पड़ी थीं। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके प्रचार-दौरेने सितम्बरके आरम्भमें इस शान्तिको भंग कर दिया। कांग्रेसकी कार्यसमितिने उनको सीमा-प्रान्तमें कांग्रेसके पुनर्गठनका अधिकार सौंपा था। सितम्बरके अंततक धरनेके कार्यने विशेष ज़ोर पकड़ लिया। पेशावर नगर-में धरना देनेके लिए ३००० लाल कुर्तीवाले चुने गये। इनमेंसे लगभग ३०० स्वयं-सेवक एक बार धरना देनेके लिए दूकानोंपर खड़े होते थे। उनका स्थान लेनेके लिए स्वयंसेवक पचास-पचासकी टोली बनाकर जाते थे। वे फ़ौजी ढंगसे कूच करते हुए नगरमेंसे निकलते थे और संस्थाका यह प्रदर्शन नागरिकोंको प्रभावित करके उनमें उत्साह जगाता था। अक्तूबर मासमें अनेक सभाओं तथा जुलूसोंका आयोजन किया गया। जनताको उसके कर्त्तव्य और अधिकारोंके प्रति सचेत करनेको खान गफ़्फ़ार ख़ाँ तूफ़ानी दौरे कर रहे थे। कुछ स्थानोंमें शासनकी ओरसे सार्वजनिक सभाओंपर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था। ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ इस प्रतिबन्धको अवज्ञाकी दृष्टिसे देखते थे और कभी वे उससे बचनेके लिए अपनी सभाएँ मस्जिदोंमें करते थे। वे जनताको आगामी संघर्षके लिए तैयार रहनेकी सलाह देते थे। उनकी बहुतसी सभाओंमें कार्यवाहीके पश्चात् लाल कुर्तीवालोंने अपना झण्डा लहराते हुए और अपने ढोल बजाते हुए सैनिक पद्धतिसे 'मार्च' किया। जिस दिन खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ अपने दौरेके सिलसिलेमें किसी गाँवके पाससे गुज़रते थे उस दिन उस गाँवके लोग तथा स्वयंसेवक सड़कके किनारे आकर खड़े हो जाते थे और आनेपर उनका भी वहीं स्वागत करते थे। वे सभाओं में यह कहा करते थे, "आप लोग मेरी बातोंको ग़ौरसे सुनिए। शायद मुझको शीघ्र ही गिरफ्तार कर लिया जायगा। हम वाणी और लेखनीकी वही स्वाधीनता चाहते हैं जो विश्वके अन्य राष्ट्रोंको प्राप्त है। हम वे अधिकार चाहते हैं जो भारतके अन्य प्रान्तोंको प्राप्त हैं। हम इन काले कानूनोंको वापस लेनेकी मांग करते हैं। एक बातको आप स्मरण रखिए, यदि आप अपनी शक्ति बढ़ा लेंगे तो आपको सब कुछ प्राप्त हो जायगा।"

अक्तूबरके अन्तमें दिल्लीमें कांग्रेसकी कार्यसमितिकी एक बैठक हुई। इसमें सम्मिलित होनेके लिए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको विशेष रूपसे आमंत्रित किया गया। इस बैठकमें समितिने देशकी गम्भीर स्थितिपर विचार-विमर्श किया और

सरकारी नीतिकी बंगाल, संयुक्त प्रदेश तथा सीमाप्रान्तमें आतंक फैलानेके लिए निन्दा की।

बैठककी कार्यवाही पूरी हो जानेके पश्चात् पं० जवाहरलाल नेहरू खान-अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको एक ओर ले गये और बोले, 'हम पेशावर कांग्रेस समिति-को हर महीने ५०० रुपये खर्च भेजा करते हैं। अबसे आपके जिरगाके लिए १००० रुपया बाँध दिया जायगा।'

खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँने कहा, "पंडितजी, हमको आपके रुपयोंकी ज़रूरत नहीं है। भला हम आपसे रुपये क्यों लेंगे? क्या भारत केवल आपका ही देश है? वह हम दोनोंकी समान रूपसे मातृभूमि है। आप अपना भार उठाइये और हम अपना उठायेंगे। यदि आप हमारी सहायता ही करना चाहते हैं तो हमारी बालिकाओंके लिए एक विद्यालय और हमारी बहिनोंके लिए एक चिकित्सालय बनवा दीजिए।" जवाहरलालजी इस बातपर रुष्ट हो गये और उन्होंने डॉ० अन्सारीसे इसकी शिकायत करते हुए कहा कि खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ एक अत्यंत अभिमानी और अहंकारी व्यक्ति हैं। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने डॉ० अन्सारीसे अपनी सफ़ाई देते हुए कहा कि मैंने ऐसी कोई बात नहीं कही जिससे कोई आघात लगे। और रही अभिमानकी बात—एक खुदाई खिदमतगार और अभिमान दोनों साथ-साथ नहीं रह सकते। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कहा है :

"तबतक मैं और जवाहरलालजी एक-दूसरेको भली भाँति पहचानते न थे। हम लोग तबतक गहरे मित्र नहीं बने थे और एक-दूसरेके स्वभावसे भी अच्छी तरह परिचित न थे। जब हमारी घनिष्ठता बढ़ गयी तब हममें परस्पर इतनी आत्मीयता, इतना प्रेम बढ़ गया कि सगे माँ-जाये भाइयोंमें भी न मिलेगा। रुपये-पैसेकी बात मेरे मनको रुचिकर न लगती थी। मैंने अपने जीवनमें कभी किसीसे रुपया नहीं माँगा। कांग्रेसकी कार्य-समितिके सदस्य संस्थासे अपना रेल किराया ले लेते थे परन्तु मैंने उसे कभी स्वीकार नहीं किया। इस प्रश्नपर जवाहरलालजीने मुझसे गर्म बहसें भी कीं।"

पहली नवम्बरको खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ रुस्तम पहुँचे। वहाँके बाज़ारमें खुदाई खिदमतगारोंके कुछ नेता उनके साथ हो लिये। वे उनके साथ सत्याग्रहियों-से बातचीत करते हुए घूमने लगे। फिर वे इस बातका पता लगानेके लिए कि धरना देनेवालोंके प्रति व्यवसायियोंका रुख कैसा है, कुछ हिन्दू व्यापारियोंसे भी मिले। इन दिनों रुस्तममें 'क्रिमिनल प्रोसीजर कोड' की धारा १४४ लगी हुई थी इसलिए एक पुलिस अधिकारीने उनको लोगोंको एकत्रित करनेसे मना किया।

तत्पश्चात् खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने एक मस्जिदमें अपनी सभा की। उसी समय पुलिसका एक दरोग़ा उनके पास एक 'नोटिस' लेकर आया जिसमें प्रतिबन्धका आदेश पालन करनेकी उनको चेतावनी दी गयी थी। इस सभामें आस-पासके इलाकेके लोग बहुत बड़ी संख्यामें उपस्थित थे। पुलिसने खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके इस सभामें किये गये भाषणका सार निम्नलिखित दिया है :

"मृत्युसे न डरिए। धारा १४४ आपकी परीक्षाके लिए है। यदि आप इस आदेशका विरोध नहीं कर सकते तो भला युद्धके लिए कैसे तैयार हो सकते हैं? इसकी ओर ध्यान न दीजिए। आप तैयार हो जाइए और इस अहिंसात्मक युद्धके लिए कमर कसकर मैदानमें निकल आइए। यह अहिंसापूर्ण युद्ध उसी युद्धका एक रूप है जो आपके पूर्वजोंने अबसे १४०० वर्ष पहले लड़ा था। संसारको यह दिखला दीजिए कि आप उनकी संतान हैं। अंग्रेज मुख्य आयुक्त ६००० मील दूरसे आपके ऊपर शासन करने आया है। उसे घूमनेके लिए मोटर-कार दी गयी है। वह आपपर अत्याचार करता है और इसके बदलेमें ५००० रुपया वेतन लेता है। आप खुद अपने ऊपर शासन कीजिए और किसीके अधीन न बनिए। यदि इस युद्ध-क्षेत्रमें आपकी मृत्यु भी हो जाती है तो इससे क्या होता है? आखिर तो प्रत्येक व्यक्तिको एक दिन मरना ही है। अपनी संतानोंके लिए, इस 'जालिम हुकूमत' से आज़ाद होना आपका कर्त्तव्य है। यदि आपने अपना यह कर्त्तव्य न निभाया तो क़यामतके बाद न्यायके दिन आप अल्लाह और रसूल-पाकको क्या उत्तर देंगे?"

पूरे सन्धि-कालमें पुलिस विभाग उनके भाषणोंको लिपिबद्ध करता रहा तथा उनके लेखोंको रखता रहा। वे जहाँ कहीं भी गये, गुप्तचरों द्वारा उनका पीछा किया गया और उनकी प्रत्येक प्रवृत्तिको गहरी दृष्टिसे देखा गया। पुलिस द्वारा लिपिबद्ध किये गये उनके भाषण तथा 'पख़्तून' में प्रकाशित उनके लेख मिलकर एक अनूठा ऐतिहासिक प्रमाण-लेख बनाते हैं। यह वह युग था जब कि उनकी राजनीतिक प्रवृत्तियाँ अपनी चरम सीमापर थीं और उनके कार्यकी तुलना गांधी, नेहरू और वल्लभभाई पटेलसे की जाती थी। नवम्बर १९३१ के पहले पखवारे की सीमाप्रान्त शासनकी गोपनीय टिप्पणीमें यह लिखा है :

"इस पखवारेमें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँकी कार्य-प्रवृत्तियाँ विशेष रूपसे उल्लेखनीय रही हैं। उन्होंने पेशावर जिलेकी मरदान तहसीलमें दौरा किया जहाँ कि कुछ दिनोंसे धारा १४४ लगी हुई है और धार्मिक समारोहों या उत्सवोंके अतिरिक्त शेष समस्त सभाओं, प्रदर्शनों तथा जुलूसोंपर प्रतिबन्ध लगा दिया गया

है। इस इलाकेमें उन्होंने अपने सामान्य व्याख्यानोंकी अपेक्षा अधिक उग्र भाषण किये। उनका रुस्तमकी सभामें किया गया भाषण तो आपत्तिजनक था। समस्त व्यावहारिक प्रयोजनके लिए उसे आदेशका उल्लंघनकर्त्ता तो माना ही जायगा, यद्यपि नामभरके लिए उसका आयोजन एक मस्जिदमें किया गया था। इस सभामें एक बड़ा जन-समूह एकत्र हुआ था और लोग मस्जिदसे काफी दूरतक फैले हुए थे। अपने इस भाषणमें, जो वस्तुतः राजनीतिक था, खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने उपस्थित जनतासे यह स्पष्ट शब्दोंमें कहा कि वह सरकारके इस प्रतिबन्ध-को भंग करे। उन्होंने सभामें उपस्थित लोगोंसे यह कहा कि वे इसके उल्लंघनको अपने लिए एक परीक्षा समझें। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने उत्तेजनाका जो वातावरण बनाया उसमें जनताने अपना सहकार नहीं दिया। उनके यहाँसे जाने-के पश्चात् इस प्रतिबन्धित क्षेत्रमें कोई सभा भी नहीं हुई। लाल कुर्ती दलके स्थानिक नेता खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके इस सीमातक पीछे चलनेको तैयार नहीं हैं। शायद वे यह सोचते हों कि यह सब खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने एक आक्रोशमें कहा, जिससे वे इन दिनों अधिक ग्रसित जान पड़ते हैं। बल्कि इसके सर्वथा विपरीत ऐसे संकेत मिले हैं कि उनके दलके लोग सरकारका रुख देख रहे हैं। मरदान तहसीलके लाल कुर्तीवाले यह बड़ी उत्सुकतासे देख रहे हैं कि धारा १४४ के अन्तर्गत सभा न करनेकी आज्ञाको भंग करने और जनताको उकसानेके अपराधमें देखें सरकार खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके ऊपर क्या कार्यवाही करती है? यदि इस दिशामें शासनने कोई क़दम न उठाया तो स्थानीय स्थितिका उत्तरोत्तर विगड़ते जाना अवश्यम्भावी है। अन्य स्थानोंपर सम्भवतः इसकी प्रतिक्रिया भी होगी। और कुछ न सही तो इससे एक ऐसे क्षेत्रमें प्रतिबन्धका अभाव तो नष्ट हो ही जायगा जो कि पिछले कुछ दिनोंसे पेशावर जिलेका सबसे खराब इलाका रहा है और जहाँ सरकारके प्रति द्रोहकी ही नहीं अपितु अराजकताकी भावनाएँ फैलती जा रही हैं।

"मरदानसे लौटनेके बाद खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ तख्तावादकी एक विशाल सभामें गये। तख्तावाद पेशावर तहसीलके दौगज़ई थानेकी सीमामें पड़ता है। यह क्षेत्र पिछले कुछ वर्षोंसे सरकारकी चिन्ताका एक कारण बना हुआ है। इस सभाका, जिसमें खान अब्दुल ग़फ्फार खाँने फिरंगियोंके विरुद्ध आपत्तिजनक भाषण किया, यह परिणाम सामने आया कि इस इलाकेमें सरकारकी स्थिति कुछ गिर गयी और उसकी प्रतिष्ठापर ठेस लगी। इस सभाका तत्कालीन प्रभाव यह हुआ कि उन लोगोंने भी, जिन्होंने कि भू-राजस्व करके भुगतानका वादा किया,

उसे चुकानेसे इनकार कर दिया। खान लोगोंमें भी ऐसे व्यक्तियोंकी संख्या कम नहीं है जो इस विश्वासपर अपना कर रोके हुए हैं कि लाल कुर्तीवालोंके अभियानके कारण सम्भव है कि सरकार उसमें कुछ छूट दे दे, या सभी मामलोंमें बकाया लगान माफ़ कर दे। कुछ लोगोंके इनकारका तरीक़ा ऐसा रहा कि मानों उन्होंने जान-बूझकर सविनय अवज्ञाका यह रूप अपनाया हो। नहरोंके पानीके उपयोगके विरुद्ध, जिसके लिए सिंचाई कर देना पड़ता है, गांवोंमें संगठित रूपसे प्रचार कार्य चलाया जा रहा है। इस कार्यके लिए कुछ दल देहातोंमें दौरे कर रहे हैं। चारसद्दा, मरदान, यहाँतक कि मालाकण्ड एजेन्सीके साथ रानीज़ई क्षेत्रमें भी किसानोंसे अंगूठा लगवाकर यह वचन लिया जा रहा है कि जबतक सिंचाईकी दरमें कमी नहीं की जायगी, वे रवीकी फसलके लिए नहरका पानी नहीं लेंगे।

"पेशावर शहरमें हालाँकि स्वयंसेवक धरना दे रहे हैं, स्थिति शांत है और काबूमें कर ली गयी है।...

"५ नवम्बरको खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ अपने हज़ारा ज़िलेके दौरेके लिए चल दिये। वहाँसे कुछ ऐसे संकेत मिले हैं कि सम्भवतः उनको पहली ही बार असफलताका मुँह देखना पड़ा है। सारी मानसेहरा तहसीलमें, जहाँसे कि उन्होंने अपना दौरा प्रारम्भ किया है, उन्हें एक संगठित विरोधका सामना करना पड़ा है। वफा, लाल कुर्तीवालोंका एक गढ़ समझा जाता है, लेकिन वहाँ भी उनका कोई प्रभावशाली स्वागत नहीं हुआ। उनके भाषणको भी, जो आधा पश्तू और आधा उर्दूमें था, लोग मुश्किलसे समझ सके। उपस्थित जनसमुदायका एक बड़ा अंश उनके भाषणकी समाप्तिसे पहले ही धीरे-धीरे सरक गया।...मानसेहराने तो दो प्रतिद्वन्द्वी परेडों और सभाओंका दृश्य देखा। यहाँके विरोधके फलस्वरूप कुछ स्थानोंसे सभाओंका आयोजन अंतिम क्षणपर हटाना पड़ा और वह सभा अन्यत्र की गयी। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँकी सभाओंका यहाँ पूर्वनिश्चित कार्यक्रम स्थिर न हो सका। इसके दो कारण थे, एक तो विरोध और दूसरा कुशल स्थानीय संगठनका अभाव।

"वैल्स रेजीमेन्टकी दूसरी बटालियनने अपना झण्डा उड़ाते हुए अबोटाबाद से १ नवम्बरको कूच किया और ६ नवम्बरको वह मानसेहरा और ओघी होती वफ़ा पहुँच गयी। बहुतसे सेवानिवृत्त सैनिक बटालियनमें मिलने आये और उनका स्वागत-सत्कार किया गया। ओघीमें बहुतसे जन-जातीय लोग भी उपस्थित थे। लगभग ४० वर्षसे किसी ब्रिटिश बटालियनने ओघीमें प्रवेश न किया था और

ऐसा जान पड़ता है कि वफ़ामें तो इससे पहले कोई अंग्रेज पलटन आयी ही न थी।

"मियाँ अहमद शाह और उनके साथियोंने एक पृथक् संगठन खड़ा किया है परन्तु इस दिशामें वे विशेष कार्य नहीं कर सके हैं। उनके सम्बन्धमें अधिकसे अधिक यह कहा जा सकता है कि वे अपनी भूमि तैयार कर रहे हैं। दूसरी ओर खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँका अपना मार्ग भी सरल नहीं लगता।

"सम्भवतः वे स्वयं भी इस तथ्यका अनुभव करने लगे हैं। उनके कुछ प्रमुख सहयोगियोंके विरुद्ध कानूनी कार्यवाही भी की गयी है। यह देखा जा रहा है कि पिछले कुछ दिनोंसे उनका मिज़ाज कुछ विगड़ा रहता है और वे अपने-आपको रोक भी नहीं पाते। ये सब बातें भी यही प्रदर्शित करती हैं। उनके आगे एक ओर मियाँ अहमद शाह आदिका विरोध है और दूसरी ओर नगर कांग्रेस समिति-के नेताओंका। इसके अलावा उनपर ऊपरसे यह दवाव भी डाला जा रहा है कि वे अपनी संस्थामें कांग्रेसके नियम और व्यवस्थाका अधिक दृढ़तासे पालन करें। यह स्थिति सम्भवतः उनके अनुयायियोंमें आगे भी एक मतभेद उत्पन्न करेगी।"

नवम्बर महीनेके मध्यमें जायो गाँवमें खुदाई खिदमतगारोंकी एक सभाको सम्बोधित करते हुए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने कहा : "मैं आपके गाँवमें आपको जगाने आया हूँ—उन सब लोगोंको जो सोये हैं और संसारके बारेमें उदासीन और अपरिचित हैं। मैं चाहता हूँ कि आप अपनी दशाकी ओर देखें, इन फटे वस्त्रों और इन नंगे बच्चोंकी ओर देखें। आपकी इस दशाका कारण यह है कि आप अपने धर्मके सम्बन्धमें अज्ञानमें हैं। ये युवक, जिन्होंने लाल कपड़े पहन रखे हैं और जो अलग-अलग जगहोंसे यहाँ आये हैं, आपकी, ईश्वरके प्राणियोंकी सेवा करना चाहते हैं। ईश्वरके प्राणियोंकी सेवा करना ईश्वरकी सेवा करना है। रसूल पाकने यह कहा है कि वह युवक सबसे धर्मात्मा और ईश्वरसे डरनेवाला है जो ईश्वरके प्राणियोंको सुख देता है।

"इस बातको भी स्मरण रखिए कि अकेले मुसलमान ही ईश्वरके प्राणी नहीं हैं। हिन्दू, मुसलमान, सिख, यहूदी, ईसाई और पारसी, तात्पर्य यह है कि जो भी इस संसारमें है, ईश्वरका प्राणी है। खुदाई खिदमतगारोंके लिए यह धर्मका आचरण है कि वे विश्वके समस्त प्राणियोंको सुख दें। उन्होंने इसकी दीक्षा ली है और इस कार्यके लिए शपथ ग्रहण की है। उनका उद्देश्य यह है कि वे दलित व्यक्तिको अत्याचारीके हाथोंसे मुक्त करें। वे अत्याचारीके विरुद्ध खड़े हों, भले ही

वह हिन्दू हो, मुसलमान हो अथवा अंग्रेज हो। यदि आप अंग्रेजोंके खिलाफ़ हैं तो इसका कारण यह है कि वे अत्याचारी हैं और हमारे ऊपर दमन किया जा रहा है।

"ख़ुदाई खिदमतगार बड़ा धैर्य रखते हैं। यदि कोई उनका अपमान करे तो भी वे बदलेमें उसका अपमान नहीं करेंगे। वे किसीको भी किसी प्रकारका कष्ट नहीं देंगे। वे उत्तेजित नहीं होंगे और न अपने मनमें किसीके प्रति प्रतिहिंसाकी भावना रखेंगे। हमारा विश्वास ईश्वरपर है, वही हमारा बदला लेगा।

"बन्धुओ, प्रत्येक व्यक्तिको एक बार मरना है, चाहे वह वीर हो या कापुरुष। वह मृत्यु, जिसे अल्लाह और रसूल पाकके नामपर गले लगाया जाता है, प्रशंसाके योग्य है।

"आप मुझसे पूछेंगे कि मैंने और सब बातें तो कहीं परन्तु मैंने आपको यह नहीं बतलाया कि अंग्रेजोंको किस प्रकार निकाला जाय जो कि हम सबका शोषण कर रहे हैं। मैं आपको वह शस्त्र दे रहा हूँ जिसका सामना पुलिस और सेना नहीं कर सकती। यह रसूल पाकका शस्त्र है परन्तु आप इसे पहचानते नहीं हैं। यह धैर्य और श्रेष्ट आचारका शस्त्र है। संसारकी बड़ीसे बड़ी शक्ति भी इसके आगे टिक नहीं पाती।

"ईश्वरने मुसलमानोंको सच्चा रास्ता दिखलाया। नास्तिकोंने उनपर अत्याचार किये। उनको प्रज्वलित अग्निमें लिटाया और उनके गलेमें रस्सियाँ बाँधकर उनको गलियोंमें खींचा। उन अधार्मिक लोगोंने उन्हें और भी विविध प्रकारके कष्ट पहुँचाये परन्तु मुसलमानोंने धीरज न छोड़ा और अत्याचारीको परास्त होना पड़ा।

"जब आप अपने गाँवोंमें वापस जायें और अपने 'हुज्रे' में जाकर अपने बन्धुओंसे मिलें तो उन्हें बतलायें कि ईश्वरकी एक सेना है, जिसका शस्त्र धैर्य है। आप अपने भाई-बन्दोंसे कहिए कि वे इस सेनामें शामिल हों। यदि आप इसमें भर्ती हो जायँगे तो फिरंगियोंका सेवक आपको डरानेकी चेष्टा करेगा परन्तु आपको उससे भयभीत होनेकी आवश्यकता नहीं है। उसने इस्लामको बर्बाद किया है। हम बन्धुत्व भावनाकी नींव डाल रहे हैं।

"ईश्वर हमारी परीक्षा लेना चाहता है। उसे उत्तीर्ण करनेके लिए सारी कठिनाइयोंको सहन कीजिए। यदि आप धीरजको न छोड़ेंगे तो निश्चय ही आपकी विजय होगी। शैतानका दल ईश्वरके दलपर विजय नहीं पा सकता।"

'पख़्तून'के नवम्बर मासके अंकमें प्रकाशित अपने एक लेख 'सरकारका उत्तर-

दायित्व और देशमें उपद्रव' में खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँने लिखा था :

"जब कभी मैं दिन-दिन बढ़ती हुई चोरी, डकैती या हत्याकी घटनाको देखता हूँ या उसके बारेमें पढ़ता हूँ तो मैं इस परिणामपर पहुँचता हूँ कि निश्चय ही इनमें सरकारका कुछ हाथ है। हालत इतनी गिर गयी है कि लोग पेशावर शहरकी चहारदीवारीके बाहर प्रधान मार्गोंपर लूट लिये जाते हैं। पिछले दिनों जो घटनाएँ हुई हैं, उनसे मनमें बड़े विचित्र विचार आने लगे हैं। डकैतियोंमें सबसे अधिक हानि खुदाई खिदमतगारोंकी हुई है जो कि राष्ट्रके सेवक हैं। उनके कार्यालयोंपर हमले किये गये हैं और उनकी चोरियाँ हुई हैं। यहाँतक कि यदि वे आटा पिसानेके लिए चक्कीपर गये हैं तो उसको भी चुरा लिया गया है। हमने यह सब सहन कर लिया परन्तु अब तो बहुतसे स्थानोंपर खुदाई खिदमतगारोंकी हत्याएँ भी हुई हैं।

"मेरा सरकारसे यह कहना है कि आप लोग भू-राजस्व कर तथा अन्य कर वसूल करनेमें सबसे अधिक सक्रिय हैं और आप लोग सरकारी मशीनरीको जमानेके तरीके भी जानते हैं परन्तु क्या आप यह जानते हैं कि प्रजाके भी कुछ अधिकार हुआ करते हैं ? आप दिनभर और रातभर यह सोचते हैं कि अपने राज्यकोषों-को किस प्रकार भरा जाय ? यह सोचते हैं कि इस देशको अपनी मुट्ठीमें जकड़-कर किस प्रकार रखा जाय ? मेरा आपसे कहना है कि आप देशमें शान्ति स्थापित करें ताकि वे लोग, जो आपके अधीन हैं, सुरक्षाका अनुभव कर सकें। यदि आप न्यायके विरुद्ध आचरण करनेवाले थोड़ेसे लोगोंको दुरुस्त नहीं कर सकते तो आपके लिए यही अच्छा है कि आप इस देशको छोड़कर चले जायें। हम यह दिखला देंगे कि शान्ति कैसे स्थापित की जाती है। वह युग चला गया जब हम पठान लोग अंधेरेमें थे और अपने अधिकारोंके बारेमें कुछ ज्ञान न रखते थे। अब हम सरकारके और उसके अधीन जनताके कर्तव्योंको जानते हैं। इतनी बड़ी सेना, पुलिस-बल और सिपाहियोंके दलके दल आप किसलिए रख रहे हैं ? क्या यह उस अन्यायी सरकारको टिकाये रखनेके लिए है जो हमारे वैधानिक अधि-कारोंको कुचल रही है ? या फिर यह अफ़रीदी, मोहमन्द, महसूस और वज़ीरी आदि ग़रीब कबाइलियोंको बर्बाद करने और उनके क्षेत्रोंपर अपना अधिकार जमानेके लिए है ? यदि ऐसा नहीं है और आप यह दावा करते हैं कि यह उस प्रजाके लिए है, जिससे आप करके रूपमें धन-राशि लेते हैं; यह उसकी रक्षा के लिए है; देशमें शान्ति स्थापित रखनेके लिए है; तो हम चाहते हैं कि आप हमें अपने इस कथनका ठोस प्रमाण दें। भू-राजस्व तथा अन्य करोंके बदलेमें आप

हमारे जीवन और हमारी सम्पत्तिकी रक्षा करें। आपको यह भली भाँति जान लेना चाहिए कि यदि हमारे पसीनेकी कमाईका रुपया स्वयं हमारे विनाशमें और अंग्रेजोंके हितमें ही लगता है तो अंतमें हम इसके लिए वाध्य हो जायँगे कि भू-राजस्व तथा अन्य करोंका भुगतान रोक दें।"

१८ नवम्बरको खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ अपने हज़ारा ज़िलेके दौरेसे वापस लौट आये। उनको बुखार हो आया था इसलिए कुछ दिनोंके लिए उनका अगला कार्यक्रम स्थगित हो गया। २१ तारीखको उत्मानज़ईमें एक सभा हुई जिसकी अध्यक्षता खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने की। इस सभामें यह निश्चय किया गया कि यदि सरकारने सिंचाईकी दर कम न की तो हस्तनगर और बैंज़ई इलाकोंमें रवीकी फसलके लिए सरकारी नहरोंसे पानी नहीं लिया जायगा। यह भी निश्चय किया गया कि जो लोग इस निर्णयको माननेसे इनकार करेंगे उनकी पानीकी नालियोंपर धरना दिया जायगा।

कई सार्वजनिक सभाओंमें एक गीत गाया गया था, 'हे ईश्वर! फख्र-ए-अफ़गानको हमारा राजा बना दो!' खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने उनको चेतावनी देते हुए कहा, 'आपकी यह इच्छा और यह विचार आपके भीतरकी दासत्वकी वृत्तिका प्रत्यक्ष फल है। आप यह चाहते हैं कि आपके कंधोंपरसे अंग्रेजोंके दासत्वका जुआ हट जाय और उसकी जगह मेरा आ जाय। कृपा करके राजा बनानेकी यह भावना ही त्याग दीजिये। सच तो यह है कि राजाओंके कारण ही हम इस दयनीय दशापर आ पहुँचे हैं। याद रखिये, यदि मैं मर जाऊँ तो ऐसा न हो कि कोई आपको धोखा दे और आपका राजा बन बैठे। यह देश सारे पख्तूनोंका है और वे ही इसके सुखदायी फलोंको ग्रहण करेंगे। हम केवल तीन सालके लिए अपना 'मशीर' (नेता) चुनेंगे। यदि वह अपने कार्यके लिए उचित व्यक्ति सिद्ध हुआ तो हम उसे दुवारा चुन लेंगे अन्यथा उसे हटा दिया जायगा और उसका स्थान दूसरा व्यक्ति ले लेगा।'

दिसम्बरके प्रारम्भमें ब्रिटिश समाचारपत्रोंने खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके विरुद्ध एक अभियान प्रारम्भ कर दिया। 'दि डेली एक्सप्रेस'ने एक संवादका शीर्षक यह दिया, "लाल कुर्तीवालोंकी सहायतासे खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ द्वारा भारतमें पवित्र युद्ध प्रारम्भ करनेकी धमकी।" यह संवाद 'भारतके एक प्रथम अधिकारी व्यक्ति' का भेजा हुआ था। उसमें कहा गया था :

"गांधीकी यूथ लीगसे शुरू करके खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने लाल कुर्तीवालों-को खुदाई खिदमतगारोंमें बदल दिया है, जिनका कि वे बार-बार पवित्र युद्ध

'जिहाद' के लिए आह्वान कर रहे हैं। स्वयं उनके शब्दों में, 'आप लोग विश्व-को अधार्मिक लोगोंसे मुक्ति दिलानेके कार्यकी आधारशिला होंगे। आप भारतको उन अत्याचारी अंग्रेजोंसे मुक्ति दिलानेवाले लोग होंगे, जिन्होंने न केवल भारत को वल्कि सारे इस्लामी संसारको बर्बाद कर डाला है। आप हृदयहीन ब्रिटिश राष्ट्रके पंजेसे इस्लाम तथा शेष विश्वको छुड़ायेंगे। और अपनी मातृ-भूमिको स्वतन्त्र करनेसे, उसके कंधेसे विदेशी जुएको उतारकर फेंकनेसे वड़ा और कोई धर्मयुद्ध 'जिहाद' नहीं है।'

"खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ अपनी बढ़ती हुई सेनाके लिए मात्र एक अधिनायक ही नहीं हैं जिसके पीछे कि शहीदका प्रभामंडल जाज्वल्यमान है, अपितु वे ईश्वर-के भेजे हुए इस्लामके मुक्तिदाता भी हैं।"

इस समाचारपत्रने खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको 'एक जन्मजात समाचार ग़ढ़नेवाला पत्रकार, अनुभवी शेखीखोर और अपने ढंगका अकेला अवसरवादी' वतलाते हुए आगे लिखा, "विना किसी संयमके, विना किसी मर्यादाके वह ब्रिटेनके विरुद्ध आग उगलता हुआ बढ़ता चला जाता है। वह उन कवीलोंमें, जो शीघ्र ही उत्तेजित हो उठते हैं, असंतोष फैलाता जाता है। वह सारे भले मुसलमानों काइसलिए आह्वान करता है कि वे आक्रमणकारी अंग्रेजोंसे युद्ध करनेको तैयार रहें। प्राप्त सूचनाके आधारपर वतलाया जाता है कि उसने अपने आदमियोंसे यह कहा, "आप अपनी इन बन्दूकोंको कवीलोंके झगड़ोंमें अपने पड़ो-सियोंके लिए इस्तेमाल न करें वल्कि इनका प्रयोग अंग्रेजोंको हिन्दुस्तानसे वाहर निकालनेमें करें।"

इस संवादमें अन्तमें कहा गया था, "खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ कांग्रेससे सम्बद्ध अपने लाल कुर्ती संगठनमें सचमुच वादशाहकी स्थिति रखता है। अव इस विलक्षण व्यक्तिमें इतनी हिम्मत हो गयी है कि वह ब्रिटेनको अपनी गिरफ्तारीके लिए चुनौती दे, क्योंकि उसे इस बातकी इजाज़त दे दी गयी है कि वह सीमा-प्रान्तकी प्रत्येक पहाड़ीके ऊपरसे 'जिहाद' की पुकार करे—इस विश्वासके साथ कि एक दिन उसकी पुकार नाटकीय ढंगसे सुन ली जायगी।"

'दि डेली मेल'के एक समाचारमें कहा गया था : "सीमाप्रान्त सोवियत रिपब्लिककी दूरकी एक सैनिक चौकी है। ····वह भारतपर आक्रमण करनेका सवसे मर्मान्तक स्थान है। ····खैवर दर्रेके पार रूसी सोना वरसाया जा रहा है ····उनका नेता भयानक खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ है, जो जेलका पंछी है और अंग्रेजोंका एक हृदयहीन शत्रु है।"

इसके विपरीत ब्रिट्रेनके उदार दलीय संसद-सदस्य एवं 'नैकेड फ़कीर' नामक पुस्तकके प्रणेता मि० रॉबर्ट बर्नेजने अपनी खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके साथ की गयी भेंटके यह संस्मरण लिखे हैं :

"उनके भाई डा० ख़ान साहबका सहसा मुझे फोन मिला। उन्होंने कहा कि यदि मैं तुरन्त ही उनके बँगलेपर पहुँच सकूँ तो मेरी ख़ान अब्दुल गफ्फ़ार खाँसे भेंट हो सकती है। अंधेरा घिर आया था और बिजली तथा गड़गड़ाहटके साथ आँधी घिरती आ रही थी। मुझे प्रथम दृष्टिमें ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ ऐसे लगे मानों मेरे चक्षुओंके आगे महाप्रभु ईसाका परम्परागत रूप ही प्रत्यक्ष हो गया है। वे मुझसे टूटी हुई-सी अंग्रेजीमें बात करने लगे और उनके भाई डा० ख़ान साहबको दुभाषिया बननेका कष्ट देना पड़ा।

उन्होंने मुझसे जो कुछ कहा, उसका सार इस प्रकार है :

"भारत सरकारको मेरे आन्दोलनके सम्बन्धमें भ्रम है। मैं अंग्रेजोंको घृणाकी दृष्टिसे नहीं देखता। मेरी मांग केवल यह है कि सरकार हमारे सीमाप्रान्तमें भी वे सुधार लागू करे जो उसने भारतके शेष अन्य भागोंमें लागू किये हैं। मैंने कभी यह घोषित नहीं किया कि सरकारको भू-राजस्व करका भुगतान न किया जाय। मैं स्वयं एक ज़मींदार हूँ और अपना लगान दे चुका हूँ। मुझे रूससे किसी प्रकारका अर्थ नहीं मिला है। मेरा सोवियत रूससे कोई सम्बन्ध ही नहीं है। यद्यपि अंग्रेजोंने मुझे कारावासमें डाले रखा है फिर भी मैं उनसे घृणा नहीं करता। मेरा आन्दोलन सामाजिक है और राजनीतिक भी। मैं लाल कुर्तीवालोंको यह सिखलाता हूँ कि तुम अपने पड़ोसीको प्रेम करो और सर्वदा सत्य बोलो। मुसलमान एक युद्ध-प्रिय जाति है। वह अहिंसाके सन्देशको सरलतासे ग्रहण नहीं कर पाती। मैं उसे अहिंसाके पथपर अग्रसर करनेका पूरा प्रयत्न करता हूँ।"

उनके व्यक्तित्व और वाणीका मुझपर जो प्रभाव पड़ा उसे मैंने इन शब्दोंमें लिखा : "ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ एक कृपालु, भले और उससे भी अधिक एक प्रेम करने योग्य व्यक्ति हैं। यदि कोई वृद्ध जार्ज लैन्सबरीके सम्बन्धमें यह सोचे कि वे एक भयानक क्रान्तिकारी हैं, वैसे ही खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके सम्बन्धमें यह कल्पना करना होगा कि वे ब्रिटिश राज्यके एक निर्दय शत्रु हैं।"

सन्धिकी अवधिमें सीमाप्रान्तमें तनावकी स्थिति स्थायी रूपसे थी और शासन विशेष कानूनों, अध्यादेशों और कठोरतम दण्डोंको साथ लेकर फौजी ढंगसे चल रहा था। खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँने इस क्रूर स्थितिका विरोध करनेके लिए एक आन्दोलन चलाया और परिणामस्वरूप वे सरकारकी दृष्टिमें एक हौवा; मिथ्या

भय बन गये। वे छः फुट तीन इंचकी पठानकी पौरुषमयी काया लिये, लम्बे-लम्बे डग भरते हुए, खुदाई खिदमतगारोंके केन्द्र स्थापित करते एक गाँवसे दूसरे गाँवमें गये और उनका संगठन सारे प्रान्तमें फैल गया। उनके अनुयायी पूर्ण रूपसे शांत थे। उनके विरुद्ध हिंसाका एक भी आरोप पूरी तरहसे सिद्ध नहीं हो सका। कलह-प्रिय सीमान्तके निकट, भारतके राष्ट्रीय आन्दोलनसे अत्यधिक निकट इस अनुशासित आन्दोलनके इतने शीघ्र लोकप्रिय हो जानेके कारण पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तकी सरकारका आसन हिल उठा।

सीमाप्रान्तके चीफ़ कमिश्नर सर राल्फ ग्रिफिथ २२ दिसम्बरको एक दरबार-का आयोजन करने जा रहे थे। उसमें सम्मिलित होनेके लिए उन्होंने खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके पास निमंत्रणपत्र भेजा परन्तु उन्होंने चीफ़ कमिश्नरके पास जाना अस्वीकार कर दिया। तत्पश्चात् चीफ़ कमिश्नरने एक आदेश भेजा जिसमें उन्हें मिलनेके लिए बुलाया गया था। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने इस आदेशकी भी अवहेलना कर दी और मुख्यायुक्तसे मिलने नहीं गये। अन्तमें उनको लानेके लिए पुलिसका एक सिपाही भेजा गया। चीफ़ कमिश्नरसे भेंट होनेपर खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँने उनसे कहा, 'मैं एक सरल व्यक्ति हूँ और मुझको सीधी बात अच्छी लगती है। कृपया मुझसे कूटनीतिज्ञके रूपमें चर्चा न कीजिएगा।' इसपर सर राल्फ़ने उत्तर दिया, 'खान साहब, राजनीति एक खेल है, जिसमें शतरंजकी चालें चली जाती हैं। मैं आपको मात दूँ और यदि आप दे सकें तो मुझको मात दें।' 'तब मैं आपसे बातचीत करनेके लायक आदमी नहीं हूँ।' खान अब्दुल ग़फ्फार खाँ इतना कहकर उठ खड़े हुए। तब सर राल्फ ग्रिफिथने अपना स्वर बदला और उन्हें रोका। तत्पश्चात् चर्चा आगे बढ़ी।

चीफ़ कमिश्नरने अपनी भेंटमें तीन सम्भावित खतरोंका उल्लेख किया जो कि उनकी रायमें देशके सामने थे—पहला कबाइलियोंसे, दूसरा अफ़गानिस्तानसे और तीसरा रूससे। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने उनसे कहा कि आप वास्तवमें कबाइलियोंकी ओरसे चिन्तित हैं और उनमें सुधार करना चाहते हैं तो मैं आपको अपना सहयोग देनेको तैयार हूं तथा आपकी सहायता करनेको तैयार हूँ। परन्तु इसके लिए आपको अपनी वर्तमान कबाइली लोगोंसे सम्बन्धित नीतिका त्याग करना होगा और कबाइलियोंको अपना शत्रु नहीं बल्कि मित्र समझना होगा। हमारे सहयोगसे आप ऐसी योजना कार्यान्वित कर सकेंगे जिससे उन लोगोंको अत्यधिक लाभ होगा।

चीफ़ कमिश्नरने एक पेन्सिल और कागज उठा लिये और उनकी बातोंको

विस्तारसे लिखने लगे। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ारने उनसे कहा : 'आप कबाइलियोंको मरवानेमें और विनाश करनेमें जितना खर्च करते हैं यदि उसका आधा भी उनके विकासके लिए व्यय करनेको तैयार हों तो इस क्षेत्रमें गृह-उद्योगोंका प्रारम्भ हो जाय। उससे वे सम्मानपूर्वक अपनी स्वतंत्र जीविकाका उपार्जन कर सकेंगे और उद्योग, शिल्पकला तथा व्यापारको भी सीख लेंगे। कबाइलियोंके क्षेत्रमें विद्यालय खोले जायँ जो उनके बालकोंको नये जीवनकी ओर ले जानेमें सहायता करें। रोगके संकटमें उन्हें मदद देनेके लिए चिकित्सालय भी खोलना चाहिए। इन सुविधाओंके मिल जानेसे ये आत्मसम्मानी और वीर लोग पख़्तून समाजको लाभ पहुँचानेवाले सदस्य बन जायँगे।' अफ़गानिस्तानसे खतरेके सम्बन्धमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने चीफ़ कमिश्नरसे कहा, 'आपको उस ओरसे कोई आशंका नहीं है। सदासे अफ़गानिस्तानकी सरकारसे आपके इतने मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रहे हैं कि जिस सरकारको आप नहीं चाहते वह वहाँ टिक नहीं पाती। दूसरी बात यह है कि रक्तके नाते अफ़गानके लोग हमारे बन्धु हैं और जब आपकी हमारे साथ मित्रता रहेगी तो यह स्वाभाविक है कि वे आपके मित्र बन जायँ।'

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने रूसके खतरेके बारेमें कहा, 'रूसी खतरेका सामना करनेका सबसे उत्तम उपाय यह है कि आप हमें हमारे अधिकार दे दें और हम अपनी भूमिके स्वामी बन जायँ। हम पख़्तूनोंकी जाति बहुत बड़ी है और आमूसे लेकर पंजाबके मध्य भागतक फैली हुई है। इस जातिपर कोई आक्रमण नहीं कर सकता और यदि कोई हमसे युद्ध छेड़ना भी चाहेगा तो हम अपने देशकी सुरक्षाके लिए सब कुछ बलिदान करनेको तैयार हैं।'

सर राल्फ ग्रिफिथने चर्चाकी सारी विशेष बातोंको लिख लिया और खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँसे कहा कि मैं वाइसरायसे परामर्श लेने दिल्ली जा रहा हूँ। उनकी मुद्रा और भावोंसे खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको यह प्रतीत हुआ कि उनको इन प्रस्तावोंके प्रति सहानुभूति है।

सर राल्फ खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँसे बोले, 'मुझे आशा है कि आप मुझसे फिर मिलेंगे।'

वे बोले, 'अवश्य, यदि आज जैसी ही परिस्थितिने मुझे यहाँ आनेको विवश कर दिया।' उनका तात्पर्य पुलिस द्वारा बुलवानेसे था। चीफ़ कमिश्नर सर राल्फ़ने उनकी बात सुनकर कहा :

'बाहर बैठे हुए इन खानों और खान बहादुरोंको देखिए। ये लोग बराबर कई दिनोंसे मुझसे भेंट करनेकी प्रतीक्षा कर रहे हैं लेकिन मैं इन लोगोंसे नहीं

मिलना चाहता और मेरे वार-बारके अनुनयके वाद भी आप मुझको उपकृत नहीं करना चाहते।'

खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँने हँसते हुए कहा, 'ग्रिफिथ साहब, ये लोग व्यक्तिगत स्वार्थके लिए आपके चारों ओर घूम रहे हैं जब कि मेरा इस तरहका कोई इरादा नहीं है। तब मैं इस रास्तेपर चलकर अपनेको क्यों थकाऊँ ?'

उनकी इस बातपर सर राल्फ ग्रिफिथने मेजपर एक घूँसा मारकर कहा, 'वह निश्चित ही एक अभागी सरकार है, जिससे ईमानदार लोग दूर रहते हैं और जिसे बेईमान घेरे रहते हैं। उसका विनाश भला कौन रोक सकता है ? ईश्वर ब्रिटिश सरकारकी रक्षा करे !'

इस भेंटके पश्चात् चीफ़ कमिश्नर वाइसरायसे मिलनेके लिए दिल्ली चले गये। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने लिखा है : "मुझे यह विश्वास हुआ कि ईश्वरकी इच्छा हुई तो मेरा देश और मेरा समाज कुछ तो लाभान्वित हो ही जायगा। परन्तु वाइसरायसे मिलनेके पश्चात् जैसे ही सर राल्फ ग्रिफिथ वापस आये उन्होंने २४ दिसम्बर १९३१ को मुझे जेल भेज दिया। सारे देशमें सबसे पहले गिरफ्तार होनेवाले व्यक्तियोंमेंसे मैं एक था।"

सरकारने उसके दूसरे दिन बड़े दिनको खुदाई खिदमतगारोंके विरुद्ध कानूनी कारखाई की। उसकी सेनाके छः दस्तोंने पेशावर शहर और देहाती क्षेत्रके उन स्थानोंपर, जहाँसे लोग निकलकर जा सकते थे, नाकाबन्दी कर दी। २४ दिसम्बरकी रातको खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ, डॉ० खान साहब तथा जिलेभरके नेता गिरफ्तार कर लिये गये।

खान बन्धुओंको १८१८ की धारा ३ के अन्तर्गत बन्दी किया गया। उन्हें अटकके पुलतक ले जाया गया और वहाँ एक रेलगाड़ीमें बैठा दिया गया। डॉ० खान साहबके सबसे बड़े पुत्र सादुल्ला खाँ कुछ दिन पहले ही इंगलैण्डसे आये थे और प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके मंत्री चुने गये थे। उनको भी गिरफ़्तार करके उनके पिता और चाचाके पास बैठा दिया गया। मिसेज़ खान साहब थोड़े दिन पहले गाँव आयी थीं। उनको तथा उनके सारे परिवारको आधी रातको सोतेसे जगा दिया गया और मकानको पुलिसकी तलाशीके लिए खाली करनेको कहा गया। डॉ० खान साहबके दूसरे पुत्र ओबेदुल्ला खाँ जेलसे छूटनेके बाद पुनः स्वास्थ्यलाभ कर रहे थे, उनको गिरफ्तार कर लिया गया। यद्यपि पिता और पुत्रोंको एक साथ ही बन्दी किया गया था परन्तु उनको एक स्थानपर नहीं रखा गया। डॉ० खान साहब एक स्पेशल ट्रेन द्वारा इलाहाबाद ले जाये गये और

उनको नैनी जेलमें रखा गया, खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ बिहारमें हजारीबाग जेल में रखे गये और सादुल्ला खाँको बनारस जेल भेज दिया गया। घरपर केवल डॉ० ख़ान साहबकी दो पत्नियाँ और उनके छोटे बच्चे छोड़ दिये गये। अन्य पख़्तून महिलाओंकी भाँति खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँकी दो बहनें आन्दोलनमें भाग ले रही थीं। वे बहुत-सी सार्वजनिक सभाओं और जुलूसोंमें भी गयी थीं परन्तु उनको गिरफ्तार नहीं किया गया। फिर भी उनके पुत्रोंको बन्दी बना लिया गया। उनके दूर और पासके रिश्तेके सभी भाई पकड़ लिये गये। इसके पश्चात् प्रमुख खुदाई खिदमतगारोंकी सामूहिक रूपसे धर-पकड़ शुरू हो गयी।

ट्रेनकी एक घटनाका विवरण देते हुए ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ कहते हैं: "जब भी हम अपने डिब्बेकी खिड़कियोंके पल्ले ऊपर उठाते थे, पुलिसका एक पंजाबी दरोग़ा उन्हें तुरन्त नीचे गिरा देता था ताकि कोई हम लोगोंको देख न सके। मैंने उससे कहा, 'जवान, हम लोग औरतें नहीं हैं जिनको लोगोंकी नजरोंसे बचानेके लिए तुम खिड़कियाँ बन्द कर देते हो?' लेकिन मेरी बातका उसके ऊपर कोई असर न हुआ। जब हम संयुक्त प्रदेशमें पहुंचे तब एक ब्रिटिश अधिकारी, एक गोरे सिपाहीके साथ हमें अपनी हिफाजतमें लेने आया। अधिकारी मेरे निकट आया। उसने मेरे डिब्बेका दरवाजा खोला और बोला, 'कृपया नीचे उतर चलिए और अपनी टाँगोंको आराम देनेके लिए प्लेटफार्मपर टहल लीजिए।' अब आप इस अंग्रेज और पंजाबी मुसलमान पुलिस अधिकारीके बीचके अन्तरपर ध्यान दीजिए। हम इन्हीं मुसलमानोंके लिए अंग्रेजोंसे लड़ रहे हैं। जिस समय मैं अपने डिब्बेमें बैठा था, वह अंग्रेज अफसर अपने हाथमें शराबका एक गिलास लेकर मेरे पास आया और उसने मुझे वह भेंट करनी चाही। उसने स्नेहसे कहा, 'कृपया इसे पी लीजिए।' जब मैंने उससे कहा कि मैं शराब नहीं पीता तो उसको मेरी बातपर आश्चर्य हुआ। मैं उसकी सहानुभूति और स्नेहको कभी नहीं भूलूँगा।"

चीफ़ कमिश्नरने एक विज्ञप्ति प्रसारित की। उसके बाद २४ पृष्ठोंका छपा हुआ एक लम्बा पत्रक निकाला, जिसमें ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ तथा खुदाई खिदमतगारोंकी प्रवृत्तियोंका एक-एक महीनेका ही नहीं, प्रायः एक-एक दिनका क्रमसे लेखा प्रस्तुत किया गया था जिनके कारण भारत सरकारको सामूहिक रूपसे गिरफ्तारियाँ करनी पड़ीं और १५ कठोर अध्यादेशोंकी घोषणा करनी पड़ी। अध्यादेश १३ में, जिसमें कि सीमाप्रान्तकी सरकार और उसके अधिकारियोंको विधि तथा व्यवस्था क़ायम रखनेके लिए विशेषाधिकार प्रदान किये

गये थे, ६१ वाक्य-खण्ड थे ।

भारत सरकारके एक प्रकाशन 'इंडिया इन १९३१-३२' में इन घटनाओंका सारांश इस प्रकार दिया गया था :

"दिसम्बरके प्रारम्भमें पेशावर जिलेमें लाल कुर्तीवालोंका एक शिविर लगा । उसमें तम्बू गाड़े गये, फौज़ी तरीकेसे कवायद की गयी और युद्ध-नीतिका शिक्षण दिया गया । इस शिविरमें इस बातका प्रयत्न भी किया गया कि सीमाके उस पारके कबाइली क्षेत्रोंमें भी लाल कुर्ती आन्दोलनका प्रसार किया जाय । शासकोंके प्रति द्रोह एवं घृणा जाग्रत करनेके उद्देश्यसे स्वात इलाकेमें उत्तेजना फैलानेवाली छोटी पुस्तिकाएँ बाँटी गयीं । पहली दिसम्बरको प्रधान मंत्रीने जो घोषणा की उसमें उन्होंने निकट भविष्यमें ही सीमा-प्रान्तमें कतिपय वैधानिक सुधारोंको लागू करनेका वचन दिया । सामान्यतया जनताको उससे संतोष प्राप्त हुआ किन्तु ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँपर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा । बल्कि उनके भाषण अब अपेक्षाकृत अधिक राजद्रोहात्मक होने लगे । इन भाषणोंमें उन्होंने संघर्षके पुन: छिड़नेपर अपनी तैयारियोंकी चर्चा की जिसमें कि लाल कुर्ती आन्दोलनका विकास भी शामिल था ।

१२ दिसम्बरको किया हुआ उनका एक भाषण कांग्रेसके साथ उनके संबंधको स्पष्ट रूपसे प्रकट करता है । इस भाषणमें उन्होंने कहा : "कुछ लोग मेरे विरुद्ध यह शिकायत करते हैं कि मैं अपने निजके पख्तून राष्ट्रको बेचकर कांग्रेसमें सम्मिलित हो गया हूँ । कांग्रेस एक हिन्दू संस्था नहीं अपितु एक राष्ट्रीय संगठन है । वही एक ऐसी संस्था है जो फिरंगियोंके खिलाफ़ काम कर रही है । ब्रिटिश राष्ट्र समान रूपसे कांग्रेस और पठान दोनोंका शत्रु है । उससे मुक्ति पानेके लिए इन दोनोंने अपने आगे एक समान उद्देश्य रखा है । मेरे कांग्रेसमें शामिल होनेका यही कारण है ।"

ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ और उनके भाईने २२ दिसम्बरको आयोजित चीफ कमिश्नरके दरबारके आमंत्रणको अस्वीकार कर दिया । सामान्य रूपसे लोगोंका यह अनुमान था कि इस समारोहमें सुधारोंको प्रारम्भ करनेके सम्बन्धमें कुछ महत्त्वपूर्ण घोषणाएँ की जायँगी । मुख्य आयुक्तके इस दरबारसे २ दिन पहले २० दिसम्बरको सीमाप्रान्तकी कांग्रेस-समितिकी एक बैठक हुई जिसमें कतिपय प्रस्ताव स्वीकृत हुए । उनमें कहा गया कि हमें इन सुधारोंसे संतोष नहीं होगा, लाल कुर्ती-वालोंके संगठनका ध्येय पूर्ण स्वाधीनता है । गांधी-इरविन समझौतेको भंग करने-को कांग्रेसकी अखिल भारतीय समितिसे कहा जाय तथा ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार

खाँसे यह आग्रह किया जाय कि वे स्वयं बम्बई जाकर, सविनय अवज्ञाको पुन-र्ग्रहण करनेकी योजनापर मि० गांधीके साथ विचार-विमर्श करें। नव वर्षके प्रथम दिन एक विशाल सभाके आयोजन और उसमें कांग्रेसका झण्डा भी फहराने-की बात निश्चित की गयी। यह समारोह लाल कुर्तीवालोंकी शक्ति और क्षमताका एक प्रभावोत्पादक प्रदर्शन बने इसलिए उसकी तैयारियाँ शीघ्र ही प्रारम्भ कर देनेका निश्चय भी किया गया। स्पष्ट है कि एक सामान्य ढंगसे चलनेवाली सरकार अपने सामान्य कानूनोंकी सीमाओंमें रहकर इस धमकीका सामना नहीं कर सकती। उसके लिए यह सम्भव नहीं है इसलिए २४ दिसम्बरको कुछ अध्यादेशोंकी घोषणा की गयी और उनको प्रदेशमें कार्यान्वित किया गया। खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँ-तक अन्य कुछ नेता बिना पूर्व सूचना दिये हुए २४ दिसम्बरकी रातमें गिरफ्तार कर लिये गये। पेशावर जिला सेनाके छः दलोंको सौंप दिया गया जिन्हें कि आव-श्यकता होनेपर इधर-उधर भेजा जाता है। महीनेके अंतिम सप्ताहमें पूरे पेशावर जिलेकी स्थितिपर तेजीसे नियंत्रण कर लिया गया और राजस्व करकी मदमें एक लाख रुपया एकत्र कर लिया गया। इसमें अपवादस्वरूप केवल २९ दिसम्बरके उपद्रवकी घटना है जिसमें कि एक बहुत बड़ी, दंगा करनेवाली भीड़को सेना द्वारा तितर-बितर किया गया। कोहाटमें २६ दिसम्बरको उपद्रवकी एक गम्भीर घटना हुई जब कि लोगोंकी एक बहुत बड़ी भीड़ने जान-बूझकर, छावनीमें बल-पूर्वक प्रवेश करना चाहा। डिप्टी कमिश्नरके व्यक्तिगत अनुनय और फिर चेतावनीके बाद भी उसने वहाँसे चले जानेसे दृढ़ताके साथ इनकार कर दिया। उसका उपद्रव बढ़ता ही चला गया। उसने नेताओंकी गिरफ्तारियोंको रोकनेकी चेष्टा की और सेनाकी टुकड़ियोंपर पत्थर बरसाये। इस परिस्थितिमें भीड़को तितर-बितर करने तथा उपद्रवको रोकनेके लिए गोली चलाना अनिवार्य हो गया। स्थितिको नियंत्रणमें लाया जाय इससे पहले ही १५ आदमी मर गये और लगभग ३० घायल हो गये। दूसरे दिन स्थानीय अधिकारी उस क्षेत्रमें गये जहाँके अधिकांश व्यक्ति प्रदर्शनमें शामिल थे। उनके सामने गाँववालोंने अपना दोष स्वीकार किया और यह वचन दिया कि वे लाल कुर्ती दलका परित्याग कर देंगे। उस क्षणसे स्थिति शांत और काबूमें है।"

अध्यादेशका राज

१९३१-३२

गांधीजीके लन्दन-प्रयासकी अवधिमें भारतकी राजनीतिक स्थितिमें ह्रास हुआ। प्रारम्भसे ही सन्धि एकपक्षीय थी और दमन-चक्र वेगसे घूम रहा था। बारडोली काण्डकी जांच मूर्च्छित पड़ी थी और संयुक्त प्रान्तकी दशा अत्यधिक बिगड़ चुकी थी। बंगाल क्रोधसे उबल रहा था। हिजली शिविरमें गोली चलनेसे दो कैदी मर गये थे और लगभग तीस आहत हुए थे। आतंकवादी अपना सिर ऊँचा कर रहे थे और सरकार दमनपर बल दे रही थी। पंजाब, सीमाप्रान्त और बंगालमें अध्यादेश क्रियान्वित हो गये थे। जवाहरलाल नेहरू गांधीजीसे भेंट करने बम्बई जा रहे थे। २६ दिसम्बर १९३१ को उनको रास्तेमें ही बन्दी बना लिया गया। इस घटनाके दो दिन पहले खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँ और उनके प्रायः सभी सहकर्मी गिरफ्तार किये जा चुके थे।

२८ दिसम्बर १९३१ को गांधीजीने बम्बईकी भूमिपर चरण रखते ही कहा कि मैं इन अध्यादेशोंको कांग्रेसके लिए एक चुनौती मानता हूँ। इसके साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि यह जो कठोर अग्नि-परीक्षाएँ दी जा रही हैं इनको हटानेके लिए भी मैं कोई उपाय उठा न रखूँगा। एक दिन शामको एक सार्वजनिक सभामें उन्होंने अपनी इस बातको फिर दुहराया। इस सभामें ही उन्होंने बंगालकी आतंकवादी प्रवृत्तियोंकी निन्दा की और 'एक सम्पूर्ण जातिके विनाशके लिए' ब्रिटिश सरकारकी भी भर्त्सना की। उस समय पाँचसे कम अध्यादेश लागू नहीं थे। गांधीजीने कहा :

"मैं इनको अपने ईसाई वाइसराय लार्ड विलिंगडनके बड़े दिनपर दिये गये उपहार समझकर स्वीकार कर रहा हूँ। यदि मुझे आशाकी एक किरण भी दिखलाई देगी तो मैं उसे संजोऊँगा और चर्चाका परित्याग नहीं करूँगा। लेकिन यदि मुझको अपने प्रयासमें सफलता न मिली तो मैं आपको ऐसे युद्धमें उतरनेका आमंत्रण दूंगा जो अंततक चलेगा। पिछले संघर्षमें लोगोंने लाठियाँ खायी थीं, इस बार उनको गोलियाँ झेलनी पड़ेंगी। मैं भारतकी मुक्तिके हेतु लाखों जिन्दगियोंको उत्सर्ग करनेसे भी न झिझकूँगा। यह बात मैंने अंग्रेजोंसे इंगलैण्डमें कह दी है।"

अध्यादेशका राज

'दि वेलफेयर ऑफ इंडिया लीग' की एक सभाको सम्बोधित करते हुए गांधीजीने कहा कि मैंने अपने अंग्रेज मित्रोंको यह वचन दिया है कि भले ही गोलमेज परिषद्के परिणाम निराशाजनक निकले हैं फिर भी हम सहयोगके नये उपायोंकी खोज करेंगे। परन्तु यहाँ पहुँचनेके बाद मुझे अभेद्य अन्धकार दिखलाई दे रहा है। "मेरी दृष्टिके ठीक सामने अध्यादेशका क्रूर यथार्थ खड़ा है। उसके जैसा कुछ भी नहीं है। वह विधानका एक अमानवीय अंग है, यदि वास्तवमें उस विधानको विधानका नाम दिया जा सकता है तो। लगानकी अदायगीके बारेमें जो आन्दोलन चला उसमें अवज्ञाका दंड गोलियाँ थीं। उन मामलोंके अलावा जहाँ आज्ञा-भंग विनाशकारी उग्र भावनाओंको साथ लेकर चल रहा हो, यह दण्ड किसी भी प्रकारसे न्याय-संगत नहीं कहा जा सकता।"

गांधीजीकी सभामें उपस्थित कुछ यूरोपियनोंने उनसे पूछा कि "जिन अध्यादेशोंपर आपको आपत्ति है यदि उनको हटा दिया जाय तो क्या आपकी दृष्टिमें सहयोगका पथ कुछ खुल सकेगा ?"

"निश्चय ही इससे मार्गका एक अवरोध दूर होगा और वातावरण अनुकूल बनेगा।" गांधीजीने इसे स्वीकार किया। उनसे दूसरा प्रश्न किया गया, "आप अध्यादेशोंकी निन्दा करते हैं परन्तु इनसे पहले क्या आप सीमा-प्रान्त नहीं जा सकते थे और वहाँके अधिकारियोंसे नहीं मिल सकते थे ?" इस सवालके जवाबमें गांधीजीने कहा :

"मैं आपको यह बात बतला देना चाहता हूँ कि गत वर्ष मैंने इस दिशामें तीन बार प्रयत्न किया परन्तु मुझको सफलता नहीं मिली। सन्धिके पश्चात् मैंने लार्ड इरविनसे पूछा कि क्या मैं सीमाप्रान्त जा सकता हूँ ? मैं सरकारको अपना पूर्ण सहयोग देना चाहता था इसलिए मुझे उनकी मात्र अनुमतिकी ही नहीं अपितु उनके प्रोत्साहनकी भी आकांक्षा थी। परन्तु लार्ड इरविनने मुझे इनकार कर दिया। इसके पश्चात् मैंने लार्ड विलिंगडनसे दो बार निवेदन किया परन्तु पुनः असफल रहा। लार्ड इरविनका यह खयाल था कि मेरे वहाँ जानेसे स्थितिमें एक उबाल-सा आ जायगा। यदि आप चाहते हैं कि मैं चौथी बार प्रयत्न करूँ तो मैं उसे करूँगा। आप लोगोंमेंसे यदि कोई मेरी बात सरकारके कानोंतक पहुँचा सकता है तो मैं चाहूँगा कि वह मेरा 'एटर्नी' बनकर प्रतिनिधित्व करे और मेरे लिए सीमा-प्रान्त जानेकी अनुमति ले आये। सविनय आज्ञा-भंग मैं स्वयं एक अच्छा परिणाम नहीं मानता और मैं उसे तबतक ग्रहण नहीं करना चाहता जब तक कि कोई मुझे अपनाने या शुरू करनेको बाध्य ही न कर दे। परन्तु जब भी

मैं उसे प्रारम्भ करूँगा, पूर्ण औचित्यके साथ करूँगा और तब सरकारकी स्थिति अनौचित्यपूर्ण हो जायगी।"

"परन्तु आप उन विद्रोह संगठनोंको क्यां कहेंगे जो नियम और व्यवस्थाका ध्वंस कर रहे हैं?"

"विद्रोह एक ऐसा शब्द है जिसे दूरतक खींचा जा सकता है।" गांधीजी-ने उत्तर दिया, "ध्वंसकारी संगठनोंसे यदि आपका अभिप्राय उन तत्त्वोंसे है जो शासनके अधिकारोंको बलात् अपने हाथोंमें ले लेना चाहते हैं, न्याय या अन्याय-का बिना विचार किये, तो मैं कहूँगा कि उन लोगोंके लिए भी अध्यादेशोंको प्रयोगमें नहीं लाना चाहिए। इन अध्यादेशोंके कारण सरकारको सहारा देनेवाले व्यक्ति भी शीघ्रतासे उसके प्रति उदासीन होते जा रहे हैं। मुँहसे वे भले ही 'हाँ' कहें परन्तु वास्तवमें उनका अभिप्राय 'नहीं' से होता है। आप मेरा ध्यान बंगाल-की ओर खींचना चाहते हैं और मुझसे यह आशा करते हैं कि मैं प्रत्येक दशामें उन हत्याकाण्डोंको रोकनेके लिए वक्तव्य दूं। कोई भी समाज हत्याओंको सहन नहीं करेगा परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि जिसपर भी सन्देह हो, उसके साथ हत्यारे जैसा व्यवहार किया जाय। मैं पूछता हूँ कि बंगाल और अन्य प्रान्तोंमें हत्याएँ क्यों होती हैं? मैं इस रोगकी जड़तक पहुँचना चाहता हूँ। बंगाल-में दो पागल लड़कियोंने एक निर्दोष मजिस्ट्रेटको जानसे मार डाला। उन्होंने घृणाका विष गहरा पी लिया था। उनको प्रत्येक बात अतिरंजित करके बतलायी गयी थी। परन्तु इन सबके नीचे एक सत्यका धरातल भी है जो न केवल इन भली-चंगी लड़कियोंको बल्कि किसी प्रान्तके किसी व्यक्तिको पागल बना सकता है। हिंसाकी भर्त्सना करते समय मैं किसी अंग्रेजके आगे झुकता नहीं। हिंसाको निर्मूल करनेके उद्देश्यको लेकर चलनेवाले किसी भी अंग्रेजका मैं किसी भी सीमा-तक साथ दे सकता हूँ परन्तु उसके तरीके मानवीय होने चाहिए, जनरल डायर सरीखे नहीं। क्या आप यह आशा करते हैं कि अध्यादेशोंके वातावरणमें आप एक संविधानकी श्रमपूर्वक रचना कर सकेंगे? आपकी यह आशा आधारहीन होगी। अध्यादेशोंके सहारे शासन करनेसे अंग्रेजोंकी साख बढ़ेगी नहीं और न उससे शासित होनेसे भारतीयोंकी।"

आधी रातके समय अपने भाषणका निष्कर्ष निकालते हुए गांधीजीने कहा: "जब मैं जहाजसे उतरा तो मुझे आशा थी कि मुझे ऐसे मार्ग और साधन मिलेंगे जिनसे मैं अपना सहयोग दे सकूँगा। परन्तु मुझे अपने रास्तेपर क़दम-क़दमपर बड़े-बड़े पत्थर दिखलाई दे रहे हैं और मैं सोच रहा हूँ कि मुझे क्या करना

चाहिए ? मैं मार्ग और साधनोंके लिए व्यग्र हूँ परन्तु मुझे आशाकी एक किरण भी दिखलाई नहीं दे रही है। जो इस समय स्थिति चल रही है उसमें हिंसाके विश्वासी खुली क्रान्तिके लिए खड़े हो जायँगे परन्तु जो लोग अहिंसाके प्रति प्रतिज्ञाबद्ध हैं, वे क्या करें ? उनके लिए तो अकेला मार्ग बच जाता है, सविनय आज्ञा-भंग। मैं चाहता हूँ कि क्रिसमसके इन दिनोंमें प्रत्येक अंग्रेज पुरुष और नारी अपने हृदयको टटोलकर देखे।"

गांधीजीने अपना समय व्यर्थ नहीं खोया और वे कांग्रेसकी कार्यसमितिके साथ विचार करने बैठ गये। उन्होंने समितिको यह सम्मति दी कि उसे अपने निर्णयमें परिवर्तनकी भी गुंजाइश रखनी चाहिए क्योंकि सविनय अवज्ञाका संघर्ष छेड़नेसे पहले वे सरकारके दृष्टिकोणसे भी परिचित हो जाना चाहते हैं और शासन के उस रवैयेपर ही उनका निर्णय निर्भर होगा। इस स्थितिमें यह सुझाव आया कि इस समय कार्यसमितिकी बैठक स्थगित कर दी जाय और गांधीजी शीघ्र ही वाइसरायसे मिलनेकी अनुमति प्राप्त करनेकी चेष्टा करें। यह सुझाव भी सदस्योंके बहुमतसे रद हो गया और यह निश्चित हुआ कि महात्मा गांधी वाइसरायको एक तार भेजकर उनको कांग्रेसके इस विचारणीय विषयकी जानकारी करायें, अतः २९ दिसम्बरको गांधीजीने वाइसरायको यह तार भेजा :

"कल मुझे सीमा-प्रान्त तथा संयुक्त-प्रान्तमें लगाये गये अध्यादेशोंकी खबर मिली। यह भी पता चला कि सीमा-प्रान्तमें गोली चली है और उपर्युक्त दोनों प्रदेशोंमें मेरे आदरणीय साथियोंकी गिरफ्तारियाँ हुई हैं तथा इनसे भी बढ़कर बंगालका अध्यादेश मेरी प्रतीक्षा कर रहा है। ऐसी स्थितिमें मैंने सोचा कि मैं जहाज़से उतरूँ ही न। क्या मैं इन सबको इस बातका संकेत समझूँ कि हमारे पारस्परिक मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध समाप्त हो गये हैं अथवा अब भी मुझसे आप यह अपेक्षा करते हैं कि मैं आपसे मिलूँ तथा मार्गदर्शन लूँ। इस सम्बन्धमें कांग्रेसको समुचित सलाह देनेका कार्य मुझपर ही छोड़ा गया है। प्रत्युत्तर तार द्वारा भिजवानेकी कृपा करें।"

दिनांक ३१ दिसम्बरके एक तारमें वाइसरायके निजी सचिवने लिखा :

"हिज़ एक्सलैन्सीकी इच्छा है कि मैं आपको सूचित करूँ कि वे तथा उनकी सरकार सभी राजनीतिक दलों और जनताके सभी वर्गोंसे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाये रखना चाहते हैं, विशेष रूपसे वैधानिक सुधारोंके बड़े कार्यमें, जिसे वे अविलम्ब आगे बढ़ानेका निर्णय कर चुके हैं। वे आप सबका पूर्ण सहयोग चाहते हैं। फिर भी यह सहयोग पारस्परिक होना चाहिए। हिज़ एक्सलैन्सी तथा उनकी सरकार

संयुक्त प्रदेश और सीमा-प्रान्तकी कांग्रेसकी प्रवृत्तियोंके साथ सहयोगकी उस मैत्रीपूर्ण भावनाका, जो भारतकी भलाईके लिए अपेक्षित है, कोई सामंजस्य नहीं पाती।

"पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेशमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ और उनसे नियंत्रित संस्थाएँ शासनके विरुद्ध सतत रूपसे कार्य कर रही हैं। वे जातीय घृणाकी भावनाको उत्तेजित कर रही हैं। चीफ़ कमिश्नरने उनका सहयोग प्राप्त करनेके लिए जो भी प्रस्ताव रखे, वे सब ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ और उनके मित्रोंने हठपूर्वक अस्वीकार कर दिये। उन्होंने पूर्ण स्वराज्यके पक्षमें प्रधान मंत्रीकी घोषणाको भी अस्वीकार कर दिया। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने पिछले दिनों अनेक भाषण किये जिनसे किसी निर्माणात्मक कार्यकी अपेक्षा विद्रोहको उत्तेजना मिली। उनके सहयोगियोंने कबाइली क्षेत्रोंमें भी उपद्रव फैलानेकी चेष्टा की। हिज़ एक्सलैन्सीकी सरकारकी स्वीकृतिसे चीफ़ कमिश्नरने चरम सीमातक सहनशीलता दिखलायी। प्रान्तमें वैधानिक सुधारोंको अविलम्ब क्रियान्वित करनेका हिज़ मैजेस्टीकी सरकारका जो इरादा है, उसके बारेमें भी चीफ़ कमिश्नरने अंतिम क्षण तक खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँका सहयोग प्राप्त करनेका पूरा प्रयत्न किया। सरकारने कोई भी विशेष कार्यवाही करनेको स्वयंको तबतक रोका जबतक कि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ और उनके सहयोगियोंने सरकारके विरुद्ध शीघ्र संघर्षकी खुले तौरपर व्यापक तैयारियाँ न कर लीं और वे प्रदेश तथा कबाइली क्षेत्रकी शान्तिको गम्भीर धमकी न देने लगे; परन्तु अब सरकारके लिए यह सम्भव नहीं रहा है कि वह कार्यवाहीमें विलम्ब करे। हिज़ एक्सलैन्सीको यह ज्ञात है कि गत अगस्त मासमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको प्रदेशमें कांग्रेस आन्दोलनका नेतृत्व करनेका उत्तरदायित्व सौंपा गया था और उनको इस बातका भी पता है कि जिस स्वयंसेवक संगठनका ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने नियंत्रण किया था उसको अखिल भारतीय कांग्रेस समितिने विशेष रूपसे कांग्रेसके संगठनके रूपमें स्वीकार किया था। हिज़ एक्सलैन्सी चाहते हैं कि मैं आपसे यह स्पष्ट कर दूँ कि उनके ऊपर शान्ति और व्यवस्था क़ायम रखनेका जो उत्तरदायित्व है उसके कारण उनके लिए यह असम्भव है कि वे ऐसे व्यक्ति या संस्थाओंसे सम्पर्क रखें जो उपर्युक्त प्रवृत्तियोंके लिए ज़िम्मेदार ठहरती हैं। गोलमेज़ परिषद्के कार्यवश आप स्वयं भारतसे अनुपस्थित रहे और जैसा व्यवहार आपने वहाँ पाया उसके प्रकाशमें हिज़ एक्सलैन्सी यह स्वीकार करनेको तैयार नहीं हैं कि इन कार्योंकी जिम्मेदारीमें आपका हाथ भी है अथवा संयुक्त प्रदेश और सीमाप्रान्तमें कांग्रेस द्वारा संचालित इन

कार्योंको आपकी स्वीकृति भी प्राप्त है। यदि वास्तवमें ऐसी ही बात है तो हिज़ एक्सलैन्सी आपसे मिलनेको इच्छुक हैं। वे अपने विचारोंको आपके सामने इसलिए रखना चाहते हैं कि आप सहयोगकी उस भावनाको कायम रखनेमें अपने प्रभावका प्रयोग करें जो गोलमेज़ परिषद्की कार्यवाहीको सजीव बनाये हुए थी। परन्तु हिज़ एक्सलैन्सी इस बातपर बल देनेके लिए बाध्य हैं कि वे आपसे उन उपायोंपर विचार-विमर्शके लिए तैयार नहीं होंगे जो कि हिज़ मैजेस्टीकी सरकारकी पूर्ण स्वीकृतिसे बंगाल, संयुक्त प्रदेश और पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तमें अनिवार्य समझे गये हैं। उन उपायोंको तबतक सक्रिय ही रखना है जबतक कि उनको लागू करनेका प्रयोजन पूरा नहीं हो जाता अर्थात् नियम और व्यवस्थाका समुचित संरक्षण, जो कि किसी भी भली सरकारके लिए आवश्यक है। हिज़ एक्सलैन्सीका यह प्रस्ताव है कि इस तारका उत्तर प्राप्त होनेपर विचारोंके इस आदान-प्रदानको प्रकाशित कर दिया जाय।"

गांधीजीने अपने १ जनवरी १९३२ के तारमें वाइसरायको लिखा :

"मेरे दिनांक २९ के तारके प्रत्युत्तरमें आपका तार मिला, तदर्थ मैं हिज़ एक्सलैन्सीको धन्यवाद देता हूँ। आपके उत्तरसे मेरे हृदयको बहुत ठेस लगी। अतिशय मैत्रीपूर्ण भावनाके साथ उठाये गये एक क़दमको इस प्रकारसे अस्वीकार कर देना उनके उच्च पदके लिए कदाचित् ही उपयुक्त हो, मैं उनके निकट एक जिज्ञासुके रूपमें जाना चाहता था। शासनने जिन अति गम्भीर और असामान्य उपायोंका अपनाया है और जिनका मैंने उल्लेख किया है, उनपर मैं चाहता था कि वे सरकारके दृष्टिकोणसे प्रकाश डालें। मैंने जो आगे बढ़कर यह पहल की है उसके प्रति उनको अभिरुचि दिखलानी चाहिए थी परन्तु उसके स्थानपर हिज़ एक्सलैन्सीने इस भावनाको ही स्वीकार नहीं किया। उन्होंने कहा है कि मैं अपने आदरणीय साथियोंका परित्याग कर दूँ। यदि मैं इस असम्मानजनक आचरणका दोषी भी बन जाऊँ तो भी जैसा कि उनका कहना है, मैं उनके साथ उन विषयोंपर चर्चा नहीं कर सकूँगा जो राष्ट्रके लिए अति आवश्यक रूपसे महत्त्वपूर्ण हैं।

"मेरी सम्मतिमें अध्यादेशों और कानूनोंके सम्मुख वैधानिक मामले महत्त्वहीन होकर अपना प्रभाव खो देते हैं। राष्ट्रमें यदि हठीली अवरोध-शक्ति न हुई तो यह अध्यादेश उसके अति नैतिक पतनके बाद ही समाप्त होते हैं। मैं आशा करता हूँ कि एक संदेहास्पद प्राप्तिके लिए कोई स्वाभिमानी भारतीय अपनी राष्ट्रीय भावनाको मार डालनेका खतरा न उठायेगा। जब राष्ट्रके पास आंतरिक

बल ही निःशेष हो गया तब वह संविधानको लेकर ही क्या करेगा ? अब मैं सीमाप्रान्तके विषयमें भी कुछ बतलाना चाहता हूँ। आपके तारमें कुछ तथ्योंका निरूपण किया गया है, उनके सम्बन्धमें मुझे यही कहना है कि वहाँ बिना वारन्ट निकलवाये जनप्रिय नेताओंको गिरफ्तार किया जा रहा है। कानूनोंसे बढ़े-चढ़े अध्यादेशोंको लागू किया जा रहा है। जनताका जीवन और सम्पत्ति नितान्त अरक्षित है और उन निहत्थे शांत जनसमूहोंपर, जो अपने विश्वस्त नेताओंकी गिरफ्तारीके विरोधमें प्रदर्शन करनेका साहस कर रहे हैं, गोली चलायी जाती है। यदि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ पूर्ण स्वाधीनताके अपने अधिकारपर बल देते हैं तो उनका यह दावा स्वाभाविक है क्योंकि कष्ट-मुक्तिके हेतु उसे लाहौर कांग्रेसमें सन् १९२९ में स्वीकार किया गया है और मैंने भी लंदनमें ब्रिटिश सरकारके आगे इस दावेपर ज़ोर दिया है। इसके अतिरिक्त मैं वाइसराय महोदय-को यह भी स्मरण करा देना चाहूँगा कि उनको सरकारी तौरपर इस बातका ज्ञान होते हुए भी कि कांग्रेसके आधिकारिक आदेश-पत्रमें स्वतन्त्रताका यह दावा भी सम्मिलित है, मुझे कांग्रेसके प्रतिनिधिके रूपमें लंदनकी परिषद्में सम्मिलित होनेके लिए आमंत्रित किया गया। मैं यह भी नहीं समझ पा रहा हूँ कि क्या दरबारमें जानेसे इनकार कर देना ऐसा अपराध है जिसपर कारावास दंड अव-लम्बित हो सकता है ? यदि खान साहब जातियोंके बीच घृणाकी भावनाको उत्ते-जना दे रहे हैं तो यह असंदिग्ध रूपसे खेदजनक बात है। उन्होंने स्वयं मेरे समक्ष इसके विपरीत घोषणाएँ की हैं। यदि यह मान भी लिया जाय कि उन्होंने जातीय घृणाको उकसाया तो उनपर खुले तौरपर मुकदमा चलाना चाहिए था जहाँ कि वे अपनेको इस अभियोगके विरुद्ध निर्दोष सिद्ध कर सकते। संयुक्त प्रान्तके संबंध-में निश्चित ही हिज़ एक्सलैंसीको भ्रमपूर्ण सूचनाएँ दी गयी हैं। ....संयुक्त प्रान्तके बारेमें एक लम्बे अर्सेसे वाद-विवाद चलता आ रहा है और उससे राष्ट्रका हित जुड़ा हुआ है, उन किसान लोगोंका जिनकी आर्थिक रीढ़ टूट चुकी है। कोई भी शासन, यदि वह अपनी अधीन प्रजाके कल्याणका इच्छुक होगा तो कांग्रेस जैसी संस्थाके ऐच्छिक सहयोगका स्वागत करेगा जिसके सम्बन्धमें यह स्वीकार किया जा चुका है कि उसका जनतापर अत्यधिक प्रभाव है और उसकी एकमात्र कामना जनसेवा है। मैं साथ ही इस बातको भी कहना चाहता हूँ कि मैं करबन्दीको उस जनताका पुरातन और सहज, अविच्छेद्य अधिकार मानता हूँ जिसके आर्थिक भारसे मुक्ति पानेके शेष समस्त उपाय समाप्त हो चुके हों। मैं इस बातको भी अस्वीकार करता हूँ कि किसी भी रूप या आकारमें अव्यवस्थाको बढ़ानेकी

कांग्रेसकी तनिकसी भी इच्छा है ।

"जहाँतक बंगालका प्रश्न है, कांग्रेस हत्याओंकी भर्त्सना करनेमें सरकारके साथ है । ऐसे अपराधोंको निर्मूल करनेमें सरकार जो क़दम उठायेगी उसमें कांग्रेस उसे अपना हार्दिक सहयोग देगी परन्तु जहाँ कांग्रेस अगणित शब्दोंमें आतंकवादके तरीक़ोंकी निन्दा करती है, वहीं वह सरकारके आतंकवादके साथ भी अपना किसी भी प्रकारका सम्बन्ध नहीं रखना चाहती । बंगालमें लागू अध्यादेश और उसके कानूनोंने कांग्रेसका विश्वास भंग किया है । सरकारके इस प्रकारके कानूनी आतंकवादकी प्रवृत्तियोंसे अलग कांग्रेस अपने निश्चित अहिंसाके सिद्धांतकी मर्यादामें ही रहेगी ।

"आपके तारमें यह विचार व्यक्त किया गया है कि सहयोग दोनों ही पक्षोंसे होना चाहिए । मुझे यह प्रस्ताव हृदयसे स्वीकार है परन्तु आपके तारसे जो निष्कर्ष निकलता है, वह यह है कि हिज़ एक्सलैन्सी बिना सरकारकी ओरके किसी प्रतिकारके, काग्रेसके सहकारकी अपेक्षा करते हैं । उन्होंने मुझसे उन विषयोंपर चर्चा करना स्पष्ट रूपसे अस्वीकार कर दिया, जिनपर उनके साथ वार्तालाप करनेके लिए मैं प्रयत्नशील था । मेरे विचारमें दो पक्ष अवश्य हैं । उनमें एक लोक-पक्ष है जिसे मैं आपके आगे रख चुका हूँ । इससे पहले कि मैं कोई निर्णय करूँ और तदनुसार कांग्रेसको सम्मति दूं, मैं दूसरे पक्ष अर्थात् सरकारी पक्षको समझ लेनेके लिए उत्सुक था । आपके तारके अंतिम गद्यांशके संदर्भमें मेरा यह कहना है कि मेरे साथियोंने सीमाप्रान्त, संयुक्त प्रान्त अथवा जहाँ भी जो कार्य किये हैं उनके नैतिक उत्तरदायित्वसे मैं अलग नहीं हो सकता किन्तु मैं इस तथ्यको भी अङ्गीकार करता हूँ कि उन दिनों भारतसे अनुपस्थित रहनेके कारण मुझे अपने सहयोगियोंके कार्यों और प्रवृत्तियोंकी विस्तार रूपसे जानकारी नहीं थी । इस कारण, स्वयंकी ज्ञान-वृद्धिके लिए और इसलिए भी कि मुझको कांग्रेस कार्यसमितिको अपनी राय और मार्ग-दर्शन देना था मैंने खुले मस्तिष्क एवं स्वेच्छापूर्ण इरादोंको लेकर हिज़ एक्सलैन्सीसे भेंट करनी चाही और मैंने विचारपूर्वक उनको उनके मार्ग-दर्शनके लिए लिखा ।

"मैं हिज़ एक्सलैन्सीसे अपनी इस मनोभावनाको नहीं छिपाऊँगा कि उन्होंने कृपा करके मुझे जो उत्तर दिया है, वह मेरी मैत्रीपूर्ण और सदिच्छायुक्त पहलका उत्तर तो शायद ही कहा जा सके । अब यदि बहुत विलम्ब न हुआ हो तो मैं हिज़ एक्सलैन्सीसे यह निवेदन करूँगा कि वे अपने निर्णयपर पुनर्विचार करें और चर्चाको किसी विशेष क्षेत्र या विषयकी सीमामें प्रतिबन्धित न करके, मुझसे एक

मित्रकी भाँति मिलें; कोई शर्त न रखें। मैं अपनी ओरसे उन्हें यह वचन दे सकता हूँ कि मैं सारे तथ्योंका, जो वे मेरे सामने रखेंगे, पूर्वाग्रहहीन खुले मस्तिष्कसे अध्ययन करूँगा। मैं बिना किसी हिचकके, स्वेच्छासे सम्बन्धित प्रदेशोंमें जाऊँगा और अधिकारियोंकी सहायता लेकर दोनों पक्षोंका अध्ययन करूँगा। और यदि मैं अपने अध्ययनके पश्चात् इस निष्कर्षपर पहुँचा कि लोग अपनी जगह ग़लत थे तथा मुझ सहित कांग्रेस कार्यसमितिको वास्तविक स्थितिसे दूर ले जाया गया है और सरकार अपनी जगह ठीक है तो मुझे सबके सामने इस वस्तुस्थितिको स्वीकार करनेमें तनिक भी झिझक नहीं होगी। फिर मैं इसके अनुसार ही कांग्रेसको अपना पथ-दर्शन दूंगा। अपनी इस इच्छा और सानुकूल सहमतिके साथ ही मैं हिज़ एक्सलैन्सीके सामने अपनी सीमाएँ भी अवश्य रखना चाहूँगा। अहिंसा मेरा पूर्ण सिद्धान्त है। मेरा विश्वास है कि विशेष रूपसे जिस समय जनताकी सरकारमें अपनी कोई प्रभावशाली आवाज़ न हो उस समय सविनय आज्ञा-भंग मात्र उसका स्वाभाविक अधिकार ही नहीं है अपितु वह विद्रोह अथवा सशस्त्र क्रान्तिका एक प्रभावोत्पादक पर्याय भी है। अतः मैं अपने सिद्धांतको कभी त्यागूँगा नहीं। इस सिद्धांतके अनुसरणकी दृष्टिसे तथा उन अप्रतिपादित विवरणोंके बलपर, जिनको भारत-सरकारकी अद्यतन प्रवृत्तियाँ सहारा दे रही हैं, यह समझा गया कि मुझे जनताको मार्ग दिखानेका कोई अवसर न मिलेगा अतः कांग्रेस समितिने मेरी सलाह मान ली और एक प्रस्ताव स्वीकृत किया, जिसमें प्रयोग रूपमें सविनय आज्ञा भङ्गकी योजनाकी एक रूपरेखा प्रस्तुत की गयी है। मैं इसके साथ ही मूल प्रस्ताव भी भेज रहा हूँ। यदि हिज़ एक्सलैन्सी यह उचित समझते हैं कि मैं उनसे आकर भेंट करूँ तो यह प्रस्ताव उस समयतकके लिए स्थगित किया जा सकता है या कार्यान्वित होनेसे इस आशाके साथ रोका जा सकता है कि चर्चाके परिणाम-स्वरूप अन्ततः इसे त्याग ही दिया जायगा। मेरा अपना विचार भी यही है कि हिज़ एक्सलैंसी और मेरे बीचका यह पत्र-व्यवहार गम्भीर रूपसे महत्त्वपूर्ण है और इसके प्रकाशनमें विलम्ब नहीं होना चाहिए। अतः मैं अपना तार, आपका उत्तर, यह तार तथा कांग्रेस समितिका प्रस्ताव प्रकाशनार्थ भेज रहा हूँ।"

कार्यसमितिके प्रस्तावमें कहा गया था, "जहाँतक पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तकी बात है, शासनकी अपनी सूचनाओंसे यह प्रकट होता है कि न तो अध्यादेशकी घोषणाके लिए और न खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ तथा उनके सहकर्मियोंकी गिरफ्तारी और बिना अभियोग चलाये उनके कारावासके लिए कोई अधिकार-पत्र (वारन्ट) था। कार्यसमिति प्रान्तमें निर्दोष तथा निहत्थे लोगोंपर गोली चलाना स्वेच्छाचारी,

अमानवीय कार्य मानती है और सीमाप्रान्तके वीर लोगोंको उनके इस साहस और धैर्यपर बधाई देती है। कार्य-समितिको इसमें सन्देह नहीं है कि पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तकी वीर जनताने यदि अधिकसे अधिक उत्तेजित किये जानेपर भी अपनी अहिंसाकी भावनाको बनाये रखा तो उसका लहू और तक़लीफें निश्चय ही भारत-की स्वतन्त्रताके लक्ष्यको आगे ले जायँगी। कार्यसमिति भारतकी सरकारसे यह मांग करती है कि वह उन कारणोंकी खोजके लिए एक निष्पक्ष सार्वजनिक जाँच बिठाये जिनके कारण उसे अध्यादेश तथा उसके अन्तर्गत बहुतसे कानूनोंकी घोषणा करनी पड़ी तथा उसे कानूनके सामान्य न्यायालयों और विधानकी सारी मशी-नरीको अध्यादेशोंके पीछे कर देनेकी आवश्यकता पड़ गयी।"

कार्यसमितिकी रायमें, 'इन कानूनों, अन्य प्रान्तोंमें लागू अपेक्षाकृत कम गम्भीर कानूनों तथा वाइसरायके तारसे अब यह सम्भव नहीं रहा है कि कांग्रेस सरकारको आगे अपना सहयोग दे, यदि सरकार अपनी नीति ही मूल रूपसे न बदल दे।' प्रस्तावमें आगे कहा गया था कि 'कांग्रेसकी मांगोंको दृष्टिमें रखते हुए प्रधान मंत्रीकी घोषणाएँ पूरी तरहसे असंतोषजनक और अपर्याप्त हैं। सरकारकी ओरसे कोई संतोषप्रद उत्तर न मिलनेके कारण कांग्रेसकी कार्यसमिति सविनय आज्ञा-भंगके हेतु राष्ट्रका आह्वान करती है। वह विश्वके स्वाधीन लोगोंसे यह अपील भी करती है कि वे भारतके संघर्षकी ओर ध्यानसे देखें; इस विश्वासके साथ कि कांग्रेस जिस अहिंसात्मक पद्धतिको अपना रही है उसका एक विश्व-व्यापी महत्त्व है। यदि यह प्रणाली इस प्रयोगमें सफल हुई तो यह भी सम्भव है कि यह भविष्यमें एक प्रभावशाली और नैतिकतापूर्ण तरीकेके रूपमें युद्धकी जगह ले ले।'

वाइसरायके निजी सचिवने २ जनवरी सन् १९३२ को अपने एक तारमें गांधीजीको लिखा :

"हिज़ एक्सलैन्सी और उनकी सरकार बड़ी कठिनाईसे इस बातका विश्वास कर पा रही है कि आपका तथा कार्यसमितिका यह विचार है कि सविनय अवज्ञा-की धमकियोंसे हिज़ एक्सलैन्सी आपको मुलाकातके लिए बुलायेंगे और उस भेंटके कुछ लाभकारी परिणाम निकलेंगे। कांग्रेसने जिस मार्गको ग्रहण करनेका अपना इरादा घोषित किया है, उसके जो भी परिणाम होंगे, उनके लिए तथा सरकार उसका सामना करनेके लिए जो भी आवश्यक उपाय अपनायेगी उनके लिए भी आप तथा कांग्रेस उत्तरदायी होंगे।"

गांधीजीने इसका उत्तर दिया, "यह तो समय ही बतलायेगा कि किसका पक्ष

न्यायसंगत था। मैं सरकारको यह आश्वासन देना चाहता हूँ कि संघर्ष कालमें कांग्रेसकी ओरसे जो भी प्रयत्न किये जायँगे उनमेंसे कोई द्वेष-भावसे प्रेरित होकर नहीं किया जायगा और उनमें अहिंसाका कड़ाईके साथ पालन होगा।"

४ जनवरी १९३२ को बहुत सबेरे गांधीजीको गिरफ्तार कर लिया गया और यरवदा जेल ले जाया गया जहाँ कि उनको अनिश्चित अवधिके लिए नज़रबन्द कर दिया गया, 'जबतक सरकारकी इच्छा हो तबतकके लिए।'

गांधीजीको यह मालूम नहीं था कि वल्लभभाई पटेलकी भी गिरफ्तारी हो चुकी है अतः उन्होंने सरदारके पास यह संदेश भिजवाया और उसे प्रसारित करनेको कहा, 'ईश्वरकी दया अनन्त है। कृपया जनतासे यह कह दीजिए कि वह सत्य और अहिंसासे विचलित न हो और स्वराज्यप्राप्तिके लिए अपने जीवन तथा अपने सर्वस्वको अर्पित करनेसे तनिक भी न झिझके।'

अंग्रेज लोगोंके लिए उन्होंने मि० वैरियर एल्विनके द्वारा यह सन्देश प्रसारित कराया, "अपने देशवासियोंसे कहिए कि मैं उन्हें उतना ही प्रेम करता हूँ जितना कि अपने देशवालोंको। मैंने घृणा और ईर्ष्यासे प्रेरित होकर उनके साथ कभी कोई व्यवहार नहीं किया और ईश्वरने चाहा तो भविष्यमें भी नहीं करूँगा। मैं उनके साथ उससे अलग व्यवहार नहीं कर रहा हूं जो इन्हीं परिस्थितियोंमें मैंने अपने आत्मीयों और परिचितोंके साथ किया है।"

गिरफ्तारीके बाद गांधीजी महादेव देसाईके लिए शीघ्रतामें कुछ आदेश घसीट गये थे। उनमेंसे एकमें वैरियर एल्विन साहबसे यह निवेदन किया गया था कि वे स्वयं पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेशमें जायँ ओर यह देखें कि वास्तवमें वहाँ क्या घटनाएँ घटी हैं? खुदाई खिदमतगार आन्दोलनके कठोर दमनके सम्बन्धमें बंबईमें जो समाचार छनकर मिल रहे थे, वे भी बड़ी चिन्ता उत्पन्न कर रहे थे। किसी भी पत्रकारको वहाँ प्रवेश नहीं करने दिया जा रहा था। समाचारपत्रोंमें वहाँके जो विवरण छप रहे थे उनको बड़ी कड़ाईसे छान-बीन कर, सैन्सर प्रकाशित होने दिया जाता था। फलस्वरूप जनता यह जाननेको बड़ी व्यग्र हो उठी थी कि पठानोंके भाग्यमें क्या है? एल्विन साहब पहले संवाददाता थे जिन्होंने वहाँ प्रवेश किया और वहाँकी स्थितिका विस्तार सहित विवरण दिया। उनकी यह रिपोर्ट विश्वभरमें प्रसारित हुई परन्तु भारतमें उसपर तुरन्त ही प्रतिवन्ध लगा दिया गया।

देवदास गांधीने दिनांक ७ जनवरी १९३२ की अपनी एक प्रेस विज्ञप्तिमें कहा, 'मेरे पिताकी इच्छा यह थी कि मैं समग्र भारतकी ओरसे अहिंसक पठानों-

को आदर एवं सम्मान अर्पित करनेके लिए जितने शीघ्र हो सके मैं सीमाप्रान्त जाऊँ। पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेशमें हमारे साथी शासनकी प्रतिरोधी नीतिके विरुद्ध एक बड़ी अहिंसक लड़ाईमें लगे हुए हैं। वे सरलतासे घबरायेंगे नहीं और न त्रस्त होकर घुटने टेकेंगे। जितना भी मैंने उन्हें देखा है, उसके आधारपर मैं यह कह सकता हूँ कि उनमें कष्ट झेलने और त्याग करनेकी अपार क्षमता है। अब उस प्रान्तमें नेता या किसी प्रभावशाली कार्यकर्त्ताको बाहर नहीं रखा गया है फिर भी हम समाचार-पत्रोंमें नित्य चीफ़ कमिश्नरके जो वक्तव्य पढ़ते हैं वे स्वयंमें नेताविहीन खुदाई खिदमतगारोंके अनुशासन और अहिंसासे पूर्ण साहसकी अप्रत्यक्ष स्वीकृतियाँ होती हैं। मुझे आशा है कि उनके कष्टोंके प्रति भारतभरके मुसलमानोंकी सहानुभूति होगी। यदि मुझे सीमाप्रान्तमें जाने दिया जाय तो मेरा पहला कार्य यह होगा कि वहाँ जो गोलीकाण्ड हुए हैं, उनकी जाँच करूँ। लेकिन मैं जानता हूँ कि मुझे रोक लिया जायगा या गिरफ्तार कर लिया जायगा।'

देवदासकी सहायतासे मि० वैरियर एल्विन पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेशमें गये और उन्होंने अपने बीस पृष्ठके विवरणमें लिखा :

"जिस दिन महात्मा गांधीकी गिरफ्तारी हुई, उसी दिन शामको मुझे उनका सन्देशा मिला। उसमें उन्होंने अपनी यह इच्छा प्रकट की थी कि कोई अंग्रेज पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तमें जाय और वहाँकी घटनाओंको देखकर बतलाये कि वास्तवमें वहाँ क्या हो रहा है ? हम लोगोंका खयाल यह था कि मुझे उस प्रदेश-में प्रवेश नहीं करने दिया जायगा। इसलिए मैंने किन्हीं अन्य सज्जनको खोजने-का प्रयत्न किया परन्तु मुझको सफलता नहीं मिली। तब मैंने स्वयं ही सीमाप्रान्त जानेका निश्चय कर लिया। मैंने अपने साथ भाई शामरावको ले लिया। उनसे मुझे सूचनाएँ एकत्र करनेमें बड़ी सहायता मिली। दौरेकी सारी व्यवस्थाको उन्होंने सँभाला। मैं छिपकर नहीं गया। मैंने अपना नाम भी नहीं बदला। इतना अवश्य था कि सामान्यतया मैं कमीज़ और धोती पहना करता हूँ परन्तु वहाँ मैं अंग्रेजी पोशाकमें गया। पेशावर पहुँचते ही मैं एक मोटर गाड़ी लेकर शहरमें एक दूकानदारके यहाँ चला गया। उसने सब ओर मेरा यह प्रभाव जमा दिया कि मैं एक अंग्रेज व्यापारी हूँ और अपने विश्वासपात्र बाबूको लेकर व्यवसायके सिलसिलेमें पेशावर आया हूँ। यह प्रभाव मेरे लिए भी लाभप्रद सिद्ध हुआ। दूकानदार अत्यधिक भयभीत था, इसलिए नहीं कि वह मेरे ऊपर भरोसा नहीं करता था बल्कि इसलिए कि महात्मा गांधीसे सम्बन्धित व्यक्तिसे बात करनेतकमें

खतरा था। मेरी उपस्थितिने एक भय उत्पन्न कर दिया जो कि उन दिनों चल रहे दमनकी शक्तिको सूचित करनेवाला एक प्रमाण-पत्र कहा जा सकता है।

"मैंने वहाँ जाते ही सूचनाएँ एकत्र करनी प्रारम्भ कर दीं। फिर मैं छावनीके एक होटलमें चला गया और होटलसे डाक-बंगलेमें, जहाँ कि मैंने पुलिसकी जानकारीके लिए अपने सम्बन्धमें एक कागज़की खानापूरी की। इसमें सारे तथ्य सत्य दिये गये थे। मैंने पहले दो दिन पेशावर शहरमें ही बिताये। इन दिनोंमें मैंने दूकानदारों, वकीलों, विद्यार्थियों, लाल कुर्ती दलवालों तथा अन्य प्रत्यक्ष साक्षियोंसे मुलाकातें कीं। लोगोंको विश्वास दिलाकर उनसे तथ्योंकी जानकारी प्राप्त करना वास्तवमें बहुत कठिन कार्य था। कुछ लोग मुझसे पीछेके दरवाजेसे चोरीसे मिलने आते थे। कुछ लोग केवल रातमें ही आते थे। कुछ घरोंके भीतरी कमरोंमें मिलते थे, जहाँ प्रकाश मन्द होता था। तीसरे दिन मैं होशेरा, मरदान, चारसद्दा और उत्मानज़ई गया जहाँ कि दमन अपनी चरम सीमापर है। मैं बेलाह, मंगर, दुर्गई आदि गाँवोंमें भी गया और मैंने गाँववालोंसे बहुत-सी बातें कीं। चौथे दिन हम लोग कोहाट गये और अत्यन्त कठिनाईके होते हुए भी मैंने वहाँ गोलीकाण्डका पूरा विवरण प्राप्त कर लिया। लोग इतना डर गये थे कि कस्बेका एक प्रमुख व्यक्ति देहातकी ओर दूरतक टहलता हुआ गया और सड़कपर उस जगह, जहाँ बिलकुल सुनसान पड़ता था, हमारी मोटर-कारके पास आया। मुझे सूचना देनेके लिए वह मुश्किलसे इतना साहस जुटा सका। पाँचवें दिन हम लोग खैबर दर्रा गये। हम वहाँ लिण्डी कोतलसे लेकर जिन्तरातक पैदल चले। हमें रास्तेमें कई जगह गोली चलनेकी आवाज़ सुनाई दी। मेरे पूछनेपर मेरे मार्गदर्शकने लापरवाहीसे कहा, 'कुछ नहीं, परिवारोंके झगड़े हैं।' हम अफ़रीदियोंके कुछ गाँवोंमें गये और उनके साथ स्थितिपर विचार किया। बादमें मुझे मालूम हुआ कि इन दिनों पुलिस मेरी खोज कर रही थी। मैं उससे कैसे बच गया यह एक रहस्य ही है। खैबरके दर्रेकी ओर जानेसे पहले मैंने डिप्टी-कमिश्नरको एक मैत्रीपूर्ण तथा सीधा-सादा पत्र लिखा जिसमें मैंने उनको बतलाया कि मैं वहाँ क्यों आया हूँ। साथ ही मैंने उनसे उनकी भेंटके लिए अनुमति माँगी ताकि मैं अधिकारियोंके विचारोंको भी जान सकूँ और एक निष्पक्ष तथा संतुलित विवरण उपस्थित कर सकूँ। अपने उत्तरमें उन्होंने मुझसे मिलनेसे स्पष्ट इनकार कर दिया, भले ही मेरा कुछ भी हेतु हो। इतना ही नहीं, उन्होंने मुझे लिखा कि मुझे सबके सामने गिरफ्तार कर लिया जायगा, मेरे सामानकी तलाशी ली जायगी और मुझे पुलिसके पहरेमें प्रदेशसे बाहर निकाल दिया जायगा। उन्होंने जिस ट्रेन और दिनका अपने पत्रमें उल्लेख

किया था, वे मेरे लिए सबसे अधिक असुविधाजनक थे। कुछ भी हो, पेशावरके अपने दो दिनके प्रवासमें मैंने आधे दर्जन अधिकारियों और सिविलियनोंसे मिलकर उनके विचारोंको जाना। इसलिए मैं इस बातका दावा कर सकता हूँ कि भले ही मैं अति अल्प समयतक रुक पाया परन्तु मैंने प्रत्येक वर्गके लोगोंके विचार जान लिये—शहरवाले, गाँववाले, कांग्रेसजन, सिविलियन और अधिकारी। मैं अपने विवरणके सम्बन्धमें यह दावा नहीं कर सकता कि इसमें भ्रान्ति नहीं हो सकती। इस बातको सभी लोग जानते हैं कि मेरी सहानुभूति कांग्रेसके प्रति है फिर भी मैं एक अंग्रेज हूँ और मैं यह कभी न चाहूँगा कि मेरी अपनी जातिके लोगोंको तिरस्कारकी दृष्टिसे देखा जाय। मैंने इस बातका पूरा प्रयत्न किया है कि अधिकारी वर्गके विचारों और तर्कोंपर भी पूरी तरहसे अपना ध्यान केन्द्रित करूँ। मैंने लोकप्रिय आन्दोलनके दोषोंको भी छिपानेका प्रयत्न नहीं किया है। वस्तु-स्थिति यह है कि स्थानीय अधिकारियोंतकने 'दमन' के तथ्योंको पूर्ण रूपसे स्वीकार किया है। उसके ऊपर उन्हें लज्जा नहीं है। वे कहते हैं, 'यह सीमाप्रान्त है। आप लोग; नीचेके प्रदेशोंमें रहनेवाले लोग इन सब बातोंको न समझ सकेंगे।' परन्तु नीचे रहनेवाले लोग यह भली भाँति समझते हैं कि मनुष्यता समान है, चाहे सीमाप्रान्त हो या बम्बई।

"इस प्रदेशकी राष्ट्रीय प्रवृत्तियोंके सूत्र खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके नामके साथ जुड़े हुए हैं। इस भव्यता और शौर्यसे परिपूर्ण आकृतिने पठानोंके मनकी कल्पनाओंको अपने वशमें किया है। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ एक महान् व्यक्ति हैं—शरीरसे महान्, हृदयसे महान्, समृद्धिसे महान् और अब अपने आत्मिक विचारों-से महान्—जिनके जीवनका गांधीजीके जीवनसे सादृश्य है। उनके सम्बन्धमें आपको भिन्न-भिन्न प्रकारके मत सुननेको मिलेंगे। दिल्लीमें एक अफ़सरने उनका ज़िक्र आनेपर मुझसे कहा, 'वह पुराना दुष्ट!' सीमा-पारके एक छोटेसे गाँवकी गढ़ीमें एक अफ़रीदीने मुझसे कहा, 'वह,...वह तो किसी भी कामका नहीं है। वह तो गोलीतक नहीं चला सकता', एक अंग्रेज महिलाने, जो उनके परिवारमें आठ वर्षतक रही थीं, उनके सम्बन्धमें अपना मत व्यक्त किया, 'वे तो ईसा मसीह हैं।' मि० बर्नेज अपनी पुस्तक 'नैकेड फ़कीर' में लिखते हैं, 'खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ एक कृपालु एवं सज्जन पुरुष हैं, बल्कि प्रेम करने योग्य व्यक्ति हैं। उनका नाम सामान्य रूपसे 'महात्मा' के नामके साथ लिया जाता है लेकिन खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके भाषण महात्माजीकी अपेक्षा उग्र होते हैं। महात्माजीमें शत्रुओंके हृदयको जीतनेकी शक्ति है, वह भी उनमें नहीं है। वे अत्यंत कुशल संगठनकर्त्ता

हैं। वे अपनी इच्छाके अनुसार चलनेवाले व्यक्ति हैं। मूल रूपसे वे एक नेता हैं फिर भी वे भले और स्नेहशील हैं। उनके हृदयमें निर्धनोंके लिए निष्कपट प्रेम है। उनके मुखपर अहिंसाका सत्य चमकता-सा रहता है। जब मैंने उनको पिछले साल बारडोलीमें देखा तो मुझे कवि वर्डसवर्थकी ये पंक्तियाँ स्मरण हो आयीं जो उन्होंने ऐसे ही किसी पर्वतीय स्थानमें रहनेवाली महान् आत्माके बारेमें लिखी थीं :

> 'वह अपनी जातिके आदिकालके गुणोंको अबतक सँजोये है।
> उसकी प्रतिहिंसा और उसके समस्त क्रूर विचार नष्ट हो चुके हैं।
> वह बदलेगा नहीं—वह उन्नत शिखरपर रखेगा उस विवेकको, जिसे कष्टोंने पाला-पोसा है।'

११ जनवरीको जब मैं पेशावर पहुँचा तब मुझे कोई व्यक्ति लाल वर्दी पहने हुए दिखलाई न दिया और ऐसा प्रतीत हुआ कि वस्तुत: आन्दोलनको भू-गर्भमें ढकेल दिया गया है। जिन उपायोंसे शासनको यह उपलब्धि हुई, उनपर भी विचार किया जाय।

"२४ दिसम्बरको चीफ़ कमिश्नरने तीन अध्यादेशोंकी घोषणा की थी जिनके द्वारा अधिकारियोंके पास अत्यधिक अधिकार आ गये थे। किसी भी मनुष्यपर तनिकसा सन्देह होते ही अध्यादेशके अनुसार वे उसे बंदी बना सकते थे, रोक सकते थे और उसे अपने नियंत्रणमें ले सकते थे।

"यदि शासनको संतुष्टि हो जाती और उसे इस बातका तर्कयुक्त आधार भी मिल जाता कि किसी व्यक्तिने सार्वजनिक सुरक्षाके अहितमें कोई कार्य किया है, कर रहा है या करना चाहता है तो उसको किसी भी विशेष क्षेत्रमें प्रवेश करनेसे, रहनेसे या रुकनेसे रोका जा सकता था। आदेशकी अवज्ञाके अपराधमें दो वर्षके कारावास या अर्थदण्डका विधान था—उसे दोनों दण्ड भी दिये जा सकते थे। अधिकारियोंके हाथोंमें बहुत शक्ति दे दी गयी थी। मकान उनके अधिकारमें थे। सामान्य उपयोगमें आनेवाली कतिपय वस्तुओंके संचयपर उनका नियंत्रण था, वे विशेष अदालतें क़ायम कर सकते थे और उन संस्थाओंके ऊपर प्रतिबन्ध लगा सकते थे जो कि उनकी दृष्टिमें खतरनाक हों। अध्यादेशके अन्तर्गत ४,१२९ गिरफ्तारियाँ हुईं जिनमें ३,५३१ केवल पेशावर नगरमें हुईं।

"२५ दिसम्बरसे लाल कुर्तीवालोंका मुख्य कार्यक्रम यह है कि गाँवोंसे स्वयंसेवकोंको धरना देनेके लिए पेशावर शहरमें भेजें। पुलिस इन धरना देनेवालोंके नाम और पते लिख लेती है जो कि संस्थाके नियमके अनुसार सच ही बतलाये

जाते हैं। तब सेनाके सिपाही रातके समय उस गाँवपर आक्रमण करते हैं जहाँके वे स्वयंसेवक रहनेवाले होते हैं। सामान्यतया सेनाके ये दल तड़के तीन बजे गाँवमें पहुँच जाते हैं और उसे सब ओरसे घेर लेते हैं। इसके बाद गाँवके मुखिया लोगोंको बुलाया जाता है और उनसे कहा जाता है कि वे खुदाई खिदमतगारोंको उपस्थित करें। इससे इनकार करनेपर उनको पीटा जाता है। यदि गाँवमें कोई लाल कुर्तीवाले मिल गये तो उनको पकड़ लिया जाता है; निर्दयतासे पीटा जाता है और उनकी वर्दी उतारकर जला दी जाती है। स्थानीय (पेशावरका) कांग्रेस कार्यालय जलाकर राख कर दिया गया। शायद कांग्रेससे सहानुभूति होनेके अपराधमें सारे गाँवपर सामूहिक जुर्माना कर दिया गया अथवा उसके निवासियोंपर भू-राजस्व कर बकाया था, इसलिए जुर्माना किया गया। इस मामलेमें पुलिसने घरोंपर छापा मारा और उसे जो कुछ भी मिला, उसे उठाकर ले गयी। कई ऐसे मामलोंका भी पता चला जिनमें पुलिसके लोग भीतर जनानेमें घुस गये। उन्होंने स्त्रियोंके साथ अभद्र व्यवहार किया और उनके गहने तथा जवाहरात उतरवाकर ले गये। सेनाकी दौड़ तो गाँववालोंके लिए एक भयावनी वस्तु बन गयी है। उनकी नींद सुरक्षित नहीं रही, पता नहीं रातमें कब जगा दिये जायें ? कोई आदमी अपनेको सुरक्षित नहीं समझ रहा है, भले ही वह स्वयं निर्दोष हो किन्तु उसके किसी सम्बन्धीके अपराधके लिए उसे गिरफ्तार किया जा सकता है। बहुधा जमीदारोंको अपने यहाँ 'स्पेशल पुलिस' रखनेको कहा जाता है। यदि वह इस आदेशकी अवहेलना करता है तो उसे कारागार भेजा जा सकता है। एक गाँवमें लाल कुर्ती दलके एक अधिकारीके भाईसे यह कहा गया कि पचीस पुलिसवालोंको अपने यहाँ ठहराये और उनका भार वहन करे। असमर्थता प्रकट करनेपर उसे जेल भेज दिया गया। अनेक सत्याग्रहियोंने अपने आपको स्वयं गिरफ्तार करा दिया। उन लोगोंकी संख्या इतनी बढ़ गयी कि सरकारके लिए उनको जेलोंमें स्थान दे सकना सम्भव नहीं रहा है इसलिए उसने लंदनकी मैट्रोपोलिटन पुलिसका तरीका अपनानेका निश्चय किया है। धरना देनेवाले सत्याग्रहियोंसे कहा जाता है, 'चलते रहो।' यदि वे लोग हटनेसे इनकार करते हैं तो उनको पीटा जाता है। पेशावर शहरमें इस कामके लिए अधिकतर लाठीको काममें लाया जाता है। लंदनकी पुलिसकी भाँति यह 'चलते रहो' न तो कर्णप्रिय है और न मित्र भावसे दिया गया आदेश है। लोगोंको बड़ी निर्ममतासे मारा जाता है। पुलिसके एक सिपाहीने मुझसे कहा कि लाठियोंकी यह मार बरसातकी झड़ीकी तरह चलती है। एक अन्य प्रत्यक्षदर्शी-

का कहना है, 'इतनी मार तो एक गधा भी नहीं सह सकता।' धरना देनेवाले वहुधा इस मारसे संज्ञाहीन होकर गिर पड़ते हैं और उनके मित्र उनको उठाकर ले जाते हैं। इस सम्बन्धमें गाँवोंकी दशा तो और भी गम्भीर है। पुलिसने साधारण रूपसे यह तरीका अपनाया है कि वह किसी आदमीको मारकर गिरा देनेके बाद तालाव या नदीके ठण्डे पानीमें फेंक देती है। मरदानमें मैंने एक विलक्षण घटना सुनी। नदीके किनारे बसे हुए एक छोटेसे गाँवकी बात है जिसे हिन्दूकुशकी पर्वत-शृंखलाएँ चारों ओरसे किसी मनोरम स्वप्न-सा घेरे हैं। वहाँ कब्रिस्तानकी निकटवर्ती मस्जिदमें एक सार्वजनिक सभा होनेवाली थी। सिपाहियोंने आकर लोगोंको वहाँसे चले जानेकी आज्ञा दी। उन लोगोंने उत्तर दिया कि वे वहाँसे चले जायँगे लेकिन इससे पहले वे अपनी नमाज़ पढ़ लेना चाहते हैं। वे ज्यों ही नमाज़ पढ़नेको झुके त्यों ही पीछेसे उनके ऊपर लाठियाँ पड़ने लगीं। फिर पुलिसने उन लोगोंको घसीटकर मस्जिदमेंसे बाहर निकाला और ले जाकर नदीमें फेंक दिया।

"यहाँ सेनाके प्रदर्शन द्वारा गाँववालोंको भयभीत करनेका भी एक प्रयास हुआ। 'रायल एयर फोर्स' द्वारा हवाई प्रदर्शन भी किये गये। स्थल सेनाने गाँवों और कस्बोंमें होकर कूच किया। कांग्रेसके विरुद्ध आग्रहपूर्वक प्रचार-कार्य चलाया गया। दूरवर्ती गाँवोंके ऊपरसे हवाई जहाज़ उड़े और उन्होंने पर्चियाँ गिरायीं जिनमें कांग्रेस की निंदा की गयी थी।

"मैं पठानोंकी मनोवृत्तिके सम्बन्धमें पहलेसे ही बतला चुका हूँ कि वे तिरस्कार या अपमानके लिए हद दर्जेके संवेदनशील होते हैं। इन्हीं पठानोंने अहिंसाकी सच्ची भावनासे प्रेरित होकर जो कुछ सहा, उसकी बहुतसी कहानियाँ मुझको प्रत्यक्षदर्शियोंसे सुननेको मिलीं। स्वयंसेवकोंके साफ़े, कमीज़ें और जूते उतरवा लिये गये और केवल पाजामा पहने हुए उनके दलको फ़ौज़ने पेशावर शहरके बीचमेंसे निकाला। उत्मानज़ई गाँवमें यह हुक्म दे दिया गया है कि कोई भी अंग्रेज इधरसे होकर निकले तो उसे सलाम किया जाय। जो कोई ऐसा नहीं करेगा उसे पीटा जायगा। एक अन्य गाँवमें पुलिसके एक सिपाहीने मुझको बतलाया, 'सेनावाले लोगोंसे पैसे उगाहते हैं जैसे वे कोई मुगल हों। वे हर एक गाँववालेसे एक रुपया, आठ आना वसूल करते हैं और जिसके पास देनेको नहीं होता उससे कहते हैं, 'यदि तुम्हारे पास नहीं है तो अपनी स्त्रियोंको कमानेको भेजो।' एक अन्य स्थानपर पुलिसने लाल कुर्तीवालोंको इस बातके लिए विवश कर दिया कि वे एक दूसरेको मारें-पीटें और इस प्रकार उन्हें सारे गाँवके ठट्ठेका

पात्र बनानेकी चेष्टा की गयी ।

"विशेष रूपसे यही वे तरीक़े थे जिनसे कि सरकारने लाल कुर्तीवालों-के आन्दोलनका दमन करनेका प्रयत्न किया । उसने उनके साथ जो उग्रतापूर्ण आचरण किया, उसके दोषसे मुक्त होनेके लिए क्या सरकारके पास कोई न्यायोचित उत्तर है ? यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है, जिसकी ओर हम सबका ध्यान आकृष्ट होना चाहिए । प्रत्येक लाल कुर्तीधारी अहिंसावादी रहनेके लिए प्रतिज्ञाबद्ध है । आन्दोलनके नेताओंने अहिंसाके प्रति सदैव निष्ठावान् रहनेकी शिक्षा दी है । अफरीदी इन लोगोंको अहिंसावादी होनेके कारण हेय दृष्टिसे देखते हैं । प्रत्यक्ष-दर्शियोंने मुझे बतलाया कि किस अद्‌भुत धैर्य और साहससे इन लोगोंने लाठियोंके वारोंको ही नहीं, बन्दूकोंकी गोलियोंको भी झेला है ?

"उत्तरकी भव्य पर्वत-शृखलाके नीचे बसे हुए एक छोटेसे गाँवमें मैंने ग्रामीणोंके झुण्डसे बातचीत की । उन प्रतापी पुरुषोंकी देह—अंग-अंग साँचेमें ढले से लगते थे । नेत्रोंमें स्नेह-भाव था ।

"अब आगे क्या होगा ?" मैंने पूछा ।

"कह सकना कठिन है ।" वे बोले, "हम लोगोंसे जो कुछ भी हो सकेगा, करेंगे, यहाँतक कि अपनी जान भी देनी पड़े तो उसे देंगे लेकिन इस जुल्मको चुपचाप सहते रहना बहुत कठिन है ।"

"लेकिन हिंसा क्या आपको मदद देगी ?"

"निश्चित रूपसे नहीं ।"

"तब क्या आप अहिंसामें विश्वास करते हैं ?"

"पूरी तरहसे ।"

"सारा संसार इस बातको भली भाँति जानता है कि विगत दो वर्षमें ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँकी शिक्षाके फलस्वरूप इन लोगोंके अहिंसात्मक युद्ध सम्बन्धी ज्ञानने कितनी अधिक प्रगति की है ।

"इसकी विपरीत दिशामें इस बातके भी स्पष्ट प्रमाण प्राप्त होते हैं कि यह शिक्षा हिंसाकी भावनाके भूतको गाँवोंमेंसे हटानेमें अभी पूर्ण रूपसे सफल नहीं हुई है । जैसा कि पहले हुआ करता था, पुलिसके उन अधिकारियोंका, जो ज़िलेमें अकेले जाते हैं, अपमान किया जाता है । उनके प्रति अशिष्ट व्यवहार होता है । कभी-कभी उनकी मोटरोंपर पत्थर और कीचड़ फेंका जाता है । उनकी ओर देख-कर बच्चे घूरते हैं । बहुधा पुलिसके साथ अत्यंत उग्र, दुर्व्यवहार किया जाता है । यद्यपि अफरीदियोंके साथ कोई विधिवत् सन्धि नहीं है, परन्तु सीमाके निकट-

के कुछ गाँवोंके लोगोंने कवाइलियोंकी उस समय भोजन देकर तथा अन्य सब प्रकारसे सहायता की, जब कि वे गत वर्ष अंग्रेजोंसे लड़ रहे थे।

"कई स्थानोंमें वास्तवमें उपद्रव किया गया है। कोहाटमें कांग्रेसजनोंने यह स्वीकार किया कि लाठी-प्रहारके पश्चात् जनताकी ओरसे जो ईटोंके टुकड़े और पत्थरके रोड़े चलाये गये उन्होंने सेनाको गोली चलानेके लिए उत्तेजना दी। जान पड़ता है कि तहकल पयानमें भी जनताके द्वारा थोड़ा-बहुत पथराव किया गया। यहाँ एक ऐसी घटना भी सुननेको मिली जिसमें स्त्रियों द्वारा पुलिसपर पत्थर बरसाये गये।

"फिर भी इस प्रकारकी घटनाएँ बहुत कम हुई हैं और उनके आधारपर शासनकी आतंक फैलानेकी उस नीतिको दोषमुक्त नहीं किया जा सकता जिसकी कि यहाँके अधिकारियोंने शुरुआत की है। ....पठानके लिए अहिंसा एक सर्वथा नवीन विचार है। सब लाल कुर्तीवाले संत भी नहीं हैं। यदि उनमेंसे थोड़ेसे ऐसे लोग भी हों जिन्होंने अबतक अहिंसाके सिद्धान्तको पूर्ण रूपसे आत्मसात् न कर पाया हो, तो इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। मेरे इस कथनका अभिप्राय यह नहीं है कि हिंसाको न्यायपूर्ण ठहराया जाय; वह केवल उसकी स्थितिको स्पष्ट रूपसे समझाना है।....

"दूसरी ओर, नियम और व्यवस्थाको स्थिर रखनेके लिए जितना अनिवार्य या आवश्यक है, क्या पुलिस उससे अधिक उग्र उपायोंका प्रयोग नहीं करती? इसके उत्तरमें ज़ोरके साथ 'हाँ' कहा जा सकता है, क्योंकि, कुछ भी हो, अधिकारियोंका लक्ष्य केवल नियम और व्यवस्थाको बनाये रखना ही तो नहीं है। वह पूरे आन्दोलनको कुचल देना भी है। एक अधिकारीने मुझसे कहा, 'लाल कुर्तीवालोंका यह धन्धा अब नष्ट हो ही जाना चाहिए। हम भी इसे मिटानेका पूरा निश्चय कर चुके हैं।' फौजके कारण भी इतनी अधिक ज्यादतियाँ हो रही हैं। वह पुलिसको अधिक उग्र, हिंसात्मक उपाय अपनानेके लिए दबाती है। उसके सैनिक स्वयं भी अपनी राइफलोंके कुन्दोंको इस्तेमाल करते हैं, जिससे मृत्यु भी हो सकती है। अब मैं आपको कुछ उदाहरण दूँगा जो अत्यंत विश्वस्त साक्षियोंपर आधारित हैं। चारसद्दामें कचहरियोंके ऊपर धरना देनेका प्रयास किया गया। इन सत्याग्रहियोंको बुरी तरहसे पीटा गया और फिर उनको पुलिस-इंस्पेक्टरके सामने ले जाया गया। इन्स्पेक्टरने उनसे यह शपथ लेनेको कहा कि वे धरना देना छोड़ देंगे। उन्होंने इस बातकी शपथ लेनेसे इनकार किया और उनको फिर पीटा गया। इसके बाद उन्हें यह आदेश दिया गया कि खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँके

लिए अपशब्द कहकर उनका अपमान करें। सत्याग्रहियोंके पुनः इनकार करनेपर उनको तीसरी बार पीटा गया। इसके पश्चात् उनके सिरोंपर मिट्टीसे भरे तसले रख दिये और उनको घुड़सवारों द्वारा खदेड़ा गया। वे दौड़ते जाते थे और पुलिस के घुड़सवार सारे रास्ते बन्दूकोंके कुन्दोंसे उनको मारते जाते थे।

"जेलोंमें कैदी लोग बहुधा जुकामसे पीड़ित रहते हैं। गिरफ्तारीके समय अतिरिक्त पुलिस इनामके रूपमें उनसे उनके गर्म कपड़े उतरवा लेती है और उनके कम्बल भी ले लेती है। एक कारागारमें बन्दियोंको चार दिनतक इसलिए कम खाने और एक कम्बलपर रखा गया कि अपनेको जेलके अनुशासनके अनुरूप ढाल लें। कई लोगोंके मुँहसे यह बात सुननेमें आयी कि सामान्य रूपसे कैदियोंके साथ यही व्यवहार किया जाता है। लेकिन मैं समझता हूँ कि ऐसी बात नहीं होगी। परन्तु एक अत्यंत विश्वस्त सूत्रसे एक बड़ी भयानक घटना सुननेको मिली। कोहाट-के निकट लगभग १२० लाल कुर्तीवालोंको जाड़ेकी ठिठरती रातमें, रातभर खुले स्थानमें रखा गया। उनको कुछ भी खाना नहीं दिया गया और उनके शरीर-परसे अधिकांश वस्त्र उतरवा लिये गये। सवेरे उनको माफ़ी माँगनेका आदेश दिया गया और उनके इनकारपर उनको निर्ममतासे पीटा गया। शीतसे उनके शरीर चेतनाशून्य हो चुके थे। पहाड़ियोंकी ओरसे सवेरेकी तेज़, काटनेवाली-सी सर्द हवा आ रही थी। यह यंत्रणा किसीके लिए भी असह्य है, आखिर उन्होंने क्षमा मांग ली। लेकिन जब आप समाचारपत्रोंमें यह पढ़ें कि लाल कुर्तीवालोंकी ओरसे इतने क्षमा-पत्र भरे गये तो यह स्मरण रखें कि उन लोगोंने माफी न मांगने के लिए कुरानकी शपथ ली है और मात्र यंत्रणा जैसी ही किसी वस्तुने उन्हें विवश करके उनसे यह माफ़ी खींच ली है। कई बार इन लोगोंको उन नदियोंके सर्द पानीमें गोते लगवाये गये जो वर्फ़ीले पहाड़ोंसे बहकर आती हैं। किसी आदमीका अंगूठा पकड़कर स्याहीसे गीला किया गया और उसे माफ़ीनामापर हस्ताक्षरोंके स्थानपर लगा दिया गया, ऐसी घटनाएँ भी बहुत बार हुई हैं।

"इन दिनों लाल कुर्तीवालोंका आन्दोलन प्रच्छन्न रूपमें चल रहा है। उसकी भावना टूटी नहीं है, यहाँतक कि पूरा संगठन विस्मयकारी रूपमें अबतक जीवित है। केवल उसका मस्तिष्क उससे हटा दिया गया है और उसके आवागमनके साधन रोक दिये गये हैं। यों ऊपरसे वह बिलकुल शान्त दिखलाई दे रहा है परंतु उसके भीतर रोषका एक उमड़ता हुआ ज्वार है। स्थिति शोचनीय है। सीमा-प्रान्तका सामान्य अंग्रेज कठोर और कल्पनाहीन है। वह पुराने भारतका प्रति-निधित्व कर रहा है, वह भी उसकी सबसे बुरी दशाका।......

"मैंने यहाँ आकर जो देखा और सुना, उसका मुझपर यह प्रभाव पड़ा कि दमनके उपाय कभी सफल नहीं हो सकेंगे। केवल कुछ समयके लिए ही सरकार यहाँ मरुस्थलकी शान्ति स्थापित करनेमें समर्थ हुई है। उसने समाजके कुछ अंगोंमें भयकी मनोवृत्ति उत्पन्न कर दी है और हमारे उत्तरके बहुसंख्यक भाइयों और बहनोंके जीवनको दुःखपूर्ण बना दिया है परन्तु वह उसकी भावनाको कुचल नहीं सकी है, कुचल सकेगी भी नहीं।

"अफरीदियोंने अबतक 'इन्किलाब ज़िन्दाबाद' के नारेको नहीं त्यागा है। वे समझते हैं कि इन्किलाब नामका कोई जीता-जागता आदमी है; एक बहुत बड़ा नेता जो लोगोंको आज़ादीके मार्गपर लिये जा रहा है। एक अर्थमें यह सच भी है। नेताविहीन और संगठनहीन, कल्पनासे भी अधिक दमित शौर्यवान पठानोंने रक्तहीन क्रान्तिकी भावनाको ही अपना नेता मान लिया है। उसे कभी कुचला नहीं जा सकता। सत्य, धैर्य, प्रेम और कष्टके द्वारा वह इन लोगोंको शीघ्र ही विजयकी ओर ले जायगा।"

राजनीतिक बन्दी

१९३२-३४

देशभरके प्रमुख कांग्रेसजन १० जनवरी १९३२ तक जेलके सींखचोंके भीतर पहुँच चुके थे। सरकार, जिसकी पतवार लन्दनमें सर सेमुअल होरके हाथोंमें थी और भारतमें लार्ड विलिंगडनके हाथोंमें, कोई अधूरा काम करनेके पक्षमें नहीं थी फलतः थोड़े ही दिनोंमें अध्यादेशोंकी संख्या बढ़कर तेरहतक पहुँच गयी जिनको कि 'भारतके लिए राज्य सचिव (सेक्रेटरी ऑफ स्टेट फॉर इंडिया) सर सेमुअलने अत्यंत तीक्ष्ण और कठोर बतलाया था। इन अध्यादेशोंने भारतीय जीवनकी प्रायः प्रत्येक प्रवृत्तिको अपनी परिधिमें घेर लिया था। कांग्रेस, उसके सहयोगी तथा उससे सहानुभूति रखनेवाले सभी संगठन गैरक़ानूनी क़रार दे दिये गये। इनमें युवक संघ (यूथ लीग), विद्यार्थी मंडल, राष्ट्रीय विद्यालय तथा संस्थाएँ, कांग्रेस द्वारा संचालित चिकित्सालय, स्वदेशी दूकानें तथा पुस्तकालय सम्मिलित थे। इन सबकी सूची बहुत लम्बी थी और उसमें प्रत्येक प्रांतसे सैकड़ों नाम शामिल किये गये थे। प्रतिबन्धको तोड़नेके सिलसिलेमें लगभग सात हज़ार गिरफ्तारियाँ हुईं जिनमें दो सौ प्रमुख कांग्रेसी नेता भी थे। चर्चिल महोदयने अपने स्वाभाविक रूखेपनके साथ कहा कि 'ग़दरके बाद' भारतमें जिन अध्यादेशों-को लगानेकी आवश्यकता पड़ी है, उनमें ये सबसे शक्तिशाली हैं।

इन अध्यादेशोंमेंसे एक तो बहुत ही विचित्र था। उसकी विशेषता यह थी कि बालकोंके अपराधके लिए उनके माता-पिता और अभिभावक दंडित किये जा सकते थे। सम्पत्तिकी जब्ती, इस अवसरपर शासनकी नीतिका एक सामान्य लक्षण बन चुकी थी। इसका क्षेत्र बहुत लम्बा-चौड़ा था। इसमें संस्थाओं और व्यक्तियोंके घर, कार्यालय, मोटर-कारें और बैंकोंके खातोंमें एकत्रित रुपया, सभी कुछ सिमट आता था। ऐसा जान पड़ता था कि अधिकारियोंने जान-बूझकर यह नीति अपना ली थी कि राजनीतिक कैदियोंके साथ अपराधियोंसे भी बुरा व्यवहार किया जाय। जेलके समस्त अधिकारियोंके पास एक गोपनीय पत्रक भेज दिया गया था जिसमें इस बातपर बल दिया गया था कि सविनय अवज्ञाके कैदियोंके साथ कठोरता बरती जाय। कोड़े लगाना एक साधारण दण्ड समझा जाता था। सर सेमुअल होरने 'हाउस ऑफ कामन्स'में स्पष्ट शब्दोंमें कह दिया कि 'इस

बारकी लड़ाई पीछे नहीं खींची जायगी ।'

परन्तु कठोर दमनकारी उपाय भी भारतमें शांतिपूर्ण वातावरण बनाये रखनेमें पर्याप्त सिद्ध नहीं हुए । बहिष्कार और सविनय आज्ञा भंग आन्दोलन चालू रहे और देशके भिन्न-भिन्न भागोंमें बलवे, हड़तालें और उपद्रव फूट पड़े । पहले चार महीनोंमें लगभग ८०,००० गिरफ्तारियाँ हुई । जनता संघर्ष करती रही । परन्तु संघर्ष नेतृत्वहीन था । सविनय आज्ञा-भंग करनेवालोंकी सामान्य प्रवृत्तियाँ थीं, सरकारके प्रतिबन्धके आदेशको तोड़कर सार्वजनिक सभाओं एवं जुलूसोंका आयोजन । बहिष्कारका कार्य बहुत प्रभावशाली था और व्यापक भी—बैंकों, बीमा-कम्पनियों, सोनें-चाँदीके भावके बाजारोंपर भी उसका असर था । उसके साथ ही साथ कर-बन्दीका आन्दोलन भी चल रहा था ।

प्रारम्भिक कालमें इस अभियानकी तीन मुख्य प्रवृत्तियाँ थीं—धरना, विदेशी वस्तुओं तथा संस्थाओंका बहिष्कार और विशेष अवसरों तथा पर्वोंपर समारोहों-का आयोजन । जनवरी और फरवरी मासमें स्वतंत्रता दिवस, गांधी-दिवस और सीमान्त दिवस मुख्य रूपसे मनाये जाते थे ।

गृह-विभागकी एक गोपनीय फाइलमें लिखा गया : "पेशावर ज़िलेके भीतर या बाहर कांग्रेस अथवा लाल कुर्ती दलकी अब कोई ऐसी गतिविधि नहीं है जो उल्लेखनीय हो । फिर भी पेशावर ज़िलेकी मरदान और चारसद्दा तहसीलोंमें और कुछ सीमातक नौशेरा तहसीलमें लाल कुर्तीवालोंको निर्वाचनके रूपमें एक ऐसा अवसर मिला जिसमें उन्होंने अपनी दुष्टताका, जो कि उनमें अभीतक शेष है, खुलकर प्रदर्शन किया । यह मौका मानों उन्हींके लिए आकाशसे गिरा हो । यह आशा भी नहीं की जाती थी कि उनकी तैयारियाँ इतनी व्यापक और इतने बड़े पैमानेपर होंगी । ७ अप्रैलको नौशेरा तहसीलमें मतदान हुआ । अनेक मत-दान केन्द्रोंपर लाल कुर्तीवालोंने धरना देनेका प्रयत्न किया । इनमें सबसे बड़ा प्रदर्शन पब्बीमें हुआ । इस अवसरपर दो-तीन सौ महिलाएँ अपने सिरोंपर कुरान रखे हुए नाटकीय ढंगसे प्रकट हुई । वे मतदाताओंसे अपना मत न देनेका आग्रह कर रही थीं । ११ अप्रैलको चारसद्दामें मतदान हुआ । वहाँ कई हज़ार लाल कुर्ती-धारी इकट्ठे थे ।....समूचे मतदान केन्द्रमें केवल एक वोट पड़ा । दूसरे दिन मर-दान तहसीलमें स्थितिने अपनी चरम सीमाको छू लिया । कटलंग, होती, मरदान-कालूखान और रुस्तममें विशाल प्रदर्शन हुए जिनमें अनुमानतः ३०,००० व्यक्तियों ने भाग लिया । १२ अप्रैलसे मरदान और चारसद्दा तहसीलोंमें बिलकुल शान्ति है, लेकिन यह सूचना मिली है कि हिज़ एक्सलैन्सी वाइसरायके आनेपर पेशावर

या उसके निकट विरोध प्रदर्शित किये जायँगे। इस दिशामें आवश्यक सावधानियाँ बरत ली गयी हैं।"

संशोधित संविधानके अनुसार पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तकी स्थिति बदली और वह गवर्नरका प्रान्त समझा गया। २० अप्रैल १९३२ को वाइसरायने अपने एक भाषणमें इस प्रान्तकी नवीन विधानपरिषद्का उद्‌घाटन किया। चीफ़ कमिश्नर-के स्थानपर गवर्नरकी नियुक्ति हुई और प्रदेशमें स्व-शासन घोषित किया गया। एक सेवानिवृत्त सरकारी कर्मचारी सर अब्दुल कैयूम, जिनका राजनीतिसे कभी कोई सम्बन्ध न था, इस प्रदेशके प्रथम मंत्री बनाये गये।

सन् १९३२ में श्री बर्ट्रेण्ड रसेलकी अध्यक्षतामें इंडिया लीगने भारतमें एक प्रतिनिधिमंडल भेजा। उसने 'कण्डीशन इन इंडिया' (भारतमें स्थिति) शीर्षक अपना विवरण प्रस्तुत किया। इसमें कतिपय अध्याय पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तके सम्बन्धमें भी थे। विवरणमें कहा गया था : "अधिकारी वर्गसे विस्तारसे चर्चा हुई। उनकी रायमें सन्धि एक ग़लती थी। इस सन्धिके कारण ही लाल कुर्ती दल कांग्रेस संस्थाका एक अंग बन गया और उसने भी अहिंसाको अपनी नीतिके रूपमें स्वीकार कर लिया। यदि ऐसा न होता तो उसे पहले ही दबा दिया गया होता। सीमा-प्रान्तके अधिकारियोंने प्रचार-पक्ष, स्वराज्य अथवा स्वाधीनताके विचार तथा जनताकी संगठन-शक्तिको काफ़ी सीमातक अनदेखा किया, जब कि उसके मैदानके अन्य साथी प्रदेशोंमें पिछले कई वर्षोसे ऐसी अनेक घटनाएँ हो रही थीं। एक बहुत बड़े सरकारी अधिकारीने मुझसे यहाँतक कहा कि ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँकी वास्तविक योजना पख़्तूनिस्तानका निर्माण है। वे भारतके स्वराज्यके हेतु यह कार्य नहीं कर रहे हैं।"

दूसरी ओर भारत सरकारने सब मुख्य सचिवों तथा चीफ़ कमिश्नरोंको १६ जनवरी १९३२ को लिखा : "यह विशेष महत्त्वकी बात है कि मुसलमानोंसे वार्तालाप करते समय या किसी और प्रकारसे उन्हें यह बतला देना चाहिए कि लाल कुर्ती दल आन्दोलन मूल रूपसे कांग्रेसका आन्दोलन है।"

इंडिया लीगकी रिपोर्टमें कहा गया था : "सीमा-प्रान्तमें दमनकी कठोरताने एक युद्ध जैसा दृश्य उपस्थित कर दिया है। यद्यपि शासनकी ओरसे काफ़ी शक्ति-प्रदर्शन हो रहा है फिर भी कोई अधिकारी यह दावा नहीं कर सकता कि आन्दो-लनको पूरी तरहसे दबा दिया गया है। अंग्रेज अधिकारियोंके आगे अहिंसाके सिद्धान्तका बड़ी कठोरताके साथ पालन किया जा रहा है जैसा कि इस आन्दोलन का नियम है; विशेष रूपसे इस क्षेत्रमें जहाँ कि शस्त्रास्त्र खुले ढंगसे, सुलभतासे

उपलब्ध हैं, यहाँतक कि गाँवोंके प्रत्येक व्यक्तिके पास हैं। इसका उस ईमानदारी को श्रेय है, जिसके साथ अहिंसाके सिद्धांन्तको अंगीकार किया गया है।"

सीमा-प्रान्तकी सरहदी जन-जातियोंपर इस आन्दोलनका क्या प्रभाव पड़ा इस सम्बन्धमें 'इंडिया इन १९३१-३२' में लिखा गया :

"लाल कुर्ती दलके लोग सन् १९३१ में सीमाके उस पारके कबायली इलाके में अपना आन्दोलन फैलाकर उन लोगोंको भी एक विपत्तिमें डाल देना चाहते थे। इस प्रयासमें उनको बहुत ही कम सफलता मिली। परन्तु पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तमें लाल कुर्ती दल और सविनय आज्ञा-भंगके विरुद्ध जो क़दम उठाये गये उसकी प्रतिक्रिया काबुल नदीके उत्तरमें कबाइली इलाकेमें हुए बिना न रही। तरंगज़ईके हाजी, उनके पुत्रों तथा अलीनगरके फकीरकी विरोधी प्रवृत्तियोंसे सन् १९३२ के प्रारम्भमें एक अशांतिका वातावरण बन गया। सम्भवतः यह अशांति उन लाल कुर्तीवालोंके कारण ही उत्पन्न हुई जो शरण लेनेके लिए उस ओर भाग गये थे। फरवरीके प्रारम्भमें पाइन्दा खैल और सुलतान खैलके इलाकों में, जो कि दीरके नवाबके राज्यमें पड़ते हैं, बलवा उठ खड़ा हुआ जिसने चितराल रोडकी सुरक्षाके लिए भी एक खतरा उत्पन्न कर दिया। उपद्रवकारियों-ने सेना और पुलिसकी कुछ चौकियोंको जला दिया। दीरके नवाबने चकदराके सेना दलकी सहायतासे, जिसने अपनी सारी शक्ति वहीं केन्द्रित कर दी थी, किसी प्रकार इस बलवेको दबाया। इस सिलसिलेमें उपद्रवकारी क्षेत्रोंमें हवाई जहाजसे बम गिरानेकी धमकी भी दी गयी फिर भी उत्तेजना पूर्ण रूपसे शान्त नहीं हुई और मार्चतक सीमाप्रान्तकी स्थिति विद्रोहकी धमकियाँ-सी देने लगी। बाजोड़के कबाइलियोंका एक लश्कर मोमन्दोंके इलाकेमें घुस गया और दानिश कोल क्षेत्रतक पहुँच गया जो कि ब्रिटिश प्रशासनिक सीमासे केवल बारह मील-की दूरी पर स्थित है। तरंगज़ईके हाजीने 'जिहाद' का धार्मिक उपदेश देते हुए मामुन्दोंको, जिनका कबीला बड़ा और महत्त्वपूर्ण है, इस बातके लिए उकसाया कि ब्रिटिश भारतकी सीमामें, नीचे उतरनेमें वे बाजोड़वालोंका साथ दें। आगे उत्तरमें दीर राज्यकी सीमापर बाजोड़ियोंकी एक अन्य सेना, जिसमें उतमान खैलका कुछ सेनादल भी सम्मिलित था, पंजकोरा नदीके पश्चिमी तटपर एकत्रित थी। वह नदीको पार करनेकी धमकियाँ दे रही थी। इस लश्करने और उन गाँवके लोगोंने, जहाँके निवासी लश्करमें थे, निरीक्षण करनेवाले हवाई जहाजोंके ऊपर गोलियाँ बरसायीं। इस आशासे कि शायद यह बलवा शांत हो जाय, सर-कारकी ओरसे कार्यवाहीमें विलम्ब किया गया। लेकिन साथ ही उनको चेतावनी

दे देना भी आवश्यक समझा गया। जब चेतावनियोंपर कोई ध्यान नहीं दिया गया तो कतिपय मोमन्द और शमोज़ई गाँवोंके ऊपर बम गिराये गये। ११ और १२ मार्चको पुन: यह कार्यवाही की गयी और १२ मार्चको तरंगज़ईके हाजीके मकानके ऊपर बम बरसाये गये। यह आवश्यक समझा गया कि अफ़रीदी तिराह्-के ऊपर नित्य सैनिक-निरीक्षण जारी रहे।"

वायु निरस्त्रीकरण परिषद्के जेनेवाके पूर्ण अधिवेशनमें ब्रिटिश मंडलकी प्राय: एक अस्पष्ट भूलके कारण सन् १९३३ में पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त सहसा प्रकाशमें आ गया। जिस समय ब्रिटेनके प्रतिनिधि धारा ३४ में एक प्रतिवाद जोड़नेके लिए खड़े हुए उस समय सभी अन्य देशोंके प्रतिनिधियोंको आश्चर्य हुआ और शांतिके प्रति निष्ठावान् व्यक्ति अत्यंत उद्विग्न हो उठे। इस धारामें हवाई जहाजसे बम बरसानेपर रोक लगानेका प्रस्ताव रखा गया था। ब्रिटिश प्रतिनिधि मि० एन्थॉनी ईडेन इस प्रस्तावके क्षेत्रसे 'सीमाके बाहरके कुछ जिलोंको' निकाल देना चाहते थे। उन्होंने ब्रिटेनकी ओरसे 'सीमाके बाहरके कुछ जिलोंमें पुलिस कार्य; आरक्षणके लिए' एक निक्षेप वाक्यके द्वारा बम गिरानेकी छूट चाही। यद्यपि पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तका नामसे उल्लेख नहीं किया गया फिर भी मि० एन्थोनी ईडेनने इसका समर्थन करते हुए अपने भाषणमें यह स्पष्ट कर दिया कि उस समय उनके मस्तिष्कमें पश्चिमोत्तर सीमाका चित्र था। उन्होंने कहा :

"संसारमें कुछ ऐसे भाग भी हैं जिनका आरक्षण-कार्य अपने ढंगकी एक अलग ही समस्या है। मेरा तात्पर्य उन पर्वतीय दुर्गम्य ज़िलोंसे है जहाँ कि आबादी बहुत दूर-दूरपर है और जहाँकी जंगली सशस्त्र पहाड़ी जन-जातियोंमें कभी-कभी अपने पड़ोसियोंकी शांतिको नष्ट करनेकी आवेशमय भूख जाग उठती है। यदि इस पद्धतिसे व्यवस्था न रखी जाय तो दूसरा रास्ता स्थलीय सेनाका उपयोग है। सामान्य रूपसे इसके लिए एक बहुत विशाल सेना चाहिए। जब कभी भी अशांति उत्पन्न होगी और व्यवस्थाको कायम करना आवश्यक होगा उस समय इन सैनिकों-की संख्या अत्यधिक बढ़ जायगी—युद्धके कारण नहीं अपितु वहाँकी प्राकृतिक तथा अन्य स्थितियोंके कारण। तात्पर्य यह कि इन क्षेत्रोंकी समस्या स्पष्ट रूपसे पुलिसका आरक्षण कार्य है।"

जिस समय यह चौंका देनेवाला प्रस्ताव सामने आया तब उसपर पूरी तरहसे वाद-विवाद हुआ। जो लोग वहाँ उपस्थित थे उन सबके सामने यह तथ्य स्पष्ट हो गया कि वस्तुत: अकेला ब्रिटिश प्रतिनिधिमंडल ही वायु निरस्त्रीकरण-के नियमसे छुटकारा चाहता है। पोलैण्ड, स्विट्ज़रलैण्ड, जर्मनी, नार्वे, चीन,

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, सोवियत रूस और अफ़गानिस्तानके प्रतिनिधि इसके विपक्ष में थे। उनकी राय थी कि यह रोक पूरी तरहसे लगे, विश्वव्यापी हो और यह कार्य सबके लिए समान रूपसे अयोग्य समझा जाय। इसलिए अपने इस दावेके समर्थनमें कि 'सीमाके बाहरके जिलोंमें पुलिसके कार्य; आरक्षण और व्यवस्था स्थिर रखनेके लिए वायुपथसे बम बरसाये जा सकते हैं' ग्रेट ब्रिटेन अकेला ही नहीं रह गया बल्कि उसकी नीति सबके आगे अनावृत्त हो गयी।

सीमाप्रान्तके अपने ढंगके अनूठे आन्दोलनके नेता खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ हज़ारीबाग सेन्ट्रल जेलकी एक एकान्त कोठरीमें नज़रबन्द थे। किसीको यह अनुमति भी न थी कि उनकी बैठकके सामनेके फुटपाथसे भी गुज़र सके। राजेन्द्र-प्रसादजी भी उसी जेलमें कैदी थे परन्तु खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको इसकी जानकारी न थी।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने डा० एम० ए० अन्सारीको, जो गुजरातकी स्पेशल जेलमें नज़रबन्द थे, ४ फरवरी १९३२ को यह पत्र लिखा :

"ईदकी बधाई। आपके ऊपर ईश्वरके आशीर्वाद हों। मैं आपकी कुशलता चाहता हूँ और यह आशा करता हूँ कि आप तथा अन्य सभी मित्र गुजरात जेलमें पुनः एकत्र हो गये होंगे तथा सानन्द होंगे। मुझे इस बातका दुःख है कि इस बार मैं आपके साथसे वंचित कर दिया गया। मुझे लाला शामलालकी 'कक्षाएँ' याद आती हैं और अवतारनारायणजीका सुबहका तेजीसे टहलना भी, जब कि वे जफर अली ख़ाँको साथ ले लिया करते थे। वालीबॉल टीमके कप्तान मुनीजी, आपकी 'पार्लमेण्ट' सब कुछ स्मरण हो आता है। नवाब साहब भी शायद वहाँ पहुँच गये हों। यदि आप मेरे सभी बन्धुओंसे अलग-अलग मेरा सलाम कहेंगे तो मैं आपका बहुत आभारी होऊँगा।

"अब कृपा करके मेरी कहानी भी सुन लीजिए। मैं एक तृतीय श्रेणीकी बैरकमें अकेला रहता हूँ। रातमें मुझे बन्द कर दिया जाता है। मेरे पास कोई नहीं आ सकता और न मैं किसीके निकट जा सकता हूँ। न यहाँ वालीबॉल है और न बैडमिन्टन। न नियम, न व्यवस्था, न कोई चिट्ठी और न किसीसे मुलाक़ात।.....इसके बावजूद कि मैं एक राजनीतिक कैदी हूँ, मैं 'सी' कक्षा-के बन्दियोंको अपनेसे कहीं अच्छा समझता हूं। मेरी दृष्टिमें यह कानून बदला लेनेके लिए ही गढ़ा गया है। मैं आपको और क्या लिखूँ ? यदि मैं आपको कुछ और लिखूँ भी तो आप इस पत्रसे भी वञ्चित कर दिये जायेंगे। बस इसे ही ढेरमेंसे एक दाना समझ लीजिएगा। लेकिन शुक्र है, हमारा भी एक ईश्वर है जो

हमारी इन यातनाओंको देख रहा होगा और हम भी यह देख रहे हैं कि वह क्या करनेवाला है ? मैं बिलकुल स्वस्थ हूं। मैं सुबह और शामको टहलकर व्यायाम कर लेता हूं। मैंने एक छोटा-सा सुन्दर बगीचा बना लिया है। वहीं मेरा समय बीतता है। आप यदि इस बगीचेको देखें तो शायद आप इसे पसन्द करें। यह जफ़र अली खांके बगीचेसे बड़ा है और अच्छा भी। आप मेरे लिए ईश्वरसे दुआ मांगिए और मैं भी आपके लिए उससे प्रार्थना करूंगा।"

डॉ० अन्सारीको लिखा गया यह पत्र जेलके अधिकारियों द्वारा रोक लिया गया लेकिन उन्होंने (खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने) अपने पुत्रोंको, पुत्रीको तथा भाईको जो छोटे-छोटे पुर्जे लिखे थे, वे उन लोगोंके पास बहुत काफी बिलम्बके पश्चात् पहुंचा दिये गये।

अपने दिनांक ८ अप्रैल १९३२ के एक सरकारी पत्रमें हज़ारीबागके उपायुक्त (डिप्टी कमिश्नर) ने बिहार और उड़ीसा सरकारके मुख्य सचिव (चीफ़ सेक्रेटरी) को लिखा :

"आज सबेरे मैं हज़ारीबाग सेन्ट्रल जेलके राजनीतिक क़ैदी खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खांसे मिला। जेलके अधिकारियोंको उनकी ओरसे कोई कष्ट नहीं है। उन्हें एक आम शिकायत है जिसे उन्होंने मुझे तथा जेलके अधीक्षकको बतलाया। उनका कहना है कि पत्रों और मुलाकातोंके सम्बन्धमें उनके साथ अन्य राजनीतिक क़ैदियोंसे भिन्न व्यवहार किया जा रहा है। उन्हें इस बातपर अत्यन्त खेद है कि उनके व्यक्तिगत पत्रोंको रोक लिया जाता है। उनको एक अकेली कोठरीमें नज़रबन्द करके रखा गया है इसलिए वे अकेलेपनका भी अनुभव कर रहे हैं। मैं यह आवश्यक समझ रहा हूं कि उनके पत्रों, उनकी मुलाकातों और उनको समाचार-पत्र देनेके सम्बन्धमें शीघ्र आदेश प्राप्त कर लिये जायें। जबसे उन्हें कारावास मिला है तबसे उनको कोई पत्र नहीं मिला है। स्पष्ट है कि उनके लिए भेजे गये सभी पत्र अभीतक पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तके पुलिस विभागके महानिरीक्षकके पास इकट्ठे हैं।"

बिहार और उड़ीसा शासनके सचिव (सेक्रेटरी) ने भारत सरकारके सचिव मि० एच० डबल्यू० एमर्सनको लिखा :

"मैं भारत सरकारके तथा पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तके विचारार्थ यह सूचित कर रहा हूं। हज़ारीबागके उपायुक्तने यह सूचना दी है कि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ, जो इन दिनों हज़ारीबाग सेन्ट्रल जेलमें बन्दी हैं, अपनी तकलीफोंके कारण अत्यधिक चिन्तित हैं; विशेष रूपसे इसके लिए कि पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तकी

सरकारने अपने पत्र-व्यवहार सम्बन्धी उनकी शिकायतपर कोई विचार नहीं किया है और न इस सम्बन्धमें अपने आदेश भेजे हैं। उपायुक्तकी रायमें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँकी मनःस्थिति जैसी चल रही है वह बादमें पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तमें परेशानी पैदा कर सकती है इसलिए वे यह उचित समझ रहे हैं कि खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके साथ किसीको रख दिया जाय। इन परिस्थितियोंमें मुझसे यह पूछा जा रहा है कि क्या भारत-सरकार यह उचित समझती है कि खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके साथके लिए काजी अतातुल्लाहका तबादला गया जेलसे हजारीबाग जेलको कर दिया जाय ?"

लगभग छः महीनेसे भी अधिक समयतक खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँका सम्बन्ध बाहरी संसारसे टूटा रहा। न कोई समाचार, न पत्र और न मिलने-जुलनेके लिए कोई व्यक्ति। अंतमें डा० खान साहबको उनके पास हजारीबाग सेन्ट्रल जेलमें भेज दिया गया। हजारीबागके उपायुक्त मि० आर० ई० रसलने ९ अगस्त १९३२ को बिहार और उड़ीसा सरकारके सचिवको यह विवरण भेजा :

"मैं ६ अगस्तको प्रातःकाल हजारीबाग सेन्ट्रल जेलके दो राजनीतिक बन्दियोंसे मिला। मैंने उन दोनोंका स्वास्थ्य ठीक पाया। वे अपना समय अध्ययन तथा बाग़बानीमें व्यतीत करते हैं। उनको केवल यह शिकायत है कि उन्हें उनके मनोनुकूल पुस्तकें नहीं मिल पातीं। जेलके पुस्तकालयमें अधिकतर उपन्यास हैं, जिनमें उनको कोई रुचि नहीं है। मैंने अधीक्षकसे यह कह दिया है कि उन लोगोंके लिए वे 'क्लब लायब्रेरी'से किताबें प्राप्त करनेकी व्यवस्था कर दें।

"कैदी खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ अपने बच्चोंकी शिक्षा और अपनी सम्पत्तिके प्रबन्धके सम्बन्धमें भी अत्यधिक चिंतित हैं। उन्होंने मुझसे यह पूछा कि क्या १८१८ के विनियम ३ के अन्तर्गत उनके परिवारको निर्वाह भत्तेकी सुविधा मिल सकती है ? मैंने जेलके अधीक्षकको उन्हें यह बतलानेको कह दिया है कि १८१८ के विनियम ३ में यह गवर्नर जनरलके अपने स्वयंके निर्णयपर आधारित है कि वे जिस कैदीके परिवारको निर्वाह भत्ता देना आवश्यक समझें उसे स्वीकृत करें और जिसे जरूरी न समझें, उसे अस्वीकार कर दें। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कहा कि वे सरकारसे कोई अनुग्रह नहीं चाहते। वे जिज्ञासाके रूपमें इस बातको जानना चाहते हैं कि क्या नियमानुसार उनका परिवार निर्वाहभत्ता पानेका अधिकारी है ?"

"विनियममें यह कहा गया है कि कैदीके ऊपर जो अधिकारी है वही सरकारको यह लिखे कि कैदी और उसके परिवारके लिए स्वीकृत किया गया भत्ता पर्याप्त

अथवा अपर्याप्त है । न तो मैं और न जेलका अधीक्षक इस मामलेमें इस स्थितिमें हैं कि इस दिशामें अपने कर्त्तव्यका पालन कर सकें इसलिए इस विषयमें कोई विवरण अबतक प्रस्तुत नहीं किया जा सका । परन्तु कैदीने यहां आनेके कुछ दिनों बाद ही अपने परिवारके भत्तेके विषयमें शासनको लिखा और भारत सरकार ने अपने दिनांक १० मई १९३२ के उत्तरमें उनको यह लिख दिया कि उनके मामलेमें शासन उनके परिवारको निर्वाह-भत्ता देनेकी कोई आवश्यकता अनुभव नहीं करता । इसलिए बात वहीं खतम हो गयी जहाँतक कि खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँका सम्बन्ध था । परन्तु इस विषयपर बन्दीने मुझे जो वक्तव्य दिये हैं उनको मैं शासनकी सूचनाके लिए भेज देना उचित समझता हूँ । खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने मुझको बतलाया कि उनका एक पुत्र अमेरिकामें अध्ययन कर रहा है और दो पुत्र देहरादूनमें शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं । उनकी एक पुत्री मरीके कान्वेन्ट स्कूलमें पढ़ रही है । उनका कहना है कि उनको अपनी सम्पत्तिके विषयमें कुछ भी पता नहीं है और उसमें क्या हो रहा है इसके सम्बन्धमें वे अनिश्चित हैं । यदि उससे कोई आय हो रही है, तो उसके विषयमें भी वे अनजान हैं । उन्होंने देहरादूनमें पढ़नेवाले अपने एक पुत्रसे घरकी आर्थिक स्थितिके सम्बन्धमें पूछताछ की थी लेकिन उनके पुत्रने अपने प्रत्युत्तरमें इस सम्बन्धमें जो लिखा था वह अंश सेन्सर द्वारा काट दिया गया इसलिए उनको इस बातकी अत्यधिक चिन्ता है कि उनके परिवारको उसके निर्वाह योग्य आय मिल भी रही है या नहीं । उन्होंने यह भी कहा कि उनके भाई डा० खान साहबके परिवारके निर्वाहके लिए भत्ता स्वीकृत किया जा चुका है । उनको इस बातका बड़ा आश्चर्य हो रहा है कि उनके अपने मामलेमें ही उसे क्यों अस्वीकृत किया जा रहा है ?

"इस सम्बन्धमें मैं अपनी ओरसे कुछ सुझाव नहीं देना चाहता सिवा इसके कि यदि बन्दीको उसकी सम्पत्तिकी वस्तु-स्थितिसे अवगत कर दिया जाता है कि उसकी संरक्षा और व्यवस्था किस प्रकार की जा रही है तथा उसके परिवारको कैसे रखा जा रहा है तो इससे उसके मनको कुछ शांति मिलेगी ।"

बिहार और उड़ीसा सरकारकी ओरसे १७ अगस्त १९३२ को सूचनार्थ यह लिखा गया :

"इसमें सन्देह नहीं कि खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको शासनका यह निर्णय बतला दिया गया है कि सरकार उनके मामलेमें उनके परिवारको निर्वाह भत्ता देनेकी आवश्यकता अनुभव नहीं करती । यदि वे इस निर्णयके विरुद्ध आगे अपील करना चाहते हैं और वे समझते हैं कि उनके पास इसके लिए आधार हैं तो उनके

लिए यह मार्ग खुला हुआ है। संक्षेपमें स्थिति यह है कि पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तकी सरकारने उनके परिवारको भत्ता देनेकी सिफारिश नहीं की है, क्योंकि उनके तीन पुत्रोंको, जिनके नाम उन्होंने अपनी सम्पत्ति लिख दी है, एक हज़ार रुपयोंसे भी अधिककी मासिक आय है। जहाँतक उनकी पुत्रीका प्रश्न है, जब अपनी गिरफ्तारीसे पहले उन्होंने ही अपनी सम्पत्तिका उत्तराधिकार अपने पुत्रोंके नामपर कर दिया तो फिर सरकार ही इस बन्धनमें क्यों पड़े? अनुमान है कि उसके भाई उसको सहायता दे रहे हैं।"

मार्च १९३४ के अन्तमें बिहार और उड़ीसा सरकारने भारत-सरकारको यह लिखा, 'हजारीबाग जेलमें काफी दिनोंसे नज़रबन्द रहनेके कारण, उसका खान अब्दुल गफ़्फ़ार ख़ाँ और डॉ० खान साहबकी मानसिक स्थितिपर विपरीत प्रभाव पड़ा है।' बिहार शासनने आगे भारत-सरकारको यह सुझाव दिया कि 'वह इस स्थितिपर विचार करे कि क्या इन दोनों भाइयोंकी नज़रबन्दीकी जगह बदल देना ठीक होगा या उनकी रिहाई करनेके बाद उन्हें किसी ऐसे स्थानपर रखना, जहाँ कि वे कोई हानि न पहुँचा सकें?'

कारागारोंके महानिरीक्षक (इन्सपेक्टर जनरल ऑफ प्रिजन्स) ने ख़ान-बन्धुओंकी इन कठिनाइयोंको लिपिबद्ध किया :

"उन्होंने कलकत्तासे बर्फमें दबाकर लायी गयी मछलियोंको लेनेपर आपत्ति की। जो फल बाहरसे यहाँ आते हैं वे बेस्वाद हो जाते हैं।

"बकरीका मांस उनको पसन्द नहीं है और भेड़का मांस (मटन) बहुत ही खराब किस्मका आता है। गायका मांस खानेकी उनकी इच्छा नहीं होती। वास्तवमें एक प्रकारसे उन्होंने मांस त्याग ही दिया है। कभी-कभी वे मुर्गी या उसके चूजोंका मांस ले लेते हैं।

"यहाँ ऐसा रसोइयाँ नहीं है जो उनको उनकी रुचिका भोजन पकाकर खिला सके। उन्होंने बिहारी नौकरोंको खाना बनाना सिखलाना चाहा लेकिन वे बुद्धिहीन सिद्ध हुए। डॉ० खान साहब अपने हाथसे, जितना अच्छा भोजन वे बना सकते हैं, बनाते हैं और यद्यपि वह बिहारके कैदी रसोइयोंसे अच्छा ही बनता है, फिर भी वे स्वयं (डॉ० खान साहब) सीमाप्रान्तके भोजनके वे विभिन्न प्रकार नहीं पका पाते जिनको अपने घरपर खानेके वे आदी हैं।

"उन्होंने इस बातकी भी शिकायत की कि यहाँ तात्कालिक आवश्यकता पड़नेपर शल्य क्रिया और दांतोंकी चिकित्साकी भी कोई समुचित व्यवस्था नहीं है। कई बार स्मरण दिलानेपर भी इस ओर ध्यान नहीं दिया जा रहा है और

इस विलम्बके कारण उनके दाँतोंकी हालत बहुत बिगड़ चुकी है।

"डॉ० खान साहबने बतलाया कि उनके नैनी जेलके कैदी-नौकर बहुत चतुर थे। वे अपने बिहारी कैदी-नौकरोंकी होशियारीसे प्रभावित नहीं हैं। उनके आगे एक बहुत बड़ी कठिनाई यह भी है कि उनको घड़ी-घंटेतक काटना कठिन हो रहा है। उनके दिवस बड़े एकरसतामय तथा ऊब पैदा करनेवाले बन गये हैं। उनमें एक गहरी थकान-सी भर गयी है। वे तथा उनके भाई सोचते हैं और इस बातपर स्वयं आश्चर्य भी करते हैं कि आखिर उन्हें हो क्या गया है? वे चाहते हैं कि भारत-सरकार उनके बारेमें एक नीति निर्धारित कर ले। फिर भले ही उनके भाग्यमें फांसीपर चढ़ना लिखा हो। डॉ० खान साहब फिर भी कुछ प्रसन्न-चित्त रहते हैं लेकिन खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ तो बड़े चिन्तित, आग्रही और किसी सीमातक चिड़चिड़े हो गये हैं। मुझे ऐसा लगता है कि उनकी मानसिक स्थिति पहले जैसी नहीं रही है जैसी कि मैंने उनकी २२ नवम्बर १९३३ को देखी थी। उन्होंने अपने चित्तमें कुछ धारणाएं जमा ली हैं जिनका इलाज हजारीबागमें नहीं है। यदि वे यहाँसे स्थानांतरित कर दिये जाते हैं तो शायद हो सके; यद्यपि वे कहते यही हैं कि यदि उनकी कठिनाइयोंको दूर कर दिया जाता है तो वे यहाँ भी बड़ी खुशीसे ठहर सकते हैं। उन्होंने यह कहा कि ये सब कठिनाइयाँ भारतके अन्य बहुतसे कारागारोंमें नहीं हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने एक बात और भी कही, वह यह कि उनके सम्बन्धियोंके लिए रेलसे सीमाप्रान्तसे हजारीबागतक आना बहुत महँगा पड़ता है।"

उन लोगोंके व्यायाम तथा पुस्तक-अध्ययनके सम्बन्धमें हजारीबाग सेन्ट्रल जेलके अधीक्षकने लिखा: 'इन लोगोंको जेलके भीतर ही प्रातः और सायंकाल काफी दूरतक टहलनेकी सुविधा दी गयी है। इसके अतिरिक्त वे दोनों सब्जियाँ और फल (पपीता) उगानेमें अपना काफ़ी समय व्यतीत करते हैं। लेकिन अब उनकी मांग यह है कि उनके लिए टैनिसके खेलके साधन भी जुटाये जायें। इस उद्देश्यके लिए वे चाहते हैं कि दो अन्य उपयुक्त साथी भी खोजे जायें जो भीतरके तथा बाहरके मैदानके खेलों, जैसे ब्रिज या टैनिसमें उनका साथ दे सकें और उनको पूरी तरहसे व्यस्त रख सकें। उनका सुझाव यह है कि यदि उनको कहीं बाहर नहीं भेजा जाता तो दो राजनीतिक बन्दी डॉ० खान साहबके पुत्र तथा काजी अतातुल्लाह खाँ, जो इन दिनों बनारस जेलमें हैं, यहीं लाकर उनके साथ रखे जायें। इस सम्बन्धमें मैं यह भी सूचित करना आवश्यक समझ रहा हूँ कि जेलके भीतर फिलहाल टैनिसका मैदान नहीं है।

"उनको पुस्तकोंसे संतोष नहीं है। जेलके पुस्तकालयमें लगभग सात सौ पुस्तकें हैं जिनमें अधिकांश उपन्यास हैं। जो पुस्तकें पढ़ने योग्य हैं उनके लिए वे कहते हैं कि वे उनकी पढ़ी हुई हैं। वे इतिहास, जीवन-चरित्र, यात्रा-विवरण, राजनीति और दर्शनकी और ऐसे ही विषयोंकी पुस्तकोंको पढ़ना पसन्द करते हैं। डिप्टी कमिश्नर द्वारा भी उनको समय-समयपर अच्छी पुस्तकें दी जाती हैं जिनमें चिकित्सा सम्बन्धी पत्र तथा अन्य मनोरंजक पत्र-पत्रिकाएँ भी रहती हैं जैसे कि इण्टरनेशनल ज्योगरफिकल सोसाइटी द्वारा प्रकाशित पत्र आदि। फिर भी मैं यह प्रयत्न करूँगा कि उन लोगोंके लिए सेन्ट्रल लाइब्रेरी कलकत्तासे पुस्तकें मँगायी जा सकें।

"उनके विवादका यदि कोई अंतिम विषय हो सकता है जिसपर वे सोचना चाहें तो यही कि सरकार उनके प्रति किसी प्रकारकी कठोरता नहीं बरतती सिवा इसके कि उनकी स्वतत्रताको प्रतिबन्धित कर दिया गया है। उनको यह देखना चाहिए कि जिस तरह भी वे बतलाते हैं, जेलके भीतर होते हुए भी उनको सभी प्रकारसे संतुष्ट और प्रसन्न रखा जा रहा है। दूसरी बात यह कि उनका सामान्य स्वास्थ्य न गिरे।....उनकी शिकायतोंमें यत्र-तत्र थोड़ा-बहुत सार है परन्तु मुझको ऐसा लगता है कि उनमेंसे अधिकांश उनकी वर्तमान मानसिक दशासे उत्पन्न हुई हैं और इसलिए वे मुझको काल्पनिक ढंगकी प्रतीत होती हैं। जैसा कि मैं समझा हूँ वास्तविक तथ्य यह है कि एक ही स्थानपर बहुत दिनोंतक रहनेसे उन दोनोंका मन इस जगहसे भर चुका है। इसलिए स्थान और वातावरणके परिवर्तन-से उनकी वर्तमान मनोदशामें सम्भवतः सुधार होगा। मैंने अभी थोड़े दिनोंसे ही उनकी प्रकृतिमें यह तबदीली देखी है कि वे बहुत आसानीसे उत्तेजित हो जाते हैं और तुच्छ बातोंमें भी वे उचित-अनुचितका ध्यान खो बैठते हैं और उनके मस्तिष्कोंकी धैर्यहीनता तथा बेचैनी भी धीरे-धीरे बढ़ती जा रही है और यही कारण है कि जेलकी अपनी नज़रबन्दीमें उनके सामने जो भी थोड़ी-बहुत कठि-नाइयाँ आती हैं उनको अतिशयोक्तिके रूपमें देखनेकी उनकी मनोवृत्ति विकसित होती जा रही है।

"उनका कहना है कि उनको जेलमें रहते हुए दो वर्षसे भी अधिक अवधि बीत चुकी है लेकिन अबतक वे यह नहीं जानते कि उनका भविष्य क्या है ; इस-लिए वे अब, उनके अपने शब्दोंमें 'अपने स्वयंके विषयमें उद्विग्न हो उठे हैं।' उनके स्नायु धीरे-धीरे दुर्बल होते जा रहे हैं। उनमें निश्चित रूपसे मानसिक ह्रासके चिह्न प्रकट होने लगे हैं इसीलिए वे अपनी प्रतिष्ठा और स्वाभिमानका

ध्यान भी खोते जा रहे हैं जो कि उनमें पहले बहुत ऊँचे दर्जेके रहे हैं। जहाँतक मैं समझ सका हूँ, उनकी पारिवारिक परेशानियोंने भी उनकी इस वर्तमान मनोदशाको बढ़ाया है।"

१ फरवरी १९३४ को डा० खान साहबके पुत्र ओबेदुल्ला खाँने मरदान जेलमें अनशनकी घोषण कर दी। जिस स्थानपर उन्हें रखा गया था वह उनके स्वास्थ्यकी दृष्टिसे ठीक न था। सरकारसे बार-बार कहनेपर भी जब कोई ध्यान नहीं दिया गया, तब उन्होंने यह क़दम उठाया। उनका यह अनशन ७८ दिनोंतक चला। इस बीच सरकारने उनको जबरदस्ती खाना खिलाने (नलीसे दूध आदि पहुँचाने) की चेष्टा की लेकिन उसे सफलता नहीं मिली। ७८ दिनोंके पश्चात् उनको स्यालकोट जेलमें स्थानांतरित कर दिया गया, जैसी कि उनकी मांग थी और वहाँ वे अपनी रिहाईके दिन १८ अगस्तकतक रहे।

दोनों खान बन्धु उन दिनों हजारीबागमें थे। वे समाचार-पत्रोंमें यह देखते थे कि ओबेदुल्ला खाँका अनशन लम्बा खिचता जा रहा है। सरकारने उनको ओबेदुल्लाके स्वास्थ्यके सम्बन्धमें कभी कोई जानकारी नहीं दी। न उन्होंने ही कभी सरकारको ओबेदुल्ला खाँको देखनेकी अनुमतिके लिए लिखा और न ओबेदुल्ला खाँसे यह आग्रह किया कि वे अपना अनशन बन्द कर दें। जब समाचार-पत्रोंमें यह खबर आने लगी कि अनशनकारीकी हालत गिरती जा रही है और जब एक प्रकारसे उनकी मृत्यु निश्चित समझी जाने लगी तब उनके पिता और चाचाने यह निश्चय किया कि अधिकारियोंको उनकी मृत देहके सम्बन्धमें आवश्यक निर्देशन दे दिये जायँ और यह भी बतला दिया जाय कि उसे कहाँ गाड़ना है? उनको यह पत्र भेजे हुए अभी थोड़े ही दिन हुए थे कि समाचार-पत्रोंमें यह प्रकाशित हुआ कि ओबेदुल्ला खाँकी विजय हुई है और उन्होंने स्यालकोट जेलमें अपना अनशन भंग कर दिया है।

१७ अगस्त १९३४ को खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने गांधीजीके अनशनकी सहानुभूतिमें एक सप्ताहका उपवास किया। डिप्टी कमिश्नरने शासनको उनकी स्थितिसे अवगत करते हुए लिखा: 'उन्होंने उपवासको अच्छी तरहसे व्यतीत कर दिया और उनका स्वास्थ्य भी संतोषजनक रहा। गत ६ महीनेमें उनका वज़न १० पौण्ड कम हुआ है और जबसे उनको सज़ा हुई है तबसे वे अपना २१ पाउण्ड वज़न खो चुके हैं। डा० खान साहबका स्वास्थ्य ठीक है और वे प्रसन्न हैं।'

सीमा-प्रान्तकी सरकारने भारत-सरकारको लिखा: "इस अफ़वाहमें कि

महात्मा गांधी स्वेच्छासे किये गये उपवासको पूर्ण करनेके बाद अगस्त मासमें पेशावर आ रहे हैं, यहाँका वातावरण बदल गया है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि वे प्रतिबन्धके किसी आदेशको नहीं मानेंगे और उनका ध्यान विशेष रूपसे खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँकी रिहाईपर केन्द्रित होगा। ... जितना भी हो सके उतना स्थितिका भार कम करनेके लिए, उसे सामान्य बनानेके लिए तथा गांधीजीको पुनः अनशनका एक बहाना न देनेकी दृष्टिसे भारत-सरकार खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ और खान साहबको मुक्त करनेके प्रस्तावपर विचार कर सकती है। स्पष्ट है कि गांधीजीका अनशन भारत तथा अन्य देशोंके जनमतको अपनी ओर आकृष्ट करेगा। इन सब परिस्थितियोंमें इस सरकारको उनकी रिहाईका प्रस्ताव स्वीकृत करनेमें कोई आपत्ति नहीं होगी, यदि उनमेंसे किसीको पश्चिमोत्तर सीमान्त-प्रदेशमें प्रवेश करनेकी अनुमति न दी जाय।"

जितने दिनतकके लिए भी उसके लिए सम्भव था भारत-सरकार खान-बन्धुओंको उनके प्रदेशसे बाहर रखनेका दृढ़ निश्चय कर चुकी थी। 'ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँका यहाँकी जनताके ऊपर एक दृढ़ प्रभाव है। वह उनके ऊपर अंध विश्वास करती है तथा उनके भाषणोंसे बड़ी सरलतासे उत्तेजित हो जाती है इसलिए वर्तमान परिस्थितिमें यह उचित नहीं समझा जा रहा है कि उनको सीमाप्रान्तमें आनेकी अनुमति दी जाय।' उन दोनों भाइयोंके निजी खर्चके लिए सौ-सौ रुपया मासिक भत्ता बाँध दिया गया था। डा० खान साहबके परिवारके लिए जो ७०० रुपया निर्वाह-भत्ता निश्चित किया गया था, उसका खुलासा इस टिप्पणीमें दिया गया है, 'इसमेंसे दो सौ रुपये उनकी अंग्रेज पत्नीके लिए और दो-दो सौ रुपये उस पत्नीसे पुत्र और पुत्रीको। यह भत्ता तभी दिया जायगा जब कि वे इंगलैण्डमें रहेंगे। यह भत्ता काफी उदारतासे निश्चित किया गया है। चीफ कमिश्नरने सन् १९३२ में जो विवरण उपस्थित किया उससे यह ज्ञात होता है कि डा० खान साहबकी वार्षिक आय ७,१८९ रुपये थी। इस निधिमें उनको भूमिसे प्राप्त होनेवाली आमदनी सम्मिलित नहीं है। ७०० रुपये प्रतिमास भत्ता निश्चित करके हम उनकी इस आयसे भी अधिक दे रहे हैं। इसके अलावा उनके पुत्र और पुत्रीको भारतसे दूर इंगलैण्डमें रहनेसे कुछ अन्य लाभ भी हैं। वे किसी भी प्रकारके दूषित वातावरणसे मुक्त रहेंगे, इसलिए मैं यह सोच रहा हूँ कि ये भत्ते जारी रखे जायँ।'

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने आन्दोलनके सम्बन्धमें और अपने जेल-जीवनके विषयमें लिखा है :

"स्वाधीनताकी उपलब्धिके लिए हमारे प्रान्तमें दो प्रकारके आन्दोलन छेड़े गये—हिंसायुक्त और अहिंसायुक्त। सबसे पहले उग्र, हिंसात्मक आन्दोलन प्रारम्भ हुआ और फिर उसके तीन या चार दशक पश्चात् सन् १९२९ में अहिंसात्मक आन्दोलन। अंग्रेजोंने हिंसात्मक आन्दोलनको अविलम्ब दबा दिया परन्तु अहिंसात्मक आन्दोलन कठोर दमनके होते हुए भी निरन्तर पनपता चला गया। उग्र, हिंसामय आन्दोलनने जनतामें भय और कायरताकी भावनाएँ उत्पन्न कीं और उसने लोगोंको दुर्बल हृदय और नैतिक दृष्टिसे कमजोर बना दिया। अहिंसात्मक आन्दोलनने पख्तूनोंके हृदयोंमेंसे भयको निर्मूल कर दिया। उसने उनको वीर बना दिया और उनका नैतिक स्तर ऊँचा उठा दिया।

"हिंसात्मक आन्दोलनने लोगोंके हृदयोंमें हिंसाके विरुद्ध एक घृणा जाग्रत की परन्तु अहिंसात्मक आन्दोलनने जनतासे प्रेम, स्नेह और सहानुभूतिको प्राप्त किया। इसने पख्तूनोंमें देशभक्ति और बन्धुत्वकी भावनाको जाग्रत किया। इससे उनके साहित्यमें, कवितामें एक महान् क्रांति आयी और उनका रहन-सहनका ढंग बदला। यदि हम इसे दो शब्दोंमें कहें तो हिंसा घृणा है और अहिंसा प्रेम है। जब एक अंग्रेजको मार दिया जाता था, तब केवल अपराधीको ही दण्ड नहीं दिया जाता था बल्कि उसके कार्यके लिए सारे गाँव और समूचे क्षेत्रको कष्ट झेलना पड़ता था। लोगोंमें हिंसाकी भावना फैलती थी और हिंसात्मक कार्य करनेवाले दमनके लिए उत्तरदायी होते थे। अहिंसात्मक आन्दोलनमें हमने आत्म-पीड़ाके मार्गको अपनाया। इससे पूरे समाजको कष्ट नहीं हुआ बल्कि उससे वह लाभान्वित ही हुआ। इस प्रकार उसने लोगोंका प्रेम और सहानुभूति ही प्राप्त की। इस आन्दोलनकी अन्य बड़ी देन यह है कि इसने लोगोंके जीवनको एक नये साँचेमें ढाल दिया। अबतक उग्र पारिवारिक कलह हुआ करते थे और फिर वे कलह सर्वनाशपूर्ण युद्धोंमें बदल जाते थे। अंग्रेजोंने यह सोचा कि अहिंसावादी पठान हिंसावादी पठानसे अधिक खतरनाक है और इसीलिए सन् १९३२ में उन्होंने पठानोंके साथ ऐसे अमानुषिक कार्य किये कि वे किसी प्रकार उत्तेजित होकर हिंसापर उतारू हो जायें लेकिन उनको सफलता नहीं मिली।

"अंग्रेजोंने पठानोंको जो भयानक यंत्रणाएँ दी हैं, उनके कुछ उदाहरणोंका मैं यहाँ उल्लेख करूँगा। अंग्रेजोंने पठानोंके पाजामे उतरवा लिये और उनको नंगा कर दिया। जिस समय चारसद्दामें धरना अपनी पूरी तेजीपर था उस समय उन्होंने स्वयंसेवकोंके पाजामे उतरवाये और उनके अंडकोषोंको रस्सीके फंदेमें डालकर उमेठा और उनको तबतक मारा जबतक कि वे अपने होश-हवास

नहीं खो बैठे। इसके बाद उन्होंने उन घबराये हुए स्वयंसेवकोंको पेशाब और मल से भरे हुए गड्ढोंमें फेंक दिया। कड़कड़ाती हुई भयानक सर्दीमें स्वयंसेवकोंको पानीमें फेंक दिया गया। बहुतसे लोगोंको गोली मार दी गयी।

"अकेली हरिपुर जेलमें १०,००० खुदाई खिदमतगारोंको सालके सबसे सर्द महीनोंमें गिरफ्तार किया गया था। उनमेंसे प्रत्येक कैदीको एक कम्बल और एक चपाटी दी जाती थी। वह भी सब कैदियोंको नहीं मिल पाती थी। बड़े-बड़े, प्रमुख नेताओंको भी कोड़े मारनेकी सजा दी गयी। उनसे चक्कीसे अनाज पिसवाया गया और घानी चलवायी गयी। वे अकेली कोठरियोंमें नज़रबन्द करके रखे गये। ऐसी कोई निर्दयता न बची; ऐसा कोई अपमान शेष न रहा जिसका व्यवहार राजनीतिक बन्दियोंके साथ न किया गया हो।

"हजारीबाग जेलमें मैं एक बैरकमें बन्द कर दिया गया। जेलके जेलर और सुपरिन्टेन्डेन्टके अलावा मेरे पास कोई आ नहीं सकता था। मैं एक राजनीतिक कैदी था। प्रतिमास जिलाधीश [कलेक्टर] मेरे पास आता था। एकाकीपनने मेरे स्वास्थ्यपर अपना कुप्रभाव छोड़ दिया है। जिलाधीश एक अत्यन्त सज्जन व्यक्ति था और मैंने अपनी ओरसे हालाँकि उससे कोई शिकायत नहीं की लेकिन फिर भी वह यह देख रहा था कि मेरा वजन कम होता जा रहा है और मेरे मुँहपर पीलापन आता जा रहा है और यह सब मेरी नज़रबन्दीके कारण है। मैंने उसको यह सुझाव दिया कि काज़ी अतातुल्लाहको, जो गया जेलमें हैं और अनिद्रा रोगसे पीड़ित हैं, मेरे पास भेज दिया जाय। जिलाधीशने सरकारसे यह सिफारिश की कि काज़ी साहबका तबादला गयासे हजारीबाग कर दिया जाय परन्तु सीमा-प्रान्तकी सरकारने इसका विरोध किया क्योंकि मेरी ही तरह वे भी उसकी आँखकी किरकिरी थे। उनके स्थानपर नैनीतालसे डॉ० खान साहब ले आये गये।

"जब डॉ० खान साहबने मुझे एक बैरकमें बन्द देखा तो वे बोले कि मुझको तो नैनी जेलमें बैरकसे बाहर घूमने दिया जाता था। हज़ारीबाग़ जेलका अधीक्षक एक पंजाबी था जो कि डॉ० खान साहबके साथ इंगलैण्डमें रहा था लेकिन वह एक बहुत ही डरपोक आदमी था। वह बोला, "यदि मैं आपको घूमने-फिरनेकी आजादी दे दूंगा तो मैं कहींका भी न रहूँगा।" डॉ० खान साहब अपनी ज़िदपर अड़ गये। अंतमें हम लोगोंको जेलसे बाहर घूमने-फिरनेकी अनुमति दे दी गयी। शीघ्र ही हम लोगोंको यह पता भी लग गया कि राजेन्द्रप्रसादजी, आचार्य कृपालानी तथा बिहारके अन्य राजनीतिक कार्यकर्ता भी उसी जेलमें नज़रबन्द

हैं। कभी-कभी बैरकसे बाहर जेलमें ही हम लोगोंकी अंग्रेजोंसे मुलाक़ात हो जाती थी और उनके साथ हमारे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध भी बन गये थे। हमारा जेलर, जिसको 'छोटा साहब' कहा जाता था, एक भला व्यक्ति था और उसके मनमें राष्ट्रीय कार्यकर्ताओंके प्रति सहानुभूति थी। उसने हमारे निवेदनपर एक राजनीतिक बन्दीको, जो शीघ्र छूटनेवाले थे, कभी-कभी हमारे पास आकर चाय पी जानेकी अनुमति दे रखी थी। बिहारी लोग अच्छे स्वभावके होते हैं और वे जाति-पाँतिके बन्धनोंको बड़ी कठोरतासे मानते हैं। वे किसीके साथ अधिक सम्पर्क नहीं रखते लेकिन जब हमारे साथ उनके सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध स्थापित हो गये तो वे बड़े अच्छे लोग साबित हुए। उस बन्दीको विदाके समय हमने दावत दी। मैंने उसे चाय और पकौड़े परोसे और मेरे बड़े भाईने तली हुई 'ब्रिजल'। हमारे अतिथिने खाद्य-पदार्थोंको पसन्द किया और फिर वह एकदम खिलखिलाकर हँस पड़ा। उसने कहा कि एक बार एक मुसलमान डाकियेने उसको बड़ी सावधानीसे एक कोना पकड़कर एक पोस्टकार्ड दिया। उसने भी दूसरा कोना पकड़कर उसे ले लिया। फिर भी उसके भाईने उससे यह कहकर कि तुम छू गये हो, उसके हाथ धुलवाये। मेरे साथ भी ऐसी ही एक विचित्र घटना हुई। मैंने एक दिन एक ब्राह्मण कैदीको, जो मुझे पपीता खिलाया करता था, एक पपीता दिया। उसने उसे मेरे चाकूसे नहीं काटा क्योंकि मैं मांस खाया करता हूँ। जब मैंने उससे पूछा कि तुमको किस अपराधमें सज़ा हुई तो उसने सहज भावसे कह दिया कि मैं हत्याके एक मामलेमें फँस गया था।

"यद्यपि मैं एक राजनीतिक कैदी था लेकिन मेरे बच्चोंके लिए कोई भत्ता स्वीकृत नहीं हुआ था, जब कि डॉ० ख़ान साहब और अतातुल्लाहके परिवारके लिए निर्वाह भत्ता दिया जाता था। रुपयोंकी कमीके कारण मेरे पुत्र ग़नीको अपना कोर्स पूरा किये बिना ही अमेरिकासे वापस लौट आना पड़ा। मेरे पास काफ़ी भू-सम्पत्ति है लेकिन उससे कोई आय नहीं होती थी क्योंकि मेरी गिरफ्तारीके बाद कोई उसकी देख-रेख करनेवाला न था और सरकारके उकसानेपर साझीदार मेरे भागमें भी बेईमानी किया करते थे।

"अपना तीन वर्षका कठोर कारावास समाप्त करनेके पश्चात् मैं २७ अगस्त १९३४ को रिहा कर दिया गया। मेरे ऊपर पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तमें प्रवेश करनेपर प्रतिबन्ध भी लगा हुआ था। बिहारके लोगोंमें कई मेरे मित्र थे इसलिए मैं बाबू राजेन्द्रप्रसाद तथा अन्य लोगोंसे मिलनेके लिए पहले पटना गया। मुझे महात्मा गांधी और जमनालालजी बजाजने वर्धामें रहनेके लिए आमंत्रित किया।

उस वर्ष कांग्रेसका अधिवेशन बम्बईमें होने जा रहा था और यह भी प्रस्ताव था कि इस बार मुझे उसका अध्यक्ष बनाया जाय। राजेन्द्र बाबूका विशेष आग्रह था कि मैं इस प्रस्तावको स्वीकार कर लूँ। यद्यपि मुझको इस सम्मानपूर्ण पदके लिए चुन लिया गया था फिर भी मैंने इस प्रस्तावको अस्वीकार कर दिया और राजेन्द्रप्रसादजीसे कह दिया कि मैं तो एक खुदाई खिदमतगार हूँ। मैं केवल सेवा-कार्य करूँगा।

एक ईश्वरीय उपहार

१९३४

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँ और डॉ ख़ान साहब २७ अगस्त १९३४ को हज़ारीबाग जेलसे छोड़ दिये गये परन्तु उनके पश्चिमोत्तर प्रदेश और पंजाबमें प्रवेश करनेपर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। गृह-सचिव मि० एम० जी० हैलेटने अपनी एक टिप्पणीमें, जिसपर 'गुप्त' शब्द लिखा था, यह लिखा :

"ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँके जेलसे मुक्त हो जानेके बाद उनकी आगामी गतिविधियाँ क्या होंगी और प्रान्तमें उनकी रिहाईकी क्या प्रतिक्रिया होगी यह कह सकना कठिन है। यहाँ यह उल्लेख कर देना आवश्यक है कि उनकी एक देवताके समान मान्यता है। हिज़ एक्सलैंसी गवर्नरने इस प्रकारके प्रसंगोंका उल्लेख किया है। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँके सुझावपर जो कुआँ बना उसके बारेमें जन-सामान्यमें यह विश्वास फैल गया है कि उसके जलसे अनेक प्रकारके पापोंसे छुटकारा मिल जाता है अतः उसे लोग अपने साथ दूर-दूरतक ले जाते हैं। इसकी अत्यधिक सम्भावना है कि उनके आनेसे एक सुषुप्त आन्दोलनको गति मिल जाय। यदि वे उत्मंज़ई सरीखी जगहोंमें जाते हैं तो उनके स्वागतके लिए निश्चित ही एक बड़ी भीड़ इकट्ठी होगी और यह कह सकना कठिन है कि उसका फल क्या होगा ? असंदिग्ध रूपसे, उनके प्रान्तमें प्रवेशसे राजभक्त और बुद्धिप्रधान लोगोंका, जो कि लाल कुर्तीवालोंके आन्दोलनसे डरते हैं, उत्साह भंग हो जायगा और उसमें खिन्नताकी एक लहर दौड़ जायगी। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँ यदि किसी विध्वंसकारी प्रवृत्तिमें नहीं भी लगते तो भी इस बातकी सम्भावना है कि वे आगामी निर्वाचनको दृष्टिमें रखकर लाल कुर्ती दलवालोंकी एक प्रचार-सेना तैयार करें और इसका परिणाम यह भी हो सकता है कि वे अपनी कटाक्ष-पूर्ण उक्तियों तथा अपने समरतंत्रसे निर्वाचनमें सफलता प्राप्त कर लें।...

"उनको पश्चिमोत्तर प्रदेश तथा पश्चिम पंजाबसे दूर रखनेपर भी इस बात-पर दृष्टि रखनी चाहिए कि क्या सीमा-प्रान्तकी जनता उनके स्वागतको उत्सुक है या लोगोंपर उनका कोई प्रभाव शेष है ?"

हज़ारीबाग जेलसे छूटकर खान-बन्धु बाबू राजेन्द्रप्रसाद तथा जेलके अपने अन्य साथियोंसे मिलनेके लिए पटना चले गये। वहाँ २९ अगस्तको खान अब्दुल

ग़फ़्फ़ार खाँने एक विशाल सभामें उर्दू में भाषण किया। जनता द्वारा प्रदर्शित प्रेम और स्नेहकी भावनाओंके लिए उन्होंने अपनी हार्दिक प्रसन्नता प्रकट की। अपने व्याख्यानमें उन्होंने कहा कि वे अपने बिहार प्रान्तीय बन्धुओंके साथ बिहारमें रहे। जो लोग जेलमें निरन्तर साथ रहे हैं, वे ही इस बातका अनुभव कर सकते हैं कि बन्दियोंमें आपसमें बन्धुत्व, प्रेम, विश्वास और स्नेहके कैसे नाते जुड़ जाते हैं। जब वे बदलकर पहली बार हजारीबाग जेलमें आये तब वे यह न समझ सके कि उनको प्रभुने वहाँ क्यों भेजा है? सरकारने तो उन्हें इस विचारसे निर्वासित किया था कि उनके आन्दोलनसे उनके सम्बन्ध टूट जायँगे परन्तु एक 'महान् शक्ति' है, जिसकी इच्छा कुछ और थी। बादमें उनको इस बातकी अनुभूति हुई कि प्रभुने वहाँ उनको एक निश्चित प्रयोजनको पूर्ण करनेको भेजा था। जबतक वह प्रयोजन रहा तबतक उनको हजारीबाग जेलमें रखा गया और जब वह पूर्ण हो गया तब उन्हें प्रभु द्वारा तत्काल मुक्त कर दिया गया। दूसरी बात वे यह कहना चाहते हैं कि संयुक्त प्रान्त (आधुनिक उत्तर प्रदेश), मध्यप्रान्त तथा सिन्धके निवासियोंने, विशेष रूपसे मुसलमानोंने उनको तथा उनके भाईको अपने प्रान्तमें अपने साथ कार्य करनेको आमन्त्रित किया परन्तु वे बराबर यही सोचते रहे कि भारतकी स्वाधीनताकी उपलब्धिके लिए कौनसे कदम उठाये जायें और असहाय लोगोंको अत्याचारीके पंजेसे कैसे मुक्त किया जाय? वे सीमा-प्रान्तवासियोंके एक दलका गठन करना चाहते थे, उसे शक्ति-सम्पन्न बनाना चाहते थे और उनका सारा ध्यान अपने उसी लक्ष्यपर केन्द्रित था। अपनी उपलब्धियोंपर दृष्टि डाले बिना वे कार्यक्षेत्रमें आगे नहीं बढ़ना चाहते थे। वे अपने दलकी शक्ति इतनी बढ़ा देना चाहते थे कि वह स्वाधीनताकी लड़ाई लड़ सकनेमें समर्थ हो सके और यह दल भारतके अन्य सब प्रान्तोंसे अग्रगामी हो। वे ईश्वरके सेवक थे। वे उन हिन्दुओं और मुसलमानोंका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करना चाहते थे जो कि मिथ्या धारणाओंके वशीभूत होकर कार्य कर रहे थे; जो धर्मका नाम लेकर एक-दूसरेकी शिकायतें करते थे। यद्यपि ये लोग ईश्वरके सेवक थे परन्तु इनको जनताकी सेवा करनेसे मना किया जाता था। इसपर भी दावा यह किया जाता था कि भारतमें धार्मिक स्वाधीनता है। निर्दय कानून; अध्यादेश भारतमें वापस ले लिये गये थे परन्तु वे सीमा-प्रान्तमें अबतक लागू थे। उन्होंने (खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने) कहा कि आप सब लोगोंने देखा होगा कि रिहाईके पश्चात् सबको अपने-अपने प्रान्तोंमें जानेकी अनुमति दे दी गयी परन्तु हम लोगोंको पंजाब और सीमा-प्रान्तमें प्रवेश न करने

का आदेश दे दिया गया है। उन्होंने कहा कि पंजाब सरकारसे वे यह पूछना चाहते हैं कि उनका उस सरकारसे क्या सम्बन्ध है? पंजाबमें कोई अध्यादेश सन् १९३२ में स्वीकृत किया गया था और उसीके अनुसार उनके उस प्रान्तमें प्रवेशपर भी प्रतिबन्ध लगा दिया गया है। वे यह पूछना चाहते हैं कि क्या वे चोर हैं, डाकू हैं या लुटेरे हैं या वे कोई हिंसात्मक काम करना चाहते हैं? आखिर उनका अपराध क्या है? उनका अपराध केवल यह है कि वे अपने देशसे प्रेम करते हैं और पीड़ित जनोंके प्रति उनके मनमें एक ममता है। वे शासनके लोगोंसे यह कहना चाहते हैं कि वे एक धार्मिक व्यक्ति हैं और वे जो कुछ कहना या करना चाहते हैं वह धर्मानुसार ही करना चाहते हैं। उनका हिन्दुओं और मुसलमानोंसे यह आग्रह है कि आप लोग अपने-अपने धर्मके ग्रन्थोंको पढ़ें। अधिकांश व्यक्ति अपने धर्मके विपरीत आचरण कर रहे हैं। धार्मिक ग्रन्थ इसलिए प्रकट नहीं हुए कि उनको अलमारियोंमें रख दिया जाय। लोगोंको उन्हें समझनेकी और उनके ऊपर आचरण करनेकी चेष्टा करनी चाहिए। जहाँतक उन्होंने गीता और कुरानको समझा है, उनके अनुसार दासता एक शाप है। उन्होंने कहा कि उन्हें यह चिन्ता नहीं है कि लोग उनकी इन बातोंसे प्रसन्न होंगे या नाराज़ क्योंकि आम तौरसे लोग सत्यको पसन्द नहीं करते। उन्होंने कहा कि वे तो ईश्वरके एक सेवक हैं और उसीका कार्य कर रहे हैं। वे कोई नेता नहीं हैं और न मंचपर भाषण करना उनको अच्छा लगता है। यह और बात है कि मित्रोंका अधिक आग्रह हो और वे इसके लिए विवश हो जायें। वे मूलत: एक सिपाही हैं और उनका विश्वास सिद्धान्तोंपर नहीं अपितु व्यावहारिक कार्यपर है। मुसलमान अपने कुरान शरीफ़को खोलकर देखें कि वे सच कहते हैं या नहीं। पवित्र कुरानमें यह कहा गया है, 'मुहम्मद, तुम मुसलमानोंसे यह कह दो कि यदि उन्होंने कुरानको त्याग दिया तो वे अल्लाहके कोपके भाजन हो जायेंगे। वह उनको किसी विदेशी राष्ट्रके अधीन कर देगा।' सब लोगोंको यह जानना चाहिए कि विश्वमें धर्मोंका प्रादुर्भाव राष्ट्रोंके उत्थानके लिए हुआ है, उनके पतनके लिए नहीं। हिन्दुओंको अपनी गीताका अध्ययन करना चाहिए। महाभारतका कारण यह था कि एक अत्याचारीने दुर्बलके अधिकारोंका अपहरण कर लिया था। अर्जुन युद्ध करनेको राज़ी नहीं थे। भगवान् कृष्णने उनसे कहा कि उनका जन्म दुर्बलोंके अधिकारोंकी रक्षाके लिए और उनकी सहायता करनेके लिए हुआ है अतः वे दमनकारियोंका नाश करें। यह हिन्दू धर्म है और यह इस्लाम है।

आगे उन्होंने कुरानकी एक और आयतका उद्धरण दिया और मुसलमानों-

को यह सदुपदेश दिया कि उनका जन्म उनके अपने सहधर्मियोंके लिए ही नहीं हुआ है अपितु सबकी सेवाके लिए हुआ है; चाहे वह ईसाई हो, सिख हो या हिन्दू हो। उन्होंने आगे पूछा कि धर्म क्या है और उन्होंने स्वयं ही इसका प्रत्युत्तर दिया कि धर्म प्रेम, सदाचार और ईश्वरके प्राणियोंकी सेवा करना है। धर्मका प्रादुर्भाव घृणाके प्रसारके लिए नहीं हुआ बल्कि उसे दूर करनेके लिए हुआ है। धर्मने विभाजनको जन्म नहीं दिया। उन्होंने कहा कि आर्य सब अपने धर्मकी शिक्षाओंपर मनोयोगपूर्वक चिंतन करें।

उन्होंने आगे कहा कि यह देश जिस प्रकार हिन्दुओंका है, उसी प्रकार मुसलमानोंका है और उनको परस्पर लड़ना नहीं चाहिए। अन्यथा वे इस शाप-की अवधिको और भी लम्बा कर देंगे। हिन्दू लोग पूछते हैं कि वे मुसलमानोंके साथ कैसे काम कर सकते हैं और यही बात मुसलमान भी कहते हैं लेकिन एक दिन ऐसा आयेगा जब कि उनको मिलकर काम करनेको विवश होना पड़ेगा। एक बार जब कि वे कराचीमें थे, हिन्दू-मुस्लिम एकताकी चर्चाएँ चल रही थीं और एकता परिषद्का विकास होता जा रहा था। तब उन्होंने इस बातपर आश्चर्य किया था कि यह आडम्बर किस लिए है क्योंकि एकता तो दोनों ही जातियोंके लिए कल्याणकारक है और वैमनस्य दोनोंके लिए ही हानिकारक। लेकिन वे तब-तक एक नहीं होंगे जबतक कि वे अपने पतन और विनाशका अनुभव नहीं कर लेंगे। भारतीय अबतक सो रहे हैं। बिहारमें भूकम्प हुए और बाढ़ें आयीं। यदि लोग देशके अन्य भागोंपर दृष्टि डालें तो वे देखेंगे कि वहाँ हैजा और प्लेग फैल रहा है, लेकिन वे उसकी ओरसे नितान्त उदासीन हैं। उनको भय है कि यदि उन्होंने अपने देशकी सेवा की तो उनको कारागारमें भेज दिया जायगा। यदि कोई वहाँ अपनी स्वाभाविक मृत्युसे भी मर जायगा तो लोग यह कहेंगे कि उन्होंने अमुक व्यक्तिसे राजनीतिक आन्दोलनमें भाग न लेनेके लिए बहुत मना किया लेकिन उसने नहीं सुना और मर गया। उन्होंने (खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने) लोगोंसे पूछा कि यदि वे अपने देशकी सेवा नहीं करते तो क्या इस बातका कोई ज़िम्मा ले सकता है कि वे मरेंगे नहीं ? मनुष्यकी देह नश्वर है। फिर वह एक सम्मानजनक मृत्युको ही वरण क्यों न करे ? यदि भारत हिन्दुओं और मुसलमानों दोनोंका ही है और यदि वे इस अभिशापको और लम्बा नहीं करना चाहते तो उनको कुछ काम करना चाहिए। हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य-भावनाको तबतक बल नहीं मिल सकता जबतक कि लोग उसकी आवश्यकताका अनुभव नहीं करते। सीमा-प्रान्तके निवासियोंमें यह अनुभूति जाग्रत हुई है और वहाँकी स्त्रियों तथा बालकों

तकने यह निश्चय कर लिया है कि वे अब दासताको सहन नहीं करेंगे। सीमाप्रांत के नन्हें बालकोंने कहा कि भारत उनका अपना देश है जिसपर उनको शासन करनेका अधिकार है। अंग्रेजोंको भारतसे कुछ लेना-देना नहीं है। अंग्रेजोंका अपना स्वतःका देश है और उनको किसी औरके देशपर अपना दावा करनेका अधिकार ही क्या है? हमारे यहाँके बच्चे नङ्गे और भूखे रहते हैं जब कि दूसरे देशके लोग यहाँ आकर ऐश करते हैं। उन्होंने राँचीके निवासियोंका उल्लेख करते हुए कहा कि वे लोग राँची रोडपर नग्नप्राय दिखलाई देते हैं। ऐसी है उनके देशकी स्थिति। परन्तु वे आपसमें एक-दूसरेकी शिकायत करते हैं। स्वार्थी तत्त्वोंने उनको इस प्रकार धोखा दिया है कि उनको अपने लाभ और हानिका ज्ञान भी नहीं रहा है। कुछ लोग कहते हैं कि हिन्दू-मुस्लिम एकताके बिना कुछ भी नहीं हो सकता लेकिन वे (खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ) उन लोगोंसे यह कहना चाहते हैं कि जब-तक भारतमें विदेशी राज है तबतक यहाँ हिन्दू-मुस्लिम एकता हो ही नहीं सकती। यदि हिन्दू और मुसलमान एक हो जाते हैं तो फिर अंग्रेज यहाँ टिक नहीं सकते। अंग्रेज उन हिन्दुओं और मुसलमानोंपर शासन कर रहे हैं जो कि उनके शासनके साँचेको चला रहे हैं, इस तरहसे हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्यके लिए भारतीय स्वयं ही उत्तरदायी हैं। उन्होंने कहा कि जब मैं भारतीयोंसे यह सुनता हूँ कि हमारी संस्कृति ऐसी है, हमारा धर्म ऐसा है अथवा इसी प्रकारकी अन्य बातें, तो उन्हें आश्चर्य होता है। 'मैं फिर उन धार्मिक ग्रन्थोंका उल्लेख करना चाहता हूँ और यह कहना चाहता हूँ कि दासका कोई धर्म नहीं होता। राजनीतिक शक्ति अंग्रेजोंके हाथमें है। उनका धर्म क्या है? दासता स्वयंमें एक शाप है फिर भी भारतवासी यह समझते हैं कि वे बड़े भाग्यवान् हैं। हिन्दुओंका विश्वास है कि उनकी संस्कृति सर्वाधिक प्राचीन है। मुसलमान शहाबुद्दीन गोरी और महमूद गज़नवीकी विजयों-पर गर्व करते हैं। मैं पूछता हूँ कि मुसलमान आज क्या हैं और उनका यह कहना क्या अर्थ रखता है कि हमारे पिता एक बादशाह थे।' उन्होंने (खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने) कहा कि उन्होंने बहुत-सी ऐसी बातें कही हैं जो कि वे कहना नहीं चाहते थे। वे केवल लोगोंका ध्यान उनके धर्मोंकी ओर आकर्षित करना चाहते थे जिनमें कि दासत्वको एक अभिशाप बतलाया गया है और स्वराज्यको एक वरदान। यदि हिन्दू और मुसलमान यह सोच लेते हैं कि यह देश उनका अपना है तो वे देशका हित करके एक-दूसरेपर उपकार नहीं करते। यदि वे अपने देशको स्वाधीन कर लेंगे तो ऐसा करके वे किसीके ऊपर अहसान नहीं करेंगे। विदेशी उनके देशके ऊपर राज्य कर रहे हैं। उनको जर्मनी, फ्रांस और इटली

जैसे विदेशी राष्ट्रोंकी ओर दृष्टि डालनी चाहिए और यूरोपके उन छोटे-छोटे राष्ट्रों-की ओर भी देखना चाहिए जो अपने देशपर शासन कर रहे हैं। एशियाका कोई राष्ट्र उनके ऊपर राज नहीं कर रहा है। उनमेंसे प्रत्येक राष्ट्र स्वतंत्र है परन्तु भारतके निवासी वाह्य लोगों द्वारा शासित हैं फिर भी वे वड़े प्रसन्न हैं। हिन्दू और मुसलमान विधानसभाकी कुर्सियोंके लिए आपसमें झगड़ रहे हैं। दोनोंकी संख्या मिलकर ३५ करोड़ है। क्या उनको इतनी कुर्सियाँ मिल जायँगी ? ईश्वरके सेवक होनेके नाते उनका यह कर्त्तव्य है कि वे मानव-जातिकी सेवा करें। सुधार एक दर्जन साल पहले ही दे दिये गये हैं परन्तु उन्होंने देशकी कोई भलाई नहीं की और विचित्र वात यह है कि जिन भारतीयोंके लिए वे थे वही लोग नौकरियाँ हथियानेके लिए आपसमें लड़े-झगड़े। उन्हीं व्यक्तियोंने अंग्रेजोंके तनिकसे इशारेपर आपसमें वैमनस्य उत्पन्न कराया और इस प्रकार विदेशी सत्ताके सूत्रोंको पुष्ट किया, इसलिए उनको चाहिए कि वे कुर्सियोंके इन सव मोहोंको त्याग दें। वे अपने सताये हुए वन्धुओंकी वात सोचें और अपने देशको स्वतंत्र करनेका प्रयत्न करें फिर सारी कुर्सियाँ उनके पास स्वयं चली आयेंगी। यदि लोगोंको सचमुच यह विश्वास है कि यह उनका अपना देश है तो फिर हिन्दू और मुसलमान दोनों जाग्रत क्यों नहीं होते और कार्यमें क्यों नहीं लग जाते ? खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कहा कि वे उनको सव कुछ छोड़ देनेकी सलाह देंगे और कहेंगे कि वे कांग्रेसके साथ भाई-चारा स्थापित करें। उन्होंने कांग्रेसके प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करते हुए कहा कि वह समस्त भारतका प्रतिनिधित्व करनेवाली संस्था है। न वह मुसलमान संगठन है और न हिन्दू वल्कि वह सभीकी, ईसाइयों और पारसियों आदिकी भी एक मिली-जुली संस्था है। जव कांग्रेसके साथ एक वार वन्धुत्व स्थापित हो जायगा तो अपने लक्ष्यतक पहुँचनेमें हमें देर न लगेगी। यह भाई-चारा इस प्रकार स्थापित हो सकता है कि जव किसी प्रश्नपर मतभेद हो तव वहुमतसे जो भी निर्णय हो उसको सभी लोग विना असन्तोष प्रकट किये स्वीकार करें और यही अनुशासन भी है।

उन्होंने आगे कहा कि कुछ लोगोंकी राय यह थी कि सविनय आज्ञा-भंग आन्दोलनको वापस ले लेना चाहिए लेकिन वे इन सव वातोंके विरुद्ध थे क्योंकि ये वातें अनुशासनके विपरीत थीं। जव युद्धके लिए आदेश मिल जाय तव उसका पालन करना ही चाहिए और जव उसे रोक देनेकी आज्ञा मिले तो उसे रोक देना चाहिए। उन्होंने कहा कि जव वे जेलमें थे तव एक समाचार-पत्रमें यह खवर प्रकाशित हुई कि वे आन्दोलनको वापस लेनेके पक्षमें हैं। यहाँतक कि एक

सरकारी व्यक्ति उनके पास इस कथनकी पुष्टिके लिए पहुँचा। तब उन्होंने उससे कहा कि मैं जेलमें राजनीतिविषयक चर्चा नहीं करूँगा। साथ ही उन्होंने उससे यह भी कहा कि कांग्रेसका आदेश ही मेरे लिए सर्वोपरि है।

उन्होंने अपने भाषणके निष्कर्षमें कहा कि बिहार और विशेष रूपसे छोटा नागपुरके निवासियोंकी दशाने उनके हृदयको छू लिया है और उन्होंने अपने मन-में यह निश्चय कर लिया है कि यदि मुसलमानोंको उनकी आवश्यकता है तो वे उनकी सेवा करनेको तैयार हैं। हिन्दुओंको इस बातसे अपने मनमें बुरा नहीं मानना चाहिए कि उनसे क्यों नहीं पूछा गया? इस सम्बन्धमें मुसलमानोंकी स्थिति असामान्य है। वे उस धर्मके अनुयायी हैं जिसका प्रादुर्भाव ही विश्वको दासताके पाशसे मुक्त करनेको हुआ है। एक मुसलमान किसी अत्याचार और निरंकुश सम्राट्के आगे सच बोलनेमें कभी नहीं डरा।

उन्होंने कहा कि वे ईश्वरके एक सेवक हैं और उनका पंथ बिना किसी जाति या सम्प्रदायके भेद-भावके ईश्वरके समस्त प्राणियोंकी सेवा करना है। वे यहाँसे जाकर अपने मित्रोंसे सम्मति लेंगे और वे सबसे पहले बिहारकी सेवा करना चाहेंगे। जनताने उनके प्रति जो प्रेम और स्नेह प्रदर्शित किया उसके लिए उन्होंने उसे धन्यवाद दिया और सर्वशक्तिमान् प्रभुसे प्रार्थना की कि वह असहाय और निर्धन भारतवासियोंके विलापको सुने तथा उनको अत्याचारियोंके पंजेसे छुड़ाये।

"मैंने उनके भाषणको एक बारसे अधिक ध्यान-पूर्वक पढ़ा।" लॉ-मैम्बरने लिखा, "यह बिलकुल सच है कि वक्ता दासता या विदेशी शासनके शापसे मुक्त होनेके लिए हिंसाकी वकालत नहीं करता। मैंने अनुभवसे यह देखा है कि सामान्यतः अभियोगके वकीलतक धारा १२४–ए के मामलोंमें इस तथ्यको नहीं देखते कि हिंसाके लिए उत्तेजना अथवा हिंसात्मक तरीकोंकी वकालत करना ही धारा १२४–ए के अन्तर्गत अपराधका एक आवश्यक अंग नहीं है। धारा १२४-ए के अन्तर्गत किसी अपराधके लिए इतनाभर आवश्यक है कि अभियुक्त अपने भाषण से, लेखसे अथवा चिह्न आदिसे घृणा, तिरस्कार या उत्तेजना उत्पन्न करनेका प्रयत्न करे अथवा वह ब्रिटिश भारतमें कानूनसे स्थापित शासनके विरुद्ध असंतोष जाग्रत करनेकी कोशिश करे।

"...धारा १२४-ए की व्याख्याओंको ध्यानमें रखते हुए, जो कि अबसे पैंतीस वर्ष पूर्व सम्मुख रखी गयी थीं और जो अबतक मान्य हैं, मैं निम्नांकित अंशोंकी ओर विशेष रूपसे ध्यान दिलानेकी चेष्टा करूँगा। यदि सरकार तिलकके मामलेमें इच्छाके विरुद्ध मूल विदेशी सत्ताके 'आवास' शब्दको धारा १२४-ए के अन्तर्गत

ले सकती है तो वर्तमान भाषण तो अति स्पष्ट रूपसे धारा १२४-ए के अन्तर्गत आ जाता है। मेरी अपनी रायमें यह मामला सीमा-रेखापर नहीं है। वक्ता यहाँ सरकारके किन्हीं विशेष दोषोंका उल्लेख नहीं कर रहा है। वह उससे छुटकारा पानेकी बात केवल इसलिए कह रहा है कि वह एक विदेशी शासन है। वर्तमान शासनको बार-बार अत्याचारी कहकर भर्त्सना की जाय, उसे जनताको पीड़ा देने-वाला कहा जाय और लोगोंको गुलाम बतलाया जाय,—मैं अनुमान नहीं करता कि सरकारकी ओरसे जनताका चित्त हटानेके लिए और उसकी राजभक्तिकी भावनाको दुर्बल करनेके लिए इससे अधिक और कौनसी बात कही जा सकती है? ऐसे वक्तव्य, जो किन्हीं विशेष अधिकारियोंपर नहीं अपितु शासनके ऊपर अत्याचार और दमनका दोष मढ़ते हैं, स्पष्ट रूपसे उसके खिलाफ़ असंतोष भड़काते हैं। वे असंदिग्ध रूपसे तिलकके फैसलेके अन्दर आ जाते हैं। यदि चालान किया जाता है; सम्राट् वकील यदि यह समझते हैं कि भाषणके लिए यह आवश्यक नही है कि वह हिंसाका समर्थन करे ही और यदि वे तिलकके मामलेके फैसले तथा उन अधिकारी व्यक्तियोंके, जिन्होंने उस मामलेमें सिद्धान्तोंको स्पष्ट करके सामने रखा, दृष्टिकोणकी कद्र करते हैं तो धारा १२४-एके अन्तर्गत एक खुला मामला कायम करनेमें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। निस्संदेह अधिकारी पूरे भाषण को पढ़ लेनेकी बात कहेंगे परन्तु यहाँ तो पूरे भाषणमें ही श्रोताओंके मनपर यह प्रभाव डालनेकी कोशिश की गयी है कि वर्तमान विदेशी शासन एक शाप है, तथा शासन अत्याचार और दमनका अपराधी है। हिन्दुओं तथा मुसलमानोंका यह कर्त्तव्य है कि वे इस प्रकारके शासनसे छुटकारा पानेके लिए एक हों और अपनेको दासत्वसे मुक्त करें। भाषणको आद्योपान्त, अच्छी तरहसे पढ़ लिया गया है। पूरे व्याख्यानमें एक ही प्रधान स्वर व्याप्त है कि विदेशी शासन अर्थात् वर्त-मान सरकार एक शापके तुल्य है जिसने जनताको दास बना रखा है। हिन्दू और मुसलमानोंको ऐक्य करके उससे अपनेको मुक्त करना चाहिए।

"अभी यह कह सकना सम्भव नहीं है कि अपराध सिद्ध होनेपर दोषीको क्या दण्ड दिया जायगा परन्तु जहाँ अदालतको इस तथ्यपर विचार करनेका अधि-कार है कि भाषणमें हिंसाकी उत्तेजना नहीं दी गयी, वही समान रूपसे उसे इस बातपर भी विचार करना चाहिए कि शत्रुताकी ऐसी भावना फैलानेका प्रभाव भाषणकर्त्ताकी अपनी स्थितिपर निर्भर करता है। साथ ही वह उन परिस्थितियों-पर भी अवलम्बित है जिनमें वह भाषण किया गया है।....

"प्रस्तुत भाषण एक ऐसे प्रभावशाली व्यक्तिके द्वारा किया गया है जिसकी

रिहाईके लिए आग्रह किया जाता रहा है और जिसके लिए लोग व्यग्र रहे हैं। इस सभामें बहुत बड़ा जनसमुदाय एकत्रित था तथा उसकी अध्यक्षता प्रान्तके एक प्रभावशाली व्यक्तिने की थी। अध्यक्षने अपने भाषणमें यह कहा कि पटनाकी जनता उनके (खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके) दर्शनके लिए बड़ी उत्कंठित रही है। जिस समय यह भाषण हुआ उस समय एक हलचल थी और वातावरणमें एक अशान्ति फैली हुई थी।

"इस भाषणके लिए नाम मात्रका अथवा साधारण दण्ड नहीं दिया जाना चाहिए। तिलक और नेहरूके मुकदमोंमें उनको कठोर दण्ड दिया गया था। उनके भाषणोंमें भी जनताको हिंसाके लिए उत्तेजित नहीं किया गया था और मुझे स्मरण है कि नेहरूके भाषणमें तो लोगोंको अहिंसक बने रहनेके लिए कहा गया था।"

भारत-सरकारने स्थानीय सरकारोंको यह गुप्त गश्ती चिट्ठी भेजी :

"ज्ञात हुआ है कि हजारीबाग जेलसे अपनी रिहाईके तुरन्त बाद ही खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ और डॉ० खान साहबने पटनामें एक विशाल जन-सभाको सम्बोधित किया। इस सभाकी जो सूचना हमें प्राप्त हुई है उससे पता चलता है कि इन वक्ताओंके भाषणोंका उपस्थित जन-समुदायपर एक गहरा प्रभाव पड़ा है। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके भाषणमें दासता, अत्याचार और विदेशी शासनके शापके उल्लेख किये गये हैं। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने दासत्वसे अथवा 'विदेशी शासन' के शापसे मुक्त होनेके लिए हिंसात्मक उपायोंका समर्थन नहीं किया लेकिन हिंसाको उत्तेजना या हिंसात्मक प्रणालीके पक्षका समर्थन ही धारा १२४-एके अन्तर्गत अपराधका एक आवश्यक अंग नहीं है। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने शासन का उद्भव विदेशी होनेके कारण ही उसका विरोध करते हुए उसे अत्याचारी एवं दमनकारी बतलाया है और कहा है कि वह जनताको गुलाम बनाये हुए है। उन्होंने हिन्दुओं और मुसलमानोंसे यह आग्रह किया है कि इस सरकारसे छुटकारा पानेके लिए एक हो। इस परिपत्रके द्वारा स्थानीय सरकारोंको यह सूचित किया जाता है कि यह अपराध स्पष्ट रूपसे भारतीय दंड संहिताकी धारा १२४–एके अन्तर्गत आ जाता है।

"यह तथ्य भारत-सरकारकी जानकारीमें है कि स्थानीय शासनने इस मामले-में चालान कायम करनेकी स्वीकृति नहीं दी है। वह उसकी इस बातसे सहमत है कि वक्ताने जेलसे छूटनेके तुरन्त बाद यह भाषण किया है और उसमें प्रकट अथवा प्रच्छन्न रूपसे हिंसाका समर्थन नहीं किया गया है इसलिए इस सम्बन्धमें अभियोग

कायम करना आवश्यक नहीं समझा गया। साथ ही यह भी स्पष्ट है कि यदि इस तरहके भाषणोंकी शृंखला चलती है तो उसके परिणाम असंदिग्ध रूपसे खतरनाक होंगे, इसलिए भारत-सरकारने यह विचार किया है कि स्थानीय शासन इस सम्बन्धमें कदम उठाये। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ तथा डॉ० खान साहब जो भी भाषण करें उसको सावधानीके साथ पूरा लिपिबद्ध कर लेना चाहिए और यदि उनका कोई भाषण भारतीय दंड संहिताकी धारा १२४-एके अन्तर्गत आ जाता है तो शासनको चालानकी कार्यवाही तत्काल करनेमें कोई हिचक नहीं होनी चाहिए। स्थानीय शासकोंके लिए भारत-सरकारका निर्देश अपेक्षित नहीं है और वे इस कार्यको कर सकते हैं, जैसा कि जवाहरलाल नेहरूके मामलेमें हुआ। फिर भी यदि इसकी सूचना शीघ्र भारत-सरकारको मिल जाती है तो उसे इससे प्रसन्नता होगी। अभियोग चलाया जाय अथवा नहीं, इन दोनों व्यक्तियोंके प्रत्येक भाषणका पूर्ण विवरण भारत-सरकारके पास पहुँच जाना चाहिए।"

३० अगस्तको पुलिसने सूचित किया, 'खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ आज सवेरे गया चले गये जहाँ कि वे आज सायं किसान सम्मेलनकी अध्यक्षता करेंगे।' बादमें उसने लिखा, '२ सितम्बरको उन्होंने इलाहाबादकी एक सभामें भाषण किया जिसकी अध्यक्षता पुरुषोत्तमदास टंडनने की। जिस समय सभाकी कार्यवाही चल रही थी, उसी समय पानी बरसने लगा लेकिन श्रोतागण खान-बन्धुओंके भाषण सुननेके लिए जमे बैठे रहे। इस भाषणमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने कहा, "सीमा-प्रांतका एक बालकतक जानता है कि भारत उसका अपना देश है। एक पठान बालकने किसी अंग्रेजको देखा तो वह तुरंत बोल उठा, 'अरे, तुम अभीतक यहाँ हो?' सीमा-प्रान्तके लोग यह अनुभव करते हैं कि यह देश उनका है और उनको इसपर शासन करना चाहिए। यही भावना मैं यहाँ भी जाग्रत करना चाहता हूँ।"

खान-बन्धु गांधीजीके सान्निध्यमें अपना समय बितानेके लिए इलाहाबादसे वर्धा चले गये। उन्होंने वहाँ जमनालालजी बजाजका आतिथ्य ग्रहण किया। ४ सितम्बरको खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने निम्नांकित वक्तव्य प्रसारित किया :

"मैं यह देख रहा हूँ कि कांग्रेसके इस वर्षके बम्बई अधिवेशनके अध्यक्ष पदके लिए मेरा नाम प्रस्तावित किया जा रहा है। इसमें मित्रोंका जो उद्देश्य निहित है उसके प्रति मेरे मनमें समादर है। निस्संदेह उनकी इच्छा मुझको; एक मुसलमानको संकेत रूपमें यह सम्मान देकर हिन्दू-मुस्लिम एकताके कारणको आगे बढ़ानेकी है। इसमें भी सन्देह नहीं है कि मेरे प्रान्तने भारतकी स्वाधीनता-

की लड़ाईमें जो त्याग किये हैं, उनके प्रति देशकी गुणग्राहकता व्यक्त करनेकी भी उनकी इच्छा है और इसी निमित्त मुझे यह सम्मान प्रदान किया जा रहा है।

"परन्तु मुझे यह घोषित करनेकी अनुमति दीजिए कि जैसा मैं बार-बार कह चुका हूँ, मैं एक विनम्र सेवक मात्र हूँ और मेरी आकांक्षा यह है कि मैं अपने दिवस एक जनरलकी हैसियतसे नहीं अपितु एक स्वयंसेवकके रूपमें पूरे करूँ।

"मेरे मनमें यह भावना तभीसे सबसे ऊपर रही है जबसे कि मुझे भारतीय स्वाधीनताके संग्राममें एक स्वयंसेवकके रूपमें भर्ती होनेका सौभाग्य मिला है। इसके अलावा एक और बात है, वह यह कि एक स्वयंसेवक अथवा सिपाहीकी हैसियतसे भी मेरी सेवाएँ इस सम्मानके लिए अति अल्पकालीन रही हैं।

"इन कारणोंसे मैं उन लोगोंसे, जिन्होंने मेरा नाम प्रस्तावित करनेकी कृपा की है, पूर्ण रूपसे निवेदन करूँगा कि वे इस प्रस्तावको वापस लेकर मुझे आभारी करें। फिर भी मैं इस ओर संकेत कर देना चाहता हूँ कि मेरे प्रदेशको ठोस मदद देनेके और भी तरीके हो सकते हैं।"

ख़ान-बन्धु वर्धामें गांधीजीसे तीन सालके बाद मिले थे। उनके पास गांधीजी-से चर्चा करनेकी बहुत सी बातें थीं। वे उनके निकट रहते थे, साथ भोजन करते थे और नित्य उनकी प्रार्थना सभामें सम्मिलित होते थे। ख़ान-बन्धु आश्रम-वासियोंके बीचमें रहे। उन्होंने उनके भोजनालयमें, जहाँ सबका इकट्ठा खाना बनता था, भोजन किया। प्रायः शामको वे गांधीजीकी प्रार्थना-सभामें कुरानकी आयतें पढ़ते थे। कभी-कभी ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ अपने साथ प्रार्थनाके मैदान-में चश्मा ले जाना भूल जाते थे। तब वे गांधीजीसे उनका चश्मा मांगते थे। गांधीजी अपना चश्मा उतारकर उनकी ओर बढ़ा देते थे। ख़ान-भाइयोंकी टह-लनेकी आदत थी। वे आश्रमवासियोंके साथ मैदानमें घूमने निकल जाते थे। वहाँ वे खेतोंमें पत्थर इकट्ठे करते थे और उनको लाकर महिला आश्रममें जमा कर देते थे ताकि वे भविष्यमें कभी इमारतमें काम आयें। वापस लौटनेपर वे बहुधा गांधीजीकी उनके पैर धुलानेमें मदद करते थे। साधारण रूपसे यह काम कस्तूर बा किया करती थीं। गांधीजी और ख़ान-बंधु एक-दूसरेको अत्यधिक चाहने लगे।

गांधीजीने २४ सितम्बरको मीरा बेनको लिखा, "दोनों भाइयोंकी मित्रता मुझे ईश्वरके एक उपहारसी लगती है। यूरोपमें रहते हुए आपको प्राप्त होने-वाला शायद यह मेरा अंतिम पत्र होगा। ख़ान साहब अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ इन दिनों मेरे पास हैं। उनकी पुत्री उनके भाईकी पत्नीके साथ वहाँ रह रही हैं।

उनकी यह इच्छा है कि उनकी लड़की वापस चली आये और अपनी शिक्षा यहाँ आश्रममें ले। वे यह चाहते हैं कि वह आपके साथ भारत चली आये। यदि आप उससे मिलें; मेरा मतलब यह कि यदि समय रहते आपको मेरा यह पत्र मिल जाय तो आप उस बालिकाको अपने साथ ही लेती आइए।"

इस पत्रको बीचमें ही रोक लिया गया। इस पत्रकी एक प्रतिलिपि गृह-विभागके मि० एम० जी० हैलेटको भेजते हुए मि० बैम्फोर्डने लिखा, "पहले असहयोग आन्दोलनमें गांधीने अली-बन्धुओंको बोतलमें भरा था, अब वे खान-बन्धुओंके साथ वही कार्य कर रहे हैं। सौभाग्यसे इन लोगोंका प्रभाव केवल स्थानीय है।" मि० हैलेटने अपनी सरकारी फाइलमें यह टिप्पणी लिखी :

"मेरा विचार है कि इस पत्रकी एक प्रतिलिपि हमें पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तको भेज देनी चाहिए। जिस लड़कीका इस पत्रमें उल्लेख किया गया है उसे सरकारकी ओरसे निर्वाह-भत्ता दिया जा रहा है। इस भत्तेका मुख्य प्रयोजन यह है कि उसे यहाँके दूषित वातावरणसे दूर रखा जाय, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे प्रयत्न निष्फल गये।'

जब एक अधिकारीने उनको यह बतलाया कि डॉ० खान साहबकी पत्नी और पुत्रको तो कुटुम्ब-भत्ता दिया जा रहा है परन्तु खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँकी लड़कीको नहीं, तब मि० हैलेटने सीमा-प्रान्तकी सरकारके सचिव (सेक्रेटरी) को लिखा : "इस पत्रके साथ मैं बीचमें ही रोके गये एक पत्रकी प्रतिलिपि संलग्न कर रहा हूँ जिसमें कि आपके शासनकी कुछ दिलचस्पी हो सकती है। यदि वह लड़की (खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँकी पुत्री) वहाँसे ले आयी जाती है तो उसके लिए यह एक दयनीय स्थिति होगी परन्तु हम लोग इस मामलेमें कुछ कर सकेंगे, ऐसा सम्भव नहीं लगता। मैं समझता हूँ, उसे कोई भत्ता नहीं दिया जा रहा है।"

पंजाबके धर्मोन्मादसे ग्रस्त एक समाचारपत्रने खान-बन्धुओंके ऊपर न केवल हिन्दू-मुस्लिम एकताका पक्ष लेनेके लिए आक्रमण किया अपितु शिक्षाके लिए अपने बालकोंको इंगलैण्ड और अमेरिका भेजनेके लिए उनकी मुस्लिम धर्मकी आस्थापर भी सन्देह प्रकट किया।

एक बार गांधीजी डा० खान साहबकी अंग्रेज पत्नीके सम्बन्धमें यों ही कुछ बातें पूछने लगे। उन्होंने पूछा, "क्या उन्होंने इसलाम-धर्म स्वीकार कर लिया है ?" खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ बोले, "आपको यह सुनकर आचर्श्य तो होगा परन्तु मैं स्वयं भी नहीं जानता कि वे मुसलमान हैं या ईसाई ? मैं केवल इतना

जानता हूँ कि उनका धर्म-परिवर्तन नहीं हुआ और उनका जो भी धर्म हो, उसे पालनेकी उनको पूरी स्वतंत्रता है। मैंने उनसे इस सम्बन्धमें कभी कुछ नहीं पूछा और भला मैं पूछता भी क्यों ? क्या पति और पत्नी साथ रहते हुए अपने-अपने धर्मोंका दृढ़ताके साथ पालन नहीं कर सकते ? विवाहके कारण किसीके धार्मिक विश्वासोंमें परिवर्तन क्यों किया जाय ? एक विनोदपूर्ण बात है। मेरे भाईके लड़केने, जिसने अभी लन्दन मैट्रीकुलेशनकी परीक्षा उत्तीर्ण की है और जो आगे ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालयमें प्रवेश लेनेका विचार कर रहा है, अपने पिछले पत्रोंमेंसे एकमें मुझे लिखा है कि उसके साथी उसे ईसाई समझते हैं और वह स्वयं भी नहीं जानता कि वह उनसे क्या कहे ?"

'ठीक है' गांधीजी बोले, "आपने अपने भाईकी पत्नीके सम्बन्धमें जो कुछ बतलाया उससे मुझे आश्चर्य तो हुआ ही, प्रसन्नता भी हुई। लेकिन इस मामलेमें अन्य मुसलमान क्या सोचते हैं ? इस सम्बन्धमें उनके विचार आप जैसे तो नहीं होंगे।"

"नहीं, मैं जानता हूँ कि अधिकतर लोगोंके विचार ऐसे नहीं हैं।" खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने कहा, "लेकिन उनके स्वयंके बारेमें यह कहा जा सकता है कि एक लाख व्यक्तियोंमेंसे एक भी इस्लामकी सच्ची भावनाको नहीं समझता। हमारे पारस्परिक झगड़ोंमेंसे अनेकके मूलमें यह अज्ञान है। उभय पक्षों; हिन्दू और मुसलमानोंने, जिनका स्वार्थ सधा उन्होंने, आवेश और पूर्वाग्रहकी लपटोंको हवा दी। हम पतनके कितने गहरे गर्तमें चले गये हैं ! सन् १९३० में जब मैं गुजरात जेलमें था तब मैंने यह निश्चय किया कि मैं अपने हिन्दू-बन्धुओंसे सम्पर्क बढ़ानेमें अधिक समय दूंगा और हम लोगोंने यह निश्चय किया कि एक-दूसरेको और भी अच्छी तरह समझनेके लिए गीता और कुरानकी कक्षाएँ चलायी जायँ। जिन व्यक्तियोंको विषयका पर्याप्त ज्ञान हो और जिनका उनपर अधिकार हो वे ही सज्जन इन ग्रन्थोंका अध्ययन करायें। कुछ समयतक तो ये कक्षाएँ चलती रहीं परन्तु अन्तमें अध्ययन करनेवालोंके अभावमें उनका क्रम टूट गया। गीताकी कक्षामें मैं ही अकेला विद्यार्थी रह गया और इसी प्रकार कुरानकी कक्षामें भी केवल एक शिष्य। इन मित्रका नाम इस समय मुझे स्मरण नहीं है। लोगोंने इस प्रयासको पसन्द नहीं किया और परिणाम यह हुआ कि हम दोनों उनके तानोंके शिकार बन गये। वे मुझे 'हिन्दू' और उनको 'मुसलमान' कहकर व्यंग्य करने लगे।

"परन्तु मैंने अपना गीताका क्रम चालू रखा। मैंने उसका तीन बार अध्ययन किया। मेरे विचारमें हम यह नहीं समझ पाते कि सारे धर्म अपने अनुयायियोंको

पर्याप्त प्रेरणा देनेमें समर्थ हैं और हमारी यह असफलता ही हमारे झगड़ोंका मूल कारण है। कुरान शरीफ़ कहता है कि ईश्वरने सारे राष्ट्रों और सारे समाजोंमें अपने सन्देशवाहक भेजे हैं और ऐसे लोग भी जिन्होंने उनको निरन्तर सावधान किया है। वे उनके अपने पैगम्बर हैं। वे सब 'अहले किताब' (ग्रन्थ-पुरुष) हैं। हिन्दुओंमें भी यहूदियों और ईसाइयोंसे कम 'अहले किताब' नहीं हुए।"

"परन्तु यह तो एक परम्परावादी मुसलमानका मत नहीं है।" गांधीजीने कहा :

"मैं यह जानता हूँ। मुसलमानोंको अपने कुरान शरीफ़में हिन्दुओं और उनके ग्रन्थोंका उल्लेख नहीं मिलता। इसका कारण यह है कि कुरानमें बहुत विस्तार-युक्त सूची नहीं बल्कि दृष्टान्त दिये गये हैं। उसमें केवल सिद्धांत सामने रखे गये हैं। उदाहरणार्थ, जिन्होंने ग्रन्थोंको प्रेरणा प्रदान की है वे 'अहले किताब' की श्रेणी में आते हैं। मैं इस बारेमें पूरी तरहसे निश्चित हूँ कि मूल पाठ उन सबको समाहित करता है जिन्होंने अपने विश्वास और आचारको क्रियान्वित करनेके लिए ग्रन्थोंको प्रेरणा दी है। मैं तो इससे भी आगे बढ़कर यह कहनेको तैयार हूँ कि सारे धर्मोंका मूल सिद्धांत एक है। भिन्नता उसके ब्यौरोंमें है और इसका भी कारण है। प्रत्येक धर्मका जिस भूमिमें उद्भव होता है वह उसीके रङ्ग और स्वाद को ग्रहण करता है।

"हम इसका एक अत्यंत सरल उदाहरण ले लें। इस्लाम और हिन्दूधर्म दोनों-में स्वच्छताके ऊपर अत्यधिक बल दिया गया है। स्वच्छताके प्रश्नपर न उनमें कोई मतभेद है और न वह सम्भव है फिर भी उनके अभ्यास अथवा आचरणमें अन्तर पड़ गया। इस्लाममें दांतोंकी स्वच्छताके लिए सूखे ब्रशको काम लानेके लिए कहा गया है और हिन्दू-धर्ममें हरी, ताज़ी दातुनको उत्तम बतलाया गया है।

"हिन्दू धर्ममें नित्य स्नान करने अथवा अधिक बार स्नान करनेकी महिमा है जब कि इस्लाममें सप्ताहमें कमसे कम एक बार पूर्ण स्नान करनेपर बल दिया गया है। यह बात क्या सूचित करती है? इससे पता लगता है कि हिन्दू-धर्मका प्रारम्भ गंगाके मैदानी क्षेत्रमें हुआ जहाँ कि जलका कोई अभाव नहीं है और इस्लामका प्रादुर्भाव उस रेगिस्तानी भूमिमें, जहाँ कि कभी-कभी कई दिनोंतक पानीकी एक बूँद मिलना भी कठिन हो जाता है। परन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं है कि इस्लाम मुसलमानोंके नित्य स्नान करनेका अथवा उनके ताज़ी हरी दातुनके प्रयोग करनेका विरोधी है। विविध धर्मोंमें व्यक्तियोंके व्यवहारमें जो अन्तर दृष्टिगोचर होता है वह इसके अतिरिक्त और कुछ सूचित नहीं करता कि

प्रत्येक धर्म एक विशिष्ट भूमिमें जन्मा है। मैं किसी ऐसे कालकी कल्पना नहीं कर सकता जब कि सारे विश्वमें केवल एक ही धर्म होगा। प्रत्येक समाज अपने निजके धर्मपर आश्रित होता है और इसका कोई अर्थ नहीं है कि एक समाज दूसरे समाजके विश्वासमें व्यवधान डालनेकी चेष्टा करे।"

उनकी रायमें फिर भी इसका अर्थ यह नहीं था कि समाज अपने बीचमें एक ऐसी विभाजन रेखा खींच लें कि एकका दूसरेसे कोई सम्बन्ध ही न रह जाय। उन्होंने कहा, "जब हम प्रत्येक स्टेशनपर 'हिन्दू पानी', 'मुसलिम पानी'; 'हिन्दू चाय', 'मुसलिम चाय' की पुकार सुनते हैं तो हमारी जान आफ़तमें पड़ जाती है। एक हिन्दू अथवा एक मुसलमानको, एक-दूसरेके पात्रसे पानी लेकर पीनेमें क्यों आपत्ति होनी चाहिए, यदि वह जल स्वच्छ है ?"

फिर भी इस मामलेमें या अन्य किसी मामलेमें किसीके ऊपर दबाव डालनेका कोई प्रश्न नहीं उठता। सन् १९२२ के दिनोंकी एक घटनाका उल्लेख करते हुए, जब कि वे डेरा गाज़ी ख़ाँ जेलमें थे, अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने महादेव देसाईसे कहा, "मेरे साथके कैदी शाकाहारी भोजन किया करते थे। उनकी भावनाओंपर किसी प्रकारकी ठेस न लगे इसलिए छः माससे भी अधिक समयतक मैंने मांस नहीं खाया, परन्तु इसका मेरे स्वास्थ्यके ऊपर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। डाक्टरोंने मुझसे बहुत ज़िद की कि मैं मांस खाना शुरू कर दूं। उन्होंने यह सलाह दी कि यदि मैं अपने सारे दांतोंको नहीं खोना चाहता तो मुझे मिला-जुला भोजन करना चाहिए। मैं बड़ी मुश्किलसे इसपर तैयार हुआ। अब यह प्रश्न सामने आया कि मांस पकाया कहाँ जाय ? जेलके अधीक्षकने मुझसे कहा कि वह वहीं बनेगा जहाँ कि सबकी रसोई पकती है। मैंने कहा कि ऐसी स्थितिमें मैं मांस खाना छोड़ दूंगा परन्तु अपने साथियोंकी ग्रहण-शक्तिपर कोई आघात न पहुचाऊँगा। अधीक्षक भला आदमी था, उसने मेरी बातपर मांस पकानेके लिए एक अलग रसोईघर दे दिया। परन्तु मेरे कुछ सिख और हिन्दू मित्रोंको मेरा मांसाहार सह्य न हुआ। हमको एक-दूसरेकी भावनाओंका खयाल रखना चाहिए। उसके बिना हम हिन्दू-मुस्लिम एकताके लक्ष्यको नहीं पा सकते।

"मैंने लोगोंको आपके हरिजन आन्दोलनके सम्बन्धमें भी शंकाएँ प्रकट करते हुए सुना है महात्माजी !' खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने एक दिन अपनी चर्चामें गांधीजीसे कहा, "यहाँतक कि आपके यरवडा पैक्ट और आपके चौबीस दिनोंके उपवासके सम्बन्धमें भी लोगोंको ग़लतफ़हमी है। आपके बारेमें हमसे यह कहा गया है कि आप साम्प्रदायिक हो गये हैं। हमने साहसपूर्वक इस प्रकारकी आलो-

चनाका अनुमोदन करना अस्वीकार कर दिया। आपका तो वह एक विशुद्ध मानवतावादी आन्दोलन था। एक धर्मके अनुयायियोंको अपने स्वतःके धर्मावलम्बियोंके साथ तो किसी प्रकारके छुआछूतका व्यवहार करना ही नहीं चाहिए। आपको याद होगा, मैंने आपको बधाई देनेके लिए जेलसे तार भेजा था।"

महादेव देसाईने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको एक उन्मादी साप्ताहिक पत्रकी कतरन दिखलायी जिसमें कि किसी मुसलमान द्वारा गांधीजीके उपवासकी आलोचना की गयी थी। महादेव देसाईने उनसे पूछा कि क्या जैसा यह लेखक प्रतिपादित करता है, इस्लाममें केवल उसी प्रकारके उपवासको स्वीकृति दी गयी है जैसा कि परम्परासे चलता आ रहा है और जिसमें दिनके समय सब प्रकारका भोजन-पान वर्जित होता है और सूर्यास्त तथा दिन उगनेके बीचके समयमें उपवासको तोड़ा जा सकता है? "यह सब व्यर्थ बात है।" खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने कुछ रोषमें कहा, "पिछले अगस्तमें जब गांधीजीने उपवास किया था तब मैंने भी पूरे सात दिनोंतक पूर्ण उपवास किया था। उन दिनोंमें शामको केवल नमक मिला हुआ पानी लेता था। यह कहना इस्लामका मजाक उड़ाना है कि मुसलमानोंकी भीड़ जैसा उपवास रखा करती है, वही उसका सच्चा तरीका है। स्वयं पैगम्बर [मुहम्मद साहब] को भोजनकी आवश्यकता न थी, क्योंकि जैसा उन्होंने स्वयं कहा है, अल्लाह उनको आत्मिक भोजन भेजा करता था। उसे सामान्य मनुष्य नहीं पा सकते क्योंकि उसके लिए जिस विश्वासकी आवश्यकता है वह उनमें नहीं है। इस पत्रकी आलोचना उस व्यक्ति जैसी है जिसने कि सप्ताहमें एक दिन मौन रखने और गीता पढ़नेके कारण मुझे हिन्दू क़रार देनेकी चेष्टा की थी। पंजाबके कुछ उर्दू समाचार-पत्र मेरे विरुद्ध सब प्रकारके आक्षेप लगाते हैं और उनको फैलाते हैं। एक पत्रने तो ऐसा कोई मौका न छोड़ा जब कि पहले मुझे इस्लामका शत्रु न बतलाया हो।"

"किसी भी परम्परानिष्ठ मुसलमानकी अपेक्षा वे कहीं अधिक सच्चे मुसलमान हैं।" महादेव देसाईने लिखा है, "जहाँतक मैं समझता है, उन्होंने कभी कोई नमाज नहीं छोड़ी और अनेक तथाकथित परम्परा-निष्ठ मुसलमानोंकी अपेक्षा उनमें बन्धुत्वकी भावना कहीं अधिक मौजूद है। बड़े भाई [डॉ० खान साहब] ने अनेक वर्ष विदेशमें बिताये हैं। जैसा कि उनका दावा है उनके मित्रोंमें विभिन्न राष्ट्रों और मतोंके लोग हैं। उनमें व्यक्ति चुननेकी अद्भुत क्षमता है परन्तु जहाँ तक उनकी धार्मिकताका प्रश्न है, उन्हें अपने पिताकी धार्मिक भावना मानों उत्तराधिकारमें मिली है; अपने छोटे भाईसे किसी प्रकार भी कम नहीं। यों वे

बहुधा मन-बहलावके लिए कह दिया करते हैं, 'मेरे भाई मेरी ओरसे भी नमाज़ पढ़ लिया करते हैं।' मेरी दृष्टिमें छोटे भाईकी सबसे महान वस्तु उनकी अपनी आध्यात्मिकता है अथवा इससे भी अधिक इस्लामकी सच्ची भावना, अर्थात् उनका ईश्वरके समक्ष विनत होना; समर्पण करना है। उन्होंने गांधीजीके समग्र जीवन-को इसी गजसे मापा है और उनका गांधीजीकी ओर झुकाव मात्र इसी कारणसे हुआ है। वे गांधीजीके नाम या प्रसिद्धिसे आकर्षित नहीं हुए, न उनके राजनीतिक कार्यसे तथा न उनकी विद्रोह अथवा क्रांतिकी भावनासे। गांधीजीके पवित्र, तपस्वी जीवन तथा उनकी आत्म-शुद्धिपर बल देनेकी प्रवृत्तिने खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँको अपनी ओर सबसे अधिक खींचा है। गांधीजीका समग्र जीवन, सन् १९१९ से आगे आत्म-शुद्धिका एक स्थायी प्रयास रहा है। मुझे ऐसे बहुतसे मुसलमानोंकी मित्रताका सौभाग्य प्राप्त है जो इस्पातकी भाँति खरे हैं और जो हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिए सर्वस्व निछावर करनेको तैयार हैं परन्तु उनमेंसे एक भी ऐसा नहीं है जिसमें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँकी स्फटिक जैसी निर्मलता तथा जीवनकी कठोर तपशीलताके साथ ही हद दर्जेकी सुकुमारता और ईश्वर की जीवंत श्रद्धाका समावेश हुआ हो। महान् हो या कमसे कम उनके समकक्ष ही हो।"

"खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँ एक सिपाही हैं।" महादेव देसाईने लिखा है, "ऐसे सिपाही, जिनके आदेशका पालन करनेके लिए हजारों-लाखों सिपाही तत्पर रहते हैं और उनकी आज्ञाओंको पालते हैं। छल-छिद्र और आडम्बर उनको व्याकुल करता है। ऐसा नेतृत्व, जिसमें महानतम सेवाके अतिरिक्त अन्य बातोंका समावेश हुआ हो, उनकी समझमें नहीं आता। निर्माणात्मक कार्यक्रमके लिए वे नवदीक्षित व्यक्ति नहीं हैं। वे उन सब कार्यक्रमोंमें कोई रुचि नहीं लेते जिनमें दिखावा होता है, सर्जनात्मक कार्य नहीं। 'हमारे प्रदेशकी ओर बहुतसे जुलाहे लोग थे परन्तु अब वे धीरे-धीरे कम होते जा रहे हैं। यदि मैं चरखेका सन्देश अपने जिलोंमें फैला सका तो मैं अपनेको अत्यन्त आभारी समझूँगा, लेकिन जब तक मैं स्वयं कातना न सीख लूँ और नियमित रूपसे न कातूँ तबतक मेरे लिए चरखेकी बात करनेका कोई अर्थ नहीं है।' वे बोले और फिर वे कातना सीखने-के लिए बैठ गये। तीन-चार दिनमें ही वे अच्छा, ऐंठा हुआ सूत कातने लगे।

समाजवादी सिद्धान्तको लेकर जो भी व्यक्ति उनके पास तर्क करने आता, उससे वे कहते थे, "गांधीजीसे सच्चा समाजवादी मुझे कोई और बतलाइये। हम लोग उसके पीछे चलेंगे।" और उनकी दृष्टि पिछले दिनोंकी ओर घूम जाती

थी जब कि उनके ज़िलोंमें एक नियत समयपर जोतों या चकोंका वितरण हुआ करता था। "खानगीरी, जो जमींदारीका ही एक दूसरा नाम है, अंग्रेजोंकी उत्पत्ति है।" जोतोंके पुनर्वितरणपर चर्चा करते हुए उन्होंने मुझसे कहा। उनकी इस बातको मैं पूरी तरहसे न समझ सका। उन्होंने इसे अधिक स्पष्ट किया, "इस तरहकी खानगीरी या ज़मींदारीको इसलिए प्रारम्भ किया गया कि वह नये स्थापित शासनको सहारा देनेके लिए खम्भेका काम करे। मेरे दादाको एक खान बनाकर सौ एकड़ भूमि दी गयी थी, इस बातके बावजूद मैं आपसे यह कह रहा हूँ। यह सन् १८४८ की, ब्रिटिश शासनकी स्थापनाके लगभग पचीस वर्ष बादकी बात है। इससे पहले हमारे यहाँ खान लोगोंका एक जिरगा हुआ करता था। वह सारे गाँवोंकी और उन गावोंमेंसे प्रत्येकके भूमिक्षेत्रकी गणना करता था और फिर पर्चियाँ डालता था। प्रत्येक पचीस सालके बाद पूरी घटनाकी आवृत्ति होती थी। सब लोगोंके पास, जिनमें खान भी शामिल थे, वस्तुतः एक ही आकारके चक रहते थे और इस पुनर्वितरणकी पद्धतिके अन्तर्गत समस्त जन-संख्या एक गाँवसे बदलकर दूसरे गाँवमें पहुँच जाती थी। मैं इससे सच्चे समाज-वादकी कल्पना नहीं कर सकता।"

खान-बन्धुओंकी बातचीतके दौरान बहुत बार उनके विचार उन पहाड़ियों, उस नदी और उस छोटेसे टापूकी ओर वापस भाग जाते थे जिसके ऊपर उन्होंने अपना-आश्रय स्थान बनाया था। वे यह स्वप्न देख रहे थे कि एक दिन गांधीजी वहाँ उनके अतिथि होंगे। 'यहाँ आपका आश्रम होगा, महात्माजी', उन्होंने कहा, 'मैं इससे अधिक शान्तिमय और सुन्दर स्थानकी बात सोच भी नहीं पाता। पेशावरकी समूची घाटी सब तरहके फलोंसे भरी-पूरी है। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि वहाँ आपका वज़न कई पौंड बढ़ जायगा।' वे अपने गन्नेके खेतों-की, अपनी गायोंके बढ़िया, मक्खनदार दूधको, जिसका कि केवल मक्खन बनता था और अपनी भैंसोंकी बातें करने लगे, जिनके दूधको वे और काममें लाते थे। 'लेकिन अब वे खेत कहाँ हैं और उनका क्या हो रहा है, यह हम भी नहीं जानते।' निर्वासनकी; घरसे बाहर रहनेकी एक खिन्नताके साथ उन्होंने कहा। गांधीजीके लिए यह एक तीक्ष्ण आत्मावलोकनका समय था। उनकी प्रवृत्तियों और शब्दोंने इस अफवाहको जन्म दिया कि वे कांग्रेसको बिलकुल छोड़ देनेका विचार कर चुके हैं। १७ सितम्बर १९३४ को गांधीजीने वर्धासे एक वक्तव्य दिया जिसमें उन्होंने इसकी पुष्टि की और कारण स्पष्ट किये :

"यह अफवाह कि मैंने कांग्रेससे अपने भौतिक सम्बन्ध पृथक् कर लेनेका

विचार किया है, सच थी। इसके आगे-पीछेकी सभी स्थितियोंपर पूर्ण रूपसे विचार करनेके पश्चात् मैंने एक सुरक्षित और दूरदर्शी मार्गको चुना है। मैंने सोचा है कि मैं कांग्रेसकी अक्तूबर महीनेकी बैठकसे पहले कोई आखिरी निर्णय न करूँ। मेरे निर्णय स्थगित करनेके विचारको एक अन्य आकर्षक विचार पीछेसे बल दे रहा है। मैं इससे अपनी धारणाकी सचाईका परीक्षण करना चाहता हूँ। मुझे यह लगने लगा है कि कांग्रेसका एक बहुत बड़ा बुद्धिप्रधान वर्ग मेरी कार्य-प्रणालीसे, मेरे विचारोंसे और उन विचारोंपर आधारित कार्यक्रमसे एक थकानका अनुभव करने लगा है। मुझे ऐसा प्रतीत होने लगा है कि मैं कांग्रेसके सहज विकासके लिए एक सहायक तत्त्व नहीं बल्कि एक बाधा बन गया हूँ।

"यदि मुझे यह परीक्षण करना है कि मेरी निजकी धारणा सत्य है अथवा नहीं तो मुझे जनताके समक्ष वे समस्त कारण प्रस्तुत करना चाहिए जिनपर मेरी धारणा एवं मेरा कांग्रेससे पृथक् होनेका प्रस्ताव आधारित है।

"कांग्रेसने देशके सामने अपना जो कार्यक्रम रखा है, उसके अतिरिक्त मेरा निजका कोई कार्यक्रम नहीं है; और उसका वह कार्यक्रम है अस्पृश्यताका निवा-रण, हिन्दू-मुस्लिम एकता, पूर्ण नशाबन्दी, खादीके लिए हाथसे सूत कातना, ग्रामीण उद्योगोंको नवजीवन देनेके लिए स्वदेशीका प्रचार तथा सात लाख गाँवों-का सामान्य रूपसे पुनर्गठन, जो कि हमारे देश-प्रेमकी भावनाको पूर्ण परितुष्टि दे सके।

"व्यक्तिगत रूपसे मैं भारतके किसी गाँवमें अपनेको समाधिस्थ कर देना चाहता हूँ। उसमें भी मैं सरहदका गाँव अधिक पसन्द कर रहा हूँ। यदि खुदाई खिदमत-गार वास्तवमें अहिंसावादी हैं तो वे अहिंसाकी भावना तथा हिन्दू-मुस्लिम एकता-को आगे बढ़ानेमें सबसे अधिक योगदान देंगे क्योंकि यदि वे मन, वचन और कर्म-से अहिंसामें विश्वास करते हैं और यदि वे हिन्दू-मुस्लिम एकताके सच्चे प्रेमी हैं, तो निश्चित ही हम उनके द्वारा इन बातोंको पूरा होते हुए देखेंगे, जिनकी कि इस देशको सबसे अधिक आवश्यकता है। अफ़गानोंकी धमकी, जिसका हमें इतना अधिक भय है, तब अतीतकी एक वस्तु बन जायगी। इसलिए मैं अपने निजके लिए इस दावेकी सचाईको परखना चाहता हूँ कि उन्होंने अहिंसाकी भावनाको आत्मसात् कर लिया है और उनका हिन्दू-मुसलमान तथा अन्य लोगोंकी एकतामें हृदयसे विश्वास है। मैं व्यक्तिगत रूपसे यह भी चाहता हूँ कि इस प्रकार या अन्य तरीकोंसे मैं उनतक चरखेका सन्देश पहुँचा दूँ। मैं कांग्रेसके भीतर रहूँ या बाहर, अपने विनम्र ढंगसे उसकी सेवा करना मुझे प्रिय लगेगा।"

जब खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँसे गांधीजीकी प्रस्तावित निवृत्ति और उनके वक्तव्यके सम्बन्धमें पूछा गया तो उन्होंने महादेव देसाईसे कहा : "मुझे उनके इस निर्णयको जानकर आश्चर्य नहीं हुआ। उनके निर्णयोंपर प्रश्न करना मुझे कभी सरल नहीं लगा क्योंकि वे अपनी सारी समस्याएँ ईश्वरपर डाल देते हैं और हमेशा उसकी आज्ञाओंको सुनते हैं। प्रत्येक महान सुधारक ऐसा ही होता है और प्रत्येक सुधारकके जीवनमें एक ऐसी स्थिति आती है जब कि उसे अपने अनुगामियोंको छोड़ना पड़ता है। उन लोगोंकी सीमाएँ और दुर्बलताएँ उसे कुचल नहीं पातीं और वह अपने विस्तीर्ण डैनोंसे लगातार ऊँचाईकी ओर उठता जाता है। परन्तु ऐसा करके वह अपनी सेवाओंकी पहुँच और गतिको सीमित नहीं करता बल्कि उन्हें बढ़ाता है। यह कुछ होते हुए भी मेरे पास नापका केवल एक ही पैमाना है और वह नाप ईश्वरके समक्ष अपनेको समर्पित करना है।"

गाँवोंमें कार्य

१९३४

वर्धामें सितम्बरमें कांग्रेस कार्यसमितिकी बैठक हुई। इस अवसरपर मौलाना आज़ादने बंगालके मुसलमानोंकी ओरसे सामान्य रूपसे और कलकत्ताके पेशावरी दूकनदारोंकी ओरसे विशेष रूपसे ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको आमंत्रित किया। उन्होंने कहा कि वे सब यह चाहते हैं कि आप निकट भविष्यमें कलकत्ता पधारें। ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने अपनी स्वीकृति दे दी परन्तु गांधीजी उनको वहाँ भेजने के लिए तैयार नहीं हुए। उन्हें यह आशंका थी कि कहीं सरकार ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको फिर गिरफ्तार न कर ले। मौलाना आज़ादके आग्रहपर किसी प्रकार गांधीजीने अपनी स्वीकृति दे दी। ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको गांधीजीसे विस्तारसे सारी हिदायतें लेनी पड़ीं कि वे वहाँ क्या कहेंगे और कैसे कहेंगे?

३० सितम्बर १९३४ को ख़ान बन्धुओंके सम्मानमें कलकत्ताके टाउनहॉलमें सार्वजनिक सभाका आयोजन किया गया जिसमें मौलाना आज़ाद, डॉ० विधान-चंद्र राय तथा बंगालके कई प्रतिष्ठित नेता उपस्थित थे।

सभाको सम्बोधित करते हुए ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने हिन्दू-मुस्लिम एकता पर बल दिया और कहा कि उनकी रायमें राजनीतिक स्वतंत्रताकी उपलब्धिके लिए वही सबसे प्रभावकारी शस्त्र है। जबतक हिन्दुस्तानके दो बहु-संख्यक समुदायोंके सार्वजनिक और राजनीतिक मत-भेद दूर नहीं हो जाते तबतक वे अपने लक्ष्यकी ओर बढ़नेमें समर्थ नहीं हो सकेंगे। किसी समय हिन्दुस्तान 'स्वर्ण-भूमि' कहलाता था। इस समय उसकी क्या दशा है? उसके निवासी नंगे हैं और भूखों मर रहे हैं। उनकी इस दुर्दशाका कारण है दासत्व और विदेशी प्रभुत्व। अंग्रेजोंने हिन्दुस्तानको तलवारके बलपर कभी नहीं जीता। इतिहास यह सिद्ध करता है कि उन्होंने उसे धोखे और चालबाजियोंसे लिया है। जातियोंकी पारस्प-रिक फूटने उनकी इस मामलेमें सहायता की। ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने अपने श्रोतागणका इस बातके लिए आवाहन किया कि वे केवल शेक्सपियर, बेकन, लेनिन और ट्राटस्कीकी रचनाओंको ही न पढ़ें बल्कि भारतीय साहित्य और दर्शनका भी अध्ययन करें।

अपने भाषणके निष्कर्षमें उन्होंने कहा कि अल्प-संख्यक समुदायोंके मनमें इन

दिनों यह भ्रांत धारणा जम गयी है कि जैसे ही ब्रिटिश राज समाप्त होगा वैसे ही इस देशमें हिन्दू-राजकी स्थापना हो जायगी और उनका भाग्य जैसाका तैसा रहेगा। यदि थोड़ी देरके लिए हम उनकी यह बात भी मान लें तो उस स्थितिमें देशकी सम्पदा तो देशमें रह जायगी और यदि अल्पसंख्यक समाजोंके लोग गुलाम भी रहेंगे तो उनका पेट तो भरा रहेगा। सफेद लोगोंकी दासतामें और काले लोगोंकी दासतामें यह तो अंतर होगा ही। उन्होंने समस्त समुदायोंसे यह अपील की कि वे अपने लक्ष्य, भारतकी स्वाधीनताको प्राप्त करनेके लिए पहले शीघ्रता-के साथ एक हो जायँ।

इसके पश्चात् डॉ० खान साहबने भाषण किया। उन्होंने खुदाई खिदमतगार आन्दोलनके सम्बन्धमें विस्तारसे सब बातें बतलायीं और कहा कि वह शुद्ध रूपसे एक समाजसेवी संगठन था परन्तु सरकारने उसे लाल कुर्ती दल; एक उग्र संगठन का नाम दे दिया और उसे बोल्शेविकों जैसा राजनीतिक रंग दे दिया। उन्होंने अपने संगठनके उद्देश्य और लक्ष्य बतलाते हुए कहा कि उसका उद्देश्य विशाल मानवताके किसी भी रूप अथवा अंगकी सेवा करना है।

२ अक्तूबरको बंगालके विद्यार्थियोंने अलबर्ट हॉलमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ-को एक अभिनन्दन-पत्र भेंट किया। इस अवसरपर श्री जे० सी० सेन गुप्त, सतीशचन्द्र दास गुप्त, प्रोफेसर खान अब्दुल रहमान तथा अन्य प्रतिष्ठित लोग उपस्थित थे।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने कहा, "मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप मुझको सरहदी गांधी न कहें क्योंकि गांधी एक ही रहना चाहिए। यदि दो गांधी हो गये, तो उनमें झगड़ा होगा ही। महात्मा गांधी हमारे जनरल हैं और जनरल एक ही होना चाहिए इसलिए कृपया मेरे नामके साथ गांधीजीका नाम न जोड़िए। आपने मेरे ऊपर जो प्रशंसाके फूल बरसाये मैं उनका उपयुक्त पात्र नहीं हूँ। जिन सेवाओंके लिए आपने मेरी इतनी सराहना की, वे भी मुझसे सम्पन्न नहीं हो सकी हैं। वास्तवमें आपकी इस प्रशंसाका श्रेय अहिंसाकी उस प्रणालीको होना चाहिए जिसने हमारे यहाँके लोगोंके स्वभावोंको बदल दिया है। पहले पठान लोग तुच्छ बातोंको लेकर नित्य लड़ा-झगड़ा करते थे परन्तु अहिंसाके सिद्धांतको अपना लेनेके बाद अब उनका स्वभाव ही बदल गया है। पठान किसीको मार डालना एक साधारण-सी बात समझते थे और उसपर सोचतेतक नहीं थे परन्तु आज वे कितने आश्चर्यजनक रूपसे अहिंसक हो गये हैं! खुदाई खिदमतगारोंके ऊपर गोलियाँ चलायी गयीं जिनके कारण लगभग पाँच सौ व्यक्ति मारे गये और अनेक

आहत हुए। पुलिस उनके घरोंमें घुस गयी और उसने उनकी महिलाओंके साथ अशोभनीय व्यवहार किया फिर भी उन्होंने हिंसाके मार्गको नहीं अपनाया।

"लार्ड इरविनने जब मुझे जेलसे रिहा कर दिया, तब मुझसे गोलमेज़ परिषद-में भाग लेनेके लिए कहा गया। लेकिन मैं वहाँ नहीं गया क्योंकि मैं उसे समयका अपव्यय मानता था। कांग्रेस विधानसभाओंमें पहुँचनेका प्रयत्न कर रही है। मैं कांग्रेसके विरुद्ध विद्रोह तो नहीं करना चाहता लेकिन मैं आपसे यह कह दूँ कि इस पद्धतिसे 'कम्यूनल एवार्ड' और 'ह्वाइट पेपर' को नहीं पलटा जा सकता। उन्हें तो हिन्दू और मुसलमानोंकी एकतासे ही पलटा जा सकेगा। अंग्रेजोंने इस बातको पूरी तरहसे जानते हुए कि वे आपको आपसमें लड़ाते रहेंगे और राज्य करते रहेंगे, आपको थोड़ेसे अधिकार दे दिये हैं। मैं आपसे कहता हूँ कि आपको त्याग करने ही पड़ेंगे, आपको संगठित होना ही पड़ेगा और तब कहीं आप अपनी इच्छित वस्तुको प्राप्त कर सकेंगे।

"सीमा-प्रान्तमें ९५ प्रतिशत मुसलमान हैं परन्तु खुदाई खिदमतगारोंका आदर्श ईश्वरके सब प्राणियोंकी सेवा करना है। ईश्वरके दलमें केवल मुसलमान ही नहीं हैं बल्कि हिन्दू, सिख, अंग्रेज तथा और लोग भी हैं। आप खुदाई खिद-मतगारोंको लाल कुर्ती या लाल कमीजवाले न कहा कीजिए जैसी कि मुसोलिनी-की या हिटलरकी कमीजें कही जाती हैं। हमारा अस्तित्व मानवताकी सेवाके लिए है। हमारा आन्दोलन राष्ट्रवादी नहीं बल्कि धार्मिक है। दोनोंके बीचमें बहुत बड़ा अन्तर है। एक शान्तिके सिद्धान्तपर आधारित है और दूसरा युद्धपर। आप अहिंसात्मक प्रणालीसे लड़िए और जीतकर स्वराज्यको प्राप्त कीजिए। आप अत्याचारियोंके खिलाफ लड़िए, चाहे वह हिन्दू, मुसलमान, अंग्रेज या जर्मन कोई भी क्यों न हो।

"हम सविनय आज्ञा-भंग आन्दोलनमें शामिल नहीं थे, फिर भी एक रातको मुझे तथा सब प्रमुख कार्यकर्त्ताओंको गिरफ्तार कर लिया गया। उसके बाद मैं केवल दस महीने काम कर सका और इस बीचमें मैंने तीन लाख स्वयंसेवक भर्ती किये। समूचा सीमा-प्रांत आतंकसे कांप रहा था और स्त्रियोंके साथ अपमानपूर्ण व्यवहार किया जाता था। इतनेपर भी हमने हिंसाको स्वीकार नहीं किया। स्मरण रखिए, जब कोई पठानोंके सम्मानपर आक्रमण करता है या उनकी महिलाओंके साथ शोभनीय व्यवहार नहीं करता तो वे इसका बदला लेनेमें तनिक भी नहीं चूकते। परन्तु यह सब होनेके बाद भी वे शान्त रहे। अहिंसात्मक आन्दोलनने हमें यथार्थमें वीर बना दिया। इसका श्रेय मुख्य रूपसे महात्मा गांधी

की शिक्षाओंको है। सरकार यह नहीं चाहती कि पठान अहिंसाको ग्रहण करे। यदि ऐसा न होता तो मुझे अपने प्रदेशमें प्रवेश करनेकी अनुमति दे दी जाती।"

उन्होंने बंगालके तरुणोंको सलाह दी कि अपने यहाँ वे खुदाई खिदमतगारों जैसी कोई संस्था प्रारम्भ करें। वे हिन्दू और मुसलमानोंके हृदयोंसे वैमनस्यकी भावनाको दूर करके उन्हें शुद्ध करें और उनमें एकता स्थापित करें।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने कलकत्तामें अपने श्रोतागणसे बार-बार यह अपील की कि वे निर्धन ग्रामीणोंकी ओर ध्यान दें। उन्होंने उन लोगोंसे कहा कि वे पिछड़े हुए मुस्लिम समाजकी सेवा करना चाहते हैं; विशेष रूपसे बंगालके ग्राम-वासियोंकी क्योंकि वे ही सबसे अधिक पीड़ित लोग हैं। बंगालमें अपने इस कार्य-का वर्णन उनके अपने शब्दोंमें इस प्रकार है :

"मैं कुछ दिनोंतक कलकत्ता रुका रहा। वहाँ मैं पठानोंका अतिथि था। मेरी इच्छा बंगालके गावोंको देखनेकी और बंगाली मुसलमानोंसे मिलनेकी थी। मैं उनके विषयमें सब कुछ जानना चाहता था। मैंने अपनी यह आकांक्षा कई सार्वजनिक सभाओंमें व्यक्त की परन्तु कलकत्ताके मुसलमानोंने इस दिशामें मुझे कोई सहायता नहीं दी। मुस्लिम असोसिएशन सुहरावर्दी और उनके साथियोंके हाथोंमें था। उन्होंने इस बातकी बहुत कोशिश की कि मैं बंगालके गाँवोंका दौरा न कर सकूँ, क्योंकि इससे उनकी नेतागीरीको खतरा था। जब मैं इन मुसलमानों से निराश हो गया तो कांग्रेसके एक प्रतिष्ठित कार्यकर्ता डॉ० प्रफुल्लचन्द्र घोषने अपनी ओरसे मुझसे यह कहा कि वे मेरे साथ गाँवोंमें चलनेको तैयार हैं किन्तु उनका विश्वास है कि देहातके मुसलमान निष्प्राण हो चुके हैं। बंगालके गाँवोंके निवासी केवल बंगला समझते थे, इसलिए मुझको एक बंगाली दुभाषियेकी आव-श्यकता थी। प्रफुल्ल बाबू और मैं कलकत्तासे गाँवोंकी ओर चल दिये। मैं वहाँके लोगोंसे मिला और मेरी उनसे बातचीत हुई। मैंने उनसे कहा कि किसी समय भारत सोनेकी भूमि था। हर एक घरमें दूध और घी होता था और चावल भी प्रचुर मात्रामें होता था परन्तु आज हमारे बच्चे भूखे हैं, नंगे हैं, निस्सहाय हैं और उनकी दशा दयनीय है। मैंने उनसे कहा कि जबतक देश स्वाधीन नहीं होता तबतक उनकी दशामें कोई सुधार नहीं होगा। मैं कुछ दिनों गाँवोंमें घूमा और मैंने एक सभा की। मेरी इस पहली सभामें लगभग पचास ग्रामीण सम्मि-लित हुए। इसके थोड़े दिनों बाद मैंने दूसरी सभाका आयोजन किया जिसमें लगभग दो सौ व्यक्ति उपस्थित थे। इसी प्रकार मेरी सभाओंमें धीरे-धीरे श्रोताओं की संख्या बढ़ने लगी। जब मैं बहुत दौरे करने लगा तब एक दिन मैंने प्रफुल्ल

बाबूसे कहा कि गाँवोंके लोग निष्प्राण नहीं थे। आवश्यकता उस व्यक्तिकी थी जो उनको फिर युवावस्था दे।

वर्धा लौटनेसे पहले खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ शांतिनिकेतन गये जहाँ कि उनका पुत्र गनी पढ़ रहा था। श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुरने पुस्तकालय भवनके सामने छात्रों तथा आश्रमवासियोंकी एक सभामें अपने अतिथिका थोड़ेसे किन्तु चुने हुए शब्दोंमें स्वागत किया। उन्होंने कहा कि खान साहबका आगमन आश्रमके इतिहासमें एक अविस्मरणीय घटना है। छात्रोंका यह सौभाग्य है कि उन्हें उनसे मिलनेका अवसर मिला है। रविबाबूने आगे कहा कि इस बातने हमारे हृदयोंको स्पर्श किया है कि आपकी शांतिनिकेतनपर आस्था है। यह विश्वास इस तथ्यसे व्यक्त होता है कि जब आप दूर जेलमें थे तब आपने अपने पुत्रको शिक्षा ग्रहण करनेके लिए यहाँ भेजा।

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने इसका उत्तर देते हुए कहा कि इस उत्साहपूर्ण स्वागतकी ऊष्माने मेरे मनको गहरे सुखकी अनुभूति दी है। इस स्थानको देखकर मुझे अतिशय आनन्द हुआ है। जो कुछ मैंने यहाँके बारेमें सुना था, उससे कहीं अधिक मैंने यहाँ आकर देखा है। मुझको ऐसा प्रतीत होता है कि भारतके उत्थानके लिए यथार्थमें महाकविके आदर्शोंकी आवश्यकता है। उन्होंने यह आशा व्यक्त की कि समस्त समुदाय शिक्षाके सम्बन्धमें कविके उन उदात्त विचारोंको आत्मसात् करेंगे जो कि धर्मकी सत्य भावनापर आधारित हैं। धर्मोंकी ग़लतफ़हमीके कारण ही साम्प्रदायिक भावनाएँ भारतकी समस्त प्रेरणाओंको गला घोंटकर मार डालनेकी धमकियाँ दे रही हैं।

वे आश्रममें बहुत थोड़े समयके लिए रुक सके क्योंकि दूसरे दिन उनको पटनाके लिए चल देना था। लेकिन वे जबतक वहाँ रहे, उन्होंने अपनेको अत्यधिक व्यस्त रखा और शांतिनिकेतन तथा श्रीनिकेतनके सभी विभागोंको देखनेका प्रयत्न किया। उन्होंने वहाँ जो कुछ देखा, उसमें अपनी गहरी दिलचस्पी व्यक्त की।

उनके शांतिनिकेतनसे चलनेसे कुछ समय पूर्व उत्तरके सामनेवाले प्रांगणमें एक विदा-समारोहका आयोजन हुआ जिसमें श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुरने उर्दूमें भाषण किया। उसका हिन्दी रूपान्तर इस प्रकार है :

"प्रिय मित्र, आप हम लोगोंके बीचमें बहुत थोड़ी देरके लिए रुके फिर भी हमारे लिए यह एक दुर्लभ सौभाग्य है। यदि मैं यह कहूँ कि आपकी उपस्थितिने हमारे मनमें नयी शक्ति और ओजस्विताका संचार किया है तो मुझे आशा है कि आप इसे मात्र अतिशयोक्ति या शिष्टाचारकी एक अभिव्यक्ति न समझेंगे—प्रेम

कभी उच्चरित शब्दों द्वारा व्यक्त नहीं होता बल्कि प्रेमीकी आत्मा ही प्रेमकी अपनी कसौटी होती है। जब हमारा आपसे सम्पर्क हुआ तब हमारे हृदयकी समस्त भावनाओंने अनेक रूपोंमें विशाल आकार ग्रहण कर लिया।

"यह सच है कि आप हमारे साथ बहुत अल्पकाल रहे परन्तु हम इस प्रसंग के महत्त्वको समयके मानसे नहीं मापेंगे। वे लोग वास्तवमें महान् होते हैं जिनका हृदय सबके लिए मुक्त होता है। वे विश्वके सारे देशोंके होते हैं और वे समयकी सीमाओंको पार कर एक शाश्वत जीवन जीते हैं। मेरे शब्दोंपर विश्वास कीजिए, आपने बहुत थोड़े समयके लिए भी आश्रममें आनेकी जो कृपा की है उसकी स्मृति हमारे हृदयोंमें सदैव ताज़ी रहेगी।

"सत्य आपके जीवनका मूल आधार रहा है और मुझे विश्वास है कि आप अपने चारों ओर उसके प्रभावको प्रकाश-पुंजकी भाँति बिखेर रहे हैं। हमने यह अनुभव किया है कि सत्यकी इस निष्ठाके अभावमें हमारे निजके समस्त प्रयत्न दिन-प्रतिदिन कुण्ठित होते जा रहे हैं। आप इस भूमिमें, जिसके दुर्भाग्यशाली प्राणी खंडोंमें बिखर गये हैं, परमेश्वरके एक प्रयोजनको पूर्ण करनेके लिए आये हैं। अपने निजके बन्धुओंके प्रति उनके मनमें जो घृणाका विष भरा है और जिससे वे आत्म-विनाशकी ओर निरंतर बढ़ते जा रहे हैं, उससे आप उनको मुक्त करने आये हैं।

"इसमें हमको तनिक भी सन्देह नहीं है कि आप अपने चरित्रकी महान शक्तिके अंश मात्रसे यहाँके लोक-मानसको उद्दीप्त करनेमें समर्थ रहे हैं। अपनी इस आभारपूर्ण अभ्यर्थनाको स्वीकार करनेकी हम आपसे प्रार्थना करते हैं। यह हमारी हार्दिक कामना है कि इस देशको, जो मृत्युके मुखमें शीघ्र जानेवाले रोगी-के सदृश है, आप ओजपूर्ण स्वास्थ्य तथा सत्यका बल प्रदान करनेके लिए भविष्यमें कभी अधिक समय दें।"

खान-बन्धु अपनी बम्बई यात्रामें १४ अक्तूबरको रायपुरसे गुज़रे। वहाँ उनके स्वागतके लिए रेलवे स्टेशनपर तीन सौसे अधिक व्यक्ति उपस्थित थे। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने अपने डब्बेके सामने खड़े होकर एक छोटासा भाषण किया। उन्होंने कहा :

"यदि आप गाँवोंमें जायेंगे तो वहाँ आपको भारतकी असली हालत देखनेको मिलेगी। गाँवोंमें लोग भूखों मर रहे हैं और उनके पास तन ढँकनेको वस्त्र भी नहीं है। समस्त भारतकी यही स्थिति है। यही हिन्दू और मुसलमान, जो अपने-को सोनेसे तौला करते थे, आज दासताके कारण अकिंचन बन गये हैं। भारत-

वासी इतने कायर हो गये हैं कि वे एक सिपाहीतकसे डरते हैं। यदि पुलिसका कोई दरोगा आ जाता है तब तो उनकी सूरत भी नहीं दिखलाई देती और यदि कहीं अंग्रेज दिखलाई दे गया तो फिर क्या पूछिए! यदि हिन्दू और मुसलमान मिल जाते हैं तो यह स्थिति नहीं रहेगी और निश्चय ही वे स्वाधीनताको प्राप्त कर लेंगे।"

खान अब्दुल गफ्फार खाँ और डॉ० खान साहब कांग्रेसके बम्बई अधिवेशनमें सम्मिलित होनेके लिए १९ अक्तूबरको बम्बई गये। उन्होंने यह यात्रा तीसरे दर्जेमें की। इन लोगोंका स्वागत करनेके लिए रेलवे स्टेशनपर स्वागत-समितिके सौ स्वयंसेवक उपस्थित थे। उनके अतिरिक्त अपने बैण्ड बाजेके साथ पाँच सौ स्वयंसेवक वहाँ मौजूद थे, जिनमें पचास महिला स्वयंसेविकाएँ भी थीं। खानबन्धुओंकी अगवानीके लिए बम्बईके एक हज़ारसे भी अधिक नागरिक स्टेशनपर उपस्थित थे। स्वागतकारिणी समितिके अध्यक्ष श्री के० एफ० नरीमानने खानबन्धुओंको गाड़ीसे उतरते ही पुष्पहार पहनाये। इसके दूसरे दिन गांधीजी बम्बई पहुँच गये। खान-बन्धु उनके साथ ही कांग्रेस नगरमें विशेष रूपसे तैयार की गयी एक झोंपड़ीमें ठहरे। फिर जबतक वे वहाँ रुके तवतक यानी २९ अक्तूबर तक वे गांधीजीके साथ ही रहे।

खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँने कांग्रेसकी अध्यक्षताका प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया था। वे अखिल भारतीय स्वदेशी प्रदर्शनीका उद्‌घाटन करनेके लिए भी तैयार नहीं हुए। स्वागत-समितिके सदस्योंको उनसे इस प्रस्तावको स्वीकार करानेके लिए गांधीजीके पास जाना पड़ा तब कहीं उन्होंने इसके लिए स्वीकृति दी। प्रदर्शनीके समय उनका परिचय देते हुए २० अक्तूबरको श्रीमती सरोजिनी नायडूने कहा कि खान अब्दुल गफ्फार खाँ सीमाप्रांतके एक लम्बे सिपाही हैं, यहाँ जितने भी लोग हैं उनसे कमसे कम एक गज लम्बे। वे सरल, विनम्र और सादे सैनिक हैं। यदि उनको अनुमति दे दी जाय तो वे पर्देके पीछे बैठना पसन्द करेंगे, इसलिए नहीं कि वे कायर हैं बल्कि इसलिए कि अपने प्रचारसे उनको बहुत लज्जा लगती है। इस अवसरपर बोलते हुए खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँने कहा :

"मैं आपसे केवल यह कहना चाहता हूँ कि इस प्रदर्शनीके समारोहका उद्‌घाटन मेरे द्वारा कराकर आपने मुझे जो सम्मान दिया है उसके लिए मैं आभारी हूँ। इस कार्यने मुझे अत्यन्त प्रसन्नता दी है, इसका कारण यह है कि मैं स्वदेशी वस्तुओंको हृदयसे चाहता हूँ। सन् १९३१ में हम लोगोंने सीमा-प्रान्तमें स्वदेशीका कार्य प्रारम्भ किया था। उसके बाद दुर्भाग्यसे मुझे जेल चला जाना

पड़ा और यह क्रम वहीं टूट गया। फिर मेरी इस सम्बन्धमें गांधीजीसे चर्चा हुई परन्तु वे यूरोप चले गये और उनके वापस लौटनेसे पहले ही भारतमें स्वाधीनता की लड़ाई छिड़ गयी। जब मैंने इस देशमें भ्रमण किया और सारी स्थितिको प्रत्यक्ष देखा तब मेरा स्वदेशीपर और भी विश्वास बढ़ गया। अब वह उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है।

"सन् १९३१ में मैं बारडोलीमें था। वहाँ मैंने गाँवोंमें विस्तृत दौरे किये और खादीके कार्यको देखा। परन्तु उससे मैं उतना प्रभावित नहीं हुआ जितना कि अपने बंगालके कुछ ही दिनों पहलेके दौरेमें हुआ। अभी कुछ दिनों पहले ही मैंने बंगालके गाँवोंमें चरखेको सक्रिय कार्य करते देखा है। वहाँ हिन्दुओं और मुसलमानोंकी दशा बड़ी दयनीय है। जिन गाँवोंमें चरखेसे सूत काता जाता है, वहाँके निवासी कुछ पैसे कमा लेते हैं और उससे एक बार खाना खा लेते हैं लेकिन जिन गाँवोंमें चरखा नहीं पहुँच पाया है वहाँके लोग तो भूखों मरते हैं। जो कुछ मैंने अपनी आँखोंसे देखा है, मैं आपको वही बतला रहा हूँ। इस स्थितिको देखनेके बाद मेरी चरखेपर और भी आस्था बढ़ गयी। पहले मैं चरखा नहीं चलाता था लेकिन अब मैंने उसे चलाना शुरू कर दिया है। इसका कारण यह है कि यदि नेता देशके आगे स्वयं अपना उदाहरण प्रस्तुत न करेंगे तो जनता उनके पीछे कैसे चलेगी ? यदि महात्माजी स्वयं चरखा न चलाते तो चरखेका इतना प्रचार न होता और न उसको इतनी लोकप्रियता मिल पाती। कुछ लोग कहते हैं कि चरखा चलाना समयका अपव्यय है। उनका समय निश्चित ही गांधीजीके समयसे अधिक मूल्यवान नहीं हो सकता।

"मैंने बंगालमें कुछ खामियाँ देखीं। वहाँ लोग चरखेसे सूत कातते हैं लेकिन उसे बेच देते हैं और पहननेके लिए मशीनसे तैयार किया गया कपड़ा खरीदते हैं। उन्होंने मुझसे यह कहा, 'मिलका कपड़ा भी तो इस देशका उत्पादन है।' तब मैंने उनको बतलाया, 'यह बिलकुल ठीक है परन्तु मिलका लाभ एक व्यक्तिके पास जाता है। हमारा उद्देश्य यह है कि उस लाभमें सब लोग साझीदार हों।'

"मैं बड़े भंडारोंके पक्षमें नहीं हूँ। मैं यह सुझाव देनेका साहस कर रहा हूँ कि कांग्रेस और चरखा संघको प्रत्येक गाँव, थाने और तहसीलको इस दिशामें आत्मनिर्भर बनानेकी कोशिश करनी चाहिए ताकि वहाँके लोग स्वयं कातें, धुनें और अपनी आवश्यकताओंको पूरा करें। इस प्रकार वे लोग अधिक लाभान्वित होंगे।

"मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप अपने देशमें ही बना हुआ कपड़ा पहनें। यदि आप अपने देशके लिए इतना भी नहीं कर सकते तो और क्या करेंगे ?"

कराची अधिवेशनके लगभग साढ़े तीन वर्ष पश्चात् २६ अक्तूबरको बम्बईमें कांग्रेसका अधिवेशन हुआ। कांग्रेस नगरमें, जिसका नाम खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँके नामपर रखा गया था, लगभग ६०,००० व्यक्ति एकत्रित थे।

सहस्रों सत्याग्रहियोंने जो शौर्यपूर्ण त्याग किये थे और जो यंत्रणाएँ सहन की थीं उनके लिए कांग्रेसने एक विशेष प्रस्ताव द्वारा राष्ट्रको बधाई दी और अपने विश्वासको इन शब्दोंमें लिपिबद्ध किया :

"समग्र देशकी जनतामें जो जागर्ति परिलक्षित हो रही है वह इस अहिंसात्मक असहयोग और सविनय अवज्ञाके बिना कभी उत्पन्न नहीं हो सकती थी। कांग्रेसने जहाँ सविनय अवज्ञाके स्थगित करनेकी इच्छा और आवश्यकताको स्वीकार किया वहीं गांधीजीके उल्लेखके बिना अहिंसात्मक असहयोग और सविनय अवज्ञामें अपने विश्वासको भी दुहराया, 'स्वराज्य प्राप्त करनेकी यह प्रणाली, हिंसात्मक प्रणालियोंसे, जिनका फल पीड़ा देनेवाले और पीड़ित दोनोंके लिए मात्र आतंकवाद होता है, उत्तम है।"

कांग्रेसके सामने एक महत्त्वपूर्ण विचार-वस्तु उसके संविधानमें एक परिवर्तन था, जिसके लिए कि स्वयं गांधीजीने सिफ़ारिश की थी। कुछ लोग कांग्रेसके स्वीकृत ध्येयमें 'शांतिमय और वैधानिक' उपायोंके स्थानपर 'सत्ययुक्त और अहिंसात्मक' शब्द रखना चाहते थे परन्तु अखिल भारतीय कांग्रेस समितिने यह सुझाव दिया कि यह संशोधन पहले सम्मतिके लिए समस्त प्रान्तोंमें प्रसारित किया जायगा।

खद्दरके वस्त्र निर्धारित करनेके सम्बन्धमें एक पृथक् प्रस्ताव पारित हुआ :

"कोई भी सदस्य, यदि वह हाथके कते हुए और हाथके बुने हुए खद्दरको पहननेका अभ्यस्त नहीं है तो वह किसी भी पद या कांग्रेस समितिकी सदस्यताका पात्र नहीं समझा जायगा।"

श्रमकी योग्यताके सम्बन्धमें पहली बार यह आवश्यक समझा गया, "जिस व्यक्तिने पिछले छः मासोंमें लगातार शारीरिक श्रम न किया हो वह कांग्रेस समितिकी सदस्यताके चुनावमें उम्मीदवारीका पात्र नहीं समझा जायगा।"

२८ अक्तूबरको कांग्रेसने अखिल भारतीय ग्राम-उद्योग परिषद्को संगठित करनेके सम्बन्धमें अग्रलिखित प्रस्ताव पारित किया :

"इस दृष्टिसे कि अपने प्रारम्भकालसे कांग्रेसका उद्देश्य जनताके साथ प्रगतिशील ढंगसे समीकरण रहा है, तथा गाँवोंका पुनर्गठन एवं पुनर्निर्माण कांग्रेसके रचनात्मक कार्यक्रमोंमेंसे एक रहा है; इस विचारसे भी कि इस प्रकारके पुनर्गठन में बुनाईके केन्द्रीय उद्योगके अलावा मृत अथवा मृतप्राय ग्रामीण उद्योगोंका पुनर्जागरण और प्रोत्साहन अनिवार्य रूपमें शामिल है तथा इस खयालसे कि यह कार्य भी बुनाईके पुनर्गठनकी भाँति केवल ऐसे केन्द्रित एवं विशिष्ट प्रयास द्वारा ही सम्भव है जो कांग्रेसकी राजनीतिक प्रवृत्तियोंसे अप्रभावित तथा स्वतंत्र हो, श्री जे० सी० कुमारप्पाको यह अधिकार दिया जाता है कि कांग्रेसकी एक प्रवृत्तिके रूपमें वे गांधीजीकी सम्मति और मार्गदर्शनसे अखिल भारतीय ग्राम-उद्योग परिषद् (ऑल इंडिया विलेज इंडस्ट्रीज़ असोसिएशन) का गठन करें। उक्त परिषद् उक्त उद्योगोंके पुनर्जागरण और प्रोत्साहनके हेतु तथा गाँवोंकी नैतिक एवं भौतिक उन्नतिके लिए कार्य करेगी।"

इस प्रस्तावपर बोलते हुए खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँने कहा : 'राजनीतिक स्वतंत्रताके बिना देशकी कोई प्रगति नहीं हो सकती। हम उसके लिए संघर्ष कर रहे हैं और करते रहेंगे। कांग्रेस एक ऐसी संस्था है जिसका उद्देश्य सारे भारतकी सेवा करना है अत: इस तथ्यको अनुभव करना उसका कर्त्तव्य है कि भारतकी पूरी जनसंख्याका ९८ प्रतिशत भाग गाँवोंमें निवास करता है। कांग्रेसको गाँवोंमें बसनेवाली आबादीके इस विशाल परिमाणकी ओर ध्यान देना चाहिए और उसकी चिन्ता करनी चाहिए। वास्तवमें यह हमारा कर्त्तव्य है कि हम गाँवोंके लोगोंकी कठिनाइयों और कष्टोंको जाननेके लिए उनके पास जायँ। ग्रामीण बन्धु भूखों मर रहे हैं और नग्नप्राय हैं। बिना देखे उनकी यथार्थ स्थिति समझी नहीं जा सकती। उनके बच्चे डरपोक हैं। यदि आप उनके निकट जायँगे तो वे आपसे दूर भाग जायँगे। मैं आपसे वही कह रहा हूँ जो मैंने व्यक्तिगत रूपसे बंगालके देहातमें देखा है। केवल उन गाँवोंमें, जहाँ कि चरखा संघके कार्यकर्त्ता पहुँच गये हैं और जहाँ चरखे इकट्ठे हो गये हैं, लोगोंको कमसे कम दिनमें एक बार तो भोजन मिल जाता है। मैं उनके घरोंमें गया और मैंने उनको बहुत साफ-सुथरा पाया। जिन गाँवोंमें चरखा नहीं चलता वहाँ मैंने लोगोंको घरोंमें छिपे हुए, भूखों मरते देखा। चरखाके द्वारा वे ग्रामीण अपनी रोटी ही नहीं पाते बल्कि उससे उनको राजनीतिक चेतना भी प्राप्त होती है। उनके मनसे भय निकल गया है। परन्तु जिन स्थानोंमें कोई रचनात्मक कार्य नहीं चलता वहाँके निवासियोंकी स्थिति बड़ी ही दुर्भाग्यपूर्ण है। जबतक हम उनके बीचमें जाकर नहीं रहते और

उनके उत्थानके लिए कार्य नहीं करते तबतक स्वराज्यकी प्राप्ति सम्भव नहीं है। गाँवोंके लोगोंसे जो कुछ कहा जाय वे उसे करनेको तैयार हैं परन्तु उनको कोई मार्ग दिखलानेवाला चाहिए। मैं आपको हजारीबाग जेलकी एक घटना बतला रहा हूँ। वहाँ बहुतसे कैदी थे परन्तु मुझसे मिलनेकी किसीको आज्ञा न थी। वहाँ मैंने एक-दो कठिन परिश्रमी कैदियोंकी सहायता लेकर एक छोटासा खेत तैयार किया। जेलमें कुछ काश्तकार भी थे। उन्होंने मुझे खेतमें काम करते हुए और शलजम तथा पपीताके पेड़ उगाते हुए देखा। इससे उनके मनमें एक उत्सुकता जाग्रत हुई। उन्होंने अपने मनमें सोचा कि यह तो बड़ी आसान चीज़ है और उसके सहारे वे बड़ी सरलतासे खड़े हो सकते हैं। एक दिन जब हम सीमाप्रान्तसे मंगाये हुए तरबूज़ और सरदाके बीज बो रहे थे, तब वे हमारे पास आये और बोनेके लिए हमसे कुछ बीज ले गये। इस प्रकार हम देखते हैं कि यदि हम करना चाहें तो बहुतसा काम बाक़ी पड़ा हुआ है। भारत एक कृषिप्रधान देश है। यहाँ कितनी सारी गायें, बकरियाँ और भैंसें हैं। आप यह देख सकते हैं कि उनके चमड़ेसे, जो वस्तुतः हमारा होता है, अन्य लोग कितना लाभ कमाते हैं। गाँवके लोगोंको निश्चित ही चमड़ा तैयार करनेकी विधि सिखलानी चाहिए। उनको यह भी जानना चाहिए कि हड्डी और गोबर आदिसे खाद कैसे तैयार की जाती है। इन सब दृष्टियोंसे मैं महात्मा गांधीका समर्थन करता हूँ और आपसे इस प्रस्तावको स्वीकार करनेकी प्रार्थना करता हूँ।"

अधिवेशनके आखिरी दिन, २८ अक्तूबरको जब गांधीजीने कांग्रेससे अपने आधिकारिक सम्बन्ध अलग कर लेनेके लिए पंडालमें प्रवेश किया तब अपने उन महान नेताके प्रति सम्मान प्रदर्शित करनेके लिए समस्त उपस्थित जन-समुदाय, लगभग ८०,००० श्रोता उठकर खड़े हो गये।

"अबसे कांग्रेस-संगठनमें मेरी केवल इतनी सीमित दिलचस्पी रहेगी कि मैं दूरसे उन सिद्धान्तोंको कार्यान्वित होते हुए देखूँ जिनके सहारे कांग्रेस खड़ी है।" गांधीजीने अपनी बातपर बल देते हुए कहा, "यदि हम पूर्ण रूपसे सत्यनिष्ठ हैं तो हमें यह मानना होगा कि कांग्रेसका एक प्रधान अंग प्रगतिशील ढंगसे सामाजिक, नैतिक और आर्थिक रहा है। अब वह एक शक्तिशाली कार्यक्रम बन गया है क्योंकि वह अनिवार्य रूपसे राजनीतिसे भी सम्बद्ध है अर्थात् उसे देशको विदेशी जुएसे निकालकर स्वतंत्र करना है। परन्तु इसका तात्पर्य विदेशोंसे मैत्री-सम्बन्ध तोड़ देना नहीं है क्योंकि वे तो पूर्ण समानताके धरातलपर स्वेच्छापर आधारित होते हैं। मुझे एक चेतावनी भी देनेकी आज्ञा दीजिए। मुझे आशा है,

कोई यह नहीं सोचेगा कि खद्दर सम्बन्धी वाक्य-खण्ड और अनिवार्य श्रम तत्काल लागू नहीं किये जायँगे। परन्तु ऐसा ही होगा। इस असावधानीके लिए मैं अपने-आपको अपराधी अनुभव कर रहा हूँ कि मैंने अबसे पहले इन बातोंपर जोर क्यों नहीं दिया और सविनय आज्ञा-भंगसे पहले इन चीजोंको एक आवश्यक शर्त के रूपमें क्यों नहीं रख दिया ? कांग्रेससे मेरी निवृत्ति इस असावधानीके लिए मेरी ओरसे प्रायश्चित्त समझी जा सकती है यद्यपि यह असावधानी मुझसे पूर्ण अचेतनावस्थामें हुई है। मेरा लक्ष्य सविनय अवज्ञाकी क्षमताका विकास है। यह अवज्ञा पूरी तरहसे सविनय होगी। इसमें कभी प्रतिकारकी भावनाको उत्तेजना नहीं देनी चाहिए।"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँकी इच्छा गाँवोंमें मौन भावसे कार्य करनेकी थी और जब गांधीजीने उनको अखिल भारतीय ग्रामोद्योग परिषद्की कार्यकारिणी समितिमें लेनेका निश्चय किया तब खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको उसे स्वीकार करनेमें तनिक भी हिचक नहीं हुई। उन्होंने कांग्रेसकी कार्यसमितिकी सदस्यताको भी स्वीकार कर लिया परन्तु केवल गांधीजीके आग्रहसे।

बम्बईमें अपने दस दिनके आवासमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने लगभग छः अवसरोंपर भाषण किये। इस सम्बन्धमें बम्बई सरकारने भारत-सरकारको यह सूचित किया : "उनके २७ और २८ अक्तूबरके व्याख्यान कुछ आपत्तिजनक हैं। इस बातकी जाँच जा रही है कि क्या वे भारतीय दण्ड संहिताकी धारा १२४-ए के अन्तर्गत आते हैं ? और क्या उनके ऊपर चालानकी काररवाई की जा सकती है ?"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको २७ अक्तूबरको इंडियन क्रिश्चियन असोसियेशनके तत्वावधानमें संयोजित एक छोटीसी सभामें भाषण करनेके लिए 'नागपद नेबर-हुड हाउस' में आमंत्रित किया गया। उन्होंने वहाँ अपना व्याख्यान उर्दू में दिया। पुलिसके संवाददाताने उसे इस प्रकार लिपिवद्ध किया :

"जितना थोड़ासा समय मैं निकाल सका हूँ, उसमें मैं आपको उस दुर्भाग्य-शाली देशके सम्बन्धमें और उस अभागे तथा पीड़ित समुदायके बारेमें कुछ बत-लाना चाहता हूँ जिसके विरोधमें न केवल भारतमें बल्कि सारे विश्वमें प्रचार किया गया है। आपने यह सुना होगा कि खुदाई खिदमतगार एक आन्दोलन है; एक संस्था है जिसका आरम्भ मेरे प्रांतमें सन् १९२९ में हुआ। बहुतसे अंग्रेजी समाचारपत्रोंने, जिन्हें आप लोग पढ़ते हैं, हम लोगोंको 'लाल कुर्ती दल'का नाम दिया है। हम लाल कुर्तीवाले नहीं बल्कि खुदाई खिदमतगार हैं। जिस समय

इस संस्थाका प्रारम्भ किया गया उस समय यह केवल सामाजिक क्षेत्रमें कार्य करनेवाली संस्था थी। हमने देखा कि हमारे प्रान्तमें हमारे पठान-बन्धुओंपर 'फ्रंटियर रेगूलेशन एक्ट' लागू है। अपने कपट, धूर्तता और छलसे ब्रिटिश सरकारने उसे एक प्रकारके कानूनका रूप दे दिया था। उसका परिणाम यह था कि हमारे यहाँके लोग सदैव एक दूसरेसे लड़ते रहते थे और हमारे मुल्कमें बहुत हत्याएँ होती थीं; और पुरुषोंकी बात तो जाने दीजिए, हमारे यहाँकी स्त्रियोंको भी न्यायालयोंमें जाना पड़ता था। तब हमने यह अनुभव किया कि हमारे यहाँके लोग बरबाद होते जा रहे हैं। उनके पास इतना समय नहीं था कि वे एक साथ बैठकर इन विषयोंपर विचार कर सकते क्योंकि उनके सारे लम्बे-लम्बे दिन, सवेरेसे संध्यातक कचहरियोंमें निकल जाते थे जहाँ कि वे लड़ते थे और एक-दूसरेको बर्बाद करनेकी योजनाएँ बनाते थे। सरकारने उन्हें यह नयी चीज़—अदालत दी थी और हमारे यहाँकी जनताको तथा हमारे देशको दो दलोंमें बाँट दिया था। उस समय हमारी दशा बड़ी दयनीय थी। इसलिए हमने अपने यहाँके लोगोंको विनाश तथा बरबादीसे बचाना अपना कर्त्तव्य समझा। उस समय हमने यह देखा कि सरकार हमें कोई राजनीतिक कार्य करनेकी अनुमति नहीं दे रही है। राजनीतिक कार्य तो एक ओर, शिक्षाके प्रश्नको ही ले लीजिए। जनताकी शिक्षाकी व्यवस्था करना शासनका कर्त्तव्य है। हमारा दुर्भाग्यशाली समुदाय उसी प्रकारकी शिक्षा चाहता था जिस प्रकारकी सरकार आज आपको दे रही है। लेकिन वह हमको शिक्षित नहीं बनाना चाहती थी और हमें अज्ञानमें रखना चाहती थी। हमारा दोष क्या था ? हमारा दोष केवल यह है कि हमारा प्रान्त भारतका प्रवेश-द्वार है और हम वहाँ रहते हैं इसलिए सरकारकी दृष्टिमें हम लोग दरवान हैं। वह तो हमसे खुले शब्दोंमें कहती है, 'भला हम दरवानोंको सुधार क्यों देंगे ? यदि हम उन्हें कुछ देंगे तो हिन्दुस्तान हमारे हाथसे निकल जायगा।' उन्होंने हमारे कामको खतरनाक समझा और सोचा कि यदि हम भारतीयोंसे मिल जाते हैं तो वे इस देशपर शासन नहीं कर सकेंगे। हमारे आन्दोलनको अपने प्रारम्भमें ही कुचल देनेका यही सबसे बड़ा कारण है। हमसे कहा गया कि तुम्हारा समुदाय असभ्य है और उसमें डाकू लोग हैं। सब पठान फरिश्ते नहीं हैं। प्रत्येक समाजमें भले और बुरे लोग हुआ करते हैं लेकिन मैं आपसे कहता हूँ कि हमारा समाज संख्याकी दृष्टिसे एक बड़ा समुदाय है, जो छोटे-छोटे दलोंके रूपमें अलग-अलग रहता है। सीमा-प्रान्तमें हिन्दू कुल जनसंख्याके ५ प्रतिशत हैं लेकिन मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यहाँ उनकी

महिलाओंकी इज्ज़त, उनका जीवन और उन लोगोंकी सम्पत्ति समस्त भारतके किसी भी प्रान्तकी अपेक्षा अधिक सुरक्षित है। हमसे अंग्रेज यह कहा करते थे, 'इस देशमें २५ करोड़ हिन्दू हैं। यदि तुम हमसे लड़ते हो और हम यह देश छोड़कर चले जाते हैं तो यहाँ हिन्दू-राज्य स्थापित हो जायगा।' दूसरी ओर आप लोगोंको यह कहकर डराया जाता था, 'यदि हम लोग यहाँसे चले जाते हैं तो ऊपरसे पठान उतर आयेंगे और तुम लोगोंको निगल लेंगे।' मैं आपसे यह कहता हूँ कि हमारे अभागे देश और समुदायसे आपको किसी प्रकारका कोई खतरा नहीं है। सन् १९३२ ई० में एक कांग्रेसजनने मुझसे पूछा था, 'क्या यह सच है कि पठान मनुष्यका रक्तपान करते हैं?' मैंने उनको जवाब दिया कि आपकी वात बिल्कुल सच है। मनुष्यका रक्त बहुत स्वादिष्ट होता है। क्या आपने उसे कभी नहीं चखा? यह बात मैं केवल इसलिए कह रहा हूँ कि एक कांग्रेसजनतककी हमारे बारेमें यह जानकारी है! आप सब, हमारे भारतीय भाई-बहिन हमारे उस छोटेसे प्रान्तके सम्बन्धमें नितान्त अनभिज्ञ हैं जो आपका दरवान है और आपका प्रवेश-द्वार भी। यह बात मैं उन कारणोंसे कह रहा हूँ जो मैंने अभी आपको बतलाये।

"सरकारी विद्यालयोंकी बात एक ओर जाने दीजिए, परन्तु सरकारने बड़ी चतुरतासे किसी न किसी बहाने हमारे नन्हें बालकोंकी शिक्षण-संस्थाओंको बरबाद कर डाला। यदि इस प्रश्नको जाने भी दिया जाय कि हमारे लिए शिक्षाकी व्यवस्था करना शासनका कर्त्तव्य था—फिर भी उसने हमारी अपनी शिक्षण संस्थाओंको केवल इसलिए नष्ट कर दिया कि हम सदैव उसके नियंत्रणमें बने रहें। जब हमने यह देखा कि न तो हम राजनीतिक कार्य कर सकते हैं और न शिक्षाका प्रसार, तब हमने सामाजिक कार्यको अपनानेका विचार किया, इसलिए हम गाँवों-में गये और हमने ईश्वरके प्राणियोंके प्रति लोगोंमें प्रेम जाग्रत करनेके लिए खुदाई खिदमतगार संस्थाको प्रारम्भ किया।

"इस संस्थामें खुदाई खिदमतगार बननेवाले प्रत्येक व्यक्तिको एक शपथ लेनी पड़ती है:

'मैं ईश्वरके समस्त प्राणियोंको, चाहे वे ईसाई, हिन्दू, मुसलमान, पारसी, सिख, जर्मन, फ्रांसीसी या अंग्रेज कोई भी क्यों न हों, प्रभुके प्राणी समझता हूँ और मैं उन सबका सेवक हूँ।' हमारा यह आन्दोलन सीमा-प्रान्ततक सीमित नहीं है और न उसमें हिन्दू या मुसलमानका कोई प्रतिबन्ध ही है। वह विश्व-बन्धुत्वकी शिक्षा देनेके लिए एक आन्दोलन है। जब हम किसी खुदाई खिदमत-

गारको प्रशिक्षण देते हैं तब हम उससे कहते हैं, 'इस एक सिद्धान्तको स्मरण रखना कि तुम्हें सभी अत्याचारियोंका, चाहे वह कोई व्यक्ति हो या राष्ट्र, विरोध करना है। तुम्हें समस्त पीड़ितोंकी सहायता करनी है चाहे वे किसी भी जातिके क्यों न हों। इस प्रकार तुम्हें सदैव दमनकारीके विरुद्ध खड़ा होना होगा चाहे वह हिन्दू, मुसलमान, ईसाई या कोई क्यों न हो?' जिनके पास धन नहीं है, जिनको सताया जा रहा है उनको हम आततायियोंके पंजोंसे मुक्त करना चाहते हैं। मैं आपसे यह पूछता हूँ कि यह सब क्या है? यह धर्म है। वास्तवमें धर्मका यही स्वरूप है। ख्रिस्तियोंके धर्मसे मैं थोड़ा-बहुत परिचित हूँ क्योंकि मेरी शिक्षा एडवार्डस चर्च मिशन हाई स्कूलमें हुई है। आपके धर्मसे मैं इस सीमातक प्रभावित हुआ हूँ कि आज अपने देश और समुदायकी सेवामें लगा हुआ हूँ। मेरे विद्यालय-के प्रधान अध्यापक लंदनके एक सुप्रसिद्ध कुलीन सज्जनके पुत्र थे। मेरे तरुण हेड मास्टरने मेरे मनपर अपनी गहरी छाप डाली। लंदनके सुखोपभोग और आराम के जीवनको त्यागकर वे यहाँ उन भारतवासियोंकी सेवा करने आये थे जिनकी राष्ट्रीयतातक उनसे भिन्न थी। वे इस सेवाकी कोई कीमत नहीं लेते थे; इस कार्यका कोई पारिश्रमिक स्वीकार नहीं करते थे। उनका सारा व्यय उनके पिता वहन किया करते थे। मैं आपसे कहूँगा कि आप इस बातपर विचार करें कि ईसा मसीहका इस संसारमें आनेका क्या प्रयोजन था? वे निर्धनों और निरीह प्राणियोंके हेतु आये थे। उस समय वहाँकी स्थिति यह थी कि तत्कालीन शासन-सत्ता निर्धनोंको बहुत बुरी तरहसे कुचल रही थी। ईसा मसीह उन्हें दमनकारियों-के पाशसे मुक्त करने आये थे। हज़रत मूसाके आनेका प्रयोजन भी यही था। आप 'ओल्ड टेस्टामैन्ट' को पढ़िए। जब वे फरोहके पास गये तब उन्होंने उससे यही पहली बात कही कि जिन इसराइलियोंको तुमने गुलाम बना रखा है, उन्हें तुम छोड़ दो।

"मैं आपको यह बतला देना चाहता हूँ कि प्रारम्भमें हमारा आन्दोलन एक धार्मिक तथा सामाजिक आन्दोलन था। हम वही कार्य करना चाहते थे जो विश्व-के समस्त धर्मों—इस्लाम, हिन्दू और ईसाइयोंके धर्म आदिने किया है अथवा जो इन धर्मोंका उपदेश देनेवाले सुधारकों द्वारा किया गया है। हमारी आकांक्षा प्राणी मात्रकी सेवा करनेकी थी। प्रारम्भमें सरकारने हमारे संगठनको एक हँसी-खेल समझा। हम गाँवोंमें जाकर लोगोंसे यह कहा करते कि आपसमें न लड़िए, झूठ न बोलिए, चोरी न कीजिए, गुप्तचरीका कार्य न कीजिए और अपने देश-बान्धवोंकी उपेक्षा करनेमें औरोंका साथ मत दीजिए। जब हमारे आन्दोलनको,

जो सत्यका एक आन्दोलन था, प्रारम्भ हुए चार महीने बीत गये तब सरकारको बेचैनी अनुभव हुई और उसने एक आदमीको यह देखनेके लिए भेजा कि हम लोग गाँवोंमें क्या करते हैं ? हमने उससे कहा, 'हम यह चाहते हैं कि ईश्वरके प्राणी आपसमें लड़ें-झगड़ें नहीं।' हमने उससे यह भी कहा, 'ब्रिटिश सरकार यह दावा करती है कि उसका शासन एक दैवी शासन है और उसका राष्ट्र एक दैवी राष्ट्र। फिर वह पुलिस क्यों रखती है ? यदि उसका यह दावा सच है तो उसे हमारी सहायता करनी चाहिए। किन्तु वह तो मात्र एक स्वांग है। पुलिसको भी इसलिए रखा जाता है कि वह लाठियोंका इस्तेमाल करे और हमें जेलमें भिजवानेके लिए हमारे विरुद्ध डायरियाँ लिखे। हम यह भली भाँति जानते हैं कि सरकारका कर्त्तव्य क्या है और वह कर क्या रही है ? हमने सरकारको बतला दिया था कि हमें अब अपने कामसे कोई न रोक सकेगा। हमारा लक्ष्य अपने समुदायमें आवश्यक सुधार करना और अपने पठान-समाजको पूर्ण रूपसे संगठित करना है। एक बार तो अंग्रेजोंने हमारी इस बातको स्वीकार कर लिया लेकिन बादमें उन्होंने कहा, 'यदि आज आप पठानोंको संगठित कर लेते हैं तो इस बातका क्या भरोसा कि आप उनको सरकारके विरुद्ध काममें नहीं लायेंगे ?' उनके मस्तिष्कोंमें यह आशंका थी। हमारे हृदय साफ़ थे लेकिन उनके मनमें यह दोषी भावना थी। उनकी इस बातपर हमने उनको उत्तर दिया, 'इस बातकी हम आपको क्या जमानत दे सकते हैं। किसी भी राष्ट्रका भरोसा उसका विश्वास होता है। आप हमारे ऊपर विश्वास कीजिए और हम आपके ऊपर विश्वास करेंगे।'

"हम लोगोंने सीमाप्रान्तमें जन्म लिया है इसलिए हम अभागे हैं। यह हमारा एक बहुत बड़ा अपराध था कि हम उस सीमा-प्रदेशके ग्रामीणोंको सुसभ्य बनाना चाहते थे जो भारतका 'प्रवेश द्वार' कहलाता है। सरकार यह नहीं चाहती थी। वह चाहती थी कि वे लोग आपसमें लड़ते-झगड़ते रहें, सहारेके लिए उसकी ओर देखते रहें और एक बर्बाद और बिगड़ती हुई जिन्दगी व्यतीत करते रहें ताकि सरकार बिना किसी परेशानीके उनके ऊपर शासन करती रहे। हमारी बातको सरकारने स्वीकार नहीं किया और वह उसे स्वीकार कर भी कैसे सकती थी ? इसके चार महीने बाद २९ अप्रैल १९३० को खुदाई खिदमतगारोंकी पहली सभाके दूसरे दिन हम और हमारे सारे कार्यकर्त्ता गिरफ्तार करके जेल भेज दिये गये। मैं आपको यह बतला देना चाहता हूँ कि हमारे तत्कालीन समाज-सुधार आन्दोलनका सिद्धांत अहिंसापर आधारित था। हम खुदाई खिदमतगारोंको यह

शिक्षा दिया करते थे कि वे शांति और धैर्यके साथ अपना कार्य करें। उनको अपने कार्यमें जो भी कष्ट उठाने पड़ें अथवा जो भी कठिनाइयाँ सहनी पड़ें उन्हें वे शान्त मन और धैर्यपूर्ण चित्तसे सहन करते हुए स्थितिका सामना करें। हम उनसे इन बातोंको निभानेकी शपथ भी लिया करते थे। तबतक हम कांग्रेसमें सम्मिलित नहीं हुए थे। तब हमारा आन्दोलन पूर्ण रूपसे एक धार्मिक और सामाजिक आन्दोलन था। हमारी गिरफ्तारियोंके बाद पेशावरके लोगोंने शासनके विरोधमें प्रदर्शन करना चाहा। सरकार अपनी प्रतिष्ठाको क़ायम रखना चाहती थी। हमारी नवजात संस्थाने जो भावना उत्पन्न की थी, सरकार उसे कुचल डालना चाहती थी। उपायुक्तने पेशावर पहुँचकर पुलिसके महानिरीक्षकसे टेलीफोन से कहा, 'आपको यहाँ आनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। जो लोग गिरफ्तार किये गये हैं उनको जेल भेज दिया गया है और जो जनता जुलूसके रूपमें प्रदर्शन कर रही थी वह चली गयी है। लेकिन इसके बाद भी शस्त्रागार और बन्दूकें पेशावर के क़िस्साखानी बाजारमें पहुच गयीं। सबसे पहले हिन्दुस्तानी फ़ौजको जनताके ऊपर गोली चलानेका आदेश दिया गया। उसने यह कहकर गोली चलानेसे इनकार कर दिया कि इन लोगोंके पास है क्या? न इनके पास लाठी है और न पत्थर। हम किसके ऊपर गोली चलायें? इसपर उसे यहाँसे हटा दिया गया। उसके सैनिकोंको 'कोर्ट मार्शल' के बाद जेलमें पहुंचा दिया गया। उनमेंसे बहुतसे लोग अबतक जेलोंमें पड़े हुए हैं। उसके बाद ब्रिटिश सिपाही बुलाये गये जिन्होंने कि गोली चलायी। मिनटभरमें २००-२५० व्यक्ति शहीद हो गये। मैं पूछता हूँ, हमने ऐसा क्या अपराध किया था जिसके लिए किस्साखानी बाज़ारमें हमारा खून बहाया गया? नहीं, हमारा कोई अपराध नहीं था। इस तरहसे सत्ता अपनी प्रतिष्ठाको स्थिर रखना चाहती थी। हम इस बातको खूब समझते हैं कि पठानोंके बीचमें गोलियोंसे प्रतिष्ठा कायम नहीं होती। वह तो केवल प्रेमपूर्ण शब्दोंसे संभव है। अंग्रेज सरकार इस बातको नहीं जानती थी लेकिन जब वह जान गयी तब उसने भी यह अनुभव किया कि पठानोंका दमन नहीं किया जा सकता। आप पठानोंके ऊपर प्रेमसे विजय पा सकते हैं लेकिन उनको हिंसाके बलसे नहीं जीत सकते। अब इस बातको ब्रिटिश सरकार भी समझती है। मुझे अपने हिन्दुस्तानी भाइयोंसे यह सुनकर बहुत आश्चर्य हुआ कि सरकार बंगालमें आतंकपूर्ण कारर-वाई कर रही है क्योंकि वहाँ हिंसा है लेकिन मैं आज आपसे पूछ रहा हूँ कि उस समय सीमाप्रान्तमें आतंकपूर्ण काररवाई क्यों की गयी? हमारे स्वयंसेवक तो पूर्ण रूपसे अहिंसाका पालन कर रहे थे। जेलसे वापस आनेके बाद मैंने जगह-जगह

सरकारको यह चुनौती दी कि वह एक भी ऐसी हिंसाकी घटना बतला दे जो कि हमारी ओरसे हुई हो। लेकिन उसने ऐसा नहीं किया। वह तो एक राष्ट्रकी भावनाको कुचलना चाहती थी। उन लोगोंने मेरे प्रान्तमें जगह-जगह गोलियाँ चलायीं, लोगोंके घरोंको लूटा और बरबाद किया। वे लोगोंके मकानोंमें घुस गये और वहाँ चाय या खाना बनानेके जो भी बर्तन-भांड़े या अन्य सामान उन्हें मिला उसे तोड़-फोड़ डाला। सिपाहियोंने आटा रखनेके पात्रोंमें फिनाइल उड़ेल दी। सरकारने जितनी अधिक हिंसा दिखलायी, हमारी राष्ट्रीय भावना उतनी ही सजग हुई। अप्रैलमें जब खुदाई खिदमतगारोंकी पहली सभा हुई तब सरकारने प्रदेशभरमें अपना दमन तेज कर दिया। लेकिन तीन मासके भीतर ही हमारे स्वयंसेवकोंकी संख्या बढ़कर चालीस हजार हो गयी।

"मैं आपको यह बतला रहा हूँ कि कैसे इस आन्दोलनने, जो मूलतः सामाजिक था, एक राजनीतिक रङ्ग ले लिया। उसे यदि किसीने राजनीतिक बनाया तो शासनने। जब उसने हमारे ऊपर आतंकवादी प्रयोग प्रारम्भ कर दिये तब हम निस्सहाय हो गये। पहले हम मुसलमानोंकी सभा 'मुस्लिम लीग' के पास गये। हमने लाहौर, शिमला और दिल्लीमें गण्यमान्य मुसलमानोंसे भेंट की तथा हमने उनसे अपनी सहायता करनेकी प्रार्थना की परन्तु इसके लिए कोई तैयार न हुआ। इसके बाद जब मैं जेलमें था तब मेरे कुछ बन्धुओंने वहाँ (जेलमें) जाकर मुझसे यह शिकायत की कि हिन्दुस्तानके मुसलमानोंने उनकी सहायता नहीं की और यह पूछा कि क्या कोई और भी ऐसा दल है जो उनको इस नाश और विध्वंससे बचानेको तैयार हो और क्या उन लोगोंको उसकी सहायता मिल सकती है? आप जानते हैं कि सागरमें डूबनेवालेको तिनकेका सहारा भी बड़ा होता है। कांग्रेसने हमसे कहा, 'हम आप लोगोंके साथ हैं। हम आपको सहायता देंगे।' तब हमने भी उससे कहा, 'हम भी आप लोगोंके साथ हैं।' उसने हमें उपकृत किया और इस प्रकार हमारी संस्थाकी स्थिति बदल गयी। वह एक राजनीतिक संस्था बन गयी। यह सब इस सरकारके कारण हुआ। इसका क्या सरकारके पास कोई उत्तर है? यदि है तो वह उसे दे। जब हमको कांग्रेसका सहारा मिल गया तब एक समितिका गठन हुआ जिसे 'पटेल कमेटी' कहा गया। श्री विट्ठलभाई पटेलको सीमा-प्रान्तमें जानेकी अनुमति नहीं दी गयी। जब वे रावलपिण्डीमें रुक गये तब लोग गुप्त रूपसे उनसे मिलनेके लिए पहुँचे। श्री विट्ठलभाई पटेलने जो विवरण तैयार किया और प्रकाशित किया उसे सरकार द्वारा तत्काल जब्त कर लिया गया। जनताको जब किस्साख्वानी बाजारमें मारे गये

लोगोंके प्रतिकारमें एक सहायता मिली और सरकारने जब यह देखा कि एक ओर अफरीदी लोग उससे लड़ाई छेड़नेको तैयार हैं और दूसरी ओर हमसे मिल जानेके कारण कांग्रेस उसके विरुद्ध प्रचार-कार्य कर रही है तब उसने अपनी नीतिको बदल दिया और वह हमसे पूछने लगी कि आपको क्या चाहिए? हमने उससे कहा, 'हमारी मांगोंका समय निकल गया। हमने कहा था कि हमारा आन्दोलन सामाजिक है पर आपने न सुना। अब हम उसे नहीं छोड़ेंगे। आप जो कुछ करना चाहें वह कर सकते हैं।'

"इस सरकारकी नीति यह रही है कि वह सीमाप्रान्तको भारतका प्रवेश-द्वार समझती है और दरवानको शेष भारतसे अलग रखना चाहती है। जब हम लोग कांग्रेसमें सम्मिलित हो गये तब उसको इस बातका अनुभव हुआ कि यह क्या हो गया? वह राष्ट्रको कुचल देना चाहती थी परन्तु यह चीज अब उसको अपने लिए खतरेका एक मूल कारण बन गयी। एक धार्मिक आन्दोलन अब एक राजनीतिक आन्दोलनमें परिवर्तित हो गया।

"जब यह स्थिति उत्पन्न हो गयी तब सरकारके कुछ एजेन्ट हमारे पास आये और बोले, 'हम आपकी मांगें सरकारसे स्वीकार करानेको तैयार हैं' परन्तु इसके साथ एक शर्त जुड़ी हुई थी और वह यह थी कि हमको कांग्रेस और महात्मा गांधीका साथ छोड़ देना होगा। हमने उनसे कहा, 'हम कांग्रेसको नहीं त्यागेंगे। पठान लोग कृतघ्न नहीं हैं। जो हमारे ऊपर उपकार करता है, उसे हम अकेला नहीं छोड़ते।' इसके पश्चात् सन्धि हो गयी। सीमा-प्रान्तके चीफ़ कमिश्नरने लार्ड इरविनको लिखा, 'इस प्रान्तमें दो आदमी नहीं रह सकते। यहाँ केवल एक ही व्यक्ति रहेगा, मैं अथवा खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ।' लार्ड इरविन एक उदार व्यक्ति थे। उनके मनमें मनुष्यताके लिए प्रेम था। महात्मा गांधीकी सलाहसे उन्होंने मुझे रिहा कर दिया। हमें जेलसे तो मुक्ति मिल गयी परन्तु अपना कार्य करनेके लिए हम मुक्त नहीं थे। लार्ड इरविनको पुलिसकी ओरसे रोज़ झूठी सूचनाएं मिला करती थीं जिनको वे गांधीजीके पास भेज दिया करते थे। अंग्रेज हमें आतंकमें रखना चाहते थे। उनको यह भय था कि कहीं कोहाट, बन्नू और हज़ारा जिलों-के पठान भी सरहदी पठानोंकी भाँति जाग्रत न हो जायँ। वे चाहते थे कि समूचा सीमा-प्रान्त जाग्रत न हो। इस बार फिर गांधीजी हमारी सहायताके लिए आगे आये। महात्मा गांधीने उनसे कहा, 'यदि आप इन लोगोंको फिरसे गिरफ्तार कर लेते हैं तो इसे सन्धि-भंग समझा जायगा।' सेनामें एक ऐसा अंग्रेज था जो खूब अच्छी तरहसे पश्तू जानता था। हम जहाँ कहीं जाते, वहाँ वह हमसे पहले

पहुँच जाता और लोगोंसे यह कहता :

'अमुक-अमुक नेता आये हैं। आप लोग उनके पास मत जाइएगा। आप उनसे कह दीजिए कि वे आपके गाँवसे चले जायँ।' परन्तु वह यह नहीं जानता था कि इस तरह वह हमारा प्रचार-कार्य कर रहा है। वह किस प्रकार ? वह इस प्रकार कि हमारा आन्दोलन एक सच्चा आन्दोलन था; एक धार्मिक आन्दोलन था। मैं आज भी आपसे यह कह रहा हूँ कि हमारे ऊपर खुदा, परमात्माकी दया हुई थी और उसकी कृपासे ही हम लोगोंमें जागरण हुआ था। हमारे छोटे बालकोंतकमें एक भावना भर गयी थी। जब कभी वे किसी अंग्रेजको मोटरकार-में जाते हुए देखते तब उससे कहते, 'अरे, तुम अभीतक यहाँ हो ?' हमारे देशकी चेतनाको बच्चोंकी इस भावनासे समझा जा सकता है। मैं आपसे कहता हूँ कि यह भावना यों ही उत्पन्न नहीं हुई। इसके पीछे ५१३ गाँवोंका त्याग है। यदि आज भी सीमा-प्रान्तमें यह भावना दिखलाई देती है तो इसका कारण यही है कि सीमा-प्रान्तने जितने बलिदान किये हैं उतने भारतके किसी अन्य प्रदेशने नहीं किये। सरकार हमारी प्रवृत्तियोंको रोक देना चाहती थी परन्तु किसी प्रकार हम उनको चलाते रहे। समूचे सीमा-प्रान्तमें ऐसा कोई गाँव न बचा जिसमें कि हम न गये हों। वहाँ जाकर हम अपने देश-बन्धुओंको सारी स्थितिका ज्ञान कराते थे और उन्हें उचित मार्गका निर्देश करते थे।

"एक खुदाई खिदमतगार किसीके प्रति कभी शत्रुताकी भावना नहीं रखता। जब सन् १९३२ ई० में हमें गिरफ्तार किया गया तब हमारे यहाँकी जन-संख्या छब्बीस लाख थी जिसमेंसे पाँच लाख खुदाई खिदमतगार थे। सन्धिके बाद भी पठानोंको यह अनुभव होता रहा कि उसके साथ किसी प्रकारकी सन्धि नहीं हुई है क्योंकि संधिकी अवधिमें भी उनके ऊपर आतंकका चक्र चल रहा था। प्रत्येक स्थानपर धारा १४४ लागू थी—जिलोंमें, तहसीलोंमें और सड़कोंपर भी। सड़कके इस ओर या उस ओर चार-चार मीलकी दूरीतक कोई सभा नहीं की जा सकती थी। मैं आपको यह भी बतला रहा हूँ कि हमारे साथ जो भी व्यवहार हुआ, उसके लिखित प्रमाण मेरे पास मौजूद थे जिनसे यह भी पता लगता था कि हिन्दुओं और मुसलमानोंको आपसमें लड़ानेके प्रयत्न किये गये। सरकारको यह ज्ञात हुआ कि महात्मा गांधी आ रहे हैं और उसको यह भी पता लगा कि मैं उनसे मिलनेके लिए जा रहा हूँ। निश्चित ही उनको यह खबर भी मिली होगी कि सारे कागज़ात मेरे पास हैं। उन दिनों मैं बीमार था और पेशावरमें पड़ा हुआ था। मेरा विचार दूसरे दिन सवेरे 'फ्रण्टियर मेल' से जाने-

का था परन्तु पुलिस रातमें ही आ गयी। उसने मुझे गिरफ्तार कर लिया। फिर एक स्पेशल ट्रेनसे मुझे हज़ारीबाग़ जेल भेज दिया गया। उस रातको ही मेरे साथ काम करनेवाले समस्त कार्यकर्त्ताओंको गिरफ्तार कर लिया गया और उनमें से प्रत्येकको तीन वर्षका कारावास दण्ड दे दिया गया।

"वहाँकी सारी घटनाओंका मुझको बादमें पता चला। मैं आपको बतला रहा हूँ कि मुझपर सरकारका भू-राजस्व कर बाकी नहीं था, फिर आप यह सोच सकते हैं कि सरकारका हमारे घरोंको लूटनेका और हमारा सामान उठाकर ले जानेका क्या उद्देश्य था। उसका उद्देश्य केवल यह था कि उसकी प्रतिष्ठा कायम रहे। इस कार्यके द्वारा वे लोग जनताको यह दिखला देना चाहते थे, 'तुम क्या हो और तुम्हारे नेता क्या हैं? सरकार तुम्हारे घरोंको लूट सकती है, तुम्हारे नेताओंको गिरफ्तार कर सकती है और उनका अपमान कर सकती है।' मैं इन सब बातोंके लिए सरकारसे कोई शिकायत नहीं करना चाहता क्योंकि वह वही करेगी जिसे कि वह ठीक समझेगी।

"आज उसका सारा साम्राज्य भारतके बलपर ही चल रहा है। यदि भारत उसके हाथोंसे निकल जायगा तो फिर उसका साम्राज्य कैसे स्थिर रह सकेगा? ऐसी स्थितिमें वे लोग भारतको दास बनाये रखनेके लिए विविध प्रकारकी चालों और दमनको उपयोगमें लायेंगे। इनके लिए मुझे उनके विरुद्ध कोई शिकायत नहीं है। वे जो कुछ भी करेंगे उसका हम स्वागत करेंगे लेकिन हमें अपने देशके लोगोंसे, अपने भाइयोंसे एक बहुत बड़ी शिकायत है जिसे कि हम दूर करना चाहते हैं। यदि हमारे बन्धुजन हमारी बातको नहीं समझ पाते तो भला हम उनसे क्या कह सकते हैं? हम तो उनको केवल प्रेमसे समझा सकते हैं और ईश्वरसे प्रार्थना कर सकते हैं कि वह उनको ऐसी समझ दे।"

बम्बईमें अपने रुकनेके आख़िरी दिन, २१ अक्तूबरको खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने गांधी सेवा सेना तथा 'वीमैन्स यूनिटी क्लब'के लगभग सौ सदस्योंको सम्बोधित किया। देशके निमित्त महिलाओंने जो त्याग किये थे उसकी उन्होंने सराहना की। सीमा-प्रान्तके बीचमें प्रशंसनीय कार्य करनेके लिए उन्होंने खुरशीद बहन नौरोजीको बधाई दी। उन्हें दो बार जेल जाना पड़ा था। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने इस बातपर बड़ी प्रसन्नता प्रकट की कि महिलाएँ अपने कर्त्तव्यके पालनमें बड़ी सजग हैं। उन्होंने कहा कि यदि भारतकी महिलाएँ जाग्रत हो जाती हैं तो विश्वमें कोई ऐसी शक्ति नहीं है जो इस देशको गुलाम रख सके।

विचारणा

१९३४

खान-बन्धुओंको वर्धामें बिलकुल घर सरीखा लगने लगा था और वे आश्रम-की प्रवृत्तियोंमें भाग लेने लगे थे। 'खान-बन्धु यहीं हैं और उनके साथ मेरा समय बहुत सुन्दर ढंगसे व्यतीत होता है।' गांधीजीने लिखा, "उनके साथ जितना ही अधिक रहा जायगा, उनसे उतना ही प्रेम बढ़ता जायगा। वे इतने भले, इतने सरल, फिर भी इतने सूक्ष्मग्राही हैं। सार ग्रहण करनेमें उनको देर नहीं लगती।"

डॉ० खान साहबने स्वेच्छासे जमनालाल बजाजकी गृहस्थीके रोगियोंकी चिकित्सा और उपचर्याका कार्य अपने ऊपर ले लिया था; एक ऐसी गृहस्थी जो गांधीजीसे मिलनेके लिए वर्धा आनेवालों और कार्यकर्त्ताओंके कारण हमेशा बढ़ती रहती थी। डॉ० खान साहब चिकित्सा और स्वच्छता सम्बन्धी अपने मिशनको लेकर वर्धाके आस-पासके गाँवोंमें नित्य दस-पन्द्रह मील पैदल घूमते थे। सबेरे टहलनेके समय गांधीजीका साथ देनेके लिए वे बहुत तड़के आश्रममें पहुँच जाते थे। उनके साथ टहलते समय वे बिलकुल चुपचाप रहते थे और एक शब्द भी न बोलते थे। उसके बाद वे आश्रमके रोगियोंको देखते हुए वापस घर आते थे।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ नित्य सबेरे और शाम गांधीजीकी प्रार्थनामें सम्मि-लित होते थे और उनके साथ टहलने भी जाया करते थे। जिस समय नित्य सबेरे गांधीजी तुलसीकृत रामायणका पाठ करते उस समय खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ उनका साथ देते थे। एक दिन उन्होंने प्यारेलालसे किसी भजनके सम्बन्धमें कहा, 'इस भजनके संगीत ने मेरी आत्माको तृप्त कर दिया है। इसे उर्दू लिपिमें लिख दीजिए और इसका मेरे लिए उर्दू अनुवाद कर दीजिए।' मूल रूपसे उनके स्व-भावमें निवृत्तिभावकी प्रधानता थी इसलिए उनको जितना शान्तिके साथ प्रार्थना करना और मौन रहकर कार्य करना अच्छा लगता था उतना और कुछ नहीं। इन्हीं दो बातोंके कारण उन्होंने बंगालके गाँवोंमें जानेका और वहाँके कार्यमें अपने को आकण्ठ निमग्न कर देनेका निश्चय किया था। कुछ ही मास पूर्व उन्होंने बंगाल-के निर्धन मुसलमानोंकी सादी झोपड़ियोंमें खद्दरकी सामर्थ्यका प्रत्यक्ष दर्शन किया था। अब वे उन लोगोंके लिए ग्राम-उद्योगोंके पुनरुज्जीवनका सन्देश लेकर जाना

चाहते थे। इस विषयमें उनकी गांधीजीके साथ विस्तारसे चर्चा हो चुकी थी और वे बंगालमें अपने कार्यकी रूप-रेखा तैयार कर चुके थे। उनका विचार अपने प्रदेशमें प्रवेश करनेकी अनुमति मिलनेतक बंगालके गाँवोंमें रहनेका था। ग्रामीणों-की स्थितिका अध्ययन करनेके लिए वे वर्धाके निकटवर्ती गाँवोंमें भी जाते थे।

१६ नवम्बरको वे नागझरी गाँवमें गये। गाँवमें घूम लेनेके बाद उन्होंने वहाँ एक सभामें भाषण किया। उन्होंने कहा कि इस गाँवमें आनेपर उनको खुशी हुई है लेकिन उनका मन उन लगभग चालीस स्वयंसेवकोंके इतिहासको स्मरण करके खिन्न हो गया है जो पिछले संघर्षमें जेल गये थे। उन्होंने कहा कि गाँवोंकी स्थिति बहुत बिगड़ गयी है। उनके निवासी फटे कपड़े पहनते हैं और पेट भरनेके लिए उनके पास पर्याप्त भोजन भी नहीं है। उनके लिए न चिकित्सालय हैं और न विद्यालय। उनकी झोपड़ियाँ ऐसी हैं कि उनमें यूरोपके कुत्ते और गधे भी नहीं रहना चाहेंगे। भारत किसी समय सोनेकी भूमि कहलाता था परन्तु आज दासता ने उसे भिखारी बना दिया है। जबतक स्वराज्य नहीं मिल जाता तबतक भारतके लोग सुखी नहीं हो सकते। यदि उनमें आपसमें एकता होती, यदि उन्होंने अहिंसाका पालन किया होता और यदि वे कांग्रेसके कार्यक्रमपर चले होते तो उनको आज निश्चय ही स्वाधीनता मिल गयी होती।

अगले दिन मौजा देवलीमें लगभग एक हज़ार ग्रामीणोंकी एक सभाको सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा कि वहाँ आकर उन्हें प्रसन्नता हुई है परन्तु इस बात पर खेद भी हुआ है कि उस सभामें महिलाएँ नहीं हैं। उन्होंने कहा, 'मैं यह चाहता हूँ कि पुरुष और नारी एक गाड़ीके दो पहियोंके समान हों। जिस प्रकार बिना दो पहियोंके कोई गाड़ी नहीं चल सकती उसी प्रकार पुरुष और नारीके दो पहियोंके बिना स्वराज्य नहीं मिल सकता।' उन्होंने इस बातके लिए गाँववालों-पर कटाक्ष किया कि वे लोग पुलिससे बहुत डरते हैं। उन्होंने टिप्पणी की कि यूरोपियन तो संख्यामें बहुत कम थे। यदि भारतवासियोंने उनकी सहायता न की होती तो वे भारतमें टिक न पाते। उन्होंने श्रोताओंको धर्मकी शिक्षाओंका पालन करनेका उपदेश देते हुए कहा कि वे केवल ईश्वरसे डरें। फिर उनको पुलिस, सेना या संसारकी किसी भी शक्तिसे डरनेकी आवश्यकता न रहेगी।

नवम्बरके अंतिम सप्ताहमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने संयुक्त प्रदेशका एक अल्पकालीन दौरा किया। २७ नवम्बरको मथुरामें एक विशाल जन-समुदायको सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा कि वे नगरोंमें भाषण करनेको अधिक उत्सुक नहीं हैं बल्कि वे गाँवोंमें जाकर सेवा कार्य करना चाहते हैं, क्योंकि वहाँ स्थिति

बहुत बिगड़ चुकी है। अपने सम्बन्धमें उन्होंने कहा कि वे किसी प्रान्तविशेषके नहीं हैं बल्कि वे ईश्वरके एक सेवक हैं और उनके मनमें प्रत्येक मनुष्यकी सेवा करनेकी कामना है।

वे उसी दिन मोटर-कारसे अलीगढ़ पहुँचे। मार्गमें जगह-जगह उनका स्वागत होनेके कारण उन्हें निश्चित समयसे दो घंटे विलम्ब हो गया। वे एक जुलूसमें ले जाये गये। यह जुलूस अलीगढ़की गलियोंमें घूमता हुआ लाइन लायब्रेरी पहुँचा जहाँ कि नागरिकोंकी एक सभामें उनको भाषण करना था। लाइन लाइब्रेरीके समीप पहुँचकर जुलूस कई हजार लोगोंके जन-समूहमें बदल गया। वहाँ विश्व-विद्यालयके छात्रोंकी भी एक बहुत बड़ी भीड़ एकत्र थी। गगनभेदी हर्षध्वनिके बीच खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ भाषण करनेके लिए खड़े हुए। उन्होंने इतने उत्साह-पूर्ण स्वागतके लिए अलीगढ़के नागरिकोंको हार्दिक धन्यवाद दिया और उनके प्रति उन्होंने जो प्रेम और स्नेह व्यक्त किया उसके लिए भी उन्हें धन्यवाद दिया। उन्होंने आगे कहा, "इस प्रकारके जुलूसों और सभाओंका समय बहुत पहले ही निकल चुका है। इस समय तो प्रत्येक व्यक्तिको व्यावहारिक कार्यमें लगना चाहिए जिसमें कि उसकी सच्ची प्रसन्नता निहित है। उन्होंने इस बातपर बल दिया कि भारतकी आबादीका नब्बे प्रतिशतसे भी अधिक भाग गाँवोंमें रहता है और वह एक असह्य गरीबीमें अपने दिन काट रहा है, अतः नगरोंमें रहनेवाले हिन्दुओं और मुसलमानोंमेंसे प्रत्येक व्यक्तिका यह कर्त्तव्य है कि वह ग्रामीणोंकी सहायता करे। उन्होंने उपस्थित लोगोंसे यह कहा कि आज सायंकाल आपने जो प्रेम-भाव प्रदर्शित किया यदि वह वास्तविक है तो आपको ग्रामोंके उत्थानके लिए कांग्रेसके कार्यक्रमको कार्यान्वित करना चाहिए।"

उन्होंने कहा कि देशके अधःपतनका मुख्य कारण यह है कि हम दासताको चाहते हैं। इस दशामें न तो हिन्दू और मुसलमान ही यह गर्व कर सकते हैं कि उनका कोई धर्म अथवा उनकी कोई अपनी संस्कृति है। अतः उनको दासताके विचारको पूर्ण रूपसे मिटा देनेके लिए एक हो जाना चाहिए; उस विचारको जो कि उनके अन्तस्तलको खाये जा रहा है। हिन्दू और मुसलमानोंमें एक-दूसरेके विरुद्ध फैले हुए अविश्वासका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि वह सब प्रचारके अतिरिक्त कुछ नहीं है जिसने कि हमेशा भारतको अपने अधिकारमें रखना चाहा है। उन्होंने लोगोंसे कहा कि उन सबको ईश्वरके ऊपर पूरी सच्चाईसे विश्वास करना चाहिए। ईमानदारी, विश्वसनीयता और निर्भीकताके साथ मानवताकी सेवा करनेके लिए उनको अपने-आपको एक खुदाई खिदमतगार समझना चाहिए।

भारतकी स्वाधीनता सबका एकमात्र लक्ष्य होना चाहिए। केवल भारतकी स्वाधीनतामें ही सबकी समृद्धि निहित है।

उन्होंने मुसलमानोंसे कहा कि इस्लाम स्वाधीनताके लिए आया लेकिन आज उनको यह देखकर दुःख होता है कि मुसलमान पीछे हट रहे हैं और वे अपने धर्मको भूलते जा रहे हैं। यदि हिन्दू स्वाधीनताके इस संघर्षको त्याग भी दें तो भी मुसलमानोंको अपने धर्मका पालन करते हुए उससे विमुख नहीं होना चाहिए।

अपने प्रान्तका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि वहाँ केवल छब्बीस लाख लोग हैं फिर भी वे अपनी स्वाधीनताके लिए ही नहीं बल्कि समस्त भारतको स्वतंत्रता दिलानेके लिए पूर्ण निश्चय कर चुके हैं। उन्होंने कहा, उन्हें इस बात की प्रसन्नता है कि वर्तमान आन्दोलनने उनके लोगोंको शेष भारतके निकट संपर्क-में ला दिया है। सीमाप्रान्त सदैव अहिंसावादी रहा लेकिन वहाँ अध्यादेशका शासन चलता रहा। उन्होंने श्रोताओंको यह सलाह दी कि वे अपने बीचके मत-भेदोंको दूर कर दें और उनका अनुगमन करें।

खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँ अपने बारह वर्षके पुत्र अब्दुल ग़नीके साथ ४ दिसम्बरको वर्धा लौट आये। उनकी चौदह सालकी पुत्री मेहरताज़ कुछ दिनों पूर्व ही शिक्षा ग्रहण करनेके लिए मीरा बहनके साथ इंगलैण्डसे लौटी थी। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने सोचा, यदि एक पठान लड़की पढ़नेके लिए इङ्गलैण्ड जा सकती है तो 'कन्या-आश्रम' अपनानेमें भला उसे क्या कठिनाई हो सकती है? आश्रमका सरल जीवन, शांत वातावरण, पवित्रता, स्वतंत्रता और शारीरिक श्रम करनेपर बल; खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको इन्हीं सब कारणोंसे आश्रम अच्छा लगा और उनकी यह लालसा हो उठी कि उनकी पुत्री अपनी शिक्षा वहीं ग्रहण करे। उन्होंने उसकी देखभाल मीरा बहनको सौंप दी।

वर्धा अब उनके लिए दूसरे घर जैसा बन गया था। तीन वर्षकी लम्बी अवधिके बाद उनकी पुत्री मेहरताज़ और पुत्र ग़नी, वली तथा अली अपने स्नेह-शील पिताके पास, सब साथ-साथ रह रहे थे।

स्वाधीनताके ठीक सौ दिनके बाद ७ दिसम्बरको शामके पाँच बजे खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ गिरफ्तार कर लिये गये। वर्धाका पुलिस अधीक्षक अपने साथ बम्बईकी पुलिसके किसी अधिकारीको लेकर खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको खोजता हुआ सत्याग्रह आश्रममें आया। उस समय वे ऊपरके खण्डमें गांधीजीके पास बैठे हुए थे। मीरा बहनने आगंतुकोंका आगमन घोषित किया। गांधीजीने मीरा बहनसे उन लोगोंको ऊपर ले आनेको कहा। वर्धाका पुलिस अधीक्षक ऊपर आ गया

और उसने गांधीजीको यह बतलाया कि वह खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके लिए बम्बईके प्रेसीडेन्सी मजिस्ट्रेटका गिरफ्तारीका वारन्ट लेकर आया है। गांधीजीने उससे वारन्ट माँगा और उसे खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको पढ़कर सुनाया। उनके ऊपर धारा १२४-ए के अन्तर्गत आरोप लगाया गया था। पुलिस अधिकारीके यह पूछनेपर कि आप कबतक तैयार हो सकेंगे, खान अब्दुल ग़फ्फार खाँने कहा कि मैं तो बिलकुल तैयार हूं। परन्तु गांधीजीने कहा कि यदि अधिकारीको कोई आपत्ति न हो तो खान साहब जमनालाल बजाजके यहाँ जाकर अपने भाई तथा बच्चोंसे मिल लें। गांधीजी और आश्रमवासी खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके साथ पुलिसकी गाड़ीतक आये। कुछ मिनटमें ही वे जमनालालजीके यहाँ पहुँचा दिये गये।

श्री महादेव देसाई खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँकी गिरफ्तारीके प्रत्यक्ष साक्षी थे। खान-बन्धुओंसे अपनी चर्चाके आधारपर उन्होंने 'दो खुदाई खिदमतगार' पुस्तकके रूपमें उनके लघु चरित्र रेखांकन प्रस्तुत किये हैं। महादेव देसाईने लिखा है :

"परन्तु पिताके पास बालकोंकी अश्रुधारामें मिलानेके लिए आँसू न थे। वे यह जानते थे कि उनको एक ऐसी मैत्रीका सौभाग्य मिला है जो उनकी बढ़ती हुई परख और परीक्षणोंमें निरन्तर विकसित होती जायगी और कभी घटेगी नहीं। गांधीजी और जमनालालजीकी मित्रता, जिसे वे बिना तनिक भी चिन्ता किये हुए अपने बच्चोंको सौंप सकते थे। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको तो ९ दिसम्बरको ही बंगालके लिए रवाना हो जाना था परन्तु ग्रामोद्योग परिषद्के बोर्डकी पहली बैठकके लिए उनको जमनालाल बजाजने आग्रहपूर्वक रोक लिया था। इस प्रकार उनकी बंगाल यात्रा १५ दिसम्बरतकके लिए स्थगित हो गयी थी। ७ तारीखकी शामको जब पुलिस अधिकारी उनके लिए गिरफ्तारीका वारंट लेकर आया तब हम लोग वास्तवमें उनके बंगालके कार्यक्रमपर विचार और चर्चा कर रहे थे। ऐसे बुलावोंके लिए सदा तैयार रहनेवाले उस महान् पठानने वारंट मिलते ही कहा कि मैं चल देनेको तैयार हूँ। परन्तु उनको अपने मित्रों, भाई तथा बच्चोंसे मिलनेकी अनुमति दे दी गयी। वे जब चलनेकी तैयारी कर रहे थे तब गांधीजीने उनसे कहा, 'अच्छा तो खान साहब, पिछले अवसरोंसे विपरीत इस बार हम लोग बचाव करने जा रहे हैं।' खान साहबको किंचित् अचरज हुआ। वे बोले, 'जिस मार्गको मैंने सन् १९१९ से ग्रहण किया है, उससे भिन्न रास्तेपर मैं नहीं जाना चाहता।' 'मैं इस मामलेमें आपकी भावनाको

समझ रहा हूँ।' गांधीजीने कहा, 'लेकिन यह वैसा अवसर नहीं है। यदि हमारा वश चलेगा, तो हम लोग जेल नहीं जाना चाहेंगे।' उन्हें सीधा प्रत्युत्तर मिला, 'जैसी आपकी इच्छा।'

"बड़े भाईका छोटे भाईसे अलग होना वैसा ही था जैसे कि किसी वस्त्रको बीचमेंसे चीर दिया जाय और उसके एक टुकड़ेमें ऐंठन पड़कर रह जाय। तीन वर्षतक जेलमें और फिर सौ दिनकी इस प्रतिबन्धित स्वाधीनतामें दोनों भाइयों-ने आनन्द और दुःखोंमें एक-दूसरेका हिस्सा बँटाया था। परन्तु छोटा भाई अपने इस व्यक्तिगत कारणको लेकर दुःखी नहीं था। उन्होंने अपने बालकोंसे वीर बननेको कहा और उनको अपने पितृतुल्य गांधीजी तथा जमनालालकी कृपामय छायामें सादगी और आत्म-अनुशासनका पाठ पढ़नेको कहा।

"लेकिन ऐसा लगा कि एक विषाद उनके मुखपर अपनी हल्कीसी छाया डाल रहा है, 'मैं बंगालके गाँवोंके गरीब मुसलमानोंको जो वचन देकर आया था, काश, मैं उसे पूरा कर पाता! मैंने उनसे यह वादा किया था कि मैं तुम्हारे बीचमें आकर रहूँगा और काम करूँगा। और अब मैं उनकी इतनी छोटीसी सेवा भी न कर सकूँगा।' क्षणभर रुककर उन्होंने एक गहरे विषादके स्वरमें कहा, 'जहाँतक सरहदी सूबेकी बात है, मैं स्वयं भी नहीं जानता कि मैं क्या कहूँ? मेरे लोग मेरी गिरफ्तारीसे उत्तेजित न हों और कोई अविवेकपूर्ण कार्य न करें। वे इस घटनाको शांत भावसे और ठंडे दिमाग़से साहसके साथ ग्रहण करें। वे अपने आंतरिक मतभेदोंको मिटानेके लिए, अपनेमें एकताकी भावना जाग्रत करनेके लिए और मौन कार्य करनेके लिए मिल बैठें। मुझे इस बातका दुःख है कि हम लोगोंके ऊपर सब प्रकारके लांछन लगाये जाते हैं और हमको यह सिद्ध करनेका अवसर भी नहीं दिया जाता कि वे मिथ्या हैं। एक सरकारी रिपोर्टमें मेरे प्रान्तको 'खूनी प्रदेश' बतलाया गया परन्तु उन लोगोंने सरल और अज्ञानमें डूबे हुए पठानोंमें शिक्षा-प्रसारके अराजनीतिक कार्य और समाज-सुधार तकके लिए हमें कौनसा अवसर दिया?'

"परन्तु जैसे ही बम्बईके लिए विदा लेनेका क्षण आया, वैसे ही उनके मनसे यह विषाद भी तिरोहित हो गया। जमनालाल बजाज और उनकी भली पत्नी जानकी देवीसे विदा लेते समय उन्होंने कहा, 'मुझे इस बातका पूर्ण निश्चय है कि यह सब ईश्वरकी इच्छा है। वह मुझे जिस समयतक बाहर रखना चाहता था, उस समयतक उसने मुझे बाहर रखा और अब उसकी यह इच्छा है कि मैं भीतर रहकर सेवा करूँ। जिसमें वह खुश है, उसीमें मैं भी खुश हूँ।"

गांधीजीने महादेव देसाईकी पुस्तककी भूमिकामें लिखा है :

"खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाके सम्पर्कमें आनेकी अभिलाषा तो मुझे हमेशा रही है लेकिन गत वर्षके आखिरी महीनोंसे पहले मुझे कभी ऐसा अवसर नहीं मिला कि मैं कुछ समयतक उनके साथ रहता। परन्तु हजारीबाग जेलसे छूटनेके बाद, सौभाग्यवश शीघ्र ही न केवल खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ, बल्कि उनके भाई डॉ० खान साहब भी मेरे पास आ गये। भाग्यकी बात है कि २७ दिसम्बरतक सीमा-प्रान्तमें उनका प्रवेश निषिद्ध कर दिया गया था और कांग्रेसके आदेशके अनुसार वे आज्ञा-भंग नहीं कर सकते थे। अतः उन्होंने वर्धामें सेठ जमनालाल बजाजका आतिथ्य स्वीकार कर लिया। इस प्रकार मुझे इन भाइयोंके घनिष्ठ सम्पर्कमें आने-का मौका मिल गया। जितना-जितना मैं उन्हें जानता गया, उतना ही अधिक मैं उनकी ओर आकर्षित होने लगा। उनकी पारदर्शी सच्चाई, स्पष्टवादिता और हद दर्जेकी सादगीका मुझपर बहुत प्रभाव पड़ा। साथ ही मैंने यह भी देखा कि सत्य और अहिंसामें केवल नीतिके तौरपर नहीं, बल्कि ध्येयके रूपमें उनका विश्वास हो गया है। छोटे भाई खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ तो मुझे गहरी धार्मिक भावनाओंसे ओत-प्रोत प्रतीत हुए; परन्तु उनके विचार संकीर्ण नहीं हैं। मुझे तो वे विश्व-प्रेमी मालूम पड़े। उनमें यदि कोई राजनीतिकता है तो उसका आधार धर्म है और डाक्टर साहबकी तो कोई राजनीति है ही नहीं। मुझे उनके सम्पर्कका जो अवसर मिला उससे मैं इस परिणामपर पहुँचा कि इन दोनों भाइयोंको बहुत ग़लत समझा गया है। इसलिए मैंने महादेव देसाईसे कहा कि वे उन लोगोंसे उनके जीवनकी पूरी जानकारी लेकर जनताके लिए उनका एक रेखा-चित्र प्रस्तुत करें जिसमें कि उन्हें मानवके रूपमें परिचित कराया जाय।"

अपने दिनांक ११ दिसम्बर १९३४ के एक सार्वजनिक वक्तव्यमें गांधीजीने शासन द्वारा तिरस्कृत अपनी सीमा-प्रान्तकी यात्राका उल्लेख करते हुए कहा :

"वर्तमान क्षणमें मेरी इच्छा सविनय आज्ञा भंग करनेकी नहीं है। मैं ईश्वरका एक विनम्र सेवक हूँ। मेरा वहाँ (सीमाप्रांत) जानेका उद्देश्य यह है कि मैं उन लोगोंसे मिलूँ और उनके बारेमें जानूँ जो कि अपने आपको खुदाई खिदमत-गार कहते हैं। उनके वीर नेताकी गिरफ्तारीके बाद मेरे अंतरकी यह प्रेरणा और भी बलवती हो गयी है। परन्तु अधिकारियोंकी आज्ञाके उल्लंघनसे मेरा तात्कालिक उद्देश्य पूर्ण नहीं हो सकता इसलिए मैं आवश्यक अनुमति प्राप्त करने-के लिए भी सम्भव वैधानिक उपायोंसे कोशिश करना चाहता हूँ।"

शासन द्वारा अस्वीकृत गांधीजीकी इस सीमा-प्रांत यात्राके सम्बन्धमें मि०

सी० एफ० एन्ड्रूज़ने भारत सरकारके गृह-सचिव मि० हैलेटसे दो वार मुलाकात की। गांधीजीके सीमा-प्रान्त जानेमें जो ख़तरा था उसे स्पष्ट करते हुए गृह-सचिवने कहा, 'उनके प्रयोजन कुछ भी हों, उनकी इस यात्राके ग़लत अर्थ लगाये जा सकते हैं और उसका परिणाम यह हो सकता है कि आन्दोलन और हिंसाकी भावना फिर जाग जाय।'

तब मि० एन्ड्रूज़ने उनको बतलाया कि गांधीजी खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके लिए स्वयंको उत्तरदायी अनुभव कर रहे हैं। वे नेता हैं और उनके जिन निष्ठावान् अनुयायियोंने उनके कार्यको लेकर कष्ट उठाये हैं और जो जेल गये हैं उनके प्रति वे भी निष्ठाकी भावनासे बंधे हैं। मि० एन्ड्रूज़ने गांधीजीसे पूछा था कि उन्होंने इतने शीघ्र, बिना काफ़ी पूछताछके सीमा-प्रान्तके आन्दोलनको स्वीकार क्यों कर लिया? गांधीजीने उनसे कहा कि उन्होंने पूछ-ताछ कर ली है और स्वयं खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ द्वारा भी उनको पूरा भरोसा दिलाया जा चुका है। फिर मि० एन्ड्रूज़ने अपनी निजकी स्थितिको बतलाया। कुछ मास पूर्व जब गांधीजीने उनके आगे सीमा-प्रान्त जानेका पहली वार सुझाव रखा तब एन्ड्रूज़ साहबने तुरंत ही इसके लिए अपनी असम्मति प्रकट कर दी। वे गाँवोंकी योजनाको क्यों छोड़ देना चाहते हैं और सीमा-प्रान्त क्यों जाना चाहते हैं? गांधीजीने कहा कि यह विचार उनके मनमें प्रवेश कर गया है। गांधीजी अपने विचारपर स्थिर हैं। वे इस उद्देश्यको लेकर सीमा-प्रान्त जाना चाहते हैं कि वे वहाँके लोगोंसे मिलेंगे और उनसे सीधा सम्पर्क स्थापित करेंगे। वे वहाँ जाकर यह देखना चाहते हैं कि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने पठानोंको जो अहिंसाकी शिक्षाएँ दी हैं उन्हें उन लोगोंने अपने जीवन में कितना उतारा है? गांधीजीका सीमा-प्रांत जानेका एक आशय यह भी है कि वे ग्राम-उद्योगोंके विकासमें वहाँके निवासियोंको सहायता देना चाहते हैं।

मि० हैलेटने एन्ड्रूज़ साहबसे स्पष्ट रूपसे कह दिया कि गांधीजीका सीमा-प्रांत भ्रमण 'औचित्यहीन ही नहीं बल्कि एक दुःखान्त घटना' होगी। इसके बाद मि० एन्ड्रूज़ गांधीजीके ऊपर खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके प्रभावका उल्लेख करते रहे और बोले कि स्वयं उन्होंने भी खान साहबके सम्बन्धमें बहुत अच्छा मत बना रखा है। इसपर गृह-सचिवने कहा कि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके पिछले दिनोंके भाषण, जिनमें एकपर उनके ऊपर अभियोग चल रहा है, जातीय घृणाकी भावनाओंको उत्तेजना देते हैं। वे उनके सन् १९३१ के भाषणों जैसे ही हैं। गृह-सचिव मि० हैलेटने आगे कहा कि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ एक हठधर्मी, बल्कि एक ईमानदार हठधर्मी व्यक्ति हैं जिनकी हठधर्मिताने उनकी सारी अच्छी बातोंको

दवा दिया है। मि० एन्ड्रूज़ने अपनी राय देते हुए कहा, 'यह भी सम्भव है, उन्होंने यह सोचा ही न हो कि वे अपनी इन गतिविधियों और भाषणों द्वारा अहिंसाके सिद्धान्तको आघात पहुँचा रहे हैं।'

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँकी विचारणासे कुछ पहले गांधीजीने वल्लभभाई पटेलको निम्नांकित पत्र लिखा :

"मैं आपको खान साहबके लिए एक नया वक्तव्य भेज रहा हूँ। मैं समझता हूँ कि यह करने योग्य काम है और इसे करना चाहिए। मैं उनको भी एक पत्र भेज रहा हूँ। आप उसको पूरा पढ़ लीजिएगा ताकि मुझको-आपको आगे वही न दुहराना पड़े। मैं इस वक्तव्यमें खेदकी अभिव्यक्तिको अत्यंत महत्त्वपूर्ण समझ रहा हूँ। परन्तु इस सम्बन्धमें और पूरे वक्तव्यके सम्बन्धमें अंतिम निर्णय आपका होना चाहिए। मैं इतनी दूरीपर हूँ कि यहाँसे निश्चित रूपसे कुछ भी नहीं कह सकता। मैं यह भी महसूस कर रहा हूँ कि इस मामलेमें एक वकील नियुक्त कर लेना चाहिए। वही वक्तव्यको पढ़े। उसे इस सम्बन्धमें बहस नहीं करनी है कि अभियुक्त दोषी है अथवा निर्दोष। यदि आवश्यक समझा जाय तो वह भाषणका विश्लेषण करे। इसके अलावा वह केवल मामलेपर 'दृष्टि रखे'। साक्षियोंके साथ जिरह करनेका कोई प्रश्न नहीं है। ये मेरे सुझाव मात्र हैं। इन्हें आप स्वीकार करें या नहीं—जैसा भी आप उचित समझें।"

२३ दिसम्बर १९३४ को खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको बम्बईके चीफ़ प्रेसीडेन्सी मजिस्ट्रेट मि० एच० पी० दस्तूरके आगे उपस्थित किया गया। उन्हें पहरेमें न्यायालयमें लाया गया। उनको देखते ही समस्त दर्शकगण उठकर खड़े हो गये और उन्होंने तालियाँ बजायीं। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने उन्हें झुककर अभिवादन किया और फिर वे अपने वकील भूलाभाई देसाईके पीछे जाकर अपनी जगह बैठ गये। लोक अभियोजक मि० जी० एल० वाल्करने अदालतको सम्बोधित करते हुए कहा कि अभी; मामलेकी इस स्थितिमें वे पूरा भाषण पढ़ना आवश्यक नहीं समझ रहे हैं परन्तु वे पहले उस धाराका उल्लेख करना चाहते हैं जिसके अन्तर्गत खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके ऊपर आरोप लगाया गया है। उन्होंने बहसको आगे बढ़ाते हुए कहा कि २७ तारीखको अभियुक्त द्वारा किये गये भाषणका उद्देश्य एक वैमनस्य उत्पन्न करना था और शासनके प्रति घृणा एवं अपमानकी भावनाएँ फैलाना था अतः यह अपराध आरोप १२४-एकी मुख्य धाराके अन्तर्गत आता है; उसकी तीन व्याख्याओंके अन्तर्गत नहीं जिनका कि धाराके साथ उल्लेख है।

मि० भूलाभाई देसाईने उस साक्षीसे जिरह करनेसे इनकार कर दिया जिसने

यह कहा कि भाषण बम्बईके नागपद नेबर हाउसमें किया गया और उसमें लग-भग २५० व्यक्ति उपस्थित थे। गवाहने कहा कि उनमें मुख्यतया भारतीय ईसाई थे।

इसके पश्चात् मजिस्ट्रेटने अभियुक्तके विरुद्ध आरोपपत्र पढ़ा और उससे पूछा कि वह अपनेको इस आरोपके लिए दोषी स्वीकार करता है अथवा दोषी स्वीकार नहीं करता?

ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ : 'मैं आरोपको स्वीकार नहीं करता।'

मजिस्ट्रेट : 'तब क्या आप यह कहना चाहते हैं कि आप दोषी नहीं हैं?'

ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ : 'नहीं, मैं आरोपको स्वीकार नहीं करता।'

मजिस्ट्रेट : 'तब क्या आप आरोपके लिए दोषी होनेसे इनकार करते हैं?'

भूलाभाई देसाई : 'श्रीमन्, देखते हैं कि एक अभियुक्त अपनेको या तो दोषी स्वीकार करता है अथवा दोषी स्वीकार नहीं करता। धाराके शब्दोंमें 'मैं आरोप स्वीकार नहीं करता' अभिवचन तीसरे विकल्पमें आता है।'

मि० वाल्कर : 'यदि अभियुक्त दोषका स्वीकरण नहीं करता तो उसे प्रतिनिधित्वका अधिकार प्राप्त है?'

भूलाभाई देसाई : 'निश्चित ही।'

मजिस्ट्रेटने अभियुक्त द्वारा कहे गये अभिवचनको लिख लिया। इसके पश्चात् उसने अभियुक्तसे पूछा कि 'क्या उसके भाषणका अनुवाद ठीक है?'

'मैं नहीं कह सकता क्योंकि मैं आरोपकोस्वीकार नहीं करता।' खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने कहा। उनका यह लिखित वक्तव्य पढ़ा गया :

"मैंने आरोप-पत्रको तथा उससे संलग्न अपने हिन्दुस्तानीमें किये गये भाषणके अनुवादको देख लिया है। यद्यपि अनुवादकी सामान्य प्रवृत्तिमें पर्याप्त सुधारकी आवश्यकता है फिर भी मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मेरे भाषणके मुख्य कथन सही हैं और जैसा कि मेरे वकील मित्रोंने मुझको बतलाया है, वे उस धाराके खण्डोंके अन्तर्गत आ जाते हैं जिसके लिए मुझपर अभियोग क़ायम किया गया है।

"मैं एक निष्ठावान् कांग्रेसजन हूँ और मैं उसकी इस नीतिको स्वीकार करता हूँ कि इन दिनों गिरफ्तार होकर जेल न जाया जाय।

"इसलिए, कुछ भी हो, मेरी इच्छा राजद्रोहात्मक शब्दोंको कहनेकी नहीं थी; भले ही वे मेरे अज्ञानमें व्यक्त हुए हों। मुझे अपने उन कथनोंपर खेद है जिनके लिए मुझपर अभियोग क़ायम किया जा सकता है।

"इसके साथ ही मैं यह कहना चाहता हूँ कि मेरे ईसाई मित्रोंने जब मुझे

भाषण करनेको आमंत्रित किया और खुदाई खिदमगार आन्दोलनके वर्णनके लिए प्रेरित किया तब मैं उन तथ्योंको प्रकट करनेको बाध्य था, जिनको कि आन्दोलन के बारेमें मैं सत्य मानता था। मेरा आशय किसीकी संवेदनशीलताको आघात पहुँचानेका नहीं था।

"सम्भवतः मेरे कथनकी पुष्टि उस सम्मान-भावनासे हो जाती है जो कि मैंने वहाँ अपने स्कूलके दिनोंके अंग्रेज हेड मास्टरके प्रति प्रदर्शित की थी। मुझे आशा है, मेरा पूरा भाषण पढ़ लेनेके पश्चात् अदालतके मनमें यह संशय नहीं रहेगा कि मेरा प्रयोजन सरकारके विरुद्ध अभियोग लगाना था। वस्तुतः मैं आन्दोलनके निर्दोष चरित्रपर बल दे रहा था।"

इसके पश्चात् मि० वाल्करने मजिस्ट्रेटको सम्बोधित करते हुए कहा कि अभियुक्त द्वारा किये गये भाषणमें शासनके लिए 'निकृष्ट कोटिके और सबसे निचले स्तरके' उद्देश्य निहित हैं और इस प्रकार वह मुख्य धाराके अन्तर्गत आ जाता है। उन्होंने भाषणको पढ़ते हुए उन अंशोंके ऊपर टिप्पणी की, जिनपर कि अभियोग आधारित था। उन्होंने इस भाषणको 'आपत्तिजनक एवं अत्यन्त राज-द्रोहात्मक' बतलाते हुए इस बातका अनुरोध किया कि उसके ऊपर तदनुरूप काररवाई होनी चाहिए।

मजिस्ट्रेटने अपने आदेशोंको रोक लिया और मुक़दमेको १५ दिसम्बर, शनिवार ११ बजे दिनतकके लिए स्थगित कर दिया।

सरकारी वकील मि० वाल्कर 'मुकुट' (ब्रिटेनके सम्राट्) की ओरसे उप-स्थित हुए थे और मि० भूलाभाई देसाई, मि० के० एम० मुंशी तथा मि० कानूगा अभियुक्तका प्रतिनिधित्व कर रहे थे।

अदालत छोड़नेसे पहले वकीलोंके बार असोसिएशनके कतिपय सदस्यों तथा वहाँ उपस्थित कांग्रेस नेताओंने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँसे बड़े स्नेहके साथ हाथ मिलाया।

१५ दिसम्बरको चीफ़ प्रेसीडेन्सी मजिस्ट्रेट मि० दस्तूरने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको दो वर्षके लिए कठोर कारावास दण्ड दिया। अपने फ़ैसलेके बीचमें उन्होंने कहा :

"यद्यपि अभियुक्त अपने द्वारा दिये गये लिखित वक्तव्यमें आरोपको स्वीकार करनेसे इनकार करता है; उसका तर्क यह प्रतीत होता है कि उसकी इच्छा राजद्रोहात्मक शब्द कहनेकी न थी और अज्ञानमें उसने कुछ बातें कह दीं, इस परिस्थितिमें मैं सचमुच यह समझ सकनेमें असफल रहा कि अभियुक्तके विद्वान्

वकीलने मेरे निर्दोष लिखनेके अभिवचनपर क्यों आपत्ति की ?

"किसी भी साक्षीसे जिरह करनेका कोई प्रयास नहीं किया गया और आशुलिपिमें लिखी गयी टिप्पणियोंकी शुद्धता और अनुवादका किसी तरहसे खंडन नहीं किया गया। अपने लिखित वक्तव्यमें अभियुक्त यह कहता है कि अनुवादकी सामान्य प्रवृत्तिमें पर्याप्त सुधारकी आवश्यकता है, परन्तु वह अपने भाषणके मुख्य कथनोंके सही होनेको स्वीकार करता है, जिनके बारेमें उसके वकील मित्रोंने उसे यह सलाह दी है कि वे भारतीय दण्ड संहिताकी उस धाराके अन्तर्गत आ जाते हैं जिसके लिए उसपर अभियोग क़ायम किया गया है। उसकी इच्छा राजद्रोहात्मक शब्द कहनेकी न थी और उसे इस बातका खेद है कि अनजानमें ही सही, उसने कुछ ऐसी बातें कह दीं जिनके ऊपर कि चालान किया जा सकता था। इसके साथ ही वह यह भी कहता है कि खुदाई खिदमतगार आन्दोलनका वर्णन करते समय वह कुछ ऐसे तथ्य बतलानेको बाध्य था जिनके सम्बन्धमें उसे यह विश्वास था कि वे सत्य हैं। उसने यह भी कहा कि उसका पूरा भाषण पढ़ने पर यह स्पष्ट हो जायगा कि उसका उद्देश्य खुदाई खिदमतगार आन्दोलनके निर्दोष चरित्रपर बल देना था, सरकारके विरुद्ध कोई अभियोग लगाना नहीं।

"राजद्रोहके अपराधकी मूल भावना भाषणकर्ता अथवा लिखित रूपसे कुछ प्रकाशित करनेवाले व्यक्तिके आशयमें निहित होती है। जैसा कि अभियुक्त कहता है, उसका आशय सरकारके विरुद्ध आरोप लगाना नहीं है। वह यह भी कहता है कि उसके द्वारा व्यक्त कुछ कथन, जिनके बारेमें उसके वकील मित्रोंने यह सलाह दी है कि वे उक्त धारामें आते हैं, उसके द्वारा अज्ञानमें कहे गये हैं और उसके पूरे भाषणको पढ़ लेना आवश्यक है। आशयका निर्णय मुख्य रूपसे भाषाके द्वारा होना चाहिए। जब किसी व्यक्तिपर कुछ कहने अथवा लिखनेके लिए आरोप लगाया जाता है तब उसने जो कुछ कहा है या लिखा है, उसका अर्थ, उसका अपना अर्थ ही समझना चाहिए तथा यह भी देखना चाहिए कि उसने जिन लोगोंको सम्बोधित किया है उन्होंने उसकी भाषासे क्या अर्थ ग्रहण किया है।

"यदि उसके शब्दोंके अर्थ ब्रिटिश भारतमें कानूनसे स्थापित शासनके प्रति घृणा या अपमान जगाते हैं या उसका प्रयत्न करते हैं तो वे शब्द धारा १२४-ए की परिभाषाके अनुसार 'राजद्रोह' के अन्तर्गत आ जाते हैं परन्तु वैध उपायोंके द्वारा निवारण या परिवर्तनके लिए, अपमान, घृणा या वैमनस्यको बिना उत्तेजित किये या उत्तेजनाका बिना प्रयास किये शासनकी काररवाइयोंपर अपनी असंतुष्टि

प्रकट करते हुए टिप्पणी करना इस धाराके अनुसार अपराध नहीं ठहरता। अपमान, घृणा या वैमनस्यको उत्तेजित करनेका प्रयास किये बिना सरकारके प्रशासकीय तथा अन्य कार्यपर अपनी नापसंदगीको व्यक्त करते हुए टिप्पणी करना भी इस धाराके अनुसार अपराध नहीं है।

"परन्तु जहाँ यह निश्चित हो जाता है कि वक्ताका आशय शासनके प्रति घृणा, अपमान या वैमनस्यकी भावनाओंको उत्तेजित करना है अथवा उसके लिए प्रयास करना है तब इसका कोई महत्त्व नहीं होता कि वक्ताके शब्द सत्य हैं या असत्य या उन्होंने वास्तवमें घृणा, अपमान या वैमनस्यकी भावनाओंको उत्तेजित किया है।

"साधारण बुद्धिसे यह मान लिया जाता है कि किसी भी व्यक्तिके कार्य उसके मन्तव्यके स्वाभाविक और सामान्य परिणाम होंगे। साधारणतया वह यह नहीं कहेगा, 'यद्यपि इस भाषाका स्वाभाविक और सामान्य प्रभाव यह होगा कि वह वैमनस्यकी भावनाको जाग्रत करेगा परन्तु जिस समय मैं बोल रहा था, उस समय मेरा आशय यह नहीं था।' किसी मनुष्यके लेखनको पढ़कर या भाषणको सुनकर कोई भी व्यक्ति इस बातका बहुत कुछ सही अन्दाज लगा सकता है कि वह किस ओर प्रेरित है और किधर जाना चाहता है?

"परन्तु इसके साथ ही सम्पूर्ण भाषणको निष्पक्ष, मुक्त और उदार भावनासे पढ़ना चाहिए। फिर यह देखना चाहिए कि उसको पढ़ते समय किसी आपत्तिजनक वाक्य या कठोर शब्दके लिए रुकना तो नहीं पड़ता। यह कार्य स्वतंत्र भावनासे करना चाहिए और उसे संकीर्ण आलोचनाकी दृष्टिसे नहीं देखना चाहिए।

"ये वे सिद्धांत हैं जो अनेक अभियोगोंमें उच्च न्यायालयोंने मार्ग-दर्शनके लिए निर्धारित किये हैं। उनके सहारे इस निर्णयपर पहुँचा जा सकता है कि वह लेखन या भाषण, जिसके विरुद्ध शिकायत की जा रही है, वस्तुतः राजद्रोहात्मक है या नहीं।

"भाषण काफ़ी लम्बा है और वह टाइप किये हुए तेरह पृष्ठोंसे भी अधिक स्थान घेरता है। उसमें श्रोताओंको यह बतलाया गया है कि आन्दोलनका आरंभ कैसे हुआ, वह किस वर्षमें शुरू किया गया और उसकी प्रवृत्तियाँ कैसे बढ़ीं। प्रारम्भमें वह एक सामाजिक संगठन था। जब फ्रन्टियर रेगुलेशन एक्टका प्रारूप तैयार हुआ तब इस आन्दोलनका आरम्भ हुआ। वह कहता है:

"अपने कपट, धूर्तता और छलसे ब्रिटिश सरकारने फ्रण्टियर रेगुलेशन एक्टको एक प्रकारके कानूनका रूप दे दिया था। उसका परिणाम यह था कि हमारे

यहाँके लोग सदैव एक-दूसरेसे लड़ते रहते थे और हमारे मुल्कमें बहुत हत्याएँ होती थीं। पुरुषोंकी बात तो जाने दीजिए, हमारे यहाँकी स्त्रियोंको भी कानून की अदालतोंमें जाना पड़ता था। फ्रण्टियर एक्टका प्रारूप इतनी चालाकीके साथ तैयार किया गया था कि हमारे यहाँकी सारी स्त्रियोंपर उसका प्रभाव पड़ा और हमने यह अनुभव किया कि हमारे यहाँके लोग बरबाद होते जा रहे हैं। सरकार ने उनको एक नयी चीज; अदालत दी थी और हमारे यहाँकी जनता और हमारे देशको दो दलोंमें बाँट दिया था।

"वक्ता यह स्पष्ट रूपसे कहता है कि फ्रण्टियर एक्ट विधानका एक कपट और धूर्ततासे भरा हुआ अंश था जिसको कि शासनने कुछ विशेष उद्देश्योंसे पारित किया था और वे उद्देश्य थे, वहाँकी जनताको दो दलोंमें विभाजित कर देना, मुकदमेबाजीको बढ़ावा देना और जनताकी बर्बादीकी योजना बनाना। इतना ही नहीं, वह इसके आगे यह भी कहता है कि उस एक्टके कारण ही उसके मुल्कमें अधिक हत्याएँ होने लगी हैं।

"भाषणमें थोड़ा-सा आगे चलकर वह श्रोताओंसे कहता है कि सरकार, जिसका कर्त्तव्य भारतकी जनताको शिक्षा प्रदान करना था, सीमाप्रान्तके निवासियोंको शिक्षित नहीं बनाना चाहती थी। वह उनको अज्ञानमें रखना चाहती थी ताकि वे भारतीयोंसे न मिल सकें और भारतसे संयुक्त न हो सकें। यद्यपि वह इस प्रकार सरकारके ऊपर किसी न किसी मात्रामें कर्त्तव्यपराङ्मुखताका दोष लगाता है और यह कहता है कि इसके पीछे सरकारके स्वार्थपूर्ण उद्देश्य थे परन्तु मेरे विचारमें यह वाक्य-खंड अपने-आपमें 'राजद्रोह' के अन्तर्गत नहीं आता। वक्ताका शासनके प्रति दृष्टिकोण क्या है, केवल यह दिखलानेके लिए ही मैंने इसका उल्लेख किया है और साथ ही यह दिखलानेके लिए भी कि शासनके ऊपर दोषारोपण करनेके लिए वह कितना तत्पर है।

"यही निकृष्ट उद्देश्य वह शासनके ऊपर पुनः आरोपित करते हुए कहता है : 'सरकारी विद्यालयोंको जाने दीजिए, हमने अपने निजी विद्यालय खोले परन्तु सरकारने किसी न किसी बहाने हमारे नन्हें बालकोंकी उन शिक्षण-संस्थाओंको बर्बाद कर डाला। इस प्रश्नको जाने दीजिए कि हमें शिक्षित करना शासनका एक कर्त्तव्य था, उसने हमारी अपनी शिक्षा-संस्थाओंको इसलिए नष्ट कर दिया कि हम उसके नियंत्रणमें बने रहें।'

"पृष्ठ ६ पर वह शासन द्वारा नियुक्त पुलिसके सम्बन्धमें पूछता है, 'ब्रिटिश सरकारने पुलिसको किसलिए रखा है ?' फिर वह स्वयं उसका उत्तर देता है,

'हम जानते हैं और आप भी जानते हैं कि वह (पुलिस) हमारे ऊपर लाठियाँ चलानेके लिए रखी गयी है और इसलिए रखी गयी है कि वह हमें जेलोंमें भेजने के लिए हमारे विरुद्ध डायरियाँ लिखे।'

"यह स्पष्ट रूपसे उस धाराके भीतर आ जाता है। इसका अर्थ यह है कि सरकारने पुलिसको शांति और व्यवस्था बनाये रखनेके लिए नहीं बल्कि इसलिए रखा है कि वह लोगोंको पीटे, उनके विरुद्ध मिथ्या, गोपनीय रिपोर्टें करे और उनको जेल भेजे। यह तथ्योंको जान-बूझकर दूषित करनेके अतिरिक्तऔर कुछ नहीं है, जिसका उद्देश्य केवल शासनके प्रति घृणा जाग्रत करना अथवा उसका अपमान करना ही हो सकता है।

"इसके बाद वह खुदाई खिदमतगारों द्वारा किये जानेवाले कार्यों और सरकार द्वारा किये गये कार्योंके बीचकी विषमताको व्यक्त करता है। वह कहता है : 'हम उसी सीमाप्रान्तके गाँवोंके निवासियोंको सभ्य देखना चाहते थे जिसको कि भारतका 'प्रवेश-द्वार' कहा जाता है जब कि सरकार यह चाहती थी कि वे लोग आपसमें लड़ते-झगड़ते रहें और वे एक बर्बाद और बिगड़ी हुई जिन्दगी बिताते रहें ताकि सरकार बिना किसी परेशानीके उनके ऊपर शासन करती रहे।'

"शासनके ऊपर यह दोषारोपण करना कि वह उन लोगोंको लड़ाते रहना चाहता था और उनकी जिन्दगीको बर्बाद कर देना चाहता था; बिगाड़ देना चाहता था, एक 'राजद्रोह' मात्र ही नहीं अपितु एक ऐसा वक्तव्य है जो कि ईमानदार नहीं है।

"इसके नीचेका अंश तो सबसे बुरा है। उसमे वक्ता यह बतलाता है कि शासन अपनी प्रतिष्ठाको बनाये रखनेके लिए किस सीमातक जा सकता है। वह कहता है :

"मैं आपको बतला चुका हूँ कि सत्ता अपनी प्रतिष्ठाको बनाये रखना चाहती थी और इसके साथ ही वह उस भावनाको भी दबा देना चाहती थी जो कि पठानों में उत्पन्न की गयी थी। फिर भी (जुलूसके लोगोंके तितर-बितर हो जानेके बाद भी) पेशावरके किस्साखानी बाजारमें शस्त्र-भण्डार और बन्दूकें पहुँच गयीं। इसके पश्चात् पहले भारतीय सेनाको गोली चलानेका आदेश दिया गया। उन लोगोंने यह कहकर गोली चलानेसे इनकार कर दिया : 'इन लोगोंके पास है ही क्या ? न इनके पास लाठियाँ हैं और न पत्थर। हम किसके ऊपर गोली चलायें ?' इसपर भारतीय सेनाके उन लोगोंको वहाँसे हटा दिया गया। बादमें उनको सैनिक न्यायालयमें उपस्थित किया गया और फिर जेलमें भेज दिया गया। उसके बाद

वहाँ ब्रिटिश सैनिक बुलाये गये और उन्होंने आकर गोलियाँ चलायीं। एक या दो मिनटमें २००-२५० व्यक्ति शहीद हो गये। क्या हमने कोई अपराध किया था जिसके लिए किस्साखानी बाजारमें हमारा खून बहाया गया ? नहीं, यह प्रतिष्ठाके लिए हुआ। सरकार अपनी प्रतिष्ठा कायम रखना चाहती थी।

"यह कथन शासनके विरुद्ध एक अति गम्भीर आरोप है अर्थात् वह अपनी प्रतिष्ठाके लिए उन २००-२५० निर्दोष मनुष्योंकी हत्या करनेमें नहीं हिचकी, जिनकी अपनी कोई ग़लती नहीं थी; जिनका अपना कोई अपराध नहीं था। जिस भारतीय सेनाने गोली चलाना अस्वीकार कर दिया और जिसको इसके लिए दंड दिया गया, उसका उदाहरण भी यहाँ एक विशेष प्रयोजनसे दिया गया है। वक्ता भारतीय सेना और उस ब्रिटिश सेनाके बीचका वैषम्य स्पष्ट करना चाहता है जिसके द्वारा यह तथाकथित कार्य पूरा हुआ। भाषणका यह अंश शासनके प्रति घृणा और अपमानकी भावनाओंको उत्तेजना देनेके लिए बाध्य है। वह असंदिग्ध रूपसे श्रोताओंके मनमें उस सरकारके लिए द्वेष और वैमनस्य जाग्रत करेगा जिसने मात्र अपनी प्रतिष्ठाके लिए २५० मनुष्योंकी क्रूर हत्या जैसे असभ्यतापूर्ण एवं हिंसात्मक कार्यको प्रश्रय दिया।

"तत्पश्चात् अभियुक्त सीमाप्रान्तमें अपनाये गये आतङ्कवादकी ओर श्रोताओं का ध्यान आकृष्ट करता है।

"हमारे स्वयंसेवक अहिंसाका पूर्ण रूपसे पालन कर रहे थे। सरकार ऐसा एक भी प्रसंग नहीं बतला सकती जिसमें उन्होंने हिंसात्मक कार्य किया हो। जेलसे लौटनेके बाद मैंने सरकारको जगह-जगह यह चुनौती दी कि वह हमारी ओरसे हुई हिंसाकी एक भी घटना बतला दे। परन्तु उसने ऐसा नहीं किया। वस्तुतः वह स्वाङ्ग था। वह राष्ट्रकी एक भावनाको दबा देना चाहती थी। मैं आपका ध्यान इस ओर भी आकृष्ट करना चाहता हूँ। सरकारने देशके विभिन्न भागोंमें गोलियाँ चलवायीं, लोगोंके घरोंको लूटा और बरबाद किया। वे लोग मकानोंमें घुस गये और उन्हें (सिपाहियोंको) वहाँ चाय पीने या खाना बनानेके जो भी बर्तन-भाड़े मिले उन्हें उन लोगोंने तोड़-फोड़ डाला। उन्होंने गरीब लोगोंके आटा रखनेके बर्तनोंमें फिनाइल उड़ेल दी। घरकी काममें आनेवाली वस्तुओंके उठा ले जानेपर हमें आश्चर्य नहीं। उन्हें पुलिसवालोंको उठाकर ले जाने दो। वे उनके काममें आयेंगी।

"यह एक अन्य अत्यंत गम्भीर आरोप है। वह शासनपर यह दोषारोपण करता है कि उसने राष्ट्रकी एक भावनाको कुचलनेके लिए पशुता, क्रूरता और

निकृष्ट उद्देश्यको अपनाया।

"फिर अभियुक्त श्रोताओंको यह वतलाता है कि सरकारके दमन के कारण ही खुदाई खिदमतगार आन्दोलनने, जो मूल रूपसे एक सामाजिक आन्दोलन था, राजनीतिक स्वरूप ग्रहण कर लिया। खुदाई खिदमतगारोंने स्वयं अपने संगठन-को राजनीतिक रंग नहीं दिया परन्तु जब शासनने उसके ऊपर आतंकवादी कार्य-वाही की तब वे इसके लिए विवश हो गये। वक्ताके ये शब्द शासनके विरुद्ध दमन और आतंकवादी तरीकोंको अपनानेका आरोप लगाते हैं।

"अपने भाषणमें कुछ नीचे उसने कहा है: 'सन्धिके कालमें भी उनको यानी पठानोंको आतंकित रखा गया। .... ऐसे प्रयास किये गये कि हिन्दू और मुसलमान आपसमें लड़ते-झगड़ते रहे। सरकारको यह ज्ञात हुआ कि महात्मा गांधी आ रहे हैं और उसको यह भी पता चला कि मैं उनसे मिलनेके लिए जा रहा हूँ। ... उसी रातको पुलिसने मुझको गिरफ्तार कर लिया। ... उसने हमारे सब साथी कार्यकर्ताओंको गिरफ्तार कर लिया और उनमेंसे प्रत्येकको तीन वर्षका कठोर कारावास दण्ड दे दिया गया। मैं आपको अपने सम्बन्धमें बतला रहा हूँ कि सरकारका मेरे ऊपर कोई भू-राजस्व कर बकाया न था; फिर आप सोच सकते हैं कि उसका मेरे घरको लूटनेका और मेरी चीजोंको उठाकर ले जाने का क्या उद्देश्य था? उन्होंने जो हमारे घरोंको लूटा उसका उद्देश्य भी यही था; अपनी प्रतिष्ठाको क़ायम रखना। इस प्रकार वे जनतासे कहना चाहते थे कि तुम क्या हो और तुम्हारे नेता क्या हैं? सरकार तुम्हारे घरोंको लूट सकती है, तुम्हारे नेताओंको गिरफ्तार कर सकती है और उनका अपमान कर सकती है।'

"उपर्युक्त अंशमें वक्ता पुनः सरकारके उद्देश्यको हेय चित्रित करता है। उसकी रायमें वह सरकार ही है जो हिन्दुओं और मुसलमानोंको आपसमें लड़ाती है। वह यह भी कहता है कि वह केवल अपनी प्रतिष्ठाको कायम रखनेके हेतु लोगोंके घरोंको लूटने और नेताओंका अपमान करनेको तैयार हो गयी।

"मेरे द्वारा उद्धृत अंश असंदिग्ध रूपसे शासनके प्रति अपमान और घृणा-की भावनाओंको उत्तेजना देता है। अभियुक्त जब यह कहता है कि उसका आशय राजद्रोहात्मक शब्द कहनेका न था अथवा यह उसके अज्ञानमें व्यक्त हुए कथन हैं तब मैं यह नहीं समझ पाता कि इससे उसका अभिप्राय क्या है?

"जो अंश मैंने उद्धृत किये हैं उनके लिए यह नहीं कहा जा सकता कि अभियुक्तने केवल कुछ छिटफुट शब्द जहाँ-तहाँ कह दिये हैं अथवा वे उससे विना

समझे-बूझे अज्ञानमें निकल गये हैं। ये लम्बे उद्धरण हैं और वे जान-बूझकर शासनके ऊपर हेय और कुटिल उद्देश्योंको आरोपित करते हैं।

"शासनके सम्बन्धमें उसका दृष्टिकोण यह है कि वह कपटी, धूर्त और छली है। वक्ताके कथनानुसार सरकार ही हिन्दुओं और मुसलमानोंको आपसमें लड़वाती है। राष्ट्रकी भावनाको कुचलनेके लिए वह दमन और आतंकका आश्रय लेती है और इस प्रकार वह स्वयं एक अभियुक्त है। उसने सत्तापर यह आरोप लगाया है कि उसने अपनी प्रतिष्ठाको कायम रखनेके लिए निरपराध व्यक्तियोंकी हत्या की। वह सरकारके ऊपर यह अभियोग भी लगाता है कि उसने गोलियाँ चलायीं, लोगोंके घरोंको लूटा, ग़रीब लोगोंके आटा रखनेके पात्रोंमें फ़िनायलको उड़ेला और उनके चाय तथा खाना बनानेके बर्तनोंको तोड़ डाला। वह शासनका एक ऐसे संगठनके रूपमें चित्रण करता है जो लोगोंके विरुद्ध गोपनीय रिपोर्टें लिखने, उनको जेल भिजवाने और उनको लाठियोंसे पिटवानेके लिए पुलिस-बलका पोषण करता है।

"इसलिए मैं धारा १२४-ए के अन्तर्गत अभियुक्तको दोषी ठहराता हूँ। उसने शासनपर जो अभियोग लगाये हैं, वे जान-बूझकर लगाये हैं। वे आरोप स्पष्ट, गम्भीर और धृष्टतापूर्ण हैं। अभियुक्त एक अत्यन्त प्रभावशाली व्यक्ति है और उसके कथन सामान्य व्यक्तिकी अपेक्षा कहीं अधिक प्रभावोत्पादक हैं, इसलिए मैं उसको दो वर्षके कठोर कारावासका दण्ड देता हूँ।"

"मैं राजद्रोहका किसी प्रकारसे दोषी नहीं हूँ।" खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने कहा, "उन ईसाइयोंकी सभामें, जो उसी धर्मके अनुयायी हैं जिसके कि अंग्रेज, मैं राजद्रोहकी चर्चा कैसे कर सकता था? मेरा वास्तविक राजद्रोह यह है कि मैं बंगालके पददलित मुसलमानोंकी सेवा करनेको उत्कंठित हूँ। मैं उनसे स्नेह और सहानुभूति रखता हूँ और उनकी उन्नतिकी कामना करता हूँ। मुख्य रूपसे मेरा अपराध यही था, जिसके लिए मुझे गिरफ्तार किया गया। सरकार यह जानती थी कि मुझे लगभग ८ दिसम्बरको बंगाल पहुँच जाना है। मैं बंगालमें जाकर वहाँके मुसलमानोंके बीचमें कार्य करूँ, इस विचारको सरकार सहन न कर सकी।"

भूलाभाई देसाईने केन्द्रीय सभामें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँकी रिहाईकी मांग करते हुए यह बात कही :

"अपनी गिरफ्तारीके बाद एक वकीलके नाते उन्होंने मुझसे पहली बात यह कही : 'यदि सत्य अपने-आपमें आरोपके सन्मुख एक सफाई हो सकता है तो मैं

विचारणाके सामने खड़े होनेको और अपने भाषणके प्रत्येक वाक्यको सिद्ध करने-को बिलकुल तैयार हूँ।' जब मैंने उस ईमानदार पठानको यह बतलाया कि ऐसा नहीं है तो उसे वास्तवमें आश्चर्य हुआ। मैंने उनसे कहा कि यदि आप नग्न सत्य भी कहेंगे तो भी सरकार उसे अपमानजनक और अपने लिए एक व्यंग्य ही समझेगी। वास्तवमें उस धाराका मूल आधार ही यह प्रतीत होता है कि सरकारको आदर्श मानना चाहिए। इसके बदले यदि आपका सत्य उसे आदर्शके अलावा और बतलाता है तो भी आप धारा १२४-ए के अपराधी ठहराये जायेंगे।"

कांग्रेसका भाईचारा

१९३४–३६

१५ दिसम्बर सन् १९३४ को खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको बम्बईमें बाइ-कुलाके सुधार-गृह 'हिज़ मैजेस्टीज़ होम ऑफ करैक्शन' में भेज दिया गया। फिर वहाँसे उनका तबादला साबरमतीकी सेण्ट्रल जेलमें कर दिया गया। उस समय उनका वज़न घटकर १६८ पौण्डसे १६१ पौण्ड रह गया था। १३ जनवरी १९३५ तक वह और भी कम हो गया और १५५ पौण्ड रह गया। २७ जनवरी से लेकर ६ फरवरीतक वे एक अंतरंग रोगीके रूपमें जेलके चिकित्सालयमें भरती रहे। उनकी शिकायत यह थी कि उनकी भूख घट गयी है, उनका खाना ठीक ढंगसे नहीं पकाया जाता और बम्बई प्रेसीडेन्सीकी जलवायु उनके स्वास्थ्यके अनुकूल सिद्ध नहीं हुई। २५ मार्च, १९३५ को उनका शरीर-भार और भी कम होकर केवल १४९ पौण्ड रह गया।

भारत-सरकारके गृह-सचिव मि० हैलेटने संयुक्त प्रदेश और मध्यप्रदेशके मुख्य मंत्रियोंको यह सूचित किया :

"यद्यपि अभी खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँका स्वास्थ्य गम्भीर रूपसे खराब नहीं है परन्तु उसके क्षीण होते जानेकी सम्भावना है। विरोधी प्रचारकी दृष्टिसे उनके वज़नकी इस कमी और उनके अभियोगको सामने लाकर शासनपर यह दोषारोपण किया जा सकता है कि उसने जान-बूझकर एक राष्ट्रीय नेताको ऐसे कारागारमें रखा जहाँकी जलवायु और अन्य स्थितियाँ उसके स्वास्थ्यके लिए अनुकूल सिद्ध नहीं हुईं। इसका स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि उसका स्वास्थ्य नष्ट हो गया। इस स्थितिमें यह स्पष्ट है कि यदि सम्भव हो सके तो हमें उनका तबादला किसी ऐसे प्रान्तमें करके इस स्थितिको बचा लेना चाहिए जहाँकी जलवायु उनकी प्रकृतिके अनुकूल हो और जिसकी उनके प्रान्तकी जलवायुसे समानता हो। स्वयं कैदीका भी यह कहना है कि उसका स्थानान्तरण पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्त या पंजाबकी गुजरात जेलमें कर दिया जाय। इन सब कारणोंसे यदि सपरिषद् गवर्नर महोदय भारत-सरकार तथा बम्बई सरकारकी सहायताका कोई मार्ग खोज निकालते हैं अर्थात् उनकी इस कठिनाईको दूर करनेके लिए खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको संयुक्त प्रदेश या मध्यप्रान्तकी किसी जेलमें रखनेको तैयार

हो जाते हैं तो भारत-सरकार इसके लिए उनकी आभारी होगी।"

इसका उत्तर मध्यप्रदेशकी सरकारने यह दिया :

"यद्यपि मि० गांधीका इस प्रान्तसे कोई स्वाभाविक सम्बन्ध नहीं है फिर भी स्पष्ट रूपसे उनकी उपस्थिति इस प्रदेशपर एक अनिश्चित कालके लिए थोप दी गयी है। वर्धामें उनका आवास-स्थान एक ऐसा केन्द्र बन गया है जहाँ कि सारे देशका प्रत्येक प्रमुख कांग्रेसजन आता है। यदि कोई राजनीतिक उपद्रव खड़ा हो जाता है तो यह केन्द्र विरोधी तत्त्वोंका एक गढ़ बन जायगा। अली-बन्धु तथा अन्य राजनीतिक नेताओंसे हमने यह अनुभव प्राप्त किया है कि जेलमें रहते हुए भी ये लोग स्वयं सारी राजनीतिक प्रवृत्तियोंके संगम बन जाना चाहते हैं। यदि बातको कुछ रूखेपनसे कहा जाय तो वस्तु-स्थिति यह है कि मि० गांधी-के सीमा-प्रान्तके इन एक ही पेशेके साथीको मि० गांधीके निवास-स्थानसे जितना अधिक दूर रखा जायगा, इस प्रदेशमें हमारी मानसिक शांतिके लिए उतना ही अच्छा होगा।

"इस प्रान्तकी सरकारने भारत-सरकारको सदैव अपना प्रत्येक सम्भव सह-योग दिया है और राजनीतिक बन्दियोंको स्थान दिया है परन्तु दोनों गांधियोंको अपने क्षेत्रमें रखना सामान्य रूपसे अनौचित्यपूर्ण ही नहीं होगा बल्कि वह उसकी आतिथ्य भावनापर भी एक अतिरिक्त कर हो जायगा।"

संयुक्त प्रदेशकी सरकार 'काफी कठिनाई और अनिच्छा' व्यक्त करनेके बाद खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको बरेलीकी ज़िला जेलमें रखनेपर तैयार हो गयी।

दिनांक २९ मई, १९३५ के अपने एक पत्रमें श्री वल्लभभाई पटेलने भारत-सरकारके होम-मेम्बर सर हेनरी क्राइकको लिखा :

"अपनी ६ फरवरीकी बातचीतमें मैंने आपको ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँका मामला विस्तारसे बतलाया था और उस समय आपने मुझे यह आश्वासन देनेकी कृपा की थी कि आप उनकी सजामें कुछ ठोस कमी करनेके लिए बम्बई सरकार को सुझाव देंगे। परन्तु वह तो दूर रहा, पत्रोंके अनुसार पंजाब और पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तकी सरकारोंने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके गिरते हुए स्वास्थ्यकी दृष्टि-से की गयी, कारागारोंके महानिरीक्षककी यह सामान्य सिफारिश भी अस्वीकृत कर दी कि उनका तबादला उक्त प्रान्तोंकी किसी जेलमें कर दिया जाय। मैं विगत ६ मार्चको ख़ान साहबसे मिला था। पत्रोंमें पिछले दिनों उनके गिरते हुए स्वास्थ्यके सम्बन्धमें समाचार प्रकाशित हुए हैं।"

प्रत्युत्तरमें सर हेनरी क्राइकने श्री वल्लभभाई पटेलको ७ जूनको यह पत्र

लिखा :

"आपसे मिलनेके थोड़े दिनों बाद ही मैंने उनके (खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके) मामलेको फिर अत्यंत सावधानीके साथ देखा। जिस दण्डाधिकारीके यहाँ उनका अभियोग था, उसके निर्णयपर मैंने विचार किया और उनकी पहली रिहाईके बादके भाषणों सहित घटनास्थलकी समस्त परिस्थितियोंपर भी विचार किया। इस सम्बन्धमें मैंने पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तकी सरकारके अभिप्रायको भी जाननेका सुयोग प्राप्त कर लिया और अब मैं इस अंतिम निर्णयपर पहुँचा हूँ कि इस मामलेमें मेरी पहल करनेकी और बम्बई-सरकारको यह सुझाव देनेकी कि उनके दण्डमें कमी कर दी जाय, कोई तर्क-संगति नहीं है।"

१७ जूनको श्री वल्लभभाई पटेलने नाराज़ होकर सर हेनरी क्राइकको यह पत्र लिखा :

"मुझे आपकी स्पष्टवादिता अच्छी लगी। खान साहब अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके सम्बन्धमें आपके मनमें जो विचार चले हैं उनकी एक झलक उसके द्वारा मिली। फिर भी मैं आपसे यह कहनेकी अनुमति चाहूँगा कि उस दिनकी घटना मुझे पूर्णतः स्मरण है, जब कि आप दण्डकी कठोरतासे इस सीमातक प्रभावित हुए थे कि आपने स्वयं दण्डमें कुछ ठोस कमी करनेके लिए बम्बई-सरकारको सुझाव देनेकी बात कही थी। मि० भूलाभाई देसाईसे इस विषयमें आपकी जो चर्चा हुई है वह इसकी पुष्टि करती है। मैं आपसे यह कहनेकी अनुमति भी चाहूँगा कि जब एक बन्दी अपने विगत कार्योंके लिए अपनी ओरसे ही खेद व्यक्त करता है तब उसकी पिछली घोषणाओंको उसके विरोधमें लाकर खड़ा कर देना औचित्य-पूर्ण प्रतीत नहीं होता।

"किसी अन्य प्रान्तकी जेलमें खान साहबका तबादला करनेमें केन्द्रीय शासन-के समक्ष जो कठिनाइयाँ हैं, उनको भी मैं समझ रहा हूँ, परन्तु यदि उनका स्थानान्तरण प्रेसीडेन्सीकी ही किसी अपेक्षाकृत ठंडी जगह जैसे नासिक या यर-वडामें कर दिया जाता है तो मामला सरलतासे सुलझ जाता है। पिछली बार जब महात्मा गांधी और मैंने ३१ मईको खान साहबसे भेंट की थी तब स्वयं उन्होंने ही मुझको यह सुझाव दिया था। महात्माजीने बम्बईकी सरकारसे यह जाननेके लिए प्रार्थना की है कि क्या यह सुझाव स्वीकार किया जा सकता है?"

सर हेनरी क्राइकके मनमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके सम्बन्धमें जो विचार चल रहे थे उनका एक अंशभर ही श्री वल्लभभाई पटेलपर व्यक्त हुआ था। गृह-सचिवने २६ जनवरीकी अपनी एक गोपनीय टिप्पणीमें लिखा :

"मैंने खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँके मामलेमें दण्डकी सम्भावित कमीके प्रश्नपर सर राल्फ ग्रिफिथको एक पत्र लिखनेके लिए प्रारूप तैयार किया। तत्पश्चात् दूसरे दिन मैंने इस सम्बन्धमें होम-मेम्बरकी भी राय ली। पत्रका प्रारूप लिखते समय, अभियोगके पूर्व-इतिहासकी स्मृतिको पुनः जाग्रत करनेपर मुझको दण्डकी कमी करानेके इस सुझावमें कई गम्भीर आपत्तियाँ दिखलाई दीं। ....मैं यह भली भाँति समझ रहा हूँ कि उस मामलेमें, जिसमें कि खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँको दण्ड दिया गया है, वास्तवमें कुछ ऐसे लक्षण हैं जिनके आधारपर दण्डमें कमी की जा सकती थी। दण्डकी कटौतीकी इन सम्भावित परिस्थितियोंकी दृष्टिसे यदि उन्होंने मूल न्यायालयमें या अपीलकी अदालतमें पुनर्विचारके लिए प्रार्थना की होती तो बहुत सम्भव था कि उनकी सजामें कमी कर दी जाती। परन्तु यह एक बिलकुल भिन्न बात है कि कार्यकारी शासन द्वारा दण्डकी अवधिमें कमी की जाय। मेरे ख्यालसे इस कार्यसे एक क्षोभ फैलेगा। ऐसा प्रतीत होता है कि दण्ड देते समय मजिस्ट्रेट इस तथ्यसे प्रभावित था, जैसा कि उसने अपने फैसलेमें अन्तसे पहलेके वाक्यमें कहा है, 'अभियुक्त एक प्रभावशाली व्यक्ति है और उसके शब्द किसी सामान्य मनुष्यके शब्दोंसे कहीं अधिक प्रभाव रखते हैं।'

"वे कभी भी छूटें, उनके हठधर्मी स्वभावको देखते हुए मेरे मनमें इस बातका कोई सन्देह नहीं है कि वे फिर इसी तरहके भाषण करेंगे। यदि वे अपनेको इससे रोकना भी चाहें तो यह उनके वशकी बात नहीं है। वे अपना ध्यान किन क्षेत्रोंमें विशेष रूपसे केन्द्रित करेंगे, यह कह सकना भी सम्भव नहीं है। परन्तु कुछ कारणोंके आधारपर यह विश्वास किया जा सकता है कि सम्भवतः वे बंगालकी ओर अधिक आकृष्ट होंगे और मुझको इस बातमें भी कोई सन्देह नहीं है कि यदि उन्होंने अपने कुछ मास पूर्व किये गये भाषणोंको ही दुहराया तो इससे निश्चित ही स्थिति और बिगड़ेगी। फिर भी यदि इस बातको जाने दिया जाय कि वे रिहाईके बाद क्या करेंगे, तो भी हमें यह विचार करना चाहिए कि यदि शासन उनके दण्डमें कमी कर देता है तो उसका सामान्यतः क्या प्रभाव पड़ेगा ?

"मेरी राय यह है कि स्वास्थ्यके गिरावटके आधारपर उनके दण्डमें कमी यथेष्ट तर्कसंगत नहीं होगी। यह सच है कि बम्बईकी जलवायु उनके स्वास्थ्यके लिए अनुकूल सिद्ध नहीं हो रहीं है परन्तु बम्बईकी सरकार उनको वहाँसे हटानेके लिए क़दम उठाने जा रही है और इससे उनकी जो भी न्यायपूर्ण शिकायत है वह दूर हो जायगी। यदि स्वास्थ्यकी खराबीके कारण हम उनको मुक्त कर देते हैं तो एम० एन० रायके लिए भी यही व्यवहार करनेके लिए प्रक्षोभ उत्पन्न हो

सकता है, जिनकी स्वास्थ्यहीनताकी आये-दिन खबरें मिलती रहती हैं और शायद यह भी सोचा जा सकता है कि नेहरूकी तबीयत भी खराब चल रही है। इस प्रकार खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँकी रिहाई एक आपत्तिजनक मिसाल बन सकती है।

"इसके अतिरिक्त मैं यह भी अनुभव कर रहा हूं कि अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँकी सजामें कटौती करनेसे पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तमें यह समझा जा सकता है कि आन्दोलनकारियोंके प्रति शासनका रुख ढीला पड़ गया है और इस भावनासे निश्चित ही लाल कुर्ती दल आन्दोलनके अन्य संगठनकर्त्ताओंको प्रोत्साहन मिलेगा। मेरा ख्याल है कि यदि किसी ऐसे नेताके दण्डकी अवधि घटायी जाती है, जिसकी कि पिछली गतिविधियाँ आपत्तिजनक रही हैं तो इससे लोगोंके मनमें यह धारणा बनेगी कि सरकार शिथिल पड़ गयी है, साथ ही यह आवाज़ भी उठने लगेगी कि जो व्यवहार खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके साथ किया गया है, वही इस सम्बन्ध-में नेहरूके साथ भी करना चाहिए। मुझको पूरी तरहसे स्मरण है कि सत्यपालके मुक़दमेमें उनको इसी अपराधमें कम दण्ड दिया गया था और मैं यह भी जानता हूँ कि सत्यपालका पिछले सालोंमें पंजाबपर भी उतना प्रभाव नहीं था जितना कि खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँका है। यह भी निश्चित है कि उनका प्रभाव खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँकी भाँति सारे भारतपर नहीं था। मुझको इस बातमें बहुत संदेह है कि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके दण्डके लिए मुसलमानोंमें सामान्यत: एक प्रबल रोष भाव जाग्रत हुआ है अथवा उनके दण्डमें कमी हो जानेके कारण वे विशेष प्रसन्न होंगे। इन सब कारणोंसे मेरा विचार यह है कि इस प्रस्तावकी ओर ध्यान ही नहीं देना चाहिए।"

ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने अपने जेलके अनुभवोंका वर्णन करते हुए लिखा है : "साबरमती जेलका अंग्रेज अधीक्षक एक बहुत कठोर व्यक्ति था। उसने मुझे एक ऐसे वार्डमें रख दिया, जहाँ कि वार्डके नम्बरदारको भी भीतर आनेकी अनु-मति नहीं थी। वह वार्डका दरवाज़ा बन्द करके ताला लगा देता था और बाहरसे चौकसी रखता था। मुझे यहाँ 'बी' श्रेणी दी गयी थी परन्तु मेरा भोजन तथा अन्य सुविधाएँ मेरे प्रदेशकी 'सी' श्रेणी जैसी थीं। मैं ज़मीनपर सोता था। मेरे साथ कोई बात करनेवाला नहीं होता था। वहाँ बहुतसे बन्दर आ जाया करते थे और मैं उनके साथ खेला करता था। एक बार मैं इन्फ्लूएंजासे बीमार पड़ गया लेकिन बीमारीके बाद भी मुझे चिकित्सालय नहीं भेजा गया और न मुझको चारपाई ही दी गयी। मुझको सीमेन्टके फर्शपर लेटना पड़ता था। जेलमें

मुझको केवल दो छोटे-छोटे कम्बल दिये गये थे जो मेरे लिए सर्दीकी उस ऋतुमें पर्याप्त न थे। परन्तु ईश्वरकी कृपासे मैं स्वस्थ हो गया।

"मई सन् १९३५ में गांधीजी मुझसे मिलनेके लिए आये। उनके प्रयत्नसे ही मैं 'ए' श्रेणीमें चढ़ा दिया गया। एक बार जेलोंका महानिरीक्षक वहाँ निरीक्षण करने आया। मैंने उसके सामने अपनी मांगें रखीं। मैंने उससे कहा कि वे मेरे लिए बम्बईसे किसी ऐसे कैदीको भिजवा दें जो कि मेरा खाना बना दिया करे। उन दिनों मेरे पास कोई बावरची न था। उसने कहा कि वह मेरा तबादला पंजाब प्रान्तमें करा देगा और मेरे लिए पेशावरसे किसी पख़्तून बावरचीकी व्यवस्था करा देगा। मैंने उससे कहा कि पंजाब सरकार मुझे कभी अपने प्रांतमें रखनेको तैयार नहीं होगी और उससे आग्रह किया कि वह मेरे लिए फिलहाल बम्बईसे ही कोई बावरची भिजवा दे। उसे पूरा विश्वास था कि पंजाबकी कोई जेल और पख़्तून बावरची ही मेरे अनुकूल पड़ेगा। पंजाब सरकारने मुझको अपने यहाँ रखना स्वीकार नहीं किया लेकिन पेशावर जेलसे मेरे लिए एक बावरची आ गया। वह बावरची नहीं बल्कि तपेदिकका एक रोगी था। उसके भेजनेसे उनका अभिप्राय यह था कि मुझे क्षय हो जाय। अगस्त सन् १९३५ में मुझको उस बावरचीके साथ ही बरेली डिस्ट्रिक्ट जेलमें भेज दिया गया। मुझे वहाँकी सेन्ट्रल जेल में नहीं रखा गया जिसमें कि बहुतसे राजनीतिक बन्दी थे। सरकार चाहती थी कि मुझे कष्ट हो और मुझे किसीका साथ न मिले। साबरमती जेलकी भाँति ही यहाँ भी मुझे एक एकान्त कोठरी दे दी गयी।

"इसी बीच डा० खान साहब केन्द्रीय सभामें निर्वाचित हो गये और उनके ऊपरसे सीमा-प्रान्तमें प्रवेश करनेका प्रतिबन्ध हट गया। वे तथा उनकी पत्नी जेलमें मुझसे भेंट करनेके लिए आये।

"कारागारोंके महानिरीक्षक कर्नल सलामतुल्लाह खाँ बहुत अच्छे व्यक्ति थे। जब वे निरीक्षण करनेके लिए आये तब मैंने उनसे उस रोगी बावरचीको हटा देनेका निवेदन किया। मैंने उनसे कहा कि मैं क्षयके एक रोगीसे रसोई पकानेका काम नहीं ले सकता। इसमें उसे और मुझे दोनोंको असुविधा होती है। अंतमें उस बावरचीका तबादला कर दिया गया।

"जेलमें श्री रफ़ी अहमद किदवाई मुझसे मिलनेके लिए आये और जेलोंके मंत्री महोदय भी आये। उस समय गर्मियाँ शुरू हुई थीं। उन्होंने इस बातकी सिफ़ारिश की कि मेरा स्थानान्तरण किसी शीतल स्थानपर कर दिया जाय। लेकिन उस समय मेरा तबादला नहीं किया गया। बरेलीमें मुझे गर्म लू के झोंके सहने

पड़े जो कि वहाँ लगातार चला करते थे। मेरे सारे शरीरपर छोटी-छोटी फुन्सियाँ हो गयीं। जब गर्मीकी ऋतु बीत चली और मैं उसका असह्य प्रकोप झेल चुका तब मुझे अलमोड़ा जेल भेजा गया। उन दिनों उस पहाड़ी क्षेत्रमें वर्षा प्रारम्भ हो गयी थी। वहाँ लगातार कई दिनोंतक बरसात होती रहती थी और मैं घूमनेके लिए भी बैरकसे बाहर नहीं निकल पाता था। मुझे वहाँ बगीचेका वह काम दिया गया था जिसे जवाहरलालजी अधूरा छोड़कर चले गये थे। मुझसे पहले वे उसी जेलमें थे। मैंने इस कार्यको संतोषजनक ढंगसे किया इसलिए मुझको अपने दण्ड-में पन्द्रह दिनोंकी अतिरिक्त छूट दे दी गयी। इस प्रकार कुल मिलाकर मुझको अपनी सजामें साढ़े चार मासकी अतिरिक्त छूट मिल गयी। मेरे दण्डकी अवधि पूरी हो गयी और मैं छोड़ दिया गया। परन्तु पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्त और पंजाबमें मेरे प्रवेशपर प्रतिबन्ध था, इसलिए मैं वापस वर्धा चला आया।"

वर्धा जाते समय खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको १ अगस्त १९३६ के सबेरे मार्गमें नागपुर स्टेशन मिला। वहाँ कांग्रेसके बहुत काफ़ी लोग उनको अपनी सद्-इच्छाएँ अर्पित करनेके लिए उपस्थित थे। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ तीसरे दर्जेके एक डिब्बेमें सो रहे थे। उनकी टाँगें उनकी सीटसे बाहर निकली हुई थीं। उनके सिरहाने तकियेकी जगह टाटका एक थैला रखा था। बस यही उनका सामान था; सिपाहीका एक थैला। उनका स्वास्थ्य अत्यत गिर चुका था और उनको हल्का बुखार भी था। उनको यह देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि इतने लोग स्नेह-वश उनसे मिलने आये हैं। उन्होंने कहा, 'यह कांग्रेसका भाई-चारा है।'

वर्धामें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने पुनः जमनालालजी बजाजका आतिथ्य ग्रहण किया। वे नित्य पैदल वर्धासे पाँच मील दूरसे गाँव जाते थे। लगभग एक मास पहले गांधीजीने वहाँ अपना आश्रम स्थापित किया था। उन दिनों चुनावका अभियान चल रहा था परन्तु गांधीजीने मानों अपनेको सेवागाँवमें बन्द कर लिया था। वे रचनात्मक कार्यमें लगे रहते थे। दूर और पासके मिलनेवाले उनसे परा-मर्श लेनेके लिए वहाँ पहुँच जाया करते थे। वर्धा पहुँचनेके बाद खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ प्रायः अपना सारा दिन महात्मा गांधीके सान्निध्यमें ही व्यतीत करते थे जिन्हें कि उन दिनों मलेरिया ज्वर हो आया करता था। सितम्बरके अंततक गांधीजी अपनी सामान्य प्रवृत्तियोंमें भाग लेने लगे।

२ अक्तूबर १९३६ को सेवागाँवमें गांधीजीने अपनी सरसठवीं वर्षगाँठ शांति-के साथ मनायी। इसके एक पखवारेके बाद वे खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके साथ 'भारत माता' के मन्दिरके उद्घाटन-समारोहके लिए बनारस चल दिये। इस

मन्दिरमें भारतका एक विशाल उभरा हुआ मानचित्र संगमर्मरपर खुदाई करके तैयार किया गया था। बाबू शिवप्रसाद गुप्त द्वारा निर्मित भवन 'प्रेमाश्रम' में भगवानदासजीने अतिथियोंका स्वागत किया। उन्होंने अपने स्वागत-भाषणमें इस बातपर बल दिया कि समस्त धर्मोंका मुख्य सिद्धांत एक ही है और वह प्रेम, शान्ति और एकताका प्रसार है।

गांधीजीने कहा : "मुझसे सवेरे उद्घाटनके लिए कहा गया। वेदमंत्रोंका पाठ सुनते समय मुझे अपनी प्रातःकालकी प्रार्थनाका वह श्लोक स्मरण हो आया जिसको कि हम लोग पिछले बीस वर्षसे दुहराते आ रहे हैं—

समुद्रवसने ! देवि ! पर्वत स्तन मण्डले।
विष्णुपत्नी ! नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे॥

"(पृथ्वी माता, तुम विष्णुकी पत्नी हो। सागर तुम्हारे वस्त्र हैं और पर्वत तुम्हारे स्तन हैं। मैं तुम्हें नमस्कार कर रहा हूँ। मैं अपने पैरोंसे तुम्हारा जो स्पर्श कर रहा हूँ, उसे क्षमा करना।) यह वही पृथ्वी माता है जिसकी सेवा और भक्तिमें आज हम अपनेको अर्पित कर रहे हैं। जिस माताने हमें जन्म दिया है वह निश्चित ही एक न एक दिन मृत्यु-गतिको प्राप्त होगी परन्तु विश्वमाताके साथ ऐसा नहीं है। वह हमारा भार धारण करती है और हमारा पोषण करती है। वह भी एक दिन मरेगी परन्तु जिस दिन वह मरेगी, उस दिन अपने समस्त पुत्रोंको अपने साथ लेती जायगी। इसलिए वह हमसे समग्र जीवनके समर्पणकी माँग करती है।"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने इस समारोहमें अपनी उपस्थितिपर अत्यन्त प्रसन्नता व्यक्त की और कहा कि पहले ज़मानेमें मस्जिदें बना करती थीं। उनमें सब लोग जा सकते थे और वहाँ अपनी प्रार्थना कर सकते थे। उन्होंने अपना यह मन्तव्य प्रकट किया कि यह मन्दिर भी, जिसका महात्मा गांधीने अभी उद्घाटन किया है, उपासना और प्रार्थनाकी ऐसी ही एक आम जगह बने।

३० अक्तूबरसे २ नवम्बरतक खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ गांधीजीके साथ अहमदाबाद रहे। वहाँकी नगरपालिकाने उन्हें एक अभिनन्दन-पत्र भेंट किया। सार्वजनिक सभाओंमें उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम एकतापर बल दिया और खुदाई खिदमतगार आन्दोलनकी सार्थकता बतलायी। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ गांधीजीके साथ ही अहमदाबादसे वर्धा लौट आये। सीमा-प्रान्तमें उनके प्रवेशपरसे प्रतिबंध हटानेके लिए वहाँकी परिषद्में एक प्रस्ताव रखा गया था और इस सम्बन्धमें सीमा-प्रान्तके होम-मेम्बरने एक भाषण किया था। १९ नवम्बरको खान अब्दुल

गफ्फ़ार खाँने इस भाषणके प्रत्युत्तरमें एक वक्तव्य निकाला :

"मुझे सूचना मिली है कि सीमा-प्रान्तके होम-मेम्बरने मेरी अहिंसाकी भावना-पर अपना अविश्वास प्रकट किया है और अपनी बातके पुष्टीकरणके लिए सदनके आगे कुछ प्रमाण प्रस्तुत किये हैं; यदि उनको प्रमाण कहा जा सकता है तो।

"होम-मेम्बरने चारसद्दा मैदानमें विगत निर्वाचनका स्मरण दिलाते हुए कहा है कि उन दिनों हमारे क्षेत्रकी स्थिति ऐसी हो गयी थी कि धमकीके कारण केवल तीन वोटरोंने मतदान केन्द्रमें जानेकी हिम्मत की थी। उन्होंने यह भी कहा कि काश, उस समय प्रत्येक व्यक्तिको अपने मतदानका अधिकार होता! उन दिनों जो भी घटनाएँ घटीं, जो भी दृश्य उपस्थित हुए, वे मेरे और मेरे कार्यकर्ताओंकी अनुपस्थितिमें हुए, क्योंकि उन दिनों हम सब विभिन्न अवधियोंके लिए जेल काट रहे थे। उनकी इस बातको कि धमकीके कारण तीन मतदाता अपना मत देने गये, प्रमाणरूपमें स्वीकार नहीं किया जा सकता। वस्तुस्थिति यह है कि उन दिनों कांग्रेसने निर्वाचनके बहिष्कारका आह्वान किया था। अतः वहाँ ही नहीं, भारतके अनेक स्थानोंमें मतदाताओंने अपने मतोंको रोक लिया था।

"क्या यह सम्भव है कि धमकीके कारण हज़ारों मतदाताओंको उनके मता-धिकारसे रोका जा सके? ख़ुदाई खिदमतगारोंकी अपेक्षा शासनके पास धमकी देनेके कहीं बड़े साधन मौजूद थे। इसके अतिरिक्त उन ख़ुदाई ख़िदमतगारोंमेंसे, जो जेलकी चहारदीवारीसे बाहर थे, बहुतसे मतदाता भी थे। यदि इस निर्वाचनमें मतदाता अपने मत कांग्रेस प्रत्याशीको देने जाते हैं तो भी क्या यही कहा जायगा कि उन्होंने किसीकी धमकीके कारण ऐसा किया है?

"मेरी तथाकथित हिंसाका दूसरा प्रसंग यह बतलाया गया है कि मैं उस दरबारमें सम्मिलित नहीं हुआ जो कि तथाकथित सुधारोंकी योजनाके लिए आयो-जित किया गया था और मैंने उसके निमंत्रणका उत्तरतक नहीं दिया। मैं इस सम्बन्धमें केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि मुझे इस समारोहका आमंत्रण अपने एक मित्रके द्वारा मिला था और उस मित्रके द्वारा ही मैंने उसका उत्तर भी भिजवा दिया था। मैंने यह सोचा भी न था कि उस दरबारमें मेरा सम्मिलित न होना एक अपराधकी कोटिमें आयेगा। मैं यह भी स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मेरा यह कार्य कांग्रेसकी नीतिसे प्रेरित था, जिसपर कि मेरा पूर्ण रूपसे विश्वास है।

"इसके पश्चात् होम-मेम्बरने कहा है कि मैंने और मेरे दलने सरकारसे सहयोग नहीं किया और मैंने यह घोषणा की कि पूर्ण स्वाधीनताके अतिरिक्त कुछ

भी मुझे और मेरे दलको संतोष न दे सकेगा। उन्होंने कहा कि इस स्थितिमें शासन कार्यवाही करनेके लिए और राजद्रोहात्मक आन्दोलनको दबानेके लिए विवश हो गया। होम-मेम्बर कहते हैं : 'मैं यह सोचता भी न था कि इन लोगों-का असहयोग वास्तवमें कांग्रेसका असहयोग है जिसको कांग्रेसने निश्चित रूपसे अपना एक अहिंसात्मक कार्य बतलाया है। कोई अहिंसात्मक कार्य भारतके किसी भागमें अवैध घोषित नहीं किया गया। न स्वाधीनताकी इच्छा और माँगको ही अवैध बतलाया गया। निश्चित ही मैं स्वाधीनताकी माँगको हिंसाका एक कार्य नहीं समझता। यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि कांग्रेसके ध्येयमें कांग्रेसका लक्ष्य काफ़ी शब्दोंमें स्पष्ट किया गया है और मैं यह नहीं जानता कि उसके कारण कांग्रेस एक हिंसात्मक संगठन समझी जाती है अथवा उसको अवैध कार्यमें प्रवृत्त बतलाया जाता है।'

"तत्पश्चात् सीमाप्रान्तके होम-मेम्बरने मेरे उस भाषणका उल्लेख हिंसात्मक क्रिया-कलापके एक प्रसंगके रूपमें किया है जिसके लिए मुझको दो वर्षका कठोर कारावास दण्ड दिया गया है। ये सब बातें अधिक शोभाजनक नहीं हैं। उनको यह ज्ञात होना चाहिए कि इस भाषणके कुछ वाक्य-खण्डोंके लिए मुझको अपनी ओरसे न्यायालयके आगे खेद व्यक्त करना पड़ा है यद्यपि मेरे भाषणमें कहीं हिंसाकी कोई भावना न थी। मेरे ऊपर राजद्रोहका आरोप लगाया गया था जो कि एक सांविधिक अपराध है परन्तु इसीलिए वह अनिवार्य रूपसे एक हिंसात्मक कार्य नहीं हो जाता। मुझे इस बातका ज्ञान है कि यदि मेरे भीतर हिंसा है तो होम-मेम्बरके साक्ष्योंकी कमीके कारण वह मुझसे निकल नहीं जायगी और यदि मुझमें वास्तवमें अहिंसा है तो होम-मेम्बरके अनेक साक्ष्य मुझे हिंसक नहीं बना सकेंगे। वह मेरे और मेरे स्रष्टाके बीचका मामला है क्योंकि वही मनुष्यके हृदय-को पढ़ सकनेमें समर्थ है। मैं केवल यह कह सकता हूँ कि मेरी अहिंसा और उसकी सामर्थ्यमें कई वर्षोंसे आस्था है। उन अनेक प्रसंगोंमें, जो मेरी दृष्टिके आगे आये हैं, मैंने उसे कार्य सिद्ध करते हुए देखा है। उसके प्रतिकूल कुछ भी क्यों न कहा जाय फिर भी मैं यह समझता हूँ कि अहिंसाने खुदाई खिदमतगारोंके लिए क्या किया है। मैं यह दावा करता हूँ कि उनके कार्य असंदिग्ध रूपसे अहिंसा और उसकी क्षमताके गौरवपूर्ण उदाहरण हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि खुदाई खिदमतगार पूर्ण मानव हैं। वे और मैं, ईश्वरके और इसलिए मानवताके विनम्र सेवक बननेका प्रयास कर रहे हैं। हम लोग अहिंसाके गुणोंका उत्तरोत्तर अनुभव कर रहे हैं और उनको अपने आचरणमें ढालनेकी चेष्टा कर रहे हैं। हममेंसे

बहुतोंके लिए अहिंसा एक जीवित विश्वासकी वस्तु बन गयी है।

"मैं इसके समर्थनमें खुरशीद बहन नौरोजी, स्वर्गीय विट्ठलभाई पटेल, फादर वेरियर एल्विन और देवदास गांधीके साक्ष्य देना चाहता हूँ। खुरशीद बहन नौरोजी तथा देवदास गांधी बहुत दिनोंतक सीमाप्रान्तमें खुदाई खिदमतगारोंके बीचमें रहे हैं और उनको इन लोगोंके निकट सम्पर्कमें आनेका प्रत्येक अवसर मिला है। इन चारों साक्षियोंने अपनी जाँच-पड़ताल भिन्न-भिन्न मौकोंपर और एक दूसरेसे अलग-अलग की है। यह नहीं कहा जा सकता कि उनके आगे मिथ्या बयान दिये गये हैं और उन्हें धोखा दिया गया है। अंतमें मैं यह कहना चाहता हूँ कि मुझे सीमाप्रान्तमें कभी प्रवेश करने दिया जाय या नहीं परन्तु मेरा यह विश्वास है कि खुदाई खिदमतगार सदैव उस घोषणाके प्रति सच्चे रहेंगे जो उन्होंने की थी कि वे समस्त परिस्थितियोंमें, चाहे उन्हें कितना भी उत्तेजित क्यों न किया जाय, अहिंसाका पालन करते रहेंगे। मुझको इस बातका भी भरोसा है कि सीमाप्रान्तके मतदाता कांग्रेसके प्रत्याशीका पूर्ण रूपसे समर्थन करके यह दिखला देंगे कि वे भारतकी पूर्ण स्वाधीनताके लिए छेड़े जानेवाले राष्ट्रीय आन्दोलनमें कांग्रेसके पीछे हैं, उस स्वाधीनताके लिए जो कि उनका जन्मसिद्ध अधिकार है।"

सीमा-प्रान्तमें खुदाई खिदमतगार आन्दोलनपर प्रतिबन्ध लगा रहा। हिन्दू महासभाके एक मंत्रीने यह वक्तव्य दिया कि यह प्रतिबन्ध लगा रहना चाहिए; यद्यपि उसका इससे कोई सम्बन्ध न था। पं० जवाहरलाल नेहरू इस वक्तव्यपर बिगड़ गये। उनको एक विचित्र स्वप्न भी आया। उन्होंने देखा कि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको चारों ओरसे घेर लिया गया है और वे उनको बचानेके लिए लड़ रहे हैं। वे जाग पड़े। उनके सारे शरीरमें थकान भर गयी थी। वे बड़े दुःखी थे और उनका तकिया आँसुओंसे गीला हो गया था।

नवम्बरके अन्तिम सप्ताहमें वल्लभभाई पटेल और भूलाभाई देसाईने चुनावके सिलसिलेमें गवर्नरसे अनुमति लेकर सीमाप्रान्तका भ्रमण किया। गवर्नरको उनके वहाँ जानेमें कोई आपत्ति न हुई परन्तु उन्होंने कुछ शर्तें लगा दीं, 'यह दौरा पाँच दिनसे अधिकका नहीं होगा और ये लोग अपने इस निर्वाचन अभियानमें घूमनेवाले चक्रवातकी भाँति ग्रामीण क्षेत्रोंमें चक्कर काटनेका प्रयास नहीं करेंगे।' एक गोपनीय पत्रमें भारत-सरकारके होम-मेम्बर सर हेनरी क्राइकने सीमाप्रान्तके गवर्नर सर राल्फ ग्रिफिथको लिखा :

"मैं आपका ध्यान कतिपय विचार-वस्तुओंकी ओर आकृष्ट करना चाहता

हूँ। वल्लभभाई पटेलको सीमाप्रान्तमें प्रवेश करनेकी अनुमति दी जाय, इसका निर्णय करते समय हमें उनको (विचारोंको) दृष्टिमें रखना चाहिए। अखिल भारतीय संसदीय समिति वास्तवमें कांग्रेसका एक वैध रूप है जो कि वैधानिक ढंगसे सक्रिय रूपमें कार्य कर रही है। यदि ऐसे निकायके अध्यक्षका सीमाप्रान्त में प्रवेश निषिद्ध ठहराया जाता है तो निश्चय ही उसकी एक तीव्र प्रतिक्रिया होगी। परन्तु प्रत्येक दशामें पटेल अपनी सभाओंमें पठान श्रोताओंके मनको व्यक्तिगत रूपसे अपनी ओर कुछ तो आकर्षित करेंगे ही। जैसा कि सम्भवतः आप जानते होंगे, वे नेहरूके साम्यवादी विचारोंके कट्टर विरोधी समझे जाते हैं और शायद नेहरूके बढ़ते हुए प्रभावके कारण वे उनसे कुछ ईर्ष्या भी रखते हैं। हमें यह सूचना मिल चुकी है कि पिछले दिनों खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके साथ उनका घनिष्ठ सम्पर्क रहा है और इन दोनों व्यक्तियों (वल्लभभाई पटेल और भूलाभाई देसाई) ने कुछ दिन पूर्व ही गांधी, नेहरू और राजेन्द्रप्रसादके साथ लम्बी चर्चा की है। उस बैठकमें जिन विषयोंपर विचार-विमर्श किया गया उनमें एक विषय यह भी था कि आपकी सरकार निर्वाचनके कार्योंमें (उनके कथनानुसार) हस्तक्षेप करती है। ऐसा सम्भव है कि पटेल खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँकी ओरसे कोई सन्देश लेकर वहाँ जायें। उनसे यह भी आशा की जाती है कि वे लाल कुर्ती दलके लिए कुछ ठोस आर्थिक सहायता लेकर वहाँ पहुँचें। परन्तु यदि पटेलको सीमाप्रान्तसे बाहर रखा जाता है तो भी किन्हीं अन्य रास्तेसे यह सन्देश और यह आर्थिक सहयोग पहुँचानेमें इन लोगोंको कोई कठिनाई नहीं होगी।....”

वर्षके साथ ही कांग्रेसके सभापतिका कार्यकाल पूर्ण होने जा रहा था अतः उसके निर्वाचनकी एक हलचल-सी फैली हुई थी। अपने सभापतित्वके कालमें नेहरूजीने समस्त देशका एक दौरा किया और कांग्रेसमें एक जीवन-शक्तिका संचार कर दिया। यह अनुभव किया जाने लगा कि फैज़पुर कांग्रेसके लिए नेहरूजीका पुनर्निर्वाचन होना चाहिए और नेहरूजीको फिर सभापति चुन भी लिया गया।

यह परिकल्पना कि कांग्रेस तथा प्रदर्शनीका आयोजन किसी गाँवमें करना चाहिए मूल रूपसे गांधीजीकी थी। वे इस अधिवेशनको सफल बनानेपर तुले हुए थे। महाराष्ट्रके एक गाँव फैज़पुरमें जिस ढंगसे कांग्रेस अधिवेशनका आयोजन किया गया, वह अत्यन्त प्रभावोत्पादक था। दूर और पासके लगभग १,००,००० दर्शक वहाँ पहुँचे तथा तिलकनगरमें एकत्रित हुए। २५ दिसम्बरको गांधीजीने अपने एक भाषणके साथ खादी और ग्रामोद्योग प्रदर्शनीका उद्घाटन किया :

"आपने अपने सभापतिके लिए संयोजित जुलूसकी इस भव्य सादगीको देखा, विशेप रूपसे उस रथकी सुन्दर अलंकृति और सजावटको जिसे कि छः बैलों-की जोड़ियाँ खींच रही थीं। ठीक है, लेकिन यह सब उसके हेतु सजाया गया, जो आपकी यहाँ प्रतीक्षा कर रहा है। यहाँ नगरकी सुविधाएँ और आराम नहीं है, लेकिन वह सब कुछ है जो ये निर्धन किसान आपको दे सकते हैं। यह जगह हम सबके लिए एक तीर्थ है, हमारी काशी और हमारा मक्का, जहाँ कि स्वतंत्रताके आगे हम अपनेको अर्पित करने आये हैं और राष्ट्रकी सेवाके हेतु अपने मनको केन्द्रित करने आये हैं। यहाँ हम इन निर्धन किसानोंके ऊपर हुक्म चलाने-के लिए नहीं आये हैं बल्कि यह सीखने आये हैं कि हम अपना नित्यका कार्य करके उनके कार्यमें कैसे हाथ बँटा सकते हैं और उनका भार कैसे हल्का कर सकते हैं। हम स्वयं सफ़ाई करनेवालेका काम करें, स्वयं अपने कपड़े धोयें, अपने आप ही आटा पीसें आदि।... ...कांग्रेसके इतिहासमें यहाँ आपको पिछली बार बिना पालिश किये हुए चावल और हाथसे पिसे आटेकी चपातियाँ, पर्याप्त स्वच्छ वायु और आपके अंगोंके विश्रामके लिए धरती माताकी साफ़-सुथरी गोद दी गयी है। परन्तु आप कृपा करके अधिवेशनके संयोजकोंकी जो भी कमियाँ हों उनको सहन कीजिए क्योंकि खान साहबकी भाषामें हम सब खुदाई खिदमतगार, ईश्वरके सेवक हैं जो कि यहाँ अपनी सेवा कराने नहीं बल्कि अपनी सेवाएँ अर्पित करने आये हैं।"

नेहरूजीके अध्यक्षपदसे किये गये भाषणमें 'यूरोपमें फासिस्टवादकी विजय' पर विशेष चर्चा की गयी थी। उसे उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रमें एक खुली दस्यु-वृत्तिका नाम दिया। साथ ही उन्होंने भविष्यकी ओर एक संकेत करते हुए कहा कि यह स्थिति युद्धकी ओर ले जानेवाली है। उनके मनपर उसकी जो प्रतिक्रिया हुई थी उसे व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा : "कांग्रेस आज भारतमें पूर्ण लोकतंत्र-के सहारे खड़ी है और वह एक लोकतंत्री राज्यके लिए संघर्ष कर रही है। वह साम्राज्यवादकी विरोधी है और आजके राजनीतिक और आर्थिक ढाँचेमें एक बहुत बड़ा परिवर्तन लानेके लिए लड़ रही है। मुझे आशा है, घटनाओंका तर्क उसे समाजवादकी ओर प्रेरित करेगा जो कि भारतकी आर्थिक बीमारियोंका एक मात्र उपचार है।"

इसके बाद वे भारतकी समस्याओंकी ओर मुड़े, नया संविधान, नयी संविधान सभा और कार्यकी संघीय संरचनाका विरोध करनेकी आवश्यकता। उन्होंने कहा कि हमें साफ़ स्लेटपर फिरसे नया लिखना है।

"जो हमारे साथ लखनऊमें नहीं थे, वे एक लम्बी अवधिके बाद हमारे बीच-में आ गये।" नेहरूजीने अपने भाषणके प्रारम्भमें ही कहा, "हम स्वतंत्र भारतके खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको उनकी निजकी वीरताके लिए और सीमा-प्रान्तकी उस जनताके लिए हार्दिक स्वागत करते हैं जिसका कि उन्होंने भारतके स्वाधीनता संग्राममें प्रभावपूर्ण और शौर्यपूर्ण ढंगसे नेतृत्व किया। यद्यपि वे इस समय हमारे साथ हैं परन्तु वे अधिक दिनोंतक यहाँ नहीं रहेंगे। उनके सम्बन्धमें भारतकी ब्रिटिश सरकारके आदेश दौड़ रहे हैं कि उनको अपने घर जाने दिया जाय, या उन्हें अपने प्रान्तमें प्रवेश करनेकी अनुमति दी जाय या उन्हें पंजाबमें ही जाने दिया जाय। उनके अपने प्रान्तमें कांग्रेसका संगठन अबतक अवैध माना जाता है और वहाँ अब भी अधिकांश राजनीतिक कार्योंपर प्रतिबन्ध लगा हुआ है।"

"यद्यपि प्रत्यक्ष रूपमें हम दुर्बल जान पड़ते हैं।" उन्होंने अपने भाषणके अंत में कहा, "परन्तु वास्तवमें हम कमज़ोर नहीं हैं। हमारी शक्ति बढ़ती जा रही है और ब्रिटेनका साम्राज्य निस्तेज होता जा रहा है। हमको राजनीतिक और आर्थिक रूपमें दबाया गया है, हमारी नागरिक आज़ादियोंको हमसे छीन लिया गया है, हमारी सैकड़ों संस्थाओंको ग़ैरकानूनी करार दिया गया है, हज़ारों युवा पुरुषों और स्त्रियोंको जेलों और नज़रबन्दी-शिविरोंमें रखा गया है, हमारे आन्दो-लनोंपर झुण्डके झुण्ड खुफिया पुलिसके लोगों और मुखबिरोंके द्वारा लगातार नजर रखी गयी है ताकि हम किसी तरह राजद्रोहके कानूनके शिकंजेमें आ जायँ परन्तु इन सब और ऐसी ही बहुतसी बातोंके कारण हम दुर्बल नहीं बल्कि शक्तिशाली हुए हैं। यह कठोर दमन हमारी निरंतर बढ़ती हुई राष्ट्रीय शक्तिका एक पैमाना बन गया है। युद्ध और क्रांति विश्वके ऊपर शासन कर रहे हैं और राष्ट्र उद्दण्डता-पूर्वक अपना शस्त्रीकरण कर रहे हैं। यदि युद्ध छिड़ता है या संकटकी कोई अन्य स्थिति आती है तो भारतका रवैया उसमें एक परिवर्तन ला सकता है। सफलताकी कुंजियाँ आपके हाथोंमें हैं, यदि आप उनको ठीकसे घुमा सकें और यह निरंतर विकसित होते हुए इस अनुभवसे ही सम्भव है कि हमने पराजित मनोवृत्तिको अपनेसे बिलकुल दूर कर किया है।

"सामान्य निर्वाचनने हमारे ध्यानको अपनी ओर आकृष्ट कर लिया है और हमारी शक्तिको सोख लिया है। यद्यपि इस बातको स्वीकार नहीं किया जाता परन्तु चुनावके क्षेत्रमें भी हम अधिकारियोंका हस्तक्षेप देखते हैं। वहाँ अशिक्षित मतदाताओंके मामलेमें मतदानकी गोपनीयताको भंग करनेके अर्थपूर्ण प्रयत्न किये जाते हैं लेकिन इन सब कठिनाइयों; राज्यका दबाव, निहित स्वार्थ और अर्था-

भावके होते हुए भी हम इन चुनावोंमें विजय प्राप्त करेंगे ।

"परन्तु एक बहुत लम्बी यात्रामें यह तो एक छोटासा डग है । हमें अपने पथपर विपत्तियों और पीड़ाओंको साथी बनाकर आगे बढ़ना है । वे दीर्घ कालसे हमारी सहयात्री रही हैं और उनको सहन करते हुए हमने प्रगति की है । जब हम यह सीख लेंगे कि उनपर कैसे शासन किया जाता है तो हम यह भी सीख जायेंगे कि सफलतापर कैसे शासन किया जाता है ।"

कांग्रेसने यह निश्चय किया कि यदि युद्ध प्रारम्भ हो जाता है तो ब्रिटिश साम्राज्यवाद अपने हितोंकी पूर्तिके लिए भारत और उसकी जनता, उसकी जन-शक्ति और उसके साधनोंका जो शोषण करेगा उसमें कांग्रेस बाधा डालेगी। भारतके सीमान्तकी शान्तिके प्रश्नपर और पड़ोसियोंके साथ अपनी मैत्री स्थापित करनेके सम्बन्धमें कांग्रेसने अपना यह निश्चय प्रकट किया : "कांग्रेसका दृढ़ विश्वास है कि सीमा-प्रान्तमें भारत-सरकार द्वारा अपनायी गयी नीति, साम्राज्य-वादके स्वार्थ निहित होनेके कारण नितान्त असफल हुई है । कांग्रेसका यह भी विश्वास है कि सीमान्तके पठान कबाइलियोंपर क्रूर और आक्रमणकारी होनेका जो अरोप लगाया गया है वह आधारहीन है और उनके साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों-को बढ़ाकर उन्हें शक्तिका एक मूल्यवान स्रोत बनाया जा सकता है ।"

फैजपुर कांग्रेसमें ही खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँको पूर्वी खानदेशके पुलिस अधीक्षक द्वारा पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्त सार्वजनिक शान्ति अधिनियमकी धारा ५ के अन्तर्गत दिनांक १४ दिसम्बर १९३७ पेशावरका निम्नलिखित आदेश दे दिया गया :

"मुख्य सचिवके पास उनको संतुष्ट करनेके लिए इस विश्वासके लिए पर्याप्त तर्कयुक्त आधार है कि आपने जिस ढंगसे कार्य किया है वह सार्वजनिक शांतिके लिए हानिकारक है और आपने आन्दोलनका जो प्रसार किया है वह भी सार्व-जनिक शान्तिके लिए हानिकारक है अतः सपरिषद् गवर्नर आपको यह निदेश देते हैं कि आप सीमा-प्रान्तमें प्रवेश न कर सकेंगे, वहाँ रुक न सकेंगे और रह न सकेंगे । यह आदेश २९ दिसम्बर १९३७ तक लागू रहेगा ।"

सीमा-प्रान्तकी पुकार

१९३७-३८

फैज़पुर कांग्रेसके अधिवेशनके पश्चात् देशके नेता निर्वाचनके कार्यमें संलग्न हो गये। गांधीजीने पूर्ण रूपेण गाँवोंके रचनात्मक कार्यको उठा लिया और खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ उनके पास रहकर निर्माणात्मक कार्यकी मूल भावनाको ग्रहण करने लगे। श्री वल्लभभाई पटेलको चुनावका कार्यभार सौंप दिया गया था और इस मुहिमके प्रमुख अभियानकर्त्ता जवाहरलाल नेहरू थे। सीमाप्रान्तको छोड़कर, जहाँ कि उनके प्रवेशपर प्रतिबन्ध था, नेहरूजी तरकशसे छूटे बाणकी भाँति देशभरमें सरसराते हुए निकल गये। 'हर एक मतदाताका मत कांग्रेसको मिलना चाहिए।' वे बल देकर कहते, 'और इस प्रकार हम करोड़ों हाथोंसे स्वाधीनताका ज्वलंत संकल्प अंकित करें।'

फरवरी १९३७ ई० में सामान्य निर्वाचनोंके परिणाम घोषित कर दिये गये। मतदानमें कांग्रेसने अत्यधिक मतोंसे विजय प्राप्त की। उसे ग्यारह प्रदेशोंमेंसे छः प्रान्तोंमें पूर्ण बहुमत प्राप्त हुआ। कांग्रेस देशमें सबसे बड़ा विजयी दल माना गया।

सीमाप्रान्तमें, जहाँ कि मुसलमानोंकी संख्या अधिक थी, कांग्रेसके प्रत्याशियोंने मुसलमानोंके लिए सुरक्षित ३६ स्थानोंमेंसे १५ स्थानोंपर विजय प्राप्त की जब कि मुस्लिम लीगको एक भी जगह नहीं मिल सकी। कुल मिलाकर खुदाई खिदमतगार दलके ५० सदस्योंके सदनमें १९ स्थान प्राप्त हुए। कांग्रेसकी विजयने अपना एक गहरा प्रभाव डाला। इस चुनावके ऊपर टिप्पणी करते हुए 'टाइम्स' ने लिखा :

"कांग्रेस दलने अपनी विजयें उन लाभोंके कारण प्राप्त कीं जिनमें कि ग्रामीण क्षेत्रोंके लाखों मतदाताओंका हित निहित था और उन लाखों लोगोंकी गणनापर, जिनका अपना कोई मत नहीं था।"

फरवरीके अन्तमें वर्धामें कांग्रेसकी कार्यकारिणीकी बैठक हुई। राष्ट्रने कांग्रेसके आवाहनका जो अनुकूल उत्तर दिया था उसके लिए इस बैठकमें धन्यवादका एक प्रस्ताव पारित हुआ, "यह समिति राष्ट्र द्वारा सौंपे गये एक बड़े उत्तरदायित्वका अनुभव करते हुए समस्त कांग्रेस संगठनका, विशेष रूपसे विधान-

मंडलके नवनिर्वाचित सदस्यगणका आह्वान करती है कि वे लोग कांग्रेसके आदर्शों और सिद्धान्तोंके उत्थानके हेतु राष्ट्रके इस विश्वास और उत्तरदायित्वको सदैव स्मरण रखें। वे जनताके विश्वासके प्रति सच्चे रहें और स्वराज्यके एक सिपाहीके नाते मातृभूमिकी स्वतन्त्रताके लिए तथा करोड़ों लोगोंको कष्ट और शोषणसे मुक्त करनेके लिए अनवरत श्रम करें।"

समितिने यह घोषणा की कि "कांग्रेस जनकी तथा इसी प्रकारसे अन्य समस्त भारतीयोंकी प्रथम निष्ठा भारतकी जनताके प्रति होनी चाहिए। विधानमंडलके कार्योंमें भाग लेनेके लिए सदस्यों द्वारा निष्ठाकी जो शपथ ली जायगी, उसका इस प्राथमिक निष्ठा और कर्तव्यके ऊपर कोई प्रभाव नहीं होगा। समितिने विधान-सभाके सदस्योंको यह स्मरण दिलाया कि विधानमंडलके ऐसे समस्त कार्यों-की पृष्ठभूमिमें जनताकी स्वीकृति अनिवार्य है जिनका कि उस जनतापर प्रभाव पड़ना है। इस उद्देश्यसे विधानमंडलके सारे कार्योंका, चाहे वे भीतर किये जायें या बाहर, कांग्रेसकी गतिविधिसे समन्वय होना चाहिए।" विधानमंडलमें कांग्रेस की यह नीति निश्चित की गयी :

"कांग्रेस ब्रिटिश साम्राज्यवादके यंत्रके साथ अपनी असहयोगकी सामान्य तथा बुनियादी नीतिपर तबतक दृढ़ रहेगी जबतक कि परिस्थितियोंमें ही कोई विशेष परिवर्तन नहीं आ जाता। कांग्रेसका लक्ष्य पूर्ण स्वाधीनता है और उसकी सभी प्रवृत्तियाँ उसी ओर निदेशित हैं। कांग्रेसका तात्कालिक लक्ष्य नये संविधान का मुकाबला करना है और एक संविधान सभाके हेतु राष्ट्रकी माँगपर बल देना है। कांग्रेसके सदस्य कांग्रेसके उस कार्यक्रमको कार्यान्वित करनेपर बल दें जिसका कि कांग्रेसके घोषणा-पत्र तथा भू-सम्पत्तिके विभाजन सम्बन्धी प्रस्तावमें उल्लेख किया गया है। वर्तमान क्रिया-कलापके अन्तर्गत, जब कि सुरक्षण और विशेष अधिकार वाइसराय या गवर्नरके हाथोंमें है और जबतक सेवाओंकी संरक्षा भी उन्हींके हाथोंमें है, यह गतिरोध अवश्यम्भावी है। कांग्रेसकी नीतिको कार्यान्वित करते समय जब वे बीचमें आते हैं तब उनका परिहार नहीं करना चाहिए।"

मार्चके तीसरे सप्ताहमें गांधीजी और खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ अखिल भार-तीय कांग्रेस समितिकी बैठकमें भाग लेनेके लिए दिल्ली रवाना हो गये। पदोंको स्वीकार करनेके विचारणीय विषयपर कांग्रेसका नेतृत्व दो भागोंमें बँट गया, जिनकी कि राय अलग-अलग थी। दक्षिणपक्षी नेताओंकी धारणा थी कि मंत्रि-मंडलोंकी रचना करके, नये संविधानसे लड़नेके लिए कांग्रेस अपनी स्थिति अपेक्षाकृत दृढ़ कर सकेगी। नेहरू, सुभाष बोस तथा अन्य वामपक्षी नेता पदोंको

स्वीकार करनेका विरोध कर रहे थे। काफ़ी उग्र बहसके बाद अखिल भारतीय कांग्रेस समितिने गांधीजीका समझौतेका सूत्र स्वीकार कर लिया। इस सूत्रके अनुसार कांग्रेसको यह अधिकार दिया गया कि जिन प्रदेशोंके विधान-मंडलोंमें कांग्रेसका बहुमत है उन प्रान्तोंमें वह पदोंको स्वीकार कर सकती है।

१९ मार्चको प्रान्तोंके विधान-मंडलोंके कांग्रेस सदस्योंका दिल्लीमें एक सम्मेलन हुआ जिसमें उन्होंने यह शपथ ग्रहण की :

"मैं, इस अखिल भारतीय सम्मेलनका एक सदस्य अपने लिए भारतकी सेवा करनेकी शपथ लेता हूँ। मैं यह शपथ लेता हूँ कि मैं विधान-मंडलमें और उसके बाहर भी भारतकी स्वाधीनताके हेतु एवं उसकी जनताकी ग़रीबी और शोषणका अन्त करनेके हेतु कार्य करूँगा। मैं अपने लिए यह शपथ लेता हूँ कि मैं कांग्रेसके अनुशासनमें उसके आदर्शों और उद्देश्योंके प्रसारके लिए कार्य करूँगा और जबतक भारत स्वाधीन नहीं हो जाता और उसकी जनताको असह्य भारसे मुक्ति नहीं मिल जाती, मैं निरंतर कार्य करता रहूँगा।"

दिल्लीमें अखिल भारतीय कांग्रेस समितिकी बैठकमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको अपनी रिहाईके पश्चात् पहली बार अपने सीमाप्रान्तके सहयोगियोंसे मिलनेका अवसर मिला। 'गवर्नरने सर अब्दुल कैयूमको मुख्य मंत्रित्वके लिए आमंत्रित किया, इससे अपनेको मैं निरुत्साहित अनुभव नहीं करता।' उन्होंने उन लोगोंसे कहा, 'यदि आपके प्रत्याशी एक बड़ा बहुमत न पा सके तो आपको इस शिक़ायतका मौक़ा नहीं है कि मुख्य मंत्रित्व आपके पास नहीं आ सका। आपकी जो भी सफलताएँ अथवा असफलताएँ रही हों, आप रचनात्मक कार्यक्रम को लेकर फिर दूनी शक्तिसे आगे बढ़िये।'

मार्चके अंतमें गवर्नरोंने उन प्रान्तोंके नेताओंको 'प्रीमियर' पद (प्रधान मंत्रित्व) स्वीकार करने तथा मंत्रिमंडल बनानेके लिए आमंत्रित किया, जिनमें कि कांग्रेसको बहुमत प्राप्त हुआ था। प्रत्येक गवर्नरसे यह कहा गया कि वह अपने प्रान्तके सम्भावित 'प्रीमियर' को एक आश्वासन दे। उसका प्रारूप गांधीजीने बड़े संतुलित शब्दोंमें तैयार किया था और उसे सार्वजनिक रूपसे घोषित भी किया जा सकता था, 'हिज़ एक्सलैंसी अपने मंत्रियोंके संवैधानिक कार्योंमें अपने हस्तक्षेपके विशेषाधिकारका प्रयोग नहीं करेंगे और न अपने मंत्रिमंडलकी सलाहोंकी उपेक्षा करेंगे।'

गवर्नरोंने यह आश्वासन नहीं दिया और नेताओंने मंत्रिमंडलका गठन करनेमें अपनी असमर्थता प्रकट कर दी। पहली अप्रैलको अधिनियमका प्रतिष्ठापन

हुआ। वह दिन समग्र भारतमें 'दासताके इस नये घोषणापत्र'के विरोधमें, विरोध-दिवसके रूपमें मनाया गया।

जब बहुमतवाले दलने सरकार बनानेसे इनकार कर दिया तब गवर्नरोंने अपने प्रान्तोंमें 'अंतःकालीन' मंत्रिमंडलकी नियुक्ति की परन्तु उनकी स्थिति भी दिन-दिन कठिन होती गयी। वे विधान-मंडलका सामना नहीं कर सके और निर्वाचित सदस्यों द्वारा बार-बार मांग की जानेपर भी विधान-मंडलको बुलाया नहीं गया। लेकिन बजटको पारित करनेके लिए पहले छः महीनेके भीतर ही सत्र प्रारम्भ करना आवश्यक था। इस संकटकी स्थितिने शासनको अपनी ओरसे आगे बढ़नेको विवश कर दिया। वाइसराय लार्ड लिनलिथगोने गांधीजीके इस सुझावको स्वीकार कर लिया, 'यह स्थिति तभी आयेगी जब कि कोई विचारणीय विषय गवर्नर और उसके मंत्रीके बीच एक गम्भीर मतभेद उत्पन्न कर दे और उनकी साझेदारी टूट जानेका ही प्रश्न उठ खड़ा हो।' वाइसरायके इस वक्तव्यसे गतिरोध दूर हो गया। कांग्रेसकी कार्य-समितिने अपनी ८ जुलाईकी बैठकमें यह निश्चय किया कि कांग्रेसजनोंको पद स्वीकार करनेकी स्वीकृति दे दी जाय।

जुलाईके अंततक कांग्रेस दलके नेताओंने बम्बई, मद्रास, संयुक्त प्रान्त, बिहार, मध्यप्रदेश और उड़ीसामें अपने मंत्रिमंडल बना लिये। इसके तुरन्त बाद ही सीमा-प्रान्तमें आठ गैरकांग्रेसी सदस्यों द्वारा कांग्रेसको सहयोग देनेके कारण कांग्रेसको वहाँ भी पूर्ण बहुमत प्राप्त हो गया। अतः वहाँ डॉ० खान साहबके नेतृत्वमें कांग्रेसका मंत्रिमंडल बन गया।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने बम्बई, पटना और लखनऊका दौरा किया और उन्होंने वहाँ हिन्दू-मुस्लिम एकताका उपदेश दिया। अगस्तके अंतिम सप्ताहमें, जब कि उनके ऊपरसे सीमा-प्रान्तमें प्रवेशका प्रतिबन्ध हट गया तब उन्होंने कराचीके पत्र-प्रतिनिधियोंको यह बतलाया कि वे अपने प्रान्तमें पहुँच जानेके बाद ही अपना भविष्यका कार्य-क्रम निश्चित करेंगे।

जब उनसे इपीके फ़कीरकी गतिविधियोंके बारेमें प्रश्न किये गये तब उनका प्रत्युत्तर देते हुए उन्होंने कहा कि वे तो एक फ़कीर नहीं हैं। वे अपने गाँवके एक अति सम्पन्न व्यक्ति हैं, एक शिक्षित ज़मींदार हैं। वे एक देशभक्त पुरुष हैं, जिनका प्रभाव दूर-दूरतक है। उनका ध्येय भारतकी स्वाधीनता है और उसके मिलने तक वे यह नहीं जानेंगे कि आराम कैसा होता है? परन्तु कुछ लोगोंने, जिनके कि स्वार्थ निहित रहे हैं, उन्हें एक परम्परावादी व्यक्तिके रूपमें पेश किया है। वे उनके (खान साहब) तथा उनके साथियोंका अपयश फैलाना चाहते हैं और

संसारके लोगोंको यह बतलाना चाहते हैं कि मुसलमानोंमें एक ऐसा वर्ग भी है, जिसके विचार बड़े संकीर्ण हैं और वही सब प्रकारकी परेशानियाँ पैदा करता है। कबाइली लोगोंको इन बातोंसे अत्यंत दुःख होता है। इसीके फ़क़ीरने इस सम्बन्धमें एक जिरगा बुलाया और उन लोगोंने वर्तमान स्थितिपर पर्याप्त विचार-विमर्श किया। सीमा-प्रांतमें एक शरारती तबका है जो अपहरण, लूट-मार और आगजनीकी घटनाओंके लिए ज़िम्मेदार है। उन लोगोंने इन शरारती तत्त्वोंकी घोर भर्त्सना की। उन्होंने हिन्दू नेताओंको वहाँ आकर सीमा-प्रांतकी स्थितिको जाँच-पड़ताल करनेका आमंत्रण भी दिया। परन्तु इस तरहका कोई समाचार बाहर नहीं आने दिया गया और जो कुछ बाहर आया भी वह मिथ्या और अति-रंजित था। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने लोगोंको यह सलाह दी कि वे इस प्रकार की निरर्थक अफवाहोंपर विश्वास न करें। उन्होंने आगे कहा, "मुझे भय है कि मुझपरसे प्रतिबन्ध हट जानेके बाद भी मुझको कबाइली लोगोंसे मिलनेकी इजाजत नहीं दी जायगी।"

अंतमें एक दीर्घ अवधिके पश्चात्, छः वर्षके निर्वासनके उपरान्त खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ सन् १९३७ के अगस्त मासके अंतमें अपने पश्चिमोत्तर प्रदेश-में वापस लौटे। जनताने उनका अभूतपूर्व स्वागत किया। पेशावरमें भी एक स्वागत समारोह एवं सभाका आयोजन हुआ। इस विशाल सभामें अपने श्रोताओं को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा,"ईश्वरको अत्यंत धन्यवाद है कि मैं, आपकी खुशियोंमें भाग बटानेके लिए फिर आपके बीचमें आ गया हूँ परन्तु वास्तविक खुशी तो अभी आनेको है। तबतक हमारी प्रसन्नता कोई अर्थ नहीं रखती जब-तक कि हम अपने लक्ष्य, स्वतंत्रताको प्राप्त नहीं कर लेते। हमारी आज़ादीकी लड़ाई अब ऐसी स्थितिमें पहुँच गयी है कि वह हमसे अधिक बलिदानकी अपेक्षा करने लगी है। जहाँतक मेरी अपनी बात है, मैं स्वतंत्रताके लिए तबतक लड़ता रहूँगा जबतक कि हम अपने कंधेसे विदेशी सत्ताका जुआ उतारकर नहीं फेंक देते और जबतक हम इस देशमें यहाँकी जनताकी सच्ची सरकार स्थापित नहीं कर देते।"

सीमाप्रान्तमें कांग्रेसको जो सफलता मिली उससे प्रेरित होकर कांग्रेसके सभा-पति पं० जवाहरलाल नेहरूने अक्तूबर सन् १९३७ में उस प्रदेशकी यात्रा की, यद्यपि वह बहुत थोड़े दिनोंकी थी। वे सीमाप्रान्तमें पहली बार जा रहे थे। १४ अक्तूबरको जब वे पेशावर पहुंचे तब अपार जन-समुदायने आतिशबाजी और पटाखोंकी तीखी आवाज़ोंके बीच उनका अति उत्साहपूर्ण स्वागत किया। खुदाई

खिदमतगार स्वयंसेवकोंकी एक टुकड़ी कांग्रेस अध्यक्षके प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के हेतु ('गार्ड ऑफ ऑनर' देने) रेलवेके प्लेटफॉर्मपर उपस्थित थी। खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँ, डा० खान साहब, अन्य अनेक प्रमुख कार्यकर्त्ता और प्रान्तीय विधानसभाके बहुतसे सदस्य उनके स्वागतार्थ वहाँ पहुँचे थे। नेहरूजी लगभग एक मील लम्बे जुलूसके साथ एक सजी हुई कारमें ले जाये गये। उनके एक ओर खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँ बैठे हुए थे और लगभग एक लाख दर्शनार्थी उनका जय-जयकार कर रहे थे। जुलूसमें सबसे आगे दस हजार खुदाई खिदमतगार स्वयंसेवक अपनी लाल वर्दियाँ पहने चल रहे थे। खाकसार स्वयंसेवक अपनी खाकी वर्दियाँ पहने हुए थे और उनके हाथोंमें फावड़े थे। इस जुलूसमें अन्य अनेक राजनीतिक और सामाजिक संगठनोंके सदस्य भी सम्मलित थे। सारे पेशावर नगरमें तिरंगे झण्डे लहरा रहे थे। सौसे भी अधिक सजे हुए द्वारोंको पार करते हुए काबुली दरवाजेतक पहुँचनेमें इस जुलूसको कई घंटे लग गये। वहाँसे नेहरू-जी और उनके साथके लोगोंको डा० खान साहबके निवास-स्थानपर ले जाया गया।

पेशावरमें एक बहुत बड़े जन-समुदायको सम्बोधित करते हुए नेहरूजीने चुने हुए सम्मानपूर्ण शब्दोंमें खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँकी सराहना की और कहा कि वे केवल 'फख्र-ए-अफ़गान' (पठानोंके गौरव) ही नहीं हैं; उनको तो 'फख्र-ए-हिन्द' (भारतका गौरव) कहना अधिक उपयुक्त होगा। महात्मा गांधीको छोड़-कर कदाचित् ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जिसका कार्यक्षेत्र इतना व्यापक हो। वास्तवमें वे भारतके शौर्य और साहसके एक मूर्तिमान प्रतीक हैं। उन्होंने कहा : "साम्प्रदायिक प्रश्नोंका जन-सामान्यसे कोई सम्बन्ध नहीं है और जो इस व्यवस्था-को समाप्त नहीं करना चाहते, उन्हींके द्वारा ये प्रश्न उठाये जाते हैं।" उन्होंने स्वराज्यके अर्थकी व्याख्या करते हुए कहा कि वह नौकरशाहीका परिवर्तन मात्र नहीं है। हम उस पीसनेवाली मशीनके खिलाफ़ खड़े हुए हैं जो कि हमको कुचल रही है। उसका पहिया यदि किसी ब्रिटेनवालेकी अपेक्षा किसी हिन्दुस्तानीकी सहायतासे चलता है तो इससे वस्तु-स्थितिमें क्या सुधार हो जायगा ? हमको तो यह देखना है कि शासनकी लगाम कुछ थोड़ेसे लोगोंके हाथोंमें नहीं बल्कि जन-साधारणके हाथोंमें होनी चाहिए, जिनकी संख्या पैंतीस करोड़ है। उन्होंने इस तथ्यपर बल दिया कि जो संविधान-सभा देशके समस्त बालिग व्यक्तियोंके मतदान के आधारपर बनेगी, केवल वही भारतके संविधानको तैयार करनेके लिए एक उपयुक्त निकाय होगी।

उन्होंने कबाइली जनतापर बम बरसानेके निर्दयतापूर्ण कार्यकी निंदा की और कहा कि यह बात कितनी बेतुकी है कि भारतके इन लोगोंको कत्ल करनेके लिए भारतीय सैनिक रखे जाते हैं। कबाइली इलाकेके निवासियोंके सम्बन्धमें उन्होंने कहा कि यदि हम उनको समझनेकी कोशिश करें और उनके विचारोंको जानें तो ऐसी बात नहीं कि उनके प्रश्न सुलझ न सकें।

१५ अक्तूबरको नेहरूजी और खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ उत्मंज़ईको चल दिये। उस दिन आस-पासके गाँवोंके बहुतसे लोग खिंचकर उत्मंज़ई आ गये थे और उस मानव-मेदिनीमें एक अपूर्व उत्साह दिखलाई देता था। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके घर उनके पुत्र वलीने नेहरूजीका स्वागत किया। इसके बाद वे आज़ाद स्कूलमें गये जिसकी स्थापना सन् १९२० में ग्रामीण किशोरोंको राष्ट्र-सेवाका पाठ पढ़ानेके लिए हुई थी। स्कूलके अध्यापकों और विद्यार्थियोंने कांग्रेस-अध्यक्षको एक अभिनन्दन-पत्र भेंट किया। उसमें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसपर सरहदी जनताके अडिग विश्वासपर बल दिया गया था।

नेहरूजीने कहा कि भारतमें शायद ही कोई ऐसा भाग होगा जो उत्मंजईके इस छोटेसे गाँवको न जानता हो। भारतकी स्वाधीनताके संघर्षमें इसके निवासियोंने जो गौरवपूर्ण योगदान किया है, उसके लिए यह गाँव सदैव प्रेम और गर्वसे स्मरण किया जायगा। इसे कोई भूल न सकेगा। उन्होंने कहा कि उनकी हार्दिक अभिलाषा है कि अपनी इस व्यक्तिगत भेंटके द्वारा वे समस्त सीमान्त-निवासियोंको अपनी स्नेहाञ्जलि अर्पित करें। सविनय आज्ञा-भंग आन्दोलनमें पठानोंने जो साहस प्रदर्शित किया था उसकी नेहरूजीने अत्यन्त सराहना की और कहा कि देशके प्रहरी होनेके कारण सीमाप्रान्तके निवासियोंपर एक महान् उत्तरदायित्व है।

उन्होंने कहा, "जब आप मुझसे मेरे कष्टों और मेरे त्यागकी बात कहते हैं तो उससे मुझे बड़ी शर्म महसूस होती है। आप लोगोंमेंसे हजारों मनुष्योंने जो तकलीफ़ें सही हैं उनकी तुलनामें मेरे कष्ट कितने महत्त्वहीन हैं।" नेहरूजीने इस बातको स्वीकार किया कि उन्होंने सीमाप्रान्तके लोगोंसे बहुतसे सबक़ सीखे हैं और पठानोंके सम्पर्कने उनको एक साहसपूर्ण प्रेरणा प्रदान की है। 'हम यह नहीं जानते कि हम कब स्वाधीन होंगे', उन्होंने कहा, "अबतक भारतमें कुछ ऐसे लोग भी हैं जो कि ग़ुलाम बने रहनेमें ही सन्तोष अनुभव करते हैं परन्तु भारत निश्चय ही स्वतन्त्र होगा और हम रहें अथवा न रहें लेकिन मुझे इसका निश्चय है कि आप लोग, भारतके बालक एक दिन अवश्य स्वाधीन देशमें सांस लेंगे।"

खैबरके दर्रेको देखनेके बाद नेहरूजी १६ अक्तूबरको पेशावर लौट आये। वहाँ विद्यार्थियोंने उनको इस्लामिया कॉलेजमें एक अभिनन्दन-पत्र अर्पित किया। इस अवसरपर बोलते हुए उन्होंने खैबर दर्रेका उल्लेख किया जिसे देखकर वे लौटे थे। उन्होंने कहा कि यह ऐतिहासिक दर्रा भारतकी प्राचीन गरिमाको मेरे निकट खींचकर ले आया और भारतीय इतिहासके हज़ारों साल पुराने चित्र मेरे मानस-चक्षुओंके आगे साकार हो उठे।

अपने चलनेके दिन, १७ अक्तूबरको उन्होंने कहा :

"सीमान्त प्रदेशमें मैंने तीन दिन,—अपने तीन अल्प दिवस बिताये और अपनी आँखों भारतका वह ऐतिहासिक प्रवेश-द्वार देखा जो सुदीर्घ अतीतकी स्मृतियोंको संजोकर सम्पन्न है। वह भारतकी स्वाधीनताके हेतु किये गये शौर्य-पूर्ण कार्यों और उसके कारण सही गयी असह्य यंत्रणाओंकी वर्तमान स्मृतियोंको लेकर भी उतना ही सम्पन्न है। मैंने भारतके इस उत्तरी छोरके वीर पुरुषोंको देखा। उनके पौरुषेय उत्साह, अनुशासन तथा उनके निच्छल और सरल स्वभाव-ने मेरे मनको जीत लिया। भारतकी आज़ादीके पास इससे सुदृढ सैनिक नहीं हैं; इससे वीर रक्षक नहीं हैं और जैसे ये लोग हैं वैसे साथी उसे मिल जाना उसके लिए एक हर्षप्रद उपलब्धि है, एक दुर्लभ आनन्द है। भारतके प्रवेश-द्वारके ये रक्षक हमारी राष्ट्रीय स्वतंत्रताके योद्धाओं और रक्षकोंमें भी सबसे आगे हैं। ये लोग भारतके अन्य प्रान्तोंके सुसंस्कृत लोगोंसे बहुत-सी बातें सीख सकते हैं परन्तु अन्य लोग भी इनसे बहुत कुछ सीख सकते हैं। साहस, शौर्यके साथ कष्ट-सहन, शानदार अनुशासन और संकीर्ण सम्प्रदायवादसे मुक्ति; उत्तरके मेरे इन प्रिय साथियोंसे यह सब सीखा जा सकता है। और इसलिए हम साथ-साथ 'मार्च' करेंगे, साथ-साथ लड़ेंगे और साथ-साथ भारतकी स्वाधीनताके उस महान् प्रयास-में विजय पायेंगे जो हमारे करोड़ों देशवासियोंको आगे बढ़नेको प्रेरित करता रहा है। मैं भारतके अन्य प्रान्तोंकी ओरसे इस उत्तरी प्रदेशके लिए एक मुक्त सराहना और मैत्रीपूर्ण शुभ-कामनाएँ लेकर आया हूँ। मेरे प्रति आपका स्नेह और आतिथ्य-भावना अपरिमित रही है। मैं अपने दिमाग़में बहुतसी जीती-जागती, धड़कती तस्वीरें लेकर वापस जा रहा हूँ और लाखों आवाजें मेरे कानोंमें गूँज रही हैं। ये आवाजें मुझे पीछेकी ओर खींच रही हैं। मैं, यद्यपि वापस जा रहा हूँ लेकिन मैं सीमान्तकी पुकार सुन रहा हूँ। मुझे आशा है कि शीघ्र ही मैं अपने उत्तरके इन साथियोंसे फिर अपना परिचय नया करूँगा।"

डा० राममनोहर लोहियाको उनके पत्र 'दि कांग्रेस सोशलिस्ट'के लिए सीमा-

प्रान्तके बारेमें अपनी धारणाएँ बतलाते हुए पं० जवाहरलाल नेहरूने कहा :

"सीमाप्रान्तके अपने इस अल्पकालीन दौरेमें मैं निजी तौरपर भारतकी एकताके सम्बन्धमें अधिक जागरूक था। उसका कारण एक व्यक्तिनिष्ठ स्थिति हो सकती है परन्तु मेरा विचार है कि उसका एक वस्तुनिष्ठ आधार भी था। मैं इस तथ्यके प्रति चेतनाशील था कि सीमाप्रान्तके लोग समग्र भारतकी एकता और स्वाधीनताकी दिशामें सोचते हैं। सम्भव है कि इस सम्बन्धमें उनके विचार पूरी तरहसे साफ़ न हों और वे किसी जिरहके सामने न टिक सकते हों तथापि उनके निकट वे एक ठोस और स्पष्ट तथ्य हैं। यहाँके लोग अपने सार्वजनिक व्याख्यानों और निजी बातचीत, दोनोंमें बराबर भारतकी स्वाधीनताकी बात कहते हैं—अपनी किसी स्थानीय स्वतन्त्रताकी नहीं, शायद, भारतकी एकता और स्वतन्त्रताकी यह भावना उनमें पिछले कुछ वर्षोंमें जागरूकताके साथ विकसित हुई हैं; असहयोग आन्दोलन या उसके बादसे। लेकिन मेरा खयाल है कि उसकी पृष्ठभूमि वहाँ बहुत पहलेसे मौजूद थी।

"यह सत्य है कि सीमाकी दूसरी ओरके निवासियों तथा भारत एवं अफ़गानिस्तानके बीचके अर्ध-स्वाधीन क्षेत्रकी सरहदी जनजातियोंके प्रति उनके मनमें एक गहरी आत्मीयता है। यहाँतक कि वे उन लोगोंके प्रति भी, जो मूल रूपसे अफ़गान हैं, भाषाकी समानता तथा सांस्कृतिक सम्बन्धोंके कारण आत्मीयताकी यह भावना रखते हैं परन्तु जहाँतक राजनीतिक सम्बन्धोंकी बात है वे निश्चित रूपसे भारतकी ओर ही देखते हैं। स्पष्ट है कि समान वलिदानों और समान हेतुके कारण ही सीमाप्रान्त तथा शेष भारतके बीचके राजनीतिक बन्धन सुदृढ़ हुए हैं।

"सीमाप्रान्तमें एक चीज़ बहुत स्पष्ट रूपसे दिखलाई देती है, वह उस वस्तुकी अनुपस्थिति है जिसको कि शेष भारतमें साम्प्रदायिक भावनाके नामसे जाना जाता है। यहाँतक कि धर्मके मामलेमें भी यद्यपि वे व्यापक दृष्टिसे असंदिग्ध रूपसे धार्मिक हैं; वे हठधर्मीसे बहुत दूर हैं। वे बिलकुल बच्चों जैसे लोग हैं और उनमें बच्चोंकी अच्छाइयाँ और बुराइयाँ दोनों हैं। किसीको छलना उनके लिए सरल कार्य नहीं है इसलिए उनके कामोंमें बहुत कुछ सादगी किन्तु विश्वस्तता रहती है जो कि औरोंका ध्यान आकर्षित करती है। उनकी प्रथाएँ भारतके अन्य भागोंमें प्रचलित प्रथाओंसे एक मनोरंजक विषमता रखती हैं; उदाहरणके लिए वहाँ नगरोंको छोड़कर पर्देका अधिक रिवाज नहीं है। आप शहरोंसे जितना दूर जायँगे, पर्दा उतना ही कम होता जायगा। लाल कुर्ती दलमें पठान महिलाओंकी एक

स्थायी सेना है। मुझको यह बतलाया गया कि कबाइली इलाकेमें पर्देका बिलकुल ही प्रचलन नहीं है।

"कबाइली इलाकेके सम्बन्धमें मेरी अधिक जानकारी नहीं है अतः उसके निवासियोंके बारेमें मैं विशेष नहीं बतला सकता परन्तु एक तथ्य प्रत्यक्ष है, वह यह कि स्वाधीनताके प्रति उनका प्रेम बहुत कुछ उग्रता लिये हुए है और अशमनीय है। केवल ऐसी कार्यवाही, जो उन्हींका अस्तित्व समाप्त कर दे, उनके हृदयसे इस प्रेमको निर्मूल कर सकती है। उनके समीप जानेका केवल एक ही मार्ग है और वह उनको पूर्ण स्वतन्त्रता देते हुए मित्रताका है। यदि विरोधको लेकर उनके पास पहुँचा जायगा तो वे एक प्रबल अवरोध सामने रख देंगे। जैसा कि वे अबतक करते आये हैं। परन्तु मित्रके प्रति उनके हृदयमें बड़ी कोमल भावनाएँ रहती हैं। जिसको वे अपना मित्र मान लेते हैं उसके लिए वे सब कुछ करनेको तैयार हो जाते हैं इसलिए यह एक निश्चित बात है कि एक मित्रतापूर्ण पहुँचके द्वारा ही उनसे सबसे अच्छे फल प्राप्त हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त एक बात अवश्य स्मरण रखनी चाहिए वह यह कि यह कबाइली क्षेत्र इलाकेकी एक संकीर्ण पट्टी है, जिसकी चौड़ाई पचाससे अस्सी मीलतक है और जिसमें बहुत विरल आबादी है। अतः (विरोधसे) प्रभावित संख्या भी अपेक्षाकृत कम ही रहती है। वे लोग भयानक ग़रीबीकी स्थितिमें हैं और उनकी समस्याएं मुख्य रूपसे आर्थिक हैं। आर्थिक दृष्टिसे उनको सुलझाना कोई कठिन बात नहीं होगी परन्तु यदि उनके ऊपर बलात् राजनीतिक आधिपत्य लाद दिया जायगा तो समस्याका निदान स्वतः असफल हो जायगा। वे जो कुछ भी करते हैं, वह वे अपनी इच्छाके साथ ही कर पाते हैं।

"कुछ दिनों पहले समाचारपत्रोंमें एक विवरण प्रकाशित हुआ था। उसमें वज़ीरी नेताने अपने एक भाषणमें वहाँ हुई अपहरणकी कुछ घटनाओंकी भर्त्सना की थी और उनके लिए कुछ शरारती लोगोंको दोषी ठहराया। उसने अपने भाषणमें कहा था कि जहाँतक उसकी अपनी बात है, वह इस प्रकारके अपराधोंका घोर विरोध करता है क्योंकि उनसे उसकी तथा उसके अनुयायियोंकी बदनामी होती है। वह दुष्कर्मियोंको अपनी शक्तिभर दण्ड देगा। वस्तुतः उसने राष्ट्रीय आन्दोलनके नेताओंको अपने यहाँ आनेका आमंत्रण दिया था और कहा था कि वे स्वयं यहाँ आकर सारी घटनाओंकी जाँच-पड़ताल करें। परिस्थितियाँ इस योग्य न थीं कि वहाँ पहुँचकर जाँच की जाती परन्तु मैं समझता हूँ कि अपहरणकी घटनाओंके सम्बन्धमें उसका यह वक्तव्य विश्वास करनेके योग्य

है। स्पष्ट है कि ये सारी घटनाएँ उसके हितमें नहीं हैं। वह एक बड़ी चीज़का घोर विरोधी है और वह है, अंग्रेजोंकी अग्रनीति। थोड़ेसे व्यक्तियोंके अपहरणसे इसमें कोई सहायता नहीं मिलती बल्कि इस प्रकारकी घटनाएँ लोगोंके मनपर उसके प्रतिकूल प्रभाव ही डालती हैं। हमको यह बात पूर्ण रूपसे स्मरण रखनी चाहिए कि कबाइली लोग मूर्ख नहीं हैं, यद्यपि वे सरल अवश्य हैं और उनमें पढ़े-लिखे लोग भी कम हैं। उनके नेताओंने उन्हें जो मार्ग-दर्शन दिया है उससे उनमें सुसंगठन और प्रतिकारकी एक शक्ति आ गयी है। निश्चय ही इस प्रकारके लोगोंमें घटनाओं और उनके परिणामोंको समझ सकनेकी क्षमता होनी चाहिए। मैं निश्चित रूपसे यह अनुभव कर रहा हूँ कि इस प्रकारके लोगोंके पास यदि सही रास्तेसे और मुक्त ढंगसे पहुँचनेका प्रयत्न किया जायगा तो स्वयं उनकी यह इच्छा होगी कि वे अपनी ओरसे आगे बढ़कर मिलें। स्वयं उनके लिए कोई सुखद या सरल बात नहीं है कि वे उन भयानक कठिनाइयोंको निरन्तर झेलते रहें जो कि आधुनिक युद्ध अपने हवाई जहाज़ों और बमोंके साथ उनको पहुँचाया करता है। वे भी इस स्थितिको दूर करनेका एक सम्मानपूर्ण मार्ग चाहते होंगे लेकिन जो तत्त्व उनके ऊपर अपना आधिपत्य लादनेकी चेष्टा करेगा, उसकी ओर वे मुड़कर देखेंगे भी नहीं। स्वतन्त्र भारतमें इनके साथ मैत्रीपूर्ण व्यवहार करनेमें कोई कठिनाई नहीं होगी। 'अग्रनीति', जिसके कारण इनके साथ समय-समयपर मामूली लड़ाइयाँ होती रहती हैं, अंग्रेजोंकी दृष्टिसे भी एक असफल नीति रही है। यह नीति इन जन-जातियोंपर अधिकार स्थापित करनेमें तो सफल हुई ही नहीं, उसने भारतपर भी एक बोझ डाल दिया है। कहा गया है कि पिछले दिनों वज़ीरिस्तानमें जो कार्यवाही हुई उसमें प्रतिदिन एक लाख रुपया खर्च हुआ। हवाई जहाज़से बम बरसानेके जो अभियान किये गये उनमें यद्यपि बहुत बड़ी क्षति और विनाश हुआ फिर भी ये कबाइली जनताका मनोबल न डिगा सके। उन लोगोंके प्रति चाहे अन्य जो भी नीति अपनायी जाय परन्तु यह तो निश्चित है कि अंग्रेज़ोंकी इस वर्तमान नीतिको छोड़ देना उचित होगा।

"मैं यह अवश्य कहूँगा कि सीमा-प्रान्तके लोगोंने मुझे बड़ी गहराईके साथ प्रभावित किया है। बड़ी-बड़ी भीड़ों और जन-प्रिय उत्साहका मैं अभ्यस्त हूँ। मुझे उन लोगोंकी अनुशासनकी भावना और उनकी शान्त गरिमाने अपनी ओर आकर्षित किया है। जो शब्द भी उन्होंने कहे वे मुझे शब्दाडम्बर मात्र नहीं जान पड़े। उनमें मुझे उनके हृदयोंकी आकांक्षा दर्पणकी भाँति प्रतिबिम्बित होती हुई प्रतीत हुई और ऐसा लगा कि उनके पीछे शक्तिके अजस्र स्रोत हैं। सीमान्तके ये

लोग समस्त भारतके लिए गर्वका एक कारण हैं। जब भारतको स्वाधीनता मिलेगी तब इन लोगोंको अनिवार्यतः वही सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त होगा जो कि इन्हें इस देशमें बहुत काल पहले प्राप्त था।

"यह भी हो सकता है कि हम सीमा-प्रान्तके इन लोगोंसे बहुत-सी बातें सीखें। ये लोग केवल बातें बनानेवाले नहीं हैं। इनका प्रत्येक निश्चय कार्य रूपमें परिणत हुआ करता है। इसका उदाहरण अहिंसाकी नीति है जिसको कि हमारे विगत स्वाधीनता-संघर्षमें इन लोगोंने बड़ी आस्थाके साथ ग्रहण किया है। अहिंसाकी इस नीतिने समस्त भारत देशको बड़ी गहराईके साथ प्रभावित किया है। जिन लोगोंने धीरे-धीरे इसकी सामर्थ्यको पहचाना है उन्होंने इसे पूरी तरहसे अपने जीवनमें उतार लिया है। बहुतसे लोगोंके लिए यह नीति निष्क्रियताका एक पर्याय है और कुछ लोगोंके लिए कायरताका एक बहाना। परन्तु पठानोंके ऊपर कोई यह आरोप नहीं लगा सकता कि वे युद्धमें कापुरुष होते हैं। यदि उन्होंने अहिंसाकी इस नीतिको ग्रहण किया है और इसपर व्यवहार किया है तो इसका श्रेय उनकी शक्तिको है, उनकी कायरताको नहीं। इस प्रकार उनका यह आदर्श हम सबके लिए बहुत अर्थ रखता है। वह हमारे अहिंसाके तकनीकके अधिक विकासमें सहायक होगा। इससे एक शांतिपूर्ण कार्यकी क्षमता बढ़ेगी और उसके कुछ नतीजे निकलेंगे।

"अन्य देशोंमें जन-प्रिय सामूहिक आन्दोलनोंका विकास इस तथ्यको बतलाता है कि वहाँ संघर्षमें एक शांतिमय तकनीकके सहारे ही विश्वासका निरंतर विकास हुआ है। यह तकलीफ फासिस्ट देशोंकी—आक्रमणकारी और क्षुब्धकारी हिंसाके सर्वथा विपरीत है। जहाँपर भी शांतिपूर्ण प्रक्रियापर बल दिया गया है फ्रांसका 'फ्रण्ट पोपुलाइरे' इसका एक उदाहरण है। स्पेनमें भी इस नीतिको बहुत सीमातक अपनाया गया था परन्तु वहाँ सैनिक, फासिस्ट हिंसाने एक संकटकी स्थितिको खड़ा कर दिया। अन्य देशोंमें क्या होगा, यह कह सकना कठिन है परन्तु ऐसा जान पड़ता है कि कोई भी स्थिति क्यों न हो, 'जनताके अग्र आन्दोलन' (पीपुल्स फ्रण्ट मूवमेण्ट) को बल देनेके लिए शांतिपूर्ण नीति ही सबसे उचित एवं श्रेयस्कर पथ है। शायद शक्तिके ऐसे शान्तिपूर्ण विकासके लिए भारतमें अन्य देशोंकी अपेक्षा अधिक अवसर और अधिक अनुकूल स्थितियाँ हैं। जैसा कि अन्य स्थानोंपर है वैसा ही यहाँ भी हिंसाका खतरा दूसरी ओरसे सम्भावित है। हमें इस बातको भी स्मरण रखना चाहिए कि भारतीय संघर्षकी पृष्ठ-भूमि यद्यपि प्रधान रूपसे शांतियुक्त है परन्तु वह कम शक्तिशालिनी नहीं है और अंतमें तो वह

स्वयंमें एक बल-प्रयोग है। अतः निष्क्रियताकी पुरानी ढंगकी शांतिवादी धारणा हमारी इस अहिंसापर लागू नहीं होती जो कि एक शक्तिमान् आन्दोलन है और जो निष्क्रियतासे काफ़ी दूर है।"

नेहरूजीने इस बातपर खेद व्यक्त किया कि उन्होंने सीमा-प्रान्तको देखा तो अवश्य परन्तु बहुत थोड़ा देखा। परन्तु यहाँ आनेकी उनकी उत्कंठा इतनी तीव्र थी कि वे इस अवसरको भी हाथसे जाने नहीं देना चाहते थे। अगले वर्षके प्रारम्भमें एक सप्ताहके लिए वे फिर सीमा-प्रान्त गये। जनताके उत्साहपूर्ण स्वागत के साथ उन्होंने २१ जनवरी, १९३८ के प्रातःकाल अपना सीमा-प्रान्तका दौरा प्रारम्भ किया। बहुत सवेरे ही उन्होंने तक्षशिलामें ट्रेन बदली। भोर होनेमें अभी काफ़ी देर थी। रास्तेके सभी स्टेशनोंपर उन्हें देखनेके लिए अपार भीड़ एकत्रित थी। लोग अपने हाथोंमें जलती हुई मशालें लिये हुए 'इन्किलाब ज़िन्दाबाद' का नारा लगा रहे थे। उन्हें लानेके लिए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ हैविलियन स्टेशन-पर पहुँच गये थे। इसके बाद वे सीमा-प्रान्तके पूरे दौरेमें नेहरूजीके साथ रहे। नेहरूजीने मोटरसे, ट्रकसे और तांगासे अपने इस दौरेको पूरा किया। तांगेको तो उनके मेज़बान खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने ही हांका।

पेशावर पहुँचनेसे पहले ही उन्होंने बड़ी तेजीके साथ अबोटाबाद, मानसेहरा, बफा, हरिपुर और मर्दान जिलेके कुछ गाँवोंका दौरा किया। वे कोहाट, बन्नू और डेरा इस्माईल खाँ भी गये और एक सप्ताहकी अल्प अवधिमें उन्होंने अलग-अलग स्थानोंकी लगभग तीस जन-सभाओंको सम्बोधित किया। उन्होंने समस्त राजनीतिक केन्द्रोंको देखा जहाँ कि खुदाई खिदमतगारोंने उनके सम्मानमें सड़कों-पर परेड की। सीमा-पारकी जन-जातियोंने भी उनका हार्दिक स्वागत किया। अफरीदियोंने कोहाट दर्रेके पासवाली पहाड़ियोंकी चोटियोंपर सारी रात आग जलायी, जिसकी ज्वालाएँ कई मीलसे दिखलाई देती थीं।

२६ जनवरीके सवेरे बन्नूमें एक प्रभावोत्पादक समारोहका आयोजन किया गया जिसमें कि कांग्रेस अध्यक्ष द्वारा तिरंगा झंडा लहराया गया। इसके बाद उन्होंने अपने एक छोटेसे भाषणमें झंडेका महत्त्व बतलाते हुए कहा कि इस राष्ट्रीय झंडेके पीछे लाखों देशवासियोंकी यातनाएं और बलिदान हैं। यह भारतकी स्वतं-त्रता और उसके विभिन्न समुदायोंकी एकताका प्रतीक है। वह भारतकी गरिमा और प्रतिष्ठाका भी द्योतक है। जो इसका अनादर करता है वह सम्पूर्ण राष्ट्रका असम्मान करता है। इसके बाद उन्होंने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँसे निवेदन किया कि वे पश्तूमें भारतकी स्वाधीनताकी शपथको पढ़ें। उस सभाके हज़ारों व्यक्तियों-

ने, नेहरूजी सहित खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके पीछे इस शपथको गम्भीरतापूर्वक शब्दशः दुहराया।

"हमारा यह विश्वास है कि अन्य लोगोंकी भाँति भारतीय जनताका भी यह अविच्छेद्य अधिकार है कि वह स्वाधीनताको प्राप्त करे और उसके साथ अपने परिश्रमके फल और अपने जीवनकी आवश्यकताओंको प्राप्त करे ताकि उसे अपने विकासके समस्त अवसर प्राप्त हो सकें। हमारा यह भी विश्वास है कि यदि कोई शासन जनताको अपने अधिकारोंसे वंचित करता है और उसका शोषण करता है तो उस जनताको स्वतः यह अधिकार प्राप्त हो जाता है कि वह उसे बदल दे या खत्म कर दे। भारतमें ब्रिटिश शासनने न केवल भारतीय जनताको उसकी स्वाधीनतासे वंचित रखा है अपितु वह स्वयं जनताके शोषणपर निर्भर रहा है और उसने भारतको आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और आत्मिक दृष्टियोंसे बर्बाद किया है, इसलिए हमारा यह विश्वास है कि भारतको ब्रिटेनसे अपने सम्बन्ध विच्छेद कर लेना चाहिए और पूर्ण स्वराज्य या मुकम्मिल आज़ादीको पाना चाहिए। हम यह स्वीकार करते हैं कि हमारी स्वतंत्रताका मार्ग हिंसाका नहीं है। भारतने शान्तिपूर्ण एवं वैध उपायोंसे ही अपनी शक्ति और अपना आत्म-विश्वास अर्जित किया है और इन्हींके साथ वह अपने स्वाधीनताके लम्बे मार्गपर आगे बढ़ा है तथा इनपर दृढ़ रहकर ही वह अपनी स्वतंत्रताको प्राप्त करेगा।

"हम पुनः भारतकी स्वाधीनताके लिए शपथ ग्रहण करते हैं और गम्भीरता-के साथ यह निश्चय करते हैं कि जबतक पूर्ण स्वराज्य प्राप्त नहीं हो जाता तब-तक हम अहिंसाके साथ अपना यह संघर्ष चलाते रहेंगे।"

खान् अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने कहा कि कांग्रेस भारतीय जनताके सभी वर्गोंका प्रतिनिधित्व करती है और लाखों भूखोंकी करुण पुकारको वाणी देती है। मात्र कांग्रेस ही हिन्दू, मुसलमान और सिख सबको स्वतंत्रताका सन्देह देती है।

बीस हज़ार श्रोताओंकी एक अन्य सभामें, जिसमें कि वज़ीरी लोग भी बड़ी संख्यामें उपस्थित थे, नेहरूजीने इस बातपर बल देते हुए कहा कि जनता आनेवाले संघर्षके लिए तैयार रहे। स्वाधीनताकी लड़ाईमें पिछले दिनों सीमा-प्रान्तके लोगों ने जो शानदार भूमिका निभायी थी, उसके लिए नेहरूजीने उसकी सराहना की। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा :

"इस प्रदेशने एक महान् पुरुष उत्पन्न किया है, जिसके ऊपर समस्त भारत देश गर्व करता है। उसने यहाँका सारा वातावरण बदलकर सीमा-प्रान्तकी जनताको दलदलसे बाहर निकाला है। खान साहब अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने खुदाई

खिदमतगारोंकी एक विशाल सेना तैयार की है और एक शस्त्रप्रिय जातिको स्वाधीनताकी एक शौर्यपूर्ण अहिंसात्मक लड़ाईके लिए तैयार एवं गतिशील किया है। जो कुछ उन्होंने किया, वह अपने-आपमें एक चमत्कार है। अहिंसाका शस्त्र एक बलशाली शस्त्र है जिसको केवल वीर और साहसी पुरुष ही चला सकता है। हमने बड़े साहसके साथ ब्रिटिश सत्ताको एक चुनौती दी है। अहिंसाके द्वारा ही भारतकी मुर्झायी हुई, शिथिल भावनाने एक जीवन-शक्तिको पाया है। केवल शक्ति ही शक्तिके मुकाबलेमें खड़ी हो सकती है। मात्र हवाई बमबारी ही हवाई बमबारीका सामना कर सकती है। तीर, कमान यहाँतक कि बन्दूकसे भी यह सम्भव नहीं है। ये हथियार अब पुराने पड़ चुके हैं और व्यर्थ हो गये हैं। भारत ने इसीलिए एक शक्तिशाली शत्रुका सामना करनेके लिए अहिंसाके नये शस्त्रको गढ़ा है और ब्रिटिश साम्राज्यको समूल हिला दिया है।"

हिन्दू तथा सिख संस्थाओं द्वारा नेहरूजीको जो अभिनन्दनपत्र भेंट किये गये थे, उनमें व्यक्त की गयी कतिपय आशंकाओंका उल्लेख करते हुए नेहरूजीने कहा कि उन लोगोंका अति अल्पसंख्यक होनेका तर्क उचित और टिक सकने-वाला नहीं है। उनको चाहिए कि वे इस प्रान्तके निवासियोंके सुख और दुःखमें समान साझीदार बनकर रहें और आपसी विश्वासको जाग्रत करें। जितनी सुरक्षा उन्हें ये आत्मीयताके बंधन दे सकेंगे, उतनी अन्य कोई न दे सकेगा। स्वाधीनता के हेतु भारतीय नारियोंके वीरतापूर्ण कार्योंकी याद दिलाते हुए उन्होंने सभामें उपस्थित महिलाओंसे यह अपील की कि वे आत्म-रक्षाके लिए किसी दूसरेपर निर्भर न हों। उनको अपने मनमें यह विश्वास होना चाहिए कि उनमें साहसकी कमी नहीं है। अपनी पुत्री इंदिराका उल्लेख करते हुए उन्होंने भावनाके साथ कहा कि उन्होंने उसे पढ़नेके लिए हज़ारों मील दूर भेजा है, यद्यपि वह अभी एक छोटी बालिका है। जब वह सात वर्षकी थी तभीसे वे उसे सब जगह अकेला भेजते हैं ताकि उसमें आत्म-विश्वास बढ़े और आगे चलकर वह भारतकी स्वा-धीनताकी एक वीर सैनिक बन सके। उन्होंने कहा कि वह देशके इस भागको भी देखने आयेगी और जैसी कि उनको आशा है, वह निश्चित रूपसे आयेगी तो वे उसे वज़ीरिस्तानमें अकेले जानेके लिए कहेंगे क्योंकि वे वज़ीरियोंपर और इंदिरा-पर विश्वास करते हैं।

उन्होंने अंग्रेजोंकी 'अग्र नीति' (फारवर्ड पॉलिसी) की तीव्र आलोचना करते हुए श्रोताओंसे प्रश्न किया : 'क्या आप यह सोचते हैं कि एक-दो अथवा कुछ हिन्दू स्त्रियोंका अपहरण हो जानेके कारण अंग्रेजोंने वज़ीरिस्तानपर आक्रमण

किया ? ब्रिटिश सरकारका यह तौरा-तरीक़ा नहीं है। उन स्त्रियोंको वापस लानेके और भी बहुतसे रास्ते हो सकते थे परन्तु अंग्रेजोंके हित इससे बिलकुल भिन्न हैं। वे साम्राज्यवादी व्यवस्थाका विस्तार करनेके लिए, कबाइलियोंके इलाकेकी सीमाको पीछे खदेड़ देनेके लिए और अपनी शक्तिको बढ़ानेके लिए सीमाके उस पारके इलाकेके ऊपर हमले करते रहते हैं। ये मौक़े तो केवल एक बहाना मात्र हैं, आक्रमणके इन कार्योंपर हमारे देशका जो लाखों रुपया व्यय होता है, उसकी कोई तर्क-संगति नहीं है।"

नेहरूजीने कहा कि कांग्रेसकी नीति सीमा-पारके निवासियों तथा पड़ोसी देशोंके साथ बन्धुत्व स्थापित करनेकी है। उन्होंने इसे स्पष्ट करते हुए कहा, 'उन लोगोंको हमपर विश्वास करना चाहिए। जो भी अवांछित तथा अनिष्टकारी घटनाएँ होंगी, उन्हें हम रोकेंगे।'

इपीके फ़क़ीरने उनको जो पत्र लिखा था, उसका उल्लेख करते हुए नेहरू-जीने कहा कि कुछ स्वार्थी तत्त्वोंने अपने हित-साधनके लिए वज़ीरियोंके ऊपर सामूहिक रूपसे कतिपय अभियोग लगाये हैं, जिनका कि इपीके फ़क़ीर और प्रधान वज़ीरी सरदारने तीव्र प्रतिवाद किया है। नेहरूजीने बतलाया कि उनको यह पत्र फारसीमें, कांग्रेस-अध्यक्षकी हैसियतसे लिखा गया है। उसमें उनको तथा कांग्रेसके अन्य नेताओंको इस बातके लिए आमंत्रित किया गया है कि वे उनके इलाकेमें जायें और उनके वक्तव्यकी सचाईका परीक्षण करें। इस पत्रमें उन्होंने अपना यह दृढ़ निश्चय भी व्यक्त किया है कि वे अपनी सत्यनिष्ठा और स्वाधीनता को पुनः प्राप्त करनेके लिए अपने रक्तका अंतिम बिन्दुतक बहा देंगे। 'स्वतंत्रताका एक अल्प क्षण दासताके हज़ारों वर्षोंसे कहीं श्रेष्ठ है।' फ़क़ीरने स्पष्ट रूपसे आक्र-मणकारियोंकी भर्त्सना करते हुए कहा है :

"यह कार्य इसलाम और उनके कबीलेके पवित्र नामपर एक कलंक है।" नेहरूजीने कहा कि मैं उनके वक्तव्यकी सच्चाई पर सन्देह नहीं करता। उन्होंने इस बातपर बल दिया कि पड़ोसियोंके साथ मित्रताके सम्बन्ध केवल भारतकी सुरक्षाके लिए ही नहीं अपितु उसके राजनीतिक उत्थानके लिए भी अनिवार्य हैं। उन लोगोंको छोड़ भी दिया जाय तो कांग्रेस और खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ ही वज़ीरियोंके आक्रमणकी समस्याको सुलझानेमें समर्थ हैं।

नेहरूजी जहाँ भी गये, वहाँ उनके प्रति अत्यंत सम्मान प्रदर्शित किया गया। एक जगह ३०० कबाइली रायफलधारी उन्हें घेरकर खड़े हो गये। एक मलिक-ने सम्मान प्रकट करनेके लिए उन्हें एक बकरी भेंट की। एक अन्य मलिकने

अपने पुत्रको नेहरूजीके पैरोंमें लिटाकर उनको आदर दिया। जिस समय नेहरूजी कोहाट गये उस समय अफरीदियोंने उनके रास्तेमें कीमती कालीन बिछाकर उनके प्रति अपनी सम्मान-भावनाको प्रदर्शित किया। जहाँ भी नेहरूजी गये, हज़ारों लोग गाँवोंसे आकर सड़कके किनारे खड़े हो गये।

२६ जनवरीकी संध्याको डेरा इस्माईल खाँकी अपनी एक सभामें नेहरूजीने कहा कि उन्होंने अपने सात दिनके इस दौरेमें इस युगके कुछ ऐसे दृश्य देखे हैं जो उनके लिए अविस्मरणीय रहेंगे परन्तु बहुत बार उनका मस्तिष्क अतीत युगोंमें भ्रमण करने भी चला गया है। सरहदका यह इलाका भारतके दीर्घ इतिहासकी स्मृतियोंसे सम्पन्न है। उत्तर-पश्चिमके इन दर्रोंसे होकर हज़ारों साल पहले एकके बाद दूसरा काफिला यहाँ आता रहा है। इस देशमें अनेक अजनबी और जरूरतमन्द जातियाँ आयी हैं और वे भारतमें समाहित हो गयी हैं। पुरातन कालमें आर्य इस देशमें आये और उन्होंने इसके ऊपर अपनी एक बड़ी गहरी छाप छोड़ी। फिर सीथियन, हूण और तुर्क भी इस देशमें आये और उनमेंसे बहुतसे यहीं बस गये। आज भी हमारी राजपूत जातियोंमें काफी सीथियन रक्त है। उन्होंने कहा कि अभी पिछले दिन उन्होंने सिन्धु नदको लगभग उसी जगह पार किया जहाँ कि उसे सिकन्दरने पार किया था। उस समय उनके मानस-चक्षुओंके आगे एक चित्र खड़ा हो गया और उन्होंने मकदूनियाकी सेनाको भारतके उपजाऊ मैदानोंमें प्रवेश करते हुए देखा। कालान्तरमें सम्राट् अशोकने सीमा-प्रान्तके इस समूचे क्षेत्रमें अपने अमिट स्मारक स्थापित किये। कनिष्कके शासन-कालमें पेशावर एक शक्तिशाली साम्राज्यकी राजधानी बना। यह साम्राज्य विंध्याचलसे लेकर मध्य-एशियातक फैला हुआ था। वह एक बौद्ध साम्राज्य था। उसके पश्चात् पश्चिम और सुदूर पूर्वके देशोंसे अनेक धर्मयात्री और अध्येता ज्ञानकी खोजमें पेशावर आये। पेशावर उन दिनों तीन महान् संस्कृतियों—भारतीय, चीनी और ग्रीको-रोमन की मिलन-स्थली था। बादमें सहसा अरबोंका पुनः अभ्युत्थान हुआ। विजयकी एक भयानक लहर चीनसे स्पेनतक वेगसे दौड़ गयी। इन अरब लोगोंने भारतके द्वारोंको खटखटाया अवश्य परन्तु उसके भीतर प्रवेश नहीं किया। हमें इस बातको स्मरण रखना चाहिए कि शताब्दियोंतक इस्लाम हमारा पड़ोसी रहा है; एक मित्र पड़ोसी जिससे हमारा कभी संघर्ष नहीं हुआ, जिसने हमपर कभी आक्रमण नहीं किया। मध्य-एशियाके विजेता जब भारतमें आक्रामकके रूपमें आये तब संघर्षका प्रारम्भ हुआ। यह संघर्ष राजनीतिक था, धार्मिक नहीं, यद्यपि शोषणके लिए उसे एक धार्मिक संघर्षका नाम दिया गया।

ग़जनीका महमूद एक निर्दय विजेताके रूपमें यहाँ आया और उसने भारतको लूटा, परन्तु इस बातको कितने लोग जानते हैं कि मध्य-एशियामें उसकी सबसे अच्छी सेनाओंमें भारतीयों और हिन्दुओंका एक सैन्य-दल भी था, जिसके सेनापतिका नाम तिलक था ? सीमान्तके इन्हीं क्षेत्रोंके उस पार भारतने सुदूर पूर्वतक भारतीय धर्म और कलाके सन्देश भेजे थे और ज्ञानकी खोजमें अनेक धर्म-यात्रियोंने भारत-की लम्बी यात्राएँ की थीं। नेहरूजीने कहा कि जब वे सीमा-प्रान्तके उस पारके क्षेत्रमें घूम रहे थे तो यह सब और ऐसी ही बहुतसी तस्वीरें उनके आगे साकार हो गयीं।

गांधीजीकी पहली यात्रा

१९३८

फरवरी सन् १९३८ के दूसरे सप्ताहमें श्री सुभाष बोसकी अध्यक्षतामें हरिपुरा-में कांग्रेसका वार्षिक अधिवेशन हुआ। इस अधिवेशनमें संयुक्त-प्रान्त और बिहार-के मंत्रिमण्डलोंकी एक संकट-स्थिति कांग्रेसके सम्मुख आकस्मिक रूपसे आ खड़ी हुई। इन प्रदेशोंके 'प्रीमियरों' (प्रधान मंत्रियों) ने इस बातपर बल दिया कि उनको समस्त राजनीतिक बन्दियोंको सामूहिक रूपसे मुक्त करनेका अधिकार प्राप्त है। गवर्नरोंने गवर्नर-जनरलके सहारे इसपर आपत्ति की और दोनों मंत्रिमंडलोंने त्यागपत्र दे दिया। स्वास्थ्य ठीक न होनेसे तथा अन्य कारणोंसे कई मासतक सार्वजनिक रूपसे मौन रहनेके पश्चात् गांधीजीने मंत्रिमंडलोंकी संकट-स्थितिपर एक वक्तव्य जारी किया : "गवर्नर-जनरलके कार्यने मुझे भ्रममें डाल दिया है और मेरे मनमें यह सन्देह जगा दिया है कि क्या बन्दियोंकी रिहाईका विवाद-ग्रस्त प्रस्ताव ही अंतिम सहारा शेष रह गया था अथवा ब्रिटिश अधिकारी सामा-न्यतः कांग्रेस-मंत्रियोंसे ऊब गये थे ? मेरी बहुत इच्छा है, यदि सरकारके लिए यह सम्भव हो सके कि वह इस मामलेमें अपने क़दमोंको हटा ले और एक ऐसी संकट-स्थितिको टाल दे, जिसके परिणामोंको कोई पहलेसे नहीं बतला सकता।"

शासनने कांग्रेसके अनुशासनके सामने संकट-स्थितिको टाल दिया। ब्रिटिश अधिकारी निर्माणकी दिशामें मंत्रिमंडलोंकी प्रगति और उनकी बढ़ती हुई लोक-प्रियताको खतरेका एक संकेत समझकर सावधान हो गये थे। पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तमें डा० खान साहबके मंत्रिमंडलने प्रारम्भिक शिक्षाके लिए पश्तूको शिक्षण-का अनिवार्य माध्यम बना दिया था। उसने किसानोंको राहतें दी थीं और स्थानीय निकायोंसे मनोनीत करनेकी पद्धतिको समाप्त कर दिया था। उसने यह घोषणा की थी कि राजकीय कार्यालयोंमें समस्त भर्तियाँ, चाहे वे मन्त्रालय सम्बन्धी हों अथवा कार्यकारी, खुली प्रतियोगिताके द्वारा होंगी। उसने राजनीतिक दलोंके ऊपरसे प्रतिबन्ध हटा दिया और सीमाप्रान्त अपराध विनियम और उसके साथ ही भार-तीय दंड संहिताकी धारा १२४-ए को लागू नहीं रखा। इस मंत्रिमंडलने समस्त राजनीतिक बन्दियोंको रिहा कर दिया और जन-सामान्यके हितके लिए अनेक सुधार किये। इस प्रकार अब बहुत सीमातक सीमा-प्रान्त राजनीतिक भारतका ही एक

अङ्ग लगने लगा।

गांधीजीका विचार अप्रैल मासमें सीमा-प्रान्त जानेका था परन्तु उड़ीसा और बङ्गालके पूर्वाधिकारने उनकी इस योजनाको बदल दिया। स्वयं सीमाप्रांतमें न जा सकनेपर उन्होंने अपने सचिव श्री महादेव देसाईको थोड़े दिनोंके लिए खान बन्धुओंके पास भेजा। ३० अप्रैल १९३८ के 'हरिजन' में महादेवभाईने यह लिखा :

"डा० खान साहब मुझको अपने घर ले गये। उस दिन उनके भाई खान अब्दुल ग़फ्फ़ार वहीं थे लेकिन उस समय वे उत्मंज़ईमें नहीं थे। किसीने हमसे कहा, 'बादशाह खान मुश्किलसे ही घरपर मिलते हैं। वे एक गाँवसे दूसरे गाँव घूमा करते हैं।' थोड़ी-सी कठिनाईके बाद हम लोगोंने उनको पड़ोसके एक गाँव-में खोज लिया। वे अपनी तीसरे पहरकी नमाज़ पढ़नेके लिए गये थे। उनके मस्जिदसे नमाज़ पढ़कर लौटनेतक हमसे प्रतीक्षा करनेको कहा गया। उनके घर-पर उनके बहुत मित्र और सम्बन्धी एकत्रित थे लेकिन उनमेंसे कोई नमाज़ पढ़ने नहीं गया था लेकिन खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँ, जो अपनी रोज़की पाँच नमाज़ोंमेंसे एक भी नहीं छोड़ते, मस्जिद गये थे। वहाँके लोगोंमें सन् १९२० से ही वे 'बाद-शाह खान' के नामसे प्रसिद्ध हैं। वहाँकी जनता उनको बादशाह जैसा आदर भी देती है।

"मैंने यह सुन लिया था कि इन दिनों उनका उपवास चल रहा है अतः मैंने उनसे निवेदन किया कि वे मुझे पूरी बात बतलानेकी कृपा करें।" वे बोले, "एक गाँवमें एक मौत हो गयी थी। मृतकके घरवालों तथा सम्बन्धियोंका अति आग्रह था कि शवको कब्रिस्तान ले जानेमें मैं भी 'जमातकी नमाज़' में शरीक होऊँ। मुझे दूसरे गाँवमें जानेकी जल्दी थी इसलिए मैंने यह सुझाव दिया कि जो भी मस्जिद सबसे निकट हो उसीमें नमाज़ पढ़ ली जाय। लेकिन उस गाँवके मौल-वियोंने इस बातपर बल दिया कि यह नमाज़ 'मकबरे' में ही पढ़नी चाहिए। मकबरा उस गांवसे कुछ दूर पड़ता था। मैंने मौलवियोंसे तर्क किया कि मैं तो मक्का और मदीना हो आया हूं। वहाँ तो यह नमाज़ मस्जिदमें पढ़ ली जाती है। मौलवी लोग इस बातपर बराबर ज़ोर दे रहे थे कि यह रीति 'शरीयत' के विरुद्ध है और मुझको इसका ज्ञान नहीं है। खैर, हम लोग झुक गये। जब हम लोग नमाज़ पढ़कर गाँवमें लौट रहे थे तब मौलवी लोगोंने मुझे बुरा-भला कहना शुरू कर दिया। गाँवके लोगोंको इसपर रोष आ गया और उन्होंने मौलवियों-को मारना शुरू कर दिया। कुछ खुदाई खिदमतगारोंने, जो घटना-स्थलपर मौजूद

थे, गाँववालोंको रोका और बीचमें पड़कर मौलवियोंको उनसे छुटकारा दिलाया। यह एक सराहनीय कार्य था परन्तु इसके पश्चात् उन्होंने जो कुछ किया, वह कार्य उनका नहीं था। मौलवियोंके पास चाकू और छुरियाँ थीं। खुदाई खिदमतगार उन लोगोंसे उनको छीन लेना चाहते थे ताकि वे गाँववालोंपर आक्रमण न कर सकें। मैं उन लोगोंसे कुछ दूर आगे चल रहा था। जैसे ही मुझे लगा कि पीछे कुछ लड़ाई-झगड़ा हो रहा है, वैसे ही मैं तेज चलकर उनके पास पहुँच गया। वहाँ जाकर मैंने देखा कि खुदाई खिदमतगार उन हथियारोंसे कुश्तियाँ लड़ रहे हैं। मैंने इस कामको अनुचित ठहराते हुए उनसे कहा कि चूँकि मैं आप लोगोंको इसकी सज़ा नहीं दे सकता, मैं अपने-आपको इसका दण्ड अवश्य दूँगा। यह कहकर मैंने अपने तीन दिनके उपवासकी घोषणा कर दी। इसका बिजली जैसा असर हुआ। हर एकको इससे धक्का लगा। वे आँखोंमें आँसू भरे हुए मेरे पास आये और मुझसे उपवास त्याग देनेके लिए आग्रह करने लगे। उन्होंने कहा कि इस कार्यके लिए मैं उन्हें जो भी चाहूँ, दण्ड दूँ। मैंने उन्हें समझाया कि अब इन सब बातोंका कोई लाभ नहीं है। वे सब एक जगह एकत्रित होकर यह निश्चय करें कि वे फिर कभी ऐसा नहीं करेंगे। इसके बाद मैं पेशावर चल दिया।"

"उनका यह उपवास मुसलमानोंके 'रोजा' सरीखा नहीं बल्कि पूर्ण उपवास था जिसमें केवल जल और नमक ग्रहण किया जा सकता है। पठान लोग, जो दोषोंके प्रतितक क्षमाशील होते हैं और जो किसी अतिथिको अपने घरसे बिना कुछ खाये जाने नहीं देते, खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके इस उपवासको सहन न कर सके। उन्होंने स्थान-स्थानपर अपनी बैठकें कीं और खान साहबको आश्वासन देनेके लिए यह निश्चय किया कि इस प्रकारकी भूल फिर कभी नहीं दुहरायी जायगी।

"मैं खान साहबके साथ उनके तांगेमें पूरबकी ओरके गाँवोंको देखने चला। हमारा रास्ता दूरतक फैले हुए उन हरियाले खेतोंमेंसे गुजर रहा था, जिनमें गेहूँ और जौ मुस्करा रहे थे। बीच-बीचमें सुहावने बाग़-बगीचे भी मिलते जा रहे थे। एक-दो मील जानेके बाद खान साहब अपना तांगा किसी गाँवमें ले जाते थे। वहाँके किसी खानसे वे मेरा परिचय कराते और उसका कुछ पूर्व इतिहास बतलाते और फिर दूसरे गाँवकी ओर चल देते। मैंने उन्हें मिट्टीकी सादी झोपड़ियोंमें रहते देखा। उनके घरोंकी दीवारें और छत दोनों मिट्टीकी थीं। उनमेंसे बहुतसे लोगोंके पास रिवाल्वर थे और उनकी पेटियोंमें कारतूस भरे हुए थे।

खान साहबने मुझको बतलाया कि कतिपय अभिजात परिवारोंको छोड़कर पठान स्त्रियां पर्दा नहीं करतीं, लेकिन मैंने किसी महिलाका चेहरा नहीं देखा। इन गांवोंके लोगोंमें मैंने प्रजातन्त्रकी एक आश्चर्यजनक भावना देखी। घरका छोटेसे-छोटा नौकर और खेतका मामूलीसे मामूली मजदूर आकर आपको सलाम करेगा, फिर आपसे हाथ मिलानेके लिए अपना हाथ आगे बढ़ायेगा। गाँवोंका प्रत्येक लड़का या लड़की खान साहबको अभिवादन किया करता है और वे भी उसे उसका उत्तर देते हैं। वे लोग कहते हैं, 'खैर अली !' और खान साहब इसका उत्तर देते हैं, 'मे मश, मे मश'। पहले अभिवादनका अर्थ होता है कि 'आप कैसे हैं ?' इसके उत्तरमें जो अभिवादन किया जाता है, 'मुझे आशा है कि आप थके हुए नहीं होंगे।' परन्तु इसका अभिप्राय यह होता है, 'मुझे आशा है कि आप चिन्ताओं से मुक्त होंगे।'

'स्वच्छता इन गाँवोंकी एक विशेषता नहीं कही जा सकती। वास्तवमें पशु और मुर्गीखाने उनकी हालतको सुधरने नहीं देते। शामके समय हम लोग खेतोंमें होकर घूमने गये। हम पगडंडियों और नहरकी पटरियोंके ऊपर टहलते हुए जा रहे थे। 'यह जमीन कैसी मुस्कराती हुई है ?' खान साहबने कहा, 'हमारे यहाँ बड़ी अच्छी फसलें पैदा होती हैं। यहाँ फलोंकी बहुतायत है। वे फल, जिनकी आप अपने यहां बहुत कद्र करते हैं, यहाँ काफी मात्रामें उत्पन्न होते हैं और बर्बाद जाते हैं। यहां एक प्रकारकी घास होती है। उसमें यह गुण होता है कि उसे खाकर गायोंका दूध बढ़ जाता है। हमारे यहाँकी गायें रोज़ चौदह सेरतक दूध देती हैं। इतना सब होनेपर भी हमारे सूबेमें बेहद बेकारी है। लोगोंको काफ़ी खाना नहीं मिलता। फिर भी यहाँके लोग अतिथि-सत्कारमें हद कर देते हैं। अतिथिके सत्कारमें कितना ही पैसा खर्च हो जाय, हम पठान लोग उसकी चिन्ता नहीं करते परन्तु यदि आप इन लोगोंसे कुछ नक़द मांगेंगे तो यह उसे नहीं देंगे। इनका स्वभाव ही ऐसा हो गया है कि इनके लिए नक़द रुपया निकालना कठिन है।'

"सब जगह मुझसे यह प्रश्न पूछा गया कि गांधीजी कब आ रहे हैं। एक जगह मैंने उनके रिवाल्वरपर ताना देते हुए कहा, 'इसे लेकर ही आप गांधीजी और खान साहबसे बातें करेंगे ? इसके साथ ही आप उनके साथ चलेंगे ?' उन्होंने उत्तर दिया 'नहीं, जब हम बादशाह खानके साथ जाते हैं तब हमें यह ले जानेकी जरूरत ही नहीं होती।' 'लेकिन अकेलेमें यह क्यों जरूरी होता है ?' मैंने पूछा। इसका उन्होंने उत्तर दिया : 'यहाँ आपसके झगड़ोंमें खून-खराबियाँ होती

हैं। कोई यह नहीं कह सकता कि उसके ऊपर कब हमला हो जायगा। लेकिन बादशाह खानको तो कोई छू भी नहीं सकता।'

"वहाँ दो गाँवोंमें मृत्युएँ हो गयीं। हम लोग वहाँ गये। एक जगह जाकर हम लोग चुपचाप बैठ गये। पहले खान साहबने मरे हुए व्यक्तिके लिए थोड़ेसे शब्दोंमें प्रार्थना की। फिर वहाँ मातमके लिए आये हुए सभी लोगोंने उसे दुहराया और हमारी उस जगहकी मातमपुर्सी पूरी हो गयी। दूसरी जगह काफ़ी लोग एकत्रित थे। वहाँ प्रार्थनाके लिए दो, तीन, चार बार पुकार की गयी। प्रार्थना-(नमाज़) के बाद मौन छा गया, जिसे कि खान साहबने भंग किया। वे हस्त-शिल्पको पुनः जीवन देनेके सम्बन्धमें बोले। उन्होंने कहा कि गाँवके लोगोंको उसीसे संतुष्ट होना चाहिए जिसको उनका गाँव उन्हें उत्पादन करके दे सके।

"मैंने देखा कि वहाँ बहुतसे पठान खादीके वस्त्र पहने हैं। वे खुदाई खिदमतगार थे। जब वे अपनी ड्यूटीपर होते हैं तब वे लाल कमीज़ पहनते हैं। शेष समय वे खान साहब सरीखा राख जैसे कुछ भूरे रंगका कुरता और पाजामा पहने रहते हैं। यह फैशन खान साहबने चलाया है और यहाँ लोकप्रिय हो गया है। वहाँ आये हुए लोगोंकी भीड़ छँटनेसे पहले ही मेजबानोंमेंसे एक व्यक्तिने वहाँ आकर उन लोगोंसे भोजनके लिए रुकनेका आग्रह किया। मैंने खान साहबसे पूछा कि क्या यहाँ मृत्युके पश्चात् जाति-भोज देनेका रिवाज है ? उन्होंने कहा, 'ऐसा तो नहीं है लेकिन जिस घरमें मृत्यु होती है उसके लोगोंसे यह अपेक्षा नहीं की जाती कि वे खाना बनायेंगे अतः उस परिवारका कोई सम्बन्धी इस कार्यको अपने ऊपर ले लेता है। वही शोकाकुल परिवारके सदस्योंको तथा उन अतिथियोंको खाना खिलाता है जो दुःखी परिवारसे सहानुभूति प्रकट करने आते हैं। वे लोग परिवारवालोंके साथ भोजनका कौर तोड़ते हैं। यह रीति बहुत दिनोंसे चलती आ रही है। मैंने इसका दृढ़ विरोध किया और अब यह तेज़ीसे खत्म भी होती जा रही है। लेकिन मौलवी लोगोंका हित इसीमें है कि सब तरहकी प्रथाएँ और मिथ्या विश्वास बने रहें। इसलिए वे उनको सहारा देते हैं। वे मुझे क़समें देते हैं क्योंकि मैं ही इन रूढ़ियोंको समाप्त कर देनेकी दिशामें कार्य कर रहा हूँ।

खान साहबने मुझे थोड़ेसे दर्शनीय स्थल दिखलानेकी कृपा भी की। मरदानकी सीमासे सटी हुई एक पहाड़ी है जिसपर बिखरे हुए बौद्ध भग्नांश ऐसे लगते हैं मानों वे उसमें जड़ दिये गये हैं। पहाड़ीकी चढ़ाई लगभग सौ फुट है और बिलकुल आसान है। वहाँके प्राचीन भवन तो प्रायः भग्न हो चुके हैं परन्तु पत्थरकी चौकोर और आयताकार पतली पट्टियोंसे बनी हुई दीवारें अबतक

विद्यमान हैं। उन्हें देखकर आश्चर्य होता है कि इतनी सदियोंके बाद भी वे अब-तक कैसे बनी हुई हैं। इन भित्तियोंपर उत्कीर्ण की गयी सूक्ष्म नक्काशी अब भी देखी जा सकती है। सारे स्थानको देखकर मुझे ऐसा लगा कि वास्तवमें कभी यहाँ एक विशाल भवन रहा होगा जिसमें एक बड़ा सभा-मंडप या प्रार्थना-गृह रहा होगा। उसकी देख-रेख करनेवाला बूढ़ा पठान मुझको नीचेकी एक भूमिगत कोठरीमें ले गया और उसे दिखलाकर बोला, 'यह कालकोठरी है जहाँ कि कैदियोंको रखा जाता था।' 'यह व्यर्थकी बात है।' खान साहबने कहा, 'मुझे निश्चय है कि यह कालकोठरी नहीं है। सम्भव है कि गर्मियोंमें या अति शीत कालमें भिक्षु लोग यहाँ आकर ध्यान-चिन्तन करते रहे हों। पूरे स्थानको देखकर मुझे तो यह अनुमान होता है कि यह किसी अन्य स्थानकी अपेक्षा ईश्वरका घर; एक देवालय होगा।' 'क्या यह भी एक संयोग नहीं है कि आप उसी स्थानपर अहिंसा की शिक्षा दे रहे हैं जहाँ कि सदियों पहले बौद्ध भिक्षुओं और धर्म-यात्रियों-के द्वारा इसी पुण्य सन्देशका प्रसार किया गया था?' मैंने कहा। खान साहबने मेरी बात की कद्र की और वे उसे सुनकर मुस्कराये।

दूसरी जगह, जहाँ कि खान साहब मुझको ले गये, खैबर दर्रा था। जैसे ही हमारी कार वेगसे उस संकीर्ण सड़कके साथ, जो दो पर्वत-श्रेणियोंके मध्यमेंसे गुज़रती है, अपने रास्ते आगे बढ़ने लगी, खान साहब गम्भीर विचारमें डूब गये। इस फ़ौज़ी सड़क और इन सैनिक छावनियों तथा किलोंपर अफ़गान सीमातक पानीकी तरह पैसा बहाया गया है। सड़कके दोनों ओर पहाड़ियोंकी ढलानोंपर उन मृत सिपाहियोंकी स्मृतिमें तख्तियाँ लगी दिखलाई देती हैं जो कि अफरीदियों के साथ लड़ते हुए मारे गये हैं। खान साहब यह सब देखते हैं और कहते हैं— 'क्या यह स्वयंमें एक दुःखान्त घटना नहीं है कि हम विदेशी आक्रमणकारियोंसे इस संकीर्ण दर्रेकी रक्षा करनेतकमें असमर्थ रहे हैं? हममें परस्पर कितना वैम-नस्य रहा होगा और कितनी कायरता रही होगी। कैसी शोचनीय स्थिति थी! यदि हम लोगोंमें एकता रहे, तो सरहदकी सुरक्षाकी समस्या मुझे स्थायी रूपसे सरल जान पड़ती है।'

'कबाइलियोंके साथ ये लड़ाइयाँ क्यों की जाती हैं?' उन्होंने मुझसे उस समय प्रश्न किया जब कि वे मुझको उन जन-जातियोंके गाँव अथवा यों कहिये कि उनकी खैलोंके वे दुर्ग दिखला रहे थे, जिनको कि सड़ककी ओरसे मिट्टीकी दीवारोंसे घेर दिया गया था। काफ़ी दूरपर, पहाड़ियोंकी ऊँची चोटियोंके ऊपर कुछ व्यक्ति राइफलें लिये हुए खड़े दिखलाई दे रहे थे। उनकी वेश-भूषा अफ़री-

दियों जैसी थी। 'ये लोग खस्सेदार हैं। इनकी भर्ती कबाइलियोंमें ही की जाती है और इस मार्गकी सुरक्षाके लिए इन्हें कुछ दे दिया जाता है। अफ़रीदी भी पठानोंकी भाँति सादे तथा सरल लोग हैं। दोषोंके प्रति वे क्षमाशील हैं। वे पख्तू बोलते हैं। यदि रक्तपातपूर्ण आपसी झगड़ोंको छोड़ दीजिए तो वैसे ये लोग सुसंगठित हैं और इनके पारस्परिक सम्बन्ध घनिष्ठ हैं। इन लोगोंके साथ मेल रखना इतना कठिन क्यों हो गया है? भला इन्हें क्यों रिश्वत दी जाय और यदि ये लोग सत्तासे नहीं दबते तो इनको बम गिराकर क्यों दबाया जाय? ये हमारे मित्र बनना चाहते हैं और यदि हम इनकी रोटीकी समस्या सुलझा देते हैं तो ये शांतिपूर्वक सौहार्दपूर्ण ढंगसे रहने लगेंगे। परन्तु हम लोगोंको तो उनके पास ही नहीं जाने दिया जाता।'

'और यह तो देखिये कि ये लोग रहते कैसे हैं?' खान साहबने दूरवर्ती चट्टानोंकी छोटी खोहोंकी ओर संकेत करते हुए कहा, 'ये इनकी गुफाएँ हैं। इन गुफाओंके अलावा इनके पास रहनेका अन्य कोई स्थान नहीं है। और आप कल्पना कर सकते हैं कि यहाँ इन्हें खानेके लिए क्या मिलता होगा? मुख्य रूप से इनका आहार मकई और जौकी रोटी तथा मसूरकी दाल है। इसके साथ इनको कभी-कभी मट्ठा मिल जाता है। इनको यदा-कदा मांस भी मिल जाता है परन्तु इतनेपर भी ये लोग वीर और दीर्घजीवी हैं। मैं आपसे कहता हूँ कि आप लोग विटामिनोंकी जो इतनी सारी बातें करते हैं, वे मेरी समझमें नहीं आतीं। आप खोजकर मुझे ऐसे और कोई लोग बतला दीजिए जिनके भोजनमें विटामिनों-की इतनी अधिक कमी रहती हो, जितनी इन अधभूखे अफ़रीदियोंके खानेमें रहती है। और ये उन अधिकांश लोगोंसे अधिक बलिष्ठ और वीर हैं जिनके भोजनमें विटामिनोंकी कोई कमी नहीं रहती। नहीं, इसका कारण यह है कि ये एक पवित्र ज़ीवन व्यतीत करते हैं और सभ्यताने इन्हें बिगाड़ा नहीं है। इनके समाजमें व्यभिचार नहीं है क्योंकि उसका दण्ड मृत्यु है।'

'इन्होंने अपने निवास-स्थानोंपर ये सफेद झंडियाँ क्यों लगा रखी हैं' मैंने पूछा। ठीक ही उत्तर मिला कि यदि अंग्रेज अपने मरे हुए लोगोंकी स्मृतिमें तख्तियाँ लगा सकते हैं तो अफ़रीदी अपने शहीदोंकी स्मृतिमें सफेद झंडियाँ गाड़ सकते हैं। 'ये उन लोगोंकी यादमें हैं जो निरपराध मारे गये हैं अथवा जो अंग्रेजोंसे लड़ते हुए मरे हैं।' खान साहबने मुझे बतलाया। 'इन लोगोंके विरुद्ध ही ये सतत युद्ध छेड़े गये हैं और इनको अपने अधिकारमें लानेके लिए आधु-निकतम हथियार; बमोंके प्रयोग किये जाते हैं।'

श्री महादेव देसाईकी यात्राके थोड़े दिन बाद ही गांधीजी मि० जिनाकी तीन घण्टेकी मुलाकातके पश्चात् सीमा-प्रान्त चल दिये। शरीरसे दुर्बल और मन से शिथिल वे अपने बहुत दिन पहले दिये गये वचनको पूरा करनेके लिए पठानोंके आतिथ्यशील देशकी ओर रवाना हो गये।

१ मईको गांधीजी नौशेरा पहुँच गये जो कि पेशावरसे पचीस मीलकी दूरी-पर है। वहाँ खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ और खुदाई खिदमतगारों द्वारा उनका भव्य स्वागत किया गया। कहीं कोई भीड़-भाड़ नहीं थी, कोई शोरगुल नहीं था और कोई कोलाहल नहीं था। पेशावरमें उनके जानेके मार्गके दोनों ओर मीलोंतक खड़ी भीड़का अनुशासन अपनी ओर ध्यान आकृष्ट करता था। डा० खान साहब-के यहाँ, जहाँ कि गांधीजी ठहरे हुए थे, भीड़ने उनके कार्य या उनके विश्राममें व्यवधान नहीं डाला, यद्यपि वे लोग गांधीजीकी प्रातः और सायंकालीन प्रार्थना-सभाओंमें भाग लेते थे। सैकड़ों लोग सवेरे अपने घरोंसे बाहर निकल पड़ते और बहुत तड़के डा० खान साहबके अहातेमें आकर एकत्रित हो जाते। कुछ स्त्रियाँ सवेरे तीन बजे या उससे भी जल्दी उठ बैठतीं और प्रार्थनामें आनेके लिए हाथ-पैर धोकर और स्नान करके तैयार हो जातीं। वहाँ न दर्शनोंके लिए धक्कामुक्की थी और न प्रार्थनाके समय या उसके बाद कोई शोरगुल था।

गांधीजी उन दिनों बड़ी मुश्किमसे अभिनन्दन स्वीकार करते थे और उन्होंने सम्भवतः किसी सरकारी कॉलिजसे तो कभी कोई अभिनन्दन-पत्र स्वीकार ही न किया था। यद्यपि उन दिनों उनका स्वास्थ्य बहुत गिरा हुआ था फिर भी उन्होंने पेशावरके इस्लामिया कॉलेज और सेन्ट एडवर्ड्स कॉलिजमें भाषण करनेका आमं-त्रण अस्वीकार नहीं किया। इस्लामिया कॉलिजके अभिनंदन-पत्रमें कहा गया था, 'आपने हमारे सबसे महान् व्यक्ति खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको प्रेरणा प्रदान की है। आपकी इस प्रेरणा और मार्ग-दर्शनसे ही खान साहब श्रेष्ठ प्रकारके अनुशासनसे युक्त अपने मानव-शरीरमें शौर्यपूर्ण भावनाएँ भर सकनेमें सफल हुए हैं। आपने स्वाधीनताके इस महान् संघर्षको उच्चतम नैतिक स्तरपर पहुँचाया है।' इस अभिनंदनपत्रमें हिन्दू-मुस्लिम एकताका उल्लेख किया गया था और गांधीजीकी सफलताकी कामना की गयी थी। उसके उत्तरमें गांधीजीने कहा :

"यह अच्छा ही हुआ कि आपने हिन्दू और मुसलमानोंकी एकताकी समस्या-का उल्लेख कर दिया। मैं आपसे इस समस्यापर विचार करनेका निवेदन करता हूँ। आप सोचें कि आप इस महान् हेतुको आगे बढ़ानेके लिए क्या कर सकते हैं? इसमें कोई सन्देह नही है कि यह कार्य आपका; नयी पीढ़ीका है। हम लोग बूढ़े

होते जा रहे हैं और थोड़े दिनोंमें ही अपने पुरखोंसे जा मिलेंगे, इसलिए इस भार-को आप लोगोंको ही वहन करना है। इस महान् उद्देश्यको प्राप्त करनेमें आप किस प्रकारसे सहायक हो सकते हैं यह आपने अपने अभिनन्दन-पत्रमें खान साहब-के कार्य और अहिंसाके प्रति अपनी कद्रसे स्वयं ही प्रकट कर दिया है। मैं नहीं जानता कि यह उल्लेख आपने जान-बूझकर किया है या नहीं और आपने जो कुछ कहा है उसके पूर्ण आशयको आप समझते भी हैं या नहीं। परन्तु मुझे आशा है कि आपने जो कुछ कहा है उसका आशय आपने समझा है और अपने शब्दोंको पूरी तरहसे तौला है। यदि आपने ऐसा कर लिया है तो मैं आपको एक क़दम आगे और ले जाना चाहूँगा। उर्दूके एक समाचारपत्रने लिखा है कि सीमाप्रांतमें मेरे आनेका मिशन पठानोंको पुंसत्वहीन बनाना है, जब कि खान साहबने मुझको इसलिए बुलाया है कि पठान मेरे मुँहसे अहिंसाके सन्देशको सुन सकें और मैं भी खुदाई खिदमतगारोंको निकटसे देखकर यह जान सकूँ कि उन्होंने अहिंसाको किस सीमातक ग्रहण किया है। इसका अर्थ यह है कि खान साहबको, किसी प्रकार मुझसे वह भय नहीं है जो कि उस पत्रने बतलाया है क्योंकि वे यह जानते हैं कि अहिंसा सबसे सशक्त; हिंसासे भी अधिक शक्तिशाली है। इसलिए यदि आप वास्तवमें अहिंसाकी मूल प्रकृतिको जानते हैं और आप खान साहबके कार्य-की क़द्र करते हैं तो आपके लिए अहिंसाकी शपथ लेना आवश्यक हो जायगा; यह जानते हुए भी कि आज सारे वातावरणमें हिंसा व्याप्त हो चुकी है और हम सब रात-दिन सेनाके युद्ध-चालन, हवाई कार्यवाही, शस्त्रीकरण और नौसेनाकी शक्तिकी चर्चाएँ किया करते हैं। आपको यह अनुभव करना पड़ेगा कि शस्त्रहीन अहिंसा-की शक्ति प्रत्येक समय सशस्त्र बलसे कहीं अधिक है। मेरे लिए अहिंसा अन्तः प्रेरणासे स्वीकार की हुई वस्तु रही है। बचपनसे वह मेरे प्रशिक्षणका और परि-वारके प्रभावका एक अंग रही है। परन्तु उसमें इतनी उच्च शक्ति निहित है, यह अनुभव मुझे दक्षिण अफ्रीकामें उस समय हुआ जब कि मैंने इसे संगठित हिंसा और जातिगत पक्षपातके विरुद्ध सम्मुख रखा। दक्षिण अफ्रीकासे लौटनेके समय मेरे मनमें यह स्पष्ट धारणा बन गयी कि हिंसाकी अपेक्षा अहिंसाकी प्रणाली अधिक उत्कृष्ट है।

"यदि हिंसाकी प्रणालीके लिए पर्याप्त प्रशिक्षण लेना आवश्यक है तो अहिंसा की प्रणालीके लिए उससे कहीं अधिक प्रशिक्षण प्राप्त करना अनिवार्य है और यह प्रशिक्षण, हिंसाके प्रशिक्षणकी अपेक्षा कहीं अधिक कठिन भी है। अहिंसाके इस प्रशिक्षणके लिए पहली सारभूत अनिवार्यता ईश्वरपर जीवंत विश्वास है।

वह व्यक्ति, जिसका कि ईश्वरपर जीवित विश्वास है, अपने ओंठोंपर ईश्वरका नाम रखकर कभी दुष्कृत्य नहीं करेगा। वह तलवारपर नहीं अपितु ईश्वरपर पूरा भरोसा करेगा। लेकिन आप यह कह सकते हैं कि एक कायर व्यक्ति भी यह कह-कर कि वह तलवार इस्तेमाल नहीं करता, इस रास्तेसे ईश्वरका विश्वासी बन-कर बच सकता है। कायरता ईश्वरपर निष्ठाका चिह्न नहीं है। ईश्वरका सच्चा पुरुष स्वयं तलवार चलानेकी शक्ति होते हुए भी यह समझकर उसे इस्तेमाल नहीं करेगा कि प्रत्येक मनुष्य ईश्वरकी ही एक मूर्ति है।

"यह कहा जाता है कि इस्लाम मानवकी बन्धुत्व-भावनापर विश्वास करता है परन्तु मुझको यह कहनेकी अनुमति दीजिए कि यह केवल मुसलिम समुदाय-का बन्धुत्व नहीं है बल्कि एक विश्व-बन्धुत्व है और वह मेरे निकट अहिंसाके प्रशिक्षणकी दूसरी सारभूत आवश्यकता है। मुसलमानोंका 'अल्लाह' वही है जो ईसाइयोंका 'गॉड' और हिन्दुओंका ईश्वर है। जिस प्रकार हिन्दू धर्ममें ईश्वरके अनेक नाम हैं उसी प्रकार इस्लाममें भी उसके कई नाम हैं। ये नाम व्यक्ति-सूचक नहीं हैं बल्कि वे उसके गुणोंका द्योतन करते हैं। यद्यपि वह समस्त गुणों-से परे है फिर भी लघुकाय मानवने उस विराट्, शक्तिमान् ईश्वरपर अनेक विशे-षताएँ आरोपित करके अपने नम्र ढंगसे, अगम, अवर्णनीय और अतुल कहकर उसका वर्णन करनेका प्रयास किया है। इस ईश्वरपर जीवंत श्रद्धा रखनेका अर्थ मनुष्य मात्रके प्रति बन्धुत्व-भावको स्वीकार करना है। इसका अर्थ समस्त धर्मों-को समान आदर देना भी है। यदि इस्लाम आपको प्यारा है तो हिन्दू-धर्म मुझको प्रिय है और इसी प्रकार ईसाइयोंको अपना ईसाई धर्म प्यारा है। यदि आपका यह विश्वास है कि आपका धर्म अन्य धर्मोंसे ऊँचा है तो आपकी यह इच्छा भी आपकी दृष्टिमें न्यायोचित होगी कि अन्य लोग अपना धर्म त्यागकर आपका धर्म ग्रहण कर लें लेकिन मैं कहूँगा कि यह हद दर्जेकी असहनशीलता है और असहन-शीलता हिंसाका ही एक प्रकार है।

"तीसरी अनिवार्यता है सत्य और पवित्रताको अपने जीवनमें उतार लेना, क्योंकि जो व्यक्ति यह दावा करता है कि उसका ईश्वरपर सक्रिय विश्वास है वह सच्चे और पवित्र होनेके अतिरिक्त और कुछ तो हो ही नहीं सकता।

"अब मैं आपसे यह कहूँगा कि आपने खान साहबकी सेवाओं और अहिंसा-की जो क़द्र की है यदि वह यथार्थ है तो यह समस्त आशय उनके साथ जुड़े हुए हैं।

"जो नेतृत्व करनेका दावा करते हैं, उन्हें इन समस्त आशयोंको आत्मसात्

कर लेना चाहिए और वे उनके नित्य जीवनके माध्यमसे भी व्यक्त होना चाहिए। इस स्थितिमें आपका कोई पद या श्रेणी नहीं होगी लेकिन आप अपनी जनताके नेता होंगे। यदि आप इन आदर्शोंको अपनी जिन्दगीमें उतार लेंगे तो किसीको यह कहनेका मौक़ा न रह जायगा कि अहिंसा आपको पुंसत्वहीन बनाने जा रही है और तब आपकी अहिंसा वीरतम पुरुषकी अहिंसा होगी।"

एडवर्ड्स कॉलेजमें अपने अभिनंदनका उत्तर देते समय गांधीजी फिर उसी विषय-वस्तु पर चले गये :

"इस देशमें जन्म लेकर, जहाँ कि हज़ारों साल पहले अहिंसाका उपदेश दिया गया था, अब यह आपपर निर्भर है कि आप अहिंसात्मक निष्क्रिय विरोधको दुर्बल और शोषितके हाथोंमें एक दुर्निवार शस्त्रकी भाँति ग्रहण करके अपने निज के ढंगसे स्वतः उसका स्वरूप और लक्षण निश्चित करें।"

"आपका अभिनन्दन मेरी प्रशंसामें एक जय-ध्वनिके सदृश है। इस प्रकार-की प्रशंसाका गुण-दोष-विवेचन मेरे लिए कभी सरल बात नहीं हुई।" उन्होंने बल देते हुए कहा, "मैं आपको यह बतला दूं कि मेरे जीवनमें ऐसा समय कभी नहीं आया जब मुझे इसकी क़द्र करनेमें उतनी कठिनाई प्रतीत हो जितनी कि आज हो रही है। इसका कारण यह है कि मुझमें वैराग्यकी एक विचित्र भावना भर गयी और मैं अभी उससे छुटकारा नहीं पा सकता हूँ। हाँ, तो मैं यहाँ भाषण करनेके लिए नहीं आया हूँ। मुझसे यह कहा गया था कि मुझे पाँच मिनट-से अधिक समय देनेकी आवश्यकता नहीं है परन्तु आपके अभिनन्दन-पत्रके एक वाक्यने मुझे उससे कुछ अधिक मिनट ले लेनेके लिए बाध्य कर दिया जितने कि मैंने पहले आपको बतलाये थे। आपके अहिंसात्मक निष्क्रिय विरोध सम्बन्धी वाक्य से मुझे बहुत पुरानी सन् १९०७ की दक्षिण अफ्रीकाके गर्मिस्टन नगरकी एक घटना स्मरण हो आयी। वहाँ निष्क्रिय विरोधपर, जैसा कि उन दिनों यह आन्दोलन जाना जाता था, मेरा भाषण सुननेके लिए यूरोपियन मित्रोंकी एक सभा एकत्रित हुई। सभाके सभापतिने मुझसे बिलकुल वही बात कही जो कि आपने आज अपने इस अभिनन्दन-पत्रमें कही है कि निष्क्रिय विरोध दुर्बलका हथियार है। वहाँ यह बात मुझे धक्का पहुँचानेके लिए मुझे निर्दिष्ट करके ही कही गयी थी और मैंने भी तत्काल ही वक्ताकी उस भूलको सुधार दिया। यदि यह आश्चर्यजनक नहीं तो एक विचित्र बात अवश्य है कि आपने भारतमें इतने वर्षोंतक सत्याग्रह चलने-के बाद भी वही भूल की। हम दुर्बल और शोषित हो सकते हैं परन्तु अहिंसा दुर्बलका हथियार नहीं है। यह सबसे शक्तिशाली और सबसे वीर पुरुषका शस्त्र

है। हिंसा अवश्य दुर्बल और शोषितका एक हथियार हो सकती है। अहिंसासे मूलरूपेण अपरिचित होनेके कारण उनके लिए उसका कोई पहलू स्पष्ट नहीं था। फिर भी यह सच है कि निष्क्रिय विरोधको दुर्बलका एक शस्त्र समझा गया। यही कारण है कि दक्षिण अफ्रीकाके आन्दोलनकी निष्क्रिय विरोधसे अलग पहचान करनेके लिए उसके लिए 'सत्याग्रह' नाम गढ़ा गया।

"निष्क्रिय विरोध एक नकारात्मक वस्तु है और उसमें प्रेमका कोई सक्रिय सिद्धान्त नहीं है। सत्याग्रह प्रेमके सक्रिय सिद्धान्तको लेकर आगे बढ़ता है। वह यह कहता है : 'तुम उनको प्यार करो जो तुम्हें तुच्छ समझकर तुमसे काम लेते हैं। यह तुम्हारी अपनी बात है कि तुम अपने मित्रोंको प्रेम करो लेकिन मैं तुमसे कहता हूं कि तुम अपने शत्रुओंको प्रेम करो।' यदि सत्याग्रह दुर्बलका एक शस्त्र होगा तो मैं खान साहबको धोखा दे रहा होऊँगा क्योंकि किसी पठानने आजतक यह मंजूर नहीं किया है कि वह दुर्बल है। स्वयं खान साहबने मुझसे यह कहा कि स्वेच्छासे लाठी और राइफलका त्याग कर देनेके बाद उन्होंने अपने-आपको जितना शक्तिशाली और वीर अनुभव किया है, उतना उन्होंने पहले नहीं किया था। यदि अहिंसा एक वीर पुरुषका सबसे शक्तिशाली शस्त्र न होती तो पठानों जैसे एक वीर समाजके आगे उसे रखनेमें निश्चित ही मुझे बड़ा संकोच होता। इस शस्त्रको ग्रहण करके खान साहब यह स्पष्ट घोषणा कर सकते हैं कि उन्होंने अफ़रीदियों तथा अन्य कबाइली लोगोंको अपना मित्र बना लिया है और उनमें एक परिवर्तन ला दिया है।

"मुझे इस बातकी प्रसन्नता है कि मुझे आपको सही करनेका एक मौक़ा मिला क्योंकि जिस क्षण आप उसका (अहिंसाकी शक्तिका) अनुभव करेंगे, उसी क्षण आप उस हेतुके लिए अपना नाम कार्यकर्त्ताओंमें लिखा देंगे जिसके लिए मैं और खान साहब काम कर रहे हैं। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि उसपर दृढ़ विश्वास एक बड़ी कठिन बात है। हालाँकि मैं पिछले पचास वर्षसे उसके प्रति सचेत रहते हुए उसका अभ्यास कर रहा हूँ परन्तु फिर भी मैं उसे एक कठिन चीज़ समझता हूँ। वह एक बहुत ऊँचे स्तरकी पूर्व-कल्पना चाहती है। उसके लिए असीम धैर्य अपेक्षित है—घासकी पत्तीसे सागरको रिक्त कर सकनेवाला धैर्य।"

अस्वस्थताके कारण गांधीजीको अपने मूल कार्यक्रमको बहुत संक्षिप्त कर देना पड़ा। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ यह नहीं चाहते थे कि गांधीजी सीमाप्रान्तके गाँवों की एक झलक देखे बिना ही यहाँसे वापस जायँ इसलिए उन्होंने जल्दीसे गांधीजी-

के पेशावर जिलेके दौरेकी व्यवस्था की। गांधीजी पहले उत्तरमें शबक़दार गये और वहाँसे पूर्वकी ओर जाकर उत्मंज़ई। वहाँसे उन्होंने मरदानका दौरा किया। पेशावरसे मरदान जानेवाला रास्ता कई गाँवोंसे होकर गुज़रता था और पूरे देहातके लोग उस दिन या तो सड़कपर चलते हुए दिखलाई दे रहे थे या गांधी-जीके स्वागतके लिए सड़कके किनारे खड़े थे, जो कि खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँकी अनुरक्षामें आ रहे थे। प्रतीक्षा करते हुए पठानों—वृद्ध और युवक, स्त्री और पुरुष तथा बालकोंने अपने नेत्रोंमें आनन्दाश्रु भरकर गांधीजीका स्वागत किया। हर एक गाँवमें लोगोंने गांधीजीको घी-मक्खन, मोटी-सी बकरी, पुष्ट भेड़ा और हाथकी रोटी नॉन भेंट करनेके लिए उनका इन्तज़ार किया।

खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँ अपनी जनता और देशको, जिसमें उन्होंने क्रान्ति-कारी परिवर्तन किया था, जानते थे। "महात्माजी, यह मत्ता गाँव है जिसने कि सबसे भयंकर दमनके दृश्य देखे थे", उन्होंने कहा, "और यहाँ, जहाँ कि कठोरतम दमन हुए थे, आप लोगोंके उत्साहमें कोई कमी न पायेंगे परन्तु इससे आप यह न सोच लीजिएगा कि पठान वीर और बलिष्ठ होता है। वह कौड़ी-दो कौड़ीके पुलिसके सिपाहीके आगे भयसे दबक जाता था। परन्तु हमारे आन्दोलनने पठानों-मेंसे यह भय निकाल दिया है और अब वे एक फौज़के सामने भी निडर होकर खड़े होते हैं। इन स्त्रियोंने भी आन्दोलनमें सक्रिय भाग लिया था परन्तु इनको गिरफ्तार नहीं किया गया।"

जैसे ही वे शबक़दारसे उत्मंजईकी ओर चले, मार्गमें गांधीजीको एक छोटा-सा गाँव मिला जो कि घना बसा हुआ था और जिसमें अच्छे मकान थे, 'यह तरङ्गज़ई है।" खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कहा। "यही प्रसिद्ध हाज़ीजीका घर है। उन्हें तरङ्गज़ईके हाज़ी कहा जाता था। वे अब इस संसारमें नहीं हैं। वे एक वीरात्मा थे। अंग्रेजोंने उनके बारेमें तरह-तरहके किस्से फैला रखे हैं। सर माइकल ओ' डायर मुझको तरंगज़ईके हाज़ीका दामाद कहा करता था।"

एक गाँवमें पिछले आन्दोलनके समय पुलिसने मकानोंको जला दिया था। उस गाँवमें एक जिरगा उस जगह गांधीजीका स्वागत करनेके लिए प्रतीक्षा कर रहा था जहाँ कि गाँववालोंने खण्डहरोंके ऊपर नया मकान बनाया था। एक बूढ़े खानने गांधीजीको हाथसे काते हुए ऊनका एक कोट भेंट किया। 'मैं इसका क्या करूँ ?' गांधीजीने पूछा। 'इसे सर्दीमें पहनिएगा।' खानने उत्तर दिया। 'लेकिन मैं तो सर्दीमें यहाँ आ रहा हूँ।' गांधीजी बोले, 'तबतक आप इसे अपने पास ही क्यों नहीं रख लेवे ? इसे रखनेके लिए मेरे पास कोई चीज़ नहीं है।'

बूढ़े खानने हँसते हुए कहा, 'निश्चित ही आप गम्भीर नहीं हैं।' 'ऐसा नहीं है। मैं सर्दीके मौसममें यहाँ आ रहा हूँ। मेरे आनेतक इसे आप अपने पास ही रखे रहिए।' 'तब मैं रख लूँगा।' खानने कहा। 'ठीक है, मेरी चीज़ समझकर।' गांधीजीने आगे जोड़ा और सब लोग ज़ोरसे हँस पड़े।

अपने अल्प-प्रवासमें गांधीजी सैंकड़ों खुदाई खिदमतगारोंसे मिले। एक-दो फर्लाङ्गकी दूरीपर, रास्तेभर वे दिनमें और रातमें भी प्रतीक्षा करते हुए खड़े मिलते। गांधीजीके प्रत्येक स्वागत-भाषणमें एक बातका उल्लेख अवश्य किया जाता कि यदि भविष्यमें आन्दोलन छिड़ा तो पठान पीछे नहीं रहेंगे। गांधीजीने प्रायः अपने सारे भाषणोंमें अहिंसाके आशय बतलाये। खुदाई खिदमतगारोंके आगे उन्होंने जो भाषण किये, वे तो उनपर ही विशेष रूपसे आधारित थे। ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ारने ओजपूर्ण पश्तूमें उनका भाषान्तर किया।

पेशावरके एक राजनीतिक सम्मेलनको, जिसमें ५०,००० श्रोता एकत्रित थे, सम्बोधित करते हुए गांधीजीने कहा : "आपने अपने मानपत्रोंमें मुझे यह विश्वास दिलाया है कि आपने विगत सविनय आज्ञा भंग आन्दोलनमें अहिंसाका एक विजयी और अद्वितीय प्रदर्शन किया है। मुझे भी इस बातका पता लगाना है कि क्या आपने अहिंसाको उसके समस्त आशयों सहित अंगीकार कर लिया है? मेरे यहाँ आनेका मुख्य प्रयोजन यह मालूम करना है कि खुदाई खिदमतगारोंके सम्बन्धमें जो कुछ मैंने खान साहबसे सुना है, वह सत्य था। मुझे इस बातका खेद है कि सत्यकी इस खोजके लिए जितना समय देना आवश्यक था, उतना मैं न दे सका। लेकिन मेरा यह दृढ़ विश्वास बन गया है कि एक सेनापतिके रूपमें खान साहबके ऊपर यहांके लोगोंकी एक आश्चर्यजनक, स्नेहपूर्ण निष्ठा है। मैं जहाँ भी गया, वहाँ मैंने यह लक्ष्य किया कि न केवल खुदाई खिदमतगार बल्कि प्रत्येक व्यक्ति— स्त्री-पुरुष और बालक उनको जानता है और उनसे प्रेम करता है। उन्होंने खन साहबका बड़ी आत्मीयताके साथ स्वागत किया। उनका सान्निध्य यहाँ वालोंके लिए शांतिदायक है। जो भी व्यक्ति खान साहबके पास पहुँचा उसके साथ उन्होंने अति सज्जनताका व्यवहार किया। खुदाई खिदमतगारोंके आज्ञा-पालनकी भावना-को तो संदिग्ध दृष्टिसे देखा ही नहीं जा सकता। इन सब बातोंने मेरे मनमें असीम प्रसन्नता भर दो। एक सेनापतिके लिए ऐसा ही आज्ञा-पालन उचित है। सामान्य सेनापति भयके सहारे अपनी आज्ञाओंका पालन कराता है लेकिन खान साहब प्रेमके अधिकारसे। अब प्रश्न यह है कि खान साहबके पास यह जो अत्य-धिक बल है उसका वे क्या उपयोग करेंगे? मैं अभी इस प्रश्नका उत्तर नहीं दे

सकता और न खान साहब ही दे सकते हैं। इसलिए यह निश्चित रहा कि यदि ईश्वरकी इच्छा होगी तो मैं अक्तूबरके लगभग इस अद्भुत प्रदेशमें पुनः आऊँगा। उस समय मैं यहाँ अधिक दिनोंतक रहूँगा और यहाँ अहिंसाने जो कार्य किया है उसका मैं यहाँ रहकर ब्यौरेवार अध्ययन करूँगा।"

गांधीजीको भेंट किये गये सभी मानपत्रोंमें अहिंसापर बल दिया गया था। मरदान कांग्रेस समितिने उनको जो मानपत्र भेंट किया था, उसमें यह कहा गया था, "हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि आपने हमारी गिरी हुई स्थितिमें जो हमारा साथ दिया है उसके लिए हम आपके ऋणी हैं और इस ऋणको हम कभी विस्मृत नहीं करेंगे। इस ऋणको तबतक स्वीकार किया जायगा जबतक कि इस प्रान्तमें एक भी पठान बालक रहेगा। हम अज्ञान है, हम निर्धन हैं परन्तु आपने हमें अहिंसाका जो उपदेश दिया है उसके कारण हम कर्त्तव्यच्युत नहीं होंगे और अहिंसाव्रत पूरा करेंगे, जिसके लाभ हमने प्रत्यक्ष देख लिये हैं।" पेशावरके एक अभिनन्दन-पत्रमें कहा गया था : "सरहदके लाखों पठानोंके मनपर आपने जो प्रभाव डाला है, वह किसी औरने नहीं डाला।" कुलूखानके मानपत्रमें अहिंसा-का अभिप्राय प्रतिपादित किया गया था : "आपने हमें अहिंसाकी शिक्षा दी है। यह शिक्षा हमको एक बड़ी क्रान्तिके लिए तैयार कर सकती है। उसने हमें सच्चे साहस और वीरत्वकी एक प्रेरणा दी है। उसे ग्रहण कर लेनेपर मनुष्य किसी मनुष्यसे भय नहीं करेगा। यह भावना व्यक्तिको नम्र और ईश्वरके प्रति भीरु बनाती है और सबसे अधिक यह कि यह हमें अपनी समस्याओंको सुलझानेके योग्य बनाती है, विशेष रूपसे साम्प्रदायिक दंगे, निर्धनता और बेकारीकी समस्याओंको। यह प्रत्येक व्यक्तिको ईमानदारीके साथ अपनी जीविका अर्जित करनेमें सहायता देती है।"

गांधीजीका चारसद्दाका सम्बोधन पूर्णतः अहिंसापर आधारित था। इसके पश्चात् उन्होंने जिन सार्वजनिक सभाओंमें भाषण किये उनमें उन्होंने अहिंसाका व्याख्या सहित अर्थ समझाया। चारसद्दाकी सभा आश्चर्यजनक ढंगसे शांत रही और दस हज़ारसे भी अधिक श्रोता रातके दस बजेतक बैठे भाषण सुनते रहे और सभामें पूरी तरह व्यवस्था बनी रही। इस सभामें गांधीजीने कहा : "वास्तवमें मैं उन लोगोंसे परिचित होना चाहता था जिनके सम्बन्धमें मैंने बहुत काफ़ी सुन रखा था। मैं अपनी आँखोंसे यह देखना चाहता था कि खुदाई खिद-मतगार कैसे रहते हैं, उनकी गतिविधियाँ क्या रहती हैं और वे किस पद्धतिसे कार्य करते हैं। खान साहब भी इस बातके लिए उत्सुक थे कि मैं इन लोगोंको

देखूं और यह जाँच करूँ कि इन्होंने अहिंसाको किस सीमातक स्वीकार किया है। मेरा यह दौरा बहुत कम समयका है और मुझे डर है कि इतने अल्प कालमें इन बातोंकी परीक्षा नहीं ली जा सकती। फिर भी मैं आपको एक बात बतला देना चाहता हूं, वह यह कि मेरी आपके बीचमें अधिक रहनेकी इच्छा हो उठी है। यद्यपि मैं उत्मंज़ई और चारसद्दातक ही आ सका फिर भी आजकी रात मैं आप सबका कृतज्ञ हूं। मैंने आपको देखा। खान साहब और डा० खान साहबको मैंने निकटसे देखा है, यहाँतक कि वर्धामें भी देखा है परन्तु मेरे मनमें आप लोगोंको देखनेकी इच्छा थी। मैं आप सबसे परिचित होना चाहता था। आपके और खान साहबके कंधोंपर बहुत बड़ी जिम्मेदारी आ गयी है क्योंकि आप लोगोंने जान-बूझकर एक ऐसा नाम चुना है जिसका आशय बहुत शक्तिमान् है। आप अपनेको जनताका सेवक कह सकते थे, पठानोंका सेवक कह सकते थे या इस्लामका सेवक कह सकते थे। लेकिन इन सबकी जगह आपने खुदाई खिदमतगारका नाम चुना है; ईश्वरके सेवक अर्थात् मानवताके सेवक, जिसमें हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पंजाब, गुजरात और भारतके अन्य भागोंके अतिरिक्त विश्वके अन्य भाग भी शामिल हैं। आपका यह महत्त्वाकांक्षी नाम यह सूचित करता है कि आपने अहिंसाको स्वीकृति दे दी है। कोई मनुष्य ईश्वरके नामपर तलवारके सहारे मानवताकी सेवा कैसे कर सकता है? यह तो केवल उस बलके द्वारा ही हो सकता है जो कि ईश्वरने हमें दिया है। वह किसी भी बलसे, जिसकी बात हम सोच सकते हैं, अधिक बड़ा है। यदि आप मेरी इस बातको नहीं समझ सकते तो आपको यह निश्चय मान लेना चाहिए कि संसार मुझे और खान साहबको व्यर्थका ढोंगी समझेगा और हमपर हँसेगा। इसलिए जिस समय मैं खुदाई खिदमतगारोंको देखकर प्रसन्न हुआ उस समय मेरे मनमें एक प्रकारकी शंका भी थी। बहुतसे लोगोंने मुझे आपके विरुद्ध सचेत किया था परन्तु यदि आप अपने ध्येयके प्रति सच्चे हैं तो उस चेतावनीका कोई अर्थ नहीं हैं। याद रखिये, समूचे भारतमें जितने स्वयंसेवक हैं उनमें संख्यामें आप सबसे अधिक हैं और भारतके अन्य प्रांतोंके स्वयंसेवकोंकी अपेक्षा आप अधिक अनुशासित भी हैं लेकिन जबतक अनुशासनके मूलमें अहिंसा नहीं रहती तबतक यह सम्भावना बनी रहती है कि कहीं यह अनुशासन एक सीमाहीन उपद्रवका मुख्य साधन न बन जाय। इस प्रकारकी शांत और सुनियोजित सभाएँ मैंने अपने दौरोंमें कम ही देखी हैं। उनके लिए मैं आपको बधाई देता हूं। आपने मेरे लिए जो प्रेम प्रदर्शित किया है, उसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। मैं इस प्रार्थनाके साथ अपनी बात पूरी करूँगा कि

सीमांतके पठान भारतको स्वतंत्र करें और अहिंसाके द्वारा मुक्त किये गये उस भारतके द्वारा संसारको अहिंसाकी मूल्यवान शिक्षा दें।"

मरदानमें कुछ ऐसी घटनाएं हो गयीं जिन्होंने उनको एक सीधी शिक्षा ग्रहण करनेका अवसर दिया : "आपने मुझसे जो कुछ कहा, यदि वह आपकी दृढ़ प्रतिज्ञा है और आप उसका पालन कर सकते हैं तो इसमें कोई सन्देह शेष नहीं रहता कि आप भारतके हेतु स्वाधीनता अर्जित करेंगे। इतना ही नहीं, और भी बहुत कुछ करेंगे। जब अपनी स्वाधीनताके निमित्त हम अपने बहुतसे लोगोंकी कुर्बानियाँ देनेको तैयार हो जायेंगे तब हमें खुलकर यह कहनेमें कोई कठिनाई न होगी कि हम युद्धके उस भयानक भूतको भगा देंगे जो इन दिनों यूरोपको धमकियाँ दे रहा है। हम यह कहते हैं कि हम जो कुछ करते हैं, वह ईश्वरके नामपर करते हैं। हम अपनेको खुदाई खिदमतगार कहते हैं। हम तलवारको त्याग देनेकी प्रतिज्ञा करते हैं, फिर भी यदि हम अपने दिलोंसे तलवार और खंजर निकालकर नहीं फेंकते तो यह निश्चित है कि हमारा अनादर होगा और खुदाई खिदमतगार एक तिरस्कृत शब्द बन जायगा।"

इसके पश्चात् उन्होंने मयरकी एक घटनाका उल्लेख किया जिसमें कि पठानों द्वारा तीन सिख मार डाले गये थे। "आज दोपहरके बाद जो क़िस्सा मैंने सुना, उससे मुझे एक धक्का लगा है और उस धक्केसे मैं अबतक सँभल नहीं पाया हूँ। जहाँतक मुझे मालूम हुआ है, उन व्यक्तियोंने, जिनको मार डाला गया, ऐसा कोई काम नहीं किया था जिससे हत्याकारियोंका क्रोध भड़के। उन लोगोंने यह कृत्य दिनदहाड़े किया और इससे पहले कि कोई उनके ऊपर सन्देह करे, वे भाग गये। यह एक सोचनेकी बात है कि यह घटना कैसे हुई जब कि हम सब लोग अहिंसाकी बातें करते हैं। उस गाँवमें खुदाई खिदमतगार थे और ऐसे अन्य लोग भी थे जो कि अहिंसाके 'ध्येय' पर विश्वास करते हैं। उनका यह कर्त्तव्य था कि वे अपराधियोंको पकड़ें। आपका भी यह कर्त्तव्य है कि आप उन शोकग्रस्त परिवारोंके प्रति दोस्तीका बर्ताव करें, भयग्रस्त लोगोंको सहानुभूति दें और विपत्तिके समयमें उनको सहायता देकर आश्वस्त करें। जबतक हमारे बीचमें इस प्रकारकी चीजें चलती रहेंगी उस समयतक निश्चित ही हमारी अहिंसाको शंकाकी दृष्टिसे देखा जायगा।"

कलूखानमें किये गये अपने एक भाषणमें उन्होंने सार-रूपमें अहिंसाका यह सन्देश दिया :

"मैं आपसे यह कहना चाहता हूँ कि मैं एक अहिंसायुक्त व्यक्तिके समस्त

श्रेष्ठ लक्षणोंको संगृहीत करके अभी आपके सामने न रख सकूँगा लेकिन मैं यह कहूँगा कि आपने अपने अभिभाषणमें एक वस्तुका उल्लेख नहीं किया है और वह यह कि अहिंसाके आशय क्या हैं। आपने इलाहाबाद और लखनऊके दंगोंके समाचार सुने होंगे। यदि हम लोगोंमें वास्तवमें अहिंसा होती तो उनका होना सम्भव नहीं था। कांग्रेसके रजिस्टरमें उसके हजारों सदस्य हैं। यदि उन्होंने सचमुच अहिंसाको अपने जीवनमें उतारा होता तो ये दंगे नहीं होते। परन्तु हम उनको रोकनेमें असफल ही नहीं रहे बल्कि उन्हें काबूमें करनेके लिए हमने फौज और पुलिसका सहारा लिया। कांग्रेसजनोंमें कुछने मुझसे तर्क किया कि हमारी अहिंसा हमारे उस व्यवहारतक ही सीमित है जो हम अंग्रेजोंके साथ करते हैं। तब मैंने कहा कि अहिंसा एक शक्तिशालीका शस्त्र है, दुर्बलका नहीं। वीर पुरुषकी सक्रिय अहिंसा चोर, डाकू, हत्यारोंको भगा देती है। और ऐसे स्वयंसेवकोंकी सेना तैयार करती है जो दंगोंको अपने काबूमें करनेके लिए आत्म-बलिदान करते हैं, जो आगजनी और झगड़ोंको शान्त करते हैं और इसी प्रकारके अन्य काम करते हैं। आपने यह कहा है कि अहिंसासे बेकारीकी समस्या अपने आप ही सुलझ जायगी। आपका कहना ठीक है क्योंकि वह शोषणको रोकेगी। अहिंसाको आत्मसात् करनेवाला व्यक्ति स्वतः ही ईश्वरका एक सेवक बन जाता है। वह अपने समयके प्रत्येक क्षणका हिसाब ईश्वरको देनेको तैयार रहता है। आप सब ईश्वरके सच्चे सेवक और अहिंसाके सच्चे अभ्यासी बनें।"

८ मईको सीमान्तका दौरा समाप्त हो गया और गांधीजी जुहूमें जाकर विश्राम करनेके लिए बम्बई रवाना हो गये।

दूसरी यात्रा

१९३८

मईके तीसरे सप्ताहमें बम्बईमें कांग्रेसकी कार्य-समितीकी बैठक हुई। जिन प्रदेशोंमें कांग्रेसके मंत्रिमंडल बने थे उनके मुख्य मंत्रियोंको इस बैठकमें विशेष आमंत्रण देकर बुलाया गया था। इसमें नागरिक स्वतंत्रता, भू-सम्पत्ति सम्बन्धी नीति, श्रम, गाँवोंका उत्थान और शिक्षाके सम्बन्धमें विचार किया गया। कार्य-समितिकी इस बैठकमें कांग्रेसके मंत्रियोंके विरुद्ध की गयी शिकायतोंकी छान-बीन भी की गयी। इन दिनों गांधीजी जुहूमें विश्राम कर रहे थे और कार्यसमितिके सदस्य प्रत्येक महत्त्वपूर्ण मामलेमें उनकी सलाह लेते थे। कांग्रेसके सभापति श्री सुभाष बोस गांधीजीके साथ मि० जिनाके साथ चर्चामें लग गये। बातचीतमें मि० जिनाने यह आग्रह किया कि इस तथ्यको प्रारम्भमें ही स्पष्टतः स्वीकार करके आगे बढ़ना होगा कि कांग्रेस हिन्दुओंकी ओरसे मुसलमानोंको प्रतिनिधि संस्था मुस्लिम लीगके साथ समझौता कर रही है। जूनके महीनेमें मुस्लिम लीगने अपनी ग्यारह मांगें पेश कीं। उनमें एक मांग यह भी थी कि मुस्लिम लीगको भारतके मुसलमानोंका प्रतिनिधित्व करनेकी एकमात्र अधिकारिणी संस्था समझा जाय। वार्तालापमें गतिरोध आ गया।

गांधीजी जुहूसे वापस वर्धा चले आये। उनका स्वास्थ्य इन दिनों ठीक नहीं चल रहा था। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके साथ काफ़ी विचार-विमर्शके बाद दिसम्बर १९३८ के अंतमें गांधीजी एक मासकी यात्रापर सेवाग्रामसे सीमा-प्रान्त चल दिये। कार्यसमितिकी बैठकमें भाग लेनेके लिए वे मार्गमें दिल्लीमें रुके। यह बैठक युद्धके उन मेघोंकी छायामें मिल रही थी जो चेकोस्लोवाकियाके प्रश्नको लेकर यूरोपपर बरस पड़नेकी धमकी दे रहे थे। यद्यपि उन दिनों गांधीजीका मौन चल रहा था फिर भी उन्होंने कांग्रेसके विचार-विमर्शमें सक्रिय रूपसे भाग लिया। बैठककी कार्यवाही ग्यारह दिनतक चली। इस बीचमें युद्धके बादल छँट गये और १० सितम्बरको म्युनिखकी सन्धि-वार्तापर हस्ताक्षर हो गये। गांधीजीको अपने युद्ध सम्बन्धी विचारोंको दुहरानेका एक मौक़ा और मिला। उन्होंने लिखा : "यदि कांग्रेस अहिंसाके अपने पूर्ण मतको कार्य रूपमें परिणत कर सके तो भारतका नाम अमर हो जाय।" उन्होंने अपना यह दृढ़ निश्चय व्यक्त किया :

"यदि मैं नितान्त एकाकी रह जाऊँ और ब्रिटिश सत्ता कांग्रेसको सारा नियंत्रण सौंप दे तो भी मैं इस युद्धमें यूरोपका भागीदार नहीं बनूँगा।"

४ अक्तूबरको गांधीजी दिल्लीसे सीमा-प्रान्त चल दिये। पेशावर पहुँचकर उन्होंने सरदार बल्लभभाई पटेलको एक पत्रमें लिखा :

"मेरा समय बहुत अच्छा बीत रहा है। आप भी मुझे ऐसा पूर्ण विश्राम नहीं दे सके। मौसम बड़ा सुहावना है। इन दिनों ख़ान साहब अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ मेरे निकट रहकर मेरी सँभाल कर रहे हैं।"

गांधीजीने उत्मंजईसे मीरा बहनको एक पत्रमें लिखा :

"आपको मैं पहले ही सब कुछ बतला चुका हूँ। इन दिनों मैं यूरोपके सागरोंमें डुबकियाँ लगा रहा हूँ। कृपया यह सूचित कीजिए कि मेरे लेखोंके सम्बन्धमें आपकी क्या प्रतिक्रिया है, क्योंकि मैं कुछ अन्य लेख भी लिख रहा हूँ।"

६ अक्तूबरको उन्होंने पेशावरमें एक लेख लिखा, जिसका शीर्षक था, "यदि मैं एक चेक होता!" उन्होंने अपने इस लेखमें हिटलरके साथ हुए 'एंग्लो-फ्रेन्च समझौते'की आलोचना की और उसको एक 'सम्मानहीन सन्धि' बतलाया। इस लेखमें गांधीजीने लिखा :

"मैं चेक जनतासे, और उसके द्वारा उन समस्त राष्ट्रोंसे, जो 'छोटे' अथवा 'दुर्बल' कहे जाते हैं, कुछ कहना चाहता हूँ।....इन छोटे राष्ट्रोंको अधिनायकोंको संरक्षामें जाना ही पड़ेगा या जानेके लिए तैयार रहना होगा अन्यथा वे यूरोपकी शांतिके लिए एक खतरा बने रहेंगे। भले ही सारा विश्व उनके साथ सद्भावना रखे, इंगलैण्ड और फ्रांस उनको बचा न सकेंगे। यदि मैं एक चेक होता तो अपने देशको इन दोनों राष्ट्रोंके अहसानसे अवश्य ही मुक्त रखता। इसके बाद भी मैं किसी राष्ट्र या संगठनकी अधीनता स्वीकार न करता। यह तो कोई शेखीकी बात होगी कि मैं तलवारके बलपर अपनी आज़ादीकी रक्षा करता। मैं ऐसा नहीं करता। मैं उस सत्ताकी शक्तिको कभी स्वीकार ही न करता, जो मेरे देशको उसकी स्वाधीनतासे वंचित करना चाहती। मैं उसकी इच्छा पूरी न करता और इस प्रयत्नमें निःशस्त्र रहते हुए अपनेको मिटा देता। इस प्रकार यद्यपि मैं अपने शरीरको खो देता परन्तु आत्माको; अपने सम्मानको बचा लेता।"

"लेकिन हिटलरके मनमें दया नहीं है। आपके आत्मिक प्रयास उसके आगे निष्फल हो जायेंगे।" उनकी शुश्रूषा करनेवाले एक सज्जनने कहा।

"मेरा उत्तर यह है कि आपकी बात ठीक हो सकती है।....यदि मेरी तक-

लीफ़ोंका हिटलरपर कोई प्रभाव नहीं होगा तो इससे क्या हुआ ? मैं कुछ खोऊँगा तो नहीं । मेरे पास मेरा सम्मान ही अकेली वस्तु है जिसकी कि मुझको रक्षा करनी चाहिए और मेरा यह सम्मान हिटलरकी दयापर आश्रित नहीं है । लेकिन मैं अहिंसाका विश्वासी होनेके कारण उसकी सम्भावनाओंको सीमित नहीं करूँगा । अबतक हिटलर और उस सरीखे अन्य लोगोंका एक ही प्रकारका अनुभव है और वह यह कि मनुष्य शक्तिके आगे झुकता है । शस्त्रविहीन पुरुष, स्त्रियाँ और बालक अपने मनोंमें बिना किसी प्रकारकी कटुता लाये हुए उनकी अहिंसात्मक अवज्ञा करें, यह उनके लिए एक बिलकुल अनूठा अनुभव होगा । इसके अतिरिक्त हिट-लर और उस सरीखे लोगोंके स्वभावके सम्बन्धमें भी यह निश्चित होकर नहीं कहा जा सकता कि वह उच्च और उत्कृष्ट प्रवृत्तियोंके प्रति अनुकूल होगा ही नहीं । उनमें भी तो आखिर वही आत्मा है जो मुझमें है ?"

उनकी शुश्रूषा करनेवाले एक अन्य सज्जनने कहा, "परन्तु आप जो कुछ कह रहे हैं वह आपके लिए तो ठीक है परन्तु आप औरोंसे तो यह अपेक्षा नहीं कर सकते कि वे आपको इस अनूठे आह्वानका अनुकूल ही उत्तर देंगे । उनको तो लड़ना सिखलाया गया है।...."

"आपकी बात ठीक हो सकती है परन्तु मुझको तो एक आह्वानका उत्तर देना है । जब मैंने दक्षिण अफ्रीकामें सत्याग्रह प्रारम्भ किया था तब मेरा कोई साथी न था । परन्तु एक राष्ट्रके सम्मानकी रक्षा हो गयी । इससे भी बड़ा उदा-हरण खान साहब अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँका है । वे अपनेको ईश्वरका एक सेवक कहते हैं और उनके पठान लोग बड़ी प्रसन्नताके साथ उनको 'फख्रे-अफगान' (पठानोंका गौरव) कहा करते हैं । इस समय भी जब मैं ये पंक्तियाँ लिख रहा हूँ, वे मेरे सामने बैठे हुए हैं । उन्होंने अपने यहाँके लोगोंमें इतना परिवर्तन ला दिया है कि उन्होंने अपने शस्त्रोंको त्याग दिया है । खान साहबका खयाल है कि उन्होंने अहिंसाके व्रतको ग्रहण कर लिया है । अन्य लोगोंके विषयमें वे इतने निश्चित नहीं हैं ।

"मैं सीमाप्रान्तमें आया हूँ या यों कहिये कि खान साहब द्वारा यहाँ लाया गया हूँ ताकि मैं खुदाई खिदमतगारोंके कार्यको प्रत्यक्ष रूपसे देख सकूँ। मैंने अभी-तक इनका कार्य नहीं देखा है फिर भी मैं इतना कह सकता हूँ कि अहिंसाके बारे में इनकी जानकारी बहुत कम है। अपने नेताके ऊपर दृढ़ विश्वास, इनकी विश्वमें सबसे बड़ी निधि है । शांतिके इन सैनिकोंको मैं एक पूर्ण, तैयार चित्रके रूपमें प्रस्तुत नहीं कर सकता । मैं इतना कह सकता हूँ कि यह एक सैनिकका अपने

साथी सैनिकोंको शांतिके पथपर ले जानेका प्रयास है जिसके लिए उसने इन्हें बदला है। यह प्रयास अन्तमें सफल होगा या नहीं यह नहीं कहा जा सकता, फिर भी यह निश्चित है कि वह भविष्यके सत्याग्रहियोंके लिए एक आदर्श रूप होगा। मेरा यहाँ आनेका उद्देश्य तभी पूर्ण होगा जब कि मैं इन लोगोंके हृदयोंतक पहुँच जानेमें सफल होऊँगा। मैं इनको यह बतलाना चाहता हूँ कि यदि अहिंसाको ग्रहण करके आप अपनेको उससे अधिक वीर अनुभव नहीं करते जितने कि आप सशस्त्र रहकर किया करते थे अथवा अहिंसाके लिए आप स्वतःको योग्य व्यक्ति नहीं समझते तो आपको अपनी इस अहिंसाको छोड़ देना चाहिए क्योंकि ऐसी अहिंसा कायरताका ही एक रूप है। आपकी निजकी इच्छा भले ही आपको रोके, इस कार्यके लिए और कोई नहीं रोकेगा। इससे बड़ी और कोई वीरता नहीं है कि मनुष्य किसी भौतिक बलके आगे, चाहे वह कितना ही महान् क्यों न हो, मनमें बिना कटुता लाये इस विश्वासके साथ घुटने टेकनेसे इनकार कर दे कि केवल आत्मा ही जीवित रहती है, अन्य कुछ नहीं हैं।"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ और डा० खान साहबने गांधीजीके स्वास्थ्यकी जो निरंतर संभाल की उसके कारण सीमाप्रान्तकी स्वास्थ्य-वर्धक जलवायुमें उनके स्वास्थ्यमें पर्याप्त सुधार हुआ। वे प्रायः मौन रहे। विश्रामकी इस निश्चित अवधि में उन्हें सभी प्रकारके कार्यक्रमोंसे मुक्त कर दिया गया था; कहीं कोई सार्वजनिक समारोह नहीं, किसीसे भेंट-मुलाकात नहीं, बातचीत नहीं, यहाँतक कि कागज़की वे पर्चियाँ भी नहीं जो उनके मौन कालमें चला करती थीं। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ उन्हें ९ अक्तूबरको पेशावरसे अपने घर उत्मंज़ई ले आये।

उत्मंज़ई स्वात नदीके किनारे बसा हुआ एक गाँव है। उसके चारों ओर चरागाह हैं। उसके रमणीक प्राकृतिक दृश्य देखते ही बनते हैं। जिधर भी दृष्टि डालिए मीलोंतक मकई, विविध प्रकारकी फलियों और कपासके गहरे हरे रंगके खेत फैले हुए दिखलाई देते हैं। उनके बीच-बीचमें फलोंके बाग हैं जिनमें कि बढ़िया किस्मकी नारंगी, आड़ू, बेर, अंगूर, खूबानी और नासपाती उत्पन्न होती हैं। यहाँकी भूमि उर्वर है और जलकी भी प्रचुरता है। गाँवके एक किनारे एक पनचक्की है, जैसे किसी सुन्दर चित्रमें आँकी गयी हो। उत्मंज़ईके प्रायः सभी मकान कच्ची मिट्टीके हैं, यहाँतक कि अभिजात वर्गके भी। इन घरोंकी दीवारें धूपमें सुखायी हुई कच्ची ईंटोंसे तैयार की गयी हैं। उनकी छतोंकी पटाई लकड़ी की भारी शहतीरोंसे की गयी है, जो कि इन मकानोंको गर्मीमें ठंडा और शीत ऋतुमें गर्म रखा करती हैं। इन मकानोंमेंसे बहुतसे पुराने ढंगसे बने हुए हैं,

जिनमें कि सामने हुआ है, उसके बाद अस्तबल और पीछे दाहिनी ओर रहनेके कमरे। उतमंज़ईकी सड़कें अच्छी हैं परन्तु उनकी पानीके निकासकी व्यवस्था ठीक नहीं है। गाँवकी सबसे बड़ी नाली, गलियोंका चक्कर काटती हुई, धीमे-धीमे बहती रहती है।

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने गांधीजीकी सुरक्षाके लिए अपने मकानकी छतपर कुछ खुदाई खिदमतगार रख दिये। उनको वहाँ तैनात करनेसे पहले खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने गांधीजीसे चर्चा की अवश्य परन्तु उनको पूरी बात नहीं बतलायी। उन्होंने केवल यह पूछा कि क्या सुरक्षाके उद्देश्यसे कुछ व्यक्ति रखे जा सकते हैं? उन्हें कोई आपत्ति तो नहीं है? गांधीजीने सिर हिला दिया। खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँने यह समझा कि इन्होंने सशस्त्र पहरेदार रखनेकी अनुमति दे दी। लेकिन जब गांधीजीको इन पहरेदारोंकी बातका पता चला तब उन्होंने इसपर आपत्ति की और कहा कि किसी अन्यके लिए वे स्वीकार कर लेंगे लेकिन इस बातको नहीं सहेंगे कि उनकी अपनी रक्षाके लिए सशस्त्र पहरेदार रखे जायें। यह कार्य तो उनके पूरे जीवनके अभ्यासके सर्वथा विपरीत होगा। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने सोचा था कि शस्त्र केवल इसलिए है कि यदि कोई उत्पाती आये तो डराकर भगा दिया जाय। उनका इरादा भी शस्त्रोंके प्रयोगका नहीं था। इसलिए उनका खयाल था कि गांधीजीको उनके रखनेपर कोई आपत्ति नहीं होगी। गांधीजीने उनको उनके इस तर्कका दोष समझाते हुए एक दृष्टांत दिया, "परमात्माने एक बार साँपको अपने पास बुलाया और कहा कि वे उसके विषके दाँत निकाल देंगे।" साँपने कहा, "ठीक है, लेकिन मैं अपनी फुफकार तो बनाये रख सकता हूँ?" परमात्माने उसे चेतावनी दी, "हाँ, तुम फुफकार बनाये रख सकते हो लेकिन याद रखना कि इस स्थितिमें आदमकी औलाद तुम्हें और तुम्हारी पूरी सर्प जातिको समूल नष्ट कर देगी।"

गांधीजीने इस दृष्टान्तपर टिप्पणी की, "इस दृष्टान्तका फल यह है कि बलका प्रदर्शन भी हिंसाका एक प्रकार है और उसके कर्ताको भी उसी प्रकारका प्रतिकार मिलता है जिस प्रकारका कि हिंसा करनेवालेको। वस्तुतः यह हिंसासे भी बुरा है।"

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको गांधीजीकी आपत्ति युक्तिसंगत लगी और छतपरसे सशस्त्र पहरेदार हटा दिये गये। इसके बाद उन्होंने गांधीजीसे यह आग्रह किया कि वे बिना शस्त्रोंके चौकीदारोंको रखनेकी स्वीकृति दे दें। गांधीजीने अनिच्छापूर्वक इसकी स्वीकृति दे दी।

प्रतीत होता है कि यह घटना गांधीजीके निकट एक बड़ी विचारणीय समस्याका प्रतीक थी—उस समस्याका जो कि देशके सामने उपस्थित थी। "जिस प्रकार एक सत्याग्रहीके लिए यह आवश्यक है कि वह आत्मरक्षाके लिए शस्त्रोंका प्रयोग त्याग दे, उसी प्रकार यदि भारतको अहिंसापूर्ण स्वराज्य प्राप्त करना है तो उसे स्वयंको इस योग्य बनना चाहिए कि वह पुलिस और फ़ौजकी सहायताके बिना सीमाके उस पारके हमलोंसे अपनी रक्षा कर सके। यहाँ इस पश्चिमोत्तर प्रदेशमें एक लाखसे भी अधिक खुदाई खिदमतगार बतलाये जाते हैं, जिन्होंने कि अहिंसाके मतकी शपथ ग्रहण की है। यदि उनकी अहिंसा कोई प्रयोजन-विशेष साधनोंकी या केवल नामकी अहिंसा नहीं है बल्कि एक वीर पुरुषकी सच्ची अहिंसा है तो उन्हें अपनेको इस योग्य बनाना चाहिए कि वे अपनी प्रेमपूर्ण सेवाओं-से सीमाके उस पारके आक्रमणकारियोंको अपना मित्र बना सकें और उनकी हमला करनेकी इस आदतको छुड़वा सकें। यदि वे ऐसा कर पाते हैं तो वे भारतकी स्वाधीनताको तो प्राप्त करेंगे ही, सारे विश्वके आगे एक आदर्श प्रस्तुत कर देंगे।"

अपनी बातचीतमें उन्होंने खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँसे कहा, "मेरे मनमें यह दृढ़ विश्वास होता जा रहा है कि यदि हम पुलिस या सेनाकी सहायताके बिना, अपनी शक्तिका विकास करके सरहदके इन आक्रमणोंको नहीं रोक पाते तो इस प्रांतमें कांग्रेसकी सत्ता बनाये रखनेका कोई अर्थ नहीं है। जो स्थिति चल रही है, उसमें हमारी शक्ति उत्तरोत्तर क्षीण होती जायगी और अंतमें हमको निश्चित ही पराजित होना पड़ेगा। एक चतुर सेनापति पराजित होनेकी घड़ीतक किसी मोर्चेपर रुका नहीं रहता। वह किसी ऐसे स्थानपर लौट आता है जहाँपर, उसे विश्वास होता है कि वह डटा रहेगा।"

गांधीजीने आगे कहा, "कई सालोंसे, तभीसे जबसे कि हम लोग एक दूसरेसे मिले हैं, मेरा एक प्रिय सपना रहा है। वह यह कि मैं कबाइलियोंके इलाकेमें जाऊँ, सीधा काबुलतक बढ़ता जाऊँ और सीमाके उस पारकी जन-जातियोंमें घुल-मिलकर उनके मनोविज्ञानको समझनेकी कोशिश करूँ। हम लोग वहाँ साथ-साथ ही क्यों न चलें? हम उनके सामने अपना दृष्टिकोण रखें और उन कबा-इली लोगोंके साथ मित्रता और सहानुभूतिका सम्बन्ध स्थापित करें। मुझको इस बातका पूर्ण निश्चय हो चुका है कि सरहदकी समस्याके समाधानका केवल एक ही मार्ग है और वह मार्ग पूर्ण शांतिका है; उनको समझाकर सही रास्तेपर लानेका है। यदि हमारी खुदाई खिदमतगार संस्था वास्तवमें वैसी ही है, जैसा कि उसका

नाग है और जैसा उसे सचमुच होना भी चाहिए तो मुझे निश्चय है कि इस कार्यको हम आज ही आरम्भ कर सकते हैं। इसीलिए मैं यह जाननेको उत्सुक हूँ कि खुदाई खिदमतगारोंने अहिंसाको किस सीमातक समझा और ग्रहण किया है ? वे लोग कहाँ खड़े हैं और भविष्यमें मेरे तथा आपके कार्यकी रूपरेखा क्या होगी ?"

"दक्षिण अफ्रीकामें १३,००० ग्रामीण सत्याग्रहियोंकी एक छोटी-सी पट्टीने वहाँकी यूनियन सरकारकी एक बहुत बड़ी शक्तिका मुकाबला किया और वे उसके विरोधमें दृढ़ताके साथ जमे रहे। जनरल स्मट्स उन लोगोंको वहाँसे हटा न सके, जिस तरह कि उन्होंने ५०,००० चीनियोंको बिना किसी मुआवज़ेके सामान सहित वहाँसे निकाल दिया था। यदि हम अपने अहिंसाके मार्गसे भटक गये होते तो हमें कुचल देनेमें भी उनको कोई हिचक नहीं होती। फिर भला अहिंसात्मक ढंगसे प्रशिक्षित एक लाख खुदाई खिदमतगारोंकी सेना क्या नहीं कर सकती ?"

इसके पश्चात् उन्होंने खुदाई ख़िदमतगारोंके अधिकारियोंको सम्बोधित करते हुए कहा :

"हम लोगोंके लिए यह बड़े सौभाग्यकी बात है कि हमारे बीचमें बादशाह ख़ान जैसे सच्चे, ईमानदार और ईश्वरसे डरनेवाले पुरुष मौजूद हैं। उनके कहनेसे हज़ारों पठानोंने अपने शस्त्रोंको त्याग दिया है। इसे एक चमत्कार ही कहा जा सकता है। भविष्यमें क्या होगा यह कोई नहीं कह सकता। यह भी सम्भव है कि सब खुदाई ख़िदमतगार अपने नामके अनुरूप ईश्वरके सच्चे सेवक सिद्ध न हों। यदि उतनी छूट भी रखी जाय तो भी जो कुछ हुआ है, वह अपने-आपमें एक विलक्षण कार्य है। मैं आपसे यह अपेक्षा करता हूँ कि यदि कोई अपने अधीन करनेके लिए आपको अति यंत्रणाएँ भी दे तो भी आप प्रसन्न मुद्रासे यह अग्नि-परीक्षा दें। आप ईश्वरका नाम स्मरण करते हुए यह उच्चतम त्याग करें और उस त्यागके समय आपके मनमें भय, क्रोध अथवा प्रतिकारका चिह्नतक न हो। यह बहुत ऊँचे दर्जेकी वीरता होगी। तलवार लेकर युद्ध करना वीरता नहीं कही जा सकती। किसीको मारनेकी अपेक्षा स्वयं मरनेमें कहीं अधिक वीरता है। केवल वही सच्चा वीर है; मात्र वही सच्चे अर्थमें शहीद है जो निर्भय होकर मृत्युको वरण करता है और जो अपने शत्रुको तनिक-सी भी चोट पहुँचानेकी बात अपने मनमें नहीं लाता; वह नहीं जो कि दूसरोंको मारता और मरता है।

"हमारा देश यदि अपनी इस अधोगतिमें भी ऐसी वीरताको प्रदर्शित करता है तो यूरोपके सारे अनुशासन, विज्ञान और संगठनके बावजूद यह उसके लिए एक प्रकाश-पुन्जके सदृश होगा। मुट्ठीभर लोगोंका अपनेसे बड़ी शक्तिका सशस्त्र

मुकाबला करना यदि एक वीरतापूर्ण कार्य है तो शस्त्रहीन लोगोंका बहुसंख्यक सशस्त्र लोगोंके विरोधमें खड़ा होना निश्चय ही अधिक वीरतापूर्ण कार्य है। यूरोप यदि केवल इतना ही समझ लेता है तो वह अपनेको बचा लेगा और विश्व-के सामने एक ज्वलंत आदर्श प्रस्तुत करेगा।"

गांधीजीने ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँसे कहा कि वे अधिकसे अधिक ख़ुदाई ख़िदमतगारोंसे मुक्त रूपसे बातचीत करना चाहते हैं ताकि गांधीजी उनको पूरी तरह समझ सकें और वे लोग गांधीजीको। तदनुसार गांधीजीने उत्मंज़ईमें चार-सद्दा तहसीलके ख़ुदाई ख़िदमतगारोंके चार अधिकारियोंके साथ लगातार दो दिन-तक बातचीत की। उन्होंने पेशावरमें ख़ुदाई ख़िदमतगारोंके दूसरे दलके साथ चर्चा की। गांधीजीके प्रश्नोंका उत्तर देते हुए दोनों स्थानोंपर अधिकारियोंने उनको यह विश्वास दिलाया कि उनकी अहिंसापर पूर्ण निष्ठा है। उन्होंने यह घोषणा-तक की कि यदि असम्भव बातें सम्भव हो जायँ, ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँतक अहिंसाके पथको त्याग दें तो भी वे गांधीजी द्वारा सिद्ध किये गये अहिंसाके सिद्धान्तको नहीं छोड़ेंगे।

गांधीजीने उनसे कहा कि यद्यपि उन लोगोंका यह कथन सुननेमें अति साहसपूर्ण जान पड़ता है और उन्होंने जो कुछ कहा वह कभी सम्भव नहीं होगा तो भी वे उनके इस कथनको एक वचनके रूपमें स्वीकार कर रहे हैं।

गांधीजीने उनको अहिंसाके आशय और उसके गुण-धर्मके सम्बन्धमें अपनी संकल्पना विस्तारसे बतलायी। उन्होंने कहा : "जिस समय विरोधी शक्तिशाली और पूर्ण रूपसे शस्त्रसज्जित है, उस समय अहिंसाके निष्क्रिय रूपका पालन अपेक्षाकृत सरल है परन्तु जिस समय आप आपसमें व्यवहार करेंगे अथवा अपने देशवासियोंके साथ व्यवहार करेंगे और आपका दमनकारी अथवा प्रतिरोधकारी कोई बाह्य बल नहीं होगा, उस समय भी क्या आप अहिंसाका पालन करेंगे? दूसरे शब्दोंमें आपकी अहिंसा एक शक्तिशालीकी होगी अथवा एक दुर्बलकी? यदि आपकी अहिंसा एक शक्तिमान्‌की अहिंसा है तो शस्त्र-त्यागके बाद आप अपनेको अपेक्षाकृत अधिक सशक्त अनुभव करेंगे। यदि ऐसा नहीं है तो आपके लिए यही उचित है कि आप उन शस्त्रोंको पुनः धारण कर लें जिनको कि आपने स्वेच्छासे त्याग दिया था। एक शस्त्रहीन कायर होनेकी अपेक्षा यह कहीं अच्छा है कि आप एक शस्त्रधारी वीर योद्धा बनें।"

उन्होंने कहा, "मेरे और बादशाह ख़ानके विरुद्ध बहुधा यह आरोप लगाया जाता है कि हम लोगों सीमान्तके वीर और युद्धप्रिय लोगका अहिंसाका सन्देश

देकर भारत और इस्लामका एक अपकार कर रहे हैं। इन लोगोंका कहना है कि मैं आपकी शक्तिको समूल नष्ट करनेके लिए यहाँ आया हूँ। सीमाप्रान्त भारत में इस्लामके किलेका एक बुर्ज है, पठान लोग तलवार और राइफलके पुराने धनी हैं। मैं उनसे शस्त्रोंका त्याग कराकर उनको पुंसत्वहीन बनानेकी चेष्टा कर रहा हूँ और इस प्रकार इस्लामकी शक्ति और सुरक्षाके किलेको नष्ट कर रहा हूँ। मैं इस आरोपका पूरी तरहसे प्रतिवाद करता हूँ। मेरा विश्वास यह है कि अहिंसा के सिद्धान्तको सम्पूर्ण रूपमे स्वीकार करके आप वास्तवमें भारत और इस्लामकी अधिक सेवा कर सकते हैं, जो कि अभी मुझको खतरेमें पड़े हुए मालूम होते हैं। यदि आपने अहिंसाके बलको समझ लिया है तो शस्त्रोंके परित्यागके फलस्वरूप आपको स्वयंको अधिक शक्तिशाली अनुभव करना चाहिए। उस स्थितिमें आपकी शक्ति एक आत्मिक शक्ति होगी जिसके द्वारा आप न केवल इस्लामकी बल्कि संसारके सारे धर्मोंकी रक्षा कर सकेंगे। फिर भी यदि आप इस शक्तिके रहस्य को नहीं समझ सकते और शस्त्रोंके परित्यागके कारण अपनेको शक्तिशाली अनुभव करनेकी अपेक्षा पहलेसे दुर्बल अनुभव करते हैं तो आपके लिए यही अच्छा है कि आप अपनी अहिंसाकी प्रतिज्ञाको छोड़ दें। मैं यह कभी सहन नहीं कर सकता कि मेरे प्रभावके कारण एक भी पठान कायर अथवा दुर्बल मनोवृत्तिका व्यक्ति बने। इसकी अपेक्षा मैं यह कहीं अच्छा समझता हूँ कि आप आवेशमें भरकर अपने शस्त्रोंके पास लौट जायें।

"आज सिख कहते हैं कि यदि वे कृपाण छोड़ देते हैं तो उनका सब कुछ छूट जाता है। जान पड़ता है कि उन्होंने कृपाणको अपना धर्म बना लिया है। उनका विचार है कि उसका परित्याग करनेके पश्चात् उनमें एक दुर्बलता और कायरता आ जायगी। मैंने उनसे कहा कि यह आपका व्यर्थका भय है और यही बात मैं आपसे भी कहता हूँ। मैं कुरानको उसी मनोयोग और श्रद्धाके साथ पढ़ता हूँ जिससे कि मैं गीता पढ़ता हूँ। कुरानके अलावा मैंने इस्लामके अन्य महत्त्वपूर्ण ग्रन्थोंको भी पढ़ा है। मेरा यह दावा है कि मैं अपने मनमें इस्लाम तथा अन्य धर्मोंको वैसा ही आदर देता हूँ जैसा कि मैं अपने धर्मको देता हूँ। मैं साहसपूर्वक अपने इस दृढ़ मतको व्यक्त कर रहा हूँ कि यद्यपि तलवारको इस्लामके इतिहास में जोड़ दिया गया और वह भी धर्मके नामपर—तथापि इस्लामकी स्थापना तलवारके द्वारा नहीं हुई और न तलवारके नामपर उसका प्रसार ही हुआ। इसी प्रकार ईसाई धर्ममें भी तलवारका खुलकर प्रयोग किया गया परन्तु ईसाई धर्म उसके द्वारा नहीं फैला। यूरोपमें लाखों लोग धर्म-दीक्षा; बप्तिस्मा लेते हैं लेकिन

आज वे अपने ही धर्मके भाइयोंका रक्त बहाकर और उनकी हत्या करके उत्सव मना रहे हैं। यह ईसामसीहके उपदेशोंके सर्वथा विपरीत है और यह ईसाई धर्मको अस्वीकार करना है। यदि आप मेरी इन बातोंको ग्रहण कर लेंगे तो आपका प्रभाव आपकी इन सीमाओंके उस पार दूर-दूरतक फैल जायगा और आप यूरोपको एक मार्ग दिखलायेंगे।

"आज १७,००० अंग्रेज सैनिक हम लोगोंके ऊपर राज्य करनेकी सामर्थ्य रखते हैं क्योंकि उनके पीछे ब्रिटिश साम्राज्यका एक बल है। यदि खुदाई खिद-मतगार यह अनुभव करते हैं कि शस्त्र-त्यागके फलस्वरूप उनके अंतःकरणमें आत्मिक बलका एक ज्वार आ गया है तो मेरा कहना है कि भारतको अपनी स्वाधीनता पानेके लिए १७,००० मनुष्योंकी भी आवश्यकता नहीं होगी क्योंकि तब उनके पीछे एक ईश्वरीय शक्ति होगी। परन्तु इसके विपरीत यदि एक लाख मनुष्य बाहरी रूपमें तो अहिंसाको स्वीकार कर लेते हैं परन्तु उनके हृदयमें हिंसा छिपी रहती है तो उनकी यह संख्या शून्यके समान है। आपको तलवारका त्याग कर देना चाहिए क्योंकि आपने यह अनुभव कर लिया है कि वह आपकी शक्ति की नहीं अपितु आपकी दुर्बलताकी प्रतीक है; वह आपको सच्ची वीरता देसकने में असमर्थ है। यदि आप अपनी तलवार फेंक देते हैं परन्तु आपके हृदयमें तल-वार बनी रहती है तो आप ग़लत रास्तेपर चले जायँगे और आपका शस्त्र-त्याग आपकी किसी योग्यताको नहीं बढ़ायेगा बल्कि वह खतरनाक ही सिद्ध हो सकता है।'

'किसीके हृदयसे हिंसाके उन्मूलनका क्या अभिप्राय है?' गांधीजीने पूछा और स्वयं ही उसे समझाते हुए कहा कि 'वह केवल किसी व्यक्तिकी अपने क्रोधके ऊपर नियंत्रण करनेकी योग्यता नहीं है बल्कि हृदयसे क्रोधका मूलोच्छेद है। यदि एक डाकू मेरे हृदयमें क्रोध या भयकी भावनाको प्रेरित करता है तो इसका अभि-प्राय यह है कि मैं अपनेको अभीतक हिंसासे मुक्त नहीं कर पाया हूँ। अहिंसाके अनुभवका तात्पर्य यह है कि आपको अपने भीतर उसकी शक्ति अनुभव होने लगे; दूसरे शब्दोंमें वह आत्म-बल है; ईश्वरको जानना है। जिस व्यक्तिने ईश्वरको जान लिया है, उसके भीतर क्रोध या भयकी भावना प्रवेश नहीं कर सकती और न टिक ही सकती है, भले ही भय या क्रोधका निमित्त कितना ही बलशाली क्यों न हो?'

उन्होंने कहा कि किसी भी खुदाई खिदमतगारको सबसे पहले एक ईश्वरका पुरुष; मानवताका एक सेवक बनना पड़ेगा। उसके लिए उसको मन, वचन और

कर्मसे पवित्र होना पड़ेगा और एक ईमानदार उद्योगमें सतत रूपसे लगा रहना होगा क्योंकि मनकी पवित्रता और आलस्यका आपसमें कोई मेल नहीं है। अतः उनको किसी ऐसे हस्त-शिल्पको सीख लेना चाहिए जिसका कि वे अपने घरपर अभ्यास कर सकें। इसके लिए रुई ओंटना, सूत कातना और बुनना सबसे अच्छा है क्योंकि लाखों आदमियोंको केवल यही काम दिया जा सकता है और वे उसको अपने घरपर भी कर सकते हैं। "जिस व्यक्तिने तलवारका परित्याग कर दिया है उसको क्षणभरके लिए भी बेकार नहीं बैठना चाहिए। जैसी कि एक प्रसिद्ध कहावत है, 'बेकारका दिमाग़, शैतानका कारखाना होता है।' आलस्य आत्मा और बुद्धिका धीरे-धीरे क्षय कर देता है। जिस व्यक्तिने हिंसाको त्याग दिया है, उसे हर सांसके साथ प्रभुका नाम स्मरण करना चाहिए और अपने कार्यमें चौबीसों घंटे लगा रहना चाहिए।

"इसके अतिरिक्त प्रत्येक खुदाई खिदमतगारके पास अपनी आजीविकाका एक स्वतंत्र साधन अवश्य होना चाहिए। आप लोगोंमेंसे बहुतोंके पास भूमि है। आपकी भूमि आपसे छीनी जा सकती है लेकिन आपकी दस्तकारी या आपकी हाथकी कुशलता नहीं। यह सत्य है कि ईश्वर अपने सेवकोंको उनका नित्यका भोजन देता है परन्तु तभी जब कि वह मनुष्य उस भोजनके लिए श्रम करता है। प्रकृति-का यह नियम है कि यदि आप काम नहीं करेंगे तो आपको भोजना नहीं मिलेगा और यही नियम आपका भी होना चाहिए। आपने लाल कमीजको अपनी वर्दी बनाया है। मुझको यह आशा थी कि आपने खादीको भी अपनाया होगा जो कि स्वाधीनताकी वर्दी है। परन्तु मैंने आपमेंसे बहुत कम लोगोंको खादी पहने हुए देखा। शायद इसका कारण यह है कि आप लोगोंको अपनी वर्दी खुद ही बन-वानी पड़ती है और खादी महँगी मिलती है। यदि आप लोग अपने हाथसे सूत काता करते तो ऐसा नहीं होता।"

गांधीजीने उन लोगोंसे कहा कि उनको आगे हिन्दुस्तानी भी सीखनी चाहिए। इससे उनका मस्तिष्क विकसित होगा और उनका ज्ञान बढ़ेगा। उसे सीखकर वे बाहरी दुनियाके सम्पर्कमें आ सकेंगे। यदि वे लोग चाहें तो स्वास्थ्य-विज्ञान और प्राथमिक उपचारके सामान्य तत्त्वोंकी भी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं और सबसे अंतमें—यद्यपि यह छोटी बात नहीं है कि वे लोग सब धर्मोंके प्रति समान आदर और श्रद्धा रखनेकी वृत्तिको विकसित करें। उन्होंने अंतमें कहा, "लाल कमीज पहन लेनेसे कोई खुदाई खिदमतगार नहीं हो जाता और न अपने पदके अनुसार पंक्तिबद्ध खड़े होनेसे। खुदाई खिदमतगार बननेके किए यह आवश्यक है कि आप

अपने अंतःकरणमें एक ईश्वरीय शक्तिका अनुभव करें जो कि शस्त्र-बलके सर्वथा विपरीत है। वास्तवमें आप लोग अभी अहिंसाके द्वारतक आये हैं, फिर भी आपने इतना अधिक पा लिया है। उस समय आपकी कितनी बड़ी उपलब्धि होगी जब कि आप उसके पवित्र भवनके भीतर प्रवेश करेंगे ? परन्तु जैसा कि मैं आपको पहले बतला चुका हूं, इन सबके लिए एक पूर्व-तैयारी और प्रशिक्षणकी आवश्यकता है और हममें इन दोनोंकी कमी है।"

एक दिन खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ और गांधीजीमें निम्नांकित वार्तालाप हुआ :

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ : "यहाँ गाँवोंमें कुछ ऐसे पठान हैं जो खुदाई खिदमतगारोंको असह्य कष्ट पहुँचाते रहते हैं। वे उनको मारते हैं, उनकी ज़मीनें छीन लेते हैं और इसी तरहके और भी काम करते रहते हैं। हम उनके विरुद्ध क्या करें ?"

गांधीजी : "हमें उनके अहंकारका धैर्य और सहनशीलताके साथ सामना करना चाहिए। हमें उनकी क्रूरताका उसी ढंगसे सामना करना चाहिए जिस ढंगसे कि हम अंग्रेजोंका सामना किया करते हैं। हमको हिंसाका उत्तर हिंसासे और तिरस्कारका बदला तिरस्कारसे नहीं देना चाहिए और न अपने मनमें क्रोध-को आश्रय देना चाहिए। यदि हम ऐसा करेंगे तो निश्चय ही उनके हृदय पिघल जायँगे। इस उपायके असफल हो जानेपर हम उनके साथ असहयोग करेंगे। अगर वे खुदाई खिदमतगारोंकी ज़मीनें छीनेंगे तो हमारे लोग उनके यहाँ कोई काम नहीं करेंगे; भले ही हमारे आदमियोंको भूखसे मर जाना पड़े। हम उनके क्रोधका साहसके साथ सामना करेंगे लेकिन उनके अधीन होना स्वीकार नहीं करेंगे। हम अपने अंतःकरणके विरुद्ध कार्य नहीं करेंगे।"

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ : "क्या हमें इस बातकी अनुमति है कि हम उनके विरुद्ध पुलिससे शिकायत लिखायें और उनको दण्ड दिलायें ?"

गांधीजी : "एक सच्चा खुदाई खिदमतगार कभी कानूनकी अदालतमें नहीं जायगा। अदालतकी लड़ाई शारीरिक लड़ाई जैसी ही है। अन्तर यह है कि वहाँ दूसरा व्यक्ति आपके लिए बल-प्रयोग करता है। झगड़ा शुरू करनेवालेको पुलिस-से दण्ड दिलवाना प्रतिकारका ही एक स्वरूप है जिसे एक खुदाई खिदमतगारको कभी स्वीकार नहीं करना चाहिए। उदाहरणके लिए मैं आपको अपना एक व्यक्तिगत प्रसंग बतलाऊँ। सेवाग्राममें कुछ हरिजन मेरे पास आकर बोले कि मैं मध्यप्रान्तके मंत्रिमंडलमें एक हरिजन मंत्री शामिल करा दूँ अन्यथा वे अनशनके

जरिये सत्याग्रह करेंगे। मैं जानता था कि यह सब एक उपद्रवी व्यक्तिका काम है। पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्टको यह डर था कि उत्पाती लोग कुछ शरारत कर सकते हैं इसलिए वह वहाँ कुछ पुलिसके सिपाही नियुक्त कर देना चाहता था परन्तु मैंने उसे मना कर दिया। मैंने हरिजनोंसे कहा कि आपको धूप सहनेकी ज़रूरत नहीं है। आश्रममें जो भी कमरा आपको पसन्द आये उसे आप ले सकते हैं। उन्होंने मेरी पत्नीका कमरा पसन्द किया। मैंने उनको वही कमरा घेर लेने दिया। हम लोगोंने उनकी सारी ज़रूरतोंका ध्यान रखा और उनमेंसे एक व्यक्ति जब बीमार पड़ गया तब हमने उसकी परिचर्या की। इसका फल यह निकला कि वे लोग हमारे मित्र बन गये।"

१५ अक्तूबरको विश्रामका समय समाप्त हो गया और गांधीजी मरदान और नौशेराके भीतरी इलाकोंका दौरा करने चल दिये। यह दौरा अधिक दूरीका न था और इसके आयोजनमें इस बातका ध्यान रखा गया था कि गांधीजीपर एक-बारगी श्रम न पड़े। यह भ्रमण प्रचारकी 'बस' से किया गया। इस बसको नेहरूजीने खुदाई खिदमतगारोंकी विशेष मांगपर उनको प्रचार कार्यके लिए दान किया था। गांधीजी और खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ इसी मोटरगाड़ीसे अलकतरा-की सड़कपर बड़ी तेजीसे यात्रा कर रहे थे इसलिए सड़कके इधर-उधरके गाँवोंके सारे निवासी अपने घरोंके द्वार बन्द करके इन लोगोंकी एक झलक देखनेके लिए मार्गके किनारे आकर खड़े हो जाते थे। वे अपने अनुशासनके अनुसार शान्त खड़े रहते थे। अत्यंत उदारता, व्यवहारकी गरिमा और निस्पृह भावसे अलग रहनेकी प्रवृत्ति पठानोंकी अपनी विशेषताएँ हैं जो कि उनको प्रिय हैं। उनमें एक दुर्बलता भी है, वह है अतिथि-सत्कारमें उनका अति उत्साह। गांधीजी इस आतिथ्यसे घबड़ा गये होते परन्तु खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाको धन्यवाद है कि उन्होंने पहलेसे सावधानी बरती और समयपर अपील निकाल दी जिसके कारण इस आतिथ्यपर एक अंकुश बना रहा। केवल एक ही घटना इसका अपवाद कही जा सकती है। एक दिन जब गांधीजीको आकस्मिक रूपसे बाहर जाना पड़ा तब मुन्नत खान किसी गाँवके निवासियोंने उनको फल, गन्ने और सब्जियाँ भेंट कीं। वह उनकी आतिथ्य भावनाका एक संकेत मात्र था। उसे स्वीकार करनेके लिए गांधीजीको मोटरसे नीचे उतरना पड़ा। उन लोगोंने गांधीजीसे कहा :

"हमारी बड़ी इच्छा है कि आप हम लोगोंके बीचमें रहें और इस प्रान्तको अपना घर बना लें।" गाँवके प्रधान खानने कहा, "आपने हमारे बादशाहको देशके अपनी ओरके प्रान्तोंमें छः वर्षतक बन्दी बन कर रखा। हम आपको छः

मासतक तो अपने प्रेमका बन्दी बनाकर रख ही सकते हैं।" छोटे बच्चोंने आगे बढ़कर 'ग्रेमश' (आशा है कि आप थके नहीं होंगे) कहते हुए गांधीजीसे हाथ मिलाया।

१५ अक्तूबरको गांधीजीने नौशहरामें खुदाई खिदमतगारोंके अधिकारियोंकी एक बैठक बुलायी। उन्होंने गांधीजीसे कहा :

"आपने हमको अहिंसाका ऐसा शस्त्र प्रदान किया है जो इस्पात और पीतल के हथियारोंसे कहीं अधिक बढ़िया है। उसके लिए हम आपको धन्यवाद देते हैं।" उन्होंने गांधीजीको यह विश्वास दिलाया कि उनकी अहिंसापर पूरी निष्ठा है, जैसा कि उन्होंने सविनय अवज्ञाके आन्दोलनमें अपने व्यवहार द्वारा सिद्ध कर दिया है। उन्होंने गांधीजीको आश्वासन दिया कि उनका यह विश्वास कभी विचलित नहीं होगा। इसके उत्तरमें गांधीजीने कहा :

"आपने मुझको यह विश्वास दिलाया है कि आपने अहिंसाके सिद्धांतको पूरी तरहसे समझ लिया है और आप उसके ऊपर सदैव दृढ़ रहेंगे। मैं आपके कहनेपर विश्वास करता हूँ और इसके लिए आपको बधाई देता हूँ। मैं आपसे इसके आगे भी कुछ कहना चाहता हूँ। यदि आप इस सम्पूर्ण सिद्धान्तको कार्यरूपमें बदल सकते हैं तो आप एक इतिहासका निर्माण करेंगे। आपका दावा है कि सदस्य-सूचीके अनुसार खुदाई खिदमतगारोंकी संख्या एक लाखसे अधिक है। आज देश-भरमें कांग्रेसके जितने भी स्वयंसेवक हैं उनकी सम्मिलित संख्यासे भी यह संख्या अधिक है। आपने निःस्वार्थ भावसे सेवा करनेकी शपथ ली है। आपको कोई भत्ता नहीं मिलता और आपको अपनी वर्दी भी स्वयं ही बनवानी पड़ती है। आपकी संस्था एक ही समुदायके अनुशासित लोगोंका एक संगठन है। खान साहबके शब्द आपके लिए कानून हैं। आपने यह सिद्ध कर दिया है कि आपमें बिना प्रति-कारके आघात सहनेकी सामर्थ्य है परन्तु यह आपकी परीक्षाकी पहली सीढ़ी है, आखिरी नहीं। भारतकी स्वाधीनताके हेतु कष्ट-सहनकी क्षमता और अनवरत रूपसे कार्य करनेकी सामर्थ्यको साथ-साथ मिलकर काम करना होगा। स्वाधी-नताके एक सिपाहीके लिए जन-कल्याणके कार्य करना आवश्यक है।

"आपकी तथा एक साधारण फौजी सिपाहीकी समानता वर्दीके काटसे शुरू होती है और वहीं खत्म भी हो जाती है, या शायद उन पदोंतक जो आपने ग्रहण किये हैं। सेनाकी भाँति आपके यहाँ भी कर्नल और जी० ओ० सी० (जनरल ऑफिसर कमाण्डिग) हैं परन्तु उनके विपरीत आपके सारे क्रिया-कलाप हिंसापर नहीं बल्कि अहिंसापर आधारित हैं इसलिए आपका प्रशिक्षण, आपकी पूर्व-धार-

णाएँ, आपकी कार्य-पद्धति, यहाँतक कि आपके विचार तथा प्रेरणाएँ भी उनसे भिन्न होनी चाहिए। शस्त्र ग्रहण करनेवाले सैनिकको मारनेका प्रशिक्षण दिया जाता है। यदि वह स्वप्न भी देखता है तो संहारके। वह अपने शस्त्रोंको लेकर युद्ध करने, सैनिक सम्मान प्राप्त करने और युद्धक्षेत्रमें आगे बढ़नेके सपने देखता है। उसके लिए संहार एक कला बन गया है। जिस समय वह युद्ध नहीं कर रहा होता उस समय वह खाने-पीने, क़समें खाने या अपनी इच्छाके अनुकूल आमोद-प्रमोदमें समय व्यतीत करता है। परन्तु इसके विपरीत एक सत्याग्रही, एक खुदाई खिदमतगार सदैव किसी मौन सेवाके अवसरकी प्रतीक्षा करेगा और अपना सारा समय प्रेमके साथ श्रम करनेमें लगायेगा। उसके सपने संहारके नहीं होंगे बल्कि दूसरोंकी सेवा करते हुए अपने प्राण अर्पित करनेके होंगे। वह निष्कपट भावसे अपने साथके लोगोंके हितके लिए मृत्युतकको अङ्गीकार करेगा और यह स्वार्पण ही उसके लिए एक कला बन जायगा।

"लेकिन किस प्रकारका प्रशिक्षण आपको इस कार्यके योग्य बनायेगा?" उन्होंने प्रश्न किया और स्वयं ही इसका उत्तर भी दिया। उन्होंने कहा कि "खुदाई खिदमतगारोंके लिए रचनात्मक कार्यकी विविध शाखाओंका प्रशिक्षण ही सबसे अधिक उपयुक्त कार्य होगा। रचनात्मक अहिंसाके विज्ञानमें प्रशिक्षित एक लाख खुदाई खिदमतगारोंको लेकर सीमा-प्रान्तके आक्रमण एक बीते हुए युगकी वस्तु बन जायँगे। यदि आपके बीचमें चोरी या डकैतीकी एक भी घटना हो जाती है तो इसे आपको अपने लिए एक अत्यन्त लज्जाकी बात समझनी चाहिए। चोर और सीमाके उस पारके हमलावर भी मनुष्य ही हैं। वे इसलिए अपराध नहीं करते कि अपराध करना उनको प्रिय है बल्कि उनके जीवनकी आवश्यकताओं और अभावोंने ही उनको इस ओर ढकेल दिया है। इससे अच्छा और वे कुछ जानते ही नहीं। अबतक उनके साथ एक ही प्रकारका, यानी बलका व्यवहार किया गया है। किसीने उनको शत्रु समझकर शरण नहीं दी और उन्होंने भी किसीको नहीं दी। उनके विरुद्ध डा० खान साहब निरुपाय हैं क्योंकि शासनके पास भी उन लोगोंके लिए केवल यही व्यवहार शेष है। परन्तु अहिंसाके रास्तेसे समस्याको सुलझाया जा सकता है। मुझे विश्वास है कि जहाँ सरकार असफल हुई है वहाँ आप सफल होंगे। आप उनको कुटीर-उद्योगोंमें लगाकर अपनी भाँति ईमानदारीके साथ जीना सिखला सकते हैं। आप उनके बीचमें जा सकते हैं और उनके घर जाकर उनकी सेवाके कार्य कर सकते हैं। आप प्रेम तथा सहानुभूतिके साथ उनको सारी बातें समझा सकते हैं। जिस समय आप अपने तर्क, प्रेमपूर्ण

ढङ्गसे उनके सामने रखेंगे तो उन तर्कोंके प्रति उनका व्यवहार अमैत्रीपूर्ण नहीं होगा। इस समय आपके सामने दो मार्ग खुले हुए हैं—एक पशुबलका रास्ता जिसका प्रयोग किया जा चुका है और जिस तरीकेमें कमियाँ पायी गयी हैं और दूसरा शांतिका मार्ग। मैं समझ रहा हूँ कि आपने अपना मार्ग चुन लिया है। मेरी इच्छा है कि आप उसके लिए अपनेको योग्य सिद्ध करें।"

गांधीजी नौशहरामें कुछ घंटे रुके। वहाँसे वे शामको होती मरदान पहुँचे जो कि मरदान जिलेका प्रधान केन्द्र है। नौशहराकी भाँति होती मरदान भी एक छावनीका शहर है। स्वात, बुनेर, बाजोड़ और दीरके आस-पासके क्षेत्रोंमें निवास करनेवाली जन-जातियोंके यातायातका केन्द्र होनेके अतिरिक्त उसका एक सामयिक महत्त्व भी है।

गांधीजीके एक सामान्य प्रश्नके उत्तरमें एक खुदाई खिदमतगारने कहा कि हम लोग सब प्रकारकी उत्तेजना सह लेते हैं परन्तु यह नहीं सह पाते कि कोई उनके पूजनीय नेताओंका अपमान करे। गांधीजीने कहा कि अहिंसा कोई ऐसी चीज नहीं है जिसको टुकड़ोंमें स्वीकार अथवा अस्वीकार किया जा सके। उसका केवल तभी मूल्य है जब कि उसका अपने सम्पूर्ण रूपमें अभ्यास किया जाय। उन्होंने कहा, "जब सूर्य उगता है तब सम्पूर्ण विश्वमें उसकी इतनी उष्णता भर जाती है कि एक अन्धा आदमी भी सूर्यकी उपस्थितिको अनुभव करने लगता है। इसी प्रकार जब एक लाख खुदाई खिदमतगार अहिंसाकी भावनाको पूर्ण रूपसे ग्रहण कर लेंगे तब वह स्वयं ही अपनेको घोषित करेगी और प्रत्येक मनुष्य उसकी जीवनदायी सांसका अनुभव करेगा।"

गांधीजीने उन लोगोंसे दक्षिण अफ्रीकामें अपने और पठानोंके निकट सम्बन्धोंकी चर्चा की और टिप्पणी की, "मैं जानता हूँ, यह कठिन है। किसी भी पठानके लिए अपने सम्मानको नत करना हँसी-खेल नहीं है।" उन्होंने कहा कि "उनके पास अपनी एक परख है, जिसके सहारे वे लक्षण देखकर यह समझ लेंगे कि क्या वास्तवमें खुदाई खिदमतगारोंने अहिंसाकी भावनाको ग्रहण कर लिया है? क्या उन लोगोंने अपनी प्रेमपूर्ण निःस्वार्थ सेवाओंमें सबके; जिनमें सबसे नीचेके और सबसे निःसहाय लोग भी शामिल हैं, हृदयोंको जीत लिया है और क्या वे भयसे नहीं बल्कि प्रेमसे सब लोगोंका सहयोग प्राप्त कर सकते हैं और उनसे अपनी बातें मनवा सकते हैं? मैं पठानोंको तभीसे जानता हूँ जब कि मैं दक्षिण अफ्रीकामें था। मुझको उनके निकट सम्पर्कमें आनेका अवसर भी मिला है। कुछ पठान मेरे मुवक्किल थे। वे मुझको अपना 'मित्र, दार्शनिक और मार्गदर्शक' समझते थे,

जिसके ऊपर वे मुक्त रूपसे भरोसा करते थे। वे प्रायः मेरे पास आया करते थे और मेरे सामने अपने गुप्त अपराधोंको स्वीकार करते थे। वे कुछ रूखे, हर समय तैयार रहनेवाले थे। लाठी चलानेकी कलामें वे बड़े कुशल थे। वे बड़ी सरलता-से उत्तेजित हो जाते थे और दंगोंमें आगे बढ़कर भाग लेते थे। किसी मनुष्यके प्राण ले लेना उनके लिए साधारण बात थी। उसपर वे सोचते भी नहीं थे, जैसे कि कोई भेड़ या मुर्गी मार डाली। मुझको यह सुननेमें एक परी-कथा-सी लगती है कि इस प्रकारके लोगोंने एक व्यक्तिके आदेशपर अपने शस्त्रोंको त्याग दिया है और उनसे उत्कृष्ट अहिंसाके शस्त्रको ग्रहण कर लिया है। एक लाख खुदाई खिद-मतगार मन और वचनसे सच्चे अहिंसाव्रती बन जायँ और अपने हिंसापूर्ण अतीत-को वैसे ही फेंक दें जैसे कि एक सांप अपनी केचुली उतार फेंकता है तो यह एक चमत्कारसे कम नहीं है। इसीलिए मैं आपके इस आश्वासनपर कि आपका अहिंसामें विश्वास है सचेत रहनेको विवश हूँ। इस कारणसे ही मुझे अपने कथन-के प्रारम्भमें 'यदि' जोड़ना पड़ता है। मेरा यह संशय केवल कार्यकी कठिनताके कारण है, परन्तु वीर पुरुषके लिए कोई भी कठिनाई बहुत बड़ी नहीं होती और मैं जानता हूँ कि पठान लोग वीर हैं।"

इसके पश्चात् वे उन लक्षणोंकी व्याख्या करने लगे जिनके सहारे उनको खुदाई खिदमतगारोंकी अहिंसाको परखना था :

"क्या आपने अपने क्षेत्रके सब लोगोंको अपना मित्र बना लिया है और प्रत्येक व्यक्तिके मनमें अपने प्रति विश्वास उत्पन्न कर लिया है ? वे लोग आपका प्रेमसे आदर करते हैं या भयसे ? जबतक एक भी व्यक्ति आपसे डरता है तबतक आप एक सच्चे खुदाई खिदमतगार नहीं हैं। एक खुदाई खिदमतगार अपनी वाणी और व्यवहारमें सज्जन होगा। उसके नेत्रोंमें पवित्रताकी एक ऐसी ज्योति चमकने लगेगी कि उसे देखकर एक अजनबी, एक स्त्री और एक बच्चातक अपने अन्तर-की प्रेरणासे यह समझ लेगा कि यह व्यक्ति एक मित्र है, एक ईश्वरका पुरुष है जिसके ऊपर बिना मनमें शंका लाये हुए विश्वास किया जा सकता है। एक खुदाई खिदमतगार समुदायके समस्त वर्गोंका सहयोग प्राप्त करेगा, अपने प्रेमके बलपर लोगोंको आज्ञाएँ देगा और उसके इन आदेशोंका लोग अपनी इच्छा और अन्तर्प्रेरणासे पालन करेंगे; वैसे नहीं जैसे कि क्रूरताकी असीम शक्तिसे हिटलर या मुसोलिनीके आदेश मनवाये जा सकते हैं। जब मैं समझ लूँगा कि आपके प्रभाव-के कारण लोग धीरे-धीरे अपनी अस्वच्छताकी आदतोंको छोड़ते जा रहे हैं; शराबी मद्यका त्याग कर रहे हैं और अपराधी अपराधोंका तथा जनता खुदाई

खिदमतगारोंको अपना सहज रक्षक और विपत्तिका मित्र समझकर सब जगह स्वागत करने लगी है तब मैं यह जान लूंगा कि कमसे कम हम लोगोंके बीचमें ऐसे मनुष्योंकी एक संस्था तो है जिन्होंने वास्तवमें अहिंसाकी भावनाको ग्रहण कर लिया है। उस समय मैं समझूंगा कि भारतकी मुक्तिमें अब अधिक विलम्ब नहीं है।"

सबाबी तहसील खुदाई खिदमतगार आन्दोलनके प्रधान केन्द्रोंमें एक थी गांधीजीने वहाँ जो भाषण किया उसमें उन्होंने जेल जानेके लिए न्यायालयमें हाज़िर होनेवालोंको चेतावनी देते हुए कहा कि जो खुदाई खिदमतगार अपने हृदयमें क्रोधकी भावना लाये विना जेलके अपमान और उपेक्षाओंको न सह सकें उनके लिए यह बहुत अच्छा होगा कि वे खुदाई खिदमतगारोंकी वर्दीको त्याग दें। आप लोगोंने सैकड़ों और हज़ारोंकी संख्यामें जेलकी ओर कूच करके अपने उत्साहको सिद्ध कर दिया है। लेकिन इतना ही काफ़ी नहीं है। केवल जेलोंको भर देनेसे भारतकी आज़ादी नहीं आ जायगी। "चोर और अपराधी भी जेल जाते हैं परन्तु उनका जेल जाना उनकी कोई योग्यता नहीं है। वे पवित्र और निर्दोष व्यक्तियोंकी यातनाएँ ही हैं जिनमें कुछ अभिप्राय निहित होता है। यह अभिप्राय तब पूर्ण होता है जब अधिकारी यह समझने लगें कि केवल जेल ही वह स्थान है जहाँ कि वे सबसे पवित्र और सबसे निर्दोष नागरिकोंको रख सकते हैं और उनको ऐसा लगे कि कोई उनका हृदय-परिवर्तन करता जा रहा है। एक सत्याग्रही इसलिए जेलमें नहीं जाता कि वह अधिकारियोंको परेशान करेगा बल्कि इसलिए जाता है कि वह अपने निर्दोष आचरणके अनुभवोंसे उन लोगोंको बदल देगा। आप सब लोगोंको यह सिद्ध कर देना चाहिए कि जबतक जेल जानेके लिए आप अपनी नैतिक योग्यताका विकास नहीं कर लेते, जो कि सत्याग्रहका एक आवश्यक नियम है, तबतक आपका जेल जाना कोई अर्थ नहीं रखता। अंतमें वह आपको एक निराशा ही देगा। अहिंसाके उपासकमें यह क्षमता होनी चाहिए कि वह न केवल विना प्रतिहिंसा और क्रोधके जेल-जीवनके तिरस्कार और शारीरिक क्लेशोंको झेले बल्कि उसके मनमें क्लेश देनेवालोंके लिए एक दया हो। इसलिए आज मैं यह चाहता हूँ कि मेरे मन्तव्योंको दृष्टिमें रखते हुए आप अपना परीक्षण करें। यदि आपको ऐसा लगता है कि आप इनका पूर्ण रूपसे पालन नहीं कर सकते या नहीं करना चाहते तो मैं आपसे कहूँगा कि आप अहिंसाके इस बिल्लेको उतारकर रख दें और बादशाह खानसे प्रार्थना करें कि वे आपको आपकी शपथसे मुक्त कर दें। यह भी एक तरहकी वीरता होगी। परन्तु यदि

आपका अहिंसाके सिद्धान्तपर वैसी ही पूर्ण आस्था है जैसी कि मैंने अभी आपको बतलायी तो मैं आपको बतला दूँ कि परमात्मा परीक्षाकी घड़ीमें आपको सहारा देगा और आपको अपेक्षित शक्ति प्रदान करेगा।"

भाषणके अंतमें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके एक प्रश्नके उत्तरमें खुदाई खिद-मतगारोंने कहा : "हम यह स्वीकार करते हैं कि हम महात्माजीके अहिंसाके मानदण्डपर पूरे नहीं उतरते। अभीतक हम अपने हृदयोंसे क्रोधको मिटा देनेमें समर्थ नहीं हुए हैं। हम केवल यह कह सकते हैं कि हम अपनी कमियोंको अनुभव करते हैं। इन कमियोंको दूर करनेका हम पूरी ईमानदारीके साथ प्रयत्न करेंगे और उस आदर्शको प्राप्त करेंगे जो कि हमारे सम्मुख रखा गया है।"

इन सब चर्चाओंमें खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँने दुभाषियेका काम किया। उन्होंने सरल और ओजपूर्ण पश्तूमें उनका भाषान्तर किया। फिर उन्होंने अपनी ओरसे कहा : "मैं यह समझता हूँ कि अपने मनसे क्रोधको निर्मूल कर देना कठिन है परन्तु आपने ईश्वरको साक्षी देकर शपथ ली है। मानव प्रकृतिसे ही दुर्बल है परन्तु ईश्वर सर्वशक्तिमान् है। यदि आप अपनी शक्तिसे पूर्ण अहिंसाव्रती बननेके प्रयास करें तो आपके वे प्रयास असफल भी हो सकते हैं परन्तु यदि ईश्वर आपकी सहायता करेगा तो निश्चय ही आप सफल होंगे। यह हो सकता है कि आपको एकबारगी सफलता न मिले परन्तु आपका प्रत्येक प्रयत्न आपको अपने पथपर एक कदम ऊपर ले जायगा। आप साहसको न त्यागिये।"

तीन दिनके दौरेके पश्चात् गांधीजी विश्राम करनेके लिए तथा 'हरिजन' की टिप्पणियाँ लिखनेके लिए उत्मंज़ई लौट आये। अपने शान्त आवासमें वे दो दिनतक दौरेके सम्बन्धमें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके साथ चर्चा करते रहे और यह देखते रहे कि दोनोंकी धारणाओंमें कितना साम्य है ? खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कहा, "मेरी धारणा यह है कि जैसा उन्होंने स्वयं हमारे आगे स्वीकार किया है, ये लोग अभी कच्चे रंगरूट हैं और अहिंसाके मानदण्डपर पूरे नहीं उतरते। ये हिंसाको अपने हृदयोंसे अभी बिलकुल निर्मूल नहीं कर सके हैं। इनमें अभी कुछ चारित्रगत दोष भी शेष हैं। फिर भी इनकी सच्चाईमें सन्देह नहीं किया जा सकता। यदि इनको एक मौक़ा दिया जाय तो ये परिश्रमसे एक आकारमें ढाले जा सकते हैं और मेरा विचार है कि यह प्रयास करने योग्य है।"

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ अपने मनमें अत्यधिक उत्साह अनुभव कर रहे थे। उन्होंने कहा, "महात्माजी, वह देश, जो फल और अन्नकी दृष्टिसे इतना सम्पन्न है, इस धरतीपर मुस्कराता हुआ एक छोटा-सा अदन बन सकता था लेकिन

आज इसे चित्ती खाये डाल रही है। मेरी यह धारणा दिन-प्रतिदिन पक्की होती जा रही है कि किसी और चीज़की अपेक्षा हिंसाने ही हम पठानोंका सबसे अधिक विनाश किया है। हम लोगोंमें जो एक ठोसपन था, इसने उसे बिखेर दिया है और तुच्छ आंतरिक कलहोंके रूपमें इसे चीर डाला है। आज एक पठानकी सारी शक्ति यह सोचनेमें ही लग जाती है कि वह अपने भाईको कैसे हानि पहुँचा सकता है? यदि हम केवल इस अभिशापसे मुक्त हो जायें तो यह शक्ति कितने लाभकारी कार्योंमें लगायी जा सकती है। यह बात मेरे मनमें बैठ गयी है कि अहिंसात्मक आन्दोलन हमारे लिए एक ईश्वरीय वरदान है। अहिंसाके मार्गके अतिरिक्त हम पठानोंके लिए अन्य कोई मुक्ति-मार्ग नहीं है। मुझे इसके अद्भुत रूपान्तरणका जो अनुभव हुआ है उसीके आधारपर मैं आपसे यह कह रहा हूँ कि हमने अभी अहिंसाको एक लघु मात्रामें ग्रहण किया है लेकिन फिर भी उसने हमारे बीच कितना काम किया है। हम लोग पहले भीरु और आलसी थे। किसी अंग्रेजको देखते ही हम डर जाते थे। अपना समय व्यर्थ नष्ट करनेका हमारे निकट कोई मूल्य न था। आपके आन्दोलनने हम लोगोंमें एक नवजीवनका संचार किया है और हमें इतना उद्योगशील बना दिया है कि भूमिके जिस टुकड़ेमें पहले दस रुपयेकी पैदावार हुआ करती थी उसीमें अब उसके दुगुने मूल्यकी उपज हुआ करती है। हमने अपने मनसे भयको निकाल दिया है और अब हम किसी भी अंग्रेजसे अथवा उस कारणसे किसी मनुष्यसे नहीं डरते।"

उन्होंने इसकी एक घटना सुनायी, "सविनय आज्ञा-भंगके दिनोंमें एक अंग्रेज अधिकारी अपने सैनिक दलके साथ आया और उसने खुदाई खिदमतगारोंके जुलूस को भंग करनेका आदेश दिया। वह अपनी जेबमें धारा १४४ के अन्तर्गत निषेध-का एक आज्ञा-पत्र रखे हुए था परन्तु उसने किसीको वह नहीं दिखलाया क्योंकि वह हमपर दमन करना चाहता था। प्रदर्शनमें एक खुदाई खिदमतगार आगे-आगे राष्ट्रीय झंडा लिये चल रहा था। अंग्रेज अधिकारीने उसके हाथसे वह राष्ट्रीय झंडा छीनना चाहा परन्तु खुदाई खिदमतगारने उसके आगे आत्म-समर्पण नहीं किया। इसपर अंग्रेज अधिकारी क्रोधावेशमें आ गया और उसने सिपाहियों-को आदेश दिया, 'गोली चलाओ।' लाल कुर्तीवाले गोलियोंको झेलनेके लिए अपनी जगहपर अविचलित खड़े रहे। उनकी इस शान्तिपूर्ण दृढ़ताको देखकर वह आश्चर्यसे स्तब्ध रह गया। उसकी आगे बढ़नेकी हिम्मत न हुई। महात्माजी, यदि आपने उसकी उस समयकी हालत देखी होती! उसके मुँहसे आवाजतक न निकल रही थी। मैंने उसको यह कहकर ढाढस दिया कि हम लोग तो निःशस्त्र

हैं और उसे हम लोगोंसे डरनेकी कोई बात नहीं है । मैंने उससे यह भी कहा कि यदि उसने अपने अहंकार और बुद्धिहीनतासे गोली चलानेका आदेश देकर हमें नीचा दिखानेकी कोशिश न की होती और प्रारम्भमें ही हमें आदेश-पत्र दिखा दिया होता तो हम बड़ी खुशीसे जुलूसको भंग कर देते, क्योंकि हमारा इरादा आदेश भंग करनेका न था । उसका अभिमान टूट चुका था और वह अपने-आपको बहुत लज्जित अनुभव कर रहा था । अंग्रेज लोग हमारी अहिंसासे डरते हैं । वे कहते हैं कि एक अहिंसाव्रती पठान हिंसा करनेवाले पठानसे अधिक खतर-नाक होता है ।"

खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँ कहते जा रहे थे : "आपने अहिंसाके सिद्धान्तकी जिस प्रकारसे व्याख्या की है उसी प्रकारसे यदि हम उसे अंगीकार कर लें तो हम कितने अधिक शक्तिशाली हो जायें और हमारी दशामें कितना सुधार हो जाय ? हम विनाशके कगारपर खड़े हुए थे परन्तु ईश्वरने कृपालु होकर हमें इस अंतसे बचानेके लिए अहिंसात्मक आन्दोलन भेज दिया । मैं अपने यहाँके लोगोंसे कहता हूँ : आपके स्वराज्यके खाली नारे लगानेका क्या अर्थ है ? महात्माजीके दिख-लाये हुए रास्तेसे यदि आपने सब प्रकारके भयोंसे मुक्त होना सीख लिया, और यदि आप शारीरिक श्रमके द्वारा सच्चाईसे अपनी स्वतंत्र जीविका कमाने लगे तो आपको तो आपका स्वराज्य मिल गया ।"

गांधीजीने खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँको सुझाव दिया कि यदि आपको अहिंसा-के संतोषजनक परिणाम प्राप्त करने हैं तो आपको खुदाई खिदमतगारोंसे रचना-त्मक अहिंसाके प्रशिक्षणके कठिन पाठ्यक्रमको पूरा कराना ही होगा । खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँ उत्मंज़ईके पासके गाँव मर्वण्डीमें खुदाई खिदमतगारोंका एक प्रशिक्षण-केन्द्र और आवास-गृह स्थापित करनेका पहलेसे निश्चय कर चुके थे । अब यह निश्चय हुआ कि इन प्रवृत्तियोंके अलावा उत्मंज़ईमें भी कताई और बुनाईका एक केन्द्र शुरू किया जाय । गाँवके वे लोग, जिनके पास समय है, समवर्गी विधियोंके सहित कताई और बुनाईकी सभी कलाओंको सीखें । ये शिक्षार्थी खुदाई खिदमतगार ही हों यह आवश्यक नहीं है । 'महात्माजी, मेरा विचार उत्मंज़ईको एक आदर्श ग्राम बना देनेका है ।' उन्होंने गांधीजीको अपनी बात समझाते हुए कहा : "कताई-बुनाई केन्द्र ग्रामीण जनताके लिए एक प्रकारकी स्थायी प्रदर्शनी होगा । खुदाई खिदमतगारोंके आश्रममें हम उनके आगे आत्म-निर्भरताका एक आदर्श रखेंगे । हम केवल वही वस्त्र पहनेंगे जिसका कि हम स्वयं उत्पादन करेंगे; हम केवल वही फल और सब्जियाँ खायेंगे जिनको हम स्वयं अपने यहाँ उगायेंगे ।

यहाँ हम दूधके लिए एक छोटीसी डेरी खोलेंगे। जिस वस्तुका हम स्वयं उत्पादन नहीं कर सकेंगे, उसका हम प्रयोग नहीं करेंगे।"

गांधीजीने उनकी बातपर टिप्पणी की: "मैं आपको इसके अलावा एक सुझाव और दूँगा। खुदाई खिदमतगारोंके लिए आप जो झोंपड़ियाँ बनवायें, उनको तैयार करनेमें स्वयं हिस्सा लें, स्वयं श्रम करें।" "मेरा भी यही विचार है।" खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने कहा।

कार्यकर्त्ताओंके पहले दलको समुचित रूपसे प्रशिक्षित करनेके लिए गांधीजीने यह सुझाव दिया कि "कुछ खुदाई खिदमतगारोंको वर्धा भेजा जा सकता है, जहाँ कि वे खादीके विज्ञानमें निपुण होनेके अतिरिक्त प्राथमिक उपचार और स्वास्थ्य-विज्ञान, सफ़ाई, गाँवोंके उत्थानका कार्य और हिन्दुस्तानीकी प्रारम्भिक शिक्षा भी ग्रहण कर सकते हैं। वहाँ वे बुनियादी तालीमकी शिक्षा भी प्राप्त कर सकते हैं ताकि वे यहाँ वापस आकर सामूहिक शिक्षाका कार्य अपने हाथोंमें ले सकें। परन्तु यह कार्य तबतक प्रगति नहीं कर सकेगा जबतक आप इस दिशामें स्वयं उनका नेतृत्व न करेंगे और आप स्वयं इन सब बातोंमें कुशलता प्राप्त नहीं कर लेंगे।"

'और सबसे अंतमें', गांधीजीने कहा, "यदि आप अपने आश्रममें समयकी पाबन्दीका नियम लागू नहीं करेंगे तो आपका कोई कार्य नहीं हो सकेगा। वहाँकी एक नियमित दिनचर्या होनी चाहिए और जागनेका, सोनेका, खाना खानेका, काम करनेका और आराम करनेका एक निश्चित समय होना चाहिए। इन नियमोंका कठोरताके साथ पालन होना चाहिए। मैं समयकी नियमितताको सबसे अधिक महत्त्व देता हूँ। वास्तवमें वह अहिंसाका ही एक उप-सिद्धान्त है।"

इसके बाद वे लोग सीमाके उस पारके हमलोंकी समस्यापर चर्चा करने लगे। प्रश्न यह था कि खुदाई खिदमतगार उनको रोकनेके मिशनको किस प्रकार कार्यान्वित करें। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँका विचार यह था कि वहाँ पुलिस और फ़ौज रहनेके कारण यह काम बहुत कठिन हो गया है। वे पूरी तरहसे लोकप्रिय सरकारके नियंत्रणमें नहीं हैं और उनकी उपस्थितिने वहाँ दुहरे शासनकी सारी बुराइयाँ पैदा कर दी हैं। "अधिकारी हमारे साथ पूरे हृदयसे सहयोग करें और यदि वे ऐसा न करें तो किसी एक ज़िलेसे पुलिस और सेनाकी शक्तिको खींच लें। उस ज़िलेमें हमारे खुदाई खिदमतगार शान्ति-व्यवस्था अपने हाथोंमें ले लेंगे।"

परन्तु गांधीजी इससे सहमत नहीं थे। "मैं यह स्पष्ट रूपसे स्वीकार करता

हूँ कि मैं अधिकारियोंसे किसी हार्दिक सहयोगकी अपेक्षा नहीं करता। हमारे उद्देश्यपर न सही, वे हमारी योग्यतापर भरोसा नहीं करेंगे। उनसे यह अपेक्षा करना कि वे हमारे विश्वासपर अपनी पुलिसको हटा लेंगे, उनसे अत्यधिक आशा करना है। अहिंसा एक विश्वव्यापी सिद्धान्त है और उसकी प्रवृत्ति किसी प्रतिकूल वातावरणके द्वारा संकुचित नहीं होती। हमारी अहिंसाकी सफलता यदि अधिकारियोंकी कृपापर निर्भर होगी तो वह वस्तुतः एक पोली, निःसार वस्तु होगी जिसका कुछ भी मूल्य नहीं होगा। हम जनताके ऊपर पूरा नियंत्रण रख सकते हैं और उस स्थितिमें पुलिस और फौज हमें कोई हानि नहीं पहुँचा सकती। इसके पश्चात् उन्होंने प्रिंस ऑफ वेल्सके आगमनके समयमें हुए बम्बईके दंगेका उल्लेख करते हुए कहा कि जब कांग्रेसने तत्काल स्थितिको अपने काबूमें कर लिया तब पुलिस और सेनाने समझ लिया कि यहाँ अब हमारा कोई काम नहीं रहा।"

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने उन्हें बीचमें टोककर कहा, "लेकिन कठिनाई तो यह है कि हमलावरोंमेंसे अधिकांश दुश्चरित्र हैं जिनको कि ब्रिटिश भारतसे निष्कासित कर दिया गया है। इन लोगोंके साथ हम सम्पर्क भी कायम नहीं कर सकते क्योंकि अधिकारी मुझे या हमारे कार्यकर्त्ताओंको उस कबाइली क्षेत्रमें जानेकी अनुमति नहीं देंगे।"

गांधीजीने अपनी बातको स्पष्ट किया : "वे अनुमति देंगे और मैं कहता हूँ कि उनको अनुमति देनी ही होगी परन्तु इसके लिए हमको खुदाई खिदमतगारोंकी संस्थाको वास्तवमें, सच्चे ईश्वरके सेवकोंका दल बनानेकी आवश्यकता है; ऐसे लोग जिनके लिए अहिंसा एक जीवन-श्रद्धा हो। अहिंसा एक बहुत ऊँचे दर्जेका सक्रिय सिद्धान्त है। वह आत्मिक बल है अथवा वह हममें विद्यमान परमात्माकी शक्ति है। अपूर्ण मानव उस दिव्य सारको, उसको समग्र रूपमें ग्रहण कर सकनेमें समर्थ नहीं है। वह उसकी पूर्ण ज्योतिको सहन भी नहीं कर सकता। लेकिन जब उसका एक अति लघु अंश भी हमारे भीतर सक्रिय हो जाता है तब वह आश्चर्यजनक कार्य करके दिखलाता है। आकाशमें स्थित सूर्य अपनी जीवनदायी ऊष्मासे ब्रह्मांडको भर देता है लेकिन यदि कोई उसके बहुत निकट चला जायगा तो वह उसको जलाकर भस्म कर देगा। यही बात परमात्माके साथ भी है। जिस सीमातक हम अहिंसाका अनुभव करते हैं, उस सीमातक हम ईश्वर-तुल्य हो जाते हैं परन्तु हम पूर्ण ईश्वर कभी नहीं हो सकते। अहिंसा क्रियाशील रेडियमके समान है। उसका एक अति लघु अंश, जिसमें दुर्दम्य वृद्धि छिपी है, निरन्तर,

मौन, अदृश्य रूपमें तबतक अपना कार्य करता रहता है जबतक कि वह समस्त रोगयुक्त तन्तु-समूहको स्वस्थ नहीं बना देता। इसी प्रकार अहिंसाका एक लघु अन्तःकण भी अदृश्य, अनवरत रूपसे अपना सूक्ष्म कार्य करता रहता है और पूरे समाजमें खमीर उठा देता है।

"वह अपने कार्यमें आत्म-निर्भर है। आत्मा मृत्युके बाद भी टिकी रहती है। उसका अस्तित्व भौतिक देहपर निर्भर नहीं है। ठीक इसी प्रकार अहिंसा या आत्मिक बलको भी अपने प्रसार या प्रभावके हेतु भौतिक साधनोंकी आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। वह उनसे स्वतंत्र, अपना कार्य करता रहता है। वह देश और कालका अतिक्रमण कर जाता है।

"और इसलिए इसका परिणाम यह होता है कि अहिंसा यदि किसी एक स्थानपर सफलताके साथ प्रतिष्ठित हो जाती है तो उसका प्रभाव सर्वत्र फैल जाता है। जबतक उत्मंजईमें डकैतीकी एक भी घटना होती है तबतक मैं यह कहूँगा कि हमारी अहिंसा सच्ची नहीं है।

"अहिंसाका आचरण इस मूल सिद्धान्तपर आधारित है कि जो तुम्हारे अपने लिए भला है वह समस्त विश्वके लिए समान रूपसे भला होगा। समस्त मानव-जाति सार-रूपमें समान है। जो कुछ मेरे लिए सम्भव है, वह प्रत्येक व्यक्तिके लिए सम्भव है। तर्ककी इसी रेखापर आगे बढ़नेसे मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि यदि मैं किसी ग्राम-विशेषकी विभिन्न समस्याओंका अहिंसात्मक ढंगसे हल खोज लेता हूँ तो उससे मुझे जो सीख मिलेगी, वह मुझे भारतकी उसी प्रकार की समस्त समस्याओंको अहिंसात्मक ढंगसे सुलझानेके योग्य बनायेगी।

"और इसलिए मैंने सेवाग्राममें स्थायी रूपसे रहनेका निश्चय कर लिया है। सेवाग्राममें मेरा प्रवास मेरे लिए एक शिक्षा रहा है। वहाँ हरिजनोंसे मुझे जो अनुभव मिला है उसने मुझे हिन्दू-मुस्लिम समस्याका एक आदर्श समाधान दिया है। इस समाधानको समझौतोंकी ज़रूरत नहीं है। और इसलिए यदि आप उत्मंज़ईमें सब कुछ ठीक कर लेते हैं तो आपकी सारी समस्या सुलझ जायगी। यहाँतक कि आपके और अंग्रेजोंके इन सम्बन्धोंका रूप भी बदल जायगा। वे निर्मल; निष्कपट हो जायँगे, यदि हम उनको यह बतला सकें कि हमें वास्तवमें उनकी उस सुरक्षाकी आवश्यकता नहीं है जिसके लिए उन्होंने पुलिस और सेनाका इतना दिखावा खड़ा कर रखा है।"

परन्तु खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खांके मनमें एक सन्देह था। प्रत्येक गाँवमें कुछ ऐसे स्वार्थी और शोषक तत्त्व हैं जो अपने स्वार्थोंको पूरा करनेके लिए किसी भी

सीमातक जानेके लिए तैयार हैं । क्या उनकी बिलकुल उपेक्षा करके आगे बढ़ा जाय या उनको भी सुधारनेकी दिशामें प्रयत्न किये जायँ ?

"उनमेंसे कुछको अन्तमें छोड़ा जा सकता है ।" गांधीजीने कहा, "लेकिन हमें किसीको सर्वथाके लिए त्याज्य नहीं समझना होगा । हमारी कोशिश यह होनी चाहिए कि बुरे काम करनेवाले व्यक्तिके मनोविज्ञानका भी अध्ययन करें । बहुत बार वह परिस्थितियोंका शिकार भी होता है । धैर्य और सहानुभूतिके रास्तेसे हम उन लोगोंमेंसे कुछको तो न्यायके पक्षमें ला ही सकते हैं । इसके अतिरिक्त हमें यह बात भी न भूलनी चाहिए कि भला ही स्वेच्छासे या किसी दबावसे बुरेको प्रश्रय देता है । केवल सत्य ही आत्म-पोषित है । अंतिम प्रयोगके रूपमें हम दुष्कर्मी व्यक्तिसे अपना सारा सहयोग हटाकर और उसको बिलकुल अकेला छोड़कर उसकी बुराईकी शक्तिका अवरोध कर सकते हैं ।

"यह सार-रूपमें अहिंसात्मक असहयोगका सिद्धान्त है । इसके लिए यह अति आवश्यक है कि यह मूल रूपसे प्रेमकी भावनासे प्रेरित होकर किया जाय । इसका उद्देश्य विपक्षीको दण्ड देना नहीं है और न उसको किसी प्रकारका आघात पहुँचाना ही है । यहाँतक कि जब हम उससे असहयोग करें तब भी उसे हम यह अनुभव कराते रहें कि हममें उसके प्रति मैत्रीकी भावना है । जब भी हमारे लिए सम्भव हो या जब भी हमें अवसर मिले हम मानवीयताके साथ उसकी सेवा करके उसके हृदयतक पहुँचनेका प्रयत्न करते रहें । वास्तवमें अहिंसाका वैज्ञानिक परीक्षण यही है कि अहिंसाका द्वन्द्व अपने पीछे कोई द्वेषभाव न छोड़े और अन्तमें शत्रु मित्रमें बदल जायँ । दक्षिण अफ्रीकामें जनरल स्मट्सके साथ मेरा यही अनुभव रहा । प्रारम्भमें वे मेरे घोर विरोधी और आलोचक थे । आज वे मेरे स्नेही मित्रोंमेंसे एक हैं । लगातार आठ वर्षतक हम एक-दूसरेके विपक्षी रहे । लेकिन वे ही थे जो दूसरी बार गोलमेज़ परिषद्में व्यक्तिगत और सार्वजनिक रूपमें मेरे पक्षमें रहे और जिन्होंने मुझे पूरा सहारा दिया । ऐसी ही अनेक घटनाएँ हैं । मैं तो केवल एक ही आपको बतला रहा हूँ ।

"समय परिवर्तित होता है और प्रणालियाँ नष्ट हो जाती हैं परन्तु मेरा विश्वास है कि केवल अहिंसा और उसपर आधारित समस्त वस्तुएँ अन्ततक टिकी रहेंगी । उन्नीस सौ वर्ष बीते जब कि ईसाई धर्म जन्मा था । ईसामसीहका प्रभावकाल तो केवल तीन अत्यल्प वर्षोंका रहा । उनके अपने समयमें भी उनकी शिक्षाओंको गलत ढङ्गसे समझा जाता रहा । उनकी शिक्षाका मूल है, 'अपने शत्रुको प्यार करो ।' लेकिन आजकी ईसाइयत उसे स्वीकार नहीं कर रही है,

लेकिन एक व्यक्तिकी शिक्षाके मूल सिद्धांतके प्रसारके लिए १९०० वर्ष होते ही कितने हैं ?

"इसके बाद छः शताब्दियोंने करवट ली और मञ्चपर इस्लाम प्रकट हुआ। बहुतसे मुसलमान मुझे यह कहनेकी इजाजत भी न देंगे कि इस्लाम, जैसा कि उसका शब्दार्थ है, पवित्र शान्ति है। कुरानका अध्ययन करनेसे मुझे यह पूरा विश्वास हो गया कि इस्लामका मूलाधार हिंसा नहीं है। लेकिन यहाँ भी वही बात है। समयके चक्रमें तेरह सौ वर्ष एक लघु बिन्दुके समान हैं। मुझे इस बातकी पूरी प्रतीति हो चुकी है कि जिस हदतक इन दोनों महान् धर्मोंके अनुयायी अहिंसा-की मूल शिक्षाको ग्रहण करेंगे, उसी सीमातक ये दोनों सजीव रहेंगे परन्तु यह केवल बुद्धिसे पकड़नेकी बात नहीं है। इसे मनमें गहरा पैठना चाहिए।"

सुनहला पुल

१९३८

अगले सप्ताहमें कोहाट, वन्नू और डेरा इस्माईल खांके श्रमपूर्ण दौरेका व्यस्त कार्यक्रम रहा। नित्य पिछले दिनसे सफ़रकी दूरी बढ़ जाती थी। मोटरकी यात्रा अब अधिक थकान पैदा करने लगी थी। गांधीजी पेशावर और मरदानके शुद्ध पख्तू भाषी ज़िलोंसे, जिनको 'लाल कुर्तीवालोंके ज़िले' कहा जाता था, ज्यों-ज्यों दक्षिणकी ओर बढ़ते जा रहे थे त्यों-त्यों उनको कोलाहलपूर्ण और कम अनुशासित भीड़ें मिलती जा रही थीं। इस शोर-गुलके कारण सार्वजनिक सभाओंमें उनके ऊपर और भी ज़ोर पड़ रहा था। गांधीजीने केवल खुदाई खिदमतगारोंकी सभाओंमें चर्चा करना अधिक पसन्द किया होता लेकिन उनको खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके अनुनय और अनुरोधके आगे झुकना पड़ा, जो रमजानके व्रतके बावजूद स्वयं भी विश्राम नहीं ले रहे थे।

कोहाटसे चलनेसे पहले खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने यह निश्चय किया कि उनके साथ खुदाई खिदमतगारोंकी एक टोली भी रहेगी। वह शेष दौरेमें गांधीजीके साथ चलेगी। कोहाट ज़िला सीमा-प्रान्तके हृदय भागमें पड़ता है। कोहाटका शहर और छावनी, जो तहसीलके पश्चिमके भागमें हैं, पेशावरसे चालीस मील की दूरीपर उस सड़कपर हैं जो कोहाट दर्रेके अफरीदियोंके इलाकेमेंसे होकर गुजरती है। कोहाटका दर्रा खैबरके दर्रे जितना लम्बा नहीं है परन्तु उसका धरातल खैबरसे विषम है और उसका प्राकृत सौन्दर्य खैबरकी अपेक्षा चित्तको अपनी ओर अधिक आकर्षित करता है।

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ इस भू-खण्डके प्राकृतिक दृश्योंकी रमणीयताको मुग्ध होकर देखते जा रहे थे। सहसा नीचे घाटीमें एक छोटी-सी सादी स्वच्छ झोपड़ीकी ओर इशारा करके वे बोल उठे, 'देखिए, यह रहा अजब खाँका मकान।' गांधीजीके निजी सचिव श्री प्यारेलालने पूछा, 'कौन अजब खाँ? मोली एलिसका अपहरण करनेवाला? वह कुख्यात व्यक्ति जिसे कानूनने अपनी रक्षासे वंचित कर दिया और जिसने सीमाप्रान्तमें फांसीकी तख्तीपर अपने अपराधका दण्ड पाया?' खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ हँसे, 'मर गया? फांसी चढ़ गया? नहीं तो, वह तो अभीतक जीवित है और तुर्किस्तानकी सीमापर जाकर कहीं बस गया है। वह

कोई दुष्ट व्यक्ति भी नहीं था।' इसके बाद उन्होंने अजब खाँकी सारी घटना सुनायी। यह कहानी उनको किसी ऐसे प्रत्यक्षदर्शीने सुनायी थी जो दोनों सम्बन्धित पक्षोंको अच्छी तरहसे जानता था। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँकी दृष्टिमें अजब खाँ एक निरपराध व्यक्ति था। अजब खाँ एक तोप खींचनेवाला था। उसके घरपर अंग्रेजी फ़ौजके एक मेजरने छापा मारा। "तुम और जो चाहो करो लेकिन अगर तुम जनानखानेकी ओर गये और तुमने किसी स्त्रीको स्पर्श किया तो आज मैं तुम्हारा हिसाब साफ़ कर दूँगा।' अजब खाँने मेजरको चेतावनी देते हुए कहा। मेजर हँसा और वह जनानखानेकी स्त्रियोंको बेपर्द करनेके लिए धृष्टतापूर्वक उस ओर बढ़ा। अजब खाँ अपने वचनका धनी निकला। पठानोंको हिसाब साफ़ करनेका जो एक ही तरीक़ा आता है, उसीसे मेजरका भी हिसाब तय कर दिया गया। पूरा वृत्तांत सुनाकर अंतमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने टिप्पणी की: "और मिस एलिस जबतक अजब खाँकी अभिरक्षामें रहीं तबतक उसने उनके साथ कैसा व्यवहार किया यह आप किसीसे भी पूछ सकते हैं। स्वयं मिस एलिसने इसकी साक्षी दी है। अजब खाँकी जगह कोई भी गोरा होता तो वह मोली एलिसको इससे अधिक इज्जतके साथ नहीं रख सकता था।"

उस दिन कोहाटमें कई प्रतिनिधिमंडलोंने आकर गांधीजीसे भेंट की। गांधीजीने उनके प्रति सहानुभूति दिखलाते हुए उन्हें आश्वासन दिया और कहा कि वे सम्बन्धित विषयोंपर पेशावरमें उनके मुख्य मंत्रीसे बातचीत करेंगे। २२ अक्तूबरको कोहाटके नागरिकोंकी ओरसे कोहाट जिला कांग्रेस समितिने गांधीजीको एक मान-पत्र भेंट किया। इस अवसरपर संध्याके समय नगरके बाहर एक रमणीक स्थानपर कई संस्थाओंकी ओरसे एक सार्वजनिक सभाका आयोजन किया गया था। अपनी मुलाकातोंमें विभिन्न प्रतिनिधिमंडलोंने गांधीजीके आगे अपनी जो कठिनाइयाँ उपस्थित की थीं, उनका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा, "आपकी कठिनाइयों और आपके कष्टोंसे परिचित होनेके लिए मैंने आपको एक घंटेसे अधिक समय दिया परन्तु आपके आगे मैं यह स्वीकार कर रहा हूँ कि मैं अब इन मामलोंको अपने हाथोंमें लेनेके योग्य नहीं रह गया हूँ। एक ओर मेरे ऊपर धीरे-धीरे बुढ़ापा घिरता आ रहा है और दूसरी ओर मेरे ऊपर तरह-तरहकी जिम्मेदारियाँ भी आती जा रही हैं। मुझे इस बातका भय है कि यदि मैंने एक साथ ही बहुतसे मामलोंको अपने हाथोंमें ले लिया तो मैं अपनी अपेक्षाकृत महत्त्वपूर्ण ज़िम्मेदारियोंको न्यायोचित रूपसे पूरा नहीं कर पाऊँगा। इन सबमें भी मैं खुदाई खिदमतगारोंकी ज़िम्मेदारीको अपनी सबसे बड़ी ज़िम्मेदारी समझ रहा हूँ। यदि

बादशाह खानके सहयोगसे मैं उसे पूरी तरहसे निबाह लेता हूँ तो मैं यह अनुभव करूँगा कि मेरे जीवनके अंतिम वर्ष व्यर्थ नहीं हुए।

"मुझे पूरी आशा है कि खुदाई खिदमतगार स्वराज्यके संग्रामके पूर्ण अहिंसा-व्रती सैनिक बन जायँगे। लेकिन यह बात सुनकर लोग मुझपर हँसते हैं। उनके उपहासका मेरे ऊपर कोई प्रभाव नहीं है। अहिंसा शरीरका नहीं बल्कि आत्माका एक गुण है। जब इसका केन्द्रीय अभिप्राय आपके अस्तित्वमें समाहित हो जायगा तो शेष समस्त स्वतः ही उसके पीछे चला आयेगा। खुदाई खिदमतगारोंकी मनुष्य-प्रकृति मेरी प्रकृतिसे अलग नहीं है। जब मैं किसी सीमातक अहिंसाका अभ्यास कर सकता हूँ तो मुझको विश्वास है कि खुदाई खिदमतगार भी इसका अभ्यास कर सकते हैं या कोई भी इसका अभ्यास कर सकता है। इसलिए हम सब मिलकर सर्वशक्तिमान् प्रभुसे प्रार्थना करें कि खुदाई खिदमतगारोंको लेकर मैंने जो सपना देखा है, वे उसको सच्चा बनायें।"

गांधीजीने खुदाई खिदमतगारोंके अधिकारियोंसे काफ़ी देरतक बातचीत की। इस चर्चामें गांधीजीने उनके मनमें यह बात बैठानेकी कोशिश की कि जिस मार्गको उन्होंने अपनाया है, वह बहुत कठिन है। वे बहुधा जो बात कहा करते थे उसीको उन्होंने फिर दुहराया कि अपनी सशस्त्र वीरताके लिए प्रख्यात पठान जिस दिन शस्त्रोंका परित्याग करके वास्तवमें अहिंसाको ग्रहण कर लेगा वह दिन भारत और विश्वके इतिहासमें एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण दिवस सिद्ध होगा। "आप जो कुछ भी कहिए, सारे भारतमें आज जन-साधारणकी दृष्टिमें पठान एक डर उत्पन्न करनेवाला व्यक्ति समझा जाता है। गुजरात और काठियावाड़के बच्चे पठानका नाम सुनते ही भयसे पीले पड़ जाते हैं। साबरमती आश्रममें हम लोग बालकोंको निडर बनानेकी शिक्षा दिया करते हैं लेकिन यह स्वीकार करनेमें मुझको लज्जा आती है कि अपने सारे प्रयत्नोंके बाद भी हम उन बालकोंके हृदयसे पठानका भय दूर करनेमें सफल नहीं हुए। बहुत चेष्टा करनेपर भी मैं आश्रम-की कन्याओंके मनमें यह बात न बैठा सका कि उनको पठानसे नहीं डरना चाहिए। उन्होंने अपनी निडरता दिखलानेकी कोशिश भी की परन्तु वह एक दिखावेकी; बाहरी वस्तु थी। अन्तरका विश्वास नहीं। साम्प्रदायिक दंगोंके दिनोंमें यदि उनको यह खबर लग जाती कि मुहल्लेमें अकस्मात् कोई पठान आ गया है तो वे घरसे बाहर निकलनेका साहस भी नहीं करती थीं। उनके मनमें यह भय घर कर गया था कि कहीं कोई उनका अपहरण न कर लें।"

"मैंने लड़कियोंसे कहा कि उनको अपहरण हो जानेपर भी भयकी आवश्य-

कता नहीं है। उस अवस्थामें उनको अपहरण करनेवाले व्यक्तिके आत्माभिमान और विवेकको जाग्रत करना चाहिए और उससे कहना चाहिए कि अपनी बहिन-के समान लड़कीसे अभद्र व्यवहार करना पुरुषोचित शौर्य नहीं है। उनकी इस प्रार्थनाके बाद भी यदि अपहरणकर्त्ता अपने कुत्सित इरादेको नहीं बदलता तो जैसा कि एक दिन सबको मरना ही है, वे भी अपनी जिह्वाको काटकर अपने जीवन का अंत कर सकती हैं। लेकिन यह निश्चित है कि किसी भी स्थितिमें उनको समर्पण नहीं करना है। लड़कियाँ बोलीं, 'आपका कहना सच है लेकिन ये सब हमारे लिए नयी बातें हैं। हमें अपने ऊपर इतना विश्वास नहीं है कि ऐसा अव-सर आ जानेपर हम यह कर भी सकेंगी।' जब आश्रमकी लड़कियोंके मनमें इतना भय है तो औरोंकी बात मैं क्या कहूँ? इसलिए जब मैं यह सुनता हूँ कि पठानोंमें खुदाई खिदमतगारोंकी एक ऐसी संस्था खड़ी हुई है जिसने कि हिंसाका पूर्ण रूपसे त्याग कर दिया है तब मैं यह नहीं समझ पाता कि इस बातके ऊपर विश्वास भी किया जाय या नहीं?"

इसके बाद गांधीजीने श्रोताओंसे प्रश्न किया कि हिंसाके त्यागका अर्थ क्या है और जिस पुरुषने हिंसाको अपने हृदयसे निकाल दिया है उसके लक्षण क्या हैं? फिर स्वयं उन्होंने कहा कि "नाम रख लेने या वर्दी पहन लेनेसे कोई खुदाई खिदमतगार नहीं हो जाता। उसके लिए अहिंसाके एक नियमित प्रशिक्षणकी आवश्यकता होती है। यूरोपमें, जहाँ कि लोगोंने मानव-हत्याके कार्यको एक उच्च पेशे जैसा गौरव दिया है, विनाशके विज्ञानको पूर्ण करनेके लिए करोड़ों रुपये व्यय किये जा रहे हैं। वहाँके सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिकोंको इस क्षेत्रमें आकर काम करने-को विवश किया जा रहा है। यहाँतक कि उनकी शिक्षा-पद्धति भी इसी बिन्दु पर केन्द्रित होती जा रही है। वे अपने विलास और शारीरिक सुखके साधनोंपर अपार धन-राशि व्यय किया करते हैं। ये वस्तुएँ उनके आदर्शका एक अंग बन गयी हैं। इसके विपरीत एक ईश्वरके पुरुष या खुदाई खिदमतगारका यह कर्त्तव्य होना चाहिए कि वह पवित्र रहे, उद्योगशील रहे और प्राणीमात्रकी सेवामें कठोर श्रम करे। आप अपने निकटके ईश्वरके प्राणियोंकी सेवा करते हुए यह भाँप सकते हैं कि आपने अहिंसामें कितनी प्रगति की है और अहिंसामें स्वयं कितनी शक्ति है? इस शक्तिको धारण करके एक अकेला व्यक्ति सारे संसारके मुकाबलेमें खड़ा हो सकता है। तलवारके बलपर यह सम्भव नहीं है।"

अबतक अहिंसा सविनय आज्ञा भंगकी एक पर्यायवाची रही है और अपने अहिंसात्मक तरीकेसे उसने इसका जुर्माना भी चुकाया है। गांधीजीने लोगोंसे कहा

कि मैं आप लोगोंसे यह कहना चाहता हूँ और यही बात मैं स्वाबीमें भी कह चुका हूँ कि यद्यपि अहिंसा सविनय आज्ञा-भंगके कार्यक्रममें सम्मिलित थी तथापि उसका मूल प्रयोजन एक नैतिक अधिकार अथवा एक योग्यता प्राप्त करना था जिसकी कि एक सत्याग्रहीसे पूर्व-अपेक्षा की जाती है। यह योग्यता अहिंसाका प्रशिक्षण लेनेवाले व्यक्तिके साथ प्रारम्भसे ही चलती है। सत्याग्रहकी लड़ाईमें सविनय आज्ञा-भंग अन्त है, प्रारम्भ नहीं। 'वह आखिरी कदम है, पहला नहीं।' उस समय जनताके मनमें सरकारके प्रति एक कातरतापूर्ण भय भरा हुआ था। उसको दूर करनेके लिए उन्होंने सत्याग्रह या सविनय आज्ञा-भंगका मार्ग अपनाया था। लेकिन वह एक तुरन्त असर डालनेवाली दवा थी। गांधीजीने कहा, "एक चिकित्सक, जो शक्तिशाली दवाओंको काममे लाता है, यह भली भाँति जानता है कि ऐसी दवाको ठीक किस स्थितिमें रोक देना चाहिए। जो ऐसा नहीं जानता वह धैर्य खो बैठता है। एक चिकित्सककी भाँति मैंने अप्रैल सन् १९३४ में सविनय आज्ञा भंगको तत्काल वापस ले लिया और उपयुक्त समयके लिए उसे केवल अपने लिए सीमित कर लिया। यह सब समय रहते हो गया। इसलिए मैं यह चाहता हूँ कि आप सविनय आज्ञा-भंगको कुछ समयके लिए भूल ही जायँ।" गांधीजीने बल देकर कहा। इसके बाद उन्होंने विस्तारके साथ यह बतलाया कि ईश्वरकी सेवा कैसे की जा सकती है। उन्होंने कहा कि हम ईश्वरके प्राणियोंकी सेवा करके ही उसकी सेवा कर सकते हैं। गांधीजीने कहा कि लोग इसे उनका एक अंधविश्वास कह सकते हैं परन्तु उन्होंने प्रत्येक कार्यके पीछे ईश्वरीय प्रेरणा खोजनेकी एक आदत बना ली है। उन्होंने कहा, "इसीलिए मैंने बादशाह खानके दिये गये नाम 'खुदाई खिदमतगार' में भी एक ईश्वरीय प्रेरणा देखी। उन्होंने आपको सत्याग्रही नहीं बल्कि ईश्वरका एक सेवक कहा।"

"लेकिन ईश्वरकी सेवा कैसे की जाय? वह तो अव्यक्त है, निराकार है और उसको किसी व्यक्तिगत सेवाकी आवश्यकता नहीं है। हम उसके रचे हुए प्राणियोंकी सेवाके द्वारा ही उसकी सेवा कर सकते हैं। उर्दूमें एक कविता है जिसका भाव यह है, 'मनुष्य कभी ईश्वर नहीं बन सकता लेकिन वह अपने मूलमें उसकी ईश्वरीयतासे अलग भी नहीं है।' हम अपने गाँवको ही अपना संसार बना लें। हम उसके निवासियोंकी जो सेवा करेंगे वही ईश्वरकी सेवा होगी। खुदाई खिदमतगारोंका कार्य होना चाहिए, बेकारोंको काम देकर, उन्हें उनकी बेकारीसे छुटकारा दिलाना, रोगियोंकी सेवा-शुश्रूषा करना, उनकी गन्दी आदतोंको छुड़ाना और उनको स्वच्छताके साथ सादा स्वस्थ जीवन बितानेकी शिक्षा देना। एक

खुदाई खिदमतगार इन सब कार्योंको करते समय यह सोचेगा कि वह ईश्वरकी ही सेवा कर रहा है अतः उसकी सेवा किसी वेतनभोगी कर्मचारीकी अपेक्षा अधिक श्रम और अधिक चिन्ताके साथ होगी।"

अन्तमें गांधीजीने कुछ व्यावहारिक सुझाव दिये। उन्होंने कहा, "एक खुदाई खिदमतगार अपने समयको ईश्वरकी एक अमानत समझे और अपने प्रत्येक मिनट-का कड़ाईके साथ हिसाब रखे। आलसीपन या निरर्थक कार्योंमें एक भी क्षण खोना ईश्वरके निकट एक पाप है। यह वैसा ही है जैसा कि चोरी करना। यदि किसी खुदाई खिदमतगारको भूमिका टुकड़ा भी मिल जायगा तो वह अपने लिए नहीं वल्कि निराश्रितों और जरूरतमन्दोंके लिए उसमें फल अथवा सब्जी उगा लेगा और इस प्रकार उसका उपयोग कर लेगा। यदि वह आलस्यमें घर-पर बैठा रहना चाहेगा और कुछ काम न करना चाहेगा क्योंकि उसके मां-बापके पास काफ़ी पैसा है और वह इस योग्य है कि बाज़ारसे खाने-पीनेकी सामग्री और सब्जियां खरीद सकता है तो उस समय वह अपने मनमें यह तर्क करेगा कि बाजारसे सामान लाना रोककर मैंने किसी ग़रीबको उसकी आयसे वंचित कर दिया और उस वस्तुको चुरा लिया जो कि ईश्वरकी है। एक खुदाई खिदमतगार किसी वस्तुको खरीदनेसे पहले अपने आपसे पूछेगा कि इसकी किसी अन्य मनुष्यको मुझसे अधिक तो आवश्यकता नहीं है? मान लीजिए कोई उसके आगे अनेक व्यंजनोंसे भरी हुई थाली लाकर रख देता है और संयोगवश उसी समय वहाँ कोई ऐसा आदमी आ जाता है जो भूखसे मर रहा है तो वह पहले उस व्यक्तिकी भूखकी ओर ध्यान देगा। वह पहले उसे खाना खिलायेगा और बादमें उस थालीमेंसे अपना भाग लेगा।"

कोहाटसे पश्चिममें छब्बीस मीलकी दूरीपर एक कस्वा हंगू है। वहीं तह-सीलका मुख्यालय भी है। गांधीजी दूसरे दिन वहाँ गये। वहाँ उनको एक मान-पत्र भेंट किया गया जिसमें यह कहा गया था कि भारतकी स्वाधीनताकी चाबी सीमाप्रान्तके पास है। गांधीजीने इस कथनसे सहमत होते हुए उसमें इतना और जोड़ दिया कि सीमाप्रान्तमें भी यह चाबी खुदाई खिदमतगारोंके पास है। उन्होंने कहा, 'जिस प्रकार गुलाब अपनी सुगन्धसे सारे वायुमंडलको भर देता है उसी प्रकार जब एक लाख खुदाई खिदमतगार वास्तवमें अहिंसाका व्रत ले लेंगे तो उसकी सुगन्ध समस्त भारतमें उत्तरसे दक्षिणतक और पूर्वसे पश्चिमतक फैल जायगी। वह दासताके उस रोगको नष्ट कर देगी जिससे यह सारा देश पीड़ित है।'

हंगूमें गांधीजीने खुदाई खिदमतगारोंकी एक सभामें भाषण किया। मार्गमें उनको नसरत खैलमें एक अभिनन्दन-पत्र भेंट किया गया था, जिसमें विगत स्वाधीनता संग्रामका उल्लेख किया गया था। गांधीजीने उसका ज़िक्र करते हुए कहा : 'मैं आप लोगोंसे यह कह देना चाहता हूँ कि सविनय आज्ञा-भंग आ भी सकता है और जा भी सकता है परन्तु हमारी स्वाधीनताका अहिंसात्मक आन्दोलन तबतक लगातार चलता रहेगा, जबतक कि इस देशको स्वतंत्रता नहीं मिल जाती। इस समय केवल उसका लक्ष्य बदल गया है।' उस अभिनन्दन-पत्रमें यह भी कहा गया था कि खुदाई खिदमतगार दमनके सामने नहीं झुके और न आगे झुकेंगे। गांधीजीने अपने भाषणमें उसका उल्लेख करते हुए कहा :

"मैं यह जानता हूँ कि नब्बे प्रतिशत भारतीय अहिंसाका केवल यही अर्थ समझते हैं, इसके अलावा कुछ नहीं। अपनी जगह यह ठीक है। इसमें एक वीरता है परन्तु आप लोगोंको और विशेष रूपसे खुदाई खिदमतगारोंके अधिकारियोंको यह स्पष्ट रूपमें समझ लेना चाहिए कि केवल यही पूर्ण अहिंसा नहीं है। यदि आपने वास्तवमें अहिंसाका अर्थ समझ लिया है तो आपके निकट यह बात स्पष्ट होनी चाहिए कि अहिंसा कोई ऐसा सिद्धांत या गुण नहीं है जो कि किसी विशेष अवसरपर उपयोगमें लाये जानेके लिए हो अथवा जो किसी विशेष दल अथवा वर्गके लिए व्यवहारमें लाये जानेके लिए हो। उसे तो हमारे अस्तित्वका एक अभिन्न अंग बन जाना चाहिए। हम अपने हृदयोंसे क्रोधकी भावनाको बिलकुल निर्मूल कर दें। यदि हम ऐसा नहीं करते तो फिर हममें और हमारे ऊपर अत्याचार करनेवालोंमें अंतर ही क्या रहेगा? क्रोधके कारण एक मनुष्य गोली चलानेका आदेश देता है, दूसरा किसीके लिए अपमानजनक भाषाका प्रयोग करता है और तीसरा लाठी चलाता है। मूलमें तीनों एक ही हैं। आपके भीतर क्रोध उपजे ही न, या वह आपके हृदयमें टिके ही न, तभी आप वास्तवमें यह दावा कर सकते हैं कि आपने हिंसाको निकाल फेंका है और तभी आप अपनेसे यह आशा रख सकते हैं कि आप अंततक अहिंसक बने रह सकेंगे।"

इसके पश्चात् गांधीजीने सविनय आज्ञा-भंग और सत्याग्रहके बीचके अन्तरको स्पष्ट किया, "हमारा सविनय आज्ञा-भंग या असहयोग अपनी प्रकृतिसे ही ऐसा न था कि उसका हमेशा व्यवहार किया जाता। लेकिन यह लड़ाई, जो कि आज हम अपनी रचनात्मक अहिंसाके द्वारा छेड़ने जा रहे हैं, प्रत्येक समयके लिए मान्यता रखती है, यही असली चीज़ है। मान लीजिए सरकार सविनय अवज्ञाकारियोंको गिरफ्तार करना रोक देती है। ऐसी स्थितिमें हमारा जेल जाना

भी रुक जायगा लेकिन इसका अर्थ यह नहीं होगा कि हमारी लड़ाई समाप्त हो गयी। एक सविनय आज्ञा-भंगकारी जेलके नियमोंका उल्लंघन करके वहाँके अधिकारियोंको तंग करनेके लिए जेल नहीं जाता। यह ठीक है कि जेलके भीतर भी सविनय आज्ञा-भंग किया जा सकता है परन्तु उसके लिए वहाँ कुछ निश्चित नियम हैं। मेरे कहनेका अभीष्ट यह है कि सविनय अवज्ञाकारीकी लड़ाई जेल जानेके साथ खत्म नहीं हो जाती। जब हम एक बार जेल चले जाते हैं तब जहाँ-तक बाहरी विश्वका सम्बन्ध है, उसके लिए हम नागरिक रूपसे मृत हो जाते हैं। उस समय सरकारकी दासताके बंधनमें बँधे हुए लोगों अर्थात् जेलके कर्मचारियों-के हृदय-परिवर्तनके लिए हमारी लड़ाई जेलके भीतर ही शुरू हो जाती है। यह लड़ाई हमें उनके आगे यह प्रदर्शित करनेका एक अवसर देती है कि हम लोग चोर और डकैतों जैसे नहीं हैं। हमारी इच्छा आपका अनिष्ट करनेकी नहीं है। हम अपने विपक्षीको नष्ट नहीं करना चाहते बल्कि उसे अपने एक मित्रके रूपमें बदल देना चाहते हैं। इसका अर्थ यह नहीं होता कि हम उनके सभी न्यायपूर्ण आदेशोंका दासकी तरह पालन करें। इस ढंगसे सच्ची मित्रता नहीं जुड़ती। उसके लिए हमें उनको यह प्रतीति करानी चाहिए कि हमारे मनमें उनके प्रति द्वेषकी कोई भावना नहीं है बल्कि हम उनके हितैषी हैं और हृदयसे यह प्रार्थना करते हैं कि उनपर प्रभु-कृपा हो। जब मैं जेलके सींखचोंके भीतर था तब भी मेरी यह लड़ाई चल रही थी। मैं कई बार जेल गया हूँ लेकिन जब-जब मैं वहाँ-से आया हूँ तब-तब मैंने जेलके अधिकारियों और अपने सम्पर्कमें आनेवाले अन्य व्यक्तियोंके रूपमें अपने मित्र ही छोड़े हैं।

"अहिंसाकी एक विशेषता है। उसकी क्रिया कभी रुकती नहीं। बन्दूककी गोली या तलवारके बारेमें यह बात नहीं कही जा सकती। गोली शत्रुको केवल नष्ट कर सकती है जब कि अहिंसा शत्रुको एक मित्र बना सकती है; और इस प्रकार वह सविनय अवज्ञाकारीको इस योग्य बनाती है कि वह विपक्षीकी शक्ति-को आत्मसात् कर ले।"

गांधीजीने आगे कहा कि आप लोगोंने अपने सविनय आज्ञा-भंगके द्वारा संसारके आगे अपना यह दृढ़ निश्चय प्रकट किया कि आप अंग्रेजोंका शासन नहीं चाहते। परन्तु अब आप लोगोंको इससे ऊँचे प्रकारके एक अन्य पराक्रमका प्रमाण देना है। उन्होंने कहा कि खिलाफ़तके दिनोंमें लम्बे-तड़ंगे बलिष्ठ पठान सैनिक मुझसे और अली-बन्धुओंसे छिपकर मिलने आया करते थे। उनको इसका अत्यंत भय बना रहता था कि कही उनके उच्चाधिकारी उनको हम लोगोंके पास

आता हुआ न देख लें और इसके लिए उनको नौकरीसे न निकाल दिया जाय। उनका शरीर लम्बा-चौड़ा था और उनके शरीरमें उस व्यक्तिसे अधिक शक्ति थी, जिसके आगे वे दासवत् व्यवहार किया करते थे। गांधीजीने कहा, "मैं अपने भीतर एक ऐसी शक्ति चाहता हूँ जो सिवा ईश्वरके, जो कि मेरा एकमात्र स्वामी और प्रभु है, किसीको अर्पित न हो। लेकिन यह तभी हो सकता है जब कि मैं यह दावा कर सकूँ कि मैंने अहिंसाकी अनुभूति प्राप्त कर ली है।"

उन्होंने कहा, 'अहिंसाका प्रयोग सीखनेके लिए किसी व्यक्तिको विद्यालयमें या शिक्षकके पास जानेकी आवश्यकता नहीं है, अहिंसाकी शक्ति उसकी सरलता-में ही निहित है। यदि आप लोगोंने यह अनुभव कर लिया कि वह एक ऐसा सर्वाधिक सक्रिय सिद्धान्त है जो बिना किसी विश्राम या रोक-टोकके चौबीसों घंटे निरंतर चलता रहता है तो आप अपने घरोंमें, मार्गोंमें और मित्रोंके साथ ही नहीं बल्कि शत्रुओंके साथ भी उसके प्रयोगके अवसर खोजने लगेंगे। आप चाहें तो अपने घरोंपर आजसे ही उसका अभ्यास कर सकते हैं।' उन्होंने कहा कि शत्रुओं के ऊपर क्रोध न करनेके लिए उन्होंने अपनेको काफ़ी नियंत्रित कर लिया था। साथ ही उन्होंने यह स्वीकार किया कि वे कभी-कभी अपने आत्मीयों और मित्रों-पर क्रोधित हो उठते थे। लेकिन अहिंसाका यह अनुशासन उन्होंने अपने घरपर अपनी पत्नीसे सीखा है। गांधीजीने कहा कि मैं अपने घरपर एक अत्याचारी व्यक्ति जैसा व्यवहार किया करता था हालाँ कि वह अत्याचार प्रेमके कारण ही होता था। 'मैं कस्तूर बाके ऊपर क्रोधित हो उठता था लेकिन वे मेरे क्रोधको बड़ी नम्रताके साथ, बिना किसी शिकायतके सह लिया करती थीं। उनकी विरोधहीन नम्रताके इस गुणने मेरी आँखें खोल दीं। धीरे-धीरे मुझको ऐसा लगने लगा कि मुझको उन्हें ऐसे आदेश देनेका कोई अधिकार न था। यदि मुझे उनके द्वारा अपने आदेशोंका पालन कराना था तो मुझे यह चाहिए था कि मैं उनको अपनी सारी बातें समझाऊँ और अपने विश्वासमें लूँ। इस तरह वे मेरी अहिंसाकी शिक्षिका बन गयीं। मेरा विश्वास है कि मुझको अपने जीवनमें उनसे बढ़कर कोई निष्ठा-वान् और विश्वासपात्र साथी नहीं मिला। मैंने उनके लिए सचमुच जीवन एक नरक बना दिया था। आये दिन मैं अपनी रहनेकी जगह बदल दिया करता था। मैं इस बातका कि आज उन्हें कौनसा वस्त्र पहनना है, उनको आदेश देता था। मेरे घरपर प्रायः नित्य मुसलमान और अछूत लोग आया करते थे। कस्तूर बाका पालन-पोषण एक परम्परा-निष्ठ परिवारमें हुआ था जिसमें छुआछूत मानी जाती थी। मैं उनकी स्वाभाविक अनिच्छाका कोई खयाल न करके उनसे उन लोगोंके

सेवा-कार्य कराता था। लेकिन इसके लिए उन्होंने मुझे कभी इनकार नहीं किया। उनको एक शिक्षिता स्त्री नहीं कहा जा सकता था। वे अत्यंत सीधी-सादी थीं और उनके ऊपर आधुनिक संस्कारोंकी छाप न थी। उनकी इस निर्दोष सरलता-ने ही मुझको जीत लिया।'

"आपके घरपर आपकी माताएं, वहनें और पत्नियाँ हैं।" गांधीजीने आगे कहा, "आप उनसे अहिंसाका यह पाठ सीख सकते हैं। आपको सत्यका व्रत भी पालन करना चाहिए। आपको अपने-आपसे यह प्रश्न करना चाहिए कि मुझे सत्य कितना प्रिय है और मन, वचन और कर्मसे मैं उसका कितना पालन कर सकता हूं? जिस व्यक्तिने सत्यका व्रत नहीं लिया वह अहिंसासे बहुत दूर है। असत्य स्वयं ही हिंसा है।"

रमज़ानके महीनेका प्रारम्भ था। गांधीजीने उन लोगोंको यह वतलाया कि अहिंसा-व्रतको शुरू करनेके लिए इस मासका किस प्रकार उपयोग किया जा सकता है। उन्होंने कहा, "मुझे ऐसा लगता है, हमारी यह धारणा वन गयी है कि खान-पानको छोड़ देनेसे ही रमज़ानका व्रत शुरू होता है और उसीसे वह पूर्ण होता है। लेकिन हम इस वातको कभी सोचनेतक नहीं कि रमज़ानके पवित्र मासमें हम क्षुद्र वातोंको लेकर क्रोधमें भर जाते हैं और एक-दूसरेका अपमान करने लगते हैं। रोज़ा तोड़नेके समय यदि पत्नीको हमें भोजन परोसनेमें थोड़ी-सी भी देर हो जाती है तो हम उसपर अपशब्दोंके जलते कोयले उड़ेल देते हैं। मैं इसे रमज़ानका व्रत नहीं वल्कि उसकी एक मज़ाक उड़ाना कहूँगा। यदि आप वास्तवमें अपने भीतर अहिंसाकी भावनाको जाग्रत करना चाहते हैं तो आपको इस वातकी शपथ लेनी चाहिए कि स्थिति कैसी भी क्यों न हो, आप अपने परि-वारके किसी सदस्यपर क्रोधित नहीं होंगे और न अपना मानसिक संतुलन विगा-ड़ेंगे। आप उन लोगोंको लेकर क्रोधके वशीभूत नहीं होंगे। इस प्रकार आप अपने भीतर अहिंसाकी भावनाको उत्पन्न करनेके लिए अपने दैनिक जीवनके मामूली छोटे-छोटे मौक़ोंको भी इस्तेमाल कर सकते हैं और उसे अपने वालकोंको भी सिखला सकते हैं।"

उन्होंने एक अन्य उदाहरण दिया। मान लीजिए कि कोई अन्य वालक उनके वालकको एक पत्थर मारता है। सामान्य रूपसे पठान अपने वच्चेसे यह कहते हैं कि वह कराहता हुआ अपने घर न लौटे वल्कि पत्थरका जवाव और भी वड़े पत्थरसे दे। परन्तु अहिंसाका एक उपासक अपने वच्चेसे यह कहेगा कि वह पत्थर का जवाव पत्थरसे न दे वल्कि पत्थर मारनेवाले वालकको प्रेमसे अपने गले लगा

ले और उसे अपना मित्र बना ले। क्रोधको अपने हृदयसे पूर्ण रूपसे निकाल देने-का और हर एकको अपना मित्र बना लेनेका यह सूत्र वास्तवमें भारतको उसकी स्वाधीनताके लिए काफ़ी है। यह सबसे शीघ्रताका और सबसे निश्चित मार्ग है। मेरा तो यह दावा है कि भारतकी ग़रीब जनताके लिए अपनी स्वाधीनता प्राप्त करनेका यही एकमात्र मार्ग है।

अस्सी मीलकी यात्रा करके २४ अक्तूबरको गांधीजी बन्नू पहुँच गये। मार्गके बड़े-बड़े गाँवोंमें ग्रामवासियोंने केलेके खम्भों और हरे पत्तोंसे मेहराबदार द्वार खड़े किये थे। जिस ओरसे गांधीजी आ रहे थे, उस ओर बन्नू शहरसे आठ मीलकी दूरीतक समान अंतरपर लाल कुरतीधारी स्वयंसेवक खड़े किये गये थे। उनके बीचमें वज़ीरियों, भिनान्नियों और ओरकज़इयोंके झुण्ड खड़े हुए थे जो किसी डोरीमें गाँठ सरीखे लगते थे। उनकी हवामें लहराती हुई पोशाकें, ढीली-ढाली, फूली हुई-सी शलवारें, उनके ऊँट और उनके कंधेपर रखी हुई पुराने ढङ्गकी बन्दूकें—एक अद्भुत दृश्य खड़ाकर रही थीं। 'सुरनई' के ग्राम्य-वाद्य और ढोल-की आवाज़ोंने जनतामें एक स्फूर्ति और उत्साह भर दिया था।

बन्नू शहरपर, जो एक चहारदीवारीसे घिरा था, अभी कुछ दिनों पहले ही छापा पड़ा था। उसका प्रभाव नगरपर अबतक बना था। एक दिन शामको लगभग दो सौ छापामारोंने चहारदीवारीके एक द्वारको बलपूर्वक खोल लिया या किसी तरह वहाँपर नियुक्त संतरियोंसे खुलवा लिया। उस समय शहरके लोग जाग रहे थे। सीमा पारके इन हमलावरोंने शहरमें घुसते ही बन्दूकोंसे फ़ायर किये और फिर कुछ दूकानोंमें आग लगा दी। उन्होंने नगरकी बहुत-सी दूकानोंको लूट लिया। फिर भी पुलिसने उनके काममें कोई रुकावट नहीं डाली और न उनका सामना किया। चहारदीवारीका वह द्वार खुला ही पड़ा रहा। छापामार लगभग तीन लाखके मूल्यका सामान लेकर जैसे आये थे, वैसे ही खुले रास्तेसे चले गये। छापेमें शहरके बहुतसे लोग मारे गये। इस छापेसे पहले बन्नू शहर और अन्य स्थानोंपर तीन सालके भीतर बाईस छापे पड़ चुके थे जिनमें तेरह हिन्दू और मुसलमान मारे गये थे। इस छापेमें कबाइली छापामार लगभग एक दर्जन हिन्दुओं को अपने साथ पकड़कर ले गये। कांग्रेसकी कार्य-समितिने अपने एक सदस्य मि० आसफ़ अलीको पिछले छापोंकी जाँचका कार्य सौंपा। मि० आसफ़ अलीने सीमा-प्रान्तमें गांधीजीके साथ कुछ देरतक बातचीत की और फिर बन्नूके छापोंके बारे-में अपना विस्तारयुक्त वर्णन प्रस्तुत किया।

बन्नूमें 'नागरिक सुरक्षा समिति' और 'पीड़ित सहायता समिति' के प्रति-

निधि-मंडलोंने आकर गांधीजीसे मुलाकात की। उनके अलावा वज़ीरी कबाइलियों-का एक दल और अपहृत व्यक्तियोंके कुछ दुःखी सम्बन्धी भी गांधीजीसे आकर मिले। २५ अक्तूबरको गांधीजीने एक अविस्मरणीय भाषण किया :

"सम्भवतः आप लोग यह जानते होंगे कि पिछले दो माससे मैंने पूर्ण मौन ग्रहण किया है। मुझे इससे लाभ हुआ है और मुझे विश्वास है कि देशको भी इससे लाभ हुआ है। मेरे इस मौनका मूल कारण मेरी घोर मानसिक अशांति थी। परन्तु इसके पश्चात् इसके अपने गुणोंके कारण मैंने इसे एक अनिश्चित अवधिके लिए बढ़ा लिया। मेरे लिए इसने सुरक्षाकी एक दीवारका काम दिया है और इसके कारण मैं पहलेसे अच्छा कार्य कर सका हूँ। जब मैं यहाँ आया तब केवल खुदाई खिदमतगारोंसे बातचीत करनेके लिए मैंने इसे कुछ शिथिल कर दिया। बादमें खान साहब खान अब्दुल गफ्फार खाँके दबावके आगे मुझको झुक जाना पड़ा।

"मैंने आज प्रतिनिधि-मण्डलोंसे मिलने और उनके दिये हुए कागजोंका अध्ययन करनेमें कई घण्टे बिताये। बन्नूमें पिछले दिनों जो हमला हुआ और उसके साथ जो घटनाएँ हुई, उन्होंने मेरे मनको अत्यधिक स्पर्श किया है। चूंकि यह प्रदेश एक ओरसे ऐसी सीमासे घिरा है जिसके उस पार बहुत-सी सरहदी जन-जातियाँ बसती हैं और उनमें बहुतसे लोगोंका पेशा ही छापा मारना है इसलिए इस प्रान्तकी स्थिति कुछ विचित्र है और अन्य प्रान्तोंसे भिन्न है। जहाँतक मैं जान सका हूँ ये छापे किसी साम्प्रदायिक उत्तेजनाके कारण नहीं डाले जाते हैं। हमला-वरोंका उद्देश्य अपनी प्राथमिक आवश्यकताओंकी संतुष्टि जान पड़ता हैं। हिन्दू लोग इन छापोंके अधिक शिकार हुए हैं। शायद इसका कारण यह है कि सामा-न्यतया ये अधिक पैसेवाले हैं। मुझको अपहरणका भी यही उद्देश्य जान पड़ता है। मेरी दृष्टिमें इस तरहके लगातार छापे भारतके इस भागमें अंग्रेजोंकी असफ-लताके प्रमाण हैं। सीमाप्रान्त सम्बन्धी नीतिपर इस देशके करोड़ों रुपये व्यय हुए हैं और हज़ारों जीवनोंका बलिदान चढ़ा है। फिर भी बहादुर कबाइली लोगों को अबतक अपने अधिकारमें नहीं लिया जा सका है। जो वृत्तांत मैंने आज सुने यदि वे बिलकुल सही हैं और मेरा विश्वास है कि वे सही हैं तो इस प्रदेशमें किसीका भी जीवन और सम्पत्ति सुरक्षित नहीं है।

"आज मैं ऐसे अनेक व्यक्तियोंसे मिला, जिनके सम्बन्धी या प्रियजन इस छापे में मारे गये हैं या उनका अपहरण किया गया है अथवा उन्होंने छापेमारोंको कुछ धन देकर उनसे मुक्ति पायी है। जब मैंने उनके दुःखोंकी भयानक कथाएँ सुनीं तो

मेरा मन उनके प्रति सहानुभूतिसे भर गया। परन्तु आपके आगे मैं यह स्वीकार करता हूँ कि अपने मनमें पूरी इच्छा रखते हुए भी मेरे पास ऐसा कोई जादू नहीं है जिससे कि मैं उन लोगोंको उनके परिवारोंके पास ला सकूँ। आपको सरकारसे या कांग्रेस मन्त्रिमण्डलसे भी इसकी अपेक्षा नहीं करनी चाहिए। यह किसी भी सरकारके वशकी बात नहीं हैं। फिर भी वर्तमान ब्रिटिश सरकार तो यह इच्छा तक नहीं रखती कि अपने किसी प्रजा-जनका अपहरण हो जानेपर वह अपने सैनिक साधनोंको प्रत्येक समय गतिशील करे, जबतक कि अपहरण किया गया व्यक्ति शासकोंकी जातिका ही न हो।

"सारे तथ्योंका अध्ययन करनेके पश्चात् मेरी यह धारणा बन गयी है कि जबसे इस प्रदेशमें कांग्रेस सरकारकी स्थापना हुई है, तबसे इन हमलोंकी हालत और भी बिगड़ी है। पुलिसके ऊपर यहाँके कांग्रेस मंत्रिमण्डलका कोई प्रभावपूर्ण नियंत्रण नहीं है और सेनापर नियंत्रणका तो प्रश्न ही नहीं है। अन्य प्रान्तोंके कांग्रेसके मंत्रिमंडलोंकी अपेक्षा यहाँ और कम नियंत्रण है। इसलिए मैं यह अनुभव कर रहा हूँ कि यदि डा० खान साहब छापोंसे सम्बन्धित इस प्रश्नको नहीं सुलझा पाते तो उनके लिए त्यागपत्र दे देना ही अच्छा है। यदि छापोंकी संख्या इसी प्रकार बढ़ती गयी तो मुझको भय है कि इस प्रदेशमें कांग्रेस अपनी प्रतिष्ठाको खो बैठेगी। मेरी रायको छोड़कर आपको अपने-आपसे यह प्रश्न करना है कि मेरी बतलायी हुई इन सब कठिनाइयोंके बावजूद आप कांग्रेस मंत्रिमण्डल रखना चाहेंगे या कोई अन्य। कुछ भी कहिए, मुख्य मंत्री आपका सेवक है। उसको तिहरी अनुमतिसे अपने पदपर कार्य करना पड़ता है। उसे अपने निर्वाचन क्षेत्र, प्रान्तीय कांग्रेस समिति और अखिल भारतीय कांग्रेस कार्यकारिणीकी अनुमतिसे अपना कार्य चलाना पड़ता है।

"जो लोग आज मुझसे मिले उनमेंसे कुछने मुझसे प्रश्न किया कि क्या वे सुरक्षाकी खोजमें सीमाप्रान्तको छोड़कर जा सकते हैं? मैंने उनसे कह दिया कि जब सम्मान और सुरक्षाके साथ रहनेका कोई रास्ता न हो तो प्रदेशका त्याग किया जा सकता है। यह पूर्ण रूपसे एक वैध मार्ग है। मेरे पास एक शिकायत और आयी। वह यह है कि छापेसे प्रभावित क्षेत्रोंमें अब मुसलमान, छापामारोंके विरुद्ध हिन्दुओंको उतना सहयोग नहीं देते जितना कि 'फ्रंटियर क्राइम रेगूलेशन एक्ट'की कतिपय धाराओंके हमारे खण्डन करनेसे पहले दिया करते थे। इन लोगोंको शिकायत है कि मुस्लिम जन-संख्या अब छापामारोंको प्रोत्साहन देती है। उनका यह कथन सत्य भी हो तो भी इस मामलेमें मैं आपको सावधान कर

देना चाहता हूँ। यदि आप अपनी रक्षाके लिए अन्य लोगोंके सशस्त्र सहयोगपर निर्भर करते हैं तो आपको अभी या बादमें इन रक्षा करनेवाले लोगोंका आधिपत्य स्वीकार करनेके लिए तैयार रहना होगा। आपको यह अधिकार अवश्य प्राप्त है कि आप शस्त्रके द्वारा आत्मरक्षा करनेकी कलाको सीखें। इस स्थितिमें भी आपको सहयोगकी भावनाको विकसित करना होगा। मैं चाहता हूँ कि आप किसी भी स्थितिमें कायरताके दोषके अपराधी न बनें। आत्मरक्षा प्रत्येक व्यक्तिका एक जन्मजात अधिकार है। मैं भारतमें एक भी कायर व्यक्ति नहीं देखना चाहता।

"चौथा पर्याय यह है कि आप इस प्रश्नको अहिंसात्मक ढंगसे सुलझायें जैसा कि मेरा सुझाव है। आत्मरक्षाका यह सबसे निश्चित और सबसे अचूक उपाय है। यदि मुझको अपनी इच्छाके अनुकूल कार्य करने दिया जाय तो मैं यह चाहूँगा कि मैं कवाइली क्षेत्रोंमें जाऊँ और वहाँके लोगोंसे मिलकर उनके आगे अपने तर्कों को रखूँ। मुझे पूरा भरोसा है कि मेरे प्रेम और न्यायपूर्ण तर्कोंके लिए उनके हृदय-द्वार बन्द न रहेंगे। लेकिन मैं जानता हूँ कि मेरा द्वार बन्द है। सरकार मुझको उनके प्रदेशमें जानेकी अनुमति नहीं देगी।

"कवाइलीको जैसा चित्रित किया जाता है, वह वैसी भयानक प्रकृतिका मनुष्य नहीं हो सकता। वह भी मेरे और आपके जैसा एक आदमी है। मानवीय भावनाओंका एक अनुकूल उत्तर देनेकी योग्यता वह भी रखता है। उसके साथ अबतक जो व्यवहार किया गया है, उसमें मानवीय भावनाएँ प्रत्यक्ष रूपसे अनुपस्थित रही हैं। आज दोपहरको मुझसे कुछ वज़ीरी लोगोंने भेंट की। मैंने उनकी प्रकृतिमें और किसी दूसरी जगहके मनुष्यकी प्रकृतिमें कोई मूल भिन्नता नहीं पायी। मानव-प्रकृति अनिवार्यतः बुरी नहीं होती। पाशविक प्रकृति भी प्रेमके प्रभावके सामने झुकती हुई देखी गयी है। मानव-प्रकृतिमें आपकी आस्था होनी चाहिए। आप तो व्यापारी समुदायके लोग हैं। आपके पास सबसे उत्कृष्ट और सबसे मूल्यवान् वस्तु प्रेम है। अपने मालका यातायात करते समय उसे मत छोड़िए। आप कवाइलियोंको अधिक-से-अधिक जितना प्रेम दे सकते हैं उतना उनको दीजिए। निश्चय ही उनसे बदलेमें आपको प्रेम मिलेगा।

"छापेसे अपनी रक्षा करनेके प्रयोजनसे यदि आप छापामारोंपर धनका दबाव डालते हैं, उनको बिना छापा मारे लौट जानेके लिए घूस देते हैं या अपहरण होनेपर अपने छुटकारेके लिए उनको धन देते हैं तो उनके लिए बार-बार लूट करनेके लिए यह एक आमंत्रण होगा। वह आपको और कवाइली छापामार—

दोनोंको आचार-भ्रष्ट करेगा। युक्ति-संगत मार्ग यह है कि आप उनको धन न दें बल्कि उनको उद्योग-धन्धे सिखलायें और उनको इस दुर्दशासे उबार लें। इस प्रकार आप उस मूल उद्देश्यको ही परे कर दें जिसके कारण उनको छापा मारनेकी आदत पड़ गयी है।

"इस बारेमें मेरी खुदाई खिदमतगारोंके साथ बातचीत चल रही है और मैं बादशाह खानके सहयोगसे एक योजना बना रहा हूँ। यदि यह योजना फलदायी होती है और वास्तवमें खुदाई खिदमतगार अपने नामके अनुकूल गुणोंको अपना लेते हैं तो उनके आदर्शका प्रभाव गुलाबकी मीठी महककी तरह कबाइलियोंके इलाकेमें भी फैलेगा और सम्भव है कि इससे सीमाकी समस्याका एक स्थायी हल निकल आये।"

गांधीजीने खुदाई खिदमतगारोंके अधिकारियोंको शक्तिशाली अहिंसा और दुर्बलकी अहिंसाके बीचका अन्तर समझाया। उन्होंने यह भी बतलाया कि यदि रचनात्मक कार्य एक राजनीतिक अभियानके रूपमें अपनाया जाता है अथवा वह रचनात्मक कार्य अहिंसासे जुड़ा होता है अथवा एक लोकोपकारी क्रिया-कलापके रूपमें उठाया जाता है तो तीनों स्थितियोंमें क्या अन्तर होता है? गांधीजीने उनको वे दिन स्मरण दिलाये जब कि भारतमें अहिंसात्मक आन्दोलन प्रारम्भ किया गया था। उन्होंने कहा कि उस समय लाखों मनुष्योंने यह अनुभव किया कि वे तलवारके बलपर ब्रिटिश सरकारसे नहीं लड़ सकते क्योंकि सरकारके पास उनसे अधिक शस्त्र हैं। उस समय उन्होंने (गांधीजीने) उन लोगोंसे कहा कि यदि आपके पास अधिक शस्त्र हों और आप तलवार लेकर लड़ने जायँ तो भी आपको मृत्युका सामना करनेके लिए तैयार रहना होगा। लड़ते समय यदि आप-के हाथकी तलवार टूट जाती है तो आपकी मृत्यु निश्चित है। फिर आप किसी-को मारनेकी नहीं बल्कि स्वयं मरनेकी कलाको क्यों नहीं अपनाते? और अपनी आत्मिक शक्तिसे शत्रुको क्यों नहीं पछाड़ते? सरकार आपको कारागृहमें डाल सकती है, आपकी सम्पत्तिकी जब्ती कर सकती है, यहाँतक कि आपके प्राण भी ले सकती है लेकिन इससे क्या हुआ? गांधीजीने कहा कि उनके इस तर्कने लोगों-के हृदयमें घर कर लिया लेकिन बहुतसे ऐसे लोग भी थे जो मन ही मन यह सोचते रहे कि यदि उनके पास पर्याप्त शस्त्रोंकी शक्ति होती तो वे सशस्त्र लड़ाई-का मार्ग ही ग्रहण करते। उन लोगोंके पास अहिंसाके अलावा और कोई चारा न था इसलिए उन्होंने उसे स्वीकार किया। दूसरे शब्दोंमें उनके हृदयमें हिंसा मौजूद थी, केवल वह व्यवहारमें नहीं लायी जा रही थी। उनकी यह अहिंसा एक वीर

पुरुषकी नहीं बल्कि दुर्बलकी अहिंसा थी। इसके बावजूद उसने उन्हें अधिक शक्तिशाली बनाया। उनकी यह एक बहुत बड़ी भूल थी कि उन्होंने अहिंसाको एक दुर्बलका हथियार समझा और उसी रूपमें उसे ग्रहण किया। यदि खुदाई खिदमतगार भी यही भूल करते हैं तो यह दुःखान्त घटना होगी। गांधीजीने कहा, "यदि आप बादशाह खानके कहनेसे तलवारको त्याग देते हैं परन्तु उसे अपने हृदयमें स्थान दिये रहते हैं तो आपकी अहिंसा एक अल्पस्थायी वस्तु होगी। कुछ ही समयमें आपका सारा उत्साह शिथिल पड़ जायगा। चन्द सालोंके बाद आप अपनेको बदलना भी चाहेंगे तो आपको ऐसा लगेगा कि आपका पूर्ण अभ्यास छूट चुका है और अब आप दोनों आदर्शोंको खो चुके हैं। उस समय आपके पास व्यर्थ पश्चात्तापके अलावा कुछ भी न होगा। मैं आपसे एक अद्वितीय वस्तुकी अपेक्षा कर रहा हूं। वह यह है कि आप तलवार चलानेमें समर्थ हों और आपकी विजय भी निश्चित हो फिर भी आप तलवारका त्याग कर दें। यदि आपका विपक्षी टूटी हुई तलवारसे लड़ रहा हो तो भी आप उसकी ओरसे गर्दन मोड़ लें, क्रोध या प्रतिहिंसासे नहीं बल्कि मात्र प्रेमकी भावनासे। यदि आप वास्तवमें अहिंसाको इस भावनाके साथ समझ लेंगे तो आप कभी तलवारका प्रयोग ही नहीं करना चाहेंगे। उस समय आपके पास निश्चित ही उससे उत्कृष्ट शस्त्र होगा।

"अब आप मुझसे पूछेंगे, 'इन सबका ब्रिटिश शासनके ऊपर कैसे प्रभाव पड़ेगा?' मेरा उत्तर यह है कि हम अपनी निःस्वार्थ सेवासे भारतकी समस्त जनता को एक प्रेम-रज्जुमें बांध देंगे। हम उसमें एकता उत्पन्न करके इस देशका वातावरण इस प्रकार बदल देंगे कि अंग्रेज उसका प्रतिरोध न कर सकेंगे। आप यह कहेंगे कि अंग्रेजके हृदयपर प्रेमकी भावनाका कोई प्रभाव न पड़ेगा। मेरा तीस सालका अनुभव इसके विपरीत है। आज १७,००० अंग्रेज तीस करोड़ भारतीयोंपर शासन कर सकते हैं क्योंकि हमारे ऊपर उनके भयका आतंक छाया हुआ है। यदि हम एक-दूसरेको प्रेम करना सीख जायंगे; यदि हमारी हिन्दू और मुसलमानकी, जाति और जाति-बहिष्कृतकी, धनी और निर्धनकी खाई पट जायगी तो मुट्ठीभर अंग्रेज हम लोगोंके ऊपर शासन न कर सकेंगे।"

इसके बाद गांधीजीने रचनात्मक कार्यक्रमकी चर्चा की। उन्होंने रचनात्मक कार्यको अहिंसाकी योजनाको गति देनेवाले एक बलकी संज्ञा दी। सन् १९२० में गांधीजीने देशके आगे अहिंसाका कार्यक्रम रखा था। उस समय उसे दो शाखाओंमें विभाजित कर दिया गया था—असहयोग और रचनात्मक कार्यक्रम। साम्प्रदायिक एकता स्थापित करना, अस्पृश्यताका निवारण, मादक द्रव्योंका निषेध,

हानिकारक पेयों और औषधियोंका पूर्ण बहिष्कार, हाथकी कती हुई और हाथकी बुनी हुई खादीका प्रचार और गृह उद्योगोंको प्रोत्साहन इस रचनात्मक कार्यक्रममें शामिल थे। उनको केवल राजनीतिक उद्देश्य-पूर्तिके लिए नहीं बल्कि अहिंसाके एक अभिन्न अंगके रूपमें अंगीकार कर लिया गया था। दोनोंमें एक मूल अन्तर है। उदाहरणार्थ, हिन्दू-मुस्लिम एकताको कार्य-साधनके रूपमें अपनाना एक बात है और उसे अहिंसाके एक अभिन्न अंगके रूपमें अंगीकार करना दूसरी बात। पहली वस्तु अपनी मूल प्रकृतिमें ऐसी नहीं है कि वह एक स्थायी वस्तु हो। ज्यों ही यह अनुभव किया जायगा कि राजनीतिक इष्ट-सिद्धिके लिए अब उसकी कोई आवश्यकता नहीं रह गयी त्यों ही उसको परे कर दिया जायगा। वह प्रति-पक्षीके लिए एक चाल या एक बहानातक हो सकती है। लेकिन जब वह अहिंसा-के कार्यक्रमका एक अंग होगी तो उसकी जड़ें केवल प्रेममें होंगी। उस तरुको हृदय-रक्तसे सींचा जायगा।

इसी तरहसे चरखेको भी अहिंसासे जोड़ना पड़ा। "आज भारतमें लाखों लोग बेकार और निराश्रित हैं। जैसा कि दक्षिण अफ्रीकामें होता है, उनके साथ एक व्यवहार तो यह किया जा सकता है कि उनको भूखों मरनेके लिए छोड़ दिया जाय ताकि शेष व्यक्तियोंमेंसे प्रत्येकको भूमिका अधिक भाग मिल सके। यह एक हिंसाका मार्ग है। दूसरा रास्ता अहिंसाका है। यह प्रत्येक प्राणीको उसकी अंतिम घड़ीतक बचानेके सिद्धान्तको स्वीकार करता है। यह सिद्धान्त हमसे यह अपेक्षा करता है कि हम ईश्वरके रचे हुए प्रत्येक प्राणीको, छोटेसे छोटे व्यक्तिको आदर और स्नेह दें। इस मार्गका पथिक उस वस्तुको ग्रहण करना अस्वीकार कर देगा जिसमें सब व्यक्ति समान रूपसे अपना भाग न बटायें। यह सिद्धान्त हाथसे काम करनेवाले श्रमजीवियोंपर भी लागू होता है। उनमें जो लोग अधिक सुखी और सम्पन्न हैं उनको अपनेसे कम सुखी और सम्पन्न लोगोंको समान आदर देना चाहिए और उनको अपनेमें ही एक समझना चाहिए।" इस विचार-धाराने गांधीजीको चरखेकी खोजके लिए प्रेरित किया। उन्होंने लिखा है, "जब मुझे चरखेके प्रयोग-का पता लगा तब मैंने चरखा देखा भी न था। वस्तुतः 'हिन्द स्वराज्य' में मैंने इसे 'हथकरघा' कहा था क्योंकि उस समय मैं सूत कातनेवाले चरखे और हथ-करघेके अन्तरको नहीं जानता था। उस समय मेरे मानस-चक्षुओंके आगे ग़रीबी के बोझसे दबे हुए वे भूमिहीन श्रमिक थे जिनके पास न कोई नौकरी थी और न जीवन-निर्वाहका अन्य कोई साधन। मैं इन्हें कैसे बचा सकता हूँ ?—मेरे आगे यह समस्या थी। यद्यपि इस समय मैं आपके साथ इन आरामदेह मकानोंमें हूँ लेकिन

मेरा हृदय दुःखी और पीड़ित जनोंके साथ उनकी कुटियोंमें है। उन लोगोंके बीच-में मैं अधिक आनन्द अनुभव करूँगा। यदि मैंने अपनेको आराम और सुखके वशी-भूत हो जाने दिया होता तो एक अहिंसाके उपासकके नाते यह मेरा एक अनुचित कार्य होता। वह क्या चीज़ है जो मुझे और एक गरीबको एक सजीव कड़ीके रूपमें जोड़े रख सकती है? मेरा उत्तर है कि वह वस्तु चरखा है। किसीने अपने जीवनमें कोई भी पेशा क्यों न अपनाया हो और उसका पद कोई भी क्यों न हो चरखा अपनी समस्त प्रकट विशेषताओंके साथ, उसे एक गरीबके साथ सुनहले पुलकी भाँति जोड़े रखेगा। उदाहरणके लिए, मान लीजिए कि मैं एक डाक्टर हूँ। जिस समय मैं चरखेसे, पर-हितके लिए, यज्ञका पवित्र धागा खींचूंगा तब चरखा मेरे मनमें यह विचार जाग्रत करेगा, 'मैं मोटी-मोटी फीसोंके लालचसे सम्पन्न महलोंके राजघरानोंमें जाता हूँ परन्तु इसकी बजाय मैं असहाय जनोंकी पीड़ाओं-को कैसे शान्त कर सकता हूँ?' चरखा मेरा आविष्कार नहीं है, वह इस देशमें बहुत पहलेसे है। मेरी खोज यह है कि मैंने उसे अहिंसा और स्वतंत्रतासे सम्बद्ध कर दिया। प्रभुने मेरे हृदयमें यह प्रेरणा दी—'यदि तुम अहिंसाके द्वारा कार्य करना चाहते हो तो तुम छोटी-छोटी चीज़ोंको लेकर आगे बढ़ो; बड़ीको नहीं।' जैसा कि मैंने इस सम्बन्धमें विचार व्यक्त किया था, पिछले बारह वर्षोंमें यदि हमने चतुर्मुखी कार्यक्रमको पूर्ण रूपसे कार्यान्वित किया होता तो आज हम अपने स्वामी होते। तब किसी भी विदेशी शक्तिका हमारे ऊपर कुदृष्टि डालनेका साहस न होता। यदि हमारे भीतर हमारा कोई शत्रु न होता तो कोई बाहरसे यहाँ आनेकी और हमें हानि पहुँचानेकी हिम्मत नहीं कर सकता था। यदि कभी कोई आता भी तो हम उसे अपनेमें आत्मसात् कर लेते और वह हमारा शोषण न कर पाता।"

गांधीजीने अपने भाषणके निष्कर्ष रूपमें कहा, 'मैं चाहता हूँ कि आप इस प्रकारकी अहिंसाको प्राप्त करें। मैं आपसे २४ कैरेटके सोने बननेकी अपेक्षा करता हूँ, इससे कमके नहीं। यह ठीक है कि आप मुझको धोखा दे सकते हैं। यदि आप ऐसा करेंगे तो इसके लिए मैं अपनेको ही दोष दूँगा। यदि आप सच्चे हैं तो आपको इसे अपने कार्य द्वारा सिद्ध करना होगा। किसी भी मनुष्यको किसी लाल कुरतीवालेसे भयभीत होनेकी आवश्यकता न हो या जबतक लाल कुर्तीवाले जीवित हैं तबतक कोई किसीसे भयभीत न हो।"

बन्नूसे चलनेसे पहले गांधीजी उस मौकेको देखने गये जहाँ कि कुछ दिनों पहले छापा पड़ा था। इसके बाद वे लक्कीके लिए रवाना हुए। वहाँ खान अब्दुल

ग़फ्फ़ार खाँने उनके लिए खटक खैलके एक 'नृत्य रूपक' का विशेष रूपसे आयोजन कराया था। यह नृत्य तलवारके खेलकी गतियोंपर आधारित था और खटक लोगोंमें अत्यंत लोकप्रिय था। इसमें नर्तक हाथीकी भाँति भूमिपर दृढ़तासे अपना पैर जमाता है और फिर किसी छोटेसे सुन्दर मृग-छौनेकी भाँति उछाल लेता है। यह नृत्य भी अन्य लोक-कलाओंकी भाँति शनैः-शनैः लोप होता जा रहा था परंतु खुदाई खिदमतगारोंका आन्दोलन पुरातन, स्थानीय पख्तू संस्कृतिके सभी श्रेष्ठ पहलुओंको नया जीवन देनेकी चेष्टा कर रहा था इसलिए ये कलाएँ फिर उभर रही थीं। नृत्यकी तालबद्ध गतियोंकी ओजपूर्णता और सादगीने ढोल और ग्राम्य वाद्य 'सुरनई' की ध्वनियोंके साथ मिलकर दर्शकोंको मंत्रमुग्ध-सा कर दिया।

रात्रिके समय सभा हुई। उसमें गांधीजीके भाषणका विषय था, 'निःशस्त्रीकरणकी शक्ति'। मंचके पीछे एकत्रित पुराने ढंगकी देशी बन्दूकों और चालू राइफलोंका एक जंगल दर्शकोंको रोमांचित कर रहा था और गांधीजीके भाषणकी विषयवस्तुको एक पृष्ठ-भूमि प्रदान कर रहा था। उन्होंने कहा :

"एक सशस्त्र सैनिक अपनी शक्तिके लिए अपने हथियारोंपर निर्भर होता है। उससे उसके हथियार; उसकी बन्दूक या उसकी तलवारको ले लीजिए तो वह सामान्यतः अपनेको असहाय अनुभव करने लगेगा। उसकी अवरोध-शक्ति मूर्छित हो जायगी और उसके आगे आत्म-समर्पणके अलावा अन्य कोई चारा न रहेगा। परन्तु जिसने वास्तवमें अहिंसाका अनुभव किया है, उसका हथियार ईश्वरीय शक्ति होगी; एक ऐसी शक्ति जिससे उसे कोई वंचित नहीं कर सकता और जिसका संसारमें किसी हथियारसे मुक़ाबला नहीं किया जा सकता। आदमी अपनी असावधानीके क्षणोंमें ईश्वरको भूल जाते हैं परन्तु वह हमारे ऊपर दृष्टि रखता है और सदैव हमारी रक्षा करता है। यदि खुदाई खिदमतगारोंने इस रहस्यको समझ लिया है और यह अनुभव कर लिया है कि इस संसारमें अहिंसा सबसे बड़ी शक्ति है तो यह बहुत अच्छी बात है। अन्यथा बादशाह खानके लिए; जिनका आदर्श सामने रखकर खुदाई खिदमतगारोंने शस्त्रत्याग किया है, यह अच्छा होगा कि वे उनके लिए फिर शस्त्र जुटा दें। ऐसी स्थितिमें खुदाई खिदमतगार उस संसारकी दृष्टिमें तो वीर बने रहेंगे जिसने कि पशुबलकी उपासनाको आज अपना धर्म बना लिया है। लेकिन यदि उन्होंने अपने शस्त्र त्याग दिये परन्तु इसके साथ ही वे अहिंसाकी शक्तिके लिए भी अजनबी बने रहे तो यह एक दुःखान्त घटना होगी, जिसके लिए कमसे कम मैं, और जहाँतक मैं जान सका हूँ बादशाह खान भी तैयार नहीं होंगे।"

अहिंसात्मक संगठनके सम्बन्धमें खुदाई खिदमतगारोंको सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा : "वे सिद्धान्त, जिनके ऊपर अहिंसात्मक संगठन निर्भर है, उन सिद्धांतोंसे भिन्न तथा विपरीत हैं जो कि किसी हिंसात्मक संगठनमें अपनाये जाते हैं। उदाहरणके लिए, सेनाके एक अधिकारी और एक साधारण सिपाहीके बीच एक भेदभाव चलता आ रहा है। सिपाही अफसरके अधीन होता है और दर्जेमें उससे छोटा समझा जाता है जब कि अहिंसात्मक सेनामें एक अफसर केवल एक प्रधान सेवक होता है। जहाँ सब लोग समान समझे जाते हैं वहाँ वह केवल एक पहला व्यक्ति होता है। किसीके ऊपर वह अपने पद, श्रेणी या श्रेष्ठताका दावा नहीं करता। आप लोगोंने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको 'बादशाह ख़ान'की उपाधि दी है। परन्तु यदि अपने मनमें वे सचमुच यह समझने लगें कि उनको एक साधारण जनरल जैसा व्यवहार करना चाहिए तो यह विचार उनको पतनकी ओर ले जायगा और उनकी सारी शक्तिको नष्ट कर देगा। वे इस अर्थमें सचमुच बादशाह हैं कि वे सबसे सच्चे और सबसे प्रधान खुदाई खिदमतगार हैं और वे सेवाके गुण और परिमाणमें शेष समस्त खुदाई खिदमतगारोंमें श्रेष्ठ हैं।

"एक सैनिक संगठन और एक शान्ति-संगठनमें दूसरा अन्तर यह होता है कि सैनिक संगठनमें अपने जनरल या अन्य अधिकारियोंके चुनावमें एक सामान्य सिपाहीका कोई हाथ नहीं रहता। वे लोग उसके ऊपर थोप दिये जाते हैं और उसपर मनमाना हुक्म चलाते हैं। अहिंसक सेनामें जनरल और अधिकारियोंको चुना जाता है और वे निर्वाचित लोगोंकी भाँति व्यवहार किया करते हैं। उनका अधिकार केवल नैतिक होता है और वह मुख्य रूपसे सैनिकोंकी स्वेच्छिक आज्ञा-कारितापर निर्भर होता है।

"यह तो अहिंसक सेनाके जनरल और उसके सिपाहियोंके आन्तरिक सम्बन्धों की बात रही। यदि उनके बाह्य विश्वके सम्पर्कोंको देखें तो वहाँ भी हमको ऐसे सम्बन्ध दिखलाई देंगे। अभी-अभी हमको एक बहुत बड़ी भीड़से निबटना पड़ा, जो कि इस कमरेके आगे इकट्ठी है। आपने बल-प्रयोगसे नहीं बल्कि अनुनय-विनय और अपने प्रेमपूर्ण तर्कोंसे उसे यहाँसे हटाना चाहा और आप जब अपने इस प्रयास-में असफल हुए तो अन्तमें वापस आ गये और इस कमरेके दरवाज़ोंको बन्द करके बैठ गये। फौज़ी अनुशासन नैतिक दबावको नहीं जानता।

"अब मैं इससे भी एक क़दम आगे जाता हूँ। ये सब लोग जो बाहर भीड़ लगाये हैं, यद्यपि खुदाई खिदमतगार नहीं हैं, फिर भी हमारे मित्र हैं। ये लोग हमारी बातोंको उत्सुकताके साथ सुनना चाहते हैं। इनके अलावा अन्यत्र कुछ

ऐसे लोग भी हो सकते हैं जिनका हमारे प्रति अच्छा व्यवहार न हो अथवा वे हमारे विरुद्ध हों। सैनिक संगठनमें इस प्रकारके लोगोंके लिए एक ही निर्धारित मार्ग है, वह यह कि उनको बलपूर्वक खदेड़ दिया जाय। परन्तु इस क्षेत्रमें यह सोचनातक कि यह हमारा विरोधी है, या किसी कारणवश हमारा शत्रु है, अहिंसा अथवा प्रेमकी भाषामें एक पाप होगा। अहिंसाके उपासकके लिए बदला लेनेकी बात तो बहुत दूर रही, वह अपने प्रतिपक्षीके हृदय-परिवर्तनके लिए प्रभुसे प्रार्थना करेगा। यदि ऐसा नहीं होता तो वह अपने विरोधी द्वारा पहुँचाये गये प्रत्येक सम्भावित आघातको किसी गिरी हुई या कायरताकी भावनाके साथ नहीं बल्कि प्रसन्न मुखसे झेलनेके लिए तैयार रहेगा। उस समय उसके हृदयमें एक वीरताका भाव होगा। मैं बिना किसी संशयके इस प्राचीन कथनपर विश्वास करता हूँ कि अहिंसा कठोर पाषाण हृदयोंको भी निश्चय ही पिघला सकती है।"

उन्होंने अपने कथनको उदाहरण देकर समझाया। उन्होंने दक्षिण अफ्रीकाके पठान मीर आलमकी बातें बतलायीं जिसने कि उनके ऊपर घातक आक्रमण किया था। उन्होंने यह बतलाया कि अन्तमें उसे कैसा पश्चात्ताप हुआ और वह कैसे उनका मित्र बन गया। उन्होंने कहा, "यदि मैं बदला ले लेता तो ऐसा कभी नहीं हो सकता था। मेरा यह कार्य पूरी तरहसे हृदय-परिवर्तनकी प्रक्रिया कहा जा सकता है। यदि आप अपने अन्तरमें इस प्रेरणाको अनुभव नहीं करते कि आपको प्रेमसे अपने शत्रुका हृदय-परिवर्तन करना चाहिए तो आपके लिए यही अच्छा होगा कि आप भिन्न वर्गकी खोज करें। अहिंसा आपके लिए नहीं है।"

"अब आप मुझसे पूछेंगे कि हमें चोर-डाकुओं और रक्षाहीन महिलाओंको भ्रष्ट करनेवाले व्यक्तियोंके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए? 'क्या एक खुदाई खिदमतगारके लिए इनके प्रति भी अहिंसा बनाये रखना आवश्यक है?' इसके उत्तरमें मैं निश्चित रूपसे 'हाँ' कहूँगा। दण्ड देनेका अधिकारी केवल वह ईश्वर है, जिसके निर्णयोंमें भ्रान्तिकी सम्भावना नहीं है। यह आदमीकी चीज़ नहीं है, जिसके फ़ैसले कमज़ोर हुआ करते हैं। दुष्कर्मोंका सामना करते समय यदि हम हिंसाको त्याग देते हैं तो इसका अभिप्राय यह नहीं होना चाहिए कि हम उनकी ओरसे उदासीन हैं या हम अपनेको असहाय अनुभव कर रहे हैं। यदि आपकी अहिंसा सच्ची है और उसकी जड़ें प्रेममें हैं तो वह दुष्कर्मीके सुधारके लिए निश्चय ही पशुबलके प्रयोगसे अधिक प्रभावकारी होगी। मैं आपसे यह दृढ़ आशा करता हूँ कि आप डाकुओंकी खोज करेंगे और उनको उनके रास्तेकी भूलें समझायेंगे। इस कार्यके करनेमें जीवनके अंतिम क्षणतक आप वीरताका परित्याग

नहीं करेंगे।"

२७ अक्तूबरकी शामको गांधीजी डेरा इस्माईल खाँ पहुँच गये। सन् १९३० का हिन्दू-मुसलिम दंगा अपने पीछे लूट-मार और घरोंमें आग लगानेकी दुःखद स्मृतियोंको छोड़ गया था लेकिन डेरा इस्माईल खाँमें अब भी अशांतिकी एक लहर चल रही थी और वह उसके दौरमेंसे गुजर रहा था। स्थानीय कांग्रेस कमेटी नाम मात्रके लिए अपना अस्तित्व बनाये हुए थी। उसके स्वयंसेवक खुदाई खिदमतगारोंको अपना ऐच्छिक सहयोग नहीं देना चाहते थे। परिणाम यह हुआ कि जहाँ गांधीजी ठहरे थे, वहाँ भीड़के नियंत्रणकी सारी व्यवस्था भंग हो गयी और एक उपद्रव फैल गया। उसने प्रार्थना-सभाओंका होना भी असम्भव कर दिया। गांधीजीने भीड़से बचनेके लिए द्वारोंको बन्द करवा दिया लेकिन वह भी एक निष्फल प्रयास सिद्ध हुआ। भीड़ने फिर भी उनको शांति नहीं लेने दी। दो दिनके पश्चात् डेरा इस्माईल खांके नवाबने गांधीजीको उनके हिन्दू मेज़बानकी अनुमतिसे वहाँसे हटा लिया और वे उनको अपेक्षाकृत अधिक शांतिपूर्ण स्थानमें ले गये।

खुदाई खिदमतगारों और स्थानीय स्वयंसेवकोंके बीचके तनावपूर्ण सम्बन्ध गांधीजीकी दृष्टिमें भी आये। उनका उल्लेख करते हुए उन्होंने अपनी प्रार्थना-सभामें कहा : "यह मतभेद दुर्भाग्यपूर्ण है। फिर भी खुदाई खिदमतगार यदि अपनी अहिंसाकी आस्थाको, जैसा कि अबतक वे उसे समझ सके हैं, कार्य रूपमें परिवर्तित कर सकते हैं तो ये सारे मतभेद और झगड़े एक बीते हुए युगकी बातें हो जायँगे। यह खुदाई खिदमतगारोंकी अग्नि-परीक्षा है। यदि वे उसमें तपकर; विजयी होकर निकलते हैं तो वे साम्प्रदायिक एकताको लानेके एक साधन बनेंगे और स्वराज्यकी स्थापनाके भी। मैं यह जानता हूँ कि क्रोधको अपने हृदयसे बिलकुल निकाल देना एक दुष्कर कार्य है। यह मनुष्यके व्यक्तिगत प्रयत्न से सम्भव नहीं है। यह केवल प्रभुकी कृपासे हो सकता है। आइए, हम सब मिलकर उससे यह प्रार्थना करें कि वह खुदाई खिदममगारोंको उनके अंतरमें छिपे क्रोध और हिंसाके अंतिम अवशेषको जीतनेके योग्य बनाये।"

३१ अक्तूबरकी टंककी एक सार्वजनिक सभामें गांधीजीने टंकके हिन्दुओंकी शोकाभिव्यक्तिका उल्लेख किया। उन्होंने गांधीजीके निकट जाकर अपना हृदय खोला था, "इस क्षेत्रमें मुसलमान मुख्य रूपसे बहुसंख्यक हैं और हिन्दू बहुत ही कम; अति अल्प संख्यामें हैं। वे लोग यह अनुभव करते हैं कि इस इलाकेमें उनका अस्तित्व तभी सम्भव है, जब कि मुसलमान उनको अपना सच्चा 'हमसाया',

पड़ोसी समझें।" उन्होंने मुझसे आग्रह किया है कि मैं उनके लिए खुदाई खिदमतगारोंसे यह कहूँ कि वे इस दिशामें उनकी मदद करके स्वाभाविक भूमिकाको निभायें। मैं उन लोगोंकी भावनाका और उनकी इस हार्दिक प्रार्थनाका पूर्ण रूपसे समर्थन कर रहा हूं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यदि आपने मुझमें जो आशाएँ जगायी हैं, उनको आप पूरा कर लेते हैं तो आप उनके मनको शान्ति और सान्त्वना दे सकते हैं। मैंने पिछले मौक़ेपर भी यह कहा था कि यह हिन्दू, मुसलमान और अंग्रेजोंका परीक्षा-काल है। अंग्रेजोंके कामोंके बारेमें इतिहास अपना फ़ैसला करेगा। परन्तु हिन्दुओं और मुसलमानोंको अपने पारस्परिक व्यवहारोंको सुधारकर अपना इतिहास स्वयं लिखना है। खुदाई खिदमतगारोंके लिए उनका कार्यपथ निर्धारित किया जा चुका है। उनको पड़ोसियोंकी रक्षाके लिए एक ज़िन्दा दीवार बनना है। दृढ़ विश्वासी आत्माओंकी एक छोटीसी टोली, जिसको अपने जीवन-ध्येयमें अशमनीय निष्ठा हो, इतिहासकी धाराको मोड़ सकती है। यदि खुदाई खिदमतगारोंकी अहिंसा चमक-दमकवाला सलमा-सितारा नहीं बल्कि बिना मिलावटका सोना है तो ऐसा पहले हुआ है और भविष्यमें भी होगा।"

खुदाई खिदमतगारोंको चर्चा करते हुए गांधीजीने अपने भाषणमें अपने किसी प्रख्यात मुसलमान मित्रके इस कथनका भी समावेश किया। उन्होंने कहा, "इस मित्रका मन्तव्य यह था—यदि आपको अपने मनमें तनिकसा भी यह लगे कि अहिंसा केवल ऊपरसे ओढ़नेका एक लबादा, या एक बहाना मात्र है या वह अपेक्षाकृत बड़ी हिंसातक पहुंचनेके लिए पैर जमाकर आगे बढ़नेका एक पत्थर है; केवल इतना ही नहीं, यदि आप अहिंसाको उसके तर्कसंगत चरम निष्कर्षपर ले जानेको तैयार न हों—किसी शिशुघाती या बालकके हत्यारेतकके लिए क्षमाकी प्रार्थना करनेको तैयार न हों तो आप खुदाई खिदमतगारोंके अहिंसाके प्रतिज्ञापत्रपर हस्ताक्षर न करें। यदि आप इस मानसिक तैयारीके बिना इस प्रतिज्ञापत्रपर हस्ताक्षर करते हैं तो आपका यह कार्य आपके और आपके संगठनके लिए एक बदनामीका कारण तो होगा ही, वह उनको भी एक ठेस पहुंचायेगा जिसको बड़ी प्रसन्नताके साथ आप 'फख्रे अफगान'—(पठानोंका गौरव) कहते हैं।

'लेकिन यदि कोई आततायी पापपूर्ण उद्देश्यसे किसी अरक्षित बहन या माँके साथ छेड़छाड़ करता है तो ऐसी प्रायः घटनेवाली घटनाओंमें हमें क्या करना चाहिए ?' आप मुझसे पूछेंगे, 'क्या उस आततायीको अपनी इच्छाके अनुसार कार्य करनेकी छूट दे दी जाय ? अथवा क्या ऐसे मामलेमें हिंसाको काममें लानेकी छूट दी जा सकती है ?' दोनों ही स्थितियोंके लिए मेरा उत्तर है 'नहीं'। "पहले आप

उस आततायीको विनयके साथ समझायेंगे। असंगत बात यह होगी कि अपने मदमें वह आपकी बात नहीं सुनेगा। उस समय आपको उसके तथा उसके द्वारा सतायी जानेवाली महिलाके बीचमें आना होगा। बहुत सम्भव है कि वह आपको मार डाले। लेकिन तब आप अपना कर्त्तव्य पूर्ण कर चुकेंगे। यह प्रायः निश्चित है कि आपको अर्थात् एक निःशस्त्र तथा अनवरोधकारी व्यक्तिको मारकर आक्रमणकारीकी कुत्सित लालसाका शमन हो जायगा और वह उत्पीड़ित महिलाको छोड़कर चला जायगा। लेकिन मैं आपको बतला चुका हूँ कि अत्याचारी प्रायः वैसा नहीं करते जैसी कि हम उनसे आशा या अपेक्षा करते हैं। यह देखकर कि आप उसका (हिंसात्मक ढंगसे) अवरोध नहीं कर रहे हैं, वह आपको किसी खम्भेसे बांध भी सकता है और इस प्रकार वह आपको बलात्कारका एक प्रत्यक्ष साक्षी बननेके लिए विवश भी कर सकता है। यदि आपमें दृढ़ इच्छा-शक्ति होगी तो आप इतना ज़ोर लगायेंगे कि इस चेष्टामें आप या तो बंधनको तोड़ देंगे या स्वयं समाप्त हो जायँगे। दोनों ही स्थितियोंमें आप दुष्कर्मीकी आँखें खोल देंगे। आपका सशस्त्र विरोध भी इसके आगे कुछ न कर सकेगा। यदि आप उसमें हार जाते हैं तो स्थितिके इससे भी बुरे हो जानेकी सम्भावना है जितनी कि बिना अवरोध डाले हुए आपके मर जानेपर होती। इससे एक अवसर और मिल जाता है। दुर्भाग्यकी शिकार महिला आपके शान्तिपूर्ण साहसका अनुकरण कर सकती है और बेइज्ज़त होनेकी अपेक्षा अपनेको बलिदान कर सकती है।"

३१ अक्तूबरको दोपहरके समय गांधीजी डेरा इस्माईल खाँसे चल दिये। अब उनके दौरेका अंतिम चरण प्रारम्भ हुआ था। उनकी यह बिलकुल इच्छा न थी कि बिना विशेष आवश्यकताके दौरेको एक भी दिनके लिए बढ़ाया जाय। सड़कके पासके एक गाँवमें दोपहरको भोजन करनेके समय उन्होंने अपनी इस भावनाको खुदाई खिदमतगारोंपर व्यक्त किया। उन्होंने कहा, "इस सारे गाँवमें मुसलमानोंके घर हैं। रमज़ानके रोज़ेके कारण इन घरोंमें रसोईका चूल्हातक नहीं जला है। फिर भी इन लोगोंको हमारे लिए भोजन तैयार करना पड़ा है। इस बातने मेरे हृदयको छू लिया है और इनके प्रति मैं एक नम्रताका; एक आभारका भाव अनुभव कर रहा हूँ। अब मेरी वह उम्र नहीं रही कि मैं इनके साथ रमज़ानका व्रत रख सकूँ, जैसा कि मैंने दक्षिण अफ्रीकामें रखा था। वहाँ कुछ मुसलमान बालक मेरी देखरेखमें थे। उनको यह बतलानेके लिए कि रोज़े कैसे रखे जाते हैं, स्वयं मैंने भी यह व्रत किये थे। आयुके अतिरिक्त मुझको बादशाह खानकी भावनाओंका भी खयाल है, जिन्होंने कि रात-दिन लगकर मेरे

शारीरिक स्वास्थ्यकी देखभाल की है। मेरे उपवास रखनेसे वे अपने भीतर एक व्यग्रताका अनुभव करते।"

मोटर बड़े वेगके साथ शेष यात्राको पूरा कर रही थी। पहले दिन दलने एक सौ पचास मीलकी दूरी तय की। उसमें भी वे लोग सड़कसे दस मील दूर देहाती क्षेत्रमें पनियाला गाँवतक गये। जिस समय वे मीरा खैल पहुँचे उस समय शाम हो रही थी और अंधेरा घिरने लगा था। इस क्षेत्रके रास्तोंपर रोक लगी हुई थी और सड़कके इस टुकड़ेपर यात्रा करना निरापद न समझा जाता था। शामके चार बजेके बाद इस मार्गपर आने-जानेकी अनुमति न थी, लेकिन खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँकी उपस्थितिसे सारी कठिनाई सुलझ गयी। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके छोटे पुत्र वली मोटर चला रहे थे। दल जैसे ही पहली रोकके पास पहुँचा वैसे ही खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने उनको हिदायत दी, "इन लोगोंसे कह दो कि हम अपनी जोखिमपर सफ़र कर रहे हैं। और देखो, अगर तुम किसीकी 'रोको' आवाज़ सुनो तो तत्काल अपनी गाड़ीमें ब्रेक लगा देना। यह मालूम हो जानेपर कि हम लोग कौन हैं, हमें कोई नहीं रोकेगा। अगर तुमने तेज़ीसे मोटर भगा ले जानी चाही तो पीछेसे गोलियोंकी बौछार होने लगेगी।"

पार्टीने उस गाँवमें रातको आराम किया। दूसरे दिन सवेरेसे मोटरने फिर वही तेज चाल पकड़ ली। वे कुछ घंटोंके लिए बन्नू शहरके निकटवर्ती अहमदी बन्दा गाँवमें रुके। फिर वे नमकके क्षेत्रकी भूरी मटियाली पहाड़ियोंके समूहको तेज़ीसे पार करते हुए आगे बढ़े और कोहाट कस्बा होते हुए कोहाटके दर्रेपर पहुँच गये। कार तेज़ीसे बढ़ती जा रही थी और खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ उस रास्तेके विभिन्न स्थानोंके बारेमें जानकारी देते जा रहे थे; एक 'आँखों देखा हाल' सुनाते जा रहे थे। वे एक सैनिक चौकीसे होकर गुज़रे। बन्नू-कोहाट मार्गपर इतनी चौकियाँ थीं कि वह उनसे जड़ा हुआ सा लगता था। उस सैनिक चौकीको देखकर खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ बोल उठे, "व्यर्थके खर्चको देखिए, महात्माजी! झंडों, हथियारबन्द मोटरों और टैंकोंके इस व्यर्थ प्रदर्शनकी ओर दृष्टि डालिए! ये अबतक डाकुओंके एक छोटेसे गिरोहको भी नहीं पकड़ सके हैं जो इतने दिनोंसे देशके इस भागमें उत्पात मचाये हुए है। इस साल तो सचमुच डाकुओंके सरदार-ने सेनाके सामनेकी उस पहाड़ीपर अपना झंडा गाड़ दिया और अपनी गिरफ़्तारी-के लिए फौजको एक चुनौती दी। लेकिन वह अबतक आज़ाद घूम रहा है। यह रवैया या तो सेनाकी निराशाजनक अक्षमताको व्यक्त करता है या जान-बूझकर अपनायी गयी एक उदासीनताको, जो कि अपराधकी कोटिमें आ

जाती है।"

इसके बाद उन्होंने १२५ मीलकी यात्रा की और अंतमें पेशावर पहुंच गये। रास्तेमें पनियाला और अहमदी बन्दा दोनों स्थानोंपर सभाएँ हुईं। गांधीजीने खुदाई खिदमतगारोंसे कहा कि वे उनसे उसके अलावा कुछ कहनेके लिए या उसका विस्तार करनेके लिए नहीं आये हैं जिसको वे जानते हैं और जिसका उन्होंने अभ्यास किया है लेकिन कई प्रकारसे उसके विपरीत कार्य भी हुआ है। "अब मैंने स्वयं आपके मुखसे यह आश्वासन पा लिया है जो कि मैं खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँसे पा चुका था।" गांधीजीने पनियालामें कहा, "आपने अहिंसाको मात्र एक अस्थायी अभियानके रूपमें नहीं अपितु एक आस्थाके रूपमें अंगीकार किया है, इसलिए यदि आप तलवारका त्याग करते हैं और अपने हृदयमें तलवार बनाये रखते हैं तो यह तलवारका त्याग आपको बहुत आगे नहीं ले जायगा। जबतक यह आपके हृदयमें एक ऐसा बल उत्पन्न नहीं कर देता जो कि तलवारके बलके विपरीत है और उससे कहीं बढ़कर है तबतक आपका तलवारका त्याग सच्चा नहीं कहा जा सकेगा। अबतक आप लोग बदले या प्रतिकारको अपना एक पवित्र कर्त्तव्य समझते हैं। यदि आपका किसीके साथ झगड़ा हो गया तो वह मनुष्य सदैवके लिए आपका शत्रु बन गया। पिता अपना झगड़ा अपने पुत्रको सौंपता है और इस प्रकार यह झगड़ा कई पीढ़ियोंतक चलता है। परन्तु अहिंसा-में यदि कोई आपको अपना शत्रु समझता है तो भी बदलेमें आप उसको अपना शत्रु नहीं समझेंगे। निश्चित ही फिर प्रतिहिंसाका कोई प्रश्न नहीं उठता।"

"मृत जनरल डायरसे अधिक क्रूर तथा रक्त-पिपासु और कौन हो सकता है?" गांधीजीने उन लोगोंसे पूछा, 'फिर भी मेरी सलाहपर जलियाँवाला बाग़ कांग्रेस जाँच समितिने उसपर अभियोग चलानेकी माँग नहीं की। मेरे हृदयमें उसके लिए दुर्भावनाका एक चिह्नतक नहीं है। मैं व्यक्तिगत रूपसे उससे मिलता और उसके हृदयतक पहुँचता लेकिन यह मेरी केवल एक अभिलाषा रह गयी।"

गांधीजीकी वार्ताके अन्तमें एक खुदाई खिदमतगारने उनसे एक कठिन प्रश्न किया, "आप हम लोगोंसे यह अपेक्षा करते हैं कि हम आक्रमणकारियोंसे हिन्दुओं की रक्षा करें, फिर भी आप यह कहते हैं कि हम लोग चोरों और डाकुओंके लिए भी शस्त्रोंको प्रयोगमें न लायें।"

"यह परस्पर विरोध केवल प्रकट देखनेका है।" गांधीजीने अपना मन्तव्य प्रकट किया, "यदि आपने वास्तवमें अहिंसाकी भावनाको आत्मसात् कर लिया है तो आप छापामारोंके यहाँ आकर छापा मारनेकी प्रतीक्षा नहीं करेंगे बल्कि

आप स्वयं उनके इलाकेमें जाकर उन्हें खोजेंगे और छापा पड़नेसे पहले उसे रोक देंगे। यदि फिर भी छापा पड़ता है तो आप हमलावरोंका सामना करेंगे। आप उनसे कहेंगे कि वे आपका सारा सामान उठाकर ले जा सकते हैं लेकिन जबतक आप जीवित हैं तबतक वे आपके 'हमसाया' हिन्दुओंकी सम्पत्तिपर हाथ नहीं लगा सकेंगे। यदि सैकड़ों खुदाई खिदमतगार अपने जीवनका मोल देकर अपने पड़ोसी हिन्दुओंकी रक्षाके लिए तैयार हो जायँगे तो छापामारोंको निश्चय ही यह सोचने को विवश होना होगा कि क्या वे आवेशहीन स्थितिमें कसाईकी भाँति उन निर्दोष और गैरहमलावर खुदाई ख़िदमतगारोंको काट डालें जिन्होंने कि अहिंसात्मक ढंग-से अपनेको उनके आगे डाल दिया है? आप लोग अब्दुल क़ादिर जिलानीकी कहानी जानते हैं, जिसे उसकी मांने चालीस सोनेकी मुहरें देकर एक कारवाँके साथ बग़दाद भेजा था। मार्गमें उस कारवाँको डाकुओंने लूट लिया। उन्होंने मुसाफ़िरोंके शरीरके कपड़ेतक नहीं छोड़े। बालक अब्दुल क़ादिरको किसीने छुआ-तक नहीं। जब डाकू उसके साथियोंका सारा माल-असबाब लेकर चल दिये तब अब्दुल क़ादिरने आवाज़ देकर उनको बुलाया। निकट आनेपर उसने डाकुओंको बतलाया कि मेरे पास मेरी माँकी दी हुई चालीस मुहरें हैं। वे मेरे लबादेके अस्तरमें सिली हैं। कथा आगे बढ़ती है कि आक्रमणकारी बालककी अति सरलता-से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने न केवल उसको बिना छुये जाने दिया बल्कि उसके कारवाँके साथियोंका सारा माल-असबाब भी लौटा दिया। वही बालक आगे एक सन्त बना।"

पेशावरमें वकीलोंके 'बार असोसिएशन' ने गांधीजीको एक अभिनन्दनपत्र अर्पित किया जिसमें उन्होंने यह दावा किया कि गांधीजी वकालतके पेशेकी दृष्टिसे उनके भाई-बन्द हैं। गांधीजीने कहा कि इस विशेषाधिकारके तो वे मुश्किलसे ही एक पात्र होंगे क्योंकि उनको अपने वकील समाज द्वारा ही इस अधिकारसे वंचित होना पड़ा है और वे अपने उस कानूनको भी बहुत दिनों पहले ही भूल चुके हैं। बादमें तो देशकी अदालतोंमें कानूनको स्पष्ट करने और उसकी व्याख्या करनेकी अपेक्षा वे अधिकतर कानून भङ्ग करनेमें लगे रहे हैं।

गांधीजी अपनी अहिंसाकी योजनामें खादी और कुटीर-उद्योगोंको प्रमुख स्थान देते थे अतः उन्होंने पेशावरकी खादी-प्रदर्शनीका उद्घाटन करना स्वीकार कर लिया। सीमा-प्रान्तमें यह अपने तरीकेका पहला प्रयास था। खुदाई खिदमत-गारोंने इस प्रदर्शनीमें अपने स्वयंसेवकोंके जत्थे भेजे। इस उद्घाटन समारोहमें तथा प्रदर्शनीमें प्रान्तके मंत्री तथा अन्य सम्भ्रान्त जन सम्मिलित हुए। इस प्रद-

र्शनीमें महिलाओंकी विशेष रूपसे बहुत बड़ी उपस्थिति रही।

गांधीजीने अपने हिन्दुस्तानीमें लिखे गये सन्देशमें, जो प्रदर्शनीमें वितरित किया गया था, यह कहा था :

"नामोंके कारण भ्रममें मत पड़िए। जापानी वस्त्रपर स्वदेशीकी छाप लगा देनेसे वह स्वदेशी नहीं हो जाता। केवल वही वस्तु, जिसको भारतके गाँवोंमें निवास करनेवाले लाखों श्रमिकोंने भारतमें उत्पन्न किये गये कच्चे मालसे पूर्णत: तैयार किया हो, स्वदेशी कहला सकती है।

"जैसा कि हम देखेंगे, इस परीक्षणमें केवल खादी ही खरी उतरती है। जिस प्रकार बिना सूर्यके प्रभात नहीं हो सकता, उसी प्रकार बिना खादीके कोई वस्त्र पूर्ण रूपसे स्वदेशी नहीं हो सकता।

"इस दृष्टिसे देखनेपर ज्ञात होता है कि अभी स्वदेशीकी दौड़में पेशावर बहुत पीछे है। यहाँ केवल एक खादी भंडार है और वह भी घाटेमें चला करता है। मैं यह आशा करता हूँ कि इस प्रदर्शनीके फलस्वरूप खादी भंडारकी स्थिति दृढ़ हो जायगी तथा उसके बन्द हो जानेकी सम्भावना नहीं रहेगी।"

खादी प्रदर्शनीका उद्घाटन करते हुए गांधीजीने कहा :

"खादी-कार्यमें सहायता देनेके लिए डा० गोपीचन्दने मंत्रियोंको धन्यवाद दिया है लेकिन मैं देखता हूँ कि यहाँ न तो सब मन्त्री और न विधानसभाके सदस्य ही अपने नित्य अभ्यासमें खादी पहनते हैं। कुछ सदस्य केवल विधान-सभामें खद्दर के वस्त्र पहनकर जाते हैं। कुछ लोग वहाँ भी खादी पहनकर नहीं जाते। उनका यह काम राष्ट्रीय भावना और कांग्रेसके संविधान दोनोंके प्रतिकूल है। यहाँतक कि अभी लाल कुरतीवालोंको भी खादीधारी होना है। यदि ये सब; एक लाख खुदाई खिदमतगार खद्दर पहनने लगें तो इस पूरे प्रान्तको खादीधारी हो जानेमें देर न लगे। खादीके उत्पादनके साधनोंकी दृष्टिसे यह देश अति सम्पन्न है लेकिन खादीके कार्यमें वास्तवमें यह प्रदेश सबसे पीछे है।

"मैं आपसे यह आशा करता हूँ कि आप इस प्रदर्शनीको देखते समय आवश्यक बातोंको पूछेंगे और इसे अध्ययनकी भावनासे देखेंगे। जैसी कि कपड़ेकी मिलके उद्योगमें लाखों रुपयेकी पूँजीकी आवश्यकता होती है वैसी खादी उत्पादन के संगठनमें नहीं होती और न इसके लिए अति उच्च तकनीकी कुशलता ही आवश्यक है। एक मामूली आदमी भी इस कामको उठा सकता है। मैं यह आशा भी करता हूँ कि इस प्रथम प्रदर्शनीके बाद निकट भविष्यमें ऐसी ही अन्य खादी प्रदर्शनियोंका आयोजन भी होगा।"

पेशावरमें गांधीजीसे दक्षिण भारतका एक उत्तराधिकारी मिला। उसने उनसे एक कठिन प्रश्न किया : 'दक्षिणसे उत्तर भारत आनेपर मुझे जान पड़ता है कि मैं एक नितान्त भिन्न मानव-समुदायके सामने आकर खड़ा हो गया हूँ। मुझे दोनोंके बीचमें मिलनका कोई आधार नहीं दिखलाई देता। क्या उत्तर और दक्षिणका यह जोड़ा कभी मिल सकेगा ?' गांधीजीने उत्तर दिया कि 'यद्यपि बाह्य रूपमें यह भिन्नता दृष्टिगोचर होती है परन्तु वास्तवमें है नहीं। अहिंसाके सुनहले पुलने भयानक युद्ध-प्रेमी पठानोंको नम्र, बुद्धिवादी दक्षिण भारतीयोंसे जोड़ रखा है। खुदाई खिदमतगार, जिन्होंने अहिंसाको एक आस्थाके रूपमें स्वीकार किया है, शेष भारतके किसी भी प्रान्तके निवासियोंसे भिन्न नहीं हैं, सिवा इसके कि इनमें अहिंसात्मक शौर्यकी मात्रा अधिक है। अनेक रूपोंमें एकरूपताके इस प्रश्न और इसी प्रकार अन्य जटिल प्रश्नोंको जिस क्षण हम अहिंसाके रास्तेसे सुलझाते हैं उसी क्षण हमारी सारी कठिनाइयाँ दूर हो जाती हैं।'

अपने दौरेके कार्यक्रमके अनुसार गांधीजी सिंधकी ओरके जिले हज़ारामें सबसे अन्तमें जानेवाले थे। हज़ारा सीमाप्रान्तका सबसे उत्तरी ज़िला था और प्रदेशका एकमात्र ऐसा क्षेत्र था जो कि सिन्धु नदके पूर्वमें पड़ता था। उसमें प्रवेश करनेसे पहले गांधीजी चच इलाकेके विभूति नामक स्थानमें गये। यद्यपि यह इलाका राजनीतिक और भौगोलिक दृष्टिसे पंजाबका एक अंग था फिर भी वहाँकी भाषा, रीति-रिवाज, लोगोंकी प्रकृति और उनकी जीवन-पद्धति सीमाप्रांतके निवासियोंके अधिक निकट थी। उन्होंने यह प्रार्थना की थी कि उनके इलाकेके पख्तूभाषी लोगोंको खुदाई खिदमतगार आन्दोलनमें सम्मिलित होनेकी अनुमति दी जाय। इसपर गांधीजीने कहा कि ऐसा करनेमें कोई कठिनाई नहीं होगी। "कोई भी व्यक्ति, जो पख्तू भाषा जानता है और खुदाई खिदमतगारोंके प्रतिज्ञापत्रपर हस्ताक्षर करता है, एक खुदाई खिदमतगार बन सकता है। इसमें केवल एक शर्त है कि वह इसके साथ-साथ किसी अन्य संगठनमें अपना नाम दर्ज नहीं करा सकता।"

जिस समय गांधीजी विभूति जा रहे थे, उस समय उनकी मोटरसे एक मामूली दुर्घटना हो गयी जिसके फलस्वरूप एक बछड़ा उनकी कारके नीचे आ गया और उसके शरीरका कुछ भाग कुचल भी गया। जो कांग्रेसजन गांधीजीके साथ चल रहे थे उन्होंने इस दुर्घटनाके लिए कांग्रेस मंत्रिमंडलके विरोधियोंको दोषी ठहराया। गांधीजीने इसपर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा, "खुदाई खिदमतगारोंने संगठनके लिए अपनी असंदिग्ध योग्यता सिद्ध कर दी है। किसी

भी सार्वजनिक सभामें खुदाई खिदमतगारोंकी एक चुनी हुई टुकड़ी व्यवस्था और अव्यवस्थाके सारे अन्तरको स्पष्ट कर देती है। अहिंसाका सिद्धान्त खुदाई खिदमतगारोंसे यह अपेक्षा करता है कि वे लोगोंसे वही बात प्रेमके बलपर करा लें जिसे कि पुलिस लाठी और गोलीके जोरपर कराती है। जब हमारे हृदयोंसे प्रेमके अंकुर फूटने लगेंगे तब हमारे सामान्य विवाद और कलह एक बीते हुए युगकी वस्तु बन जायँगे। आजकी दुर्घटनाको ही ले लीजिए, जब कि एक बछड़ा संयोगवश हमारी मोटरके नीचे आ गया। यदि हममें प्रेम होता तो उसने मोटर चलानेवालेको यह प्रेरणा दी होती कि वह मोटरको तत्काल रोक दे ताकि घायल पशुके उपचार और चिकित्साकी समुचित व्यवस्था की जा सके। हमारे दलके एक सज्जनने शीघ्रतामें, जो मुझे भद्दी लगी, इस दुर्घटनाके लिए तथाकथित विरोधियोंको दोषी ठहराया और कहा कि यह कार्य जान-बूझकर किया गया है। अहिंसामें विपक्षीपर दोषारोपण करनेमें हमको शीघ्रता नहीं करनी चाहिए और न उसे तबतक शंकाकी दृष्टिसे देखना चाहिए जबतक कि हमारे पास इसके लिए निश्चित प्रमाण न हों। जब खुदाई खिदमतगारोंके हृदय प्रेमसे परिपूर्ण हो जायँगे तब हमको अपनी स्वतंत्रता मिल जायगी। लेकिन जबतक हमारे छोटे-छोटे कार्यों द्वारा प्रेम प्रकट नहीं होता तबतक स्वतन्त्रता हमारे पास नहीं आ जायगी।"

उन्होंने खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँसे कहा, "जहाँ यह दुर्घटना हुई है, वहाँ हमें किसी आदमीको भेज देना चाहिए। वह वहाँ जाकर पशुके मालिकको हर्जाना दे और उस बछड़ेको मरहम-पट्टीके लिए पशु-चिकित्सालय ले जाय।" खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खांने तत्काल इसकी व्यवस्था कर दी।

६ नवम्बरको संध्याके समय गांधीजी हरिपुर पहुँच गये। रास्तेमें वे पंजा साहब भी गये जहाँ कि सिख गुरुद्वारेके प्रबन्धकोंने उनको तथा खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको सम्मानसूचक वस्त्र 'सरोपा' भेंट किया। हरिपुरमें अव्यवस्थाके वे ही पुराने दृश्य दुहराये गये। शामके समय एक सार्वजनिक सभामें गांधीजीने श्रोताओंसे कहा कि "सौजन्यका पालन और नियमित रूपसे सही व्यवहार अहिंसाके वैसे ही अंग हैं जैसी कि अन्य बड़ी-बड़ी चीजें जिनको मैंने आपको बतलाया। वैज्ञानिकोंका कथन है कि हम लोग बनमानुषके वंशज हैं। यह हो सकता है लेकिन मनुष्यके लिए यह उचित नहीं है कि वह पशु जैसा जीवन बिताये और उसी तरह एक दिन मर जाय। जिस अंशमें हम अपनेमें अहिंसा और ऐच्छिक अनुशासनकी भावनाको विकसित करते हैं उतने ही अंशमें हम पशु-प्रकृतिसे दूर हो जाते हैं और अपने भाग्यकी रचना करते हैं। अहिंसा हमसे एक कर्त्तव्यकी

अपेक्षा करती है। वह यह कि हम कमज़ोरसे कमज़ोर आदमीकी भी सही बात-का आदर करें; यहाँतक कि एक छोटे बच्चेकी भी।"

समाजवादियोंके एक छोटेसे दलने ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके हाथोंमें वह मानपत्र दिया जिसे वे वस्तुतः गांधीजीको देना चाहते थे। सभाकी कार्यवाही प्रारम्भ हो चुकी थी अतः उनको उसे पढ़नेकी अनुमति नहीं दी जा सकी। इसपर वे लोग ऐसे नारे लगाते हुए, जो उनके योग्य नहीं थे, सभा छोड़कर चले गये। गांधीजीने इस अशोभनीय घटनाका भी सहनशीलताकी आवश्यकतापर बल देनेके लिए प्रयोग कर लिया। उन्होंने कहा, "हमें गालियोंको भी सहनशीलताके साथ बर्दाश्त कर लेना चाहिए। मानव-प्रकृतिकी रचना कुछ इस प्रकारकी है कि यदि हम किसीके क्रोध या गालियोंकी ओर कोई ध्यान न दें तो क्रोध करनेवाला या गाली देनेवाला आदमी अपने आप ही थक जायगा और उन्हें बन्द कर देगा। जिन लोगोंने अपने बिना किसी प्रयोजनके एक उपद्रव खड़ा कर देना चाहा उनके विरुद्ध हमें अपने मनमें द्वेष-भाव नहीं बसा लेना चाहिए क्योंकि वे हमको सहन-शीलताका एक छोटासा, मूल्यवान पाठ पढ़ा गये हैं। एक सत्याग्रही अपने शत्रु-को सदैव अपना एक सम्भावित मित्र समझता है। लगभग आधी शताब्दीके अनुभवमें मुझे शत्रुताका ऐसा एक भी मामला नहीं मिला जिसमें पूर्ण अहिंसाके आगे शत्रुता अंततक टिक सकी हो।"

७ नवम्बरको सबेरे गांधीजीने अपने निर्धारित समयसे पहले ही अबोटाबाद पहुँचकर अपने मेजबानको आश्चर्यमें डाल दिया। अबोटाबादमें उनके सारे कार्य-क्रम उनके पहुँचनेके दूसरे दिन आयोजित थे। ८ नवम्बरको मनसहरामें एक सार्वजनिक सभा हुई जिसमें कि नागरिकोंकी ओरसे गांधीजीको एक मानपत्र अर्पित किया गया था। उसमें यह कहा गया था :

"हम सीमा-प्रान्तके निवासियोंने आपके अहिंसाके दिव्य संदेशको जिस प्रकार आत्मसात् किया और जिस प्रकार उसे अभ्यासमें रूपान्तरित किया उसे आप समझेंगे और हमें इस बातकी स्वीकृति देंगे कि हम उसके लिए एक अत्यल्प, क्षमा करने योग्य गर्व अनुभव करें। हिंसा तबतक जीवनमें हमारी मुख्य पूर्व धारणा रही जबतक कि 'पठानोंके गर्व' बादशाह खानने उसे हमारे हृदयोंसे निर्मूल नहीं कर दिया। मुमकिन है कि अहिंसा उनके लिए कोई विशेष सार्थकता न रखती हो जो उसके आस्थामय वातावरणमें जन्मे हैं। लेकिन हम पठानोंके लिए वह एक विशिष्ट महत्त्वकी वस्तु सिद्ध हुई है जिसकी हमें अपनी बुराइयोंको दूर करनेके लिए अत्यधिक आवश्यकता थी। इसलिए पठान लोग उसको समझनेके लिए और

उसकी कीमत-क़द्र करनेके लिए विशेष रूपसे उसके अनुकूल हैं। इस्लामने शांति या दूसरे शब्दोंमें अहिंसाकी जीवनके एक नियमके रूपमें घोषणा की और बलके प्रयोगको एक अपवाद रूपमें स्वीकृति दी। लेकिन पठानोंने अन्य मुसलमानोंकी भाँति अपवादको मुख्य सिद्धांतका स्थान ले लेने दिया और मूल उपदेशको वे प्रायः भूल ही गये। उस मूल सिद्धांतको, जो हमारी दृष्टिसे ओझल-सा हो चला था, वापस लानेका आपको श्रेय है। हम आपको आश्वासन देते हैं कि बहुत थोड़े समयमें ही पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तके पठान बिना किसी जाति, सम्प्रदाय या धर्मके भेद-भावके भारतकी स्वाधीनताके अहिंसात्मक संग्रामकी पहली पंक्ति खड़ी करनेके लिए आगे आयेंगे।'

गांधीजीने भी उनको आश्वासन दिया कि अहिंसाके क्षेत्रमें उनकी अबतककी जो उपलब्धियाँ हैं उनका गांधीजीके निकट बहुत बड़ा मूल्य है। लेकिन इस पुरानी कहावतपर विश्वास करते हुए कि जिसके पास कुछ है, उससे और भी अधिक अपेक्षा की जाती है, उन्होंने खुदाई खिदमतगारोंको चेतावनी दी कि वे उनसे तबतक संतुष्ट नहीं होंगे जबतक कि वे अहिंसाके द्वारा अपनी स्वाधीनता ही नहीं अपितु भारत देशकी स्वाधीनता प्राप्त करनेका अपना ध्येय पूरा नहीं कर लेते। गांधीजीने खुदाई खिदमतगारोंसे कहा कि उन्होंने यह समझनेके लिए कि यहाँ अहिंसा किस प्रकार कार्य कर रही है, उनके प्रांतकी दुबारा यात्रा की। गांधीजीने कहा कि उनका इरादा यहाँ तीसरी बार भी आनेका है। उनको आशा है कि उक्त समय वे उन विभिन्न समस्याओंके सूत्रोंको फिर पकड़ेंगे, जिन्हें उन्होंने बीचमें ही छोड़ा है।

इससे पहले उन्होंने खुदाई खिदमतगारोंके बीच भाषण करते हुए कहा था :

"आप अपने शत्रुसे घृणा न करें, यही काफ़ी नहीं है। प्रत्येकको अपने हृदयमें अपने शत्रुके प्रति एक सहानुभूतिकी भावना रखनी चाहिए। आजकल यह कहनेका एक फ़ैशन चल पड़ा है कि अहिंसात्मक तरीकेसे समाजका संगठन नहीं हो सकता या उसे चलाया नहीं जा सकता। मैं इस विचारधाराका विरोध करता हूँ। एक परिवारमें कोई पिता अपने पुत्रको उसकी किसी ग़लतीपर थप्पड़ मार देता है लेकिन इससे वह पितासे बदला लेनेकी बात तो नहीं सोचता? यह अपने पिताकी आज्ञाका पालन करता है। थप्पड़के कारण उसके मनमें कोई निरुत्साह की भावना नहीं आती। वह उसके पीछे पिताके असन्तुष्ट प्यारका अनुभव करता है। मेरी रायमें यह सबसे संक्षिप्त तरीक़ा है जिससे कि एक समाज शासित होता है या उसे शासित होना चाहिए। जो एक परिवारके लिए सच है वही एक

समाजके लिए भी सच हो सकता है क्योंकि समाज भी एक बड़ा परिवार ही है। यह मनुष्यकी अपनी कल्पना है जिसने विश्वको युद्धमें लगे हुए शत्रुओं और मित्रों-के दलोंमें विभाजित कर दिया है। लेकिन वह भी प्रेमका बल ही है जो आखिरी उपायके रूपमें विरोधमें भी अपना काम करता जा रहा है। और जो इस विश्व-को जीवित रखे है।

"मुझसे यह कहा गया कि लाल कुर्तीधारी नाम मात्रके लाल कुर्तीधारी हैं। मैं आशा करता हूँ कि यह आरोप निराधार है। बादशाह खान यह अनुभव करते हैं कि कुछ अनिच्छित और स्वार्थी तत्त्वोंके घुस आनेके कारण खुदाई खिदमतगार आन्दोलनका अन्तःसरण होने लगा है। मैं जानता हूँ कि वे इसके लिए अपने मनमें एक बड़ी अशांतिका अनुभव कर रहे हैं। इस बारेमें मेरा विचार उनसे मिल रहा है कि खुदाई खिदमतगारकी संख्यामें मात्र अनुवृद्धि, यदि वे लोग ग्रहण किये हुए मतके सच्चे प्रतिपादक न हुए तो, आन्दोलनको केवल कमजोर ही करेगी।

"आज लाल कुर्तीधारियोंके आन्दोलनने केवल सकल भारत ही नहीं बल्कि बाह्य देशोंका ध्यान भी अपनी ओर आकर्षित कर रखा है, हालाँकि उसने अबतक जो प्राप्त किया है वह उस सम्पूर्णका एक अंशभर ही है, जिसे उसको प्राप्त करना है। मैं बिना किसी संशयके खुदाई खिदमतगारों द्वारा दिये गये आश्वा-सनको स्वीकार करता हूँ कि वे अहिंसाके सिद्धांतको समग्र रूपमें समझनेके लिए और उसका अभ्यास करनेके लिए उत्सुक हैं। उनके आगे बहुत बड़े-बड़े काम हैं जो उनको पूरे करने हैं। रचनात्मक अहिंसाका कार्यक्रम, जिसे मैंने उनके सामने रखा है, यदि एक बार ठीकसे प्रारम्भ कर दिया गया तो स्वतः अपना काम करता रहेगा। उसका प्रवर्तन खुदाई खिदमतगारोंकी निष्ठा और उनके उत्साहका भी एक निश्चित परीक्षण होगा।"

दोपहरके बाद अबोटाबाद लौटते समय गांधीजी वहाँके एक स्थानीय हरिजन मन्दिरमें गये। वहाँ उनको यह जानकर प्रसन्नता हुई कि अबोटाबादमें हरिजनों-को अपने बालकोंको विद्यालयोंमें भेजनेमें, कुओंका उपयोग करनेमें और अन्य सार्वजनिक सुविधाएँ प्राप्त करनेमें कोई कठिनाई नहीं है।

दोपहरके बाद गांधीजीसे अल्पसंख्यकोंका एक प्रतिनिधिमंडल मिला। वे लोग इस बातसे बड़े क्षुब्ध थे कि जबसे एक पृथक् प्रांतके रूपमें सीमाप्रांत बनाया गया है तभीसे यहाँ हिंसापूर्ण अपराधोंमें बड़ी तेजीके साथ वृद्धि होती जा रही है। उन्होंने यह सुझाव रखा कि सरहदपर बसे हुए लोगोंको आत्म-रक्षाकी सुविधा

प्रदान करनेके लिए बिना मूल्य लिये हुए आग्नेय अस्त्र दिये जायँ और उनके निःशुल्क प्रशिक्षणकी भी व्यवस्था की जाय। फिर भी उन्होंने इस बातको स्वीकार किया कि बहुसंख्यक समुदायमें अल्पसंख्यकोंकी रक्षाके लिए एक कर्त्तव्य-भावना जाग्रत करनेपर ही सीमाके उस पारके छापोंकी समस्या समुचित ढंगसे अन्तिम रूपमें सुलझ सकती है।

गांधीजीने कहा कि मैं आप लोगोंकी इस मांगका समर्थन करूँगा कि लोगोंको उनके प्रार्थना-पत्रोंपर निःशुल्क लाइसेंस दिये जायँ लेकिन सरकारसे यह अपेक्षा करना कि वह बिना मूल्य लिये सीमान्तकी समस्त जन-संख्यामें आग्नेय अस्त्रोंका वितरण करे उससे अत्यधिक अपेक्षा करना होगा। यदि आप लोग चाहते हैं कि आग्नेय अस्त्र दिये जायँ तो उनके लिए आप एक 'फंड' खोल सकते हैं। इसके उपरान्त भी मेरे मनमें सन्देह रह जाता है कि क्या आग्नेय अस्त्रोंके वितरित हो जाने और उनके प्रयोगमें प्रशिक्षित हो जानेसे सीमाकी रक्षाहीनताका प्रश्न सुलझ जायगा? यदि बन्नूके पिछले छापेके अनुभवके आधारपर देखा जाय तो यह एक खर्चीला शौक ही साबित होगा। जिस समय वहाँ छापा पड़ा उस समय नागरिकोंकी ओरसे केवल एक बन्दूक काममें लायी गयी हालाँकि बन्नू शहरमें बन्दूकोंकी कोई कमी न थी और उस बन्दूकसे भी छापामारोंकी अपेक्षा नागरिक ही अधिक आहत हुए। हाँ, आप लोगोंने बहुसंख्यकोंके कर्त्तव्यके बारेमें जो बात कही, उसे मैं स्वीकार कर रहा हूँ। बादशाह खान इस कोशिशमें लगे हुए हैं कि खुदाई खिदमतगार छापोंसे नागरिकोंकी रक्षा करनेका अपना कर्त्तव्य पूरा करें।

एक जगह यह शिकायत की गयी कि हिन्दू और सिख यह समझते हैं कि मुसलमानोंके संसर्गसे वे धर्म-भ्रष्ट हो जायँगे। गांधीजीने कहा कि यदि यह बात सच है तो यह किसी भी सच्चे धर्मकी एक खिल्ली उड़ानेवाली है। प्रत्येक मनुष्य का यह कर्त्तव्य है कि वह हर एक स्थान और हर समय अपने धर्मके अतिरिक्त शेष धर्मोंको समान आदर और सम्मान दे। परन्तु जहाँ अल्पसंख्यक खुर्दबीनसे देखने लायक; बहुत ही कम हैं और वे भिन्न धर्मवाले अत्यधिक बहुसंख्यकोंके बीचमें बसे हुए हैं वहाँ तो यह उनके अस्तित्वके लिए एक प्राथमिक शर्त है। अल्पसंख्यकोंके लिए भले ही यह एक परिस्थितिजन्य आवश्यकता हो, तो भी उन्हें स्वेच्छापूर्वक बहुसंख्यकोंके धर्म और भावनाओंको उचित आदर देना चाहिए और बहुसंख्यकोंको भी अल्पसंख्यकोंके धर्म और भावनाओंके प्रति बड़ी सावधानीके साथ आदर प्रदर्शित करना चाहिए। इसे उनको अपना एक विशेष अधिकार और कर्त्तव्य समझना चाहिए।

अबोटाबादके कार्यक्रमका एक सार्वजनिक सभाके साथ उपसंहार हुआ। इस सभामें बहुतसे मानपत्र पढ़े गये और गांधीजीको जनताकी ओरसे एकत्रित ११२५ रुपयेकी थैली भेंट की गयी। उनमेंसे कुछ मानपत्रोंमें निरर्थक अतिशयोक्ति-पूर्ण भाषाका व्यवहार किया गया था। उनका उत्तर देते हुए गांधीजीने कहा, "आपने अपने मानपत्रमें इस बातपर बड़ी परितुष्टि प्रकट की है कि आपके बीचमें 'विश्वका सबसे महान् पुरुष' आया है। आपका मान-पत्र सुनते समय मुझको यह आश्चर्य हो रहा था कि आखिर वह 'महान् पुरुष' कौन है ? निश्चय ही मैं वह व्यक्ति नहीं हो सकता। मैं अपनी कमजोरियोंको जानता हूँ और खूब अच्छी तरह-से जानता हूँ। एथेन्सके महान् धर्मशास्त्री सोलनके सम्बन्धमें एक अति प्रसिद्ध कहानी है। एक क्रोससने, जो अपने युगका सबसे धनिक व्यक्ति समझा जाता था, सोलनसे पूछा, "संसारका सबसे सुखी व्यक्ति कौन है ?" क्रोससको पूरी आशा थी कि उत्तरमें सोलन उसीका नाम लेगा परन्तु सोलनने जवाब दिया कि किसी भी व्यक्तिके जीवनके अन्तिम क्षणतक यह कैसे कहा जा सकता है कि वह सुखी था। जब सोलनके लिए किसीको उसके जीवन-कालमें सुखी कहना कठिन था तब किसी भी व्यक्तिके जीवन-कालमें उसे महान् व्यक्ति निर्णय करना उससे भी कहीं अधिक कठिन बात होगी। वास्तविक महानता किसी पहाड़ीपर; किसी ऊँचे स्थानपर रखी हुई ऐसी वस्तु नहीं है जिसे हर कोई आसानीसे देख ले। बल्कि इसके विपरीत मेरे सत्तर वर्षके अनुभवने मुझे कुछ और ही सिखलाया है। जिन व्यक्तियोंके बारेमें और जिनकी महानताके सम्बन्धमें दुनिया उनके जीवन-कालमें अपरिचित रहती है, वे बहुधा सच्चे महान् पुरुष होते हैं। सच्ची महानताका निर्णय केवल ईश्वर ही कर सकता है क्योंकि केवल वही मनुष्योंके हृदयोंको जानता है।"

उन्होंने मानपत्रको पुनः उद्धृत करते हुए कहा :

"न केवल अबोटाबादके नागरिक अपितु यहाँके सूर्य, चन्द्र और तारागण भी मेरी एक झलक देखनेको उत्कंठित हैं। मेरे प्यारे मित्रो, क्या मैं इससे यह समझूँ कि आपके इस शहरमें सूर्य, चन्द्र और तारागणका अलग 'सैट' है और वह वर्धा या सेवाग्राममें नहीं चमकता ? हमारे यहाँ काठियावाड़में समाजका एक वर्ग है, जिसे 'भाट' कहा जाता है। ये लोग पैसेके लिए अपने गाँवके मुखिया या अन्य आश्रयदाताकी प्रशंसामें कविताएँ रचते हैं और उसे गाकर सुनाते हैं। बस यही इनका पेशा है। खैर, मैं आपको भाट या धनके लिए प्रशंसा करनेवाला तो नहीं कह सकता। मैं आपसे यह अवश्य महसूस कराना चाहता हूँ कि अपने

नेताओंकी अतिशयोक्तिपूर्ण सराहना एक गलत चीज है। इससे न उस नेताको कोई मदद मिलती है और न उसके कामको। मैं आपसे यह चाहता हूँ कि आप ऐसे प्रशंसापूर्ण मानपत्र देनेका अभ्यास हमेशाके लिए छोड़ दें। मैं सत्तर वर्षका हो चुका। ईश्वरको अभी मुझे थोड़ासा समय और देना है। अब मेरी यह बिलकुल इच्छा नहीं है कि मैं उस समयको निरर्थक अत्युक्तिपूर्ण बातें सुननेमें खो दूँ। यदि आपको अभिनन्दपत्र देना ही है तो आप उसमें उस व्यक्तिके दोषों और उसकी कमियोंका वर्णन करें। इससे उसे 'सर्चलाइट' का रुख अपनी ओर मोड़कर अपने भीतरकी कमजोरियोंको देखनेमें मदद मिलेगी और वह उनको निकाल सकेगा।

"जबसे मैं इस प्रदेशमें आया हूँ तभीसे मैं खुदाई खिदमतगारोंके लिए अहिंसाके दृढ़ एवं पूर्ण सिद्धान्तकी व्याख्या करनेमें लगा हूँ। न मैं रुका हूँ और न मैंने उसे कुछ कम ही किया है। मैं यह दावा नहीं करता कि मैंने अहिंसाके अर्थको उसकी समग्रताके साथ समझ लिया है। जो कुछ मैंने अनुभव किया है, वह उस महान् पूर्णताका एक अति लघु अंशभर है। अपूर्ण मानवको यह सामर्थ्य नहीं मिली कि वह अहिंसाके पूर्ण अर्थको पकड़ सके या उसका समग्र रूपमें अभ्यास कर सके। यह ईश्वरका ही सहज गुण है जो सर्वोच्च शासक है और जिसकी समानता कोई नहीं कर सकता : लेकिन मैं आधी शताब्दीसे भी अधिक समयसे अहिंसाको समझनेका और उसे अपने निजके जीवनमें उतारनेका एक अनवरत, अविश्रांत प्रयत्न कर रहा हूँ। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि खुदाई खिदमतगारोंने, जहाँतक वे उसे समझ सके, अहिंसाका अभ्यास करके एक जाज्वल्यमान आदर्श उपस्थित किया है। इससे उनको विश्वभरसे सराहना प्राप्त हुई है। लेकिन अभी उनको अपने मार्गपर एक क़दम और बढ़ना है। यदि खुदाई खिदमतगारोंको अपनी अंतिम अग्नि-परीक्षामेंसे सफल होकर निकलना है तो उनको अपनी अहिंसाकी संकल्पनाको और विस्तृत करना होगा और अपने अभ्यासको, विशेष रूपसे उसके निश्चित पक्षोंको अधिक पूर्णता और गहराई देनी होगी। अहिंसा निःशस्त्रीकरण मात्र नहीं है। न वह दुर्बलों और क्लीबोंका एक हथियार ही है। जो लड़का लाठीका प्रयोग करनेकी शक्ति भी नहीं रखता, अहिंसाका अभ्यास नहीं कर सकता। अहिंसा शस्त्रीकरणसे अधिक शक्तिशाली एक अनन्य बल है जो इस विश्वमें आया है। जिसने यह महसूस करना नहीं सीखा कि अहिंसा निश्चित रूपसे पशुबलसे अधिक बलशाली है, वह अहिंसाकी यथार्थ प्रकृतिको समझ नहीं सका। यह अहिंसा मौखिक शब्दों द्वारा सिखलायी नहीं जा सकती। यदि हम उसके निमित्त हृदयसे प्रार्थना

करें तो मात्र प्रभु-कृपासे उसकी ज्योति हमारे अंतरमें जग सकती है। यह कहा गया कि यहाँ ऐसे एक लाख खुदाई खिदमतगार हैं जिन्होंने अहिंसाको एक मत; एक आस्थाके रूपमें स्वीकार किया है। लेकिन इससे बहुत पहले सन् १९२० में ही बादशाह खानने अहिंसाको विश्वका सबसे शक्तिशाली हथियार समझकर पसन्द किया था और उसे धारण किया था। उनके अठारह वर्षके अभ्यासने उसमें उनके विश्वासको और भी दृढ़ कर दिया है क्योंकि उन्होंने यह देख लिया है कि अहिंसा-ने उनके यहाँके लोगोंको निर्भीक और समर्थ बना दिया है। पहले ये लोग अपनी तुच्छ नौकरीको खो बैठनेकी आशंकासे ही घबड़ा उठते थे। लेकिन आज वे अनु-भव करते हैं कि वे एक भिन्न प्रकारके मनुष्य हैं। तीन बीसी और दस सालकी इस आयुमें अहिंसामें मेरी आस्थाकी ज्योति आज पहलेसे अधिक प्रदीप्त है। लोग मुझसे कहते हैं : "आपके अहिंसाके कार्यक्रमको देशके सामने आये हुए लगभग दो दशक बीत चुके हैं लेकिन वह स्वतंत्रता कहाँ है, जिसका आपने हमें वचन दिया था ?" मैं उनको यह उत्तर देता हूँ कि यद्यपि लाखों लोगोंने अहिंसाको एक मत; एक 'क्रीड' के रूपमें ग्रहण करनेकी प्रतिज्ञा की थी लेकिन केवल इने-गिने लोगोंने उसका अभ्यास किया और वह भी केवल एक नीतिके रूपमें। लेकिन इतनेपर भी उससे हमें जो परिणाम मिला उसने मेरा ध्यान पर्याप्त रूपसे अपनी ओर आकृष्ट किया। उसीसे मुझे खुदाई खिदमतगारोंके बीचमें अपने प्रयोग चलाते रहने का प्रोत्साहन मिला और ईश्वरकी इच्छा हुई तो यह प्रयोग सफल होगा।"

गांधीजीको ९ नवम्बरके सबेरे सेवाग्राम चल देना था। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ अपने कामके भावी कार्यक्रमके ब्यौरोंको उनसे आखिरी बार समझनेमें व्यस्त थे। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ बहुत दिनोंसे एक स्वप्न पोषित कर रहे थे। वह यह कि वे और गांधीजी शवत और स्वातकी मनोरम पहाड़ियोंके कबाइली इलाके में भ्रमण करेंगे। परन्तु अब इस सपनेके साकार होनेका बहुत कम अवसर रह गया था। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने अपना खेद व्यक्त करते हुए कहा, "महात्मा-जी, जबसे आप यहाँ आये तभीसे मैं खुदाई खिदमतगारोंसे यह कहता आ रहा हूँ, "आप लोगोंने ग़रीबोंके हेतुको अपना हेतु बना लिया है परन्तु आपने उनकी निर्धनताको दूर करनेके लिए क्या किया है ? आपने यह प्रतिज्ञा की है कि आप कभी प्रतिकार नहीं करेंगे लेकिन क्या आप प्रेमके द्वारा विपक्षियोंका हृदय जीतने-के लिए कभी उनके पास गये ?" खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने गांधीजीको अपने कुछ अनुभव भी सुनाये, "एक बार ट्रेनमें आते समय मेरे पंजाबके एक मुसल-मान मित्रने सबके सामने मेरी यह कहकर निन्दा की कि मैंने पठानोंको अहिंसा

सिखलाकर इस्लामकी भावनाको ठेस पहुँचायी है और उसे ढा देनेके लिए सुरंग लगायी है। मैंने उससे कहा कि वह स्वयं भी नहीं जानता कि वह क्या कह रहा है? अहिंसाके सन्देशने पठानोंके विचारोंमें एक आश्चर्यजनक रूपान्तरण ला दिया है। उसने उनको राष्ट्रीय एकताकी एक नवीन दृष्टि प्रदान की है। यदि उसने यह सब अपनी आँखोंसे देख लिया होता तो वह इस तरहकी बातें कभी न कहता। मैंने उसको दिखलानेके लिए कि इस्लाममें शान्तिकी भावनाको कितना अधिक महत्त्व दिया गया है, उसके आगे क़ुरानशरीफ़के अध्यायों और आयतोंका प्रमाण रखा और उससे कहा कि शान्ति इस्लामके मुंडेरका पत्थर है। मैंने उसे यह भी बतलाया कि इस्लामके इतिहासके महान् पुरुष अपनी उग्रताकी अपेक्षा अपनी सहनशीलता और आत्म-निग्रहके लिए अधिक जाने जाते हैं। मेरा उत्तर सुनकर वह चुप हो गया।"

इसके बाद उन्होंने वह प्रसंग बतलाया जिसमें उनके ऊपर यह आरोप लगाया गया था कि उन्होंने मुसलमानोंको हरानेमें हिन्दुओंकी सहायता करनेके लिए एक लाख खुदाई खिदमतगारोंका लश्कर खड़ा किया है। मेरे कई मित्रोंने मुझको यह सलाह दी कि मैं इस सामूहिक अपमानके विरोधमें प्रतिवाद प्रकाशित कराऊँ लेकिन मैंने इनकार कर दिया। मैंने उन लोगोंसे कहा, "सीमा-प्रान्तकी जनताके मनको मैं अभी पर्याप्त रूपसे समझ नहीं सका हूँ। हम लोगोंकी स्वार्थहीन सेवाओंके कारण उसकी दृष्टिमें हमारी बात उतना मूल्य तो रखेगी ही जितनी कि दूसरोंकी बात, कमसे कम तबतक, जबतक कि वह सोने और मुलम्मेके बीचका अंतर नहीं पहचान पाती। लेकिन मैं पहचानकी घड़ीकी प्रतीक्षा करूँगा।"

"महात्माजी, मैं राजनीतिसे घृणा करता हूँ।" वे बहुधा दौरेमें गांधीजीसे कहा करते, "राजनीति एक रिक्त और सूनी भूल-भुलैया है। मैं इससे दूर भाग जाना चाहता हूँ और सबसे ग़रीब लोगोंके घरोंमें जाकर मानवताकी सेवामें लग जाना चाहता हूँ।"

वर्धा आनेके लिए तक्षशिलाके रेलवे स्टेशनपर गाड़ीमें बैठनेसे पहले गांधीजी तक्षशिलाके ऐतिहासिक खण्डहरोंको देखनेके लिए गये और इसके साथ ही उनका सीमा-प्रान्तका दौरा पूरा हुआ। देशके इस भू-भागमें बौद्ध धर्म एक हज़ार वर्षसे भी अधिक समयतक पूर्ण विकसित अवस्थामें रहा था। सारे क्षेत्रमें स्तूपों, विहारोंके ध्वंस तथा स्तम्भोंके टुकड़े बिखरे थे। एरिमनने तक्षशिला नगरका उल्लेख करते हुए लिखा है कि यहाँ एक महान एवं उन्नत विश्वविद्यालय था। सारे नगरोंमें निश्चित ही सबसे बड़ा नगर वह था जो सिन्ध और झेलमके बीचमें बसा

हुआ था। उन दिनों और परवर्ती शताब्दियोंमें वह तत्कालीन कला और विज्ञान-के लिए प्रख्यात था। आजके युगमें जब खुदाई खिदमतगार मन, वचन और कर्मसे अहिंसाका पालन करनेके लिए प्रतिज्ञा-पत्रपर हस्ताक्षर करता है तब वह केवल अपने उस सहनशील अग्रगामीके पद-चिह्नोंपर ही अनुगमन करता है, जिसने कि यह धर्म-पद गाया था, 'क्रोधको अक्रोधसे जीतो।'

गांधीजीने अवशेषोंको गहरी दिलचस्पीके साथ देखा। वहाँके संग्रहालया-ध्यक्षने जब उनको चांदीकी भारी पायलका एक जोड़ा दिखलाया, तब वे बोल उठे, 'ऐसे ही मेरी मां भी पहना करती थी।' गांधीजीने भारतके गौरवमय अतीतके उन भव्य स्मारकोंसे, जो उनके सामने बिखरे पड़े थे, अनिच्छापूर्वक विदा ली। चार सप्ताहतक अहिंसाकी समान खोजमें वे खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके निकटतम भागीदार रहे। उसने उनको खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके और भी पास ला दिया। एक दर्दके साथ वे अलग हुए। उस समय गांधीजीकी आँखोंसे आँसू बह रहे थे।

११ नवम्बर १९३८ को गांधीजीने रेलगाड़ीमें 'हरिजन' के लिए एक लेख लिखा—'खुदाई खिदमतगार और बादशाह खान।'

"खुदाई खिदमतगार चाहे जैसे हों और अन्तमें वे कैसे भी सिद्ध हों परन्तु उनके नेताके बारेमें; जिनको वे बड़ी प्रसन्नतासे 'बादशाह खान' कहा करते हैं, कोई सन्देह नहीं हो सकता। इसमें कोई सन्देह नहीं कि वे ईश्वरके एक पुरुष हैं। वे यह विश्वास करते हैं कि वह प्रत्येक क्षण उपस्थित है और उनको यह अच्छी तरहसे मालूम है कि उनके आन्दोलनकी प्रगति ईश्वरकी इच्छापर निर्भर है। अपने उद्देश्यमें अपनी समग्र आत्माको समाहित करके भी वे इसकी चिन्ता नहीं करते कि आगे क्या होगा? उनके लिए यह अनुभव कर लेना काफ़ी रहा है कि अहिंसाको पूर्ण रूपसे स्वीकार किये बिना पठानकी मुक्ति नहीं है। वे इस बातमें गर्व अनुभव नहीं करते कि पठान एक अच्छा लड़ाका है। वे उसकी योग्यताकी क़द्र करते हैं परन्तु उनका विश्वास है कि अति प्रशंसासे उसे बिगाड़ दिया गया है। वे समाजमें पठानको इस रूपमें नहीं देखना चाहते। उनका विश्वास है कि पठानका शोषण किया गया है और उसे अंधेरेमें रखा गया है। वे चाहते हैं कि वह और भी अधिक वीर बने और अपनी वीरतामें सच्चे ज्ञानका समावेश करे जो कि उनके खयालसे केवल अहिंसाके द्वारा प्राप्त हो सकता है।

"और खान साहब मेरी अहिंसामें विश्वास करते हैं इसलिए उन्होंने यह चाहा कि मैं अधिकसे अधिक जितने समयतक हो सके, खुदाई खिदमतगारोंके

बीचमें रहूँ। मुझे तो यहाँ आनेके लिए किसी प्रलोभनकी आवश्यकता नहीं थी क्योंकि मैं तो स्वयं ही उनका परिचय पानेको उत्सुक था। मैं उनके हृदयोंतक पहुँचना चाहता था। मैं यह जानना चाहता था कि अबतक मैं ऐसा कर सका या नहीं। कुछ भी हो, मैंने प्रयत्न किया।

"परन्तु यह बतलानेसे पहले कि मैंने यह कार्य किस प्रकार किया और कितना किया, मैं अपने मेजबान खान साहबके सम्बन्धमें एक शब्द अवश्य कहूँगा। इस सम्पूर्ण दौरेमें उन्हें इस बातकी बड़ी फ़िक्र रही कि परिस्थितियोंके अनुसार मुझे अधिक-से-अधिक आराम पहुँचाया जाय। मुझे किसी प्रकारकी कठिनाई या कोई कमी न हो, इसके लिए कोई उपाय उठा नहीं रखा। मेरी सारी आवश्यकताओंका वे पहलेसे ही अनुमान कर लेते थे। उन्होंने जो कुछ किया उसमें कोई दिखावा नहीं था। वह सब उनके लिए बिलकुल स्वाभाविक था। वह एक हृदयसे किया गया था। उनके साथ छल-पाखण्डकी तो बात ही नहीं है। दिखावटसे वे बहुत दूर हैं। इसलिए उनकी देखभाल कभी अखरती नहीं और न कभी किसी काममें रुकावट ही डालती है, इसीलिए जब तक्षशिलामें हम एक-दूसरेसे अलग हुए तो हमारी आँखें आसुँओंसे गीली हो गयीं। विदा लेना कठिन हो गया और हम इस आशासे अलग हुए कि शायद अगले मार्चमें हम फिर एक-दूसरेसे मिलेंगे। सीमाप्रान्तको मेरे लिए एक ऐसा तीर्थ-स्थान बना रहना चाहिए जहाँ कि मैं आ-जा सकूँ क्योंकि शेष भारत सच्ची अहिंसा दिखलानेमें भले ही असफल हो जाय लेकिन यहाँ इस आशाकी बहुत गुञ्जाइश है कि सीमा-प्रान्त इस अग्नि-परीक्षामें खरा उतरेगा। इसका कारण अत्यन्त स्पष्ट है। बादशाह खानके अनुयायी, जिनकी संख्या एक लाखसे ऊपर बतलायी जाती है, स्वेच्छासे उनके आदेशोंका पालन करते हैं। वे उनके वचनोंको मानते हैं। जैसे ही उन्होंने कुछ कहा वैसे ही उसपर अमल किया जाता है। परन्तु खुदाई खिदमतगारोंकी उनके प्रति जो श्रद्धा है, उसके होते हुए भी खुदाई खिदमतगार रचनात्मक अहिंसाकी परीक्षामें उत्तीर्ण होंगे या नहीं यह तो आगे देखा जायगा······

"प्रारम्भमें ही हम दोनों; खान साहब और मैं, यह निर्णय कर चुके थे कि विभिन्न केन्द्रोंमें समस्त खुदाई खिदमतगारोंके आगे भाषण करनेकी अपेक्षा मुझे अपनी चर्चामें उनके नेताओंतक ही सीमित रहना चाहिए। इससे मेरी शक्ति बचेगी और उसका अधिक बड़ा उपयोग होगा। और यही हुआ भी। पाँच सप्ताहकी अवधिमें हम लोग समस्त केन्द्रोंमें गये और प्रत्येक केन्द्रमें हमने एक घण्टा या उससे कुछ अधिक समयतक बातचीत की। मैंने खान साहबको एक अत्यन्त

योग्य और विश्वस्त दुभाषिया पाया। और चूँकि जो कुछ मैंने कहा उसमें उनका विश्वास था, इसलिए मेरा भाषान्तर करनेमें अपनी सारी शक्ति लगा दी। वे एक जन्मजात वक्ता हैं। वे बड़ी गरिमाके साथ भाषण करते हैं और उनका काफ़ी प्रभाव भी पड़ता है।

"मैंने प्रत्येक सभामें इस चेतावनीको दुहराया कि यदि वे यह अनुभव नहीं करते कि उन्होंने अहिंसाके रूपमें एक ऐसा शस्त्र पा लिया है जो कि उनके उस शस्त्रसे, जिसका उन्होंने अबतक प्रयोग किया है, निश्चित ही श्रेष्ठ है तो उनको अहिंसासे कोई प्रयोजन नहीं रह जाता। वे अपने पहलेके शस्त्रोंको पुनः ग्रहण कर सकते हैं। ख़ुदाई खिदमतगारोंके सम्बन्धमें, जो इतने वीर रहे हैं, कभी यह नहीं सुना जाना चाहिए कि वे बादशाह खानके प्रभावमें आकर कायर हो गये या कायर बना दिये गये। उनकी वीरता उनके अच्छे निशानेबाज़ होनेमें ही निहित नहीं है बल्कि मृत्युको चुनौती देने और अपने नंगे वक्षपर गोलियाँ झेलनेके लिए सदैव तैयार रहनेमें भी है। उनको अपनी यह वीरता अखण्ड रखनी चाहिए और जब कभी भी अवसर आये तब उसको दिखलानेके लिए तैयार रहना चाहिए और सच्चे वीरोंको इस प्रकारके अवसर बहुधा बिना खोजे हुए ही मिल जाते हैं।

"यह अहिंसा एक निष्क्रिय गुण मात्र नहीं है। यह सबसे शक्तिशाली शस्त्र है जिससे ईश्वरने मनुष्यको सम्पन्न किया है। वास्तवमें अहिंसा ही मनुष्य और पशु-सृष्टिके बीचमें पहचान करती है। प्रत्येक व्यक्तिमें अहिंसा स्वाभाविक रूपमें रहती है परन्तु अधिकांशमें वह निद्रित अवस्थामें रहती है। सम्भवतः अंग्रेजीका 'नॉन वाइलैन्स' शब्द अहिंसाका पूरी तरहसे अर्थ नहीं दे पाता। जितने शब्द उसके भावको प्रतिपादित करते हैं उनमें भी यह एक अपूर्व अभिधार्थ है। इसके अर्थके निकट पहुँचनेके कारण 'लव' या 'गुड विल' शब्द इसके कहीं अच्छे अनुवाद हो सकते हैं। 'वाइलैंस' (हिंसा) का 'गुड विल' (सद्भावना) से सामना करना चाहिए। सद्भावनाका कार्य तभी प्रारम्भ होता है जब कि उसके मुकाबलेमें कोई दुर्भावना रहती है। भलेके साथ भला होना तो एक बराबरका विनिमय है।' ...

"इस 'नॉन वाइलैंस' या 'गुड विल' का प्रयोग केवल अंग्रेजोंके मुकाबलेमें ही नहीं करना चाहिए बल्कि हम लोगोंके बीचमें भी इसको अपना पूरा काम करने देना चाहिए। किसी अंग्रेजके विरुद्ध अहिंसा अवसर-विशेष या आवश्यकताके कारण अपनाया गया एक गुण हो सकती है और जिसमें अपनी कायरता या साधारण दुर्बलता बड़ी आसानीके साथ छिपायी जा सकती है। वहाँ वह केवल एक समयानुकूल 'औचित्य' हो सकती है, जैसा कि वह अक्सर होती भी है।

परन्तु उस समय, जब कि हमारे सामने हिंसा और अहिंसाके दोनों मार्ग समान रूपसे खुले हों और हमें उनमेंसे एक पसन्द कर लेना हो, वह एक 'समयानुकूल औचित्य' नहीं हो सकती। इस प्रकारके मौके अवसर हमारे पारिवारिक जीवनमें और सामाजिक तथा राजनीतिक सम्बन्धोंमें आते रहते हैं। केवल एक धर्मके प्रतिस्पर्धी सम्प्रदायोंमें ही नहीं बल्कि विभिन्न धर्मोंके अनुयायियोंके बीच भी ऐसे अवसर आया करते हैं। यदि हम अपने पड़ोसी या बराबरकी स्थितिके व्यक्तिके साथ सहनशील नहीं हैं तो हम अंग्रेजोंके साथ कभी सच्चे सहनशील नहीं हो सकते। इस प्रकार हमारी सद्भावनाका, यदि वह किसी मात्रामें हममें है, तो प्रायः प्रतिदिन परीक्षण होता रहता है। यदि हम इस सद्भावनाको सक्रियताके साथ काममें लाते रहेंगे तो हमें अपेक्षाकृत बड़े क्षेत्रमें इसका प्रयोग करनेकी आदत पड़ जायगी और अन्तमें यह हमारे स्वभावका एक अङ्ग बन जायगी।

''इसलिए खुदाई खिदमतगारोंकी अहिंसा उनके दैनिक कार्यों द्वारा व्यक्त होनी चाहिए और वह तभी प्रकट हो सकती है जब कि वे मन, वचन और कर्मसे अहिंसाव्रती हों।

''उस व्यक्तिको भी, जो अपने नित्यके व्यवहारमें शस्त्रोंके प्रयोगपर निर्भर करता है, एक नियमित सैनिक प्रशिक्षण लेना पड़ता है। इसी प्रकार ईश्वरके एक सेवकके लिए भी एक निश्चित परीक्षण अनिवार्य है। सन् १९२० की कांग्रेसके विशेष अधिवेशनके मूल प्रस्तावमें ही इसकी व्यवस्था की गयी थी। समय-समयपर उसपर बल दिया जाता रहा है और उसका विस्तार किया गया है। जहाँतक मेरी जानकारी है, इसका रंग कभी हल्का नहीं पड़ा। साम्प्रदायिक एकता, हिन्दुओं द्वारा छुआछूतका निवारण, घरोंपर हाथसे तैयार की गयी खादी का इस्तेमाल, जो कि भारतके लाखों लोगोंके साथ हमारी एकताका एक निश्चित प्रतीक है और मादक पेयों तथा औषधियोंका पूर्ण निषेध सक्रिय सद्भावनाकी परखकी कसौटी हैं। इस चतुर्मुखी कार्यक्रमको आत्मशुद्धिकी एक प्रक्रिया कहा जा सकता है। वह भारतके लिए संगठनयुक्त स्वाधीनता प्राप्त करनेकी एक निश्चित प्रणाली है। लगभग आधी शताब्दीतक कांग्रेसजन और देशने इस कार्यक्रमका पालन किया लेकिन यह पालन अधूरे मनसे किया गया, इसलिए उसने अहिंसाके एक जीवित विश्वासको, या उस प्रणालीको, जो उसके अभ्यासके लिए बतलायी गयी थी या दोनोंको एक धोखा दिया। लेकिन खुदाई खिदमतगारोंसे यह अपेक्षा की जाती है और उनपर इस बातके लिए भरोसा किया जाता है कि अहिंसामें उनका एक जीवित विश्वास है इसलिए उनसे यह भी आशा की जाती है कि वे

कांग्रेसके आत्मशुद्धिके सारे कार्यक्रमको पूरा करेंगे। मैंने इसमें कुछ चीजें और जोड़ दी हैं—गाँवकी सफाई, स्वास्थ्य रक्षा और मामूली डाक्टरी इलाज द्वारा गाँवोंकी सहायता। एक खुदाई खिदमतगार अपने कामोंके आधारपर जाना जायगा। गाँवको पहलेसे अधिक स्वच्छ रखे बिना और गाँववालोंकी उनकी साधारण बीमारियोंमें मदद दिये बिना कोई खुदाई खिदमतगार किसी गाँवमें नहीं रहेगा। चिकित्सालय या ऐसी ही चीजें आज धनिकोंके हाथके खिलौने हैं और ज्यादातर शहरोंमें रहनेवाले लोगोंको ही प्राप्त हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि देशमें अनेक औषधालय खोलनेके भी प्रयत्न किये गये परन्तु खर्चके कारण यह काम आगे नहीं बढ़ सका, जब कि खुदाई खिदमतगार एक छोटा-सा किन्तु सारयुक्त प्रशिक्षण प्राप्त करके गाँवोंमें फैलनेवाली बीमारियोंके अधिकांश मामलोंमें बड़ी आसानीसे सहायता पहुँचा सकते हैं।

"मैंने खुदाई खिदमतगारोंसे कहा कि सविनय आज्ञा-भंग अहिंसाका अंत है, उसका प्रारम्भ नहीं। फिर भी सन् १९१८ में एक अनुपयुक्त समयमें मैंने उसे शुरू किया। मैं उसकी अत्यधिक आवश्यकता समझ रहा था। लेकिन देशको इससे कोई हानि न हुई। मैं अपनेको अहिंसात्मक प्रक्रियाका एक विशेषज्ञ समझता था। मैं यह दावा भी करता था क्योंकि मैं यह अच्छी तरहसे जानता था कि अपने बढ़े हुए क़दमको कब और किस प्रकार वापस लौटाना चाहिए। पटनामें सविनय आज्ञा-भंगको स्थगित कर देना भी इसी प्रक्रियाका एक अंग था। सन् १९२० के रचनात्मक कार्यक्रमपर मुझको उस समय जितना विश्वास था, उतना ही आज भी है। जहाँतक पूर्ण स्वराज्यकी बात थी, मैं उस कार्यक्रमको समुचित रूपसे पूर्ण किये बिना सविनय आज्ञा-भंगके अभियानका नेतृत्व न कर सका। सविनय आज्ञा-भंगका अधिकार केवल उन्हींके लिए लाभकारक होता है जो स्वेच्छापूर्वक आज्ञा-पालन करनेके कर्त्तव्य और नियमोंको जानते हैं और उनका अभ्यास करते रहते हैं, भले ही यह नियम उनके बनाये हुए हों या दूसरेके। आज्ञा-भंग करनेसे या आज्ञाका पालन न करनेसे एक भय भी उपजता है। आज्ञा-पालन इस भयसे प्रेरित होकर नहीं होना चाहिए बल्कि यह समझकर होना चाहिए कि यह मेरा एक कर्त्तव्य है। आज्ञा-पालन केवल यंत्रवत् नहीं बल्कि पूरे हृदयसे होना चाहिए। इस प्रारम्भिक शर्तको पूर्ण किये बिना सविनय आज्ञा-भंग नाम-मात्रका 'सविनय' होता है। उस समय वह एक शक्तिशालीकी नहीं बल्कि एक दुर्बलकी सविनय अवज्ञा होती है। यदि वह सविनय आज्ञा-भंग सद्भावना-के द्वारा कर्त्तव्यप्रेरित है तो वह अहिंसा है। सविनय अवज्ञाके दिनोंमें खुदाई

खिदमतगारोंने यंत्रणाओंको सहन करके असंदिग्ध रूपसे अपनी वीरता प्रदर्शित की है, जैसी कि अन्य प्रान्तोंके हजारों लोगोंने की । लेकिन यह हृदयकी सद्-भावनाका एक निश्चित प्रमाण नहीं मानी जा सकती। किसी पठानका केवल देखनेमें अहिंसक होना उसकी एक कमी ही कही जा सकती है । उसको इस दुर्ब-लताका दोषी नहीं होना चाहिए ।

"मैंने जो कुछ कहा, वह सब खुदाई खिदमतगारोंने बड़े ध्यानसे सुना । उनका अहिंसापर विश्वास अबतक खान साहबके प्रभावसे मुक्त नहीं है । बल्कि वह उन्हींसे प्राप्त किया गया है । उनका खुदाई खिदमतगारोंके हृदयपर एकछत्र राज्य है । जबतक खुदाई खिदमतगारोंकी अपने नेतापर अविचल श्रद्धा है तब-तक उनके विश्वासको किसी प्रकारसे कम प्राणवान् नहीं कहा जा सकता । और खान साहबका विश्वास कहनेभरका नहीं है । उसमें उन्होंने अपना सारा हृदय उड़ेला है । जिनको इसपर सन्देह हो, वह उनके साथ रहकर देख ले जैसे कि मैं पिछले पांच सप्ताहसे उनके साथ हूं । उनका सन्देह उसी प्रकार नष्ट हो जायगा, जिस प्रकार कि प्रभातके सूर्यके आगे कुहरा गल जाता है ।

'मेरे इस सारे दौरेने एक प्रख्यात पठान सज्जनके मनपर अपना यह प्रभाव डाला । मैं उनसे अपने दौरेके आखिरी दिनोंमें मिला था, 'आप जो कुछ कर रहे हैं, वह मुझको पसन्द है । आप बहुत चतुर हैं । मैं यह नहीं जानता कि चालाक शब्द सही है या नहीं । मेरे यहांके लोग जितने वीर हैं, आप उनको उससे अधिक वीर बना रहे हैं । आप उनको अपनी शक्तिका मितव्यय करना सिखला रहे हैं । वास्तवमें, एक सीमातक अहिंसक होना भला है । और यह भी कि उनका प्रशि-क्षण आपके द्वारा होगा । हिटलरने हिंसाके व्यावहारिक प्रयोग किये और उनके द्वारा हिंसाके तकनीकको अपनी चरम सीमापर पहुँचा दिया । लेकिन आप हिट-लरसे भी आगे बढ़ गये । आप हमारे यहांके लोगोंको अहिंसाका प्रशिक्षण दे रहे हैं और उनको बिना किसीको मारे हुए स्वयं मरना सिखला रहे हैं, ताकि यदि कभी बलके प्रयोगका अवसर आये तो वे एक बिलकुल नये ढंगसे उसका इस्ते-माल करें और किन्हीं भी अन्य लोगोंकी अपेक्षा उसका प्रभावशाली ढंगसे इस्ते-माल करें । मैं आपको इसके लिए बधाई देता हूं ।'

"मैं चुप हो गया और मेरी यह इच्छा न हुई कि इस भ्रमके कुहासेसे मुक्त करनेके लिए मैं उनको कोई उत्तर दूं । मैं मुस्कराया और फिर विचारमग्न हो गया । मुझे अपनी यह प्रशंसा अच्छी लगी कि पठान मेरी शिक्षाओंके कारण (उनके फलस्वरूप) और भी अधिक वीर बन जायेंगे । मेरे निकट ऐसा एक

भी उदाहरण नहीं है कि कभी कोई व्यक्ति मेरे प्रभावमें आकर कायर बना हो। परन्तु मेरे मित्रका यह निष्कर्ष कुछ चुटीला था। खुदाई खिदमतगारोंने अहिंसा-की जिस 'क्रीड'की शपथ ग्रहण की है, उसकी अंतिम परीक्षामें यदि वे खरे न उतरे तो यह निश्चय हो जायगा कि वस्तुतः उनके हृदयोंमें अहिंसा नहीं थी। उसका प्रमाण भी शीघ्र ही सामने आ जायगा। यदि वे एक लगन और आस्था-के साथ कांग्रेसके रचनात्मक कार्यक्रमको पूरा करते हैं तो आलोचकोंकी भविष्य-वाणी पूरी होनेका कोई भय न रहेगा और जब कभी परीक्षाका समय आयेगा तब वे संसारके वीरतम पुरुषोंमें गिने जायँगे।

युद्ध और अहिंसा

१९३९

गांधीजीकी सम्मतिसे खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने जो योजना निश्चित की थी उसको कार्यान्वित करनेके लिए उन्होंने रचनात्मक प्रवृत्तियोंका प्रबल प्रचार प्रारंभ कर दिया। जैसे ही गांधीजीने सीमाप्रान्तसे विदा ली वैसे ही खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँने वहाँके ग्रामीण क्षेत्रके हिन्दुओं और सिखोंमें विश्वास उत्पन्न करनेके लिए बन्नू और डेरा इस्माईल खाँके जिलोंका दौरा शुरू कर दिया। इस इलाकेमें बसनेवाले हिन्दू और सिख भयभीत हो गये थे और उनमेंसे बहुत अधिक परिवार अपने पैतृक मकानोंको छोड़कर सीमान्त प्रदेशके विभिन्न कस्बोंमें रहने चले गये थे। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ और खुदाई खिदमतगारोंने उनको सुरक्षाका आश्वासन दिया जिसके परिणामस्वरूप बहुत काफ़ी लोग अपने-अपने गाँवोंमें वापस लौट आये। जिन लोगोंने डकैती और अपहरणके निरन्तर खतरेके कारण लौटनेसे इनकार कर दिया था, उनको वापस लानेके लिए उस क्षेत्रके मुसलमानोंके प्रतिनिधिमंडल गये। उन लोगोंने हिन्दुओं और सिखोंको यह आश्वासन दिया कि वे उनकी सुरक्षा और शांतिकी व्यक्तिगत रूपसे जिम्मेदारी लेनेको तैयार हैं। अनेक खुदाई खिदमदगार दूरस्थ गाँवोंमें शान्तिका सन्देश लेकर गये। खुदाई खिदमतगारोंके मार्गदर्शनके लिए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने पख्तूमें एक लघु पुस्तिका लिखी। उसमें उन्होंने उन लोगोंको इस बातके लिए प्रोत्साहित किया कि वे विरोधियोंके साथ सहनशीलताका व्यवहार करें। उन्होंने कुरानसे यह आयत उद्धृत की : "हे विश्वासियो, जब तुम्हें बल, दमन और असंयमका सामना करना पड़े तो तुम अपने सच्चाईके मार्गको न छोड़ना और सारी कठिनाइयों और कष्टोंको धैर्यके साथ सहन करना।"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँकी प्रार्थनापर गाँधीजीने पहले मीरा बेनको और फिर बीबी अम्तुस्-सलमको मुसलमान महिलाओंमें शिक्षाके प्रसार और समाज-सुधारके कार्योंमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको सहायता देनेके लिए भेजा। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने अपने पत्र 'पख़्तून' में एक स्तम्भ खोला। इस स्तम्भका उद्देश्य यह था कि महिलाएँ स्वयं अपनी समस्याओंपर लेख लिखें। 'मैं इस बातके लिए अत्यन्त उत्सुक हूँ कि पत्रके प्रत्येक अङ्कमें मुझे महिलाओंसे एक या दो लेख प्राप्त

हों।' उन्होंने निवेदन किया, 'और इस दिशामें मैं अपने कुछ मित्रों द्वारा भी प्रयत्न कर रहा हूँ। जब पख़्तून पुनः प्रकाशित हुआ तब मैंने आशा की थी कि पख़्तून महिलाएँ अपनी निजकी समस्याओंके सम्बन्धमें लेख भेजेंगी। इसके लिए मैंने काफ़ी समयतक प्रतीक्षा की लेकिन अब मेरा धीरज भी ख़तम हो रहा है। पहले वे मनोरंजक विषयोंपर लेख भेजा करती थीं परन्तु जबसे पत्रका पुनः प्रकाशन प्रारम्भ हुआ है तबसे पिछले छ: महीनेमें उनके द्वारा लिखा गया केवल एक लेख मुझको प्राप्त हुआ है और वह भी बम्बईसे आया है। मुझको ऐसा जान पड़ता है कि अपनी बहिनों और पुत्रियोंका स्तर उठानेमें अब किसीको दिलचस्पी नहीं है। यहाँ मैं अपने पठान बन्धुओंका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करना चाहता हूँ कि जबतक महिलाएँ अज्ञानसे मुक्त नहीं होतीं तबतक संसारका कोई भी समाज अज्ञानके अन्धकारसे मुक्त नहीं हो सकता। जिस समाजकी नारियाँ सुशिक्षिता नहीं हैं, वह कभी स्वाधीनता प्राप्त नहीं कर सकता। स्त्री और पुरुष किसी गाड़ीके दो पहियोंकी भाँति हैं। एक पहियेके सहारे गाड़ी नहीं चल सकती। मांकी गोद बालकके लिए पहला प्रशिक्षण विद्यालय है। वास्तवमें बालक ही किसी समुदायका निर्माण करता है। एक योग्य माताका पाला हुआ बालक योग्य निकलेगा और शिक्षिताका सुशिक्षित। किसी भी बालकपर किसी पिताका उतना प्रभाव नहीं पड़ता जितना कि एक माताका पड़ता है। बहुतसे पढ़े-लिखे परिवारोंको देखकर मुझको हँसी आती है। उनके यहाँ स्त्रियाँ अशिक्षिता हैं। किसी भी समुदायकी सभ्यता और संस्कृति बहुत सीमातक उसकी महिलाओंके योगदानपर ही निर्भर करती है।

मीरा बेनने गांधीजीको कार्यकी प्रगतिका विवरण भेजा। गांधीजीने मीरा बेनको लिखा : "यदि आपने धैर्य रखा तो आप देखेंगी कि पठान आपको अपना आत्मीय समझने लगा है। पठान सराहना करने योग्य लोग हैं। यदि उन्होंने एक बार आपके ऊपर विश्वास कर लिया तो वे आपके आगे अपना हृदय खोलकर रख देंगे।" गांधीजीका इरादा मार्चमें फिर सीमाप्रान्त जानेका था लेकिन भारतीय नरेशोंसे, विशेष रूपसे राजकोटसे उनका संघर्ष छिड़ जानेके कारण उनको वह स्थगित कर देना पड़ा। ७ जुलाई सन् १९३९ को उन्होंने सीमाप्रान्तमें प्रवेश किया। लेकिन इस बीच उनका स्वास्थ्य गम्भीर रूपसे बिगड़ गया था और इस बार वे ज़िलों या खुदाई खिदमतगारोंके केन्द्रोंमें भी न जा सके। ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने उनको विश्राम देनेके लिए पर्वतीय स्थान अबोटाबादमें उनके शान्तिपूर्ण आवासकी व्यवस्था कर दी। गांधीजीको भेंट-मुलाक़ातों तथा अन्य आबंधोंसे

मुक्त रखा गया था इसलिए उनके पास विचार करने और लिखनेका पर्याप्त समय था।

अपने विदा लेनेके समय, २४ जुलाईको गांधीजीने अबोटाबादमें एक सार्वजनिक सभाको सम्बोधित किया :

"जब मैं यहाँ आया तब मैंने सोचा भी न था कि इस बार भी, अपने इस प्रान्तके मेरे इस तीसरे दौरेमें भी आप मुझको मान-पत्र भेंट करेंगे। मेरा यह ख़याल था कि अबतक मैं आपके इस प्रांतमें पर्याप्त रूपसे घुल-मिल गया हूँ और आपमेंसे ही एक हो गया हूँ। इसलिए अब मुझको मान-पत्र अर्पित करनेके इस शिष्टाचारकी कोई आवश्यकता नहीं रह गयी है।"

"क्या मैं यह अनुमान करूँ कि इस बार भी मुझे अपनी थैली मिलेगी ?" गांधीजीने अपना निर्मल हास्य बिखेरते हुए कहा, "पिछली बार आपने मुझे एक मान-पत्र और एक थैली भेंट की थी, लेकिन इस बार आपने मुझे केवल मान-पत्र दिया है। क्या मैं यह जान सकता हूँ कि मुझको प्रतिष्ठाके इस आसनसे क्यों उतार दिया गया ?"

इसके पश्चात् गांधीजी गम्भीर हो गये और उन्होंने साम्प्रदायिक एकताके ज्वलन्त प्रश्नपर अपने विचार प्रकट करते हुए कहा :

"मुझको एक बारसे अधिक यह शिकायत सुननेको मिली है कि मेरी ओरसे काफ़ी प्रयत्न न होने कारण हिन्दू-मुसलिम एकताकी स्थापनामें इतना विलम्ब हुआ है। मुझे यह भी सुननेको मिला कि यदि मैं इस कार्यमें पूर्ण रूपसे अपनेको केन्द्रित कर दूँ तो हिन्दुओं और मुसलमानोंकी ऐक्यकी समस्या आज ही सुलझ जाय। क्या मैं आपको इस बातका आश्वासन दे सकता हूँ कि यदि मैं आज इस कार्यमें संलग्न नहीं लग रहा हूँ तो इसका कारण यह नहीं है कि हिन्दू-मुस्लिम एकतामें मेरा उत्साह शिथिल पड़ गया है। अबतक मैंने यह अनुभव नहीं किया था लेकिन आज मैं यह महसूस कर रहा हूँ कि इस उच्च ध्येयके लिए मैं अपूर्ण हूँ। मैं यह भी अनुभव कर रहा हूँ कि केवल बाह्य साधन इस प्रकारके महद् उद्देश्योंकी प्राप्तिके लिए अपर्याप्त सिद्ध होंगे। मेरी यह आस्था उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है कि इन सबके लिए पूर्ण 'प्रभु-कृपा' आवश्यक है।

"यदि आप मेरा हृदय चीरकर देख सकें तो आप यह पायेंगे कि मैं सो रहा होऊँ या जाग रहा होऊँ, उसमें हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिए एक प्रार्थना और एक आत्मिक पिपासा, अनवरत रूपसे, बिना एक भी क्षण रुके हुए चलती जा रही है। मैं यह जानता हूँ कि हिन्दू-मुस्लिम एकताके बिना भारतको किसी

प्रकार स्वराज्य नहीं मिल सकेगा। किसी भी व्यक्तिको यह कल्पना नहीं करनी चाहिए कि हिन्दुओंका समुदाय बहुसंख्यक है इसलिए वह अन्य समुदायोंके आधार और सहायताके बिना, सविनय आज्ञा-भंग आयोजित करके भारतके लिए या अपने लिए स्वाधीनता अर्जित कर सकता है। जैसा कि मैंने बहुधा आपसे कहा है कि एक शुद्ध प्रकारका सविनय आज्ञा-भंग, यदि थोड़ेसे व्यक्तियोंतक सीमित हो तो भी उसका एक प्रभाव होगा। परन्तु उस स्थितिमें उन थोड़ेसे लोगोंके लिए यह अनिवार्य होगा कि वे स्वयंमें समग्र राष्ट्रकी इच्छा-शक्ति और ताक़तका प्रतिनिधित्व करें। क्या सशस्त्र युद्धमें भी ऐसा ही नहीं होता? युद्धमें लड़ते हुए सेनादलको पूरे देशके नागरिकोंके आधार और सहायताकी अपेक्षा होती है। बिना उसके उसकी स्थिति एक पंगु जैसी होगी। मैं स्वराज्यके लिए अधीर हूँ इसलिए मुझे हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यके लिए अधीर होना ही चाहिए। मेरा यह पूर्ण विश्वास है कि हिन्दू और मुसलमानोंके बीचमें एक सच्ची और स्थायी हार्दिक एकता, जो मात्र एक राजनीतिक गठबंधन नहीं होगी, आज या कल स्थापित होगी ही। और शायद जल्दी होगी। अपनी बाल्यावस्थासे ही मैं एक स्वप्न देखता आ रहा हूँ और वह स्वप्न अब मेरे अस्तित्वमें समाहित हो गया है। मुझको अपने पिताके समयके वे अत्यंत सजीव प्रसंग याद हैं जब कि राजकोटमें हिन्दू और मुसलमान प्रेम भावसे रहा करते थे, आपसके घरेलू कार्य-भार और समारोहोंमें रक्त-सम्बन्धके भाइयोंकी भाँति सम्मिलित हुआ करते थे। मेरा विश्वास है कि इस देशमें वे दिन एक बार फिर वापस लाये जा सकते हैं। हिन्दू और मुसलमानोंके बीचका यह कलह और आपसमें एक-दूसरेपर दोषारोपण मात्र एक भ्रम है जो कि स्वाभाविक भी नहीं है। यह भ्रम सदा नहीं बना रहेगा।

"इस संसारमें महानतम कार्य, सहायताविहीन मानव-प्रयाससे पूर्ण नहीं होते। वे अपने सुनिश्चित समयपर आकर ही पूरे होते हैं। ईश्वर अपने निजके तरीकेसे कार्यके उपकरण चुनता है। यह भी हो सकता है कि नित्यकी इन हार्दिक प्रार्थनाओंके बाद भी मुझको इस महान् कार्यके लिए योग्य व्यक्ति न समझा जाय। हम सबको अपनी कमर कसकर और (मार्गके लिए) अपने दीपकोंको सँवारकर तैयार रहना चाहिए। यह नहीं कहा जा सकता कि ईश्वर कब और किस मनुष्यके द्वारा किसी महत् कार्यको सम्पूर्ण कराना चाहेंगे? आप अपनी सारी जिम्मेदारी मुझपर ढकेलकर उससे बच नहीं सकते। मेरे लिए प्रभुसे यह प्रार्थना कीजिए कि मेरा स्वप्न मेरे इस जीवनमें ही साकार हो जाय। हमको अपने मनमें उत्साहहीनता और निराशावादको स्थान नहीं देना चाहिए।

मनुष्य हिसाब लगाकर अपना अंक रखता है परन्तु ईश्वरके (सहायता देनेके) मार्ग उससे कहीं अधिक हैं।

"मुझे यह जानकर दु:ख हुआ है कि इस प्रान्तमें भी कांग्रेसके पदाधिकारियों के बीच आंतरिक झगड़े चल रहे हैं। कल मैं एक घण्टेसे भी अधिक समयतक आपकी प्रान्तीय कांग्रेस समितिके सदस्योंसे घिरा रहा। उन लोगोंने मुझसे उसे दूर करनेका उपाय पूछा। मैंने कहा कि समस्याका समाधान तो आपके हाथमें है। आपने खान साहब अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको अपना बिना मुकुटका राजा चुना है। आपने उनको 'बादशाह खान' और 'फ़ख्रे-अफ़गान'की गर्वपूर्ण उपाधियां दी हैं। उनका आदेश आपके लिए एक कानून होना चाहिए। उनका तर्क-वितर्कोंके ऊपर विश्वास नहीं है; वे जो कुछ भी कहते हैं, हृदयसे कहते हैं। आपने उनको जो उपाधियाँ प्रदान की हैं उनको यदि आप सार्थक करना चाहते हैं और उन्हें केवल मौखिक सराहना नहीं रहने देना चाहते तो आपको अपने निजी मत-भेदोंको भूल जाना चाहिए और हिल-मिलकर एक टोलीकी भाँति उनके नीचे काम करना सीखना चाहिए।

"अगला प्रश्न सीमा-प्रान्तकी जनताकी ग़रीबीका है। मुझको यह बतलाया गया कि उसमेंसे बहुतसे लोग मुश्किलसे पेट भरने योग्य भोजन जुटा पाते हैं। पठानों जैसी तगड़ी जातिके लिए यह दुर्दशा कोई शोभनीय वस्तु नहीं है बल्कि वह अपमानजनक है। लेकिन पहले प्रश्नकी भाँति इस प्रश्नका हल भी मुख्य रूपसे आपके हाथोंमें है। आपको लोगोंको अपने हाथोंसे काम करना सिखलाना चाहिए और स्वयं भी श्रमकी गरिमाका अनुभव करना चाहिए। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि मंत्रिमंडल उनको सुविधाएँ दे सकता है और वह उनको देगा भी परन्तु कठिन परिश्रम स्वयंसेवकोंको ही करना पड़ेगा।

"ईश्वर उन्हें सत्पथ दिखलाये। मैं यह जानता हूँ कि जब हम आपसमें झगड़ते हैं तब आज़ादीको शीघ्र लानेके बारेमें ही झगड़ते हैं। हमें यह आशा है कि हमारी स्वाधीनता ही हमारी सारी बीमारियोंको; सारी बुराइयोंको दूर कर देगी। हमारा स्वाधीनता प्राप्त करनेका उत्साह; हमें एकतामें बांधकर रखनेवाला सूत्र; हमको विभाजित करनेवाले समस्त मतभेदोंसे अधिक शक्तिशाली सिद्ध हो।"

गांधीजीके वर्धा पहुँच जानेके तुरन्त बाद कतिपय महत्त्वपूर्ण निर्णय लेनेके लिए ९ अगस्तसे कांग्रेस कार्यकारिणी समितिका त्रिदिवसीय अधिवेशन प्रारम्भ हुआ। समितिने नाज़ुक अन्तर्राष्ट्रीय स्थितिपर विचार-विमर्श किया। उसने एक साम्राज्यवादी युद्धके प्रति अपना विरोध घोषित किया और अपने इस दृढ़ निश्चय

पर वल दिया कि भारतके ऊपर युद्ध थोपनेके जो भी प्रयत्न किये जायँगे, उन सबका समिति विरोध करेगी।

अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति बड़ी तेजीसे बिगड़ती जा रही थी। हिटलर द्वारा पोलैण्ड को अन्तिम चेतावनी दे देने और नाज़ी जर्मनी और सोवियत संघके बीच एक अनाक्रमण समझौतेपर हस्ताक्षर हो जानेसे स्थिति और भी गम्भीर हो गयी। पोलैण्डपर जर्मनी द्वारा आक्रमण कर देनेके कारण ३ सितम्बर सन् १९३९ को ब्रिटेनने जर्मनीके विरुद्ध युद्ध घोषित कर दिया। वाइसरायने भारतके नेताओं तथा विधान-सभाओंसे बिना राय लिये ही उसी दिन युद्धकी घोषणा कर दी। इसके बाद देशमें कई अध्यादेश लागू कर दिये गये। बादमें वाइसरायने मशविरे के लिए जिन लोगोंको आमंत्रित किया, उनमें गांधीजी भी थे। ५ सितम्बरको वे शिमला पहुँचे। अपने वक्तव्यमें गांधीजीने कहा :

"कांग्रेसके सामने अपनी स्थिति बिलकुल स्पष्ट कर देनेके बाद मैंने हिज़ एक्स-लैन्सीको यह बतला दिया कि मेरी निजकी सहानुभूति ब्रिटेन और फ्रांसके साथ है। अबतक दुर्जेय समझे जानेवाले लन्दनके विनाशके विचार मात्रसे मेरा अंतर-तम उद्वेलित हो उठा है। मैं अपनेको अत्यंत दुःखी अनुभव कर रहा हूँ। मेरे और ईश्वरके बीच इस बातपर लगातार झगड़ा चल रहा है कि वह ऐसी चीज़ोंके चलते रहनेकी अनुमति क्यों दे रहा है ? मुझे अपनी अहिंसा प्रायः प्रभावहीन लगने लगी है। परन्तु नित्यके झगड़ेके इस अंतमें मुझे यह जवाब मिलता है कि न ईश्वर और न अहिंसा ही प्रभावहीन है। मुझे आशाका त्याग किये बिना प्रयत्न करते रहना चाहिए, भले ही मैं इस प्रयासमें टूट जाऊँ।

"और इसलिए, हाँलाकि एक घोर पीड़ा मेरी पहलेसे ही प्रतीक्षा कर रही थी, मैंने २३ जुलाईको अबोटाबादसे हिटलरको एक पत्र भेजा :

"... यह नितान्त स्पष्ट है कि आप आज इस विश्वमें एक व्यक्ति हैं जो युद्ध-को रोक सकते हैं; उस युद्धको जो मानवताको अपनी पिछली वहशी अवस्थामें पहुँचा देगा। क्या आप इस उद्देश्यके लिए, चाहे वह आपको कितना ही मूल्यवान क्यों न प्रतीत होता हो, यह कीमत चुकाना चाहेंगे ? क्या आप किसी ऐसे व्यक्ति-के निवेदनको सुनना चाहेंगे जिसने कि जान-बूझकर युद्धकी प्रणालीको, अपने तरीकेमें एक महत्त्वपूर्ण सफलता पाकर एक ओर हटा दिया ?....."

"और अब भी कुछ ऐसा लग रहा है कि जैसे हर हिटलर ईश्वरको नहीं बल्कि पशुबलको ही पहचानता है। ...इस महानाशके बीचमें, जिसकी किसीसे तुलना नहीं की जा सकती, कांग्रेसजन और अन्य समस्त भारतवासियोंको व्यक्ति-

गत रूपसे और सामूहिक रूपसे यह निश्चय करना पड़ेगा कि इस भयानक नाटक-में भारतको कौन-सी भूमिका निभानी है ?"

हिन्दू महासभा, दि क्रिश्चियन कान्फ्रेन्स, लिबरल फेडरेशन और भारतीय नरेश सरकारको अपना पूर्ण सहयोग देनेके लिए तैयार थे। मुस्लिम लीगने ब्रिटिश सरकारको यह चेतावनी दी कि वह मुसलमानोंके सहयोगपर तभी निर्भर कर सकती है जब कि कांग्रेस मंत्रिमंडलों द्वारा शासित प्रदेशोंमें मुसलमानोंके साथ 'न्यायपूर्ण, समान व्यवहार' किया जाय। संविधान सम्बन्धी वृद्धि या नये संवि-धानकी रचनाके समय मुस्लिम लीगकी, जो कि मुसलमानोंकी एकमात्र प्रतिनिधि संस्था है, सलाह और स्वीकृतिके बिना किसीको कोई आश्वासन नहीं दिया जाना चाहिए। अन्य लोगोंकी विचार-अभिव्यक्तिके रूपमें ८ सितम्बरको एक वक्तव्य प्रकाशित किया गया जिसके ऊपर श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर तथा अन्य लोगोंके हस्ताक्षर थे। इस वक्तव्यमें ग्रेट ब्रिटेनका साथ देनेके लिए भारतका आह्वान किया गया था और बलके द्वारा किसी भी देशपर अपना प्रभुत्व स्थापित करनेकी अभागी नीतिका विरोध किया गया था।

वर्धामें एक सप्ताहतक कांग्रेसकी कार्यसमितिकी बैठक हुई और उसमें लड़ाई छिड़ जानेके कारण उत्पन्न हुई परिस्थितिपर एक सप्ताहतक विचार-विमर्श हुआ। इस चर्चामें भाग लेनेके लिए मि० जिनाको आमन्त्रित किया गया परन्तु अपने 'पूर्व नियोजित कार्यक्रमों' के कारण वे उसमें उपस्थित नहीं हो सके। इस बैठकमें श्री सुभाषचन्द्र बोसको विशेष आमंत्रण देकर बुलाया गया था। गांधीजीने इस बैठकमें पूरी तरहसे भाग लिया। वर्धाकी इस बैठकमें एक लम्बा प्रस्ताव पारित हुआ जिसमें कि कांग्रेसका दृष्टिकोण स्पष्ट रूपसे व्यक्त किया गया था। इस ऐतिहासिक प्रस्तावमें यह कहा गया था, "समान लोगोंमें आपसकी रज़ामन्दीसे, ऐसे हेतुके लिए, जिसे कि दोनों इस योग्य समझें, सहयोग होना चाहिए।....अभी कुछ समय पूर्व ही भारतकी जनताने एक बहुत बड़े खतरेका सामना किया और अपनी निजकी स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिए और भारतमें एक मुक्त लोकतंत्रीय राज्यकी स्थापना करनेके लिए स्वेच्छापूर्वक महान् त्याग किये। उसकी सहानुभूति पूर्ण रूपसे लोकतन्त्र और स्वाधीनताके साथ है। लेकिन भारत किसी ऐसे युद्धमें शामिल नहीं होना चाहता जिसे लोकतन्त्रीय स्वाधीनताके लिए लड़ा जानेवाला बतलाया जाता है जब कि उसी स्वाधीनताको उसके स्वयं के लिए अस्वीकार किया जा रहा है। ....इसलिए कार्यसमिति ब्रिटिश सरकार-को इस बातके लिए आमंत्रण देती है कि वह स्पष्ट शब्दोंमें लोकतन्त्र और साम्रा-

ज्यवाद सम्बन्धी अपने उद्देश्योंको घोषित करे और उस नवीन व्यवस्थाको बतलाये जिसपर कि वह विचार करने जा रही है। विशेष रूपसे यह कि वे उद्देश्य भारतपर किस प्रकार लागू किये जायँगे और वर्तमानपर उनका क्या प्रभाव है?"

गांधीजीने इस प्रस्तावपर टिप्पणी करते हुए कहा : "विश्व-संकटकी स्थितिपर कांग्रेस कार्य-समितिने अपना जो वक्तव्य दिया उसको अंतिम रूप देनेमें उसको चार दिन लग गये। इस प्रारूपपर, जिसे कि कार्य-समितिके आमंत्रणपर पंडित जवाहरलाल नेहरूने तैयार किया था, प्रत्येक सदस्यने मुक्त रूपसे अपने विचार व्यक्त किये। मेरा विचार यह था कि अंग्रेजोंको जो भी सहायता दी जाय वह विना किसी शर्तके दी जाय। लेकिन मुझे खेद है कि मैं अकेला ही यह विचार रखता था। इस प्रकारका सहयोग केवल शुद्ध अहिंसात्मक आधारपर दिया जा सकता है। परन्तु कार्य-समितिके आगे बहुत बड़े उत्तरदायित्व हैं जिनको कि उसे पूरा करना है। वह इस पूर्ण अहिंसात्मक रुखको स्वीकार न कर सकी। कांग्रेसकी कार्य-समितिने यह अनुभव किया कि अहिंसाकी भावनाको आत्मसात् करके राष्ट्रने अभी इतना बल अर्जित नहीं किया है कि वह कठिनाईमें पड़े हुए विरोधीकी स्थितिका लाभ लेनेकी प्रवृत्तिसे अपनेको बचा सके। लेकिन अपने निर्णयोंके कारण स्पष्ट करते हुए समितिने अंग्रेजोंके प्रति एक बहुत बड़ा आदर प्रदर्शित किया है।"

२५ सितम्बरको गांधीजीने 'कॉनन ड्रम्स' (पहेली) के अन्तर्गत लिखा :

"अहिंसाकी भांति हिंसाकी भी कोटियाँ या श्रेणियाँ होती हैं। कार्यसमिति अपनी किसी स्वेच्छाके कारण अहिंसाकी नीतिसे दूर नहीं हटी है। वह ईमानदारीके साथ अहिंसाके यथार्थ आशयोंको अंगीकार नहीं कर सकी। उसने यह अनुभव किया कि कांग्रेसजनोंका विशाल समुदाय कभी स्पष्ट रूपसे यह नहीं समझा कि बाहरी खतरेका कोई प्रसंग आता है तो उनको अपने देशकी अपने अहिंसात्मक साधनोंसे रक्षा करनी है। वे केवल इतना सीख सके हैं कि ब्रिटिश सरकारके विरुद्ध अहिंसात्मक प्रणालीसे सफलतापूर्वक कैसे लड़ सकते हैं। कांग्रेसजनोंने यह प्रशिक्षण भी नहीं लिया है कि अन्य क्षेत्रोंमें अहिंसाका प्रयोग कैसे करना चाहिए। उदाहरणके लिए वे अवतक कोई ऐसा निश्चित अहिंसात्मक ढंग नहीं खोज सके जिससे कि साम्प्रदायिक दंगों या गुण्डागिरीको सफलतापूर्वक समाप्त किया जा सके। इसलिए जहाँतक वास्तविक अनुभवका प्रश्न है, वहाँतक कार्यसमितिका तर्क आधाररूपमें एक अंतिम तर्क है। यदि मैं अपने श्रेष्ठतम सहकर्मियोंको इस

कारणसे छोड़ देता हूँ कि वे अहिंसाके एक बढ़े हुए प्रयोगमें मेरे साथ नहीं चल सके तो मैं अहिंसाके हेतुकी सेवा नहीं कर सकूँगा। और इसलिए मैं इस विश्वास-के साथ उनके बीचमें रहूँगा कि उनका अहिंसाकी प्रणालीसे यह दूर हट जाना एक संकीर्ण क्षेत्रतक ही सीमित रहेगा और स्थायी नहीं होगा।

"मेरे पास कोई पूर्ण रूपसे तैयार साकार योजना नहीं है। मेरे लिए भी यह एक नया क्षेत्र है लेकिन जहाँतक साधनोंकी बात है, मेरे आगे उनको चुनने-का सवाल नहीं है। चाहे मैं कार्य-समितिके सदस्योंके बीचमें रहूँ या वाइसरायके साथ रहूँ, मेरे साधन पूर्ण रूपसे अहिंसक होंगे, इसलिए मैं जो कुछ कह रहा हूँ वह एक साकार योजनाका अंश है। जिस प्रकार मेरी अन्य योजनाएँ धीरे-धीरे मेरे सामने खुलती गयी हैं उसी प्रकार इस योजनाका स्वरूप भी मेरे आगे दिन-प्रतिदिन स्पष्ट होता जायगा। मैं अंग्रेजोंसे तुरंत यह कहूँगा कि वे अपने शस्त्र फेंक दें। वे अपनी सारी परतंत्र जनताको मुक्त कर दें, अपनेको 'लिटिल इंग-लैण्डियर्स' कहलानेमें गर्व अनुभव करें और विश्वके समस्त एकदलवादियोंको स्थितिको बदतर न बनाने दें। इस प्रकार बिना अवरोध किये हुए अंग्रेज मृत्युका वरण करें और अहिंसाके वीर नायकोंके रूपमें इतिहासके पुरुष बनें। इससे भी आगे मैं भारतवासियोंको यह आमंत्रण दूँगा कि वे दिव्य बलिदानमें अंग्रेजोंका साथ दें। यह एक ऐसी भागीदारी होगी जिसकी कहानी उनके अपने शरीरके रक्तके अक्षरोंसे लिखी जायगी। तब वे उनके तथाकथित शत्रु नहीं रह जायँगे। लेकिन मेरे पास ऐसी कोई शक्ति नहीं है। अहिंसा एक धीरे-धीरे बढ़नेवाला पौदा है। वह अत्यंत सूक्ष्मताके साथ बढ़ता है लेकिन बढ़ता निश्चित रूपसे है। अपने लिए यह खतरा होते हुए भी कि कहीं मुझको गलत न समझ लिया जाय मैं अपनी अंतरात्माके क्षीण स्वरके आदेशके अनुसार ही कार्य करूँगा।"

उन्होंने लिखा है : "मेरे कुछ मित्र मुझसे यह कहते हैं कि मुसलमान बिना मिलावटकी अहिंसाको स्वीकार नहीं करेंगे। उन लोगोंका कहना है कि मुसल-मानोंके लिए हिंसा उतनी ही धर्मसम्मत है जितनी कि अहिंसा। इन दोनोंका प्रयोग परिस्थितियोंपर निर्भर करता है। यह निश्चित करनेके लिए कि दोनों ही धर्म-सम्मत हैं, मैं कुरानका प्रमाण देनेकी आवश्यकता नहीं समझता। अहिंसा एक जाना-पहचाना पथ है जिसके ऊपर विश्व युगोंसे चलता आ रहा है। संसार में अमिश्रित हिंसा जैसी कोई वस्तु नहीं है। मेरे अनेक मुसलमान मित्रोंने मुझको यह भी बतलाया कि कुरान शरीफ़ हमें अहिंसाका प्रयोग सिखलाता है। वह बदला लेनेसे सहनशीलताको उत्कृष्ट बतलाता है। इस्लामका शाब्दिक अर्थ शान्ति

है जो वस्तुतः अहिंसा ही है। बादशाह ख़ान एक विश्वासी मुसलमान हैं। उन्होंने पूर्ण अहिंसाको अपनी आस्थाके रूपमें स्वीकार किया है।"

दिनांक ७ अक्तूबरके 'हरिजन' के अंकमें गांधीजीने लिखा :

"अपनी यात्रामें एक पठानने मुझसे हिंसक कार्योंके विषयमें चर्चा करते हुए कहा, 'यह तो आप जानते ही हैं कि सरकार इतनी शक्तिशाली है कि अपने देशमें वह हिंसाको तुरन्त दबा देती है, चाहे वह कितनी ही संगठित क्यों न हो। लेकिन आपकी अहिंसा बड़ी चतुर है। आपने हमारे देशको एक आश्चर्यजनक अस्त्र दिया है। संसारकी कोई भी सरकार अहिंसाको दबा नहीं सकती।' मेरे मुलाक़ातीने मुझे जो अद्भुत विचार दिया, उसके लिए मैंने उसको बधाई दी। उसने अहिंसाके अनुपम सौन्दर्यको एक वाक्यमें व्यक्त कर दिया। यदि भारत केवल उस पठानकी इस स्वाभाविक, इस सहज उक्तिके पूर्ण आशयोंको समझ लेता है तो कितने ही आक्रमणकारियोंकी मिली-जुली टोली उसपर हमला क्यों न करे, वह सदैव अजेय रहेगा। यह निश्चित है कि जिन लोगोंने अहिंसाका प्रशिक्षण लिया है उनके ऊपर छापा नहीं मारा जायगा। वास्तवमें दुर्बलसे दुर्बल राज्य भी, यदि अहिंसाकी कलाको सीख लेता है तो वह अपनेको आक्रमणसे मुक्त रख सकता है। लेकिन एक छोटा राज्य, अपनेको चाहे कितने ही शस्त्रोंसे क्यों न सजा ले, शक्तिशाली शस्त्रसज्जित राज्योंके समूहके बीचमें अपने अस्तित्वकी रक्षा नहीं कर सकता। उसका उनमेंसे किसीमें विलय हो जायगा या उसे उन राज्योंमेंसे किसीके संरक्षणमें रहना पड़ेगा। बादशाह ख़ानने ठीक ही कहा है, 'यदि हमने अहिंसाके पाठको न सीखा होता तो हममें बुराइयाँ बनी रहतीं। हमने उसे स्वार्थके कारण स्वीकार किया। हम लोग जन्मजात लड़ाके हैं और अब हम अपनी परम्पराकी एक-दूसरेसे लड़कर ही रक्षा कर रहे हैं। एक बार किसी परिवारमें या किसी खेलमें कोई हत्या हो जाय तो वह प्रतिकारके लिए एक सम्मानका प्रश्न बन जाता है। सामान्य रूपसे हम लोगोंमें क्षमा जैसी कोई चीज़ नहीं होती। और इसलिए हममें बदला, फिर उस बदलेका बदला चलता रहता है, और इस प्रकार दूषित चक्र चलता ही जाता है और वह कभी खत्म नहीं होता। यह अहिंसा हम लोगोंमें निःसन्देह एक मुक्ति; एक छुटकारा बनकर आयी है।' जो कुछ सीमाप्रान्तके लिए सच है, वह हम सब लोगोंके लिए सच है। उससे अपरिचित रहकर हम हिंसाके दूषित घेरेमें चक्कर काटते रहते हैं। एक छोटा-सा विचार और उसके अनुरूप अभ्यास ही हमको इस योग्य बनायेगा कि हम उस घेरेसे बाहर निकल सकें।"

युद्ध और अहिंसा

१७ अक्तूबर १९३९ को लार्ड लिनलिथगोने एक घोषणा की जिसमें मुस्लिम लीगके इस दावेको कि वह भारतके मुसलमानोंकी ओरसे बोल सकती है, असंदिग्ध रूपमें स्वीकार किया गया था। उसमें उन्होंने इस वचनको दुहराया था कि भारतमें ब्रिटिश नीतिका उद्देश्य इस देशको डोमिनियन पद देनेका है। इसके लिए युद्धके पश्चात् सन् १९३५ के अधिनियमपर पुनः विचार किया जायगा और उस समय सभी अल्पसंख्यकोंकी रायको उचित आदर दिया जायगा। तात्कालिक कार्यवाहीके रूपमें वाइसरायने यह प्रस्ताव किया कि युद्ध-चालनके सम्बन्धमें भारतीय लोक-मतसे सम्पर्क रखनेके लिए एक सलाहकार परिषद्का गठन किया जाय जिसमें कि सारे भारतका प्रतिनिधित्व हो।

"वाइसरायकी यह घोषणा पूर्ण रूपसे निराशाजनक है।" गांधीजीने कहा। कांग्रेसकी कार्यसमितिने भारतका विरोध व्यक्त करनेके लिए कांग्रेसके मंत्रिमण्डलोंसे त्यागपत्र दे देनेको कहा क्योंकि भारतको बिना उसकी स्वीकृतिके ही एक युद्ध-संलग्न देश घोषित कर दिया गया था। ब्रिटिश सरकारने उसको यह बतलानेसे भी बराबर इनकार किया था कि यह युद्ध किन सिद्धांतोंकी रक्षाके लिए लड़ा जा रहा है और वे भारतके मामलेमें किस प्रकार लागू होते हैं। कार्यसमितिके आह्वानपर, उसका आदेश पालन करनेके लिए सीमाप्रान्तके मंत्रिमंडलने नवम्बरके महीनेमें त्याग-पत्र दे दिया। उसके त्यागपत्रके पश्चात् वहाँ कोई दूसरा मंत्रिमंडल न बन सकता था इसलिए उस प्रान्तपर गवर्नरका शासन थोप दिया गया।

कांग्रेसकी कार्यसमितिकी बैठक समाप्त हो जानेपर गांधीजीने उसके सदस्योंसे अहिंसाके प्रश्नपर उसके सारे ब्योरोंके साथ विचार करनेको कहा। यह प्रश्न ही उनका सारा समय खींच रहा था, यहाँतक कि गांधीजीने पूर्ण मौन ग्रहण कर लिया। वे केवल उन्हीं लोगोंसे मिलते जो उनसे पहले मुलाक़ातका समय निश्चित कर लेते। वे प्रायः बहुत सबेरे उठ बैठते और इस प्रश्नपर ही विचार करने लगते। मौलाना आज़ादने लिखा है, "गांधीजीके लिए यह एक कठिन समय था। वे यह देख रहे थे कि युद्धकी नाशकी लपटें तेज होती जा रही हैं और वे उसे रोकनेके लिए कुछ भी नहीं कर पा रहे हैं। वे इतने दुःखी हो गये कि कभी-कभी वे आत्महत्या कर डालनेकी बाततक कहने लगे। उन्होंने मुझसे कहा कि यदि वे युद्धजनित कष्टोंको रोक नहीं सकते तो इतना तो कर ही सकते हैं कि वे स्वयं अपने जीवनका अन्त करके उनके प्रत्यक्ष साक्षी न बनें।"

२४ अक्तूबरको गांधीजीने संपादकीयमें लिखा कि कांग्रेस कार्यकारिणी

समितिने सविनय आज्ञा-भंगकी व्यवस्था और नियंत्रण उन्हें सौंप रखा है। उन्होंने जनताको बुरेसे बुरे परिणामके प्रति सजग रहनेको कहते हुए लिखा :

"कार्यकारिणी समितिका फैसला, अगर भारतकी आज़ादीके लिए कांग्रेसका ईमानदार प्रयास है तो वह कांग्रेसके अनुशासन और अहिंसाकी भी कसौटी है। हालाँकि फैसलेमें इस बातका उल्लेख नहीं है, परन्तु समितिने अपनी इच्छासे सविनय आज्ञा-भङ्गका नियंत्रण और व्यवस्था मेरे सुपुर्द की है। यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि सदस्य और ग़ैर-सदस्य कांग्रेसियोंके विशाल बहुमतकी मेरे प्रति या समितिके प्रति या 'हरिजन' द्वारा प्रसारित आदर्शोंके प्रति आत्मप्रेरित विधेयताके सिवाय मुझे न कोई अधिकार है और न उसकी कोई कामना ही है। अतः जिस क्षण मैं अपने निर्देशोंको प्रभावहीन अनुभव करूँगा उसी समय कांग्रेसी लोग मुझे बिला हुज्जतके मैदान छोड़ते हुए पायेंगे। दूसरी ओर, यदि संघर्ष मेरे निर्देशमें होगा तो मैं अपने अनुयायियोंसे कठोरतम अनुशासनके पालनकी अपेक्षा करूँगा। मेरा ख्याल है कि यदि कांग्रेसके लोग पूर्ण अनुशासन और सत्य तथा अहिंसाके प्रति पूर्ण श्रद्धा नहीं रखते तो व्यापक पैमानेपर सविनय आज्ञा-भंग सम्भव ही नहीं है।"

१ नवम्बर १९३९ को गांधी, कांग्रेस अध्यक्ष श्री राजेन्द्रप्रसाद और मुस्लिम लीगके अध्यक्ष श्री जिना प्रबन्ध समितिके विस्तारके ब्रिटिश सरकारके प्रस्तावपर बहस करनेके लिए वाइसरायसे एक साथ मिले। ब्रिटिश सरकार यदि सार्वजनिक घोषणा द्वारा कांग्रेसके विचारोंके अनुकूल अपनी नीति नहीं निर्धारित करती तो कांग्रेसी नेता सहयोगके किसी सुझावपर बात करनेको तैयार नहीं, यह बात बिलकुल स्पष्ट कर दी गयी। साथ ही असली मसलेपर साम्प्रदायिकताके सवालकी घटा प्रसारित करनेकी कोशिशका भी उन्होंने विरोध किया। इस मसलेपर ब्रिटिश हस्तक्षेपसे समझौता होना और भी कठिन हो गया। श्री जिनाने कहा कि कांग्रेसी नेताओंका यह रुख उनमें और कांग्रेसी नेताओंमें बातचीतकी सम्भावनाको समाप्त करता है। इस प्रकार जिच पैदा की गयी और वाइसरायने एक वक्तव्य प्रसारित कर दिया। गांधीजीकी प्रतिक्रिया यह रही :

"ग्रेट ब्रिटेन और भारतसे प्रसारित अबतकके सारे वक्तव्य एक ही स्वरमें हैं जिन्हें भारतकी स्वाधीनता-प्रिय जनता शंकाकी दृष्टिसे देखती है और नापसन्द करती है। अगर साम्राज्यवाद मर गया है तो अतीतसे अलगाव साफ़ नज़र आना चाहिए। नये समयके अनुकूल भाषाका प्रयोग होना चाहिए। यदि इस बुनियादी सच्चाईको स्वीकार करनेका समय अभी नहीं आया है तो मैं कहूँगा कि समझौते-

पर पहुँचनेकी सारी कोशिशें स्थगित कर दी जायें। इस सम्बन्धमें मैं ब्रिटेनके राजनीतिज्ञोंसे कहना चाहता हूँ कि ब्रिटेन हिन्दुस्तानके प्रति अपनी नीतिका इरादा घोषित करे और ऐसा करते समय हिन्दुस्तान क्या चाहता है इसे अपनी दृष्टिमें न रखे। अगर मालिक अपने गुलामोंको आज़ाद करनेका फैसला कर ले तो वह अपने गुलामोंसे सलाह नहीं करेगा कि वे आज़ादी पसन्द करते हैं या नहीं।"

मुस्लिम लीगने लीगी मंत्रिमण्डलोंका युद्धमें सरकारका सहयोग इस शर्तपर जारी रखा कि सरकार भावी संविधानके निर्माणकी कांग्रेसी योजनाको अस्वीकृत कर दे। श्री जिनाने २२ दिसम्बर १९३९ के दिन मुक्ति दिवस मनानेकी घोषणा करके सबको चकित कर दिया। उन्होंने मुसलमानोंसे अपील की कि इस दिन वे खुदाका शुक्र अदा करें कि अन्ततः कांग्रेस सरकार ध्वस्त हो गयी। पिछले ३० माहके 'अत्याचार, दमन और अन्याय' के कांग्रेसी राजके खातमेके उपलक्ष्यमें, जिसमें कांग्रेसने मुस्लिम मत और मुस्लिम संस्कृतिको नष्ट करनेका भरसक प्रयास किया और मुसलमानोंके धार्मिक और सामाजिक जीवनको चौपट करनेका कुचक्र रचा और उनके राजनीतिक अधिकारोंको कुचल डाला, सभाओंके आयोजनोंकी व्यवस्था की गयी।

गांधीजीने श्री जिनासे अपील की कि मुक्ति दिवस न मनाया जाय। श्री जिनाने दलील दी कि गांधीने अपने कन्धोंपर दोषारोपक और न्यायाधीश दोनोंके उत्तरदायित्व उठा लिये हैं। सरदार पटेलने जिनाके अभियोगोंका निराकरण किया। उन्होंने कहा कि जब मुस्लिम लीगने पीरपुर कमेटीके जरिये पहले-पहल कांग्रेस मंत्रिमंडलपर अभियोग लगाये, तब उन्होंने प्रत्येक अभियोगकी जाँच करके रिपोर्ट भेजनेका आदेश दिया था। इन प्रतिवेदनोंसे स्पष्ट था कि अभियोग एकदम निराधार हैं। कुछ माह बाद, कांग्रेस अध्यक्ष श्री राजेन्द्रप्रसादने कहा कि यदि श्री जिना आवश्यक समझें, तो अभियोगोंकी जाँच एक उच्चस्तरीय स्वतंत्र कमेटी करे, परन्तु इस बातको जिनाने यह कहते हुए इनकार कर दिया कि उन्होंने अभियोग वाइसरायकी खिदमतमें पेश कर दिये हैं। जब श्री जिनाने दोबारा अभियोग लगाये तो पटेलने मंत्रियोंको निर्देश दिया कि इन अभियोगोंकी ओर गवर्नरका ध्यान दिलायें क्योंकि अभियोगोंसे गवर्नर भी बरी नहीं हैं और मंत्रियोंने श्री पटेलको सूचना दी कि गवर्नरोंकी दृष्टिमें ये सारे अभियोग निरर्थक हैं। फलतः श्री पटेलको मानना पड़ा कि ये अभियोग बेबुनियादी हैं और साम्प्रदायिक शांतिको नष्ट करनेके इरादेसे लगाये गये हैं।

मौलाना आज़ादने मुक्ति दिवसके विरोधमें आवाज बुलंद की : "और अब,

जब कि कांग्रेसने अपनी इच्छासे ८ सूबोंकी सरकारोंसे अपनेको अलग कर लिया है, तो लीगके अध्यक्ष मुसलमानोंको क्या सलाह देते हैं ? सलाह यह है कि मुसलमान मस्जिदोंमें जायें और उस कांग्रेस मंत्रिमंडलसे छुटकारेके लिए खुदाका शुक्र अदा करें, जिसने सत्तासे कर्त्तव्यको अधिक महत्त्व दिया है और केवल हिन्दुस्तानकी आज़ादीके सवालपर ही नहीं बल्कि सभी पददलित लोगोंके अधिकारोंके सवालपर भी इस्तीफा दिया है। यह कल्पना करना बड़ा मुश्किल है कि मुसलमानोंका कोई वर्ग, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेससे जिसका कितना ही विरोध क्यों न हो, दुनिया के सामने इस रूपमें पेश किया जाना कैसे सहन कर सकता है ?"

दिसम्बर १९३९ के दिन कार्यकारी समितिकी बैठक वर्धामें हुई और वहाँ पिछली बातोंको दुहराया गया। प्रस्तावके उपसंहारमें कहा गया : "कांग्रेसने अब यह अनुभव कर लिया है कि अत्यन्त कठोर परिश्रमके बिना आज़ादी नहीं हासिल की जा सकती। और चूंकि कांग्रेस अहिंसाके लिए कृतसंकल्प है, उसका अन्तिम अस्त्र सविनय आज्ञा-भंग है, जो सत्याग्रहका ही एक भाग है। सत्याग्रहका अर्थ है सबके प्रति सद्भावना, विशेषतः विरोधियोंके प्रति। अतः कांग्रेसके लोगोंका कर्तव्य है कि वे सद्भावनाकी वृद्धि करें अहिंसा, शांति और आर्थिक आज़ादीके प्रतीक रूपमें खद्दर योजनाकी सफलता अनिवार्य है।"

कार्यकारिणी समितिमें सम्मिलित होनेके बाद पत्रकारोंसे खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने कहा कि केवल बातचीतके द्वारा साम्प्रदायिक एकता क़ायम नहीं की जा सकती। एकताकी राहमें काँटे बिछ गये हैं। बातोंके द्वारा काँटे हटाये नहीं जा सकते और एकताकी राह मखमली नहीं की जा सकती। इसके लिए कुछ बड़े लोगोंके पीछे पड़नेसे, जो सिर्फ़ बोलते ही रहते हैं, कोई लाभ नहीं। इसके लिए साधारण जनताके दिल और दिमागको बदलनेके लिए ईमानदार कोशिश होनी चाहिए। जनताके बीचमें रहकर लम्बे अर्सेतक चुपचाप काम करनेसे ही यह एकता पैदा हो सकती है।

एक उलझन

१९४०

मार्च १९४० में बिहारमें रामगढ़ कांग्रेस अधिवेशनके अवसरपर पटनामें कार्यकारिणी समितिने निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किया :

"...ब्रिटिश सरकारकी हालकी भारत संबंधी घोषणाओंसे स्पष्ट है कि ग्रेट ब्रिटेन बुनियादी तौरपर लड़ाईको साम्राज्यवादी उद्देश्योंसे जारी रख रहा है और उसका उद्देश्य अपने साम्राज्यको प्रबलतर बनाना है जो भारत और अन्य एशियाई तथा अफ्रीकी देशोंकी जनताके शोषणपर टिका हुआ है। ऐसी परिस्थितिमें यह स्पष्ट है कि कांग्रेस किसी भी प्रकारसे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे लड़ाईमें साझीदार नहीं हो सकती जिसका अर्थ होगा इस शोषणको जिंदा रखना और शाश्वतता प्रदान करना ... ।

"कांग्रेस घोषणा करती है कि भारतकी जनता पूर्ण स्वाधीनतासे कम किसी चीजको स्वीकार नहीं करेगी। भारतकी स्वतंत्रता साम्राज्यवादके घेरेमें रह नहीं सकती। साम्राज्यवादी व्यवस्थाके अंतर्गत स्वायत्त शासन या दूसरी कोई व्यवस्था भारतमें लागू नहीं की जा सकती, क्योंकि वह भारत जैसे एक बड़े राष्ट्रकी शानके खिलाफ़ बात होगी और बहुतसे मामलोंमें भारत, ब्रिटिश राजनीति और ब्रिटिश अर्थ-व्यवस्थाका मुहताज हो जायगा। वयस्क मताधिकारके आधारपर संगठित संविधान सभाके माध्यमसे केवल भारतकी जनता ही अपना संविधान आप निर्माण कर सकती है और दुनियाके दूसरे मुल्कोंके साथ अपना नाता आप जोड़ सकती है।

"कांग्रेसकी राय यह भी है कि यद्यपि कांग्रेस हमेशाकी तरह सांप्रदायिक शांतिको बनाये रखनेकी हर संभव कोशिश करेगी, परन्तु इसका स्थायी हल संविधान सभाके माध्यमसे ही संभव है, जिसमें बहुसंख्यकों और विभिन्न अल्पसंख्यकोंके निर्वाचित प्रतिनिधियोंके बीच सभी मसले भरसक समझौतोंके द्वारा तय होंगे और जिस मसलेपर समझौता नहीं हो पायेगा, उसपर पंचनिर्णय द्वारा सभी मान्यताप्राप्त अल्पसंख्यकोंके अधिकारोंकी पूरी रक्षा की जायगी। और किसी दूसरे प्रकारसे स्थायी हल नहीं निकल सकता। भारतका संविधान स्वतंत्रता, प्रजातंत्र और राष्ट्रीय एकताके आधारपर निर्मित होगा और कांग्रेस, भारतके

बँटवारे या भारतकी राष्ट्रीयताको विघटित करनेकी कोशिशोंको नाकामयाब करनेकी कोशिश करेगी। कांग्रेसने हमेशासे एक ऐसे संविधानको अपना लक्ष्य बनाया है जिसके अंतर्गत सबको पूरी-पूरी आज़ादी होगी, विकासके समान अवसर उपलब्ध होंगे और व्यक्तिगत तथा सामाजिक अन्यायके स्थानपर एक न्यायसंमत सामाजिक व्यवस्थाकी स्थापना हो सकेगी।

"हिन्दुस्तानकी आज़ादीकी राहमें भारतीय राज्योंके शासकों या विदेशी निहितस्वार्थी तत्त्वोंके हस्तक्षेप करनेके अधिकारको कांग्रेस अमान्य करती है। हिन्दुस्तानकी प्रभुसत्ता जनताके हाथोंमें ही होनी चाहिए....

"कांग्रेस, सभी वर्गों और संप्रदायोंका प्रतिनिधित्व बग़ैर जाति या धर्मका प्रश्न उठाये, करनेका प्रयास करती है और हिन्दुस्तानकी आजादीकी लड़ाई, पूरे मुल्ककी आज़ादीकी लड़ाई है। इसलिए कांग्रेस आशा करती है कि इसमें सभी जातियों और वर्गोंके लोग सहयोग करेंगे। सविनय आज्ञा-भंगका उद्देश्य सारे देशमें आत्मोत्सर्गकी भावना उत्पन्न करना है......।"

रामगढ़में गांधीजीने कार्यकारिणी समितिके सदस्योंसे अपने तीन प्रश्नोंपर प्रकाश डालनेके लिए कहा : "पहला प्रश्न यह कि यदि कांग्रेसके सामने हिन्दू भारत और मुस्लिम भारतके रूपमें भारतके विभाजनकी मांग पेश की जाय तो कांग्रेस क्या रुख अख्तियार करेगी ? दूसरा सवाल यह कि क्या देश सविनय आज्ञाभंगके लिए तैयार है ? और अंतिम प्रश्न यह कि संविधान सभाके बारेमें आपकी स्पष्ट कल्पना क्या है ?"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने कहा : "अगर सविनय आज्ञा-भंगका दायरा जेल जानेतक है, तो सीमाप्रांतमें इसके लिए बहुतसे लोग तैयार हैं। मगर सविनय आज्ञाभंगका अर्थ सिर्फ़ जेल जाना नहीं है। जो जेल जाते हैं वे जानेका मतलब नहीं समझते। मुझे सन्देह होता है कि शायद हम उस चीज़के क़ाबिल ही नहीं हैं जिसके लिए हम जूझ रहे हैं। हमारे हाथोंमें जो थोड़ीसी सत्ता आयी उसीसे उन लोगोंकी कलई खुल गयी जिन्हें हम फ़रिश्ता समझ रहे थे। थोड़ी सत्ताके आते ही मैंने अपने इर्द-गिर्द जितना भ्रष्टाचार देखा वह आश्चर्यजनक था। भावी आज़ादीके योग्य इन्सानोंको अगर तैयार नहीं किया गया तो सविनय अवज्ञा एक खतरनाक हथियार सिद्ध होगी। हमें अपनेको, औरोंको और पाक बनाना होगा।"

सरदार पटेलने कहा : "संविधान सभाकी हमें कोई स्पष्ट कल्पना नहीं है। अगर यह विधेयक क्रांतिकारी है तो युद्ध और शांतिके लक्ष्योंकी घोषणाकी मांग मूर्खता थी। हमने अंग्रेजोंके साथ सहयोग किया; वरना हम उनसे लड़ते। युद्धके

कारण सांप्रदायिक प्रश्न तीखा हुआ। अगर मुसलमान भारतका बँटवारा चाहते हैं तो शायद हम 'हां' कह दें। केवल हिन्दू इसे नहीं मानेंगे।

"हिंसा और अनुशासनहीनताकी शक्ति बढ़ती जा रही है। परन्तु यह कब-तक चलेगा? हमारी तैयारियोंके पूर्ण होनेकी आशा मुझे तो नहीं दिखती। मुस्लिम लीगसे खतरा अलग है। राजा लोग भी खतरा उत्पन्न कर सकते हैं। इन दोनोंमें गुप्त समझौता हो चुका है। अतः हमें अपनेको निष्क्रिय प्रतिरोधकी सीमाओंमें कुचलने नहीं देना है।"

श्री जवाहरलाल नेहरू बोले: "भारतके बँटवारेके सवालका अंदाज़ ग़लत है। इस प्रश्नपर इस समय बहस करना खतरनाक होगा। इससे सभी विघटन-कारी ताक़तोंको बल मिलेगा।

"प्रश्न यह है: क्या हम अंग्रेजोंकी सत्तासे मुस्लिम सत्ताको अच्छा मानेंगे? मैं मुसलमानोंके दमनके लिए अंग्रेजोंकी मदद लेनेसे इनकार करूँगा। मगर हमें गतिरोध उत्पन्न करनेवाली सांप्रदायिक हरक़तोंका कोई इलाज खोजना ही पड़ेगा।

"जबतक ब्रिटिश सत्ता पूरे तौरसे हट नहीं जाती तबतक संविधान सभाका कोई सवाल नहीं उठता। इस संविधान सभामें या तो सांप्रदायिकताका मसला हल होगा या गृहयुद्धका जन्म होगा। अगर इसे अंग्रेजोंका किसी रूपमें संरक्षण प्राप्त होगा तो वे सांप्रदायिकताके सवालसे फ़ायदा उठानेकी भरसक कोशिश करेंगे। ब्रिटिश सेनाकी वापसी, संविधान सभाकी पहली मांग होनी चाहिए। ब्रिटिश व्य-वस्थाके स्थानपर एक नयी और शक्तिशाली सत्ता स्थापित होगी। अगर सचमुच संविधान सभा जैसी कोई चीज़ होगी तो श्री जिना जैसे लोग पुरअसर ढंगसे काम नहीं कर पायेंगे। वे लोग इससे और वयस्क मताधिकारसे घबराते हैं। अगर हम सही पग नहीं उठा सकते, तो हम प्रतीक्षा करें।"

श्री राजेन्द्रप्रसाद बोले, "संविधान सभाकी बात लखनऊमें पहले-पहल उठी। इस प्रश्नके उत्तरमें कि हमें किस बातसे तसल्ली मिलेगी, गोलमेज संमेलनकी बजाय, आत्मनिर्णय हो और आत्मनिर्णयकी बातसे संविधान सभाका खयाल आया। युद्धसे उत्पन्न संकटसे इस विचारको महत्त्व मिला। ब्रिटिश सरकारके प्रत्येक प्रस्तावके जवाबमें हम यह मांग पेश करने लगे। पटना प्रस्तावमें संविधान सभाकी सीमा संकुचित कर दी गयी है। इसका संगठन कैसे होगा? बाहरी दुनियाके दबाव और हमारी आंतरिक शक्तिसे ब्रिटिश सरकारको हमसे ऐसा कोई समझौता करना पड़ सकता है, जो दोनों पक्षोंको मान्य हो। मौजूदा हालतोंको

देखते हुए, हम ब्रिटिश सत्ताके लोप हो जानेकी कल्पना नहीं कर सकते। संविधान सभा इसकी तफ़सीलमें जायगी और समझौतेका ढाँचा तैयार करेगी।

"संविधान सभामें राजनीतिक या सांप्रदायिक जिच उत्पन्न होनेपर क्या होगा यह मैं नहीं कह सकता। ब्रिटिश सरकार इसमें निर्णायक पार्ट अदा करेगी। अगर मतभेद बुनियादी सवालोंपर हुए तो उसका अंजाम गृहयुद्ध होगा।"

श्री राजगोपालाचारीने कहा, "मैं तो संविधान सभाका कोई क्रांतिकारी आधार नहीं देख पाता। व्यवस्थित सभा तभी स्थापित हो सकेगी जब उसकी बुनियादमें सशक्त और व्यवस्थित सरकार होगी। संविधान सभाके आह्वानके लिए यह शर्त लगाना कि पहले ब्रिटिश सत्ता समाप्त हो जाय, उलझन और विप्लवको निमंत्रण देना होगा। हम कोई वैकल्पिक व्यवस्था दे नहीं पायेंगे। ब्रिटिश सरकारसे हम पूर्ण आत्मसमर्पणकी आशा नहीं कर सकते। यह मानव-स्वभावके विपरीत बात है।

"सविनय आज्ञाभंगके छेड़े जानेपर हम कुचल दिये जायँगे। यह वक्तको पीछे लौटानेका काम होगा। सविनय आज्ञाभंगसे बचावकी तकनीक विकसित कर ली गयी है। हमें एक साल या इससे ज्यादा अर्सेतक उपयुक्त वातावरणकी प्रतीक्षा करनी होगी। जल्दबाज़ी करनेपर सबके हौसले पस्त हो जायँगे। श्रमिक आंदोलनोंसे हिंसा उत्पन्न होगी और सांप्रदायिक वैमनस्य उत्पन्न होगा।"

मौलाना आज़ादने कहा : "असलमें संविधान सभा, हिन्दुस्तानकी आज़ादीकी मांगका एक तेवर थी। इसके अंतर्गत वर्तमान व्यवस्थामें क्रांतिकारी बदलावोंकी कल्पना है, मगर यह ब्रिटिश सरकारसे समझौतेकी राह बंद नहीं करती। इसके अंतर्गत ब्रिटिश सत्ताकी वापसी उतनी ज़रूरी नहीं, जितनी कि ब्रिटिश दिमाग़में एक क्रांतिकारी परिवर्तन ज़रूरी है। यही हमारा मक़सद है। हम चाहते हैं कि अंग्रेज हमारी मांगें मान लें और अपना विरोध खत्म करें।"

"अहिंसा हमें बहुत दूरतक ले जा सकती है। अगर अहिंसाके हथियारमें कोई दोष नहीं है तो हमें उसपर कोई रोक नहीं लगानी चाहिए। हमारी ताक़तसे हथियारका असर साबित होगा। युद्ध चल रहा है, हमारा शत्रु परेशानीमें है। अगर हममें आन्तरिक शक्ति है तो हम आत्मनिर्णय जैसी कोई चीज़ प्राप्त कर सकते हैं। पूर्ण स्वतंत्रता नहीं मिल सकती। मेरा ख्याल है, अगर कोई बहुत ही असाधारण उथल-पुथल न मच जाय तो हम उन्हें अपनी सारी मांगोंको माननेके लिए मजबूर नहीं कर सकते। हमारी मौजूदा ताक़त सीमित है। १९३० में हमारे सामने अपने लड़नेके तरीक़ेका एक साफ़ नक़्शा था। आज हमारे सामने

कोई नक़्शा नहीं है। पटना प्रस्तावोंका स्वाभाविक परिणाम सिविल नाफ़रमानी या उसके लिए तैयारी है। हम अपने फ़ैसलेसे पीछे नहीं हट सकते। सरकारने जवाब दे दिया है। हमें केवल यह निश्चय करना है कि हमारी लड़ाईका स्वरूप क्या होगा।"

गांधीजीने कहा : "मैं संविधान सभाका जो मतलब समझता हूँ वह आप लोगोंको बतलाना चाहता हूँ। संक्रमण कालमें, हम ब्रिटिश सरकारके आगे कोई शर्त नहीं रखेंगे। सेना रहेगी और उसकी प्रशासकीय व्यवस्था भी रहेगी। संविधान सभाके पहले और बाद ब्रिटिश सरकारके साथ समझौते होंगे। अगर हम अल्पमतमें हुए तो भी संविधान सभाके निर्णयोंको मानेंगे—और कुछ न सही तो अनुशासनकी दृष्टिसे। अगर वे चाहें कि सेना बनी रहे तो हम प्रतिरोध नहीं करेंगे। अगर अल्पसंख्यक लोग सेनाको हटाना नहीं चाहते तो मैं भी सेना-को हटानेकी जिद नहीं कर सकता। अगर असंभव मांगें उठायी जाती हैं तो भी हमें उन्हें मानना होगा। भ्रष्ट लोग आकर खेल बिगाड़ दें तो भी हम कुछ नहीं कर सकते। संविधान सभाके लिए मताधिकार जितना ही व्यापक होगा उतना ही भला होगा। संविधान सभाके संगठन और प्रभावशाली ढंगसे कार्यक्षम होनेके लिए पारस्परिक सद्भाव आवश्यक है। इसके बगैर, ब्रिटिश सरकार राजाओं और मुस्लिमोंको हमारे खिलाफ़ इस्तेमाल कर सकती है।

"आप लोगोंसे मैंने जो कुछ सुना उससे मेरी यह धारणा और पक्की हुई है कि देश अभी सविनय अवज्ञाके लिए तैयार नहीं है। मुझे आशा नहीं है कि हम अपनी तैयारियाँ बहुत बेहतर कभी कर भी पायेंगे। संयुक्त प्रांतमें काम अच्छा हुआ है। मगर जवाहरलालजीने जो चेतना उत्पन्न की है उसमें मैं अहिंसाका विकास नहीं कर सकता। खादीसे जनतामें अहिंसक शक्ति उत्पन्न होगी। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि हम अहिंसासे पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त कर सकते हैं। थोड़ेसे अनुशासित छोटे कांग्रेसियोंको लेकर मैं सारी दुनियासे लड़ सकता हूँ, बड़े कांग्रेसी दुःसाध्य हैं। सविनय अवज्ञाके छेड़नेपर अवज्ञा तो होगी परन्तु 'सविनय' न होगी। ऐसी स्थितिमें मैं सविनय अवज्ञा छेड़ नहीं सकता। अगर कांग्रेससे मेरा मौजूदा नाता टूट जाय तो शायद मैं कोई नयी राह निकाल सकूँ। मैं अपना कार्यक्रम छोड़ नहीं सकता। मैं जिद्दी नहीं हूँ। मगर मेरे पास कोई दूसरा कार्यक्रम नहीं है। प्रचारके ज़रिये आंदोलन खड़ा करके, मैं अहिंसक सेना नहीं तैयार कर सकता। जनताको श्रम द्वारा अनुशासित करना होगा। फिर वह सेना गुमराह नहीं होगी। जनतामें अहिंसा आसानीसे उत्पन्न की जा सकती है।"

गांधीजीने आगे कहा :

"सर मारिस ग्वायरने बातचीतके दौरान श्री भूलाभाई देसाईसे कहा है कि गांधी अपने मक़सदके बारेमें बहुत कड़े पड़ गये हैं। बात सच है। मुझे दूसरी ओरसे कोई ईमानदार जवाब नहीं मिलता। देशके अन्दर मेरी अपनी परेशानियाँ हैं। मेरे पास लड़ाईके सही साधनोंका अभाव है। अपनी शर्तें पूरी होनेतक मैं लड़ाई छेड़ नहीं सकता। मैं जनताका कुचला जाना भी नहीं चाहता। बग़ैर तैयारीके लड़ाई छेड़ देनेपर हमारे देशका निर्धन वर्ग मारा जायगा। मुझे राजकोटसे वापस लौटना पड़ा क्योंकि वहाँ आंतरिक शक्ति नहीं थी। जो भी शक्ति थी, वह वास्तविक कम, दिखावटी अधिक थी। मेरी वापसी राजकोटकी जनताकी बहुत बड़ी सेवा थी क्योंकि अगर मैं ऐसा न करता तो वहाँ प्रतिक्रिया और दुःख-दर्द होते। मैं ऐसा कोई काम करना नहीं चाहता जिससे जनताका हौसला टूटे। अगर हममें अनुशासनकी कमी है, जो शख्स या वर्ग जो चाहता है सो करता है और ऐसी हालतमें हमने लड़ाई छेड़ दी तो हमपर आफ़त आ जायगी और हमारा उद्देश्य विफल होगा। हर कोई कह रहा है कि कांग्रेस अनुशासनहीन है और फिर भी उसमें सब भाग ले रहे हैं। अगर जनताका हौसला इंतजार करते-करते पस्त हो जाय, तो मुझे कोई परवाह नहीं होगी।

"एक दूसरा रास्ता भी मुझे सूझ रहा है। मुझे अपने नातेके बोझसे आज़ाद कर दो और आगे बढ़ जाओ। मैं संयत रहूँगा। ज़रूरी हुआ, तो मैं पीछे शामिल हो जाऊँगा। संभव है, मैं अविश्वसनीय व्यक्ति होऊँ और आप लोगोंको मुसीबतमें डाल दूँ। हो सकता है, मैं अनिश्चित कालतक आन्दोलन न करूँ। छेड़कर मैं एक-ब-एक आन्दोलन बंद भी कर सकता हूं। आप लोग मुझसे चाहे जितना सहमत हो लें, पर आप लोगोंकी अहिंसा मेरी अहिंसाके साथ बहुत दूरतक चलती नहीं। और बीस वर्षोंतक अहिंसाके अभ्यासके बाद भी अगर मैं मुसलमानोंका प्यार और विश्वास नहीं जीत पाया, तो मेरी अहिंसा सचमुच निस्सार है। ऐसी स्थितिमें आप लोग मुझे छोड़ क्यों नहीं देते ताकि मैं अहिंसापर आगे शोध करता रहूँ?"

मौलाना आज़ादकी ओर मुड़कर उन्होंने कहा : "मुझे इस बातमें तनिक भी संदेह नहीं है कि इस पगसे कांग्रेस और मुल्ककी हानि कुछ भी नहीं होगी, उल्टे लाभ ही होगा। मेरे मनमें आपके प्रति, कार्यकारिणी समितिके दूसरे सदस्योंके प्रति या देशके प्रति कोई अविश्वासकी भावना तो हो ही नहीं सकती। अपने ही प्रति अविश्वासका सवाल मेरे मनमें उत्पन्न हो गया है। मुझे विश्वास है कि

अगर मुझे आप मुक्त कर देंगे तो मैं सविनय आज्ञाभंगको और भी पवित्र, और भी गरिमामय स्वरूप दे सकूँगा।"

लेकिन मौलाना गम्भीर हो गये। वे इस प्रस्तावसे किसी भी तरह सहमत नहीं हो पा रहे थे। उन्होंने कहा, "आपको यह नहीं भूलना चाहिए कि आपके ही आदेशसे मैंने इस साल सेवा करना स्वीकार किया था। आपके बगैर सविनय आज्ञाभंगकी बात सोची भी नहीं जा सकती।"

श्री राजगोपालाचार्यने पूछा : "क्या सविनय-आज्ञाभंग अकेली ही राह रह गयी है? क्या हम किसी दूसरे उपायका प्रयोग नहीं कर सकते? मैं सोचता हूँ कि जब हमारी शक्ति सीमित है तो हमें अपनी शक्तिके अनुसार ही मांग पेश करनी चाहिए।"

गांधीजीने कहा : "मैंने प्रतिरोध करनेका विचार त्याग नहीं दिया है लेकिन मैं उसके लिए उपयुक्त वातावरण नहीं पा रहा हूँ। जिस व्यक्तिने जीवनभर यह प्रयोग किया है वह इस प्रयोगको एक बार और अवश्य आजमाकर देखेगा। मगर मुझे अपने कंधोंपर कांग्रेस संगठनका बोझ ढोना पड़ता है। अगर आप मुझे छोड़ दें तो मैं इस संगठनको दृष्टिमें रखकर सोचना बन्द कर दूंगा। मैं जिस वक्त आदमियोंको तैयार कर पाऊँगा, लड़ाई छेड़ सकूँगा। हो सकता है मैं कभी ऐसा महसूस करूँ और अकेले ही लड़ाई छेड़ दूं। चंपारनमें मैंने यही किया। तब मेरे पीछे कांग्रेसका नाम और प्रभाव नहीं था। मैं अपने हृदयकी बात स्पष्ट करके कह रहा हूँ ताकि आप लोग मेरे पसोपेशको समझ सकें। अभीतक प्रस्ताव पारित नहीं हुआ है।"

मौलाना आज़ाद : "जनतासे आपका सदा यह कहना कि वह लड़ाईके लिए तैयार नहीं है, उसका मनोबल झुकाता है।"

गांधीजी : "अगर ऐसा है, तो मैं लाचार हूं। मैं माँगमें कमी नहीं कर सकता। मैं अब स्वायत्त शासनकी हैसियतके बारेमें बात नहीं करता। और कांग्रेसकी स्थिति यह नहीं है। ब्रिटिश सरकार स्वायत्त शासन प्रदान करनेके लिए भी राजी नहीं है। मगर मैं अब उस पैंतरेको त्याग रहा हूँ।"

श्री जवाहरलाल : "मेरा दृष्टिकोण दूसरा है। हम लोग हमलेको पीछे हटा रहे हैं। इसलिए, तैयारीका सवाल नहीं उठता। हमें लड़ना होगा और हमला झेलना होगा। सवाल यह है कि इसका सबसे बढ़िया तरीक़ा क्या हो सकता है। केवल लड़नेकी घोषणा कर देना काफ़ी नहीं होगा। इसके साथ ही हमें कुछ क़दम उठाने होंगे जिससे हम लड़ाईमें बेसाख्ता उलझ जायेंगे।"

१७ मार्च को रामगढ़में श्री राजेन्द्रप्रसादने 'भारत और युद्धका सङ्कट' पर प्रस्ताव पेश किया। यह प्रस्ताव वही था जिसे पटनामें कार्यकारिणीने पारित किया था। इस प्रस्तावके पक्षमें २५०० वोट पड़े और विपक्षमें १५।

कांग्रेससे अलग होनेके छः साल बाद पहली बार यहाँ गांधीजीने डेलीगेटोंके समक्ष बोलनेकी इच्छा प्रगट की। उन्होंने कहा : "जबतक मैं यह नहीं महसूस करता कि आप तैयार हो गये हैं तबतक सविनय अवज्ञा नहीं होगी। सार्वजनिक सविनय अवज्ञाका विचार मेरे दिमागको चौबोसो घण्टे व्यस्त रखता है। प्रत्येक कांग्रेस कमेटीको शुद्ध बनाना होगा और उसे सत्याग्रहकी एक इकाईका रूप देना होगा। यहाँ प्रजातन्त्र नहीं रहेगा, क्योंकि यहाँ मेरी बात क़ानून होगी। यदि कांग्रेस कमेटी ऐसी इकाई नहीं बनती तो हमारे लाखों मूक भारतवासियोंको नतीजा भुगतना पड़ेगा। मेरे किसी भी अभियानमें जनता दलित या विनष्ट नहीं हुई है। मेरे अभियानोंसे उसका क़द बढ़ा है और इस क़दको और ऊँचा करनेके लिए ही मैं जिन्दा हूँ। पिछले अभियानोंमें विचार और वाणीकी हिंसा काफी हुई, मगर क्रियामें अहिंसा बनी रही इसलिए जनताकी रक्षा हो सकी। अब मैं फिर उसी तरह लाखों लोगोंको खतरेमें नहीं डाल सकता और इसीलिए मैं कठिनतम अहिंसा और अपनी सब शर्तोंकी पूर्ति चाहता हूँ। यही वह सूत्र है जिससे वह मुझसे जुड़ी है। अगर मैं आपका सेनापति हूँ, तो आपकी नब्ज़ मेरे हाथोंमें होनी चाहिए। वरना मैं आप लोगोंको लेकर लड़ नहीं सकता। मैं अकेला लड़ सकता हूँ, मगर उसके लिए मुझे आपके पास आने और बहस करनेकी जरूरत नहीं।"

अध्यक्ष मौलाना आज़ादने हिन्दू-मुस्लिम एकता और अल्पसंख्यकोंके प्रश्नपर बल दिया। उन्होंने इस विचारकी भर्त्सना की कि मुस्लिम अल्पसंख्यक हैं अतः उनके लिए प्रजातन्त्र घातक होगा क्योंकि इससे उनके हितों और अस्तित्वको खतरा होगा। उन्होंने कहा, "यदि देशमें दो मुख्य वर्ग हैं और एक वर्गके लोग १० लाख हैं और दूसरे वर्गके लोग २० लाख हैं तो यह ज़रूरी नहीं कि चूँकि एक वर्गकी संख्या दूसरे वर्गकी आधी है, अतः वह वर्ग अपनेको अल्पसंख्यक कहे और कमज़ोर महसूस करे।" इस्लामने भी भारतकी धरतीमें जड़ें जमा ली हैं जैसे कि हिन्दुत्वने। उन्होंने कहा, "यदि हिन्दुस्तानमें हिन्दुत्व सहस्रों वर्षोंसे जनताका धर्म रहा है तो इस्लाम भी एक हजार वर्षोंसे उनका धर्म रहता आया है। जिस प्रकार एक हिन्दू गर्वसे कहता है कि वह भारतीय है और उसका धर्म हिन्दुत्व है उसी प्रकार मुसलमान भी गर्वसे कह सकता है कि वह भारतीय है और उसका मजहब इस्लाम है। ठीक इसी प्रकार ईसाई भी अपनेको गर्वसे भारतीय कह

सकता है और अपना धर्म भी एक भारतीय धर्म बता सकता है जिसका नाम है, ईसाई धर्म।"

मौलाना आज़ादने पूछा, "हम हिन्दुस्तानी मुसलमान भारतकी भावी स्वाधीनताको संदेह और अविश्वासकी दृष्टिसे देखते हैं या साहस और आत्मविश्वासकी दृष्टिसे ? यदि हम इसे सन्देह और अविश्वासकी दृष्टिसे देखते हैं तो हमें निःसंदेह दूसरा रास्ता स्वीकार करना होगा। डर और सन्देहको आज ऐलानोंसे, आश्वासनों से और संवैधानिक सुरक्षाओंसे दूर नहीं किया जा सकता। फिर हमें एक तीसरी शक्तिका अस्तित्व सहन करना होगा। वह ताक़त आज यहीं निहित है और पीछे हटनेका उसका कोई इरादा नहीं है। अगर हम डरकी राह पकड़ते हैं तो हमें यह भी समझ लेना होगा कि यह राह कभी ख़त्म होनेवाली नहीं है। अगर हम यह अच्छी तरह समझ लेते हैं कि हमें डर और शुबहेमें नहीं रहना है और भविष्यकी ओर साहस और आत्मविश्वासके साथ चलना है तब हमें अपनी सही राह खोज लेनेमें कोई कठिनाई नहीं होगी। आज हम अपनेको एक नयी दुनियामें पा रहे हैं जहाँ सन्देह और अनिश्चयकी काली छायाका कहीं कोई पता नहीं है और जहाँसे अहद और अक़ीदतकी रोशनी कभी गुम नहीं होती। सामयिक उलझनें, हमारी राहमें आनेवाले उत्थान-पतन और हमारी काँटोंभरी राहकी दिक़्क़तें, हमें गुमराह नहीं कर सकतीं। यह हमारा कर्त्तव्य हो जाता है कि हम अपने लक्ष्य की ओर, हिन्दुस्तानकी आज़ादीकी ओर, मज़बूत क़दमोंके साथ चल पड़ें।"

१९४० में मुस्लिम लीगने लाहौरमें पाकिस्तानका प्रस्ताव पारित किया : "यह तय किया जाता है कि अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके इस अधिवेशनका यह सुनिश्चित मत है कि इस देशमें कोई संवैधानिक योजना चल नहीं सकती या मुसलमानोंके लिए स्वीकार्य नहीं हो सकती, यदि उसका रूप निम्नलिखित उसूलके आधारपर नहीं बनता, यानी, जिन क्षेत्रोंमें मुसलमान संख्याकी दृष्टिसे बहुतायतमें हैं जैसे भारतके उत्तर-पश्चिम और पूर्वी हिस्सोंमें, उन्हें इस प्रकार संघटित किया जाय, कि वे 'आज़ाद राज्य' हों, जिनकी संवैधानिक इकाइयाँ स्वशासित और पूर्ण प्रभुसत्तासम्पन्न हों..........।"

अध्यक्षीय भाषणमें श्री जिनाने अपने 'द्विराष्ट्र सिद्धान्त' का ही राग अलापा। भारतकी वर्तमान आज़ादी नक़ली है। यह ब्रिटिश सल्तनतके ज़मानेसे चली आ रही है और ब्रिटिश संगीनोंकी नोकपर टिकी हुई है। श्री जिनाने यह भी घोषणा की कि भारतके लिए प्रजातंत्र उपयुक्त नहीं है और मुसलमानोंकी राष्ट्रीयता जुदा है और उन्हें "अपनी धरती, अपना क्षेत्र और अपना राज्य" मिलना ही चाहिए।

अप्रैलमें दिल्लीमें विभिन्न मुस्लिम पार्टियोंके प्रतिनिधि एकत्र हुए। इनमें कांग्रेसी मुसलमान, अहरार, जमायते उलेमा-ए-हिंद, शीया-सियासी सम्मेलन आदि लगभग सभी दलोंके प्रतिनिधि जुटे, केवल मुलिम लीगने उसका बहिष्कार किया। सिंधके प्रधान मंत्री अल्लाह बख़्शने आज़ाद मुस्लिम कान्फरेंसकी अध्यक्षता की। प्रतिनिधिगण पाकिस्तानके निर्माणके विचारोंकी भर्त्सना करने और ब्रिटिश सरकार तथा दूसरे लोगों द्वारा मुसलमानोंकी राजनीतिक निष्क्रियताका गर्हित लाभ उठानेकी निंदा करनेके उद्देश्यसे जुटे थे। उन्होंने संविधान सभाकी कांग्रेसी मांगका समर्थन किया और एक प्रस्ताव पारित किया जिसमें मुस्लिम लीगकी भारत-विभाजनकी मांगकी स्पष्ट शब्दोंमें निंदा की गयी। "भारत, अपनी राजनीतिक और भौगोलिक सीमाओंके अंतर्गत अविभाज्य है, और एक है। भारतके कोने-कोनेमें मुसलमानोंके घर-बार और उनके धर्म और संस्कृतिके ऐतिहासिक महत्त्वके अमिट चिह्न बिखरे पड़े हैं जो उन्हें अपने प्राणोंसे भी ज़्यादा प्रिय हैं। क़ौमी नज़रिएसे हर मुस्लिम भारतीय है।" प्रस्तावमें घोषणा की गयी कि मुसलमान लोग अपने देशवासियोंके साथ कंधे से कंधा भिड़ाकर पूर्ण स्वतंत्रताके लिए जूझेंगे।"

६ अप्रैल १९४० को पाकिस्तान-प्रस्तावपर टीका-टिप्पणी करते हुए गांधीजीने 'हरिजन' में लिखा :

"मैं मानता हूं कि लाहौरमें मुस्लिम लीग द्वारा पारित प्रस्ताव हमारे लिए उलझनकी स्थिति पैदा करता है। मगर मैं इसे इतनी बड़ी उलझन माननेको तैयार नहीं कि यह हमारे सविनय आज्ञाभंगको असंभव कर देगी। यह भी अगर मान लिया जाय कि कांग्रेसको निराशाजनक अल्पसंख्यक वर्गमें बदल दिया जायगा तो भी कांग्रेसके लिए सविनय अवज्ञा छेड़नेका रास्ता खुला रहेगा और सचमुच यही उसका फ़र्ज़ तब भी होगा कि वह सविनय आज्ञाभंग छेड़े। उसका संघर्ष बहुसंख्यक वर्गके विरुद्ध नहीं होगा बल्कि विदेशी अधिकारियोंके विरुद्ध होगा। संघर्षमें यदि कांग्रेसको सफलता मिली तो उसका उपयोग वह उतना ही कर पायेगी जितना कि उसके विरोधी लोग कर पायेंगे। मैं यहाँपर यह और बता देना चाहता हूँ कि जबतक कि सविनय आज्ञाभंगके लिए मेरी शर्तें पूरी नहीं होतीं तबतक सविनय अवज्ञा हरगिज नहीं छेड़ी जायगी। मौजदा परिस्थितिमें, सरकारी अधिकारियोंको अपनी इस इच्छाको व्यक्त करनेसे रोका नहीं जा सकता कि भविष्यमें हिंदुस्तान अपना शासन अपनी मर्जीके अनुसार चलायेगा, न कि जैसा कि अबतक होता आया है, अधिकारियोंकी मर्जीके अनुसार। ऐसी घोषणा-

का विरोध न तो मुस्लिम लीग ही कर पायेगी और न कोई दूसरी पार्टी ही कर पायेगी, क्योंकि मुसलमान अपनी शर्तें पेश करनेके लिए बिल्कुल आज़ाद होंगे। अगर मुसलमान अपनी शर्तें पेश करनेपर तुल ही जायें तो यदि भारतके शेष लोगोंकी गृहयुद्धमें दिलचस्पी न हुई, तो उन्हें मुसलमानोंकी शर्तें माननी पड़ेंगी। भारतके ८ करोड़ मुसलमानोंको, शेष भारतकी इच्छाके वशीभूत करनेका कोई भी अहिंसक मार्ग मुझे ज्ञात नहीं है, शेष लोग भले ही कितने ही शक्तिशाली क्यों न हों। मुसलमानोंको भी आत्मनिर्णयका वही अधिकार होना चाहिए जो शेष लोगों को है। हम लोग एक संयुक्त परिवारके सदस्य हैं। कोई भी सदस्य बँटवारेका दावा कर सकता है।

"इसलिए जहाँतक मेरा प्रश्न है, मेरी यह स्थापना कि सांप्रदायिक एकता-के बग़ैर स्वराज्यका कोई अर्थ नहीं है, आज भी उतनी ही सच है जितनी कि वह १९१९ में थी, जब कि मैंने इसे पहले-पहल कहा था।

"लेकिन सविनय अवज्ञाका आधार दूसरा है। यदि कोई व्यक्ति इस बातकी आवश्यकता महसूस करे तो वह अकेले ही सविनय अवज्ञा कर सकता है। इसे केवल कांग्रेस नहीं छेड़ेगी। इससे किसी एक वर्गका लाभ नहीं होगा। इससे जो भी लाभ उत्पन्न होंगे वे संपूर्ण भारतको उपलब्ध होंगे। कोई हानि होगी तो वह सविनय आज्ञाभंग करनेवाली पार्टीकी होगी।

"मगर मैं नहीं मानता कि जब मुसलमानोंके सामने सचमुच फ़ैसला करनेका समय आयेगा तो वे बँटवारा चाहेंगे। उनकी भलमनसाहत उन्हें रोकेगी, उनका धर्म उन्हें आत्महत्यासे रोकेगा, जो कि बँटवारेका मतलब होगा। भारतकी विशाल मुस्लिम आबादी उन लोगोंकी है जिन्होंने धर्मपरिवर्तन किया है या धर्म-परिवर्तन किये हुओंकी संतान है। द्विराष्ट्र सिद्धांत झूठा है। जिस वक्त उन्होंने धर्मपरिवर्तन किया उस समय उनकी राष्ट्रीयता नहीं बदली। बंगाली मुसलमान बंगाली हिंदूकी तरह बंगला बोलता है, उसीकी तरह खाना खाता है और उसीकी तरह उसके मनोरंजनके साधन भी होते हैं। उनकी पोशाक समान है। मुझे अक्सर बाहरी चिह्नोंसे बंगाली हिंदू और बंगाली मुसलमानमें फ़र्क करना मुश्किल जान पड़ा है। यही बात दक्षिणमें, गरीब जनताके बीच पायी जाती है जिसकी संख्या हिन्दुस्तानमें बहुत अधिक है। जब मैं पहले-पहल स्वर्गीय सर अली इमाम-से मिला, तो मैंने उन्हें हिन्दू ही समझा था। उनकी बात, उनका रंग-ढंग, आहार सब वही था जो अधिकांश हिन्दुओंका होता है। केवल उनका नाम ही उन्हें मुस्लिम बताता था। क़ायदे आज़म जिनाके साथ तो यह बात भी नहीं है।

हिन्दुओंमें भी ऐसे नाम पाये जाते हैं। मैं जब उनसे मिला तब मुझे नहीं मालूम था कि वे मुसलमान हैं। जब मुझे उनका पूरा नाम बताया गया तब मैं उनका धर्म समझ पाया। उनकी सूरत और तौर-तरीक़ोंसे उनकी राष्ट्रीयता स्पष्ट मालूम होती थी। पाठकोंको जानकर आश्चर्य होगा कि अगर महीनों नहीं, तो कई दिनोंतक मैं श्री विट्ठलभाई पटेलको मुसलमान समझता रहा क्योंकि वे दाढ़ी रखते थे और तुर्की टोपी पहनते थे। वसीयतके हिन्दू क़ानूनके अंतर्गत बहुतसे मुसलमान शासित हो रहे हैं। सर मुहम्मद इक़बाल बड़े फ़ख्रके साथ अपनेको ब्राह्मणोंके वंशका बतलाते थे। इक़बाल और किचलू नाम हिन्दू और मुसलमान दोनोंमें पाये जाते हैं। भारतके हिन्दू और मुसलमान दो राष्ट्र नहीं हैं। जिन्हें ईश्वरने एक बनाया है उन्हें इनसान कभी जुदा नहीं कर सकता।

"और क्या इस्लाम वैसा ही अनोखा मज़हब है जैसा कि क़ायदे आज़म उसे कहते फिरते हैं? क्या इस्लाम और हिन्दू धर्ममें या इस्लाम और दूसरे किसी धर्ममें कोई समानता नहीं है? क्या इस्लाम केवल हिन्दुत्वका शत्रुभर है? क्या यह अली बंधुओंकी भूल थी कि उन्होंने हिन्दुओंको सगे भाइयोंकी तरह गले लगाया और हिन्दू-मुसलमानोंमें समानताके लक्षण देखे? मैं इस वक्त उन हिन्दुओंकी बात नहीं सोच रहा हूँ जिन्होंने मुसलमानोंके भ्रम दूर किये हैं। क़ायदे आज़मने एक बुनियादी सवाल खड़ा किया है। उनकी दलील यह है: 'हमारे हिन्दू दोस्त इस्लाम और हिन्दूधर्मकी असली फ़ितरतको समझनेमें क्यों नाकामयाब रहते हैं, यह समझना बड़ा दुश्वार लगता है। अगर सचमुच देखा जाय तो सही मानेमें ये दोनों ही मज़हब नहीं हैं। असलमें ये दो जुदा सामाजिक व्यवस्थाएँ हैं और यह एक महज़ सपना है कि हिन्दू और मुस्लिम कभी मिलकर कोई समन्वित राष्ट्रीयताका ईजाद कर सकेंगे। एक भारतीय राष्ट्रीयताकी यह कल्पना सीमाओंके बाहर चली गयी है। हमारी बहुतसी मुश्किलोंकी यही वजह है, और वक्त रहते अगर हम अपनी धारणाओंको सुधार न लेंगे तो हिन्दुस्तान बरबाद हो जायगा। हिन्दुओं और मुसलमानोंके मज़हबी फ़लसफ़े, रस्मो-रिवाज और अदब बिल्कुल जुदा हैं। वे न तो आपसमें बैठकर भोजन कर सकते हैं, न आपसमें वैवाहिक संबंध स्थापित कर सकते हैं। दोनोंकी सभ्यताएँ अलग हैं और वे परस्पर विरोधी विचारों और धारणाओंपर टिकी हैं। जीवनके प्रति दोनोंका दृष्टिकोण भिन्न है और दोनोंकी जीवन-पद्धति भी भिन्न है। यह भी साफ़ है कि हिन्दू और मुसलमान तवारीखके जुदा स्रोतोंसे इलहाम पाते हैं। दोनोंकी पौराणिक गाथाएँ भिन्न हैं। अक्सर जो एकके लिए देवता है, वह दूसरेके लिए दुश्मन है और इसी तरह

दोनोंकी विजय-पराजय आपसमें टकराती हैं। ऐसे दो राष्ट्रोंको, जिनमेंसे एक अल्पसंख्यक और दूसरा बहुसंख्यक हैं, एक ही राज्यके कंधोंपर जोतनेका अंजाम होगा, असंतोषकी दिन-ब-दिन वृद्धि; और अंतमें वह ढाँचा साराका सारा चर-मराकर बैठ जायगा जो ऐसे राज्यकी हुकूमतके लिए बनाया जायगा।'

"वे यह नहीं कहते कि कुछ हिन्दू बुरे हैं; उनका कहना है, हिन्दू जैसे भी हैं उनका मुसलमानोंसे कहीं कोई मेल नहीं है। मैं यह कहनेका साहस करता हूं कि जिना और उनकी तरह सोचनेवाले लोग इस्लामकी कोई खिदमत नहीं कर रहे हैं। मैं यह इसलिए कह रहा हूँ कि मुस्लिम लीगके नामपर जो कुछ आज चल रहा है उससे मुझे बड़ी चोट पहुँच रही है। अगर मैं भारतके मुसलमानोंको उस झूठसे आगाह न कर दूं, जो उनके बीच आज फैलाया जा रहा है तो मैं अपने फ़र्ज़से चूक जाऊँगा। यह चेतावनी मेरे लिए फ़र्ज़ है क्योंकि मैंने ज़रूरतके वक्त उनकी सेवा की है और हिन्दू-मुस्लिम एकता मेरी ज़िन्दगीका मक़सद रहा है और रहेगा।"

लियाक़त अली खाँको जवाब देते हुए गांधीजीने लिखा : "अगर भारतके मुसलमान सचमुच बँटवारेकी ज़िद पकड़ लेंगे तो अहिंसाका पुजारी होनेके नाते मैं उन्हें ज़ोर-दबावसे रोक नहीं सकूंगा। मगर मैं कभी भी अपनी मर्जीसे बँटवारे का साझीदार नहीं बनूंगा। मैं इसे रोकनेके लिए हमेशा अहिंसक तरीक़े अपनाता रहूँगा। क्योंकि बँटवारेका मतलब होगा, असंख्य हिन्दुओं और मुसलमानोंने एक-राष्ट्रके रूपमें साथ रहनेका जो कई सदियोंमें काम किया है उसपर पानी फेरना। बँटवारा बहुत बड़ा झूठ होगा। मेरी संपूर्ण आत्मा इस बातपर विद्रोह करती है कि हिन्दुत्व और इस्लाम दो विरोधी संस्कृतियां और सिद्धांत हैं। ऐसे सिद्धांतसे सहमत होनेका मतलब है ईश्वरके अस्तित्वसे इनकार करना। क्योंकि मैं अपनी संपूर्ण आत्मिक शक्तिके साथ विश्वास करता हूं कि कुरानका भगवान ही गीताका भी भगवान है और हम सभी, उस ईश्वरको चाहे जिस नामसे क्यों न पुकारें मगर उसी एक परमपिताकी संतान हैं। मुझे इस विचारसे विद्रोह करना ही होगा कि जो लोग अभी हालतक हिन्दू थे और अब मुसलमान हो गये हैं, मजहबके साथ ही उनकी राष्ट्रीयता भी बदल गयी है।

"मगर यह मेरा अपना विश्वास है। मैं इसे जबरन उन लोगोंके गलेके नीचे नहीं उतार सकता जो अपनेको अलग राष्ट्र सोचते हैं। लेकिन यह नहीं मान सकता कि ८ करोड़ मुसलमान यह घोषणा करेंगे कि उनमें और उनके हिन्दू तथा दूसरे भाइयोंमें कोई समता नहीं है। इसी सवालपर मत-विभाजन करवा लिया

जाय तभी बात स्पष्ट रूपसे सामने आ सकती है। जिस संविधान सभाके बारेमें हम कल्पना कर रहे हैं वह इसका फ़ैसला आसानीसे कर सकती है यद्यपि ऐसे किसी सवालपर मध्यस्थतासे काम नहीं चलेगा। यह आत्मनिर्णयका मामला है। मैं ८ करोड़ मुसलमानोंका दिमाग़ जाननेका और कोई रास्ता जानता नहीं।"

रामगढ़ कांग्रेसके बाद देशमें उत्पन्न स्थितिपर विचार करनेके लिए १८ अप्रैलको कार्यकारिणी समितिकी बैठक हुई। वर्तमान राजनीतिक स्थितिकी विवेचना करते हुए गांधीजीने कहा कि उन्हें देशके कोने-कोनेसे इस आशयके पत्र मिल रहे हैं कि फिलहाल संघर्ष आरम्भ करनेका अवसर नहीं है। बंगाल और पंजाबमें, संघर्ष अंग्रेजोंके खिलाफ़ न होकर अपने-अपने प्रान्तके मंत्रिमंडलोंके ख़िलाफ़ होगा। लोग पूछते हैं, इसके बाद क्या होगा? कुछ लोग पूछते हैं कि क्या वे सरकारी नौकरी त्यागकर तैयारीमें लग जायँ? वे सबसे कह रहे हैं, तैयार रहो। जल्दबाज़ी करनेकी जरूरत नहीं। कुछ लोग पूछते हैं कि क्या वे मुस्लिम लीग और खाकसारोंके रुखको देखते हुए भी संघर्ष शुरू कर सकेंगे?

उन्होंने आगे कहा कि कांग्रेसके लोग उनसे कह रहे हैं कि कांग्रेसमें न तो ईमानदारी है, न अनुशासन और न रचनात्मक कार्योंमें विश्वास ही है। इन सब बातोंसे उन्हें संघर्षके लिए आदेश देनेका उत्साह नहीं मिलता। अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियोंपर बोलते हुए उन्होंने कहा कि उनसे मुझपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। उन्होंने कहा कि मेरी दृष्टि देशकी अंदरूनी परिस्थितियोंपर है और वे आशाजनक नहीं हैं। कुछ लोग पूछते हैं कि क्या मैं चुपचाप बैठकर यह मौक़ा गँवा दूंगा? मैंने सबको उत्तर दे दिया है कि जबतक शर्तें पूरी नहीं की जातीं तबतक मैं लाचार हूँ।

जवाहरलालजीने कहा कि ये सारी बातें रामगढ़ प्रस्तावके समयमें ही मालूम थीं। तबसे इस बीच कोई नयी बात नहीं पैदा हुई है। प्रस्तावमें कहा गया था कि अगर सरकार उकसायेगी तो संघर्ष होगा। उन्होंने कहा कि मेरे ख़यालमें सरकार निश्चित रूपसे, मगर धीरे-धीरे बढ़ावा दे रही है। सरकारके दमनको बरदाश्त करते हुए चुप रहना बड़ा ही मुश्किल होता जा रहा है। यह सही है कि प्रथम श्रेणीके नेताओंको छुआ नहीं गया, मगर गिरफ़्तारियाँ बहुत हुई हैं, खास तौरसे संयुक्त प्रान्तमें द्वितीय श्रेणीके नेताओंकी। उन्होंने पूछा कि क्या गांधीजी जन-विहीन संघर्ष करनेकी बात सोच रहे हैं? मान लीजिए ५०,००० स्वयंसेवक तैयार हो जायँ और संघर्ष छेड़ दिया जाय, तो क्या यह जन-आन्दोलन होगा?

गांधीजीने उत्तरमें कहा कि वे यह नहीं समझते कि सरकार उकसा रही है।

अगर वे महसूस करेंगे तो संख्याका इंतज़ार नहीं करेंगे। फिर वे मुट्ठीभर लोगोंसे ही काम शुरू कर देंगे। ५०,००० सत्याग्रहियोंके भाग लेनेसे आन्दोलन जनता का आन्दोलन नहीं कहलायेगा। जनका अर्थ है, बेशुमार तायदाद। बेशक, ५०,००० सत्याग्रहियोंके जुट जानेका यह मतलब होगा कि जन सविनय अवज्ञाका दरवाज़ा खुल गया।

श्री जवाहरलालने कहा कि फ़िलहाल शायद उकसावा काफ़ी नहीं है, मगर यह बढ़ता जायगा। क्या देश इसका सामना करनेके लिए तैयार नहीं होगा? उन्होंने कहा कि मैं यह कहनेको तैयार नहीं हूँ कि फ़ौरन मोर्चा खोल दिया जाय। सरकार यह जानना चाहती है कि वह जनताको आन्दोलनके लिए भड़काये बग़ैर किस सीमातक जा सकती है। मेरे खयालमें जनता तैयार है मगर संपर्क-सूत्र कमज़ोर हैं। उन्होंने पूछा कि ५०,००० सत्याग्रहियोंके मिलनेपर गांधीजी क्या करेंगे?

गांधीजीने जवाब दिया कि ऐसी स्थितिमें भी सांप्रदायिक और अन्य कारणोंसे कुछ करना मुश्किल हो सकता है। उन्होंने सदस्योंसे कहा कि वे मुस्लिम लीग और खाकसारोंकी आतंकवादी गतिविधियोंकी रोशनीमें इस सवालपर सोचें।

डॉ० सैयद महमूदने कहा कि "कांग्रेसके प्रति मुस्लिम विरोधका विश्लेषण करनेकी जरूरत है। राष्ट्रीय मुसलमानोंने अपना फ़र्ज़ ठीक ढंगसे अदा नहीं किया। फिर भी मौजूदा तनावका यही अकेला कारण नहीं है। राष्ट्रीय मुसलमानोंको अपने साधनोंके साथ ही काम करना है। मौजूदा हालातके लिए कांग्रेसी लोग या कांग्रेस संगठन बहुत ज्यादा ज़िम्मेदार है। इस मसलेको ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्यमें देखना-समझना होगा। हिन्दू संस्कृतिमें मुस्लिम संस्कृतिके विलयकी प्रक्रिया सदियोंसे चली आ रही है और चलती जा रही है। हिन्दुस्तानमें आज खालिस मुस्लिम नामकी कोई चीज़ नहीं है। भारतमें हर सुधारके साथ यह विलय बढ़ता गया। गांधीजीके सुधारोंका मतलब हिन्दू उत्थानके अतिरिक्त और कुछ नहीं है। उनकी सुधार-योजनामें मुसलमानोंके लिए स्थान नहीं है। कांग्रेस भी हिन्दू उत्थानकी भावनासे संचालित हो रही है। उन्होंने कहा कि यह मेरा अनुभव है कि जब भी मुसलमानोंके लिए कोई प्रयास किया जाता है तो उसे हिन्दू कांग्रेसियोंके विरोधका सामना करना पड़ता है।"

श्री आसफ़ अलीने कहा कि "बहुतसे मुसलमान ऐसे सवाल करते हैं जिनका माकूल जवाब देना मुश्किल हो जाता है। मसलन, मुसलमान पूछते हैं कि क्या वजह है कि जो बड़े लोग पहले कांग्रेसी थे, अब कांग्रेसी न रहे? क्या वजह है

कि कांग्रेसकी सभाओंमें अब पहलेकी तरह इक़बालका गीत 'हिंदोस्तां हमारा' नहीं गाया जाता, केवल 'वंदे मातरम्' गाया जाता है ? वे यह भी पूछते हैं कि पिछले बीस बरसोंमें कांग्रेसने मुसलमानोंके लिए क्या किया ? कांग्रेसने अछूतोंके लिए बहुत कुछ किया है। आखिरकार हरिजन उद्धारका मतलब हिन्दू एकता है। फिर हिंदी और उर्दूका सवाल भी है।

मौलाना आजादके ख्यालमें कांग्रेसपर यह इलजाम लगता ही नहीं था कि कांग्रेसने सांप्रदायिक मसलोंपर पक्षपात किया है। उन्होंने कहा कि मैं संसदीय उपसमितिमें निजी तजुर्बेकी बुनियादपर कह सकता हूँ कि कांग्रेस मंत्रिमंडलने मुसलमानोंके साथ कोई नाइंसाफ़ी नहीं की है। जाती तौरपर किसी मुसलमानके साथ नाइंसाफ़ी हुई होगी मगर वह सांप्रदायिक वजहोंसे नहीं बल्कि यों हुई होगी कि इनसान फ़ितरतन कमज़ोर है और ऐसी नाइंसाफ़ियाँ बेहतरसे बेहतर परिस्थितियोंमें भी होती रहेंगी।

गांधीजीने फिर सदस्योंसे कहा कि वे सविनय आज्ञाभंग छेड़नेके बारेमें डा० सैयद महमूद और आसफ़ अलीके विचारों और मुस्लिम लीग तथा खाकसारोंके रुखको ध्यानमें रखते हुए अपनी राय दें। खाकसार हिन्दुओंको आतंकित करना चाहते हैं। हिंदुओंको उन्होंने राय दी कि वे इस संकटका मुकाबला अहिंसासे करें। मौजूदा परिस्थितियोंमें यह काम कांग्रेस मंचसे करनेमें उन्होंने अपनेको असमर्थ बताया।

श्री जवाहरलाल नेहरूकी राय थी कि इन कठिनाइयोंके कारण कांग्रेसको संघर्ष छेड़नेसे पीछे नहीं हटना चाहिए।

श्री राजेन्द्रप्रसादने दृढ़तापूर्वक कहा कि कांग्रेसकी मुसलमानोंसे कोई टकराहट नहीं है। मगर मुस्लिम लीगके हालके प्रस्तावका अर्थ गृहयुद्ध है। कांग्रेसके प्रति लीगका दृष्टिकोण यह है कि अगर फ़िलहाल कांग्रेस कोई आंदोलन करेगी तो उसके परिणामस्वरूप कांग्रेसकी ताक़त बढ़ेगी। कांग्रेसकी ताक़त बढ़नेसे लीगका प्रभाव घटेगा। अतः ब्रिटिश सरकारसे संघर्षका परोक्ष रूपसे मतलब होगा, लीगसे झगड़ा और लीग उसका अवश्य विरोध करेगी। ऐसी परिस्थितियोंमें जन सविनय अवज्ञाका अर्थ गृह-युद्ध होगा।

सरदार पटेलकी राय थी कि अगर कोई ठोस काम नहीं शुरू किया गया तो कांग्रेसके लोगोंका मनोबल निश्चित रूपसे दुष्प्रभावित होगा।

श्री राजगोलाचार्यका निश्चित मत था कि यह मौसम लड़ाईका नहीं है। कांग्रेसको इस सवालपर निर्णय लेते समय इसे सम्मानका प्रश्न नहीं बनाना

चाहिए। अगर इसकी चाल बहुत तेज़ रही है, तो इसे अपना क़दम पीछे हटाना ही होगा। कांग्रेसको अपनी शक्ति और जन-समर्थनकी शक्ति आँककर तदनुसार अपनी माँगोंको पेश करना चाहिए। श्री राजगोपालाचार्यको जन-समर्थनका ही भरोसा न था। उन्हें विश्वास था कि अबकी बार आन्दोलन छेड़कर हम लोग अपना अभीष्ट हासिल नहीं कर सकते। सभी बातोंसे आन्दोलनकी असफलताका ही संकेत मिल रहा है।

श्री आसफ़ अलीका विचार यह था कि राष्ट्रीय संघर्षका उद्देश्य स्वराज है। मगर इस वक्त जनताका मत इस उद्देश्यके संबंधमें ही विभाजित है। मुसलमानों-का बहुमत मुस्लिम लीगके साथ है। बहुतसे लोग तो ऐसे हैं जो मुद्दोंको समझते ही नहीं, मगर सोचते हैं कि लीगमें शामिल हो जानेसे कुछ न कुछ भला होगा। हिन्दू, मुसलमान और उदारवादी कांग्रेसके खिलाफ़ हैं। कांग्रेसके साथ कुछ आदर्शवादी हैं, जिनसे संघर्षके परिणामोंके प्रति चिंताकी आशंका नहीं की जा सकती। उनसे व्यावहारिक बातोंकी उपेक्षाकी संभावना ही की जा सकती है। आन्दोलन छेड़नेके लिए मुल्कको अनुकूल अवसरका इन्तजार करना होगा।

श्री जवाहरलालजीकी राय थी कि संघर्षसे जनताका कल्याणकारी पक्ष उभरेगा। संघर्षके बग़ैर हौंसला टूटेगा और संगठनको भी हानि होगी। चुप बैठकर संघर्षको टाला नहीं जा सकता।

मौलाना आज़ादकी राय थी कि गांधीजीने ख़ाकसारोंकी शक्तिको अतिरेक करके आँका है। ख़ाकसारोंका नेता एक अहंवादी है जो किसी न किसी सूरतसे जनताके बीच हर दम चर्चाका विषय बना रहना चाहता है। वह सनकी है, उसका कोई आदर्श नहीं है और इम्तहानकी घड़ीमें उसने अपनेको कमज़ोर साबित किया है। साधारण जनता कांग्रेसकी इज्ज़त करती है। अगर कांग्रेसकी नीति ख़ाकसारोंकी गतिविधिसे प्रभावित होगी तो उससे ख़ाकसारोंका काम बनेगा और वे बदसे बदतर होते चले जायँगे। उनका महत्त्व भी बढ़ जायगा। जहाँतक आंदोलनका सवाल है, कांग्रेस कोई नया काम नहीं करने जा रही है। वह मंझ-धारमें अपनी नीतियाँ नही बदल सकती। बेशक, मुल्क कमज़ोर है और बँटा हुआ है, मगर यह बात पहले सोचनेकी थी। अब देर बहुत हो चुकी है और कुछ न कुछ करना ही होगा।

आज़ादके इस ख़ाकसारोंके विश्लेषणसे गांधी सहमत नहीं हो पाये। उन्होंने कहा कि अबकी बार सरकार दमन-चक्र चलानेमें जल्दबाजी नहीं करेगी और विरोधी ताक़तों; जैसे लीग और ख़ाकसारोंको, परिस्थितिको, ज्यादासे ज्यादा

बिगाड़नेका मौक़ा देगी। और मुझे डर है कि ऐसा होनेपर जनताको दबा दिया जा सकेगा। और अगर जनता दबेगी नहीं, तो हिंसक हो उठेगी। यदि संभव हो तो आंदोलन छेड़कर मुसलमानोंको चिढ़ाना भी मैं नहीं चाहूँगा। मौलाना साहब और जवाहरलालजीसे मैं सहमत नहीं। मेरे विचारमें जन सविनय अवज्ञा हो नहीं सकती। इस वक्त समवेत अहिंसा नहीं हो सकती, जिसका मतलब है, सभी नियमों और आदेशोंका कड़ाईसे निर्वाह। और यदि आदेशोंका उल्लंघन और विघ्न हुआ, तो फिर जन आंदोलन नहीं हो सकेगा। जनता आंदोलनसे जुड़ी तो है मगर वह रिश्ता परोक्ष है। अगर अनुशासन है तो मैं इस बातका कोई कारण नहीं देखता कि व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा लाजिमी तौरपर क्यों जन आंदोलनके रूपमें परिवर्तित हो जायगी।

हो सकता है कि आंदोलन छिड़नेसे कांग्रेसको सफलता मिल जाय, यानी सरकार कांग्रेसकी मांगें स्वीकार कर ले। परन्तु इस समय इसका मतलब मुसल-मानोंकी उपेक्षा होगा। मैं ऐसा समझौता या ऐसा स्वराज नहीं पसंद करता। मुझे मुस्लिम धर्मके प्रति आदर है। मैं यह माननेको तैयार नहीं कि मुस्लिम लीग मुसलमानोंके मतका प्रतिनिधित्व नहीं करती। अगर मुसलमान बँटवारा चाहेंगे, तो मैं विरोध नहीं करूँगा। मगर जब बँटवारा होगा तो मैं उसका विरोध अहिंसक तरीक़ेसे करूँगा। मैं जानता हूँ कि इस मामलेमें देश मेरी नहीं सुनेगा और गृह-युद्ध होगा। मुझे उम्मीद है कि ऐसे वक़्तमें कांग्रेस मेरे साथ होगी और वह न तो मुसलमानोंपर बल-प्रयोग करेगी और न अंग्रेजोंकी मददकी कामना ही करेगी।

७ जूनको फ्रांसका पतन हुआ। उसी रोज़ वर्धामें कांग्रेस कार्यकारिणी समितिकी बैठक हुई जिसमें गम्भीर विचार हुआ। २१ जूनको समितिने घोषणा की कि राष्ट्रीय सुरक्षाके मामलेमें अहिंसाके प्रयोगमें हम असमर्थ हैं।

"जो समस्याएँ अभी दूर मालूम पड़ती थीं अब नज़दीक आ गयी हैं और किसी भी वक़्त समाधान पानेके लिए बेचैन हो सकती हैं। राष्ट्रीय आज़ादी हासिल करनेकी समस्याके साथ ही आज़ादीकी रक्षा और बाह्य तथा आंतरिक संकटोंसे देशकी प्रतिरक्षाके सवालपर भी विचार कर लिया जाना चाहिए।"

वर्धा निर्णयके बाद कार्यकारिणी समिति हिंसा और अहिंसाके सवालसे अलग रहकर राजनीतिक निर्णय लेनेके लिए आज़ाद हो गयी। प्रस्तावमें कहा गया था : 'महात्मा गांधी चाहते हैं कि कांग्रेस अहिंसाके प्रति आस्थावान् रहे और भारतकी आज़ादीको बाहरी हमलों और आंतरिक विप्लवोंसे बचानेके लिए सशस्त्र सेना रखनेमें अनिच्छाकी घोषणा करे।' समिति गांधीजीके साथ इतनी दूर नहीं जा

सकती। लेकिन समितिका विचार है कि 'गांधीजीको महान आदर्शोंका पालन करनेकी सुविधा और स्वतंत्रता होनी चाहिए, अतः समिति उन्हें कांग्रेसकी योजना और गतिविधियोंकी जिम्मेदारीसे मुक्त करती है।' कांग्रेसकी योजना और गति-विधि होगी, देशभरमें आत्मरक्षा और जन सुरक्षाकी व्यवस्थाके लिए समानांतर संगठन तैयार करना जिसमें सहयोग करनेवाले वर्गोंका पूरा-पूरा समर्थन लिया जायगा। समितिने आगे कहा कि भारतकी आज़ादीकी लड़ाई अवश्यमेव अहिंसा-की राहपर चलनी चाहिए। युद्ध समितियाँ, युद्धके प्रयासोंको बढ़ावा दे रही हैं अतः उन्हें सहायता नहीं दी जानी चाहिए। कांग्रेसके लोग युद्ध-कोषोंमें सहयोग न दें और सरकारी नियंत्रणमे होनेवाले नागरिक सुरक्षा दलोंसे भी असह-योग करें।

गांधीजीने कार्यकारिणी समितिसे कहा : "भविष्यमें आप लोग मेरे बगैर काम चलाइए और अपनी बैठकें वर्धामें नहीं बल्कि और कहीं रखा कीजिए।"

नक़्क़ारख़ानेमें तूतीकी बोली

१९४०

वाइसरायने गांधीजीको फिर बुलवाया और २९ जून १९४० को शिमलामें उनसे वार्ता की। पहली जुलाईको दिल्लीमें गांधीजीने लिखा :

" सबसे पहली बात जो प्रत्येक व्यक्तिको सोच लेनी है, वह यह है कि भारतके लिए वेस्टमिन्स्टर जैसा डोमिनियन राज्य स्वीकार्य होगा या नहीं। युद्ध-के समाप्त होनेपर यह बात अवश्य उठेगी, अगर अभी वह उठ नहीं रही है। युद्धके बाद ब्रिटेन बदलेगा। वह विजयी हो या पराजित, दोनों स्थितियोंमें वह पिछली शताब्दियोंवाले ब्रिटेनसे भिन्न होगा। इतना निश्चित है कि यदि ब्रिटेन-की पराजय हुई तो वह शानदार होगी। विजयके संबंधमें मैं ऐसा नहीं कह सकता। यह उन्हीं प्रगतिशील साधनोंके द्वारा खरीदा हुआ होगा, जिन्हें अधिना-यकवादी राज्य इस्तेमाल करते आये हैं। मैं बड़े गहरे दर्दके साथ यह कहना चाहता हूँ कि ब्रिटिश राजनीतिज्ञोंने उस एकमात्र नैतिक प्रभावका इस्तेमाल नहीं किया जिसे वे आसानीसे कांग्रेससे प्राप्त कर सकते थे और जिसके द्वारा ब्रिटेन-का पलड़ा भारी हो सकता था। उन्हें इसकी जरूरत ही नहीं महसूस हुई। यह भी संभव है कि उन्होंने उस नैतिक प्रभावको समझा ही न हो जिसका दावा मैं कांग्रेसके नामपर करता रहा। बात चाहे जो हो, मैं इस विषयमें स्पष्ट हूँ कि भारतका लक्ष्य शुद्ध आजादी है। यह समय शब्दोंका जंजाल खड़ा करके विचारों को छिपानेका नहीं है। मैं ऐसे इनसानकी कल्पना भी नहीं कर सकता जो यदि इसकी प्राप्ति संभव हो, तो देशके लिए इससे कमकी बात सोच भी सकता हो। किसी भी देशको आजतक यह उपलब्धि तबतक नहीं हासिल हुई जबतक उस देशकी जनता जूझी नहीं। बहरहाल, कांग्रेसने बहुत पहले ही यह तय कर लिया है। असरदार सहायता भी ब्रिटेनको मिलनी होगी तो वह आज़ाद भारतसे ही मिल सकेगी ··· ।

"दूसरा विचारणीय प्रश्न अव्यवस्था और बाहरी आक्रमणोंसे सुरक्षाके प्रबंध का है। प्राइवेट सेनाएँ अगर संगठित की जायेंगी तो वे अनुपयोगी होनेसे भी बदतर होंगी। कोई भी सत्ता, चाहे वह देशी हो या विदेशी, प्राइवेट सेनाओंको बरदाश्त नहीं कर सकती। अतः जो लोग भारतके लिए सशस्त्र सेनाका होना आव-

श्यक मानते हैं, उन्हें देर-सबेर कभी-न-कभी ब्रिटिश झंडेके नीचे एकत्र होना ही पड़ेगा। यह इस विश्वासका तर्कसंगत नतीजा है। कार्यकारिणी समितिने इस सवालपर फ़ैसला कर लिया है। अगर वह अपने फ़ैसलेपर अमल करेगी तो उसे शीघ्र ही कांग्रेसके लोगोंको पूर्ववत् भरती हो जानेकी राय देनी होगी। इसका मतलब असली अहिंसाका अंत भी होगा। मैं अंतिम दमतक आशा करूँगा कि स्वयंके हितमें, भारतके हितमें, खुद ब्रिटेनके हितमें और मानवताके हितमें, कांग्रेस-के लोग, दोनोंमेंसे किसी एक भी उद्देश्यके लिए शस्त्रोंके उपयोगसे पूर्ण असहयोग करेंगे। मैं पूरी गहराईसे यह महसूस कर रहा हूँ कि मानवताका भविष्य कांग्रेस-के हाथोंमें है। ईश्वर कांग्रेसके लोगोंको सही क़दम उठानेकी सद्बुद्धि और साहस प्रदान करे।"

३ जुलाईको गांधीजीने 'प्रत्येक अंग्रेजके नाम' शीर्षकसे प्रसिद्ध अपील प्रकाशित की :

"प्रत्येक अंग्रेजसे, वह इस वक्त चाहे कहीं भी रह रहा हो, मैं यह अपील करता हूँ कि वह राष्ट्रोंके बीच आपसी संबंधोंके समायोजनमें और दूसरे मामलों-में युद्धके बजाय अहिंसाकी पद्धतिको स्वीकार करे।...... मैं हर प्रकारकी आक्रा-मकताकी समाप्तिकी अपील करता हूँ, इसलिए नहीं कि आप युद्धसे थक गये हैं बल्कि इसलिए कि युद्ध तत्वतः बुरी चीज है। · मैं आपके समक्ष लड़ाईकी एक अधिक उदात्त और अधिक साहसी पद्धति पेश करना चाहता हूँ, जो वास्तवमें एक अत्यधिक साहसी सैनिकके योग्य पद्धति है। मैं चाहता हूँ कि आप नाजीवादसे बग़ैर हथियारके लड़ें, या सैनिक शास्त्रकी भाषामें अहिंसक हथियारोंसे लड़ें। मैं चाहता हूँ कि आप लोग हथियारोंको यह मानकर रख दें कि वे आपकी या मान-वताकी रक्षामें अनुपयोगी हैं। आप हिटलर और मुसोलिनीका स्वागत करें कि वे आपके देशसे, उन चीजोंमेंसे, जिन्हें आप अपनी वस्तु कहते हैं, जो भी चीज लेना चाहें ले लें। वे आपके मनोहर द्वीपोंपर, जिनपर बहुतसी खूबसूरत इमारतें हैं, कब्ज़ा कर लें। इन चीजोंको आप मुहैया कर देंगे, मगर अपना दिल और दिमाग़ नहीं देंगे। अगर ये भले आदमी आपके घरोंमें रहना चाहेंगे, तो आप घर खाली कर देंगे। अगर वे आपको अपनी मर्जीसे जाने नहीं देते, तो आप अपनेको; मर्द, औरत और बच्चे सबको कटवा देना क़बूल करेंगे, लेकिन आप उनके प्रति वफ़ादार होनेसे इनकार करेंगे ·····।"

३ जुलाईको दिल्लीमें कार्यकारिणी समितिकी संकटकालीन बैठक हुई। मौलाना आजादने कहा, "हम लोग दुनियाको हिला डालनेवाली अन्तरराष्ट्रीय

घटनाओंसे प्रभावित हुए, परन्तु इससे भी ज्यादा अपने आपसी मतभेदोंसे विचलित हुए। मैं कांग्रेस अध्यक्ष था और हिन्दुस्तानको आज़ाद होनेपर प्रजातांत्रिक देशोंके गुटमें ले जानेके लिए प्रयत्नशील था। हमारी राहमें हिन्दुस्तानकी गुलामी ही एकमात्र बाधा थी। प्रजातन्त्रके हितका सवाल ऐसा है, जिसके प्रति हिन्दुस्तानियोंकी गहरी हमदर्दी है। बहरहाल, गांधीजीके लिए यह बात नहीं थी। उनके सामने सवाल शांतिका था, हिन्दुस्तानकी आज़ादीका नहीं। मैंने खुले आम ऐलान किया कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस कोई शांतिवादी संगठन नहीं है, बल्कि देशकी आज़ादीके लिए बनी संस्था है। इसलिए मेरी नजरमें, गांधीजीने जो मुद्दा उठाया है, बेवक्त उठाया है। बहरहाल, गांधीजी अपना नज़रिया नहीं बदलेंगे। उनका निश्चित विचार है कि किसी भी हालतमें भारतको युद्धमें भाग नहीं लेना चाहिए। मेरे लिए अहिंसा एक नीति है, धर्म-पंथ नहीं। मेरा दृष्टिकोण यह रहा है कि अगर कोई दूसरी राह न हो तो हिन्दुस्तान तलवार उठा ले। बेशक, अहिंसाके जरिये आज़ादी हासिल करना बेहतर होगा और भारतमें जैसी परिस्थितियाँ हैं, उनमें गांधीजीकी पद्धति सही है।

"कांग्रेस कार्यकारिणी समिति इस बुनियादी सवालपर विभाजित थी। शुरुआतमें श्री जवाहरलाल नेहरू, सरदार पटेल, राजगोपालाचार्य और खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ मेरे साथ थे। श्री राजेन्द्रप्रसाद, आचार्य कृपालानी और श्री शंकरराव देव पूरे दिलसे गांधीजीके साथ थे। वे गांधीजीसे इस बातमें सहमत थे कि यदि यह मान लिया जाय कि आज़ाद भारत युद्धमें शरीक हो सकता है, तो आज़ादीके लिए अहिंसक लड़ाईका आधार ही लुप्त हो जाता है। मैं यह महसूस करता हूँ कि आज़ादीके लिए लड़ना एक जुदा बात है और वतनके आज़ाद होनेके बाद लड़ना दूसरी जुदा बात है। मैं मानता हूँ कि इन दो अलग बातोंको एकमें मिलाकर उलझन नहीं पैदा करनी चाहिए।"

कार्यकारिणी समितिने राजनीतिक परिस्थितिपर खुलकर विस्तारमें बहस की।

गांधीजीने कहा : "मैं यह महसूस करके अत्यन्त कष्टमें हूँ कि मैं कार्यकारिणी समितिकी बिलकुल दूसरी प्रवृत्तिका प्रतिनिधित्व करने लगा हूँ। मैंने अलग होना जो चाहा था वह किसी औपचारिकताके कारण नहीं। 'हरिजन'में प्रकाशित मेरा लेख मेरे दिमाग़की सही तस्वीर है। मैंने यही बात वाइसरायके समक्ष रखी। मैंने उनसे कह दिया कि यह मेरी उनसे अन्तिम भेंट-वार्ता है। अगर उन्हें कांग्रेससे कुछ कहना है तो उन्हें कांग्रेस अध्यक्षको बुलाना चाहिए। मेरा खयाल है कुछ ही दिनोंमें वे अध्यक्षको आमंत्रित करेंगे। ऐसे मसलोंपर कोई

निश्चित मत देना मेरे लिए बड़ा मुश्किल है। मैं चाहूँगा कि आप मुझे अकेला छोड़ दें।

"पिछले प्रस्तावसे निकलनेवाली बातोंको मान लिया जाय तो आप उनके तर्कसंगत परिणामोंसे इनकार नहीं कर सकते। आप सत्तापर कब्ज़ा करना चाहेंगे। इसके लिए आपको कुछ बातोंका त्याग करना होगा। आपको दूसरी पार्टियोंकी तरह बन जाना होगा। आप उनकी राह अख्तियार करनेपर बाध्य होंगे। हो सकता है आप प्रगतिशील पार्टी बन जायें। यह तस्वीर मुझे आकर्षक नहीं लगती। 'सत्तापर कब्ज़ा' इस व्यंजनापर ही मुझे विश्वास नहीं है। 'सत्तापर कब्ज़ा' जैसी कोई बात होती ही नहीं। मैं ऐसी किसी सत्ताको स्थितिमें विश्वास नहीं करता जो जनतामें निहित न हो। मैं तो केवल जनतामें निहित सत्ताका प्रतिनिधि हूँ। जब राजाजी अपनी व्याख्या प्रस्तुत कर रहे थे, तभी मुझे लगा कि उनके और मेरे बीच एक चौड़ी खाई है। उनका विचार है कि देशकी उत्तम प्रकारसे सेवा करनेके लिए हर मौकेसे लाभ उठाना आवश्यक है। इसी दृष्टिकोणसे सत्तापर उनकी नजर है। मेरा उनसे बुनियादी मतभेद है। वे अपनेको इस वहममें रखकर खुश रह सकते हैं कि वे अहिंसाकी सेवा कर रहे हैं। मुझे सत्ताका भय नहीं है। किसी न किसी दिन हमें उसे लेना ही है। वाइसराय यहाँ अपने देशकी सेवा करने और अपने देशके हितका ध्यान रखनेके लिए नियुक्त है अतः उसके लिए भारतके सारे स्रोतोंका निर्ममतापूर्वक उपयोग करना लाज़िमी है। अगर हम युद्धमें साझीदार बनते हैं तो हिंसाकी सीख लेते हैं, भले ही ब्रिटेन उसमें हार जाय। इससे हमें कुछ अनुभव मिलेगा, एक सैनिक जैसी शक्ति भी मिलेगी, मगर यह सब अपनी आज़ादीकी क़ीमतपर मिलेगी। आपके प्रस्तावका यही तर्कसंगत नतीजा मुझे जान पड़ता है। यह मुझे पसन्द नहीं आता। एक अहिंसकके रूपमें मुझे इस परिस्थितिसे निबटनेका रास्ता मालूम है। भारतकी विशाल जनताके अन्दर बहुत बड़े पैमानेपर हिंसा थी। उसे अहिंसाकी ताक़त बतायी गयी। अब आप उसे हिंसाकी शक्ति दिखायेंगे। जनतामें अब अस्पष्टता उत्पन्न हो गयी है। यह स्थिति मेरी व्याख्यासे नहीं उत्पन्न हुई है बल्कि आपके प्रस्तावसे उत्पन्न हुई है। मैं इस वातावरणमें आपका मार्गदर्शन नहीं कर सकता। मैं जो भी कहूँगा उससे आपमें भ्रांति उत्पन्न होगी।

"मैंने वाइसरायसे कहा कि विजयी अंग्रेज मुसोलिनी या हिटलरसे बेहतर नहीं हो सकेंगे। अगर हिटलरके साथ शांति हो जायगी तो सारी शक्तियाँ मिलकर भारतका शोषण करेंगी। लेकिन अगर हम अहिंसक हैं और जापान विजयी

होता है तो वह हमारी मर्ज़ीके बग़ैर हमसे कुछ नहीं प्राप्त कर सकेगा; यह हम देख लेंगे। अहिंसाने २० वर्षके अन्दर जादू कर दिया है। हम हिंसासे ऐसा कोई चमत्कार नहीं कर सकते।"

मौलाना आज़ादने कहा: "मेरे दिमाग़में जो प्रस्ताव था उसमें आंतरिक अव्यवस्थाओंसे निबटनेके लिए हिंसाको स्थान नहीं था। मेरे दिमाग़में सवाल यह था कि राज्यमें हिंसाको क्या कोई स्थान हो सकता है? हमें इस सवालपर दो-टूक निर्णय लेना था। हम सेनाविहीन भावी भारतकी कल्पना करनेको तैयार नहीं थे।"

श्री जवाहरलाल: "गांधीजीने यह सवाल अन्तरराष्ट्रीय सन्दर्भमें उठाया था। वे अहिंसाका पैग़ाम सारी दुनियाको देना चाहते थे।"

गांधीजीने कहा: "ठीक अन्तरराष्ट्रीय संदर्भ तो नहीं। मैंने उपस्थित सवाल-पर सोचा था। मेरे सामने दुनियाकी तस्वीर नहीं थी, भारतकी थी और केवल भारतकी थी। कार्यकारिणीने जो मुद्रा अख़्तियार की है उसमें वह सेना संगठित करने और सहायता करनेके लिए स्वतंत्र है। वह सत्तापर आनेके लिए स्वतन्त्र है। वाइसरायका ख़याल था कि प्रस्ताव उनके पक्षमें है। उन्होंने कहा, 'आप भारतकी रक्षा करना चाहते हैं। आपको हवाई जहाज़, जंगी बेड़ा, टैंक आदिकी ज़रूरत है। यह सब हम आपको देंगे। इससे आपका भी उद्देश्य पूरा होगा और हमारा भी। यह सुनहरा मौक़ा है। आप आगे आइए और तैयार होइए।'

"मुझे अफ़सोस है कि कांग्रेसने वह पग उठाया है जिसे मैं प्रतिगामी पग मानता हूँ। मगर यह पग पूर्णतया सम्मानजनक है। यही एकमात्र पग इसके सामने था भी। मैं फिर भी कांग्रेसको इस ग़लतीसे अलग करनेकी कोशिश करूँगा। आंतरिक अराजकताका बृहत्तर सवाल मौजूद था। अगर हम अराजकता से ग्रस्त हुए तो क्या करेंगे? क्या जनता अहिंसक प्रयासोंमें सहयोग करेगी? मैं जनताकी परीक्षा करूँगा और अगर मैंने पाया कि जनता मेरे साथ नहीं है तो मैं अपनी नीति तदनुकूल बदल डालूँगा, मगर जनताके टूटनेसे पहले मैं नहीं टूटूँगा। यूरोपमें जो भयंकर बातें हो रही हैं, वे मुझे गहरे दर्दमें डाल रही हैं। मैं नहीं जानता कि मैं उसमें क्या कर सकता हूँ। मैं महसूस करता हूँ कि मैं कुछ कर सकूँगा और इसलिए मैंने वह वक्तव्य दिया था।

"प्राइवेट सेवाओंके प्रति मेरा कभी कोई रुझान नहीं रहा। जनता हमारे द्वारा शोषित होगी। हम उसके पास जायेंगे और कहेंगे कि आप अपने घर-द्वार-की रक्षाके लिए अपना सर्वस्व हमें दीजिए। मुझसे यह नहीं होगा। यह काम

मेरा नहीं है। मैं तो यह घोषणा करना चाहता हूँ कि जहाँतक कांग्रेसका सवाल है, भारत अपनी रक्षा अहिंसासे करेगा।"

श्री राजगोपालाचार्य : "राज्यके संबंधमें गांधीजीकी जो धारणा है उससे मैं सहमत नहीं। हमारा यह संगठन राजनीतिक है। हम राजनीतिक आदर्शके लिए संघर्ष कर रहे हैं, अहिंसाके लिए नहीं। हम अन्य राजनीतिक दलोंसे होड़ ले रहे हैं।

श्री जवाहरलाल : "राजाजीकी हिंसा और अहिंसाकी व्याख्यासे मैं सहमत हूँ। वरना हम राजनीतिक धरातलपर काम ही नहीं कर सकेंगे।"

गांधीजीने कहा : "बहसके दर्म्यान बड़े मुश्किल सवाल पैदा हो गये हैं। राजाजीने इस बातको एक दम रद्द कर दिया है कि हम अहिंसासे हासिल की हुई आज़ादीकी रक्षा अहिंसासे कर सकते हैं। जब कांग्रेस सत्तापर थी, तभी इसका प्रमाण मिल गया था। कांग्रेस मंत्रिमंडल वहाँतक असफल रहा, जहाँतक उसने हिंसा की। उसके कार्योंसे अहिंसाका दिवालियापन उजागर हुआ। शायद हमारे सामने दूसरी राह नहीं थी। मैंने सत्ता त्यागनेकी राय दी। राजाजी मेरी यह बात माननेको हरगिज़ तैयार नहीं हैं कि पुलिस-हिंसासे ज्यादा हिंसाके बग़ैर सत्तापर रहा जा सकता है।

"मैं एक बार और दो बातोंपर ज़ोर देना चाहता हूँ। मेरा विश्वास है कि आजादीका ऐलान जरूरी है। वैध घोषणा बादमें भी की जा सकती है। अगर सरकार हमारी सहायता चाहती है तो उसे नैतिक सहायता ही मिल सकेगी। यह सहायता तिकड़म, मनोबल या दबावसे प्राप्त सहायतासे कहीं बेहतर होगी। मैं यह भी महसूस करता हूँ कि अगर उन्हें सही काम करनेका साहस है, तो पलड़ा उनके पक्षमें भारी होगा। काम करनेकी आजादीकी घोषणा होनी चाहिए। कुछ सदस्योंने धीमी आवाजमें कहा कि हमें अपने दिमाग़से सविनय विरोधकी बात निकाल देनी चाहिए। मैं ऐसा कभी नहीं कर सकता। ऐसा वक़्त आ सकता है जब हमें सिविल नाफरमानी करनी पड़े। मैं इस बातको सोच भी नहीं सकता कि हमारी जनताको दबावके अन्तर्गत सहयोग करना पड़े और हम चुप बैठे रहें। यह प्रक्रिया चल रही है। फ्रांसके पतन होनेतक यह प्रक्रिया नरमी से चल रही थी और महसूस नहीं की जा रही थी। मैं यह नहीं सोच सकता कि जोर-जबरकी यह प्रक्रिया निर्विरोध चलती रहे और मैं शांत बैठा रहूँ। लेकिन क्या हमारी जनता भी अन्ततक अहिंसावादी बनी रह सकती है? कमज़ोरकी अहिंसासे हमें राहत मिल सकती है लेकिन वास्तविक आनन्द और शक्ति नहीं।

अन्ततः हम थक जायेंगे। अगर हम कमजोरकी अहिंसासे प्रारम्भ करें और उसीमें समापन भी करें तो बरबाद हो जायेंगे। अतः अब, जब कि इम्तहानका मौक़ा है, आप कहिए कि यह संभव नहीं है। मैं आप सबकी आस्था और जीवटकी इज्ज़त करता हूँ। मगर मैं यह महसूस किये बग़ैर नहीं रह सकता कि हमारी अहिंसा दुर्घटनाग्रस्त हो गयी। मैं यह बात आस्था और अनुभवके साथ फिर कहता हूँ कि अहिंसासे सत्ताका स्पर्श किया जा सकता है, मगर शायद उसे लिया नहीं जा सकता। एक अहिंसावादी संस्था शायद सत्ता ले नहीं सकेगी लेकिन अपनी हर बात मनवा सकती है। अगर हमें अपनी जनतापर अहिंसक नियंत्रण नहीं प्राप्त है तो हमें केवल सत्ता मिल सकेगी। अहिंसापर विश्वास करनेवालोंके साथ जवाहरलालने न्याय नहीं किया। उनका विचार है कि हम बड़े आदमी बनें और हिंसाका गंदा काम दूसरोंको करने दें। दूसरी ओर मैं मानता हूँ कि हम सत्ता लें ही नहीं। सत्ताका मतलब है, वेतन, शोहरत वग़ैरह ऐसी ही चीजें जिन्हें लोग महत्त्व देते हैं। सत्ताधारी लोग समझते हैं कि वे दूसरोंसे श्रेष्ठ हैं और बाकी लोग उनके मातहत हैं। जब कोई अहिंसावादी शख्स सत्तासे इनकार करता है तो उसका मतलब होता है कि मैं सत्ताको लेकर चौपट हो जाऊँगा। मेरा स्वभाव दूसरा है। श्रेय दूसरे लोग लें। मैंने यह कभी नहीं महसूस किया कि सत्ता लेनेवालोंसे मैं श्रेष्ठ हूँ और न कभी उन्होंने यह महसूस किया कि उन्हें कोई गंदा काम करना पड़ रहा है। अब मान लीजिए कि इस संकटकी घड़ीमें, जब कि दूसरी पार्टियाँ हिंसाके नामपर क़समें खा रही हैं, आप अहिंसाका दामन नहीं छोड़ते, आप अल्पसंख्यक हो जाते हैं। क्यों एक अहिंसक समूह दूसरोंमें बदलाव लानेसे पहले सत्ता हथियाना चाहे? सत्तापर दूसरे ही आयें। एक अहिंसक जनसमूह, जो सारे देशको अहिंसक बनाना चाहता है, सत्ताके लिए व्याकुल नहीं होगा। एक पंथके प्रति वफ़ादार रहकर आप बहुसंख्यक जनताको बदल सकते हैं। जिस व्यक्तिमें आत्मविश्वास है वह देशको बदल सकता है। लेकिन आप कहते हैं कि करोड़ों लोग कभी उस अवस्थातक नहीं पहुँचेंगे। मैं महसूस करता हूँ कि वे पहुँच सकेंगे। मैं बहुत परिश्रमी प्रक्रियाओंसे गुज़रकर अहिंसक हो पाया। पहलेसे ही किसी निर्णयपर मत पहुँच जाइए। यह अहिंसाकी तासीर है कि हम अपनेमें जो गुण देखते हैं, वे ही गुण हमें सारी मानवतामें दिखाई पड़ने लगते हैं। मैंने ऐसा तो कभी नहीं सोचा कि मैं अकेला ही अहिंसाका पालन कर सकूँगा। मेरा विचार ठीक इसके विपरीत है। मैं अपनेको प्रतिभाहीन समझता हूँ। यों तो मैं प्रथम श्रेणीके नेताओंकी कोटिमें हूँ लेकिन मैं अपनेको सामान्य जनताकी

कोटिका आदमी समझता हूं। मैं गुजरातके अपढ़ लोगोंमेंसे वीर पुरुषोंको उत्पन्न कर सकता हूं। एक समय था जब ये अपढ़ कहा करते थे, 'हमसे क्या होगा?' आज सत्ता उन्हींके हाथोंमें है। अगर हम कुछ हज़ार लोगोंको बदल सकते हैं, तो लाखों-करोड़ोंको भी बदल सकते हैं। १९२० में हिन्दू और मुसलमान दोनों जनताने अहिंसक तरीक़ेसे काम किया। अगर हमने जनमत यानी सत्ताधारी लोगोंपर इतना प्रभाव स्थापित कर लिया है कि हमें दबावसे विधेयता नहीं उत्पन्न करनी पड़ती, तो क्या यह हमारे लिए बड़ी बात नहीं है? अहिंसा एका-एक सत्तापर नहीं आरूढ़ हो सकती। मैं कुछ लोगोंके स्वराजसे संतुष्ट नहीं हूं। यह करोड़ोंका होना चाहिए। उन्हें स्वराजका अहसास होना चाहिए। यह मौक़ा हमारे हाथ लगा है। हिंसक तरीक़ोंसे वे इसका अहसास नहीं कर सकते। हमें फ़ैसला करना है। मैं अपने अहिंसक कार्यक्रमसे कोढ़ियोंको भी अलग नहीं रखता। मैं यह बात सतही तौरपर नहीं कर रहा हूं। मेरे आश्रममें एक कोढ़ी है। वह हथियार नहीं चला सकता, लेकिन वह समझने लगा है कि वह भी अपना रोल अदा कर सकता है। दूसरे शब्दोंमें, मैंने तर्कसंगत रूपसे यह समझानेकी कोशिश की है कि यदि कुछ शर्तें पूरी हो जायें, तो आपको सत्ता प्राप्त करनेसे कोई रोक नहीं सकता।

"भारतके बहुतसे गांव और संस्थाएं अहिंसाकी राहपर चल रही हैं। हम देशमें एकरूपता लानेके प्रयासमें हैं। इसमें वक़्त लगेगा। हिंसासे दुनियाको क्या उपलब्धि मिली है? मेरा ख्याल है, हमें आतुरताने ग्रस लिया है। अगर हम कुर्सीपर नहीं जायेंगे, तो दूसरे चले जायेंगे। अगर आप समझते हैं कि आप दूसरोंसे होड़ करके जनताकी सेवा कर सकेंगे तो यह आपकी भूल है। हम प्रजा-तंत्रवादी हैं। हम जनताकी इच्छाके अनुकूल हुकूमत करनेमें विश्वास करते हैं। अगर जनता विद्रोह कर दे, तो हमें पदत्याग करना ही होगा। हमने अहिंसाको उतना मौक़ा नहीं दिया, जितना कि हम दे सकते थे। हम सबने पूरी कोशिश की। हम और बेहतर कोशिश करें। हममें अगर आवश्यक साहस हुआ और अगर हम कामयाब हुए, तो हम अपने पीछे ऐसी चीज़ छोड़ जायेंगे जिसपर सारा हिन्दुस्तान गर्व कर सकेगा। मैं चाहता हूं कि आप भी मेरी तरह यह महसूस करनेकी कोशिश करें कि सेनाके बग़ैर भी राज्यकी रक्षा करना अच्छी तरह संभव है। अगर कोई आक्रमण करेगा, तो हम उससे अहिंसा द्वारा निबट लेंगे। हम इस खौफ़में क्यों रहें कि हमारा शत्रु हमें निगल जायगा! हिंसक लोग हिंसक लोगोंसे लड़ते हैं। अहिंसक लोगोंको वे छूते नहीं। हम किसी दूर-

दराज़ भविष्यमें होनेवाले हमलेका प्रतिकार करनेके लिए भारी-भरकम अस्त्र-शस्त्र बनाते हैं। हमें अहिंसक बने रहनेके लिए देशमें मौजूद सेनाएँ भी कारण हो सकती हैं। हम सारी दुनियाके खिलाफ़ अपनी जनताका शांतिपूर्वक प्रस्तुत कर सकते हैं।

"हमारी अहिंसा कमज़ोरकी अहिंसा है। यह हिम्मतवरकी अहिंसा नहीं है। अगर हमें अपने पड़ोसियोंसे मुहब्बत होगी तो हिन्दू-मुस्लिम दंगे हो ही नहीं सकेंगे। इन दंगोंको रोका जा सकता है। और अगर दंगे रोके जा सकते हैं तो अराजकताएँ भी रोकी जा सकती हैं।"

श्री जवाहरलाल : "आप अहिंसाके बारेमें जो कुछ कह गये, उसकी हम तारीफ़ करते हैं। लेकिन हमें बहुत-सी मुश्किलोंका सामना करना पड़ सकता है। हम ऐसे सिरफिरोंसे कैसे पेश आयें जो नेपोलियन बनना चाहते हैं? वे सारी स्थापित व्यवस्थाओंको अस्त-व्यस्त कर देंगे। नापायेदारीकी स्थिति कभी खत्म नहीं होगी।"

मौलाना आज़ाद : "यह सही है कि अहिंसाको पूरा-पूरा मौक़ा नहीं दिया गया। फिर भी, मेरा खयाल है, हिन्दुस्तानमें अहिंसाने चमत्कारी परिवर्तन किये हैं। यह हथियार एक कमज़ोर और बेकस देशको दिया गया। इस देशने उस हथियारका इस्तेमाल सही ढंगसे किया, लेकिन कमज़ोरीके माहौलमें।"

श्री राजगोपालाचार्य : "आप तो बहसका मुद्दा ही खो बैठे। सवाल यह है कि किस प्रकार सरकार चलायी जाय और किस प्रकार सत्ता प्राप्त की जाय। आपने जो कहा, उसका मतलब यह है : हम तो ब्राह्मण हैं, क्षत्रियोंको राज करने दो।"

गांधीजीने समितिके समक्ष एक मसविदा रखा जिसमें उन्होंने अपने विचारोंको रखा था।

गांधीजीके मसविदेसे जवाहरलालजी प्रायः सहमत थे मगर उन्हें मसविदेके कुछ अंशोंपर सख्त एतराज़ था। उन्होंने कहा कि सैनिक प्रवृत्तिपर ग़ैरवाजिब और ग़लत ढंगसे ज़ोर दिया गया है : "भारतीय जनताको सैनिक प्रवृत्तिसे निवृत्त करनेके पक्षमें मैं नहीं हूँ। देशमें सैनिक शिक्षणकी मांग है। दो सौ सालसे उसे यह प्राप्त नहीं हुआ। अपने जीवनकालमें ही इस अभावको दूर करनेकी बेचैनी स्वाभाविक है। सैनिक प्रवृत्तिकी निन्दा करके हम उसे और भड़कायेंगे। यह सही दृष्टिकोण नहीं है। मैं चाहूँगा कि मेरे देशके लोग तनकर खड़े होना, क़दम मिलाकर चलना और हथियारोंका इस्तेमाल करना भी सीखें, बादमें भले ही उन्हें अलग रख दें। जिसने राइफल कभी उठायी नहीं वह उसके बारेमें उत्सुक हो

सकता है। हम उसकी निंदा करके उसकी उत्सुकताको खत्म नहीं कर सकते।"

नेहरूजीने कहा : "यह हास्यास्पद लगता है कि गांधीजीकी इस अपीलसे कार्यकारिणी समिति कोई वास्ता रखे। मैं यह समझ सकता हूं कि गांधीजीने ऐसी अपील क्यों की है। मगर मुझे इसमें कोई शक नहीं कि यह अपील अंग्रेजोंके लिए बिलकुल बेअसर साबित होगी। वे इसे समझ ही नहीं सकेंगे। उनकी नज़र में यह अपील हिटलरको बल देनेवाली है। जिन पैराग्राफ़ोंमें आज़ादीके बारेमें और मंत्रिमंडलोंमें फिरसे शामिल होनेके बारेमें हमारा नज़रिया स्पष्ट किया गया है उनसे मैं सहमत हूं।"

श्री राजगोपालाचार्य "यह मसविदा सभी समस्याओंपर एकांगी दृष्टिकोणसे व्यक्त किये गये विचारोंकी शृंखला है। मसविदेमें मुझे वास्तविकता कहीं नज़र नहीं आती। हम स्वप्नलोगमें विचर रहे हैं। गांधीजीका मसविदा उस धारणापर आधारित है, जिसे हम स्वीकार नहीं करते। हमें गांधीजीके नेतृत्वकी समस्या-से उलझन है। अगर हम गांधीजीको अपना नेता मानते हैं तो हमें उनका प्रोग्राम और पंथ भी मानना होगा। इस मसविदेको स्वीकार करके हम अपनेको एक निष्फल और निष्क्रिय अवस्थामें कैद कर लेंगे। मेरे दिमाग़में एक संघर्ष चल रहा है।"

श्री भूलाभाई देसाई : "यह मसविदा हमारे उस प्रस्तावको मिटा देता है, जिसे हमने वर्धामें पारित किया था। प्रतिरक्षाके सवालपर खुले दिमाग़से विचार ही नहीं किया गया है। ११,००० अधिकारी आज सैनिक प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। क्या हम उन्हें प्रशिक्षण लेनेसे इनकार करनेकी राय दें? हम एक अरसेसे सेनाके भारतीयकरणके लिए आंदोलन कर रहे हैं। क्या हम अब इस आन्दोलनको त्याग दें?'

सरदार पटेल : "अंग्रेजोंके नाम गांधीजीकी अपीलसे कार्यकारिणी समिति कोई वास्ता रख ही नहीं सकती। मैं इस बातसे सहमत हूं कि यह प्रस्ताव पुराने प्रस्तावके ठीक विपरीत है। मगर पिछले प्रस्तावसे उत्पन्न उलझनको मिटानेके लिए यह आवश्यक है। हर कहीं पूछा जा रहा है कि गांधीजीके नेतृत्वको क्यों त्याग दिया? मेरी रायमें, गांधीजीके मसविदेसे अपीलवाला अंश छाँटकर और इधर-इधर छोटी-मोटी तब्दीलियाँ करके मसविदेको स्वीकार कर लेना चाहिए।"

मौलाना आज़ाद : "गांधीजीकी दलीलें बेहद आकर्षक हैं। हम हथियार उठाते हैं प्रतिरक्षाके लिए, मगर आखिरकार हमलेके लिए उसका इस्तेमाल करने लगते हैं। यही इस्लामके साथ हुआ। मुहम्मद साहबने महज़ आत्मरक्षाके लिए

हथियार उठाया लेकिन उनके अनुयायियोंने उसका इस्तेमाल हमलोंके लिए और फ़तहके लिए किया। मगर हम यह महसूस करते हैं कि हम गांधीजीके साथ-साथ बहुत दूरतक चल नहीं सकते। बेशक, अन्दरूनी गड़बड़ियोंसे निबटनेके लिए और आज़ादीकी लड़ाईके लिए अहिंसाका इस्तेमाल होना ही चाहिए। आत्म-रक्षाके लिए भी हम भरसक अहिंसाका ही प्रयोग करेंगे। मैं चाहता हूँ कि गांधीजी हमारा नेतृत्व करें और हमें मँझधारमें न छोड़ें। हमें वर्धा प्रस्तावोंसे पीछे हटनेका कोई अधिकार नहीं है।"

गांधीजीने कहा : "मैंने यह मसविदा आप लोगोंकी प्रतिक्रिया जाननेके उद्देश्यसे पेश किया था। इसमें कोई संदेह नहीं कि आपने वर्धामें अत्यन्त बुद्धिमत्तापूर्ण निर्णय लिया था। आजकी बहससे मेरी राय और भी पक्की हो गयी है। मैंने मसविदा तैयार करनेमें जो श्रम लगाया उसे मेरी कल्पनासे अधिक सफलता मिली। मैंने अपने विचारोंको लिपिबद्ध केवल इसलिए किया कि आप लोगोंकी प्रतिक्रियाको जानूँ। मैंने बहसका एक-एक लफ़्ज़ सुना है। मैंने जान लिया कि हम लोगोंके बीच बहुत चौड़ी खाई है और उसे पाटा नहीं जा सकता। ऐसा करनेकी कोशिश करना देशके अहितमें होगा। मुझमें कोई बेसब्री नहीं है, कोई खीझ नहीं है। अगर मैंने यह जान लिया है कि मेरी पकड़ ढीली हो गयी है, तो मुझे कांग्रेसकी भलाईका ख़याल करते हुए हट जाना चाहिए।

"मैंने अपनी राजनीति हमेशा नीतिशास्त्र या धर्मशास्त्रसे विकसित की है। मेरी संघर्ष पद्धति भी नीतिशास्त्रसे राजनीतिके विकासका परिणाम है। मैं अपनेको राजनीतिमें इसीलिए पाता हूँ कि मैंने नीति और धर्मके नामपर कसम खायी है। जो व्यक्ति अपने देशसे प्यार करता है उसे राजनीतिमें जीवन्त रुचि लेनी ही पड़ेगी, वरना वह शांतिपूर्वक कोई काम नहीं कर पायेगा। मैं कांग्रेसमें अपने धर्मके साथ आया। वक़्त आ गया है कि मैं देखूँ कि क्या मैं आप लोगोंको उस मंजिलतक ले चल सकता हूँ, जो मेरी नज़रमें है?

"मुझे पहले राजाजीको अपने साथ ले चलनेमें ज़रा भी दिक्कत नहीं होती थी; उनका दिल और दिमाग़ दोनों मेरे साथ चल लेता था। मगर जबसे यह कुर्सियोंका सवाल उठ खड़ा हुआ है मैं देख रहा हूँ, हम दोनोंके विचार भिन्न-भिन्न दिशाओंमें दौड़ रहे हैं। मैं देख रहा हूँ कि मैं अब उन्हें अपने साथ नहीं ले चल सकता। इसलिए, मुक्त किये जानेकी मेरी मांग, निहायत ही जरूरी है। आंतरिक मतभेद तो कोई बड़ी बात नहीं है। अगर आप बाहरी हमलेके बारेमें किसी नतीजेपर नहीं पहुँच पाते तो आप अन्दरूनी मतभेदोंका भी कोई हल नहीं खोज

सकते। मैंने प्रस्तावमें 'खुला दिमाग़' यह व्यंजना जान-बूझकर रखी है। आपने कहा कि आप लोग अहिंसक तरीक़ोंसे सत्तापर आरूढ़ हो सकते हैं लेकिन बग़ैर सेनाके सत्ताको बरक़रार रखने और पुष्ट करनेके बारेमें आपको सन्देह है। अगर हम अहिंसाको राजनीतिमें इस्तेमाल नहीं करते यानी एक राष्ट्रके रूपमें हममें पर्याप्त अहिंसा नहीं है, तो मेरे दिमाग़में जो थोड़ी-सी पुलिस-शक्तिकी कल्पना है, उससे बड़ी अव्यवस्थाओंसे नहीं निबटा जा सकता। अहिंसाकी तकनीक हिंसाकी तकनीकसे जुदा है। हम इस तथ्यसे आँख बन्द कर लेते हैं कि जनतापर हमारा नियंत्रण, यहाँतक कि कांग्रेसके लोगोंपर ही हमारा नियंत्रण बेअसर है। निष्क्रिय असर तो है, मगर सक्रिय असर नहीं है। यह हमारे ही दोषसे है, ऐसा मैं नहीं मानता। लाखों लोगोंका सवाल है। २० सालमें कोई सैनिक प्रोग्राम भी पूरा नहीं हो सकता था। अतः हमें सब्र करना चाहिए। अगर जनता अहिंसा द्वारा आज़ादी हासिल कर सकती है तो उसे अहिंसा द्वारा सलामत भी रख सकती है।

"देशके लिए २० सालका अर्सा कुछ भी नहीं है। हमारी अहिंसा सत्ता प्राप्त करनेतक ही सीमित रह गयी। हम अंग्रेज़ोंके ख़िलाफ़ तो सफल रहे, मगर अपनोंसे ही हार गये। कई स्थानोंपर कांग्रेसके लोगोंने और कांग्रेस समितियोंने हिंसक प्रदर्शन किये। इसीसे हमारी दिक्कतें पैदा हुईं और मैं इसीलिए कहता हूँ कि हमें अहिंसाका विकास करना चाहिए। यही ठीक वक़्त है, वरना बादमें पछताना होगा। राजाजी ठीक कहते हैं कि अगर मैं यह मानूँ कि कांग्रेस मेरे साथ है, तो मैं स्वप्नलोकमें हूँ। मैं आँखें खुली रखकर संघर्षमें कूदा हूँ। मैं जब मुसलमानोंका साझीदार बना तो मैं आगसे खेल रहा था। हिंदुओंने कहा कि मुसलमान अपनेको संगठित कर लेंगे। मुसलमानोंने यही किया। मेरे पास सम्पूर्ण मानवताके लिए एक ही मानदण्ड है।

"मैं कांग्रेसमें उत्पन्न कमजोरियोंके बारेमें गम्भीरतासे सोचता रहा हूँ लेकिन मैंने यह उम्मीद कभी नहीं छोड़ी कि वक़्त आनेपर मैं आप लोगोंको आगे ले चल सकूँगा। जब भूलाभाईने कहा कि हम अपनेको बाँध रहे हैं तो वे ठीक भी थे, नहीं भी। मसविदेको विरामों और अर्धविरामोंके साथ पढ़ना होता है। हमें दो हथियारोंमेंसे एकका चुनाव कर लेना है। एक है विनाशका हथियार और दूसरा है बाहरी और घरेलू मामलोंमें अहिंसाका हथियार। हमें चुनाव करना ही है। अगर यह अनिवार्य है, तो हम अहिंसाको राम-राम करें। आज अहिंसा और कल हिंसा यह हमारा दृष्टिकोण नहीं है। हमें यह नहीं पता कि हम भविष्यमें क्या

करेंगे। कलकी बात छोड़िए, क्या हमें अभी इसी वक़्त राइफ़ल उठाना चाहिए? भूलाभाईने १,१०० अधिकारियोंकी बात की थी। इस बातसे मेरी एक भी पेशी फड़कती नहीं। मेरा क्षितिज अज्ञात करोड़ों लोगों तक भी फैला हुआ है। उस समुद्रमें १,१०० व्यक्ति ग़ायब हैं। ग़लत पग उठाकर मैं अपनेको कभी क्षमा नहीं कर सकूँगा। आप लोग आज नहीं तो कल राजाजीकी स्थितिमें पहुँच जायँगे। अगर आपने अहिंसाको आत्मसात् कर लिया है, तो बहुत अच्छा है। मैं तो अहिंसाको अपनी जेबमें लिये फिरता हूँ। अहिंसा मेरे दिमाग़में है। मैं अपनी जनताको बदलनेका प्रयास करूँगा और देखूँगा कि मेरा क्या हश्र होता है। दूसरा रास्ता यह है कि हम अपनी जनताको सैनिक शिक्षण दें; साम्राज्यके लिए नहीं, बल्कि अपने लिए। साम्राज्य तो लड़खड़ा रहा है। उसका सूरज बड़ी तेज़ीसे डूब रहा है। अगर अहिंसामें हमारी आस्था शिथिल है तो हम अपनी हिंसाको ही संगठित करें। मैं मौलाना साहबसे सहमत हूँ कि जो हिंसाको आत्मरक्षाके लिए क़बूल करते हैं, वे अन्तमें उसे हमलेका साधन बना लेते हैं। उन्होंने अपने ही सहधर्मियोंका उदाहरण पेश किया है। मैं इसी अनमोल वस्तुकी रक्षाके लिए ज़िंदा रहना चाहता हूँ। मैं जनताके सैनिकीकरणका साधन नहीं बनना चाहता। अहिंसक सिपाहीका कोई तिरस्कार नहीं करेगा। वह संभव है तपेदिकका मरीज़ हो, लेकिन वह एक लम्बेसे लम्बे पठानसे बेहतर नज़ीर पेश करेगा। मैं चाहता हूँ कि आप लोग राजाजीकी बातोंपर गम्भीरतासे ग़ौर करें और देखें कि क्या आपको उनकी बातें स्वीकार हो सकती हैं। वरना उन्हें निकल जाने दीजिए। अहिंसाकी व्याख्या हम अलग-अलग फिलहाल कर रहे हैं। वे अपनी हैसियत ख़ुद बना लें। राजाजी भले ही निराशाजनक अल्पमतकी स्थितिमें पहुँच जायँ, मगर उन्हें संघर्ष करना ही चाहिए। मैंने अकेले ही शुरुआत की थी मगर शीघ्र ही भारी बहुमतका समर्थन मुझे मिला। उन्हें कार्यकारिणी समितिको विवश करनेके लिए हरचन्द कोशिश करनी चाहिए या समितिको इस प्रकार पुनर्गठित करना चाहिए कि उसके सदस्य उस हदतक अहिंसावादी न हों, जिस हदतक मैं अहिंसाको ले जानेको कहता हूँ।

"आपको मुझे अपना पैग़ाम उसी रूपमें रखने देना होगा जैसा कि मैं उसे जानता हूँ। अगर हम ईमानदार हैं, तो इस दोटूक मतविभाजनसे देशकी हानि नहीं होगी। हम सबको अपने विचारोंके अनुकूल ही काम करना चाहिए। इस बातकी मुझे बड़ी गहराईसे प्रसन्नता है कि सबने अपने विचार खुलकर प्रगट किये। क्षण-क्षणमें हालतें जिस प्रकार बदल रही हैं, उन्हें देखते हुए हमें यह पता लगाना होगा कि किस प्रकार हम नाटकमें अपना पार्ट उत्तम रीतिसे निभा

सकते हैं। जवाहरलालजीको नेतृत्व करने दीजिए। वे अपनेको पुरजोर तरीक़ेसे व्यक्त कर सकते हैं। मैं उनकी मुट्ठीमें रहूँगा।"

विवादके बाद गांधीजीने अपना मसविदा वापस ले लिया और राजगोपालाचारीजीने अपना मसविदा पेश किया।

गांधीजीने कहा: "यदि राजाजीका मसविदा कांग्रेसके दिमाग़का प्रतिबिम्ब है, तो उसे स्वीकार किया जाना चाहिए। यदि ऐसा नहीं है और यह कुछ सदस्योंकी निजी राय है, तो यह जानना आवश्यक है कि कांग्रेसका दिमाग़ किधर है, यह जाननेके लिए इस वक्त कोई प्रस्ताव पारित न किया जाय। आपको साहसके साथ हालतोंका सामना करना होगा। आपको यह मानना ही होगा कि जिस अहिंसाको हम पेश कर रहे हैं वह सच्ची अहिंसासे भिन्न है। कांग्रेसकी अहिंसा केवल कमज़ोरकी अहिंसाको प्रतिनिधित्व देती है। दक्षिण अफ्रीकामें मुझपर निष्क्रिय प्रतिरोधकी व्यंजना फेंकी गयी और इसका मैंने विरोध किया। इससे मुझे संतोष नहीं होता मगर देश शीघ्र ही संदेहके भयावह दुःस्वप्नसे मुक्त हो जायगा। हमने जब-जब बलवानकी अहिंसाके लिए कोशिश की, हम बुरी तरह असफल रहे।

"कार्यकारिणी समितिके सदस्योंका यह कर्तव्य है कि वे पता लगायें कि कांग्रेसका दिमाग़ किधर है। उन्हें राज्योंमें जाकर चुपचाप लोगोंकी राय जाननी चाहिए। इससे हमें कांग्रेसके लोगोंकी सामान्य विचारधाराका पता लग सकेगा। तब हमारी जानकारी बेहतर और ज़्यादा सही होगी। एक सीमातक हर व्यक्ति सदस्योंको अपने विचारोंके अनुरूप ढालनेकी कोशिश भी कर सकता है। अगर पता चले कि राजाजीके विचारोंमें बहुमत प्रतिबिम्बित हुआ है, तो हमें उसे क्रियान्वित होने देना चाहिए। लेकिन मैं तो अहिंसाके दृष्टिकोणसे ही फ़ैसला करूँगा।

"मैं महसूस करता हूँ कि सरकारको यह मसविदा मान्य होगा। अगर ऐसा हुआ, तो आज़ादी भी निगल ली जा सकती है। आज़ादीका सवाल दबी ज़बानसे नहीं उठाया जाना चाहिए। यह नैतिक दृष्टिसे ग़लत होगा। अगर हम मसविदेकी बातें ईमानदारीसे कह रहे हैं तो हमें पूरी शक्तिके साथ युद्धमें सहयोग देना चाहिए। मगर इसका अर्थ यह होगा कि हमने अहिंसाको आखिरी सलाम कर दिया। सरकार कांग्रेसका सहयोग प्राप्त करनेके लिए उत्सुक है। उसके पास इतने साधन हैं कि वह अगर कांग्रेसका उपयोग न कर सके तो दूसरोंको अपना साधन बना लेगी। फिलहाल, उसे यह संदेह है कि क्या वह कांग्रेसको सत्ता

सौंपकर भी कांग्रेससे पूरा-पूरा सहयोग प्राप्त कर सकेगी ? मैंने उसे कभी यह सोचनेका मौक़ा नहीं दिया कि वह कांग्रेससे एक भी सैनिक प्राप्त कर सकेगी। वह कांग्रेससे केवल नैतिक सहयोग ही प्राप्त कर सकती है। वह इस बातको भली भांति समझती है। वह दो बातोंको तौल रही है—दूसरी पार्टियोंकी स्वयंप्रेरित सहायता और कांग्रेसका नैतिक समर्थन। लेकिन अगर हम उससे जाकर यह कहें कि भारतके साधन अंग्रेजोंकी सेवामें हाजिर हैं तो वह कांग्रेसकी माँगें मान लेगी। सवाल यह है कि क्या आप लोग इस पहलूका सामना कर सकेंगे ? मुझे तो एक हज़ार आपत्तियाँ हैं और वे सब अहिंसाकी बुनियादपर हैं।"

"कांग्रेसका नैतिक समर्थन अंग्रेजोंका सहायक किस प्रकार हो सकता है ?" इस प्रश्नके उत्तरमें गांधीजीने कहा :

"सारी दुनियाकी नज़रमें ब्रिटेन ऊपर उठ जायगा। इसका अर्थ यह होगा कि जिस संस्थाने २० वर्षोंतक अहिंसक पद्धतिसे कार्य किया है उसका सहयोग पानेके लिए ब्रिटिश सरकार व्यग्र है। वह कहेगी कि हम दूसरी पार्टियोंके सहयोग-की अपेक्षा आपका सहयोग पसंद करेंगे। वह अहिंसक भारतसे अपील करेगी। मैं नैतिक सहयोगका बड़ा व्यापक दृश्य चित्रित कर रहा हूँ। उसे दो भारतोंके बीच चुनाव करना है। एकके पास सैनिक शक्ति है और दूसरेके पास अहिंसाकी अकूत शक्ति है। ये दो भिन्न प्रकारकी शक्तियाँ हैं। अगर अंग्रेज कहें कि हमें नैतिक समर्थन ज़्यादा पसंद है, तो यह बहुत बड़ी बात होगी। यह प्रक्रिया यांत्रिक हरगिज़ नहीं है। यह तो जीवंत प्रक्रिया है।

"अगर आप कांग्रेसके लोगोंके साथ न्याय करना चाहते हैं तो चुपचाप जाकर उनकी रायका पता लगाना होगा। अगर आप देखें कि उनमें सच्ची अहिंसा नहीं है तो पूरी ईमानदारीके साथ ऐलान कर दीजिए। हमारा फ़र्ज़ तो पूरा हो जायगा! हमें फिर शस्त्रधारण करना पड़ेगा। अगर हम ऐसा खुले तौरपर और ईमानदारीसे करेंगे तो दूसरी संस्थाएँ पीछे छूट जायँगी। मैं हिंसाकी कार्यपद्धति जानता हूँ। मैंने हिंसाको हमेशा अहिंसाके समानांतर रखकर सोचा है। मैं एक क्षणके लिए भी ऐसा नहीं महसूस करता कि मैं जिस उग्र मतका प्रतिनिधित्व करता हूँ, वह केवल मेरा अपना है। मैं महसूस करता हूँ कि मैं बेजुबान भारतके दिमाग़का प्रतिनिधित्व करता हूँ। अगर मेरे शरीरमें शक्ति होती और मैं जनता-तक पहुँच पाता तो मुझे विश्वास है कि वह मेरी बातोंपर हामी भरती। मैं जानता हूँ कि जनताके सामने, उसकी भाषामें बातको किस ढंगसे कहना चाहिए।"

सरदार पटेल : "जहाँतक कांग्रेसके लोगोंके दिमाग़का सवाल है, निर्णय-

को टालना अनावश्यक है। जब हमने सितम्बरमें पहला प्रस्ताव पारित किया था, उस समय कांग्रेसके सभी लोग कुछ इस तरह सोच रहे थे : 'अगर घोषणा इस-इस प्रकारकी हुई तो हम अपना सहयोग प्रदान करेंगे'! यह हमारी प्रवृत्ति-की कुंजी है। गांधीजीने इसे नैतिक समर्थन कहा है। हम लोगोंने इसे दूसरे रूप-में व्यक्त किया है। अगर घोषणा होगी तो हम पूरा समर्थन करेंगे; नैतिक भी और इससे भिन्न भी।"

जवाहरलाल : "सितम्बर घोषणासे पूरा समर्थन प्राप्त नहीं हो जायगा। इसका फ़ैसला आजाद भारत करेगा। मौजूदा हालतोंमें काफ़ी लोग सैनिक शिक्षण-की बात सोच रहे हैं, लेकिन अगर हम अपनी घोषणासे मुकर जायेंगे तो यह बहुमतके लिए नागवार होगा। जब ब्रिटिश सत्ता लड़खड़ा रही है तब उसे मदद पहुँचाना भूल होगी।"

गांधीजीने कहा : "इस स्थितिमें दी गयी मदद भारतके हितमें होगी। इसका अर्थ होगा कि हमने डूबते हुए जहाजको उबारनेकी भरसक कोशिश की। वे पुकार रहे हैं : 'हम डूब रहे हैं, हमें बचाओ'। हम कह सकते हैं : 'हमने मुसीबतोंके मदरसेमें शिक्षा पायी है। हमने भलमनसाहतसे अहिंसासे लड़ना सीखा है। आप चूंकि डूब रहे हो हम आपको यह मदद पहुँचा रहे हैं।' ऐसी मनोवृत्ति अनुचित नहीं है।"

बहसकी रोशनीमें राजाजीने अपना मसविदा सुधारकर पेश किया। चूंकि प्रस्तावपर मतैक्य नहीं था, अतः सोचा गया कि इसपर मतदान द्वारा निर्णय लेना ही ठीक होगा। बहुमतने, जिसमें सरदार पटेल, राजगोपालाचार्य, भूला-भाई देसाई, जमनालाल बजाज, डा० सैयद महमूद और आसफ़ अली शामिल थे, संशोधित प्रस्तावके पक्षमें मतदान किया। अहिंसाकी बुनियादपर खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने प्रस्तावके विरोधमें मतदान किया। अहिंसाके ही आधारपर राजेन्द्र-प्रसाद, शंकरराव देव, प्रफुल्लचन्द्र घोष और कृपालानी तटस्थ हो गये। सरोजिनी नायडू भी तटस्थ रहीं।

आमंत्रित लोगोंमेंसे पट्टाभि सीतारामैयाने पक्षमें और आचार्य नरेन्द्रदेव तथा अच्युत पटवर्धनने विपक्षमें मतदान किया।

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कार्यकारिणी समितिसे त्यागपत्र देनेकी इच्छा व्यक्त की। गांधीजीने उनकी इस बातका समर्थन किया। उन्होंने कहा कि अपने प्रान्तमें खान साहबकी स्थिति आश्चर्यजनक है। हजारों खुदाई खिदमतगार उन्हें अपना असंदिग्ध नेता मानते हैं। अगर उन्हें शक हुआ कि खान साहब हिंसाके

पक्षमें हो गये हैं तो वे भी हिंसापर उतर आयेंगे और फिर पुराने पारिवारिक झगड़ोंके मुर्दे कब्रसे निकाले जायेंगे। इसलिए खान साहबको अपनी स्थिति खुदाई खिदमतगारोंके सामने बिल्कुल साफ़ रखनी होगी। उन्हें इस्तीफ़ा देनेकी इजाज़त मिलनी ही चाहिए।

कार्यकारिणी समितिने दूसरा प्रस्ताव वज़ीरिस्तानपर पारित किया। सीमांत राज्यमें गांधीजीकी गहरी रुचि थी, क्योंकि वह उन्हें बलवानकी अहिंसाका योग्य क्षेत्र मालूम देता था। ट्रेन द्वारा वर्धा जाते हुए उन्हें वज़ीरियोंपर एक लेख लिखनेकी प्रेरणा हुई :

"उत्तर-पश्चिम सीमांत राज्यके कई इलाकोंमेंसे एक वज़ीरिस्तान भी है। सभी जानते हैं कि उत्तर-पश्चिम सीमान्त राज्यमें कई क़बीलोंके लोग रहते हैं। लोगोंकी धारणा यह है कि इनका जन्म ही डाका डालने, लूटपाट करने और ब्रिटिश सरकारको तंग करनेके लिए हुआ है। ये धारणाएँ अस्लियतसे दूर हैं। ये सीमा पारके कबीलेके लोग अज़हद गरीबीमें पैदा होते और बढ़ते हैं। पहाड़ी क्षेत्रोंमें इनका जीवन हमेशा मुसीबतों और पारिवारिक संघर्षोंका होता है। अपनी आर्थिक कठिनाइयोंको दूर करनेके लिए भारत उनके नज़दीक पड़ता है जिसपर वे धावे किया करते हैं। इसके अलावा ऐसे लोगोंकी कमी नहीं है, जो अपने राजनीतिक उद्देश्योंकी सिद्धिके लिए इन्हें गुमराह करनेके लिए तैयार रहते हैं। अतः इन कबीलोंके सम्बन्धमें हमारी जानकारी उनकी छापामारी हरक़तों तक ही लगभग सीमित है। ख़ान साहबने मुझे बताया है कि ये लोग स्वभावसे बड़े ही सीधे-सादे और मासूम होते हैं। जब-जब मुझे सीमांत राज्यमें जानेका मौका मिलता है मैं इन कबीलेके लोगोंसे परिचय पानेकी कोशिश करता हूँ। मैंने इस दिशामें पहला प्रयास इरविन-गांधी समझौतेके वक़्त किया था। मुझे यह प्रयास त्याग देना पड़ा क्योंकि इरविन साहबने कहा कि इससे सरकार उलझनमें पड़ जायगी। इसके बाद मैंने पत्राचार द्वारा इजाज़त लेनी चाही, मगर उसमें भी सफल नहीं हुआ। मैं जब पहली बार सीमांत प्रदेशमें गया उस वक़्त मैंने नये सिरेसे प्रयास किया, गवर्नरसे भेंट की, मगर न वे इजाज़त दिला सके, न खुद दे सके। हालमें ही, पश्चिमोत्तर प्रांतीय कांग्रेस कमेटीने वज़ीरियोंके बीच एक शिष्टमण्डल भेजना चाहा, जिसका कोई राजनीतिक उद्देश्य नहीं था, केवल समाज-कल्याणका उद्देश्य था, मगर इजाज़त नहीं मिली। अब कार्यकारिणी समितिने शिष्टमण्डल भेजनेका फ़ैसला लिया है, जिसमें दो व्यक्ति होंगे—श्री भूलाभाई देसाई और जनाब आसफ़ अली। हम आशा करते हैं कि शिष्टमण्डलको

आवश्यक अनुमति मिल जायगी ।

"कार्यकारिणी समितिके प्रस्तावका उद्देश्य राजनीतिक नहीं है । इसका उद्देश्य सिर्फ़ यह जानना है कि किस प्रकार इन सीमान्तवासी कबीलोंकी मदद की जा सकती है और उनसे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध किस प्रकार स्थापित किये जा सकते हैं । यह हमारी प्रतिष्ठाके प्रतिकूल बात है कि हम उनसे हमेशा आतंककी स्थितिमें रहें । हमारे ज़्यादातर भय अज्ञानके कारण बने रहते हैं । अगर मैं अपने पड़ोसीपर शक करूँगा तो मैं उससे डरता रहूँगा । लेकिन अगर मैं अपना शक त्याग दूं तो डर अपने आप ग़ायब हो जायगा । बरसोंसे हम यह मानते आ रहे हैं कि अधिकारी लोग यह नहीं पसंद करेंगे कि हम सीमान्तके कबीलेके लोगोंसे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करें । दूसरी ओर सरकारने, कबीलोंके इलाकेमें रक्षा-पंक्तियोंके निर्माणमें और सैनिक अभियानमें, करोड़ों रुपये खर्च कर डाले हैं । यह कांग्रेसका कर्त्तव्य है कि इन सीधे-सादे और ईमानदार लोगोंसे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करे । अतः कार्यकारिणी समितिका प्रस्ताव स्वागतके योग्य है । हम आशा करते हैं कि जब कांग्रेसने सही पग उठाया है तो उसे अंततक निभायेगी ।"

"खान साहबकी अहिंसा" शीर्षकसे गांधीजीने लिखा :

"जिस तूफ़ानने कार्यकारिणी समितिके अधिकांश सदस्योंको झकझोर दिया उसमें खान साहब खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ चट्टानकी तरह अडिग रहे । उन्हें अपनी स्थितिके सम्बन्धमें कभी भ्रम नहीं हुआ और उनका वह बयान मैं प्रस्तुत कर रहा हूँ, जो हमारी राहोंको रोशन करता रहेगा :

"कार्यकारिणी समितिके हालके कुछ प्रस्तावोंसे यह संकेत मिलता है कि वह अहिंसाका प्रयोग स्थापित सत्तासे भारतको आज़ाद करनेतकके संघर्षके लिए सीमित करना चाहती है । मैं यह नहीं कह सकता कि इसका प्रयोग भविष्यमें किस सीमातक और किस प्रकार किया जाना चाहिए । निकट भविष्यमें संभवतः इस बातपर ज्यादा प्रकाश पड़ सकेगा । इस बीच मेरे लिए कांग्रेस कार्यकारिणी समितिमें बने रहना मुश्किल हो गया है और मैं इससे इस्तीफ़ा दे रहा हूँ । मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि मैं जिस अहिंसापर विश्वास करता हूँ और जिसका उपदेश मैंने भाई खुदाई ख़िदमतगारोंको दिया है, वह बहुत व्यापक है । यह हमारे संपूर्ण जीवनको प्रभावित करती है और इसीमें इसकी सार्थकता है । अगर हमने अहिंसाका पाठ अधूरा ही पढ़कर छोड़ दिया, तो सीमांतके लोग उन जानलेवा लड़ाइयोंसे कभी मुक्त नहीं हो सकेंगे, जो उनके जीवनका अभिशाप है । जबसे हम लोगोंने अहिंसाका दामन पकड़ा है और खुदाई ख़िदमतगारोंने

इसके लिए अपना जीवन उत्सर्ग कर दिया है, तबसे इन झगड़ोंको भूलनेमें सफल हो सके हैं। अहिंसासे पठानोंके साहसमें अत्यधिक वृद्धि हुई है। चूंकि पठान, औरोंकी अपेक्षा हिंसामें अधिक अभ्यस्त थे अतः उन लोगोंने अहिंसासे औरोंकी अपेक्षा बहुत अधिक लाभ उठाया है। खुदाई खिदमतगारोंको सही मापनेमें खुदाई खिदमतगार ही बनना चाहिए। वे हमेशा अपनी जान देनेको तैयार रहकर और किसीकी जान लेनेमें शरीक न होकर खुदा और इनसानके सेवक बनें।

"यह वक्तव्य खान साहबके व्यक्तित्वके योग्य है ओर पिछले बीस वर्षोंसे जिन मूल्योंके लिए वे संघर्ष करते आ रहे हैं, उनके भी योग्य है। वे पठान हैं और पठानके बारेमें कहा जा सकता है कि राइफल या तलवार हाथमें लेकर पैदा होता है। मगर खान साहबने रौलट ऐक्टके खिलाफ सत्याग्रह करनेके लिए खुदाई खिदमतगारोंका आवाहन करते समय उनसे सारे हथियारोंका त्याग करनेको कहा। खान साहबने देखा कि उनके स्वेच्छासे हिंसाके हथियारोंको त्यागनेका जादुई असर हुआ। यह उन पारिवारिक खूनी झगड़ोंका एकमात्र उपचार था जो एक पठानको अपने पितासे वसीअतके रूपमें प्राप्त होते हैं और जो पठानोंके जीवनके एक सामान्य अंग बन गये हैं। इनसे बेशुमार परिवार उजड़ चुके हैं और खानसाहबकी दृष्टिमें अहिंसा चिरकांक्षित मुक्ति-द्वार थी। वरना इन खूनी लड़ाइयोंका ख़ात्मा कभी न होगा और पठान एक दिन समाप्त हो जायँगे। उन्हें यह बात दिनकी रोशनीकी तरह साफ़ नज़र आयी कि यदि पठानोंको प्रतिशोध लेनेसे विरत किया जा सके तो वे अपनी बहादुरीका बेहतर उदाहरण प्रस्तुत कर सकेंगे। खान साहबका पैग़ाम पठानोंने क़बूल कर लिया और उनकी अहिंसा बलवानकी अहिंसा सिद्ध हुई।

"अपनी और खुदाई खिदमतगारोंकी आस्थाके बारेमें स्पष्ट होनेके कारण, खान साहब कांग्रेस कार्यकारिणी समितिसे त्यागपत्र देनेसे बच नहीं सकते थे। अगर समितिमें वे बने रहते तो उनकी स्थिति अस्पष्ट और विवादास्पद हो जाती और उनका अबतकका करा-धरा सब चौपट हो जाता। वे अपनी जनतासे ये दो बातें एक साथ नहीं कह सकते थे कि अपने कबीलेके झगड़ोंको भूल जाइए और सेनामें रंगरूट बनकर भरती हो जाइए। सीधा-सादा पठान उनसे बहस कर बैठता और उनकी इस दलीलका कोई माकूल जवाब नहीं हो सकता कि यह युद्ध बदला लेनेके लिए लड़ा जा रहा है और इस युद्ध और उनके पारिवारिक झगड़ोंमें कोई फ़र्क नहीं है।

"मैं नहीं जानता कि खान साहब अपनी जनतातक अपना पैग़ाम पहुँचानेमें

कहाँतक सफल हो पाये हैं। इतना मैं जानता हूँ कि अहिंसा उनके लिए कोई बौद्धिक आस्था नहीं है बल्कि प्रेरणामूलक श्रद्धा है। अतः यह श्रद्धा कभी डिगायी नहीं जा सकेगी। उनके अनुयायियोंके बारेमें यह नहीं कहा जा सकता कि वे किस हदतक अहिंसापर दृढ़ रह सकेंगे। मगर इस बातसे वे परेशान नहीं हैं। उन्हें तो अपनी जनताके प्रति अपना फ़र्ज पूरा करना है। परिणाम वे ईश्वरपर छोड़ते हैं। वे अपनी अहिंसा पवित्र क़ुरानसे प्राप्त करते हैं। वे एक आस्थावान मुसलमान हैं। मेरे साथ वे एक सालसे कुछ ज़्यादा ही अर्सेसे रह रहे हैं और इतने दिनोंके बीच मैंने उन्हें कभी, अगर वे बीमार न हुए तो, नमाज़ छोड़ते या रमज़ानका उपवास छोड़ते नहीं देखा। मगर इस्लामके प्रति उनकी आस्था उन्हें दूसरी आस्थाओंका अनादर करनेके लिए नहीं प्रेरित करती। उन्होंने गीता पढ़ी है। वे कम पढ़ते हैं, लेकिन चयन करके पढ़ते हैं और उसमेंसे उन्हें जो बात जँच जाती है उसे वे अपनी ज़िन्दगीमें उतारते हैं। उन्हें लंबी बहसोंसे चिढ़ और ऊब है और उन्हें निर्णय लेनेमें ज़्यादा वक़्त नहीं लगता। अगर वे अपने मिशनमें सफल होते हैं तो बहुतसी समस्याओंका समाधान हो जायगा। मगर परिणामकी भविष्यवाणी कोई नहीं कर सकता। अपनेको भाग्यके भरोसे छोड़ दिया गया है। और अब सारा मामला ईश्वरके हाथोंमें है।"

व्यक्तिगत सत्याग्रह

१९४०-४

१९४० में जुलाईके अंतिम सप्ताहमें पूनामें कार्यसमिति और अखिल भारतीय कांग्रेस समितिकी बैठक हुई जिसमें बहुतसे मामले पक गये। इस बार अपनी सलाह देनेतकके लिए गांधीजी पूनामें मौजूद न थे।

ब्रिटिश सरकार एक नया क़दम उठानेपर विचार कर रही थी। वाइसरायने १८ अगस्त १९४० को अपना एक वक्तव्य घोषित किया, जिसको आम तौरपर 'अगस्त ऑफर' कहा जाता है। इस घोषणामें नये संविधानकी जिम्मेदारी प्राथमिक रूपसे भारतीयोंकी रखी गयी थी परन्तु इसके लिए दो शर्तें थीं। एक यह कि भारतको ब्रिटिश शासनके प्रति अपने दायित्वोंका पूर्ण रूपसे पालन करना चाहिए और अल्पसंख्यकोंकी रायको कुचला नहीं जाना चाहिए। इस वक्तव्यमें यह बात ज़ोर देकर कही गयी थी कि इस समय, जब कि राष्ट्रमण्डल 'अपनी अस्तित्व-रक्षाके संघर्ष'में लगा हुआ है, संवैधानिक मामलोंको तय नहीं किया जा सकता। लेकिन युद्धके पश्चात् संविधानकी रचनाके लिए भारतीयोंके एक उत्तरदायी निकायका गठन किया जायगा। उसके स्वरूप और उसके कार्योंके सम्बन्धमें भारतके लोगोंकी ओरसे समय-समयपर जो भी सुझाव आयेंगे, उनका स्वागत किया जायगा। तबतकके लिए यह निर्णय किया गया कि केन्द्रीय कार्यकारी परिषद (सेन्ट्रल एक्ज़ीक्यूटिव कौन्सिल) का विस्तार किया जाय और एक युद्ध सलाहकार परिषद (ऐडवाइज़री वार कौन्सिल) को स्थापित करनेकी कार्यवाही की जाय।

कांग्रेसके सरकारमें शरीक होनेके प्रश्नपर विचार-विमर्शके लिए वाइसरायने कांग्रेसके अध्यक्ष मौलाना आज़ादको आमंत्रित किया। कांग्रेसकी स्वाधीनताकी मांग और वाइसरायके प्रस्तावके बीच बातचीतका कोई आधार न था इसलिए कांग्रेस अध्यक्षने वाइसरायसे मिलनेसे इनकार कर दिया। गांधीजीने मौलाना आज़ादको लिखे गये एक पत्रमें कहा कि ईश्वरकी इच्छा यह नहीं है कि भारत युद्धमें भाग ले। इस सम्बन्धमें मौलाना आजादने लिखा है : "गांधीजीकी दृष्टिमें ईश्वरीय इच्छाके कारण ही मैंने वाइसरायसे मिलनेसे इनकार किया था। दूसरी ओर मेरे मिलनेसे गांधीजीके मनमें यह आशंका थी कि कहीं मेरे और वाइस-

रायके बीच कोई समझौता न हो जाय और कहीं भारतको युद्धमें न खींच लिया जाय।"

कांग्रेस इस बातको बहुत बुरी तरहसे महसूस कर रही थी कि वह नीचे उतर गयी है। उसने खुलकर गांधीजीसे अपनी असहमति प्रकट की थी और ऐसी शर्तें रख दी थीं जिनके कारण उसको अपनी पूर्ण शक्ति युद्धके प्रयासमें लगानी पड़ सकती थी। वर्धामें १८ अगस्तको कार्यसमितिकी बैठक हुई जिसमें निम्नांकित शब्द लेखाबद्ध किये गये : "ब्रिटिश सरकारके द्वारा कांग्रेसके प्रस्तावोंको अस्वीकार कर देना इस बातका प्रमाण है कि वह तलवारके बलपर भारतपर शासन करना चाहती है।"

१५ सितम्बरको बम्बईमें अखिल भारतीय कांग्रेस समितिकी बैठक हुई। उसमें यह बिलकुल स्पष्ट हो गया कि शत्रु पक्षसे थोड़ासा मिल जानेके बाद कांग्रेसके नेताओंने गांधीको अपनी पूर्ववत् निष्ठा अर्पित कर दी है। मौलाना आज़ादने अपने प्रारम्भिक भाषणमें कहा : "वाइसरायके द्वारा ग्रेट ब्रिटेनने जो प्रस्ताव रखा है, वह दृष्टि डालने योग्य भी नहीं है। विगत घटनाओंने हमें इस निर्णयकी ओर प्रेरित किया कि कांग्रेसका सक्रिय नेतृत्व करनेके लिए हम पुनः गांधीजीसे प्रार्थना करें। उन्होंने इसे स्वीकार कर लिया है।"

निम्नांकित प्रस्तावको, जिसका कि प्रारूप गांधीजीने तैयार किया था, प्रस्तुत करनेकी औपचारिकता नेहरूजीने निभायी और सरदार पटेलने इस प्रस्तावका समर्थन किया :

"अखिल भारतीय कांग्रेस समिति किसी ऐसी नीतिको स्वीकार नहीं करेगी जो कि भारतके अपने एक स्वाभाविक अधिकार स्वाधीनताको अस्वीकार करती हो, जो जन-मनकी स्वतंत्र अभिव्यक्तिको दबा देती हो, जो उसकी जनताको निरन्तर अधोगति और चिरदासताकी ओर ले जाती हो। इस नीतिपर चलकर ब्रिटिश शासनने एक असह्य स्थिति उत्पन्न कर दी है। वह स्थिति कांग्रेसके ऊपर एक संघर्ष थोप रही है ताकि कांग्रेस भारतीय जनताके सम्मान और उसके मूलभूत अधिकारोंका परिरक्षण कर सके। कांग्रेसने भारतकी स्वाधीनताके हेतु गांधीजीके नेतृत्वमें अहिंसाकी शपथ ग्रहण की है इसलिए राष्ट्रीय स्वाधीनताके आन्दोलनके इस गम्भीर संकट-कालमें अखिल भारतीय कांग्रेस समिति उनसे यह निवेदन करती है कि वे अगले कार्यके लिए कांग्रेसका मार्ग-दर्शन करें। दिल्लीका वह प्रस्ताव, जिसकी कि पूनामें अखिल भारतीय कांग्रेस समिति द्वारा पुष्टि हुई थी और जिसने कि उन्हें इस कार्यसे रोका था, अब आगे लागू नहीं होगा।

उसकी समाप्ति हो गयी।

"अखिल भारतीय कांग्रेस समिति ब्रिटेनकी जनताके प्रति और उन सब राष्ट्रोंकी जनताके प्रति, जो उसकी लपेटमें आ गयी है, अपनी सहानुभूति व्यक्त करती है। ब्रिटिश जनताने खतरा और विपत्तिके आगे जो वीरता और सहनशीलता प्रदर्शित की है उसकी कांग्रेसजन सराहना किये बिना नहीं रह सकते। वे अपने मनमें उन लोगोंके प्रति कोई दुर्भावना नहीं रखते और न कांग्रेस अपनी सत्याग्रहकी भावनासे उनके विरुद्ध कोई ऐसा क़दम उठाना चाहती है जो कि उनमें एक व्यग्रता उत्पन्न करे। लेकिन अपने ऊपर स्वतः लादे गये इस संयमको आत्म-विनाशका एक विस्तार नहीं समझना चाहिए। कांग्रेसकी नीति अहिंसापर आधारित है। उस नीतिके अनुसरणके साथ कांग्रेस अपनी पूर्ण स्वाधीनताका आग्रह करेगी। परन्तु जबतक जनताकी स्वाधीनताओंके परिरक्षणकी सीमा ही न लाँघी जाय और जबतक वह आवश्यक ही न हो जाय तबतक कांग्रेसकी इच्छा इन क्षणोंमें अहिंसात्मक विरोध छेड़नेकी नहीं है।

"कांग्रेसकी अहिंसाकी नीतिको लेकर कतिपय भ्रम उठ खड़े हुए हैं। पिछले प्रस्तावोंकी किन्हीं बातोंके कारण भी सम्भव है कि भ्रम फैले हों। अखिल भारतीय कांग्रेस समिति उनका निराकरण करती है और इस बातको पूरी तरहसे स्पष्ट कर देना चाहती है कि उसकी अहिंसापर आधारित नीति यथावत् चल रही है। यह समिति अहिंसाकी नीति और उसके आचरणपर दृढ़ आस्था रखती है, न केवल स्वराज्यके इस संघर्षमें बल्कि स्वतंत्र भारतमें अधिकसे अधिक दूरीतक, वहाँतक, जहाँतक कि उसके लागू होनेकी सम्भावना हो सकती है।....."

गांधीजीने प्रतिनिधियोंको सम्बोधित करते हुए कहा :

"इस प्रस्तावकी भाषा मुख्य रूपसे मेरी है। परन्तु कार्यसमितिने इसके आशयोंको भली भाँति समझकर और जान-बूझकर इन वाक्य-खण्डोंको स्वीकार किया है। इसका परिणाम यह है कि यदि ब्रिटिश शासनकी ओरसे हमें यह सूचित किया जाता है कि कांग्रेस अपना युद्ध-विरोधी प्रचार कर सकती है और जब सरकारके युद्धके प्रयास चल रहे हों तब अपनी असहयोगकी शिक्षा भी दे सकती है तो हम सविनय आज्ञा-भङ्ग नहीं करेंगे।

"मैं जो कुछ भी चाहता हूँ उसे समझनेमें भूल नहीं होनी चाहिए। मैं यह चाहता हूँ कि मेरा व्यक्तित्व अक्षुण्ण रहे। यदि मैं उसको खो देता हूँ तो मैं भारतकी किसी सेवाके योग्य न रह जाऊँगा। तब मैं ब्रिटिश जनताके लिए उससे भी कम और मानवताके लिए सबसे कम उपयोगका होऊँगा। मेरी स्वाधीनता

वैसी है जैसी कि राष्ट्रकी स्वाधीनता। वह राष्ट्रीय स्वाधीनतासे बदलनेके योग्य है। मैं अपने लिए अपेक्षाकृत बड़ी स्वाधीनताका दावा नहीं करता इसलिए मेरी स्वाधीनता आप लोगोंकी स्वाधीनताके बराबर है और उससे किसी प्रकार भी बड़ी नहीं है। मैं यह अनुभव करता हूँ कि यदि मेरी स्वाधीनता दाँवपर लगी हुई है तो आपकी भी खतरेमें है। मैं यह दावा करता हूँ कि मुझको बम्बईकी सड़कोंपर घूमनेकी आजादी है और यह कहनेकी भी कि मुझको इस युद्धसे कोई प्रयोजन नहीं है; और इस भ्रातृवधसे भी जो कि इस समय यूरोपमें चल रहा है। मैं वीरताकी प्रशंसा करता हूँ लेकिन इस वीरतासे लाभ क्या है? मुझे इस जड़ता और घोर अज्ञानको देखकर दुःख होता है। ये लोग यह भी नहीं जानते कि ये लोग लड़ किस लिए रहे हैं? सागरोंके उस पार जो लड़ाई चल रही है, उसे मैं इस दृष्टिसे देख रहा हूँ। मेरे लिए इस युद्धमें भाग लेना सम्भव नहीं है। मैं यह भी नहीं चाहता कि कांग्रेस इसमें भाग ले।

"मैं इस युद्धमें केवल एक शान्ति-स्थापककी भूमिका निभाना चाहता हूँ। यदि अंग्रेजोंने स्वाधीनता दे देनेकी बुद्धिमानी की होती, केवल कांग्रेसको नहीं बल्कि सारे भारतको और यदि भारतके अन्य दलोंने हम लोगोंके साथ सहयोग किया होता तो आज हमने एक सुलहकारका सम्मानपूर्ण स्थान पाया होता। यह मेरी एक महत्त्वाकांक्षा है। लेकिन मैं यह जानता हूँ कि आज यह एक दिवा-स्वप्न है लेकिन कभी-कभी मनुष्य अपने दिवा-स्वप्नोंके सहारे भी जीता है। मैं भी अपने दिवा-स्वप्नोंके सहारे जीवित हूँ। मैं यह स्वप्न देखता हूँ कि संसार भले लोगोंसे भरा हुआ है। एक समाजवादीकी भाषामें समाजकी एक नयी रचना होगी और सारी चीज़ोंका एक नया क्रम होगा। मैं भी इस नयी व्यवस्थाका इच्छुक हूँ जो कि विश्वको आश्चर्यचकित कर दे।

"अपनी स्थितिको पूरी तरहसे स्पष्ट करनेके लिए मैं वाइसरायसे भेंट करनेकी बात सोच रहा हूँ। हम लोग ऐसी कोई हालत पैदा नहीं करना चाहते जिसमें कि आप घबड़ा उठें और हम आपको आपके युद्ध-प्रयत्नोंसे भी दूर नहीं करना चाहते। अहिंसाको समान रूपसे दृष्टिमें रखकर बिना किसी रुकावटके आप अपने रास्तेपर जाइए और हम अपने रास्तेपर चलते जायें। यदि जनताको हम अपने साथ ले जाते हैं तो हमारे यहांके लोगोंकी ओरसे युद्धके प्रयासमें सहयोग देनेका प्रश्न नहीं उठता लेकिन इसके प्रतिकूल नैतिक दबावके अतिरिक्त अन्य किसी दबावको प्रयोगमें न लाकर यदि आप यह देखते हैं कि जनता युद्धके प्रयासमें आपको सहयोग दे रही है तो हमें शिकायत करनेका कोई मौक़ा नहीं होगा।

लेकिन हमारी आवाज़ भी सुनी जानी चाहिए, युद्धके प्रयत्नमें सहायता देनेसे मना करनेके लिए लोगोंको अपनी तर्क-शक्ति और अपनी बुद्धिका उपयोग करने देना चाहिए। शर्त यह है कि वे सब अहिंसाको स्वीकार करते हों। और यह भी कि वे लोग जो कुछ कहें वह खुलकर कहें, गुप्त रूपसे नहीं। प्रत्येक व्यक्तिको यह स्वतन्त्रता होनी चाहिए कि वह अपनी कलम या कापीके माध्यमसे अपने विचार व्यक्त कर सके। "हम साम्राज्यवादकी सहायता नहीं कर सकते। हम किसी (सत्त्वके) अपहरणमें सहायता नहीं कर सकते।" वाणी और लेखनका स्वातंत्र्य स्वराज्यका मूल आधार है। यदि मूल आधार ही खतरेमें है तो आपको एक पत्थरकी रक्षाके लिए अपनी सारी शक्ति लगा देनी होगी। ईश्वर आपकी रक्षा करे!"

दूसरे दिन उन्होंने पुनः प्रतिनिधियोंको सम्बोधित किया। हिन्दू-मुस्लिम समस्याका उल्लेख करते हुए गांधीजीने कहा, "यदि हमने कलह और वैमनस्य ही इकट्ठा कर रखा है तो झगड़ोंको कौन रोक सकता है? उस स्थितिमें तो हमें अराजकता और विप्लवतकके लिए तैयार रहना होगा। लेकिन हमको इस बात-का विश्वास होना चाहिए कि अहिंसाका परिणाम विप्लवके रूपमें कभी नहीं निकल सकता, लेकिन यदि किसी प्रकारसे अव्यवस्था फैल जाती है तो वे क्षण हमारी अहिंसाकी परीक्षाके होंगे। जिस हिंसासे अहिंसाका मुकाबला होता है, वह जैसे-जैसे बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे अहिंसाका बल भी ज़ोर पकड़ता जाता है। अहिंसाका बल इसी प्रकारका है। मुझे विश्वास है कि मेरी मृत्युसे पहले आप अहिंसाके इस बलको प्राप्त कर लेंगे। मैं एक सन्देश देना चाहता हूँ और यह चाहता हूँ कि वह प्रत्येक मुसलमानके कानोंतक पहुँच जाय। यदि आठ करोड़ या इससे अधिक मुसलमान भारतकी आज़ादीका विरोध करते हैं तो वह उसे कभी प्राप्त नहीं हो सकती, लेकिन मैं तबतक यह विश्वास करनेको तैयार नहीं हूँ कि प्रत्येक मुसलमान आज़ादीका विरोधी है जबतक कि बालिग मुसलमानों का मत इस बातको सिद्ध नहीं कर देता। उनको यह घोषित करने दीजिए कि उनकी इच्छित राजनीतिक मुक्ति हिन्दुओंसे अलग है। भारत एक निर्धन देश है जिसमें हर एक स्थानपर हिन्दू, मुसलमान और अन्य जातियाँ साथ-साथ रहती हैं। उन्हें दो भागोंमें बाँट देना अराजकतासे भी बुरी स्थिति होगी। यह एक जीवित शरीरकी चीड़-फाड़ होगी जिसे कि सहन नहीं किया जा सकता, इसलिए नहीं कि मैं एक हिन्दू हूँ। मैं तो एक ऐसे मंचसे बोल रहा हूँ जो कि हिन्दू, मुसल-मान, पारसी और शेष सबका प्रतिनिधित्व करता है। लेकिन मैं उनसे यह कहूँगा,

'आप लोग हिन्दुस्तानके शरीरको चीरनेसे पहले मेरे शरीरको चीर दीजिए। जो दो सौ साल राज्य करनेवाले मुग़लोंने भी नहीं किया, उसे आप नहीं करेंगे।' जो कुछ मैंने मुसलमानोंके विषयमें कहा वह सिखोंपर भी समान रूपसे लागू होता है। यदि तीस लाख सिख भारतकी स्वाधीनताको रोकते हैं तो हम अहिंसात्मक ढंगसे उनको रास्तेपर ले आयेंगे। अहिंसाके बिना अहिंसात्मक स्वराज्य प्राप्त नहीं किया जा सकता। विदेशी सत्ताके अस्तित्वके कारण हमारे मार्गमें और भी बहुत-सी बाधाएँ खड़ी हो गयी हैं। लेकिन सम्प्रदायोंके बीच शान्ति बनाये रखने के लिए हमें अपनी सारी शक्ति लगा देनी होगी। इस्लामका अर्थ शान्ति है। यह शान्ति मुसलमानोंके लिए सीमित नहीं हो सकती। यह शान्ति सारे विश्वके लिए होगी।"

गांधीजीके पुनः नेतृत्व स्वीकार कर लेनेके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस समितिने एक महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव ७ के विरुद्ध १९२ मतोंसे पारित किया। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने कार्यसमितिसे अपने त्यागपत्रको वापस ले लिया ताकि वे कांग्रेसकी प्रवृत्तियोंमें पूर्ववत् भाग ले सकें। उनकी गांधीजीके साथ बातचीत हो चुकी थी। पेशावर पहुँचकर उनको गांधीजीका निम्नलिखित पत्र मिला :

"मुझे आशा है कि बम्बईमें हम लोगोंके बीच जो बातचीत हुई थी, उसके सारको आपने ग्रहण कर लिया होगा। यदि ऐसा हो गया है तो जिन मूल बातों को मैंने आपके सामने रखनेकी कोशिश की थी उनके संदर्भसे हर एक समस्या सुलझायी जा सकती है। हमें अपनी अहिंसा अपने बच्चों, बड़ों और पड़ोसियोंसे शुरू करनी होगी, हमें अपने मित्रों और पड़ोसियोंके तथाकथित दोषोंको देखा-अनदेखा करना होगा, लेकिन अपने दोषोंके लिए हम अपनेको कभी क्षमा नहीं करेंगे, तभी हम अपने-आपको सही मार्गपर ले जा सकेंगे और जैसे ही हम कुछ ऊपर उठें, हमको अपने राजनीतिक सहयोगियोंके बीच अहिंसाका अभ्यास करना होगा। जिन लोगोंका हमसे मतभेद है उनके दृष्टिकोणको हमें देखना और समझना होगा। हमें उनके साथ अत्यंत धैर्यके साथ व्यवहार करना होगा। हमें उनको उनकी भूलें समझानी होंगी और हम अपने दोषोंको भी मानेंगे। इसके बाद आगे चलकर हमको बड़े धीरज और बड़ी मुलायमियतके साथ उन राजनीतिक पार्टियों से व्यवहार करना होगा जिनकी नीतियाँ और सिद्धान्त हमसे भिन्न हैं। हमें उनकी आलोचनाको उनके सिद्धान्तोंकी दृष्टिसे देखना होगा और हमेशा यह याद रखना होगा कि हमारे और दूसरे लोगोंके बीचमें जितनी अधिक दूरी होगी, अहिंसाको अपना काम करनेके लिए उतना ही बड़ा क्षेत्र मिलेगा। इन क्षेत्रोंमें अपनी इस

जाँच या परीक्षामें जब हम उत्तीर्ण हो जायेंगे केवल तभी हम उनके साथ व्यवहार करेंगे, जिनसे कि हम लड़ रहे हैं और जिन्होंने हमारे प्रति गम्भीर अन्याय किये हैं।

"यही वह बात थी जो मेरे और आपके बीच हुई थी। दूसरी बात मैंने आपसे यह कही थी कि एक अहिंसाव्रती सोनेके घण्टोंको छोड़कर शेष समयमें अपनेको किसी-न-किसी उपयोगी कार्यमें व्यस्त रखेगा। रचनात्मक कार्यका उसके निकट वही महत्त्व होगा जो कि एक हिंसक व्यक्तिके लिए अपने शस्त्रोंका होता है।"

सितम्बरके अंतमें गांधीजीने शिमलामें वाइसरायसे भेंट की। लार्ड लिन-लिथगोने गांधीजीको बतलाया कि ग्रेट ब्रिटेनमें शान्तिवादियोंके साथ किस प्रकार का व्यवहार किया जाता है। उन्होंने आगे कहा, "मैं यह स्पष्ट रूपमें कह देना चाहता हूँ कि स्वयं भारतके हितोंकी दृष्टिसे यह सम्भव नहीं हो सकेगा; विशेष रूपसे युद्धकी इन अति संकटकी घड़ियोंमें कि युद्ध-प्रयासोंमें हस्तक्षेप करनेकी बातसे सहमत हुआ जा सके। आपने जितनी अधिक वाणीकी स्वाधीनता चाही है, इसमें वह भी शामिल है।"

इसके उत्तरमें गांधीजीने कहा : "यदि कांग्रेसको मरना ही पड़ेगा तो वह अपने विश्वासकी घोषणा करती हुई मरेगी। यह बात दुर्भाग्यपूर्ण है कि हम लोग बोलनेकी आज़ादीके एक भी मुद्देपर समझौता न कर सके।"

११ अक्तूबरको वर्धामें कार्य-समितिकी बैठक हुई। उसमें गांधीजीने अपनी सविनय आज्ञाभंगकी योजनाको खोला और उन लोगोंने स्थितिपर तीन दिनतक विचार-विमर्श किया। गांधीजीने सेवाग्रामसे एक वक्तव्य प्रसारित किया जिसमें उन्होंने कहा :

"मेरी योजना केवल यह है कि विनोबा भावे द्वारा अमली काररवाई की जायगी और कुछ समयतक वह केवल उन्हींतक सीमित रखी जायगी। और चूँकि इसकी मर्यादा व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा है और उसमें भी वह केवल उन्हींतक सीमित है इसलिए केवल उनके द्वारा इस कार्यको सम्पन्न किया जायगा और प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे उसमें कोई अन्य व्यक्ति भाग न लेगा। इसका सम्बन्ध बोलनेकी स्वतन्त्रतासे है इसलिए कुछ अंशमें जनता इसमें सम्मिलित हो जायगी लेकिन यह उसकी इच्छापर निर्भर है कि वह विनोबा भावेको सुने या न सुने।

"परन्तु इसमें बहुत कुछ इस बातपर भी निर्भर होगा कि सरकार क्या

करना चाहती है। सविनय आज्ञा-भंगको व्यक्तियोंतक सीमित रखनेकी सारी कोशिशके बाद भी, और इस समय उसे केवल एक व्यक्तितक सीमित रखनेके बाद भी वह विनोवा भावेके भाषणको सुनना अथवा उनके द्वारा लिखी गयी किसी चीज़को पढ़ना अपराध करार दे सकती है और इस प्रकार तत्काल एक संकटकी स्थिति उत्पन्न कर सकती है। विनोवा भावेके साथ मैंने अनेक प्रकारकी योजनाओंपर बातचीत की है। और हम अनावश्यक मतभेद और जोखिमको टालना चाहते हैं। मेरा विचार यह है कि सारी काररवाई इतने कड़े अहिंसात्मक ढंगसे की जाय जितनी कि मनुष्यसे सम्भव हो सकती है। एक व्यक्तिकी हिंसा, चाहे वह प्रच्छन्न हो या प्रकट, एक निश्चित सीमासे बाहर नहीं जा सकती परन्तु उस सीमामें वह प्रभावपूर्ण होगी। जिनका अहिंसामें विश्वास नहीं है उनके द्वारा एक व्यक्तिकी अहिंसात्मक कार्यवाहीका तिरस्कार हो सकता है या उसका उपहास हो सकता है। वास्तवमें जहाँ एक निश्चित हिंसात्मक कार्यका प्रभाव अंकगणित की नियम संख्याकी भाँति कम किया जा सकता है वहाँ एक अहिंसात्मक क्रियाका प्रभाव सारी गणनाको एक चुनौती देता है। यह देखा गया है कि उसने बहुतोंको ग़लत साबित कर दिया है और उसे ठीकसे न समझ सकनेके कारण वे लोग संकटमें पड़ गये हैं। मैं बिना मिलावटकी अहिंसाका उदाहरण कबतक पेश कर सकूँगा, यह देखना है।........

१७ अक्तूबर १९४० को श्री विनोवा भावेने वर्धाके निकटवर्ती गाँव पौनार-में एक युद्ध-विरोधी भाषणके द्वारा, पवित्रता और गाम्भीर्यके साथ व्यक्तिगत सत्याग्रहका उद्‌घाटन किया। इसके बाद वे तीन दिनतक एक गाँवसे दूसरे गाँव-तक घूमते रहे और भाषण करते रहे। २१ अगस्तको उनको गिरफ्तार कर लिया गया और उनको तीन मासका कारावास दंड सुना दिया गया।

सरकारने समाचार-पत्रोंको कड़ी हिदायत दी कि वे विनोवा भावेकी गति-विधियोंके सम्बन्धमें कोई प्रचार-कार्य न करें। १८ अक्तूबरको 'हरिजन' के सम्पादकको एक नोटिस मिली जिसमें उसको यह सलाह दी गयी थी कि वह मुख्य प्रेस सलाहकार (चीफ़ प्रेस एडवाइज़र) की पूर्व अनुमतिके बिना सत्याग्रह या उसकी परवर्ती बढ़ी हुई स्थिति सम्बन्धी किसी घटनाका विवरण प्रकाशित न करे।

७ सितम्बरके 'हरिजन' में मोटे अक्षरोंमें पाठकोंसे विदा मांगी गयी और उनसे 'नमस्कार' कर लिया गया। गांधीजीने लिखा : "प्रति सप्ताह मैं आपके साथ जो बातचीत कर लिया करता था, वह अब न कर सकूँगा। आप भी मेरी

वार्ताओंसे चूक जायँगे। मेरी वार्ताएँ मेरे गहनतम विचारोंका एक विश्वस्त लेखा हैं और उसीमें उनका मूल्य निहित है। एक रुँधे हुए वातावरणमें इस प्रकारकी अभिव्यक्ति सम्भव नहीं है। मेरी इच्छा सविनय आज्ञा-भंग छेड़नेकी नहीं है। अब मैं मुक्त रूपसे नहीं लिख सकूँगा। सत्याग्रहके एक कर्त्ताके रूपमें केवल अनुमति मिलने योग्य विषय, जैसे रचनात्मक कार्यक्रमपर विचार लिख सकनेके लिए मैं अपनी मान्यताओंके साथ अपनी अन्तरात्माको नहीं दबा सकता। यह तो वैसी ही बात होगी कि सिरको छोड़कर पूंछको पकड़ लिया जाय। मेरे निकट सम्पूर्ण कार्यक्रम अहिंसाकी एक अभिव्यक्ति है। यदि मैं अहिंसाकी व्याख्या न कर सकूं तो मेरे लिए यह स्वयंको अस्वीकार करना होगा क्योंकि इसका अर्थ यह होगा कि मैंने अध्यादेशके आगे अपनेको समर्पित कर दिया। इसलिए जबतक यह चुनौती चल रही है तबतक पत्रोंका प्रकाशन स्थगित ही रहेगा। उसमें उस चुनौतीके आगे एक सत्याग्रहीका सम्मानपूर्ण विरोध निहित है।

श्री विनोबा भावेके सत्याग्रहके समाचारको देनेके बाद खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके 'पख्तून' का प्रकाशन भी स्थगित कर दिया गया।

विनोबाजीके बाद पं० जवाहरलाल नेहरूने अपनेको दूसरे स्वयंसेवकके रूपमें पेश किया। नियमके अनुसार उनको अधिकारियोंको सूचना देनेके पश्चात् ७ नवम्बरको अपना सत्याग्रह प्रारम्भ करना था लेकिन वे ३१ अक्तूबरको उस समय एक रेलवे स्टेशनपर गिरफ्तार कर लिये गये जब कि गांधीजीसे मिलनेके बाद वे वर्धासे लौट रहे थे। गांधीजीने अपने एक पत्रमें सरदार पटेलको लिखा : "इस समय केवल उन्हीं लोगोंको जेल जाना है, जिन्हें मैंने चुना है। यदि सरकार मुझको गिरफ्तार नहीं करना चाहती तो मैं शेष सबको; सरकार उनमेंसे अधिकसे अधिक जितने लोग चाहती हो, भेज दूँगा। यदि मेरी गिरफ्तारी हो जाती है तो ईश्वर इस आन्दोलनको निर्देश करेगा।"

नवम्बरके मध्यमें एक अभियान शुरू हुआ जिसको कि गांधीजीने 'प्रतिनिधियोंका सत्याग्रह' कहा। इसमें कांग्रेस कार्यसमिति, अखिल भारतीय कांग्रेस समिति और केन्द्रीय तथा विधान-मंडलोंमेंसे स्वयंसेवक चुने गये। बहुतसे कांग्रेसजन, जिनमें काफ़ी भूतपूर्व मंत्री भी शामिल थे, सड़कोंपर निकल आये। उन्होंने नारे लगाये। उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और उनको एक वर्ष या इससे अधिक अवधिका कारावास दण्ड दे दिया गया। सरदार पटेलने सरकारको अपने सत्याग्रहकी सूचना भेज दी थी। उनको १७ नवम्बरको गिरफ्तार कर लिया गया और भारत सुरक्षा कानूनके अन्तर्गत उनके ऊपर रोक लगा दी गयी। कांग्रेसके

अध्यक्ष मौलाना आज़ादको नववर्ष दिवसके सायंकाल बन्दी कर लिया गया। उनको अठारह महीने कैदकी सज़ा दी गयी। एक-एक करके कांग्रेसके सारे प्रमुख नेता गिरफ्तार कर लिये गये।

सैकड़ों सत्याग्रहियोंने इन शब्दोंको साथ-साथ दुहराया, "जन या धनसे ब्रिटिश युद्ध-प्रयासमें सहायता देना एक गलत चीज़ है। सही चीज़ यह है कि सविनय आज्ञा-भंगके ज़रिये सारे युद्धोंका विरोध किया जाय।" सन् १९४१ के जनवरी मासतक चालानोंकी संख्या बढ़कर लगभग २,२५० हो गयी। इनमें ऐसे भी काफ़ी मामले थे जिनमें कारावास दण्डकी जगह जुर्मानेकी सज़ा दी गयी थी। हर एक प्रदेश, दूसरे प्रदेशसे दो बातोंमें भिन्न था—आन्दोलनका विस्तार और उसको संचालित करनेका ढंग। संयुक्त प्रदेशमें आन्दोलनका सबसे अधिक ज़ोर था और कुल संख्याकी लगभग आधी गिरफ्तारियाँ वहीं हुई थीं। इस आन्दोलन में पश्चिमोत्तर सीमा-प्रदेश सबसे कम प्रभावित हुआ था यद्यपि ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँ वहाँ काफ़ी सक्रिय थे। डा० ख़ान साहबको पुलिस द्वारा पकड़ लिया गया और उनको अपने घर ले जाया गया। बङ्गालमें अधिकांश सत्याग्रहियोंको खुला घूमने दिया गया। २७ जनवरी १९४१ को यह सनसनीखेज ख़बर प्रसारित हुई कि श्री सुभाषचन्द्र बोस, अपने घरसे, जहाँ कि पुलिस उनकी बराबर निगरानी रख रही थी, सहसा गायब हो गये हैं।

सन् १९४१ के अप्रैल महीनेमें कांग्रेसके साधारण सदस्योंकी भी स्वयंसेवकों में भर्ती कर ली गयी। इसका फल यह हुआ कि सत्याग्रहियोंकी संख्या एकदम बढ़ गयी। गर्मीके बीचतक २०,००० से भी अधिक चालान किये जा चुके थे। एक समय १४,००० से भी अधिक सत्याग्रही जेलमें थे।

भारतके सभी दलोंने इस राजनीतिक गतिरोधका प्रबल विरोध किया। सर तेजबहादुर सप्रूने इस बातकी भरसक चेष्टा की कि कांग्रेस और मुस्लिम लीगके बीच एक समझौता हो जाय लेकिन मि० जिनाका रुख बहुत कड़ा था। मि० जिनाने सत्याग्रहके इस अभियानको कांग्रेसकी मांगें स्वीकार करनेके लिए ब्रिटिश सरकारपर डाले गये एक दबावकी संज्ञा दी। गांधीजीने श्री सप्रूसे शिकायत करते हुए कहा : "मेरा अपना ख़याल यह है कि मि० जिना तबतक कोई समझौता नहीं करना चाहते जबतक कि वे मुस्लिम लीगकी स्थितिको इतना ठोस नहीं बना लेते कि वे शासकोंके सहित सभी सम्बन्धित राजनीतिक दलोंसे अपनी शर्तें मनवा सकें।"

जून महीनेके मध्यमें, जब कि जर्मनीने सोवियत रूसपर आक्रमण किया,

अन्तर्राष्ट्रीय स्थितिमें एक अपेक्षित परिवर्तन आ गया। जुलाईमें वाइसरायकी कार्यकारी परिषद्के विस्तार और राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद्के गठनकी घोषणा कर दी गयी।

दिसम्बर १९४१ में यह अत्यन्त स्पष्ट हो गया कि भारतकी राजनीतिक स्थितिको सुधारनेके लिए अविलम्ब कुछ निश्चित क़दम उठाने आवश्यक हैं। जर्मनी सोवियत रूसमें बड़ी दृढ़ताके साथ बढ़ता जा रहा था और जापानने हिन्द-चीनमें अपनी स्थितिको काफ़ी मज़बूत बना लिया था। वह युद्धके महासागरमें अन्तिम गोता लगानेकी तैयारियाँ कर रहा था। भारतके विशाल साधनों और जन-शक्तिको युद्धके कार्यमें प्रवृत्त करना एक तात्कालिक सैनिक आवश्यकता बन गया था। ३ दिसम्बरको ब्रिटिश सरकारने समझौतेकी ओर एक इशारा किया :

"भारत सरकार इस उत्तरदायी, दृढ़ संकल्पपर विश्वास करती है कि जबतक विजय नहीं मिल जाती तबतक उसे युद्ध-प्रयासमें निरन्तर सहायता दी जायगी। वह इस निष्कर्षपर पहुँची है कि सविनय आज्ञाभंगकारियोंको, जिनका अपराध औपचारिक या प्रतीकात्मक ढंगका रहा है, रिहा किया जा सकता है। इनमें पंडित नेहरू और मौलाना आज़ाद भी शामिल हैं।"

महात्मा गांधीने लिखा : "जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, यह मेरे मनकी वीणाके एक भी तारको झंकृत न कर सका और न मेरे निकट कोई क़द्र ही पा सका। भारत जिस स्वाधीनताको भोग रहा है वह एक गुलामकी आज़ादी है, एक बराबरीके आदमीकी नहीं जिसे कि दूसरे शब्दोंमें पूर्ण स्वतन्त्रता कहा जाता है। यदि भारत सरकार इस उत्तरदायी, दृढ़ संकल्पपर विश्वास करती है कि जबतक उसे विजय नहीं मिल जाती तबतक उसे युद्ध-प्रयासमें निरन्तर सहायता दी जायगी तो इसका तर्कयुक्त निष्कर्ष यह है कि शासनको सविनय अवज्ञाके बन्दियोंको, जो कि उसके रास्तेमें एक बाधा खड़ी करते हैं, अपनी निगरानीमें ही रखना चाहिए। ऐसी स्थितिमें मैं इस रिहाईका यह अर्थ निकाल सकता हूँ कि सरकार स्वयं अपनाये गये जेलके एकान्तमें क़ैदियोंके मनके परिवर्तनकी आशा कर रही है। मैं यह आशा करता हूँ कि सरकारका यह भ्रमजाल शीघ्र ही टूट जायगा।"

ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके रचनात्मक कार्यकी सराहना करते हुए गांधीजीने निम्नलिखित वक्तव्य जारी किया :

"इस अमानुषिक अग्निकाण्डमें, जो कि शस्त्रोंमें विश्वास रखनेवाली विश्व-शक्तियोंको अपनेमें लपेटे है, यह विचार मात्र मनको स्वस्थ करता है और उसे ऊँचा उठाता है कि यहाँ बादशाह ख़ान जैसे लोग मौजूद हैं। ये विश्व-शक्तियाँ

तो यह भी नहीं जानतीं कि वे किस लिए लड़ रही हैं ? बादशाह खान, जो कि खुदाई खिदमतगारोंमें पहले व्यक्ति हैं, शांतिके हेतुको लेकर कार्य कर रहे हैं और स्वाधीनताके आन्दोलनमें भाग लेनेके लिए अपनेको अहिंसात्मक साधनों द्वारा सज्जित कर रहे हैं, ताकि वे अपना अधिकसे अधिक प्रभाव डाल सकें।

"उनका अहिंसापर अडिग विश्वास है, हालाँकि उसकी सभी मंशा उनके आगे अभी स्पष्ट नहीं है। खुदाई खिदमतगारोंको अहिंसात्मक प्रशिक्षण देनेके लिए वे पिछले कुछ मासोंसे छोटे-छोटे शिविर चला रहे हैं, लेकिन नवम्बरके तीसरे सप्ताहमें उन्होंने एक बड़े शिविरका आयोजन किया जिसमें उन्होंने पंजाब, कश्मीर और बलूचिस्तानसे अपने पड़ोसी कार्यकर्त्ताओंको आमंत्रित किया। चरखा एक आवश्यक क्रिया-कलाप था। वहाँ नित्य ३०० से भी अधिक चक्र घूम-घूमकर अपना कार्य करते थे। उन लोगोंको धनुष-तकलीसे भी परिचित कराया गया। वह सब लोगोंको बेहद पसन्द आयी। इसके दो कारण हैं, एक तो वह सस्ती पड़ती है और दूसरे किसी भी गाँवमें उसे बड़ी आसानीके साथ तैयार किया जा सकता है। स्वयंसेवकोंने आस-पासके गाँवोंमें सफाईका काम किया। उन लोगोंके लिए व्याख्यानोंका भी आयोजन किया गया था। इन भाषणोंमें अहिंसाका अर्थ स्पष्ट किया गया था और युद्धमें भाग न लेनेकी आवश्यकता बतलायी गयी थी।

"शिविरमें पारित एक प्रस्तावमें कवाइली लोगोंसे यह अपील की गयी थी कि वे अहिंसक बनकर शान्तिपूर्ण जीवन बितायें। इस प्रस्तावकी प्रतियाँ उन कवाइली लोगोंमें बांटनेके लिए छापी गयी थीं जो कि ब्रिटिश इलाकेमें आ गये थे।

"गाँवोंमें स्वच्छताका कार्य पूर्ण व्यवस्थित ढंगसे किया गया। स्वयंसेवक अपनी-अपनी झाड़ू लेकर कई टोलियोंमें बँट गये। उन्होंने पुलिस थानोंको भी सफ़ाई करनेसे नहीं छोड़ा। वहाँके अधिकारियोंने स्वयंसेवकोंकी सेवाको आभार सहित स्वीकार किया।

"इस प्रकार सात दिनतक; १६ नवम्बरसे २२ नवम्बरतक यह शिविर चलता रहा। उनमें बीस हिन्दू और दो महिलाएँ भी थीं। बादशाह खानने मुझे लिखा था कि यदि मैं आवश्यक समझूँ तो किसीको शिविरमें भेज दूँ। उनका मतलब शिक्षकोंसे था। जिनको मैं उन्हें पूर्ण सन्तोष दे सकने योग्य व्यक्ति समझता था, ऐसे दो आदमी मैंने उनके पास भेज दिये। यद्यपि बादशाह खान बीमार थे फिर भी उन्होंने प्रत्येक क्रिया-कलापमें भाग लिया। शिविर बहुत सादे ढंगसे आयोजित किया गया था। वहाँ नौकर नहीं थे। एक डाक्टरने अपनी

इच्छासे शिविरको अपनी सेवाएँ अर्पित कीं जो कि वहुत ही उपयोगी सिद्ध हुईं। वहुतसे लोग मलेरियासे बीमार पड़ गये थे। सरकारकी ओरसे भी कुछ दवाइयों-के साथ एक डाक्टर भेजा गया था।

"शिविरमें भोजनकी व्यवस्था इस प्रकार रखी गयी थी : प्रातः ७-४५ पर चाय और नान, दोपहरको वारह बजे दाल और सब्जीके साथ गेहूँ और मक्का-की रोटी और शामको ७ बजे भी वही।

"शिविरमें पूरे सीमाप्रांतसे लगभग ५०० प्रतिनिधि और अतिथि एकत्रित हुए थे। उनको छोटे-छोटे तम्बुओंमें ठहराया गया था जिनमें बगलके पर्दे नहीं थे। इस शिविरको चलानेमें लगभग १५०० रुपये ख़र्च हुए। कांग्रेसजन और अन्य लोग इस शिविरकी सादगी, मितव्ययिता और व्यवस्थाका लाभदायक अनुकरण कर सकते हैं।"

चौदह मासकी अवधिमें २५,००० से भी अधिक सत्याग्रहियोंने जेल-यात्रा की। ४ दिसम्बर १९४१ को भारतभरमें समस्त सत्याग्रहियोंको रिहा कर दिया गया।

गांधीजीने कहा : "सवको यह जान लेना चाहिए कि किन्हीं बाह्य आधारों-पर मुझको सविनय आज्ञा-भंग स्थगित करनेका कोई अधिकार नहीं है। यह कार्य केवल कांग्रेस कर सकती है। व्यक्तिगत रूपसे मेरे आगे पसन्दगीका कोई प्रश्न नहीं है। मैंने संकटके इस क्षणमें शांतिकी शपथ ग्रहण की है और इस नाते अपने युद्ध विरोधी कार्यको स्थगित करना स्वयंको अस्वीकार करना होगा। भले ही हमें ग़लत समझा जाय या हमारे ऊपर बड़ेसे बड़ा संकट आये, उन सब लोगोंके लिए, जो मेरे ढंगसे सोचते हैं, यही उचित होगा कि हम अपने विश्वासको अपने कार्यके द्वारा व्यक्त करें। हम यह आशा करें कि जिस रक्त-स्नानने मानवको उसके सबसे निचले स्तरतक उतार दिया है, उससे वचनेके लिए युद्ध करनेवाली सारी शक्तियोंको अन्तमें हमारे ही रास्तेपर आना होगा।"

भारत छोड़ो

१९४१-४५

२३ दिसम्बर १९४३ को बारडोलीमें, जहाँ कि गांधीजी विश्राम कर रहे थे, कार्यसमितिकी बैठक हुई। पिछली बैठकको हुए एक वर्षसे भी अधिक समय बीत चुका था। इस अवधिमें स्थितिने बढ़कर जो रूप ले लिया था, उसपर विचार-विनिमय करनेके लिए इस बैठकको बुलाया गया था। जापानके युद्धके सागरमें उतर आनेसे एक संकटकालीन स्थिति उत्पन्न हो गयी थी और कार्य-समितिके लिए इस आपत्कालीन स्थितिको एक यथार्थवादी दृष्टिकोणसे देखना जरूरी हो गया था। एक सप्ताहके विचार-विनिमयके पश्चात् कार्यसमितिके सदस्य इस निर्णयपर पहुँचे :

"ब्रिटिश शासनके प्रति भारतमें एक विरोध और अविश्वासकी पृष्ठभूमि बन चुकी है और भविष्यके दूरगामी आश्वासन भी इस पृष्ठ-भूमिको बदल सकनेमें समर्थ नहीं हैं। भारतीय जनता अपनी अन्तःप्रेरणासे या स्वेच्छासे उस अहंकारी साम्राज्यवादको सहायता नहीं दे सकती है जो कि फासिस्ट प्राधिकारवादसे भिन्न नहीं है। इसलिए समितिकी यह राय है कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका वह प्रस्ताव अपनी जगह स्थिर है जो कि १६ सितम्बर १९४० को बम्बईमें पारित हुआ था। वह अब भी कांग्रेसकी नीतिको यथावत् प्रकट करता है।"

कार्यसमितिने रचनात्मक कार्यक्रमके महत्त्वपर बल दिया और गांधीके नेतृत्व के प्रति एक आदरपूर्ण आस्था प्रकट की। देशने रचनात्मक कार्यक्रमकी जिस ढंगसे क़द्रदानी की थी, उसपर उसने एक संतोष व्यक्त किया। लेकिन गांधीजी अब नेता नहीं रह गये थे। उन्होंने राष्ट्रपति मौलाना आजादको अपने एक पत्रमें लिखा :

"विचार-विनिमयके बीच मैंने यह पाया कि बम्बईके प्रस्तावकी व्याख्या करते हुए मुझसे एक गम्भीर भूल हो गयी है। मैंने उसकी इस अर्थमें व्याख्या की थी कि कांग्रेस अहिंसाके आधारपर इस युद्धमें या और युद्धमें शामिल होनेसे इनकार कर रही है। मुझे यह देखकर अत्यंत आश्चर्य हुआ कि अधिकांश सदस्य मेरी इस व्याख्यासे सहमत नहीं हैं। उनकी राय यह है कि यह विरोध अहिंसाके आधारपर नहीं होना चाहिए। बम्बईके प्रस्तावको पुनः पढ़नेके पश्चात् मैंने यह

देखा कि युद्धसे भिन्न राय रखनेवाले सदस्य सही हैं और मैंने उस प्रस्तावमें जो आशय देखा, वह वास्तवमें उसमें नहीं है। इस भूलको जान लेनेके बाद मेरे लिए यह असम्भव हो गया है कि मैं युद्धके सन्दर्भमें कांग्रेसके विरोधके इस संघर्ष-का नेतृत्व कर सकूँ; उस आधारपर जिसके लिए अहिंसा आवश्यक नहीं है। उदाहरणके लिए मैं स्वयं किसी दुर्भावनाके आधारपर युद्धमें ग्रेट ब्रिटेनका विरोध नहीं कर सकता। प्रस्तावके अनुसार ग्रेट ब्रिटेनको युद्धके प्रयासमें साधनोंका सह-योग दिया जा सकता है लेकिन इस मूल्यपर कि वह भारतको स्वाधीनता देनेका एक निश्चित आश्वासन दे। यदि मेरा यही दृष्टिकोण होता तो मैं स्वतंत्रता पानेके लिए हिंसाके प्रयोगपर विश्वास करता और इतनेपर भी, स्वाधीनताकी कीमत पानेपर भी यदि मैं युद्धके प्रयासमें भाग लेनेसे इनकार कर देता तो यह मेरा एक देशभक्तिहीन आचरण होता और मैं उसके लिए अपनेको अपराधी समझता। मेरा यह एक निश्चित विश्वास है कि केवल अहिंसा ही भारत और विश्वको इस आत्म-विनाशसे बचा सकती है। मैं अकेला रह जाता या कोई संस्था या व्यक्ति मुझको सहायता देता, मैं अपने मिशनको अवश्य ही चालू रखता। इसलिए कृपया मुझे ज़िम्मेदारीसे मुक्त कीजिए जो कि बम्बईके प्रस्ताव द्वारा मुझपर डाली गयी है। मैं सारे युद्धोंके खिलाफ़ वाणीकी स्वतंत्रताके लिए अवश्य ही सविनय आज्ञा-भंग करूँगा। मेरे साथ ऐसे कांग्रेसजन और अन्य व्यक्ति होंगे जिनको कि मैं चुनूँगा। वे अहिंसापर आस्था रखनेवाले व्यक्ति होंगे और उसकी सारी निर्धारित शर्तोंको स्वीकार करनेको स्वेच्छापूर्वक तैयार होंगे।"

वारडोलीके प्रस्तावपर टिप्पणी करते हुए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने कहा, "मुझको यह मान लेना चाहिए कि मैं एक राजनीतिज्ञ नहीं हूँ। मैं कानूनी बातोंको भी नहीं समझता। कूटनीतिके बारेमें मैं कुछ भी नहीं जानता। मैं कार्यसमितिमें हूँ क्योंकि मेरे दोस्त मुझे इसमें चाहते हैं। मैं भारतकी स्वाधीनता चाहता हूँ और मेरे निकट अहिंसा एक नीति नहीं बल्कि एक शाश्वत धर्म है। मेरे विचारसे यह एक अकेला धर्म है जो पठानोंकी गुलामी और आत्म-विनाशसे रक्षा करेगा। मेरे निकट सक्रिय अहिंसा भारतकी मुक्तिकी कुंजी है, इसलिए मेरे लिए इस युद्धमें या किसी भी युद्धमें भाग लेनेका कोई प्रश्न नहीं है।"

बम्बईकी एक सार्वजनिक सभाको सम्बोधित करते हुए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने बारडोलीके प्रस्तावका उल्लेख किया और सक्रिय अहिंसाके मूलभूत सिद्धांतों-को स्पष्ट किया। उन्होंने कहा कि "अहिंसाका आप लोगोंको तभी ज्ञान हो सकता है जब कि आप यह समझ लें कि हिंसक बलके लिए जितने उपकरण, जितना

अनुशासन और जितना प्रशिक्षण आवश्यक है उतना ही अहिंसात्मक बलके लिए भी अनिवार्य है। अहिंसाका मार्ग मानवताका मार्ग और मानवकी स्वतंत्रताका मार्ग है। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँने लोगोंसे यह अपेक्षा की कि वे इस दृष्टिसे अहिंसाके सम्बन्धमें विचार करेंगे और इस हिंसायुक्त विश्वमें अपना ध्यान इस विषयपर केन्द्रित करेंगे। कोई भी अपने विचारोंमें हिंसा रखते हुए अहिंसाको कार्यरूपमें ग्रहण नहीं कर सकता। यह सोचना ही गलत होगा कि हम हिंसात्मक साधनोंका आश्रय लेकर एक ऐसे समाजकी स्थापना कर सकेंगे जो कि अहिंसापर आधारित होगा। क्योंकि हिंसा, हिंसाको ही जन्म देती है।"

'बॉम्बे क्रॉनिकल'के पत्र-प्रतिनिधिने जब उनसे भेंट की तब उन्होंने कहा : "पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तके देहाती क्षेत्रोंमें, जहाँ कि बलिष्ठ पठान बसते हैं, कांग्रेस-ने अहिंसा और चरखेके सन्देशको प्रसारित किया है। इसके कारण उन लोगोंमें बड़ी तेजीके साथ एक परिवर्तन आ रहा है। खुदाई खिदमतगार और विशेषतया जिरगा समितियोंके प्रशिक्षित कार्यकर्ता दूरवर्ती गाँवोंमें भी इस सन्देशको प्रसारित कर रहे हैं। जिरगा समितियाँ वास्तवमें कांग्रेस समितियाँ ही हैं जो केवल नामकी दृष्टिसे अलग हैं। चरखेका उन देहाती क्षेत्रोंके किसानों द्वारा विशेष रूपसे स्वागत हुआ है जिसमें नहरोंके अभावमें सालमें नौ महीनेतक खेतीका काम ठप-सा पड़ा रहता है। उन क्षेत्रोंमें भी, जहाँ कि नहरके जलकी पर्याप्त सुविधाएँ हैं और जहाँ किसान खेतीके कार्यमें सालके अधिकांश समय व्यस्त रहता है, अतिरिक्त आयके एक साधनके रूपमें चरखेका स्वागत हुआ है।"

खुदाई खिदमतगार और अन्य कार्यकर्त्ता ग्रामीणोंको केवल चरखेका उपयोग ही नहीं बतलाते थे बल्कि उनको स्वच्छ रहनेकी शिक्षा भी देते थे। वे उन्हें विश्वकी घटनाएँ बतलाते थे ताकि उनमें एक जागर्ति आ जाय।

कांग्रेसके रचनात्मक कार्यक्रमको लोकप्रिय बनानेके लिए, यह महान् आन्दोलन सीमा-प्रान्तमें कुछ वर्ष पूर्व ही प्रारम्भ किया गया था परन्तु अबसे लगभग तीन वर्ष पहले, जबसे विशेष रूपसे चुने हुए कांग्रेसजनोंके ग्रामोत्थानके प्रशिक्षण-की योजना प्रारम्भ हुई, इसे विशेष महत्त्व प्राप्त हुआ। कांग्रेस संस्थाके सैकड़ों कार्यकर्ता शिविरोंमें प्रशिक्षण प्राप्त करनेके पश्चात् गाँवोंमें गये और वे प्रदेशभरमें फैल गये।

इन शिविरोंका उद्देश्य कार्यकर्ताओंको उस कार्यका एक स्पष्ट और व्यावहारिक ज्ञान कराना था जिसकी कि उनसे गाँववालोंके बीचमें अपेक्षा की जाती थी। गाँवोंमें सैकड़ों प्रशिक्षण-केन्द्र खुल गये। शिविरोंकी तीन श्रेणियाँ थीं—तालुका

शिविर, जिला शिविर और प्रदेश शिविर। प्रत्येक तालुका शिविरमें ७०, प्रत्येक ज़िला शिविरमें लगभग २०० और प्रत्येक प्रदेश शिविरमें लगभग ५०० कार्य-कर्त्ताओंको प्रवेश दिया गया था। प्रशिक्षणका यह कोर्स एक सप्ताहतक चलता था। इसके पश्चात् कार्यकर्त्ताओंको अलग-अलग शिविरोंमें भेज दिया जाता था, जहाँ कि वे अवैतनिक रूपसे सेवा-कार्य करते थे।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँसे प्रश्न किया गया कि इतने विशाल संगठनका क्या कोई कोष भी रहता था? उन्होंने उत्तर दिया कि वास्तवमें उनके यहाँ कोष या फण्ड जैसी कोई चीज़ न थी। प्रत्येक शिविरका खर्च खुदाई खिदमतगार और शिविरके अन्य कार्यकर्त्ता वर्दाश्त करते थे। प्रान्तके धनी वर्गके व्यक्ति, चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान, यहाँतक कि बौद्धिक वर्गके लोग भी देश-हितकी इन प्रवृत्तियोंमें कोई दिलचस्पी नहीं रखते थे।

प्रशिक्षणके लिए स्वयंसेवकोंका चुनाव बड़ी सावधानीके साथ किया जाता था। उनके लिए नियमित रूपसे चर्खा कातना आवश्यक था। जिस आन्दोलनमें वे भाग लेने जा रहे थे, उसके सिद्धान्तोंको समझनेके लिए उनके लिए अहिंसा-पर सच्चा विश्वास होना आवश्यक था। एक स्वयंसेवकके नाते उनसे यह अपेक्षा भी की जाती थी कि वे गाँवोंमें सफ़ाईका कार्य करेंगे, गाँववालोंको स्वच्छताके तरीक़े बतलायेंगे, घर-घर जाकर कताईकी शिक्षा देंगे, अपने दैनिक जीवनमें अहिंसाका अभ्यास करेंगे और गाँववालोंको भी अहिंसाके सिद्धांत समझायेंगे।

"बहुत तड़के ही स्नानादिके पश्चात्, प्रार्थनाके साथ शिविरका दैनिक जीवन प्रारम्भ हो जाता था। सबसे पहले हाज़िरी ली जाती थी। जो स्वयंसेवक हाज़िरी-के समय अनुपस्थित होता था, उसको इसके लिए दण्ड दिया जाता था। यह दण्ड अतिरिक्त कताईके रूपमें या चक्कीपर अन्न पिसवानेके रूपमें दिया जाता था। शिविरका कमाण्डर कभी उनको दूरतक जाकर लौटनेकी या अपने सोनेके सामान-का गोफन कंधेपर लादकर आने-जानेकी सज़ा भी देता था।

"शिविर-कालमें स्वयंसेवकोंको लगभग बीस मिनटतक शारीरिक व्यायाम भी कराया जाता था। इसके बाद स्वयंसेवक पाँच या छः व्यक्तियोंके एक जत्थे-के रूपमें पासके गाँवमें भेजे जाते थे। प्रत्येक दलके साथ उनका एक नेता होता था, जो गाँववालोंको चर्खा कातकर दिखलाता था। गाँवोंकी स्त्रियोंको भी सफ़ाईके तरीक़े बतलाये जाते थे।

"गाँवोंमें दो घंटे बिताकर स्वयंसेवक खुदाई खिदमतगार आन्दोलनके सिद्धान्तोंपर भाषण सुननेके लिए शिविरोंमें लौट आते थे। इसके बाद उनको तीन

घंटेका अवकाश दिया जाता था, जिसमें कि वे भोजन तथा विश्राम करते थे और नमाज़ पढ़ते थे। इस मध्यान्तरके पश्चात् प्रत्येक स्वयंसेवक कुछ समयतक कताई करता था। संध्याके समय इन शिविरोंमें गाँवोंके लोगोंको भी आमंत्रित किया जाता था। इस आयोजनमें स्वयंसेवक दर्शकोंके आगे भाषण करते थे। यह उनके शिक्षात्मक प्रचारका एक ढंग था।

"शिविरमें सबसे अंतमें ध्वज-वन्दनका कार्यक्रम रहता था। खुदाई खिदमतगार इसमें अपनी वर्दी पहनकर सम्मिलित होते थे। रातके समय शिविरवासियोंके लिए भाषणोंका कार्यक्रम चलता था। उसमें स्वयंसेवकोंको यह भी बतलाया जाता था कि सच्चा धर्म क्या है? शिविरके स्वयंसेवक रातको दस बजे सोनेके लिए चले जाते थे। इससे पहले उनकी हाज़िरी ली जाती थी।"

शिविरके भोजनके बारेमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने बतलाया कि वह बहुत सादा क़िस्मका होता था। सवेरेके समय केवल चाय दी जाती थी और नान (रोटी) के साथ सब्जी या दाल या मक्खन दिया जाता था। कार्यकर्त्ताओंके आरामके लिए शिविरोंमें खाटोंकी कोई व्यवस्था नहीं की जाती थी। वे सब भूमिपर ही सोते थे।

प्रशिक्षणके लिए भेजे जानेवाले स्वयंसेवकोंका चुनाव खुदाई खिदमतगारोंके कमाण्डर किया करते थे और अन्य कांग्रेसजनोंके लिए यह काम जिरगाके सुपुर्द रहता था।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँसे यह प्रश्न किया गया कि क्या पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तमें कांग्रेस मंत्रिमंडलने जो योजनाएँ हाथमें ली थीं उनमें कुछ प्रगति हुई? खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने इस प्रश्नके उत्तरमें कहा कि कांग्रेस मंत्रिमंडलने जिन योजनाओंको अपने हाथमें लिया था, उनमेंसे अधिकांशको वर्तमान सरकारने बन्द कर दिया। शिक्षा-प्रसारकी कांग्रेस मंत्रिमंडल द्वारा प्रारम्भ की गयी योजना इसका एक सजीव उदाहरण है। उन्होंने कहा कि शिक्षाकी दृष्टिसे पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्त बहुत पिछड़ा हुआ है। कांग्रेसके पद-ग्रहण करनेसे पहले उन बड़े-बड़े कस्बोंमें भी, जिनकी आबादी दस हजारसे अधिक थी, कोई कन्या पाठशाला या कन्या विद्यालय न था। कांग्रेस मंत्रिमंडलने एक योजना प्रारम्भ की थी जिसके अनुसार प्रत्येक गाँवमें प्रत्येक वर्ष ज़िलेमें लड़कियोंके लिए दो प्राथमिक पाठशालाएँ और लड़कोंके लिए नौ खुलनेको थीं। मंत्रिमंडलकी शिक्षा-प्रसारकी इस योजनाने लोगोंमें एक उत्साह जाग्रत किया लेकिन वर्तमान शासनने इस योजनाको स्थगित कर दिया। इसका फल यह हुआ कि कांग्रेसके अपने पदसे हट जानेके बाद वहाँ

कोई प्राथमिक विद्यालय नहीं खुला।

सन् १९४२ में जनवरी महीनेके बीचमें नयी स्थितिपर विचार करनेके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस समितिकी एक बैठक हुई। बारडोलीके प्रस्तावपर चर्चा करते हुए कांग्रेसके अध्यक्ष मौलाना आज़ादने कहा कि वे तथा कार्यसमितिके अन्य बहुतसे सदस्य गांधीजीके इस निर्णयके पक्षमें नहीं हैं कि वे आधिकारिक रूपमें कांग्रेसके नेतृत्वका त्याग कर दें। गांधीजी अहिंसाके एक सैद्धान्तिक आधारके रूपमें किसी भी युद्धमें भाग लेनेका विरोध कर रहे थे, जब कि और लोग राजनीतिक आधारपर उसके विरोधी थे। बारडोली प्रस्ताव कांग्रेसके पुन: स्पष्टीकरण के अतिरिक्त और कुछ न था। कांग्रेस और गांधीजीका बंधन अटूट था। केवल मृत्यु ही इसे तोड़ सकती थी।

कांग्रेस कार्यकारिणीको सम्बोधित करते हुए गांधीजीने कहा :

"मैं आप जैसा ही एक साधारण प्राणी हूँ। यदि ऐसा न होता तो मैं आपके साथ इस पिछले बीस वर्षोंसे काम न कर सकता। अहिंसा मेरे लिए एक धर्म, मेरे जीवनका एक श्वास है। अपनी साधारण नित्यकी बातचीतके अलावा मैंने कभी उसे इस रूपमें देशके सामने नहीं रखा अथवा इस उद्देश्यसे उसे किसीके भी सामने नहीं रखा। मैंने उसे कांग्रेसके आगे एक राजनीतिक पद्धतिके रूपमें रखा, जिसको कि राजनीतिक प्रश्नोंको सुलझानेमें काममें लाया जा सकता था। वह एक नयी, एक असाधारण प्रणाली हो सकती है परन्तु इस कारण ही यह नहीं कहा जा सकता कि इसकी राजनीतिक दृष्टिसे उपादेयता नहीं है। एक राजनीतिक प्रणालीके रूपमें यह बदली जा सकती है, संशोधित की जा सकती है, इसमें तब्दीलियाँ की जा सकती हैं और इतना ही नहीं, दूसरी प्रणालियोंको इससे प्राथमिकता भी दी जा सकती है। इसलिए यदि मैं आज आपसे यह कहता हूँ कि हमें अपनी नीतिको परिवर्तित नहीं करना चाहिए तो मैं यह एक राजनीतिक बुद्धिमत्ताकी दृष्टिसे कहता हूँ। यह एक राजनीतिक सूक्ष्मदृष्टि है। हमारे पिछले दिनोंमें यह हमारे लिए उपयोगी रही है। इसने हमको स्वाधीनताकी ओर क़दम बढ़ानेकी सामर्थ्य दी है। एक राजनीतिक व्यक्तिके रूपमें मैं आपको यह सुझाव दूँगा कि इसे त्याग देनेका विचार एक ग़लती होगी। यदि मैं इन पिछले दिनोंमें कांग्रेसको अपने साथ लेकर चल पाया तो केवल अपनी एक राजनीतिक प्रणाली होनेकी क्षमताके कारण। मेरी प्रणालीको धार्मिक कहना शायद ही उचित होगा क्योंकि यह नयी है........

"अहिंसाने आज हमें स्वराज्यके इतने निकट ला दिया है, जितने कि पहले

हम न थे। यदि हमें अहिंसाको स्वराज्यसे बदलना पड़े तो भी हम ऐसा करनेका साहस नहीं करेंगे क्योंकि बिना अहिंसाके हमें जो स्वराज्य मिलेगा वह सच्चा स्वराज्य नहीं होगा। प्रश्न यह नहीं है कि हम स्वराज्यके बाद क्या करेंगे। सवाल यह है कि क्या हम इन स्थितियोंमें स्वराज्यको प्राप्त करनेके लिए अहिंसा-को त्याग सकते हैं ? स्वाधीनताका कार्य मेरे लिए यह है कि वह सबसे दलित और निर्धन वर्गकी स्वाधीनता हो। युद्धमें सम्मिलित होनेसे वह हमको नहीं मिल सकती। पूर्ण स्वराज्यकी उपलब्धिसे पहले कांग्रेसके लिए किसी भी युद्धमें सम्मि-लित होना अपने विगत बीस वर्षके कामपर पानी फेर देना होगा।

"फिर भी मैं आपके आगे इस प्रस्तावको स्वीकार करनेका समर्थन करनेको क्यों खड़ा हूं ? मैं यहाँतक नहीं चाहता कि इस प्रस्तावपर सदनमें दो रायें हों। इसका कारण यह है कि यह प्रस्ताव कांग्रेसके सोचनेकी दिशा व्यक्त करता है। निश्चित रूपसे यह क़दम पीछे लौटना होगा। हमारे पास लिखनेके लिए कोई नयी तख्ती नहीं है। हमारे बुजुर्गोंने एक क़दम आगे रखा है। उसकी एक विश्व-व्यापी प्रतिक्रिया हुई है। प्रस्तावके स्वरूपको बदल देना उसकी उपेक्षा करना होगा। कार्यसमितिने जिस नीतिको अपनाया है, उसे बदल देना बुद्धिमत्ता नहीं होगी। संसारको यह सोचनेका अधिकार होगा कि कार्यकारिणीकी नीति आपके द्वारा समर्थित होगी। किसी समय मैं अखिल भारतीय कांग्रेस समितिमें इस विषय में मतभेद खड़ा करनेकी बात सोचता था लेकिन मैंने यह देखा कि यह एक भूल होगी। यह एक हद दर्जेकी हिंसा होगी। अहिंसा इस तरहके साधारण ढंगसे अपना काम नहीं करती।

"कभी-कभी एक क़दम पीछे लौटनेका अर्थ भी एक क़दम आगे बढ़ जाना होता है। बहुत सम्भव है कि हमारा यह क़दम भी इसी प्रकारका हो।

"कांग्रेसने अब जो भी करनेका निश्चय किया है वह यह है कि वह विश्वको अपने आगे वे शर्तें रखने देगी जिन्हें कि विश्व ठीक समझता है। यदि कांग्रेसको वे शर्तें पसन्द आयेंगी तो वह उनको स्वीकार कर लेगी। लेकिन यह बात निश्चित है कि कांग्रेस आसानीसे माननेवाली नहीं है। जबतक उसको वास्तवमें वही वस्तु नहीं मिल जायगी जिसको वह चाहती है तबतक वह बार-बार 'यह नहीं, यह नहीं' को रटन लगाये रहेगी। इसलिए आप ठीकसे यह बतलाइए कि आप क्या चाहते हैं ? और मैं भी आपको यह बतलाऊँगा कि मैं क्या चाहता हूं। यह बतलानेके लिए ही कि मैं क्या चाहता हूं, मैंने तीन साप्ताहिक पत्र प्रारम्भ किये हैं और तबतक मैं पूरी आज़ादीके साथ अपने विचार व्यक्त ही करता रहूंगा

जबतक कि मुझे उसकी इजाजत रहेगी। इस बीच यदि आपको अपनी मनोवांछित वस्तु मिल जाती है तो आप अपना सौदा पटा सकते हैं। निश्चय मानिए, मैं इस-पर एक बूँद आंसू भी नहीं गिराऊँगा। मैं बिलकुल यह नहीं चाहूँगा कि इस प्रस्तावपर दुनियाको प्रसन्न करके उसे एक धोखा दिया जाय और न मैं यह चाहूँगा कि संसारकी दृष्टिमें भारतकी स्थिति उपहासास्पद हो जाय। मैं यह भी नहीं कहलाना चाहता कि मेरे नेतृत्वको सुरक्षित रखनेके लिए आपने अपनी धारणाओंको तिलांजलि दे दी।

"कांग्रेसजनोंके लिए रचनात्मक कार्यक्रमके सम्बन्धमें कुछ निर्देश हैं। वे उसके एक सक्रिय अंशको पूरा करते हैं। आप उनको सविनय आज्ञा-भंग या संसदीय कार्यक्रमकी जगह लेनेवाली एक चीज़, एक पर्याय समझ सकते हैं। सविनय अवज्ञाका एक विशेषज्ञ होनेके नाते मैंने उसे अपने लिए रोक लेना मुनासिब समझा है और यह अच्छा है। जबतक मैं जीवित हूँ या जबतक मैं मानसिक रूपसे उसे सुरक्षित रख सकता हूँ तबतक उसे मेरे लिए सुरक्षित रहना ही अच्छा है। मुझे यह सोचना अच्छा लगता है कि भारत अपनी अहिंसाके द्वारा सारे विश्वके लिए शान्तिका एक सन्देशवाहक बनेगा। राजनीतिक अहिंसातकमें इतनी सामर्थ्य है कि जिसकी हमें कल्पना नहीं है। 'हरिजन' प्रति सप्ताह शांतिका सन्देश देता रहेगा। लेकिन यदि उसको इसकी अनुमति नहीं मिलेगी तो एक चिह्नके रूपमें वह सविनय आज्ञा भंग छेड़नेका समय होगा। मैं यह चाहता हूँ कि प्रत्येक कार्य-कर्त्ता रचनात्मक कार्यके लिए बाहर निकल पड़े। और यदि मेरे हाथसे मेरी कलम छीन ली जाती है तो मैं अकेला प्रतिरोध करनेवाला भी बन सकता हूँ। लेकिन मेरे पास कोई निश्चित योजना नहीं है। घटनाओंका क्रम मुझे मेरा रास्ता दिखलायेगा।"

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खांने कार्य-समितिसे और ऑल इंडिया कांग्रेस कमेटीसे भी त्यागपत्र दे दिया था। कांग्रेसके अध्यक्ष मौलाना आजादने लिखा : "कांग्रेस के रचनात्मक कार्यको आगे बढ़ानेके सम्बन्धमें मेरी खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके साथ विस्तारसे चर्चा हुई। मुझे ऐसा लगा कि यदि खान साहबको कार्यसमितिकी सदस्यतासे मुक्त कर दिया जाता है तो वे इस उद्देश्यको अधिक अच्छे ढंगसे पूरा कर सकेंगे। उन्होंने इस बातपर बल दिया कि वे जीवनके सारे क्षेत्रोंमें अहिंसाके पूर्ण रूपसे विश्वासी हैं और इस मामलेमें गांधीजीके साथ उनका मतैक्य है।" अपने वक्तव्यमें अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कहा, "यदि मैं उस कांग्रेसके पदसे अपनेको अलग कर लेता हूँ, जिसकी नीति समय-समयपर आ खड़ी होनेवाली स्थितियोंके

कारण बदल सकती है तो मैं अहिंसाके सन्देशको पठानोंके मनतक पहुंचानेमें अधिक समर्थ होऊँगा। कांग्रेसके साथ अबतक मेरे जो सम्बन्ध रहे हैं वे इससे और भी दृढ़ हो जायँगे।"

घटना-चक्र बिजलीकी तेज़ीसे घूमता जा रहा था। एशिया और यूरोपमें प्रतिकूल स्थितिसे मित्र-राष्ट्रोंको धक्का लगा। ७ मार्च १९४२ को रंगूनका पतन हो गया। गांधीजीने लिखा: "जापान हमारा द्वार खटखटा रहा है। हमें अपनी अहिंसात्मक पद्धतिसे इस समय क्या करना चाहिए? यदि हमारा देश स्वतन्त्र होता तो अहिंसात्मक तरीक़ोंसे जापानियोंको इस देशमें प्रवेश करनेसे रोका जा सकता था। फिर भी, जैसी कि स्थिति है, उनके हवाई जहाजसे भूमिपर पैर रखने के क्षणसे ही अहिंसात्मक अवरोध प्रारम्भ किया जा सकता है।····

"अहिंसाके लिए सबसे अच्छी तैयारी यह है कि एक दृढ़ संकल्पको लेकर रचनात्मक कार्यमें लग जाया जाय। अहिंसाकी अभिव्यक्तिका भी यही सबसे अच्छा तरीक़ा है।···जिस व्यक्तिके मनमें रचनात्मक कार्यक्रमके प्रति आस्था नहीं है, मेरी रायमें, उसके मनमें लाखों भूखे मरते हुए लोगोंके प्रति सहानुभूतिकी कोई ठोस भावना नहीं है और जो इस भावनासे वंचित है, वह अहिंसात्मक तरीक़ेसे नहीं लड़ सकता।···मुझमें अहिंसाका जितना विकास हुआ है, उसने अपने और भूखी मानवताके बीचमें एक बराबर दूरी बनाये रखी है। मैं अभीतक अपनी अहिंसाकी परिकल्पनासे बहुत दूर हूँ क्योंकि क्या अभीतक मेरे और भूखी मानवताके बीचमें एक अंतराल नहीं है? क्या मैंने अपनेको उसके साथ एकात्म कर लिया है?···

"जब रंगूनका पतन हो गया, तब ऐसा लगने लगा कि जापानकी जीतका ज्वार-भाटा शीघ्र ही बंगाल और मद्रासको भी अपनेमें समेट ले जायगा। ११ मार्च सन् १९४२ को इंगलैण्डके प्रधान मंत्री श्री विन्सेन्ट चर्चिलने यह घोषणा की की कि ब्रिटिश वार कैबिनेट भारतके लिए एक योजनापर सहमत हो गया है और सर स्टैफर्ड क्रिप्सको यह निश्चय करनेके लिए कि क्या इस योजनाको भारतकी उचित और व्यावहारिक आधारोंपर स्वीकृति मिल सकेगी, भारत भेजा जायगा। इस प्रकार जापानके विरुद्ध सुरक्षाके लिए समस्त भारतीय विचार और शक्तियोंको एकाग्र करनेकी अधिकसे अधिक कोशिश की जायगी।"

सर स्टैफर्ड क्रिप्स २२ मार्चको दिल्ली आ गये और उन्होंने सभी बड़ी पार्टियोंके नेताओंसे बातचीत की। उन्होंने एक पखवारेसे भी अधिक समयतक उन लोगोंसे चर्चा की। नये प्रस्तावोंमें विद्वेषपूर्ण रुकावट थी। इसके अनन्तर वे

मूल रूपसे भविष्यके ऊपर आधारित थे हालाँकि एक अंतिम खंडवाक्यमें वर्तमान-को भी छुआ गया था और एक सन्देहके साथ वर्तमानमें सहयोगका आमंत्रण दिया गया था। गांधीजीने सर स्टैफर्ड क्रिप्ससे कहा, "यदि आपको यही देना था तो आपने यहाँ आनेका कष्ट ही क्यों किया ? मैं आपको यह सलाह दूंगा कि आप सबसे पहले हवाई जहाजसे अपने घर जायें।" गांधीजीने अपना अभिमत व्यक्त करते हुए कहा, "सर स्टैफर्ड क्रिप्सको यह मालूम होना चाहिए था कि कमसे कम कांग्रेस डोमिनियम पदकी ओर आँख उठाकर भी नहीं देखेगी, हालाँकि वह उसे जिस क्षण स्वीकार करेगी उसी क्षण उसको ब्रिटेनसे अलग होनेका एक अधिकार प्राप्त हो जायगा। वे यह भी जानते थे कि इस प्रस्तावमें भारतको तीन खंडोंमें विभक्त करनेका विचार भी प्रकट हुआ है। इन खण्डोंमेंसे प्रत्येकका शासन करने-का अपना अलग-अलग तरीक़ा होगा। इस प्रस्तावमें पाकिस्तानकी परिकल्पना-का भी समावेश है यद्यपि वह मुस्लिम लीगकी परिकल्पनाका पाकिस्तान नहीं है और सबसे अंतमें यह प्रस्ताव उत्तरदायी मंत्रियोंको सुरक्षापर वास्तविक नियं-त्रणका अधिकार भी नहीं देता।"

२६ अप्रैलके 'हरिजन' में गांधीजीने भारतसे अंग्रेजोंके चले जानेपर ज़ोर दिया। उन्होंने कहा, "भारतकी इन तथाकथित सुरक्षाकी तैयारियोंके पीछे मैं भारतकी स्वाधीनताकी एक झलक भी नहीं देखता। यह सब तो ब्रिटिश साम्राज्य की सुरक्षाकी सीधी-सादी तैयारियाँ हैं, भले ही इसके विपरीत कहा कुछ भी जाय। यदि अंग्रेज भारतको उसके भाग्यपर छोड़कर चले जाते हैं, जैसे कि उन्होंने सिंगापुरको छोड़ दिया, तो भारत इससे कुछ खोयेगा नहीं। शायद जापानी भारत को अकेला छोड़ देंगे। यदि भारतके मुख्य राजनीतिक दलोंने आपसके मतभेदों-को दूर कर लिया और जैसा कि वे शायद कर भी लेंगे तो भारत एक प्रभाव-शाली ढंगसे शान्तिके पथपर चीनको अपना सहयोग देगा; और भी सम्भव है कि वह विश्व-शान्तिके प्रसारमें आगे चलकर एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाये। यदि अंग्रेज भारतको उस समय छोड़ते हैं जब कि उनके आगे इसके अतिरिक्त और कोई चारा नहीं रह जाता तब यह भी सम्भव है कि ये सब आनन्ददायक बातें न हों। ब्रिटेनके लिए यह कितना श्रेयस्कर होगा और साथ ही कितना वीरता-पूर्ण भी कि वह पश्चिममें निश्चिन्त होकर युद्धका सामना करे और पूर्वको उसकी अपनी स्थिति ठीक करनेको छोड़ दे।"

अप्रैलके अंतिम सप्ताहमें श्री राजगोपालाचार्यने मद्रास विधानसभाके कांग्रेस समर्थक सदस्योंकी एक छोटीसी सभाको सम्बोधित किया। उस सभामें अखिल

भारतीय कांग्रेस कमेटीके समक्ष रखनेके लिए दो प्रस्ताव पारित किये गये। उनमेंसे एकमें कांग्रेस और लीगके बीच हुए समझौतेके आधारपर पाकिस्तानको सिद्धांत रूपमें स्वीकार करनेकी सिफ़ारिश की गयी थी और दूसरे प्रस्तावमें यह कहा गया था कि मद्रासमें एक उत्तरदायी शासनकी पुनःस्थापना की जाय।

२९ अप्रैलसे लेकर २ मईतक अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक हुई। उसमें मद्रासके प्रस्तावपर इतना रोष छा गया कि श्री राजगोपालाचार्यको कार्य-समितिकी अपनी सदस्यतासे त्यागपत्र दे देना पड़ा। इस प्रकार अपनेको मुक्त कर लेनेके पश्चात् मद्रास प्रस्तावको राजाजीने अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी मीटिंगमें रखा। उसके पक्षमें मात्र १५ मत थे और विपक्षमें १२०। इस प्रकार यह प्रस्ताव गिर गया।

गांधीजीने वर्धासे कार्यसमितिके विचारार्थ एक प्रस्तावका प्रारूप भेजा। इस मुख्य प्रस्तावका, जो लगभग विना विरोधके पारित हुआ, सार इस प्रकार है :

"अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीको इस बातका विश्वास हो चुका है कि भारत अपनी निजकी शक्तिसे अपने बलको बनाये रख सकेगा और उसीके द्वारा वह उस बलको प्राप्त करेगा। वर्तमान संकट-स्थितिने और स्टैफर्ड क्रिप्ससे की गयी बातचीतने कांग्रेसके लिए किसी भी ऐसी योजना या प्रस्तावपर विचार करना असम्भव कर दिया है जो कि ब्रिटेनके नियंत्रण या सत्ताको आंशिक रूपमें ही बनाये रख सके। न केवल भारतके लिए बल्कि ब्रिटेनकी सुरक्षा और विश्वकी शांति और सुरक्षाके लिए भी यह आवश्यक है कि वह भारतके ऊपरसे अपनी पकड़ हटा ले। भारत ब्रिटेन या अन्य राष्ट्रोंसे केवल एक स्वाधीन राष्ट्रकी हैसियतसे सम्बन्ध रखेगा। यह समिति इस बातको स्वीकार नहीं करती कि किसी बाह्य राष्ट्रके हस्तक्षेप या आक्रमणसे भारतको अपनी स्वाधीनता मिल सकती है। भले ही वह बाहरी राष्ट्र कोई भी दावा क्यों न करे। यदि कोई बाहरी आक्रमण होता है तो उसका निश्चित रूपसे विरोध किया जायगा। यह विरोध केवल सविनय आज्ञा-भंगके रूपमें किया जा सकता है क्योंकि ब्रिटिश सरकारने भारत-की जनताके लिए उसके राष्ट्रकी सुरक्षाका अन्य कोई मार्ग नहीं छोड़ा है। इस-लिए यह समिति भारतकी जनतासे यह आशा करती है कि यदि आक्रमण होगा तो वह आक्रमण करनेवाली शक्तिके आगे पूर्ण अहिंसात्मक असहयोग करेगी। वह उसे किसी प्रकारकी कोई मदद नहीं देगी। हम आक्रमणकारीके सामने आत्म-समर्पण नहीं करेंगे और न उसकी किसी आज्ञाका पालन ही करेंगे। हम उसका अनुग्रह पानेके लिए उसकी ओर नहीं ताकेंगे और न उसके रिश्वतके प्रलोभनसे ही

डिगेंगे। यदि वह हमारे घरों और हमारे खेतोंपर कब्ज़ा जमाना चाहेगा तो हम उसे यह न करने देंगे और शरीरमें प्राण रहनेतक उसका विरोध करेंगे। आक्रमणकारीके सम्मुख असहयोग और सविनय अवज्ञाकी इस तरहकी सफलता कांग्रेसके रचनात्मक कार्यकी प्रभावोत्पादक क्षमतापर निर्भर करेगी; विशेष रूपसे भारतके सारे भागोंमें अपनाये जानेवाले आत्म-निर्भरता और आत्मरक्षाके कार्यक्रमपर।"

एक संवाददाताने जब ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँसे श्री राजगोपालाचार्य द्वारा रखे गये प्रस्तावपर टीका करनेकी प्रार्थना की तब उन्होंने उससे कहा, "आप जानते हैं कि मैंने कांग्रेससे त्यागपत्र दे दिया है। मैं एक सिपाही हूँ। मेरी दृष्टि अपने कार्यपर है। मैंने अपनेको हमेशा विवादोंसे दूर रखनेकी कोशिश की है, क्योंकि मेरे विचारमें मौजूदा परिस्थितियोंमें विवाद व्यर्थ है।" उन्होंने कहा कि पाकिस्तानके विषयको इतना महत्त्व देनेके लिए समाचारपत्र ही उत्तरदायी हैं। "हम लोग सरहदमें एक लम्बे अर्सेसे आत्म-निश्चयके अधिकारका उपभोग कर रहे हैं।" उन्होंने आगे कहा, "और मेरा खयाल है कि यदि दूसरे लोग भी उसका उपभोग करते हैं तो इसमें कोई हानि नहीं है, फिर भी यह कल्पना करने की कोई आवश्यकता नहीं है कि आत्म-निश्चयके अधिकारकी मान्यताको मेरे सहारेका अर्थ हमारे रुखमें कोई आकस्मिक परिवर्तन होगा।"

गांधीजीने अपने 'हरिजन'के लेखोंमें और पत्रकारों द्वारा पूछे गये प्रश्नोंके उत्तरमें 'भारत छोड़ो'की मांगके कारण स्पष्ट किये और उसे विस्तारपूर्वक समझाया। उनकी वाणी और कलममें एक नयी तेज़ी और एक आवेश भर गया था। गांधीजीने मई १९४२ को एक अपील जारी की। उसमें 'प्रत्येक ब्रिटेनवासीको' सम्बोधित करते हुए उन्होंने लिखा:

"मैं प्रत्येक ब्रिटेनवासीसे अपनी अपीलका समर्थन करनेके लिए कहूँगा। मेरी प्रार्थना यह है कि वह तत्क्षण ही एशिया और अफ्रीकासे, कम-से-कम हिन्दुस्तानसे अपने अधिकारको छोड़कर चला जाय। यदि आपके निकट मेरी यह अपील स्वीकृत हो जाती है तो समस्त धुरी शक्तियोंकी समस्त सैनिक योजनाएँ ही नहीं, बल्कि ग्रेट ब्रिटेनके सैनिक सलाहकारतक हतबुद्धि रह जायँगे।

"मेरे लोगोंको सम्भव है कि यह तीव्र विचार पसन्द आये; यह भी हो सकता है कि वे इसका अनुमोदन न करें। जब अमेरिकामें गुलामीका उन्मूलन किया गया था तब बहुतसे दासोंने उसके लिए अपनी असम्मति प्रकट की थी, यहाँतक कि कुछ दास रोये भी थे। लेकिन उनके असम्मति प्रगट करने और रोने-कलपने के बाद भी कानूनमें दासताका अंत हो गया। लेकिन यह अंत उत्तर और दक्षिण-

के बीचके एक रक्तपातपूर्ण युद्धका परिणाम था। और इस कारणसे नीग्रो, जिसका भाग्य यद्यपि पहलेसे अच्छा हो गया, एक उच्च समाजमें अबतक जाति-बहिष्कृत है। मैं इससे एक बहुत ऊँची चीजकी बात कह रहा हूँ। मैं एक अस्वाभाविक प्रभुत्वके रक्तहीन अंत और एक नये युगके प्रारम्भके लिए कह रहा हूँ, भले ही कुछ लोग उससे अपनी असम्मति प्रगट करें या रोयें-चिल्लायें।"

उन्होंने कहा, "अबतक शासक हमसे कहते आये हैं : 'हम यह नहीं जानते कि हमें सत्ताका सूत्र किसके हाथोंमें सौंपना है। यदि हमें यह मालूम हो जाय तो हम बड़ी खुशीसे इस देशको छोड़कर जा सकते हैं।" अब मैं उनको उत्तर देना चाहता हूँ, "आप हमको ईश्वरके हवाले छोड़कर चले जाइए। यदि आप यह भी न कर सकें तो हमें अराजकताको ही सौंपकर चले जाइए।"

"मेरे मस्तिष्कमें कोई कल्पना नहीं है।" गांधीजीने कहा, "लेकिन मेरा खयाल है कि जब मैं खरे, बिना किसी मिलावटके अहिंसात्मक असहयोगकी बात कहता हूँ तो इसके बाद फिर कुछ कहनेको नहीं रह जाता। यदि सारे भारतसे मुझे अनुकूल जवाब मिलता है और वह मेरी बातको एक मतसे स्वीकार कर लेता है तो मैं यह दिखला दूँगा कि रक्तकी एक भी बूँद गिराये बिना हम जापानके शस्त्रोंको या किन्हीं भी शस्त्रोंको निष्फल कर सकते हैं। परन्तु इसके लिए भारतका यह दृढ़ निश्चय अपेक्षित है कि वह आक्रमणकारीको किसी भी प्रकारका सहयोग न देगा और कई लाख जिन्दगियोंको अर्पण करनेकी जोखिम उठानेको तैयार रहेगा। मेरी दृष्टिमें यह मूल्य भी एक सस्ती कीमत होगी जिसे चुकाकर यदि हमें विजय मिल जाती है तो उसे मैं एक प्रतिष्ठाकी वस्तु समझूँगा। यह भी सम्भव है कि भारत यह कीमत चुकानेको तैयार न हो। लेकिन मेरा खयाल नहीं है कि यह हो सकता है लेकिन जो भी देश अपनी स्वाधीनताकी रक्षा करना चाहेगा उसे यह मूल्य चुकाना ही होगा। कुछ भी कहिए, रूस और चीनवालोंने बहुत बड़े बलिदान किये हैं और वे अपनी स्वाधीनताकी रक्षाके लिए सारे संकट झेलनेको तैयार हैं। यही बात अन्य देशोंके लिए भी कही जा सकती है। चाहे वे आक्रमण करनेवाले हों या दूसरोंके आक्रमणसे अपनी रक्षा करनेवाले। यह एक बहुत बड़ी कीमत है। इसलिए मैं भारतसे यह चाहता हूँ कि वह अहिंसात्मक तकनीकसे काम लेकर उतनी जोखिम न उठाये जितनी कि अन्य देश उठा रहे हैं। यों यदि वह सशस्त्र विरोध करता है तो उसे यह जोखिम तो उठानी ही पड़ेगी।"

जुलाईके आरम्भमें पं० जवाहरलाल नेहरूने सीमा-प्रान्तकी घटनाओंके संबंध

में निम्नलिखित वक्तव्य जारी किया :

"सरकारी सूत्रोंसे सीमा-प्रान्तकी जो खबरें मिलती हैं, उनके अलावा यहाँ-के समाचार प्राप्त होना दुर्लभ है। सरकारी या अर्ध-सरकारी समाचार प्रायः दोषपूर्ण होते हैं और उनमें मिथ्या आरोप भी रहते हैं।

"मेरा अपना तजुर्बा है। जब कभी मैं सरहदी सूबेमें गया हूँ तब मुझे सामान्य समाचार एजेन्सियोंके द्वारा या अन्य प्रकारसे सही समाचार भेजनेमें एक कठिनाईका अनुभव हुआ है। ऐसा जान पड़ता है कि भारतके अन्य स्थानोंकी अपेक्षा सीमा-प्रान्तमें समाचारोंको बाहर भेजनेपर अधिक कड़ा प्रतिबन्ध है। इसका नतीजा यह है कि शेष भारतके लोग इस बातकी बहुत कम जानकारी रखते हैं कि देशके इस महत्वपूर्ण भागमें क्या हो रहा है? यह ज्ञात होना कई दृष्टियोंसे आवश्यक है। यहाँ जो नयी स्थिति विकसित हो रही है, उसको देखते हुए यह विशेष रूपसे आवश्यक है।

"पिछले छः महीनेसे खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ मौन भावसे जो महान् कार्य चला रहे हैं, उसके बारेमें बहुत कम लोग जानते हैं। उनका दिखावेमें विश्वास नहीं है। लेकिन वे अपने यहाँके लोगोंसे मिलनेके लिए गये और उन्हें कई प्रकार-से संगठित और प्रोत्साहित किया। इस तरह उन्होंने सारा प्रान्त घूमा।

"विगत छः मास या उससे भी कुछ अधिक समयसे बादशाह खान और उनके भाई डा० खान साहबके विरुद्ध और इसी प्रकार अन्य कांग्रेसजनों तथा खुदाई खिदमतगारोंके विरुद्ध एक द्वेषपूर्ण अभियान चलाया जा रहा है। जब विरोधी लोगोंको उनपर हमला करनेके लिए कोई राजनीतिक कारण नहीं मिल पाया तो उन्होंने अपने उद्देश्यकी पूर्तिके लिए घरेलू और निजी मामलोंको उपयोगमें लाया और सब प्रकारके झूठे वक्तव्य प्रसारित किये। सीमा-प्रान्तकी कांग्रेस समितिने इस सम्बन्धमें समाचार-पत्रोंके लिए एक विज्ञप्ति जारी की लेकिन ऐसा लगता है कि पत्रोंने उसका कोई प्रचार नहीं किया। सीमा-प्रान्तकी कांग्रेस समिति द्वारा जारी की गयी विज्ञप्ति निम्नांकित है :

"हम जनताको उस मिथ्या प्रचारके विरुद्ध सावधान कर देना चाहते हैं जो कि पठानोंके निर्विवाद नेता खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ तथा खुदाई खिदमतगार आन्दोलनको लेकर समाचार-पत्रोंके कुछ स्तम्भोंमें चलाया जा रहा है। उसमें यह संकेत किया गया है कि खुदाई खिदमतगार आन्दोलनके कार्यकर्त्ताओंके बीचमें मतभेद खड़ा हुआ है और संस्थामें दलगत राजनीति बुरी तरहसे अपना सिर उठा रही है। अबतक किसी खुदाई खिदमतगारने अपने पदसे त्यागपत्र नहीं दिया

है। वे सब खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँके नेतृत्वमें एक हैं और पूर्ण रूपसे संगठित हैं। उनके बीच कई दल बनजाने की बात नितान्त निराधार है। यह तथाकथित मतभेद थोड़ेसे स्वार्थी लोगोंकी कल्पनाकी उपज है। वे पदोंकी लालसा रखते हैं और यह समझते हैं कि ऐसी बातें फैलाकर वे अपनी इष्ट-सिद्धि कर सकते हैं। इस मिथ्या प्रचारके पीछे सरकारका हाथ है लेकिन सीमा-प्रांतकी जनता इसके पीछे चलनेवाली नहीं है। सीमा-प्रांतका प्रत्येक राष्ट्रवादी यह स्पष्ट रूपसे अनुभव करता है कि हमें भारतके ब्रिटिश शासनसे कोई प्रयोजन नहीं है और उसके पदोंसे तो हमारा और भी कम सम्बन्ध है। भारतमें अन्यत्र संसदीय कार्यक्रमके प्रति कुछ आकर्षण हो सकता है किन्तु सीमा-प्रान्तमें निश्चय ही उसका कोई स्थान नहीं है।

"खान साहब खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँने गाँवोंमें आंतरिक सुरक्षाके लिए तथा भोजन और वस्त्रकी दृष्टिसे उनको आत्म-निर्भर बनानेके लिए शांत भावसे जो मानवतापूर्ण रचनात्मक कार्य किया है उसने उन्हें जनताका अत्यधिक प्रिय बना दिया है; विशेष रूपसे गरीब जनताका। वे यह आशा करते हैं कि वे शीघ्र ही पड़ोसके कबायली इलाकोंमें भी शान्ति और सद्भावनाका सन्देश लेकर जायँगे। वे अपनी सारी शक्ति एक शांतिपूर्ण, अहिंसाको लेकर चलनेवाली एक सेना खड़ी करनेमें लगा रहे हैं जो कि संकटके अगले दिनोंमें जनताकी सच्ची सेवा कर सके। लाखों रुपये व्यय करके भी सरकार जिस लक्ष्यको प्राप्त कर सकनेमें असफल रही है उसे वे विशुद्ध स्वेच्छिक सहायताके सहारे पानेका प्रयत्न कर रहे हैं। उनके इस श्रेष्ठ कार्यके प्रति सीमा-प्रान्तके प्रत्येक स्त्री, पुरुष और बालकके मनमें एक सहानुभूति और सहयोगकी भावना होनी चाहिए। हम यह आशा करते हैं कि सीमा-प्रान्तकी जनता उनके आह्वानपर ध्यान देगी और भारतके पत्र और पत्रकार, जिनके मनमें राष्ट्र-हितकी सच्ची कामना है, अत्यंत शान्त तथा स्थिर चित्तसे उनके काममें एक गहरी दिलचस्पी लेंगे।"

गांधीजीने इसके ऊपर टिप्पणी करते हुए कहा :

"बादशाह खानकी कीर्तिका आधार सीमा-प्रान्तकी कांग्रेस समितिके प्रस्ताव से कहीं अधिक ठोस है। वह उनकी लगभग एक चौथाई शताब्दीकी निःस्वार्थ सेवाओंपर आधारित है। अपने ऊपर कलंक लगानेवालोंके होते हुए भी वे प्रत्येक अग्नि-परीक्षामेंसे विजयी होकर निकले हैं और मुझको इसमें कोई सन्देह नहीं है कि जब उनके आगे कोई अगली परीक्षा आयेगी तब भी वे अपनी वैसी ही लोकप्रियता प्रदर्शित करेंगे जैसी कि उन्होंने अबतक दिखलायी है।"

जब जापानी सेना बर्मा पहुँच गयी तब खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको आशंका हुई कि वह बढ़कर भारतमें भी आ सकती है, "हम इस बातको लेकर परेशान थे कि कबायलियोंपर इसकी न जाने क्या प्रतिक्रिया होगी। हमने सोचा कि हम मिलजुलकर देशभक्तोंकी भाँति जापानके हमलेका सामना करेंगे और हमने कबाइली क्षेत्रोंमें अपना प्रतिनिधि-मण्डल भेजनेका निश्चय किया। इस सम्बन्धमें मैंने सीमा-प्रान्तके गवर्नर सर जार्ज कनिंघमको लिखा कि वे हमारे प्रतिनिधि-मण्डलको वहाँ जानेकी अनुमति दें ताकि वह राष्ट्रीय सुरक्षाके सम्बन्धमें चर्चा करनेके लिए कबायली लोगोंसे सम्पर्क स्थापित कर सके। हमको शिक्षा सम्बन्धी और समाज-सुधारके कार्योंके लिए भी कबायली इलाकोंमें जानेकी अनुमति नहीं मिलती थी। गवर्नरने भी इसी परम्परागत नीतिका अनुसरण किया और हमारी प्रार्थनाको अस्वीकार कर दिया। हम लोगोंने अपने जिरगाको एकत्रित किया और राष्ट्रीय सुरक्षाको सर्वाधिक महत्त्व देकर अपने प्रतिनिधि-मण्डलको कबायली क्षेत्रोंमें भेजनेका निश्चय किया। पोलिटिकल एजेन्टोंको ये निर्देश दे दिये गये थे कि हमारे प्रतिनिधि-मंडलसे तभी सम्पर्क किया जाय जब कि वह उन क्षेत्रोंमें पहुँच जाय। हमारे प्रतिनिधि बिना किसी कठिनाईके अफरीदियोंके पासतक पहुँच गये। लेकिन बाजोड़में उनको कठिनाईका सामना करना पड़ा। परन्तु वहाँ भी अंतमें हमारे प्रतिनिधिमंडलको अपने कार्यमें एक अच्छी सफलता मिली।"

शासनके सत्ताधारियोंके विरोधी रुखकी ओर इशारा करते हुए खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँने कहा कि उनकी रचनात्मक प्रवृत्तियाँ किसी प्रकारसे बाधा-रूप रही हैं :

"हमारा कोई कार्य गोपनीय नहीं है। हम जो कुछ भी करते हैं, वह खुल-कर करते हैं। युद्धके प्रारम्भ होनेके समयसे हम गाँवोंमें एक शान्तिमय मानवता-वादी काममें लगे हुए हैं। परन्तु अब ऐसा प्रतीत होता है कि सरकार हमें यह कार्य नहीं करने देगी। हमारे कुछ कार्यकर्त्ताओंको जेलमें डाल दिया गया है। सङ्कटके ऐसे क्षणोंमें धरतीकी कोई ताक़त हमें जनताकी सेवा करनेसे रोक नहीं सकती। मैं यह घोषणा करता हूँ कि हम अपने कार्यको बिना रुके, निर्भयताके साथ चलाते रहनेका दृढ़ निश्चय कर चुके हैं। किन्हीं भी परिस्थितियोंमें हम अपने शान्तिपूर्ण, अहिंसात्मक सदुद्देश्यका परित्याग नहीं कर सकते। यदि हमें शासन-विरोधी कोई क़दम उठाना पड़ा तो स्पष्ट है कि हम उसके लिए विवश होंगे।" खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने सरदरयाबमें, जो पेशावरसे १८ मीलकी दूरी-पर पड़ता है, अपने कार्यके लिए एक केन्द्र स्थापित किया। वे वहाँ एक घास-

फूसकी झोंपड़ी बनाकर रहने लगे। यह केन्द्र 'मरकज़-ए इलाही-ए खुदाई खिद-मतगारान' के नामसे जाना जाने लगा।

जुलाईमें वर्धामें कार्यकारिणी समितिकी बैठक हुई। ५ जुलाईको गांधीजीने कांग्रेसके अध्यक्ष मौलाना आज़ादसे 'भारत छोड़ो' आन्दोलनके बारेमें प्रथम बार बातचीत की। उन्होंने बल देकर कहा कि अब वह समय आ गया है जब कि कांग्रेसको अंग्रेजोंके तत्काल भारत छोड़नेकी मांगको उठाना चाहिए। जो बात इससे पहले उन्होंने कभी न कही थी, वह इस बार कही। उन्होंने कहा कि यह एक खुला विद्रोह होना चाहिए और जनताको गिरफ्तारी या सरकारके अधीन होनेका तबतक विरोध करना चाहिए जबतक कि वह शारीरिक रूपसे इसके लिए बाध्य न हो जाय। वहाँ विस्तारपूर्वक, खुलकर चर्चा हुई और १४ जुलाई १९४२ को एक ऐतिहासिक प्रस्ताव पारित हुआ जो कि गांधीजीके प्रारूपपर आधारित था :

"दिन-प्रतिदिन जो घटनाएँ होती जा रही हैं और जिस स्थितिको भारतीय जनता अनुभव कर रही है, वह कांग्रेस-जनोंकी इस रायकी पुष्टि करती है कि भारतमें अंग्रेजी राज्यका अविलम्ब अन्त होना चाहिए।....जबसे विश्व-युद्ध छिड़ा है, तभीसे कांग्रेसने जान-बूझकर सरकारको परेशानीमें न डालनेकी नीतिको आगे बढ़ाया। इतना ही नहीं, उसने सोचने-विचारनेके बाद अपने सत्याग्रहको प्रभावहीन बनानेका जोखिम भी लिया और उसे मात्र एक प्रतीकात्मक रूप दिया। उसने अपनी नीतिको अन्तिम तर्क-संमत सीमातक खींचा क्योंकि उसे यह आशा थी कि उसकी नीतिकी क़द्र की जायगी। उसको यह भी आशा थी कि असली शक्ति बदल-कर जन-प्रिय प्रतिनिधियोंके हाथोंमें पहुँच जायगी। यह राष्ट्रको इस योग्य बना देती कि वह समस्त विश्वमें उस मानव-स्वाधीनताके स्वप्नको साकार करनेकी दिशामें अपना पूर्ण सहयोग दे सकता, जिसके कुचले जानेका भय बना हुआ है। यह आशा भी की गयी थी कि यदि इस दिशामें नकारात्मक उत्तर मिला तो भारतके गलेपर ब्रिटेनके हाथका तनाव और तो न बढ़ेगा।

"ये सारी आशाएँ टुकड़े-टुकड़े हो गयीं। सर स्टेफर्ड क्रिप्सके निष्फल प्रस्तावोंने इस बातको बहुत स्पष्ट रूपसे प्रत्यक्ष दिखला दिया कि भारतके प्रति ब्रिटिश सरकारके रुखमें किसी परिवर्तनकी सम्भावना नहीं है। इसके साथ ही यह भी स्पष्ट हो गया कि भारतपर अंग्रेजोंकी पकड़ किसी प्रकारसे शिथिल नहीं होगी।....इस कुण्ठाका परिणाम यह हुआ है कि ब्रिटेनके विरुद्ध एक व्यापक दुर्भावनामें बड़ी शीघ्रताके साथ वृद्धि हुई है और जापानी शस्त्रोंकी सफलतासे

लोगोंके मनमें एक संतोष होने लगा है। कार्यसमिति इस बढ़ती हुई स्थितिको अत्यन्त शंकाकी दृष्टिसे देखती है क्योंकि यदि उसका अवरोध न किया गया तो वह स्थिति हमें अनिवार्य रूपसे हमलेकी निष्क्रिय स्वीकृतिकी ओर ले जायगी। समितिकी राय है कि समस्त आक्रमणका निश्चय ही विरोध होना चाहिए। यदि भारत उसका विरोध नहीं करता तो इसका अर्थ यह है कि भारतीय जनताका अधःपतन हो गया है और उसकी पराधीनता निरन्तर चलती रहेगी। कांग्रेस इस बातके लिए अत्यन्त चिंतित है कि मलाया, सिंगापुर और बर्माके अनुभवोंकी यहाँ पुनरावृत्ति न हो। वह जापान या किसी बाह्य शक्तिके आक्रमण या भारत-पर चढ़ाईका पूरी तरहसे विरोध करना चाहेगी।

"कांग्रेस ब्रिटेनके प्रति अपनी दुर्भावनाको एक सद्भावनामें बदल देना चाहती है और भारतको संसारके लोगों और राष्ट्रोंकी स्वाधीनता अर्जित करनेके प्रयास-में, तथा उनकी विचारणाओं और पीड़ाओंमें उसकी अपनी इच्छासे एक भागीदार बना देना चाहती है। यह तभी सम्भव है जब कि भारत स्वाधीनताके एक प्रकाश-को प्राप्त कर ले।

"केवल विदेशी और व्यवधानको समाप्त करके ही आजकी अवास्तविकताकी जगह वास्तविकता ले सकती है और भारतके लोग, जिनमें सभी वर्गों तथा दलों के लोग होंगे, भारतकी समस्याओंका सामना कर सकते हैं और मिलजुलकर एक सर्वसम्मत आधारपर उनको सुलझा सकते हैं। वर्तमान राजनीतिक पार्टियाँ, जो मुख्य रूपसे ब्रिटिश सत्ताका ध्यान और प्रभाव अपनी ओर आकृष्ट करनेको संग-ठित हुई हैं, तब सम्भवतः कार्य करना बन्द कर देंगी।...उस समय भारतके इतिहासमें यह प्रथम बार अनुभव किया जायगा कि राजे-महाराजे, जागीरदार, ज़मींदार, जायदादवाले और धनी वर्गके लोग अपना धन और सम्पत्ति खेतों, फैक्टरियों तथा अन्य स्थानोंपर कार्य करनेवाले श्रमिकोंसे प्राप्त करते हैं, जिनके पास कि अनिवार्य रूपसे शान्ति और अधिकार होना चाहिए।....कांग्रेसकी यह तीव्र इच्छा है कि वह आक्रमणका एक प्रभावशाली ढंगसे सामना करे और उसके पीछे जनताकी सामूहिक इच्छा और शक्ति हो।

"भारतसे ब्रिटिश सत्ताको खींच लेनेका प्रस्ताव रखते समय कांग्रेसकी यह बिलकुल इच्छा नहीं है कि वह ग्रेट ब्रिटेन या मित्र-राष्ट्रोंके आगे एक संकटकी स्थिति खड़ी कर दे या उनके युद्धके प्रयासोंमें कोई बाधा डाले, किसी तरहसे भारतके ऊपर आक्रमणको प्रोत्साहित करे या जापान या धुरी शक्तियोंमें सम्मिलित किसी बल द्वारा चीनपर दबाव बढ़े। कांग्रेसका यह इरादा भी नहीं है कि वह

मित्र-राष्ट्रोंकी सुरक्षा-शान्तिको विपत्तिमें डाल दे। इसलिए कांग्रेस इस बातके लिए राज़ी है कि यदि मित्र-राष्ट्र उचित समझें तो भारतको सुरक्षा और जापानी या अन्य किसी शक्तिके आक्रमणका विरोध करनेके लिए अथवा चीनको बचाने या उसकी सहायता करनेके लिए भारतमें अपनी सशस्त्र सेनाओंको रख सकते हैं।

"भारतसे ब्रिटिश शक्तिके चले जानेका अभिप्राय यह कभी नहीं रहा कि यहाँसे सारे अंग्रेज अपने देश वापस चले जायें, और उन लोगोंके लिए तो निश्चित ही नहीं रहा जिन्होंने भारतको अपना घर बना लिया है और जो एक नागरिकके रूपमें यहाँ औरोंकी तरहसे रहते हैं।

"यदि यह अपील असफल हो जाती है तो भी कांग्रेस वर्तमान स्थितिपर गंभीर विचार किये बिना न रहेगी और उसे ज्योंका-त्यों नहीं चलने देगी। इस मौजूदा स्थितिमें हालातका तेज़ीके साथ गिरना, और भारतकी इच्छा-शक्ति तथा आक्रमणका विरोध करनेके बलका ह्रास भी शामिल है। उस समय कांग्रेस इच्छा न होते हुए भी इस बातके लिए बाध्य हो जायगी कि वह सन् १९२० से संचित अपनी समस्त अहिंसात्मक शक्तिको उपयोगमें लाये, जब कि उसने अहिंसा को राजनीतिक अधिकार प्राप्त करने और स्वाधीनताकी मांगको दृढ़ करनेके लिए अपनी नीतिके एक अङ्गके रूपमें स्वीकार किया था।"

जब कार्यसमितिका यह प्रस्ताव प्रकाशित हुआ तब उससे देशभरमें एक हलचल फैल गयी। खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँने सीमाप्रांतकी कांग्रेस कमेटीको सम्बोधित करते हुए राष्ट्रकी जनतासे यह कहा कि वह भारतकी स्वाधीनताके आगामी संघर्षके लिए तैयार रहे। "आप लोग गांधीजीके आह्वानके लिए तैयार रहें। कार्यसमिति द्वारा प्रस्तावकी पुष्टि कर देनेके पश्चात् किसी भी क्षण उसकी आशा की जाती है। मैं आशा करता हूँ कि हमेशाकी भाँति इस संघर्षमें सीमा-प्रांत सबसे आगे रहेगा।"

५ अगस्तको बम्बईमें कार्यसमितिकी बैठक हुई और उसमें एक प्रस्तावका प्रारूप रखा गया। उसकी भाषा वही थी जो वर्धामें पहले पारित किये गये प्रस्तावकी। अखिल भारतीय कांग्रेस समितिके आगे ७ अगस्तको यह प्रस्ताव रखा गया।

महात्माजीने प्रतिनिधियोंको सम्बोधित करते हुए कहा :

"जो अवसर इस समय हमारे आगे है, ऐसे मौके प्रत्येक मनुष्यके जीवनमें नहीं आते और जिसके जीवनमें आते भी हैं, उसमें दुर्लभ होते हैं। आज मैं और मेरी अहिंसा कसौटीपर है। आजके इस संकटकालमें, जब कि धरती हिंसाकी

ज्वालाओंसे झुलस रही है और चारों ओर मुक्तिके लिए पुकारें उठ रही हैं, यदि मैं ईश्वरप्रदत्त बुद्धिका उपयोग नहीं करता तो ईश्वर मुझे क्षमा नहीं करेगा और मैं उस एक बहुत बड़े उपहारके लिए अयोग्य सिद्ध होऊँगा। मुझे अब काम करना ही चाहिए।"

गांधीजीने आगे टिप्पणी की : "मेरा विश्वास है कि विश्वके इतिहासमें हमारे स्वाधीनता संघर्षसे कहीं अधिक सच्चे प्रजातांत्रिक संघर्ष हुए हैं। उस प्रजातन्त्रमें, जो मेरी दृष्टिके आगे है और जो अहिंसासे स्थापित किया जायगा, सब लोगोंको समान स्वतन्त्रता रहेगी। प्रत्येक मनुष्य स्वयं अपना स्वामी होगा। आज मैं इसी प्रकारकी लड़ाईमें भाग लेनेके लिए आपको आमंत्रित कर रहा हूँ। यदि आपने एक बार यह अनुभव कर लिया कि आप आज़ादीके एक ही समान संघर्षमें रत लोग हैं तो आप अपने बीचके हिन्दू और मुसलमानके अन्तरको भूल जायँगे और अपनेको एक भारतीय मात्र समझेंगे।"

मुट्ठीभर साम्यवादी सदस्योंको छोड़कर, जिन्होंने कि प्रस्तावका विरोध किया, अखिल भारतीय कांग्रेस समितिके समस्त सदस्योंने इस प्रस्तावका स्वागत किया और दो दिनके वाद-विवादके बाद "भारत छोड़ो" प्रस्ताव पारित हो गया।

गांधीजीने अखिल भारतीय कांग्रेस समितिको दो घंटेतक अंग्रेजी और हिन्दीमें सम्बोधित किया। साम्यवादियोंको उनके साहसके लिए बधाई देनेके बाद उन्होंने कहा कि उन लोगोंने अपने संशोधनोंको स्वीकार करनेके लिए समितिसे जो कुछ कहा, उससे स्थितिका सही रूपसे प्रतिनिधित्व नहीं होता। उन्होंने कहा, "ऐसा समय भी था जब कि प्रत्येक मुसलमान भारतको अपनी जन्मभूमि होनेका दावा किया करता था। उन दिनों सज्जनता, गरिमामयता और श्रेष्ठताकी एक भावना उनको प्रेरणा देती रहती थी। प्रत्येक समुदायके सदस्य अपने साथ रहनेवाले दूसरे सदस्योंके सब प्रकारसे अनुकूल बननेके लिए परस्पर स्पर्द्धा किया करते थे। वे एक-दूसरेकी धार्मिक भावनाओंका आदर करते थे और ऐसा करना अपना एक विशेष अधिकार समझते थे। मैं क़ायदे आज़म जिना सहित सारे मुसलमानोंसे यह कहूँगा कि वे उन्हीं गौरवमय दिवसोंको वापस ले आयें और इस असह्य स्थितिके कारणोंकी खोज करें। क़ायदे आज़म जिना स्वयं किसी समय कांग्रेसके एक सदस्य रहे हैं। यदि कांग्रेस आज उनके रोषकी भाजन है तो इसका कारण यह है कि उनके मनमें सन्देहका एक कीड़ा प्रवेश कर गया है। ईश्वर उनको दीर्घायु करे; लेकिन जब मैं चला जाऊँगा तब वे यह अनुभव करेंगे और इस बातको स्वीकार भी करेंगे कि मैंने मुसलमानोंके साथ कभी छल नहीं किया

और न उनके हितोंके साथ कभी धोखा किया।"

गांधीजीने आगे कहा, "मैं उन लोगोंसे, जो कि आज गाली-गलौज और एक दूसरेपर कलंक लगानेके अभियानमें लगे हुए हैं, यह कहूँगा कि इसलाम तो एक शत्रुतकको गालियाँ देनेकी इजाजत नहीं देता। पैगम्बर [मुहम्मद साहब] ने शत्रुओंतकके प्रति कृपालुताका व्यवहार किया और उन्होंने अपनी भलाई और उदारतासे उनको जीत लिया। आप उसी इस्लामके अनुयायी है या किसी अन्यके ? यदि आप सच्चे इस्लामके अनुयायी हैं तो क्या वह आपकी इस बातमें सहायता करता है कि आप उस व्यक्तिके ऊपर अविश्वास करें जो कि अपने विश्वासको सार्वजनिक रूपमें घोषित करता है ? आज आप मुझसे यह सुन लीजिए कि आप एक दिन इस बातपर अफ़सोस करेंगे कि आपने उस व्यक्तिके ऊपर भरोसा नहीं किया और उसे मार डाला जो कि आपका एक सच्चा और आपके लिए सदा तत्पर रहनेवाला मित्र था। यह देखकर मुझको मर्मान्तिक पीड़ा होती है कि जितनी ही मैं अपील करता हूँ, जितनी ही मौलाना आजाद आग्रहपूर्वक प्रार्थना करते हैं, गाली-गलौजका अभियान उतना ही तेज होता जाता है। मेरे लिए ये गालियाँ बन्दूककी गोलियाँ जैसी हैं। ये मुझको उसी तरहसे मार सकती हैं जैसे कि बन्दूककी एक गोली मेरी जीवन-लीलाको समाप्त कर सकती है। आप मुझको मार डाल सकते हैं। मुझे इससे चोट नहीं पहुँचेगी। उन लोगोंसे क्या कहा जाय जो कि गाली-गलौजमें लगे हुए हैं ? यह इस्लामके लिए एक अप्रतिष्ठाकी बात है। इस्लामके भलेनामपर मैं आपसे यह अपील करता हूँ कि आप गाली देनेके और एक दूसरेपर कलंक लगानेके इस लगातार चलनेवाले अभियानको रोक दें।"

"मौलाना साहब उसमें भी सबसे भद्दी गालियोंके लक्ष्य बनाये गये हैं।" गांधीजीने टिप्पणी करते हुए कहा, "क्योंकि वे अपनी दोस्तीका दबाव डालनेसे इनकार करते हैं। वे इसको मित्रताका एक दुरुपयोग मानते हैं कि अपने मित्रसे उस बातको सच मनवा लिया जाय जिसे कि वह स्वयं एक असत्य समझता है। क़ायदे आज़मसे मेरा कहना यह है : 'पाकिस्तानके दावेमें जितना कुछ सच्चा और वैध है, वह तो आपके हाथमें ही है और जो असत्य और अरक्षणके योग्य है उसे आपको कोई भेंट नहीं कर सकता। यदि किसीको दूसरोंपर अपना असत्य लादनेमें सफलता मिल भी जाय तो भी वह उसके फलोंका अधिक लम्बे समयतक उपभोग नहीं कर सकेगा। ईश्वरको सह्य नहीं है कि किसीपर जबरदस्ती झूठका बोझ लादा जाय।' मैं इस्लामके नामपर आपसे अपील करता हूँ कि जो कुछ मैं

कह रहा हूँ, उसपर आप विचार करें। न तो यह बात उचित ही कही जा सकती है और न न्यायपूर्ण कि कांग्रेससे किसी ऐसी वस्तुको स्वीकार कराया जाय जिसपर उसे विश्वास न हो अथवा जो उसके प्रिय सिद्धान्तोंके विरुद्ध पड़ती हो। यदि मैं किसी मांगको न्यायोचित समझूँगा तो मैं उसे आज ही अंगीकार कर लूँगा। मैं केवल मि० जिनाको राज़ी करनेके लिए इसपर तैयार नहीं होऊँगा। यह मेरा तरीक़ा नहीं है।"

अपने भाषणके निष्कर्षमें उन्होंने कहा, "असली लड़ाई अभी शुरू नहीं। आपने अभी केवल सारी शक्तियाँ मेरे हाथोंमें दी हैं। मैं वाइसरायकी प्रतीक्षा करूँगा और उनसे कांग्रेसकी मांगोंको स्वीकार करनेके लिए कहूँगा।......आप लोगोंमेंसे प्रत्येक स्त्री-पुरुष इस क्षणके बाद अपनेको स्वतन्त्र समझे और एक स्वतन्त्र व्यक्तिकी भांति व्यवहार करे। गुलामीका बन्धन तो उसी क्षण चटककर टूट जाता है जिस क्षण व्यक्ति यह समझ लेता है कि अब वह एक स्वतन्त्र प्राणी है। आप लोग मुझसे यह बात जान लीजिए कि मैं वाइसरायसे अल्पसंख्यकोंके बारेमें या वैसे ही औरोंके बारेमें कोई सौदा पटाने नहीं जा रहा हूँ। स्वाधीनता-के अलावा और किसी चीज़से मैं संतुष्ट होनेवाला नहीं हूँ। यह एक छोटा-सा मंत्र मैं आपको दे रहा हूँ। इसे आप अपने हृदयोंपर अङ्कित कर सकते हैं। आपका प्रत्येक श्वास उसे व्यक्त करे। वह मंत्र है, 'करो या मरो'। आप ईश्वर और अपनी अन्तरात्माको साक्षी करके यह शपथ लें कि जबतक स्वाधीनता नहीं मिल जाती तबतक आप चैनसे न बैठेंगे और उसे पानेके प्रयासमें आप अपने जीवनकी बाजी लगा देंगे। जो अपनी जिन्दगीको खो देगा वह उसे फिर प्राप्त कर लेगा। लेकिन वह, जो उसे बचानेकी कोशिश करेगा, उसे खो देगा। स्वाधीनता कायरोंके लिए या निरुत्साहियोंके लिए नहीं है।"

९ अक्तूबरको गांधीजी और कार्यसमिति तथा अखिल भारतीय कांग्रेस समितिके सभी सदस्य गिरफ्तार हो गये और स्पेशल गाड़ियों द्वारा नज़रबन्दीके लिए विभिन्न स्थानोंपर ले जाये गये। जैसे ही इन गिरफ्तारियोंका समाचार मिला, वैसे ही सारे भारतमें गम्भीर उपद्रवकी घटनाएँ होने लगीं। समस्त भारत-में कांग्रेसके सैकड़ों नेता गिरफ्तार कर लिये गये।

सीमाप्रान्तमें प्रारम्भमें स्थिति अत्यन्त शान्तिपूर्ण रही। स्थानीय स्थितियोंके कारण ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ अखिल भारतीय कांग्रेस समितिके अधिवेशनमें भाग न ले सके। सीमाप्रान्तीय कांग्रेस समितिने आन्दोलनको संचालित करनेका सारा अधिकार, अपना सारा प्रतिनिधित्व ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको सौंप दिया

था। जिस समय वे अपने कार्यकर्ताओंसे विचार-विनिमय कर रहे थे, उसी समय उन्हें बम्बईमें कांग्रेसके नेताओंकी गिरफ्तारीका समाचार मिला। १० अगस्तको पेशावरकी एक सभाको सम्बोधित करते हुए 'भारत छोड़ो' प्रस्तावके पूर्ण समर्थनमें शपथ ग्रहण की। उन्होंने जनताको यह सलाह दी कि वह प्रतीक्षा करे और अधीर न हो। उन्होंने इस बातपर बल दिया कि खुदाई खिदमतगार अपना रचनात्मक कार्य चलाते रहें और उस सारे प्रचारसे प्रभावित न हों जो कि प्रान्तमें एक भय फैला सकता है। उन्होंने कहा, "समय अभी नहीं आया है। हमें इस समय आन्दोलन छेड़नेकी कोई शीघ्रता नहीं है। हमने विभिन्न स्थानोंकी शराबकी दूकानोंपर धरना देना प्रारम्भ कर दिया है और इसे हम कुछ समयतक और चलायेंगे।"

उनके कुछ सहयोगियोंने राय दी कि वे लोग टेलीफोनके तार काटने, रेलवेकी पटरियोंको उखाड़ने और इसी तरहकी अन्य तोड़-फोड़ करें। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ उसके लिए तैयार थे परन्तु उनकी शर्त यह थी कि ऐसी स्थितिमें तोड़-फोड़ करनेवालेको अपनेको पुलिसके हवाले कर देनेके लिए तैयार रहना चाहिए और उसे स्पष्ट शब्दोंमें यह स्वीकार करना चाहिए कि मैंने तोड़-फोड़का यह काम किया है। उन्होंने कहा, "इससे कार्यकर्ताकी नैतिक शक्ति बढ़ेगी और वह जनताके आगे अपनी दृढ़ता और वीरताका एक आदर्श प्रस्तुत करनेमें समर्थ होगा। इससे दूसरोंके ऊपर कोई सन्देह नहीं किया जा सकेगा और वे व्यर्थ तंग किये जानेसे बच जायँगे।"

१० सितम्बर १९४२ को, प्रांतके मुख्य मन्त्री पदसे मुक्त होनेके तीन साल बाद डा० खान साहबने ६० वर्षकी उम्रमें पुनः लाल वर्दीको पहना और उन्होंने पेशावरके सचिवालयके सामने सरकारी कर्मचारियोंके लिए, एक खुदाई खिदमतगारके रूपमें छोटा-सा भाषण किया। उनके साथ तीन स्वयंसेवक थे। उनमेंसे एकने उसी प्रभावोत्पादकताके साथ एक कविता पढ़ी। डा० खान साहब सेशन जज और जुडीशियल कमिश्नरकी अदालतमें भी गये। वहाँ भी यही कार्यक्रम चला। भूतपूर्व मन्त्री काजी अतातुल्लाहके नेतृत्वमें दूसरी टुकड़ी स्थानीय विद्यालयोंमें गयी। तीसरी टुकड़ी पेशावर नगरके चार थानोंमेंसे प्रत्येकमें गयी और वहाँ 'भारत छोड़ो' का संदेश सुनाया।

सितम्बरके अन्तमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने आन्दोलनमें तेजी ला दी। खुदाई खिदमतगारकी बड़ी-बड़ी टोलियोंने सरकारी दफ्तरों और अदालतोंपर धावा बोल दिया। ४ अक्तूबरको विभिन्न जिलोंमें खुदाई खिदमतगार बहुत बड़ी

संख्यामें अपने शिविरोंसे निकल पड़े और 'इन्किलाब ज़िन्दाबाद' के नारे लगाते हुए अपने निश्चित स्थानोंकी ओर चल दिये। उनके साथ सरकारी भवनोंपर लहरानेके लिए झंडे थे। कार्यालयों और अदालतोंकी सुरक्षा पुलिसके ज़िम्मे थी। खुदाई खिदमतगारोंने सिपाहियोंकी पंक्ति तोड़कर भीतर प्रवेश करनेकी कोशिश की। इसपर पुलिस उन्हें पीटने लगी। पुलिस उन्हें तबतक पीटती रहती थी जब-तक कि वे संज्ञाहीन होकर गिर न पड़ें। अधिकांश खुदाई खिदमतगारोंके गम्भीर चोटें आयीं। उनको कांग्रेस द्वारा संचालित सहायता-केन्द्रोंमें भेज दिया गया। जिन खुदाई खिदमतगारोंके मामूली चोट आयी थी उनको पुलिस अपनी मोटर गाड़ीसे शहरसे बहुत दूर ले गयी। वहाँ उनको छोड़ दिया गया और वहाँसे उन सबको पैदल अपने घर लौटना पड़ा। सारी अदालतोंको एक पखवाड़ेके लिए बन्द कर दिया गया। जब वे खुलीं तब उन्हीं घटनाओंकी पुनरावृत्ति हुई; वैसे ही धरने और वैसी ही मार। सैकड़ों खुदाई खिदमतगारोंको गिरफ़्तार कर लिया गया।

एक दिन यह घोषणा हुई कि पेशावरमें खुदाई खिदमतगार 'मार्च' करते हुए अपना प्रदर्शन करेंगे। प्रदर्शनके समय सरकारने उन लोगोंको गिरफ़्तार नहीं किया बल्कि उनके साथ एक बड़ी कुटिल चाल खेली।। सर रशब्रुक विलियम्सने मज़ा लेते हुए इस घटनाका इन शब्दोंमें वर्णन किया है :

"खुदाई खिदमतगारोंका एक बहुप्रचारित प्रदर्शन एक साधारण-सी चाल-से मात खा गया। इस घटनाको सुनाते हुए अब भी सारे सीमाप्रांतके लोग मुँह दबा-दबाकर हँसते हैं। उन दिनों 'पॉलिटिकल अफसरों' मेंसे इस्कंदर मिर्जा वहाँ ठहरे हुए थे। उन्होंने अन्दाज़ लगा लिया कि खुदाई खिदमतगार अपना जुलूस बहुत सवेरे न निकाल सकेंगे। अन्य पठानोंकी तरह जबतक वे ढेर-सी रोटियाँ तीन पाव चायमें डुबा-डुबाकर न खा लेंगे, तबतक वे बाहर न निकलेंगे। इस्कंदर मिर्जाने खुदाई खिदमतगारोंके शिविरके रसोइयोंको अपनी ओर मिला लिया और उनके द्वारा भोजन सामग्रीमें एक बहुत तेज़ जुलाब मिलवा दिया। जुलूस बहुत अच्छी तरहसे उठा। वह नारे लगाते हुए आगे बढ़ा लेकिन थोड़ी दूर चलकर एकके बाद एक स्वयंसेवक चुप होता गया और फिर वे लोग शीघ्रतासे अपनी पंक्तिको तोड़कर साथियोंकी दृष्टिसे दूर मैदानमें खिसकने लगे। इस तरह अधि-कांश खुदाई खिदमतगार धीरे-धीरे उस जुलूसमेंसे निकल गये और अन्तमें वह दुर्बल लगनेवाले, निरुत्साहित लोगोंकी छितरी हुई-सी एक टोली रह गयी जिसने कि पेशावरमें चक्कर लगाया।"

सीमाप्रांतकी सरकारने अन्य प्रदेशोंकी सरकारोंकी भांति आन्दोलनकारियों-

के खिलाफ़ कोई कष्टदायक क़दम नहीं उठाया वल्कि उनके आन्दोलनकी शक्तिको क्षीण करनेके लिए विविध प्रकारकी कुटिल चालोंको अपनाया। उसने जनताकी धार्मिक भावनाओंको भड़कानेके लिए मुल्ला लोगोंको किरायेपर रख लिया और काफ़ी संख्यामें शरारतसे भरे हुए इश्तिहार और पर्चे बांटे। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने अपने साथियोंको सावधान करते हुए कहा कि यद्यपि सरकार अभी निष्क्रिय जान पड़ती है लेकिन यह एक अस्थायी स्थिति है। अभी तो विपत्तियोंका एक बड़ा समूह उनकी प्रतीक्षा कर रहा है। ब्रिटिश सरकार विश्वके सामने इस तथ्यको प्रदर्शित करना चाहती है कि भारतके स्वाधीनता आन्दोलनसे मुसलमानोंका सम्बन्ध नहीं है। सरकार यह भली भांति जानती है कि खुदाई खिदमतगारोंके राष्ट्रीय आन्दोलनमें सम्मिलित होने और उनके ऊपर दमन होनेके समाचार उसके उस प्रचारको, जिसे कि वह विदेशोंमें चला रही है, झूठा सिद्ध कर देंगे। इसीलिए उसने सीमाप्रांतके समाचारोंके बाहर जानेपर कठोर प्रतिबन्ध लगा दिया। खान अब्दुल गफ़्फ़ार ख़ाँने सीमाप्रान्तके आन्दोलनका यथार्थ वर्णन इन शब्दोंमें किया है :

"हमारे प्रान्तीय जिरगाने अपने प्रतिनिधिके रूपमें सामूहिक आज्ञा-भंग आन्दोलनके संचालनके सारे अधिकार मुझको सौंप दिये थे और उसने मुझे 'डिक्टेटर' नियुक्त कर दिया था। 'डिक्टेटर' शब्दसे ही मुझे घृणा थी क्योंकि मैं एकाधिपत्य और अधिनायकवाद दोनोंको बेहद नापसन्द करता हूं। 'डिक्टेटर' की ओरसे कोई आदेश भेजनेसे पहले मैं हमेशा अपने साथियोंकी राय ले लिया करता था।"

मेरे निर्देशसे ही सामूहिक आन्दोलनको शुरू किया गया था। बन्नू, कोहाट, टंक, मरदान और पेशावरकी अदालतों और कार्यालयोंके ऊपर धरना दिया गया। सरकारने इस आन्दोलनको कुचलनेकी बेहद कोशिश की। एक मुसलमान उपायुक्त जनाब इस्कंदर मिर्जा अंग्रेजोंके प्रति अपनी परम्परागत निष्ठाके पालनमें अपने स्वामियोंसे भी आगे बढ़ गया। उसने सैयद अकबर नामक एक खुदाई खिदमतगारकी पिटवाते-पिटवाते जान ले ली। वह इतना गिर गया कि उसने खुदाई खिदमतगारोंके शिविरमें उनकी सब्जीमें विष मिलवा दिया। जिसने भी उस सब्जीको खाया, वही गम्भीर रूपसे बीमार पड़ गया। मैं उसके अन्य जघन्य कार्योंको यहां खोलना नहीं चाहता। उनके लिए मैं उसे, उस सर्वशक्तिमान् ईश्वरके आगे उपस्थित करना चाहता हूं, जिसके आगे कि 'अंतिम न्यायके दिन' हम सबको उपस्थित होना है।

" 'भारत छोड़ो' आन्दोलनकी गतिविधियोंके निरीक्षणके लिए मुझको अपने प्रान्तका दौरा करना पड़ता था। एक दिन, जब कि मैं कोहाट जा रहा था, मुझको कोहाट दर्रेके पास गिरफ़्तार कर लिया गया। इसके बाद मुझे पेशावर लाकर छोड़ दिया गया। मैं जहाँ भी जाता वहीं गिरफ़्तारी और रिहाईका यह क्रम चलता।

"२७ अक्तूबर सन् १९४२ को मैं पचास खुदाई खिदमतगारोंके एक दलके साथ चारसद्दासे पैदल चला। हम लोगोंका इरादा मरदानकी कचहरीपर धरना देनेका था। रास्तेमें कई गाँवोंमें रुककर हमने सार्वजनिक सभाओंमें भाषण किये। मीरबस डेरी नामक स्थानपर पुलिस हम लोगोंकी प्रतीक्षा कर रही थी। हम लोग एक-दूसरेके हाथोंको पकड़े हुए पंक्तिबद्ध 'मार्च' करते जा रहे थे। पुलिसने हम लोगोंको अलग कर दिया। हमने पुनः अपने हाथोंको पकड़कर पंक्ति बना ली। इसपर पुलिसने हम लोगोंको बड़ी निर्दयताके साथ लाठियोंसे पीटना शुरू कर दिया। खुशदिल खानने, जो कि एक मामूली अधिकारी था, मुझपर वार किये जिससे मेरी पसलीकी दो हड्डियाँ टूट गयीं। मेरे कपड़े खूनमें लथपथ हो गये। वह हम सब लोगोंको गिरफ़्तार करके मरदान जेल ले गया। दूसरे दिन हमको रिसालपुर और फिर वहाँसे हरिपुर जेल भेज दिया गया। हमारे बहुतसे कार्यकर्ता हरिपुर जेलमें बन्दी थे। वे अक्सर 'इन्किलाब ज़िन्दाबाद' के नारे लगाया करते थे। मेरे वहाँ पहुँचनेके बाद जेलके अधिकारी उनकी उपेक्षा करने लगे लेकिन मुझको शीघ्र ही अबोटाबाद जेलमें भेज दिया गया।"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँकी गिरफ्तारीके सम्बन्धमें मुख्य सचिवकी एक गोपनीय टिप्पणीमें यह कहा गया :

"दरगईमें रात बितानेके बाद खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ मरदानकी ओर चल दिये। नमाज़ पढ़ने और भाषण करनेके लिए वे कई स्थानोंपर रुके। इस प्रकार वे मरदानसे एक मील दूर एक पुलिस चौकीके पास पहुँच गये। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको उनके खुदाई खिदमतगार बीचमें घेरे हुए चल रहे थे जिनकी संख्या लगभग १५० थी। उनमेंसे ५० लाल कुर्तीवालोंकी वर्दी पहने हुए थे। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने रुकनेसे या अधिकारियोंसे संभाषण करनेसे इनकार कर दिया। अतः पुलिस उनको गिरफ़्तार करने और उनके साथियोंको तितर-बितर कर देनेके लिए बाध्य हो गयी। अंतमें काफ़ी परेशानीके बाद उनको रोककर गिरफ़्तार कर लिया गया। उनको पुलिसकी मोटर-कारतक ले जाया गया और वहाँसे वे 'लाइन्स' में भेज दिये गये। जिस समय खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ कार-

तक ले जाये जा रहे थे उस समय वे हिंसापर उतर आये और उन्होंने हर प्रकार से विरोध किया। मामूली चोटोंके अलावा उनके कोई गम्भीर चोट या घाव नहीं था इसलिए उनकी 'एक्स रे' परीक्षा आवश्यक नहीं समझी गयी।"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने अपने जेलके अनुभवोंको इन शब्दोंमें वर्णन किया है :

"आन्दोलनके शुरूके दिनोंको छोड़कर ब्रिटिश सरकारने, जिसका कि मैं विरोधी था, मेरा अपमान नहीं किया और न उसने मुझको कोई शारीरिक आघात ही पहुँचाया। एक बार कारागारोंके महानिरीक्षक कर्नल स्मिथ अबोटाबाद जेलका मुआयना करते हुए मेरी छोटीसी कोठरीमें आये। वे कुछ देरतक मुझसे बातचीत करते रहे। इसके बाद वे बाहर निकल आये और उन्होंने क्रोधमें जेलके अधीक्षकसे कहा, 'आपने इनको कबूतरके इस दरबेमें क्यों बन्द कर रखा है? आप इनको अस्पतालके किसी कमरेमें क्यों नहीं रख देते?' जेलके अधीक्षकने आदरपूर्वक कहा कि उसको सरकारसे यही आदेश मिला है। इसके बाद कर्नल स्मिथने प्रान्तके गवर्नर सर जार्ज कनिंघमसे टेलीफोनपर सम्पर्क स्थापित किया और कहा, "योर एक्सलैन्सी, क्या हमारे लिए यह उचित है कि हम अपने एक वीर विपक्षीके साथ वैसा व्यवहार करें जैसा कि हम बादशाह खानके साथ कर रहे हैं?" सर जार्जको भी यह अखरा और उन्होंने अपना आदेश वापस ले लिया। कर्नल स्मिथ मुझे किसी ऐसी जेलमें भेज देनेका आदेश पहलेसे ही दे चुके थे, जो कि मेरे उपयुक्त हो। उन्होंने मुझे उस जेलमें भेज दिया जहाँ कि मेरा पुत्र वली बन्दी था। मेरे साथके लिए उन्होंने वहाँ तीन अन्य कैदियोंको भी तबादला करके भेज दिया।

"सन् १९४३ के अक्तूबर महीनेमें मेरा तबादला फिर हरिपुर कर दिया गया। उस समय अधिकांश राजनीतिक बन्दी रिहा किये जा चुके थे। इस जेलका घेरा बहुत दूरतक फैला हुआ था और उसमें लम्बी-लम्बी बैरकें बनी हुई थीं। उसके गलियारे काफ़ी विस्तीर्ण थे। जेलमें बहुत चौड़ी-चौड़ी सड़कें थीं और एक बड़ा उद्यान था। यह जेल विशेष रूपसे सीमाप्रान्त और उसके आस-पासके इलाकोंके गम्भीर अपराधोंके कैदियों और डाकुओंके लिए थी। यहाँके अस्पतालका फर्श संगमर्मरका था और इस जेलमें कैदियोंको हॉकी, फुटबाल तथा अन्य खेल खेलनेकी अनुमति थी, फिर भी वहाँकी व्यवस्था बहुत कठोर थी। कैदियोंके साथ पशु-तुल्य व्यवहार किया जाता था। वहाँ काफ़ी बड़ी संख्यामें राजनीतिक बन्दी रखे गये थे। उनको एक शिविरमें अलग रखा गया था, जिसको

एक ऊँची दीवार घेरे हुए थी। हरिपुर जेलमें खुदाई खिदमतगार तिरस्कारके पात्र समझे जाते थे और उनके साथ पशु जैसा व्यवहार किया जाता था। उनको ज़बरदस्ती एक छोटीसी कोठरीके भीतर ढकेल दिया जाता था और फिर उनको पीटा जाता था। सर्दीकी भयानक रातोंमें अक्सर उनके कपड़े उतरवा लिये जाते थे और उनको बेतोंसे मारा जाता था। इन यंत्रणाओंके कारण कुछ राजनीतिक क़ैदी जेलमें ही मर गये। इस जेलमें मेरी निजकी तलाशी ली गयी।

"हम लोगोंमेंसे अधिकांश नज़रबन्द थे और हमको जेलका कोई काम नहीं दिया गया था। हमने जेलरसे कहा कि वे हम लोगोंको निवाड़ बुननेका काम दे दें क्योंकि सौ फुट निवाड़ बुन लेनेपर दो रुपये मज़दूरी मिल जाती थी। हम लोगोंने इस तरहसे काफ़ी रुपये इकट्ठे कर लिये और फिर उनको अपने सरदरयाव केन्द्रमें भेज दिया। खुदाई खिदमतगारोंमेंसे बहुतोंको अक्षर-ज्ञान न था। उन्हें साक्षर बनानेके लिए हम लोग जेलमें कक्षाएँ चलाने लगे। थोड़े ही दिनोंमें वे लिखना-पढ़ना सीख गये।

"हम लोग कुरान और गीता पढ़ा करते थे। अमीर मुहम्मद खाँ, जो कि एक शायर थे और पण्डित शम्भुनाथ जो संस्कृतके अच्छे विद्वान् थे, हम लोगोंको इन धर्म-ग्रन्थोंको समझाते थे। इस कक्षामें विभिन्न धर्मोंके अनुयायी सम्मिलित होते थे। एक दिन जिस समय अमीर मुहम्मद खाँ कुरानके ऊपर भाषण कर रहे थे, एक हिन्दू तरुणने उनके समक्ष अपनी कोई शंका व्यक्त की। अमीर मुहम्मद खाँ इसपर नाराज़ हो गये और बोले कि कुरानके किसी अंशकी आलोचना नहीं की जा सकती। इसपर मैंने उन्हें रोका और कहा कि उनका उस युवकपर नाराज़ हो जाना ठीक नहीं है। यदि वह कुरानके किसी अंशको समझ सकनेमें असमर्थ रहा है तो वह उसको समझा देना चाहिए। पंडित शम्भुनाथ गीताकी कक्षाएं लिया करते थे।

"प्रत्येक रविवारको सब राजनीतिक क़ैदी एक जगह इकट्ठे होते थे और मिलजुलकर कवि इक़बालका 'सारे जहाँसे अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा' गीत गाया करते थे। इसके बाद वार्ताओं और कहानियोंका क्रम चलता था और चर्चाएँ होती थीं। इक़बालकी कृतियोंमेंसे, जो कि मुझे प्रिय थीं, कविता-पाठ भी हुआ करता था। कार्यक्रमके अन्तमें मैं एकत्रित लोगोंको मिठाइयाँ बांटा करता था।

"हम लोग विविध विषयोंपर विचार-विनिमय किया करते। मैं उन लोगोंको इस्लामके स्वर्ण युगकी कथाएँ सुनाया करता था जिनमें खलीफाओंकी परंपरा तथा अबूबकर और उमरके जीवनकी घटनाएँ भी शामिल रहती थीं। अबूबकरने

खलीफ़ाके पदको स्वीकार करनेसे इनकार कर दिया। बादमें बहुत आग्रह करने-पर वे उसके लिए तैयार हुए। वे दारपर कते सूतका एक मोटा-सा अंगरखा पहना करते थे और ताड़के पत्तोंकी चटाईपर सोया करते थे। ईदका त्योहार निकट था। उस अवसरपर बच्चोंकी मिठाईके लिए उनकी पत्नीने उनसे कुछ मुद्राएँ मांगीं। उन्होंने अपनी पत्नीको जवाब दिया कि खलीफ़ासे आत्म-त्यागके एक उच्चस्तरकी अपेक्षा की जाती है। उस दृष्टिसे यह ठीक नहीं होगा। पत्नी-ने परिवारके खर्चमें कठोर मितव्ययिता करके कुछ बचा लिया। अबूबकरने इसे इस बातका एक संकेत समझा कि वे बैत-उल-मलसे जो भत्ता पाते हैं, वह उनकी कठोर आवश्यकताओंसे अधिक है। उन्होंने उसे और भी कम कर दिया।

"जब देशमें गल्लेकी कमी थी तब उमर कभी नियमित रूपसे दो बार भोजन नहीं किया करते थे। जब मिस्रसे गल्ला आ गया, अन्नकी पूर्ति हो गयी और उसे गरीबोंमें बांट दिया गया तब कहीं उन्होंने दो बारके 'भोजन-विलास'को स्वीकार किया। वे केवल आदेश जारी करके ही सन्तुष्ट नहीं हो जाते थे बल्कि वे वेश बदलकर गुप्त रूपसे यह भी देखने निकलते थे कि निर्धन जनता किसी अभावसे ग्रस्त तो नहीं है? इसी प्रकार एक बार रातमें गश्त लगाते हुए वे एक गरीब औरत के झोपड़ेके सामनेसे होकर निकले। वह फ़र्शपर बीमार लेटी थी। चूल्हेपर एक हांडी चढ़ी थी और बच्चे भूखसे रो रहे थे। उमरने कोठरीमें प्रवेश करके उससे पूछा, 'तुम इनको कुछ खानेको क्यों नहीं देती?' वह बोली, 'मैं इनको क्या दे दूँ?' उमरने हांडीके ढक्कनको उठाकर देखा तो उसमें केवल पानी उबल रहा था। वह इसलिए रखा गया था कि बच्चे बहले रहें और चुप रहें। उमरने उससे पूछा, 'जब तुम्हारे पास अपने बच्चोंको खिलानेके लिए भोजन नहीं है तब तुम खलीफ़ाके पास क्यों नहीं जाती?'

'मैं क्यों जाऊँ? क्या यह देखना खलीफ़ाका काम नहीं है?' स्त्रीने उत्तर-में कहा।

'लेकिन खलीफ़ाके पास तो बहुतसे काम हैं। भला वह हर एक बातको और हर एक आदमीको कैसे देख सकता है?' उमरने क्षमा-याचना-सी करते हुए कहा।

"जब खलीफ़ाने मेरे पति और पुत्रको अपनी लड़ाईमें भेज दिया तो क्या बादमें उसे उनके परिवारको नहीं देखना चाहिए?' स्त्री बोला। उमरके पास अब कुछ कहनेको न बचा था। उन्होंने 'बैत-उल-मल' से शीघ्र सामग्री लानेको विशेष रूपसे अपना एक हरकारा भेजा। जब उन्होंने अपने सामने भोजन पकवा

लिया और भूखे परिवारको खिला लिया तब कहीं उनको संतोष हुआ। यह वह परम्परा थी जो कि हमारे शुरूके खलीफ़ा लोगोंने अपनायी थी।"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खांने अपनी टिप्पणीमें आगे लिखा है : "खुदाई खिदमतगारोंके लिए कर्नल स्मिथको विशेष रूपमें सीमाप्रान्तके कारागारोंका महानिरीक्षक बनाकर भेजा गया था। वह एक पक्का साहब था और बहुत ही तेजमिजाज़ था। खुदाई खिदमतगारोंके लिए उसके मनमें एक गहरा द्वेष भाव था। यहांतक कि एक बार चक्कीघरकी बन्द कोठरीमें उसने एक खुदाई खिदमतगारको गोली से मार दिया था। एक दिन वह जेलोंका निरीक्षण करते हुए हरिपुर जेलमें आया। मैंने अपनी कोठरीके आगेकी खुली जगहमें मुर्गियाँ आदि कुछ पक्षी पाल लिये थे। वे चिड़ियाँ मेरे पास आकर मेरी गोदमें बैठ जाती थीं। कभी-कभी वे मेरी पीठ, सिर और कंधोंको भी अपना अड्डा बना लेती थीं। कर्नल स्मिथ मुझसे छिपकर चुपचाप खड़ा यह दृश्य देखता रहा। कुछ देर बाद वह मेरे सामने आकर बोला, 'गुड मॉर्निंग खान साहब, यह सब क्या है ?' 'वही जो कुछ आप देख रहे हैं।' मैंने उत्तर दिया। इसके साथ मैंने यह भी जोड़ दिया कि अंग्रेज लोगों को यह दृश्य वास्तवमें एक बहुत बड़ी नसीहत दे रहा है। वह उलझनमें पड़ गया। तब मैंने उसको समझाया कि उसने जो कुछ देखा वह प्रेमकी शक्तिका एक छोटा-सा उदाहरण है। 'मेरे ये पंखोंवाले मित्र यह भली भाँति जानते हैं कि वे खानेके लिए हैं और उनको काट डाला जायगा इसलिए नियमके अनुसार उनको मनुष्यसे डरना चाहिए लेकिन देखिए, मेरे तनिकसे स्नेहका वे कैसा जवाब दे रहे हैं ?' मेरी बात सुनकर वह एक गहरे विचारमें डूब गया। कुछ देरतक वह बिना एक शब्द भी बोले हुए ज्योंका-त्यों खड़ा रहा। यद्यपि हमारा आन्दोलन चलता रहा परन्तु मानो वह एक भिन्न मनुष्य बन गया। अंग्रेज देशभक्त और वीर हैं और जब वे अन्य लोगोंमें इन गुणोंको देखते हैं तब इनका आदर करते हैं। वह मेरे लिए अपने मनमें कुछ स्नेह-भाव रखने लगा था। यद्यपि वह अभिमानी था फिर भी वह एक चरित्रवान् पुरुष था। वह कहा करता था कि यदि पाकिस्तान एक यथार्थ बन गया तो फिर वह इस देशमें एक दिन भी न रहेगा। वह अपनी बातका धनी निकला। पाकिस्तान बनते ही शीघ्र उसने अपनी नौकरी से निवृत्ति ले ली और अपने घर चला गया।"

सारे देशमें बड़ी तेज़ी और क्रूरताके साथ दमन किया जा रहा था। सन् १९४२ के अन्ततक ६०,००० से भी अधिक व्यक्ति गिरफ़्तार कर लिये गये थे। जेलोंमें बेहद भीड़ हो गयी थी। केवल सीमाप्रान्तमें ही लगभग छः हजार स्वयं-

सेवक जेल गये थे। अक्सर दमनके खिलाफ़ विरोध प्रकट किया जाता था। जनता अपनी निजकी प्रेरणासे सार्वजनिक प्रदर्शन किया करती थी। जुलूस भंग कर दिये जाते थे, उनपर गोलियाँ चलायी जाती थीं और आंसू गैसके वम छोड़े जाते थे। वे सव रास्ते, जिनसे कि जनताके विचार व्यक्त हो सकते थे, रुँध गये थे। ये समस्त दमित भावनाएँ एक साथ फूट पड़ीं। शहरों और ग्रामीण क्षेत्रोंमें जनता इकट्ठी होकर पुलिस और सेनासे टक्कर लेने लगी। भीड़, जिसे भी ब्रिटिश सत्ता और वलका प्रतीक समझ लेती थी, उसीपर हमला करती थी; पुलिस थाने, डाकघर और रेलवेके स्टेशन। वह टेलीफोन और टेलीग्राफ़के तारोंको काट डालती थी। रेलकी पटरियोंको उखाड़ देती थी और पुलोंको हानि पहुँचाती थी। भारतके एक वहुत वड़े भागमें संचार-व्यवस्थाको गम्भीर रूपसे एक धक्का लगा था। देशके कुछ भागोंमें एक या दो महीनेतक गम्भीर उपद्रवकी घटनाएँ होती रहीं। वादमें यदा-कदा ऐसी कोई घटना हो जाती रही।

प्रधान मंत्री चर्चिलने संसदमें कहा, "अव कांग्रेस पार्टीने अहिंसाकी नीति त्याग दी है; जिसकी सिद्धांतके तौरपर गांधी वहुत दिनोंसे वकालत करते चले आ रहे थे, अव वह क्रांतिकारी आन्दोलनके रूपमें खुलकर सामने आ गयी है। अपना सारा ज़ोर लगाकर सरकारने उपद्रवकारियोंको कुचल दिया है। भारतको अधिकाधिक फ़ौजी टुकड़ियाँ भेजी जा रही हैं और जवसे भारत और ब्रिटेनका सम्वन्ध स्थापित हुआ है तवसे लेकर अवतक वहाँ गोरी सेना इतनी संख्यामें कभी नहीं थी।"

१९४३ में अपने ऐतिहासिक उपवासके अवसरपर गांधीजीने कहा : "सरकार ने जनताको उकसा-उकसाकर पागल कर दिया। गिरफ्तारियोंके रूपमें उसने निर्मम हिंसा शुरू कर दी। हिंसा यदि प्रवल रूपसे संगठित होकर हज़रत मूसाके 'एक जानके वदले एक जान' के स्थानपर 'एक जानके वदले हजार जान' का नियम चरितार्थ कर दे, तो भी उसे हिंसा ही कहा जायगा। मूसाके नियमके जवावी नियमकी, अर्थात् ईसामसीहकी अहिंसाकी, तो यहाँ चर्चा ही व्यर्थ है। भारतकी सर्वशक्तिमान सरकारके दमन कार्योंकी मैं किसी दूसरे रूपमें व्याख्या ही नहीं कर सकता।"

इस वातकी कोई सम्भावना नहीं थी कि गांधीजी और उनके साथी लम्वे चलनेवाले विश्वयुद्धके समाप्त होनेसे पहले मुक्त होंगे। नज़रवन्द होनेके कुछ ही समय वाद गांधीजीके अनन्य भक्त और निजी सचिव महादेव देसाई चल वसे। फरवरी १९४४ में गांधीजीकी वासठ वर्षोंकी सहधर्मिणी कस्तूर वा कैंपमें दिवंगत

हो गयीं। इस दुर्घटनाके कुछ सप्ताह बाद अस्वस्थताके कारण गांधीजी रिहा कर दिये गये।

१९४५ के शुरूके महीनोंमें भारतकी राजनीति तेज़ीसे करवटें लेने लगी। यद्यपि अब भी अधिकांश नेता नज़रबन्द थे पर कांग्रेस रचनात्मक क्षेत्र और संसदीय गतिविधि दोनोंमें अधिकाधिक सक्रिय हो रही थी। सेन्ट्रल असेंबलीके बहिष्कारकी नीति अब उसने त्याग दी थी और उसने दूसरी पार्टियोंके साथ गठ-बंधन करके चार या पाँच मौक़ोंपर सरकारको शिकस्त भी दी थी।

सीमा-प्रान्तमें भी परिस्थितियाँ बदल चली थीं। औरंगजेब खाँकी वज़ारत, जो १९४३ में गवर्नर द्वारा कांग्रेसी मंत्रिमंडल भंग करके स्थापित की गयी थी और विधान-सभाके विरोधी सदस्योंकी गिरफ्तारी और नज़रबन्दीके सहारे चल रही थी, अपने भ्रष्टाचार, अनाचार और अकुशल प्रशासनके कारण बुरी तरह बदनाम हो चली थी। मार्च १९४५ में अविश्वासके प्रस्तावपर औरंगजेब खाँकी सरकार भंग हो गयी और डा० खान साहबके नेतृत्वमें कांग्रेस फिरसे सत्तारूढ़ हुई। इस सरकारने सबसे पहले यह काम किया कि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ और खुदाई खिदमतगार मज़दूरोंको मुक्त कर दिया।

१९४५ में जर्मनीने मित्रराष्ट्रोंके समक्ष घुटने टेक दिये। जापानको शीघ्र परास्त करनेके लिए भारतका सहयोग ज़रूरी था। जून १९४५ में कांग्रेस कार्य-कारिणी समितिके लोग आज़ाद कर दिये गये और इसके बाद दूसरे राजनीतिक क़ैदी रिहा किये गये। स्थितिकी विवेचना करते हुए गांधीजीने कहा :

"समूचा भारत एक विशाल जेल है। वाइसराय इस जेलका एक ग़ैरजिम्मे-दार सुपरिंटेंडेंट है और इसके अधीन असंख्य जेलर और वार्डर काम करते हैं। भारतके ४० करोड़ लोग ही क़ैदी नहीं हैं, धरतीके दूसरे भागोंमें, दूसरे सुप-रिंटेन्डेन्टोंके अधीन भी बहुतसे क़ैदी रह रहे हैं।

"जेलर भी क़ैदी है। वह उतना ही क़ैदी है जितना कि कोई क़ैदी हो सकता है। निश्चय ही इस क़ैदमें एक अंतर है। मेरे विचारमें जेलरकी हालत और भी बुरी है। अगर कहीं कोई अदृश्य न्यायाधीश है जिसे हम नहीं देख पा रहे हैं परन्तु हमारे क्षणिक अस्तित्वसे जिसका अस्तित्व ज़्यादा पुख्ता है और कभी न कभी वह न्याय करेगा तो उसका निर्णय जेलरके खिलाफ़ और हमारे पक्षमें होगा।

"मैं जानता हूँ कि मुझे अहिंसक भारतकी वकालत करनेकी आवश्यकता नहीं। अगर भारतके सिक्केका एक पहलू सत्य और दूसरा अहिंसा है तो स्पष्टतः

वह सिक्का अनमोल है। सत्य और अहिंसाको हर पगपर विनयका प्रदर्शन करना ही चाहिए। सत्य और अहिंसाको सच्ची मददसे घृणा नहीं, चाहे वह कहींसे क्यों न मिले, और यदि जिनके लिए और जिनके नामपर शोषण किया जाता है उन्हींसे सहायता मिले तो क्या बात है! यदि अंग्रेज और उनके मित्र हमारी सहायता करते हैं तो यह और अच्छा है। ऐसी स्थितिमें आज़ादी और शीघ्र मिलेगी। यदि वे नहीं भी मदद करते तो भी आज़ादी तो निश्चित ही है। अंतर इतना ही है कि समय ज़्यादा लगेगा और हमारी कठिनाइयाँ बढ़ जायेंगी। लेकिन आज़ादीके लानेमें लगे हुए समय और संकटोंकी क्या चिन्ता है, विशेष रूपसे तब, जब कि हम आज़ादीको सत्य और अहिंसा द्वारा अर्जित कर रहे हैं?

कैबिनेट मिशन योजना

१९४५-४६

तीन बरस पृथक् रहनेके बाद २१ जून १९४५ को बम्बईमें गांधीजी कार्य-कारिणी समितिके सदस्योंसे मिले। समितिने तय किया कि आमंत्रित कांग्रेस सदस्य शिमला सम्मेलनमें सम्मिलित हों।

२५ जूनको शिमलामें वाइसराय भवनमें आमंत्रित सदस्य एकत्र हुए। आगतों में कांग्रेस और मुस्लिम लीगके अध्यक्ष और परिगणित जातियों और सिखोंके प्रतिनिधि भी थे। सेन्ट्रल असेंबलीमें कांग्रेसके नेता, मुस्लिम लीगके उपनेता, नेशनलिस्ट पार्टीके नेता और असेंबलीके गोरे सदस्य भी बुलाये गये थे। इनके अलावा प्रान्तीय सरकारोंके मुख्य मंत्री और निकट अतीतमें रह चुके मुख्य मंत्री-गण भी आहूत किये गये थे। हिन्दू महासभाको निमंत्रण नहीं भेजा गया था।

वाइसराय चाहते थे कि शिमला सम्मेलनमें गांधी जरूर भाग लें। गांधीजी की दलील यह थी कि प्रतिनिधियोंकी बैठकमें कोई भी व्यक्ति, चाहे वह कितना ही विख्यात क्यों न हो, यदि वह डेलीगेट नहीं है तो शरीक नहीं हो सकता। वाइसरायने कहा कि शिमला सम्मेलनके समय गांधीजी शिमलामें रहें। गांधीजी इसपर राज़ी हो गये।

लॉर्ड वैवेलने अपने संक्षिप्त उद्‌घाटन भाषणमें आशा व्यक्तकी कि सम्मेलनके परिणामस्वरूप भारतके जटिल संवैधानिक मसलोंको हल करनेमें सुविधा होगी। वाइसरायने कौशलपूर्वक उन मुद्दोंको नज़रअन्दाज़ कर दिया जिनसे प्रगतिके अव-रुद्ध होनेकी आशंका थी। वे यह सफ़ाई दे ही रहे थे कि उन्होंने कांग्रेसको कभी और कहीं हिन्दू संगठन नहीं कहा कि मि० जिनाने कांग्रेसके ख़िलाफ़ ज़हर उग-लना शुरू कर दिया। एक तकरार छिड़ गयी।

वाइसराय : मेरे प्रस्तावोंमें ऐसी कोई बात नहीं है जिनसे कांग्रेस साम्प्र-दायिक संस्था साबित होती है।

मि० जिना : यहाँपर हम सभी सम्प्रदायोंके प्रतिनिधि जुटे हैं और कांग्रेस हिन्दुओंके सिवा और किसीका प्रतिनिधित्व नहीं करती।

वाइसराय : कांग्रेस अपने सदस्योंका प्रतिनिधित्व करती है।

डा० खान साहब : जिना साहबका मतलब क्या है? मैं कांग्रेसी हूँ। मैं

हिन्दू हूँ या मुस्लिम ?

वाइसराय : इसे यहीं छोड़िये। कांग्रेस अपने सदस्योंका प्रतिनिधित्व तो करती ही है।

प्रारम्भमें वातावरण आशाजनक था। प्रश्न यह नहीं था कि भारतीयोंको कितनी सत्ता प्रदान की जाय, जैसा कि क्रिप्स मिशनके दिनोंमें था, बल्कि सत्ताको भारतीयोंमें बाँटनेका प्रश्न था। यह निश्चित हो चुका था कि प्रबन्ध समितिके नये पद हरिजन, सिख और दूसरे अल्पसंख्यकोंको दिये जायँ और इस बातपर बहस नहीं हुई कि मुसलमानोंको सवर्ण हिन्दुओंके बराबर स्थान मिले। झगड़ेका मुद्दआ यह था कि वे मुसलमान कौन होंगे ? मि० जिना अल्पसंख्यकोंको समितिमें उदार प्रतिनिधित्व देनेपर सख्त एतराज़ कर रहे थे क्योंकि उन्हें विश्वास था कि ये कांग्रेसका साथ देंगे।

२९ जूनको यह मामला बुलन्दीपर आया जब मौलाना आज़ाद और मि० जिनाने, जो अपनी-अपनी कार्यकारिणी समितियोंके निकट सम्पर्कमें थे, सूचना दी कि वे प्रबन्ध समितिकी सदस्य संख्या और संगठनके विषयमें सहमत नहीं हो पा रहे हैं। अनौपचारिक परामर्शकी सुविधाके लिए सम्मेलन १४ जुलाईतक स्थगित कर दिया गया और लार्ड वैवेलने नेताओंसे सूचियाँ माँगीं, जिनसे वे नयी प्रबंध समितिके लोगोंका चयन कर सकें।

७ जुलाईतक कांग्रेस और अन्य सभी छोटी पार्टियोंने अपनी सूचियाँ पेश कर दीं। केवल मुस्लिम लीगने इससे इनकार किया यद्यपि वह वार्ताभंग होनेसे बचनेकी कोशिश बराबर करती रही। ज्ञात हुआ कि कांग्रेसकी सूची, प्रबन्ध समितिके समग्र संगठनकी रूपरेखा है और उसमें सभी बड़ी पार्टियोंके प्रतिनिधि सम्मलित कर लिये गये हैं और उसमें मि० जिना और मुस्लिम लीगके दो और लोग भी शामिल कर लिये गये हैं जब कि कांग्रेसकी ओरसे केवल पाँच नाम हैं; जिनमेंसे दो हैं, मौलाना आज़ाद और श्री आसफ़ अली। मौलाना आज़ादने यह बात स्पष्ट कर दी कि कांग्रेसकी नामावलीमें इन दो मुसलमानोंको सिद्धान्तके कारण रखा गया है। "कांग्रेस एक राष्ट्रीय संस्था है और इसलिए स्पष्ट है कि वह ऐसे किसी षड्यंत्रमें शामिल नहीं हो सकती जो उसके राष्ट्रीय स्वरूपमें विकार उत्पन्न करे और उसकी राष्ट्रीयताके विकासमें बाधा डाले और आखिरकार कांग्रेस एक दलकी संस्था बनकर रह जाय।"

मि० जिनाने इस आश्वासनके बिना कि समितिके सभी मुस्लिम सदस्य, मुस्लिम लीगके सदस्य माने जायँगे, लीगकी ओरसे सूची देनेसे इनकार कर दिया।

फलतः १४ जुलाईको जब सम्मेलनकी बैठक हुई तो लार्ड वैवेलने उसके भंग किये जानेकी घोषणा कर दी ।

मौलाना आज़ादने अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की : "यदि जिनाकी ज़िदके कारण सम्मेलन भंग न हुआ होता तो हिन्दुस्तानकी समूची आबादीके मात्र पचीस फ़ीसदी मुसलमानोंको १४ सदस्योंकी समितिमें ७ स्थान मिले होते । यह कांग्रेसकी उदारताका उदाहरण है और इससे मुस्लिम लीगके ज़िद्दीपनपर एक प्रकाश पड़ता है। हमने जिना साहबकी इच्छा पूरी करनेकी भरसक कोशिश की लेकिन हम यह नहीं मान सकते थे कि मुस्लिम लीग ही अकेली ऐसी संस्था है, जो हिन्दुस्तानके सभी मुसलमानोंका प्रतिनिधित्व करती है । उन सूबोंमें, जहाँ मुसलमानोंका बहुमत था, लीगका मंत्रिमंडल नहीं था । सरहदी सूबेमें कांग्रेसका मन्त्रिमण्डल था । इस कारण यह दावा असत्य है कि मुस्लिम लीग सभी मुस्लिमोंका प्रतिनिधित्व करती है । वास्तवमें मुसलमानोंका एक बहुत बड़ा दल ऐसा है जिसे लीगसे कोई मतलब नहीं है ।"

गांधीजीने वाइसरायको लिखा, "मुझे यह सोचकर दुःख होता है कि जो सम्मेलन आशा और प्रसन्नताके वातावरणमें आरम्भ हुआ उसका अन्त असफलता में हुआ ।····मुझे अपने इस सन्देहको नहीं छिपाना चाहिए कि इसकी गहराईमें शायद यह बात है कि सत्ताधारी वर्गको सत्तासे अलग होना नागवार लगता है और हालमें ही कैदमें रह चुके लोगोंके हाथमें असली नियंत्रण सौंपनेका मतलब यही होता ।"

वह अनिश्चयका दौर था । २५ जुलाईको अटक पुलपर खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको सूचना दी गयी कि वे अटक ज़िलेमें प्रवेश नहीं कर सकते, हालाँकि वे अटक ज़िलेसे गुजरते हुए अबोटाबाद जा सकते हैं । उन्होंने चच क्षेत्रमें अपने मित्रोंसे मिलनेका आग्रह किया। ज़िलाधिकारी उन्हें अबोटाबाद ले गये और वहाँ उन्हें छोड़ दिया गया ।

पंजाब सरकारने अटक ज़िलेमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँपर लगी रोकपर सफ़ाई देते हुए कहा :

"अटकके ज़िलाधिकारियोंको सूचना मिली कि २५ जुलाईको खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ ज़िलेमें आनेवाले हैं और चचमें कई सार्वजनिक सभाओंमें अध्यक्षता करनेवाले हैं । उन्हें यह सूचना भी मिली थी कि उनके खिलाफ़ प्रदर्शनोंका आयोजन भी किया जा रहा है और मुस्लिम लीगके कुछ अनुयायी उन्हें काले झंडे दिखायेंगे । इन सब आयोजनोंको चलने देनेपर शांति भंग होगी यह जानकर

जिला मजिस्ट्रेटने अटक ज़िलेमें ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके प्रवेशपर रोक लगा दी और अटक ज़िलेमें उन्हें भाषण करनेकी मनाही कर दी। पेशावर छोड़नेसे पहले ही उन्हें सरकारी हुक्म मिल चुका है।

"बताया गया है कि अटक ज़िलेमें ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ भाषण करनेके इरादेसे नहीं आये, मगर ज़िला मजिस्ट्रेटको इस बातकी सूचना उस दिन शाम-तक नहीं मिली जिस दिन वे अटक पुलपर आये और उन्हें वहीं रोक लिया गया। इस बीच शांति भंगकी आशंका उत्पन्न करनेवाला एक नया कारण अवश्य पैदा हो गया।

"२५ जुलाईको ११ बजे दिनमें ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ अटक पुलपर आये और उन्हें बताया गया कि वे ज़िलेमें प्रवेश नहीं कर सकते, यद्यपि यदि वे चाहें तो ज़िलेसे होकर अबोटाबाद जा सकते हैं। उन्होंने ज़िलेसे होकर जानेसे इन-कार कर दिया और चच जानेकी ज़िद की। उन्हें आगे बढ़नेकी आज्ञा नहीं दी गयी और वे अटक पुलकी सड़कके किनारे बैठ गये हालाँकि उन्हें बताया गया कि वे नागरिक पूर्ति विभागके अधिकारियोंके तम्बूमें इंतज़ार कर सकते हैं।

"ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ गिरफ्तार नहीं किये गये, पर वे पुलपर डटे रहे। उसी रोज़ शामको ज़िला मजिस्ट्रेटने भारत रक्षा नियमकी धारा २६ (४) के अनुसार उन्हें अटक ज़िलेसे दूर करनेका फ़ैसला लिया।

"दूसरे रोज़ ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ ट्रेनसे कैम्पबेलपुर पहुँच गये। अटक ज़िलेमें उनके प्रवेशपर रोक जारी थी और उन्होंने आगे जानेके लिए कोई व्यवस्था नहीं की थी। अतः ज़िला अधिकारियोंने उनके अबोटाबाद जानेकी व्यवस्था कर दी। उन्हें सैनिक लॉरीमें एक पुलिस सब-इंसपेक्टरके साथ अबोटा-बाद पहुँचाया गया।

"ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके इस बयानकी पंजाब सरकार कोई विवेचना नहीं करना चाहती कि अटक ज़िलेमें भाषण करनेका उनका इरादा नहीं था। इसके बावजूद चचके इलाकेमें सार्वजनिक सभाकी तैयारी हो चुकी थी और ज़िला मजिस्ट्रेटको विश्वस्त सूत्रोंसे सूचना मिली थी कि विरोधी प्रदर्शनोंका भी इंतज़ाम हो चुका है। एक पड़ोसी राज्यमें हुई दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओंसे स्पष्ट है कि एक राजनीतिक पार्टीके प्रदर्शनोंका विरोध जब दूसरी राजनीतिक पार्टी करनेपर उतारू हो जाती है तो कितना बड़ा ख़तरा पैदा हो जाता है।"

अगस्तमें जम्मू और कश्मीर राज्यमें, शिवपुरमें नेशनल कान्फरेंसकी बैठकके ख़िलाफ़, जिसमें ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ और नेहरू शामिल हो रहे थे, प्रदर्शन

हुए। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने रुष्ट होनेके बजाय प्रदर्शनकारियोंको बधाइयाँ दीं क्योंकि अबतक तो कश्मीरी लोग अपनी छायातकसे डरते चले आ रहे थे।

२६ जुलाईको, जब कि शिमला सम्मेलनके बाद एक पखवाड़ा भी नहीं गुजरा था, ग्रेट ब्रिटेनमें मजदूर दलकी सरकार बनी और इसके दो सप्ताह बाद जापानके पतनसे युद्धका अंत भी हो गया। २१ अगस्तको घोषणा हुई कि केन्द्रीय और राज्यीय विधानसभाओंके लिए शीघ्रसे शीघ्र आम चुनाव होंगे और मश्विरा करनेके लिए वाइसराय लंदन जा रहे हैं। १९ सितम्बरको इंगलैंडमें प्रधान मंत्रीने और भारतमें वाइसरायने रेडियोपर भाषण करते हुए कहा कि ब्रिटिश सरकार यथासंभव शीघ्र चुनावोंके बाद विधानसभाओंके प्रतिनिधियोंकी रायसे संविधान निर्माण करनेवाली समिति गठित करेगी और इस बीच एक संधिके मसविदेपर विचार करेगी जो ग्रेट ब्रिटेन और भारतके बीच संपन्न होगी। यह भी घोषणा की गयी कि चुनावोंके परिणामोंके प्रगट होनेके तुरन्त बाद प्रबन्ध समिति गठित करनेके लिए वाइसरायको अधिकृत कर दिया गया है।

पूनामें १२ सितम्बरसे १८ सितम्बरतक कार्यकारिणी समितिकी बैठक हुई। २१ सितम्बरसे यह बैठक बम्बईमें बुलायी गयी। मौलाना आजाद अध्यक्ष थे। अधिकांश बैठकोंमें गांधीजी उपस्थित थे। अनेक प्रस्ताव पारित हुए। संयुक्त भारत सम्बन्धी प्रस्ताव यों रहा :

"अगस्त १९४२ के प्रस्तावके अनुसार भारत सरकारके लिए संविधानका निर्माण प्रजातांत्रिक रूपसे गठित संविधान-सभा करेगी और यह संविधान जनताके हर वर्गके लिए स्वीकार्य होगा। कांग्रेसकी दृष्टिमें इस संविधानका स्वरूप संघीय होना चाहिए और शेष अधिकार इसकी इकाइयोंमें निहित होने चाहिए। कराची कांग्रेस द्वारा निर्धारित और परिवर्धित मौलिक अधिकार इस संविधानका अविभाज्य अंग होना चाहिए और इसके अतिरिक्त संयुक्त भारत या भारतीय परिसंघसे किसी भी अवयव राज्य या प्रादेशिक इकाईका पृथक्करण कांग्रेसको अमान्य होगा। कांग्रेस, भारतकी आजादी और एकताके लिए कटिबद्ध है और इस एकतामें किसी प्रकारकी टूट—खास तौरसे आजके दौरमें, जब कि सारी दुनियाके लोग बृहत्से बृहत्तर संघोंकी कल्पना कर रहे हैं, सभी सम्बद्ध लोगोंके लिए हानिकारक होगी और इस बातकी कल्पना ही अत्यधिक पीड़ादायक है।"

साथ ही समितिने यह भी घोषणा की कि 'किसी भी प्रादेशिक इकाईके अवामको अपनी घोषित और निश्चित इच्छाके विपरीत भारतीय संघमें जबरन रखनेकी बात तो कांग्रेस सोच भी नहीं सकती' इस सिद्धांतको मानते हुए

ऐसी हालतें पैदा करनेकी कोशिश की जानी चाहिए जिनमें सभी इकाइयोंमें समान और सहयोगात्मक राष्ट्रीय जीवनका विकास किया जा सके। "इस सिद्धांतकी स्वीकृतिके साथ ही यह भी तय है कि ऐसे परिवर्तन न किये जायें जिनके फल-स्वरूप नयी समस्याएँ उत्पन्न हों और किसी क्षेत्रविशेषके लिए महत्त्वपूर्ण जन-समूहपर दबाव डाला जाय। एक सशक्त राष्ट्रीय संघीय सरकारके अन्तर्गत प्रत्येक प्रादेशिक इकाईको पूर्णतम संभव स्वशासनका अधिकार मिलना चाहिए।"

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका अधिवेशन बम्बईमें २१ सितम्बरसे शुरू हुआ। वाइसरायके भाषणपर प्रस्ताव पेश करते हुए सरदार पटेलने सरकारी सुझावोंको 'अस्पष्ट, अपर्याप्त और असंतोषजनक' बताया। प्रस्तावमें केन्द्रीय असेम्बलीके लिए संकीर्ण मताधिकार और अशुद्धियोंसे भरी मतदाताओंकी सूची-की आलोचना की गयी। राजनीतिक पार्टियों और संगठनोंपरसे हर प्रकारकी पाबन्दियों, अयोग्यताओं और बन्धनोंको हटा लेनेकी मांग की गयी; कहा गया कि राजनीतिक गतिविधियोंके लिए गिरफ्तार किया गया प्रत्येक व्यक्ति रिहा किया जाय। लार्ड वैवेलके प्रस्तावोंकी निंदा की गयी क्योंकि उनके अनुसार एक भ्रष्ट और अयोग्य प्रशासनके हाथोंमें सत्ता बनी रह गयी और इसे सत्तामें बने रहनेकी इच्छाका एक प्रमाण माना गया। इसके बावजूद यह घोषित किया गया कि सत्ता हस्तांतरणके मसलेपर जनताकी आकांक्षाओंको मुखर करनेके लिए कांग्रेस चुनावोंमें भाग लेगी।

कार्यकारिणी समितिकी अधिकांश बैठकोंमें गांधीजी मौजूद थे पर उन्होंने अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीमें भाग नहीं लिया। उनका स्वास्थ्य अच्छा नहीं चल रहा था। खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँ ज्यादातर गांधीके साथ रहा करते थे। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीमें उपस्थित कर्नाटकके प्रतिनिधियोंको सम्बोधित करते हुए खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कहा कि मानवताकी सेवा, ईश्वरकी सेवा है और यह अहिंसाके तरीक़ोंसे ही हो सकती है। अहिंसा बहुत बड़ा फ़लसफ़ा है और अहिंसाके द्वारा ही हिंसासे प्रभावकारी ढंगसे लड़ा जा सकता है। सीमा-प्रान्तको दोनों तरीक़ोंका अनुभव है। अपने अनुभवसे हमने यही नसीहत पायी कि जहाँ हिंसा असफल हो गयी, वहीं अहिंसासे बड़ी-बड़ी सफलताएँ प्राप्त हुईं। जब कि हिंसासे अपने ही साथियोंकी हानि हुई और हिंसाको आसानीसे कुचल भी दिया गया, मगर अहिंसाको दबानेका हर उपाय न केवल असफल हुआ बल्कि उसने अहिंसाके हाथोंको और मजबूत कर दिया।

१९४२ के आन्दोलनका उल्लेख करते हुए खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाने कहा :

"इस जनविप्लवसे सिद्ध हो गया कि सैनिक प्रवृत्ति केवल सीमान्तके निवासियोंमें ही नहीं है बल्कि भारतीयोंके प्रत्येक वर्गमें भी है। लेकिन थोड़ा अंतर भी है। सीमांतके लोग केवल सैनिक प्रवृत्तिके नहीं हैं बल्कि उनके साथ हिंसाके साधन भी हैं और इसलिए वे ज्यादा हिंसा करनेमें समर्थ हैं। लेकिन हिंसक घटनाएँ सीमान्त राज्यकी अपेक्षा दूसरे स्थानोंपर अधिक होती है। जब मेरे प्रान्तके लोगोंने मुझसे पूछा कि हम लोग क्यों हिंसा न करें तो मैंने उनसे कहा कि हिंसाका सहारा लेकर आप लोग अपने ही साथियोंके जीवनको खतरेमें डालेंगे। यही नहीं, मुझे विश्वास है कि हिंसासे कोई उपलब्धि नहीं हो सकेगी और हिंसा निश्चय ही कुचल दी जायगी। अंग्रेजोंके हाथोंसे आज़ादीको अहिंसाके द्वारा ही छीना जा सकता है।

"अत्यंत उग्र हिंसाको भी अहिंसाकी अमित शक्ति द्वारा जीता जा सकता है। अंग्रेज, हिंसाको क्रूरतापूर्वक दबा सकते हैं लेकिन अहिंसासे वे इतने हतप्रभ हैं कि जनताकी चेतनाको कुचलनेका उनका हर प्रयास विफल हो रहा है। उन्होंने जर्मनी और जापानका दृष्टान्त दिया जो शस्त्रबलके द्वारा भी कोई सफलता नहीं प्राप्त कर सके। हिंसाकी यह सभ्यता चलती रही तो एक दिन संसारका अंत हो जायगा। हमें हर मूल्यपर मानवताकी रक्षा करनी होगी। इसके लिए एक नयी शक्ति है और उसका नाम है अहिंसा।"

हिन्दू-मुस्लिम सवालपर बोलते हुए उन्होंने कहा कि मुसलमान हिन्दुओंके भाईबंद हैं। हिन्दू और मुसलमानोंको एकमत होकर अंग्रेजोंको भगानेकी कोशिश करनी चाहिए जो चालाकीसे फूटके बीजोंको इस प्रकार बो रहे हैं कि बच्चेतक हिन्दू और मुस्लिम भावनासे ग्रस्त हैं।

उन्होंने इस बातपर बड़ा हर्ष व्यक्त किया कि देशके इस भागमें युवक और युवतियाँतक देशके काममें बहुत उत्साहसे संलग्न हैं। सचमुच स्त्रियोंको इस दिशामें बहुत बड़ा योगदान करना है। "सीमान्त प्रदेशमें हम स्त्रियोंको सम्मान तो देते हैं लेकिन उन्हें बराबर मौक़ा नहीं देते। लेकिन हमारे यहाँ स्त्रियाँ अब धीरे-धीरे आगे आ रही हैं और वे मर्दोंके साथ कंधेसे कंधा भिड़ाकर संघर्ष करेंगी।"

गांधीजीकी बंगाल यात्राके अवसरपर कलकत्तामें दिसम्बरके पहले सप्ताहमें कार्यकारिणी समितिकी बैठक निर्धारित कर दी गयी। बहसका प्रधान विषय चुनावका घोषणापत्र रखा गया। गांधीजीने कहा कि चुनावकी उत्तम तैयारी यह है कि कांग्रेसके आंतरिक मतभेदोंका अंत कर दिया जाय। कांग्रेसने देशमें अहिंसा-

की नीति द्वारा अपना अद्वितीय स्थान बनाया है। यह हैसियत इसी नीतिको विकसित करते जानेसे बढ़ायी जा सकती है। इस दृष्टिसे कांग्रेस आगे बढ़नेके बजाय पीछे हट रही है। १९४२ में कांग्रेसके नेताओंकी गिरफ़्तारीके बाद जनताने जो कुछ भी किया उसके संबंधमें मैंने ऐसा एक भी शब्द नहीं कहा जिसे निंदाके अर्थमें लिया जा सके। लेकिन मैं समझता हूँ, कांग्रेस इस विषयमें मौन नहीं रह सकती। इसके अतिरिक्त चुनावके खर्चका प्रश्न है। उन्होंने कहा कि कांग्रेसकी वास्तविक विजय तो तब मानी जायगी जब वह खर्च किये बग़ैर चुनाव जीत ले। इस उसूलपर दृढ़ रहनेसे पराजय हो जाए, तो भी चिंताकी बात नहीं है। कार्यकारिणी समितिने उनके सुझावोंको स्वीकार किया।

कलकत्तामें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँने गांधीजीसे सीमांत प्रदेशके बारेमें बात की और चुनावमें कार्य करनेमें अपनी अनिच्छा व्यक्त की, जिसका गांधीजीने समर्थन किया। कांग्रेस संसदीय समिति, अपनी पूरी कोशिश करके भी उन्हें चुनाव अभियानमें भाग लेनेको विवश नहीं कर सकी। वे अपने निश्चयपर अडिग रहे और संगठनके कामसे अपने प्रदेशके दौरेपर चले गये। उन्होंने सरकारी संगठनका भी निकटसे अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि वह खुदाई खिदमतगारोंके हितके विरोधमें कार्यरत है। पेशावरके इस्लामिया कालेजके छात्र, सीमांत प्रदेशके स्कूलों और कालेजोंके छात्र और पंजाब, अलीगढ़ आदि कई स्थानोंके छात्र सीमांतमें मुस्लिम लीगके चुनाव-प्रचारार्थ बुलाये गये। ब्रिटिश अधिकारियोंकी प्रेरणासे सीमान्त प्रदेशमें कुछ स्कूल-कालेज बंद कर दिये गये ताकि छात्र चुनाव-प्रचारोंमें भाग ले सकें। अनेक लड़कियोंने भी चुनाव-प्रचारमें भाग लिया। कुछ अंग्रेज महिलाएँ पठानोंके रसिक स्वभावसे लाभ उठानेके लिए पठानोंके बीच लीगका प्रचार करनेमें संलग्न हो गयीं। पंजाब और सीमांतकी अराजनीतिक मुस्लिम संस्थाओंको भी लीगके प्रचारमें नियुक्त किया गया।

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ कहते हैं, "जब मैंने अंग्रेज महिलाओं और पुरुषोंको चुनाव-प्रचार करते देखा तो मेरा विचार बदल गया और मैं भी चुनाव अभियान में कूद पड़ा। हिन्दुस्तान-पाकिस्तान, हिन्दू-मुसलमान, इस्लाम-काफ़िर इन बुनियादोंपर चुनाव लड़ा जा रहा था।" लीगके लोग मतदाताओंसे पूछते थे, "आपको मंदिर पसंद है या मस्जिद ?" पख़्तून हिन्दुस्तानके मुसलमानोंकी तरह नहीं हैं। उनमें राजनीतिक चेतना है और उन्हें कोरे नारोंसे नहीं बरग़लाया जा सकता। 'इस्लाम खतरेमें है' कह देनेसे वे उबल नहीं पड़ते। उन्हें मालूम है कि इस्लामका मतलब क्या है ? राष्ट्रीय आन्दोलनमें सक्रिय सहयोग और जनसेवाके कार्यो-

से उनकी राजनीतिक चेतना जाग्रत है।

"मतदानके समय ब्रिटिश अधिकारियों और उनके पिट्ठुओंने अपना सारा जोर मुस्लिम लीगके पक्षमें लगा दिया और वे खुदाई खिदमतगारोंके खिलाफ़ काम करते रहे। लेकिन ईश्वरकी कृपासे, मुस्लिम लीग हारी और हमारी पार्टी जीत गयी।

"चुनाव-प्रचारमें अंग्रेज अधिकारियों और उनकी नौकरशाहीने मुस्लिम लीग-के कार्यकर्ताओंको कहीं पीछे छोड़ दिया था। यह हमारे लिए इतना नागवार गुज़रा कि हमने मंत्रिमंडलका गठन करनेसे इनकार कर दिया। हमने तय किया कि नौकरीके नियमोंकी उपेक्षा करते हुए जिन अधिकारियोंने चुनावमें भाग लिया है, उनकी जाँच करने और उन्हें दंडित करनेका अधिकार हमें नहीं मिलता तो हम मंत्रिमंडल गठित नहीं करेंगे। जब डा० खान साहबको हमारे निर्णयकी जान-कारी हुई तो उन्होंने इसकी सूचना सरदार पटेलको दी। सरदार पटेलने मौलाना आज़ादको मामला तय करनेके लिए नियुक्त किया। मौलाना साहब दिल्लीसे वाइसरायका एक पत्र ले आये जिसमें उन्होंने अस्पष्ट शब्दोंमें हमारी शर्तें मंजूर की थीं। हमने इस शर्तपर मंत्रिमंडल गठित करना स्वीकार किया कि सारी सत्ता केन्द्रीय समितिमें निहित होगी और मंत्रीगण उसके परामर्शसे काम करेंगे।

कांग्रेसको वंगाल, पंजाब और सिन्धको छोड़कर सभी प्रांतोंमें पूर्ण बहुमत प्राप्त हो गया। बंगालमें मुस्लिम लीग सबसे बड़ी पार्टी थी और उसने लगभग आधी सीटोंपर कब्जा कर लिया। पंजाबमें संघवादी पार्टी और मुस्लिम लीगमें लगभग बराबर-बराबरका संतुलन था। सिन्धमें मुस्लिम लीगने मतपत्र सर्वाधिक प्राप्त किये लेकिन उसे बहुमत नहीं प्राप्त हुआ। सिंधका शासन लीग गवर्नरकी सहायतासे करने लगी। इन तीन प्रांतोंमें मुस्लिम आबादीका बहुमत था और मुस्लिम लीगने धार्मिक भावनाओं और सांप्रदायिक भावनाओंको भड़कानेवाले प्रचार किये थे। इन प्रचारोंसे वातावरण इतना विषाक्त हो उठा था कि कांग्रेस या किसी दूसरी पार्टीके टिकटसे खड़े मुसलमान उम्मीदवारोंको कोई सुननेतक-को तैयार नहीं होता था। सीमांत प्रदेशमें, जहाँ कि मुसलमानोंकी भी संख्या सर्वाधिक थी, मुस्लिम लीगके सारे प्रयत्न व्यर्थ हुए और कांग्रेस मंत्रिमंडल गठित करनेमें समर्थ हुई। सीमांत प्रदेशको छोड़कर अन्य सभी प्रांतोंमें मुस्लिम लीगने प्रांतीय धारासभाओं और सेंट्रल असेंबलीमें सभी मुस्लिम सीटोंपर जीत हासिल की, परन्तु सीमान्त प्रदेशमें कांग्रेसने केवल बहुमत ही नहीं प्राप्त किया बल्कि

मुस्लिम सीटोंमेंसे भी ज्यादा सीटें उसीको मिलीं।

इस प्रकार वाइसरायकी प्रबन्ध समितिके पुनर्गठन और संविधान-निर्माण-कारिणी संस्थाके गठनकी भूमिका तैयार हुई जिसमें सभी बड़ी पार्टियोंका सहयोग अपेक्षित था। दिसम्बर १९४५ में वाइसरायने ब्रिटेनकी सरकारको एक पत्र लिखा था जिसमें भारतकी बदलती हुई हालतोंमें, चुनावकी प्रगतिका और भारतके सभी वर्गोंमें ब्रिटिश सरकारकी बढ़ती हुई अलोकप्रियताका जिक्र था। उन्होंने उसमें ब्रिटेनके मंत्रिमंडलको सूचित किया था कि उसे भविष्यमें कभी न कभी कांग्रेससे समझौता करना ही पड़ेगा। उसमें यह भी लिखा था कि चुनावके बाद कांग्रेस अपनी मांगोंको और भी उग्रताके साथ पेश करनेमें समर्थ होगी और इस बीच यदि जिन्नको समाप्त करनेके लिए प्रयत्न नहीं किये गये तो बादमें उनकी मांगोंका विरोध करना कठिनतर हो जायगा। कांग्रेस तब 'सीधी कारवाई' पर भी उतारू हो सकती है और ऐसी स्थितिमें सरकारका समर्थक कोई नहीं रह जायगा—भारतके राजा लोग भी सरकारका समर्थन नहीं कर सकेंगे। उसने सेनातक प्रभावित है। अंग्रेजोंकी भारतीय नौसेनाके गदरका भी एक असर हुआ है। नेताजी सुभाष बोसके नेतृत्वमें भारतीय राष्ट्रीय सेनाके जिन सैनिकोंने बर्मामें अंग्रेजोंसे युद्ध किया है, उनके विरुद्ध मुक़दमे कायम किये गये हैं परन्तु भारतकी जनता उनकी पूजा कर रही है। भारतमें व्याप्त भावनाओंको समझते हुए, ब्रिटिश सरकारने भारतके मामलेमें समझौता करनेके काममें अकेले वाइसरायको व्यस्त रखना उचित नहीं समझा। १९ फरवरी १९४६ को ब्रिटेनकी पार्लमेंटमें घोषणा की गयी कि शीघ्र ही एक शिष्टमंडल भारत भेजा जायगा, जिसमें कैबिनेट स्तरके तीन मंत्री होंगे। यह शिष्टमंडल वाइसराय द्वारा सितम्बर १९४५ में की गयी घोषणामें निहित योजनाको क्रियान्वित करेगा। इसके बाद ही, प्रधान मन्त्री एटली ने हाउस ऑव कामन्समें बहसके बीच एक सारगर्भित भाषण किया। उन्होंने कहा : "भारतको यह तय कर लेना है कि उसके भावी संविधानका स्वरूप क्या होगा। अगर भारत आज़ाद होना पसंद करता है तो उसे ऐसा चाहनेका अधिकार है।''' ''हम लोग अल्पसंख्यकोंके अधिकारोंके बारेमें बहुत जागरूक हैं लेकिन हम बहुमतकी प्रगतिके खिलाफ़ अल्पमतको विशेषाधिकारका प्रयोग करनेकी इजाजत नहीं दे सकते।" उन्होंने आगे कहा कि हम भारतीयोंमें मौजूद मतभेद और विरोधपर बल नहीं दे सकते, क्योंकि तमाम मतभेदों और विरोधोंके बावजूद सभी भारतीय आजादीके बारेमें एकमत हैं। उन्होंने यह खुलकर स्वीकार किया कि भारतीयोंकी राष्ट्रीयताकी भावना दिन-प्रतिदिन बलवती होती जा रही है और

अब यह भावना उस सेनातकमें घर कर गयी है जिसने युद्धमें शानदार सेवा की है। उन्होंने घोषणा की कि कैबिनेट मिशनकी भारत यात्रा कामयाबीके आत्म-विश्वासके साथ होनेवाली है।

२३ मार्च १९४६ को कैबिनेट मिशनके तीनों सदस्य—लार्ड पैथिक लारेंस, सर स्टैफर्ड क्रिप्स और लॉर्ड अलेक्जेंडर भारत पहुँचे। अप्रैलके पूर्वार्धतक मिशन के सदस्य, सभी दलों और वर्गोंके भारतीय प्रतिनिधियोंसे भेंट-वातमें संलग्न रहे। अपनी भेंट-वार्ताओंके परिणामोंकी समीक्षामें मिशनके सदस्योंने कुछ दिन व्यतीत किये। मिशनने २७ अप्रैलको कांग्रेस और मुस्लिम लीगके अध्यक्षोंका त्रिपक्षीय सम्मेलन आयोजित किया। इसका उद्देश्य कांग्रेस और मुस्लिम लीगमें समझौता करानेका एक और प्रयास था। निम्नलिखित बुनियादी सिद्धांतोंके आधारपर वार्ता हुई :

"ब्रिटिश भारतका भावी संवैधानिक स्वरूप इस प्रकारका होगा : संघीय सरकारके अधिकारमें निम्नलिखित बातें होंगी :—विदेशी मामले, प्रतिरक्षा और संचार। प्रांतोंके दो समूह होंगे : एक समूहमें मुस्लिम बहुमतवाले प्रांत होंगे और दूसरेमें हिन्दू बहुमतवाले। ये अन्य उन सभी विषयोंपर कार्यवाही करेंगे, जिन्हें अपने-अपने समूहके प्रांतके लोग समवेत रूपसे करना चाहेंगे। प्रांतीय सरकारें अन्य सभी विषयोंपर कार्यवाही करेंगी और उनमें सभी शेष प्रभुसत्ता निहित होगी।"

शिमलामें ५ मईसे १२ मईतक सम्मेलन हुआ। इस समय ११ प्रान्तोंमेंसे ५ प्रान्तोंमें मुस्लिम आबादीकी अधिकता थी। ये प्रांत थे : बलूचिस्तान, उत्तर-पश्चिम सीमांत प्रदेश, पंजाब, सिन्ध और बङ्गाल। इनकी कुल आबादी नौ करोड़से कुछ ऊपर थी जब कि शेष ७ हिन्दू बहुमतके प्रान्तोंकी कुल आबादी १९ करोड़ थी। कैबिनेट मिशनने सम्मेलनके दरम्यान सदस्योंके समक्ष कांग्रेस और मुस्लिम लीगमें समझौतेके कुछ सुझाव पेश किये। उनमेंसे एक था : "संघीय विधानसभामें प्रतिनिधित्वकी बराबरी·····मुस्लिम बहुमतके प्रांतोंसे और हिन्दू बहुमतके प्रांतोंसे, भले ही वे समूहोंके रूपमें संगठित हुए हों या नहीं। विधान-सभाके अनुपातमें ही संघीय सरकार संगठित होगी।"

कांग्रेसके चार प्रतिनिधि : सर्वश्री आज़ाद, नेहरू, पटेल और खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ सम्मेलनमें सम्मिलित हुए। कांग्रेस कार्यकारिणी समिति और कैबि-नेट मिशनके आग्रहपर गांधीजी भी उसमें सम्मिलित हुए। १२ मईकी प्रार्थना-सभाके भाषणमें गांधीजीने शिमला-वार्ताकी प्रगतिका संकेत दिया। झूठी अफ़वाहों-

का जिक्र करते हुए गांधीजीने कहा कि कैबिनेट मिशन बिना किसी परिणामपर पहुँचे हुए लौट रहा है, और शिमला सम्मेलनसे भारतीय नेता पिछले सम्मेलनकी तरह खाली हाथ लौट रहे हैं और यह सम्मेलन पिछले सालके सम्मेलन जैसा नहीं है। कैबिनेट मिशन इस बातकी जाँचके लिए आया है कि भारत छोड़ने और भारतसे अपनी सत्ता हटा लेनेके ब्रिटिश निर्णयको किस प्रकार क्रियान्वित किया जा सकता है। मिशनका यह कर्त्तव्य है कि कांग्रेस और मुस्लिम लीगमें समझौता करानेका भरसक प्रयत्न करे। सम्मेलन इसी उद्देश्यसे हो रहा है। यदि सम्मेलन असफल हो जाय तो भी किसीको हताश होनेकी आवश्यकता नहीं है। ईश्वरपर भरोसा करनेवालोंको सहनशीलता और साहसी होना चाहिए। मान लीजिए कि जनताको धोखा दिया जा रहा है, तो जनताको चाहिए कि विरोधमें खड़ी हो जाय और परिणामोंको साहसके साथ भुगते। यह मान लेनेके लिए कोई कारण नहीं है कि कैबिनेट मिशन जनताको धोखा देनेके इरादेसे भारत आया है। वे एक व्यवस्था स्थापित करके वापस जानेकी कोशिशमें हैं ताकि भारतीय लोग शांतिपूर्वक रह सकें। परेशान होनेकी कोई बात नहीं है। आदमीको अपना कर्त्तव्य करना चाहिए। ईश्वरने इसीलिए उसे शक्ति और विवेक दिया है।

कहीं अपने भविष्यकी चिन्तामें लोग हरिजनोंके प्रति अपना कर्तव्य न भूल जायँ, जिन्हें समाजके निम्नतम स्तरपर डाल दिया गया है, गांधीजीने खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँको शिमलामें हरिजनोंकी बस्तियोंका मुआइना करनेके लिए भेजा। बादशाह खानने मुआइना करके जो जानकारी गांधीजीको दी उससे उनके मनमें क्रोध और पीड़ाकी भावनाओंका साथ-साथ उदय हुआ। गांधीजीने जो कुछ सुन रखा था उसकी पुष्टि बादशाह खानने कर दी। बादशाह खानने बताया कि जिन घरोंमें हरिजन रहनेको विवश हैं वे पशुओंके रहने योग्य भी नहीं हैं। कुछ लोग बादशाह खानको बहुत तड़के अपनी लंबी दर्दभरी कहानी सुनाने आये। शिमलाके लोगोंका यह कर्तव्य है कि वे उनकी शिकायतोंको दूर करें।

शिमला सम्मेलनके बारेमें खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँने कहा है :

"सम्मेलनके दूसरे दिन हम लोगोंने कैबिनेट मिशनसे यह पूछना निश्चित किया कि क्या अंग्रेज अब भारतको आज़ादी देने और भारतसे अपनी फ़ौज हटानेके लिए तैयार हैं? हम इस बातके लिए बहुत सतर्क थे कि कहीं बहसके दौरान इस महत्त्वपूर्ण प्रश्नको भटका न दिया जाय। जवाहरलाल नेहरूने सम्मेलनके प्रारम्भमें ही यह सवाल पूछ दिया। लॉर्ड वैवेलने कहा कि हम भारत छोड़नेको तैयार हैं लेकिन हम भारत किसे दें? कांग्रेस और लीगको पहले समझौता

करना होगा। नेहरूजीने कहा, 'भारत मुसलमानोंको दीजिए, लेकिन आप भारत छोड़िए।' जिना साहब नेहरूजीकी ईमानदारीसे बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने कहा कि हम मतभेदोंको आपसमें तय कर लेंगे। सम्मेलन स्थगित कर दिया गया। नेहरूजी और जिना साहब बात करनेके लिए दूसरे कमरेमें चले गये। एक-दो घंटे बाद वे दोनों एक प्रस्तावके साथ बाहर आये कि कांग्रेस और मुस्लिम लीगके मतभेदोंको मिटानेके लिए एक तीनसदस्यीय समिति गठित की जाय। तीसरे दिन जब लार्ड पैथिक लारेन्सने जिनासे बातचीतके परिणामकी तहकीकात की तो मि० जिनाने सारी बातोंसे इनकार कर दिया। मैंने अब्दुल रब निश्तर को अलग बुलाया और उनसे यह प्रार्थना की कि आप जिना साहबको समझाइए कि वे निर्णयसे पीछे न हटें क्योंकि गांधीजीने, मेरी मौजूदगीमें कांग्रेस शिष्टमंडलसे कहा है कि मुसलमान लोग जो भी माँगें एकमत होकर करें, वे सब मान ली जायँ। मि० निश्तर गये और जिना साहबके पीछे काफी देरतक खड़े रहे कि उनसे बात करें, परन्तु मि० जिनाने उनकी ओर देखातक नहीं। बातचीत असफल रही। असलमें, अंग्रेज यह नहीं चाहते कि हिन्दू और मुसलमान एक हों, और वे भारतको विभाजित करनेके पक्षमें हैं।"

कैबिनेट मिशन, वाइसराय और आमंत्रित लोग दिल्ली आये। हरिजनोंकी बस्तीमें वापस पहुँचकर गांधीजीको आनन्द हुआ। आनेके पहले ही दिनसे उनकी सार्वजनिक प्रार्थना सभा शुरू हो गयी। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने कुरानसे प्रार्थना की। उन्होंने कहा कि प्रार्थना चाहे जिस धर्म, भाषा या जिस किसी रूपमें भी हो, एक ही ईश्वरतक पहुँचती है और मानवको यह शिक्षा देती है कि सारा मानवसमाज एक परिवार है और प्रत्येक मनुष्यको हर दूसरे मनुष्यसे प्रेम करना चाहिए।

बादशाह खानकी ही बातोंकी मानों अनुगूँजके रूपमें गांधीजीने कहा कि यह एक सच्चे धर्मका अपमान है कि आदमी अपने धर्मको दूसरोंके धर्मसे श्रेष्ठ समझे। ईश्वर सर्वव्यापी है और सभी धर्म उसी एकमात्र ईश्वरकी आराधना करते हैं। और जो लोग मूर्तियोंकी पूजा करते हैं वे वस्तुतः उस पत्थरको नहीं पूजते जिससे ईश्वरकी प्रतिमा बनी होती है, वरन् उस ईश्वरको पूजते हैं जो उस पत्थरमें रहता है। सभी धर्म एक ही पेड़के पत्ते हैं। किसी भी पेड़के दो पत्ते एक जैसे नहीं होते परन्तु उन पत्तोंमें कोई विरोध नहीं होता और उन शाखाओंमें भी कोई विरोध नहीं होता, जिनपर पत्ते बढ़ते हैं। इसी प्रकार सृष्टिमें विविधताके होते हुए भी एक अदृश्य एकता है।

कैबिनेट मिशनकी निकट भविष्यमें होनेवाली घोषणाओंको लेकर अफ़वाहों और अटकलोंका बाज़ार गर्म था। लोग गांधीजीसे पूछते थे कि क्या घोषणा होगी। उन्हें भी यह मालूम नहीं था, अटकल वे लगाते नहीं थे। इस बातपर विचार करनेसे कोई लाभ नहीं था कि घोषणामें क्या हो सकता है। जिस व्यक्ति की प्रार्थनामें निष्ठा हो वह और कर ही क्या सकता है! बुरा-भला सबको चौबीस घण्टोंके अन्दर मालूम हो जायगा और फिर जो चाहे उसे स्वीकार करे और जो चाहे अस्वीकार कर दे। लोग इधर-उधर भटकनेकी बजाय अपनी अन्तरात्माको टटोलें कि दोनों सूरतोंमें अपना कर्तव्य क्या होना चाहिए।

कैबिनेट मिशनने घोषणा कर दी कि शिमला सम्मेलन असफल रहा। १६ मई को मिशनने अपनी योजना प्रकाशित कर दी, जिसके दो भाग थे: संविधान-निर्माणकारिणी संस्थाके लिए एक दीर्घकालीन योजना और सभी बड़ी राजनीतिक पार्टियोंके सहयोगसे अन्तरिम सरकारके गठनके लिए तात्कालिक योजना। मुस्लिम लीगकी पाकिस्तानकी मांगको अस्वीकृत करते हुए मिशनने उसके स्थान-पर अपनी त्रिसूत्री योजना प्रस्तुत की, जिसका पूर्वाभास शिमलामें मिशन द्वारा पेश किये गये 'समझौतेके सुझावों' से मिल चुका था। सर्वोच्च सूत्रके अंतर्गत राजशासित राज्यों सहित ब्रिटिश भारतका एक संघ होगा जो विदेशी मामलों, प्रतिरक्षा और संचारका कार्य करेगा। शेष अधिकार निचले सूत्रमें निहित होंगे। इस सूत्रके अन्तर्गत प्रान्त और राज्य होंगे। बिचले सूत्रके अन्तर्गत प्रान्तोंको स्वतंत्रता दी गयी कि वे चाहें तो स्वतन्त्र रहें या विधानसभाओं और कार्यकारिणियोंके साथ मिलकर समूह गठित करें।

इस योजना द्वारा देशको तीन भागों—'क', 'ख' और 'ग' में विभाजित कर दिया गया। मिशनका ख़याल था कि इससे अल्पमतके लोगोंमें ज्यादा सुरक्षा की भावना उत्पन्न होगी। 'ख' भागमें पंजाब, उत्तर-पश्चिम सीमान्त और बलूचिस्तान होंगे। यह मुस्लिमबहुल क्षेत्र होगा। भाग 'ग' में, जिसमें बंगाल और आसाम थे, मुसलमान शेष लोगोंसे कुछ ज्यादा होंगे। कैबिनेट मिशनके विचारमें, इस व्यवस्थासे मुस्लिम अल्पमतकी पूरी सुरक्षा होगी और लीगकी सारी जायज़ आशंकाएँ निर्मूल हो जायेंगी।

गांधीजीने प्रार्थना-सभामें इस मसविदेपर टीका करते हुए कहा: "यह कोई वरदान नहीं है। कैबिनेट मिशन और वाइसरायने पार्टियोंको निकट लाने-का प्रयत्न किया परन्तु वे उनके मतभेदोंको दूर न कर सके। अतः उन्होंने वह व्यवस्था दी है जिसे संविधान सभाको स्वीकार कर लेना चाहिए। संविधान

सभा इस व्यवस्थामें हेर-फेर करने, सुधार करने या इसे अस्वीकार करनेके लिए स्वतन्त्र होगी। इन सिफारिशोंमें 'इसे लो या छोड़ दो' जैसी कोई बात नहीं है। अगर इनमें किसी प्रकारके प्रतिबन्ध होंगे, तो इसका अर्थ यह होगा कि संविधान सभा पूर्ण प्रभुसत्तासंपन्न संस्था नहीं है, जो आज़ाद भारतके लिए संविधान बनाने के लिए स्वतन्त्र है। इस प्रकार मिशनने केन्द्रके लिए, कुछ विषयोंपर सुझाव दिये हैं। मुस्लिम मतोंके बहुमतसे और ग़ैर-मुस्लिम मतोंके बहुमतसे, संविधान सभा इनमें कुछ जोड़ने या घटानेके लिए बिलकुल स्वतन्त्र है। मिशनने जो भेद उत्पन्न करना आवश्यक समझा है उसे भी संविधान सभा रद्द कर सकती है। समूह बनानेके बारेमें भी यही बात है। प्रांत अगर चाहें तो समूह बनानेके विचारको ही अमान्य कर सकते हैं। किसी भी प्रांतको उसकी इच्छाके विरुद्ध किसी भी समूहमें शामिल नहीं किया जा सकेगा—समूह बनानेके विचारको स्वीकार कर लिया जाय, तो भी। उन्होंने कहा कि अभी मेरे एतराज़ों और सुधारोंकी फेह-रिस्त खत्म नहीं हुई है।"

गांधीजीने कहा कि उपर्युक्त व्याख्याके आधारपर, जिसे कि मैं ठीक समझता हूं, कैबिनेट मिशनने एक ऐसी चीज़ पेश की है, जिसपर उसे गर्व होना चाहिए। ब्रिटिश राजसे भारतका चाहे जो भी अहित हुआ हो, परन्तु यदि मिशनका वक्तव्य ईमानदार है, जैसा कि मैं विश्वास करता हूं कि वह है, तो यह वक्तव्य भारतके प्रति ब्रिटेनके उस कर्त्तव्यके निर्वाहके लिए है जिसका कि ब्रिटेनने ऐलान किया है—भारतकी धरतीसे ब्रिटेनकी सत्ताका अन्त। इस वक्तव्यमें, इस देशको दुःखकी धरतीसे एक ऐसी धरतीमें बदल देनेके बीज छिपे हैं, जहां दुःख और कष्ट का अभाव है।

१९ मई रविवारको प्रार्थना-सभामें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खांने भाषण किया। उनके प्रवचनका विषय प्रार्थनाका अर्थ और महत्त्व था। प्रार्थना या नमाज़का उद्देश्य एक है—अपने हृदयसे सारी बुराइयों और ग़लाज़तको निकाल देना, जिससे हम सम्पूर्ण मानव परिवारसे एकताका अनुभव कर सकें। दुर्भाग्यसे, आज मानवता अपनी मौलिक एकताको खो बैठी है और परस्पर विरोधी वर्गोंमें बंट गयी है। यह सब एक दर्दनाक भ्रांतिके कारण है। "प्रार्थनासे हमें एक खास समूह या खास संप्रदायके लोगोंकी नहीं बल्कि ईश्वरकी समूची सृष्टिकी सेवाके योग्य बनना चाहिए, जिसके लिए उस ईश्वरने हमें इस दुनियामें भेजा है।"

२३ मईको खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खांने एक अपील प्रसारित करते हुए इस बातपर ज़ोर दिया कि लोगोंको अपना संकीर्ण दृष्टिकोण त्यागकर संपूर्ण भारतकी

आज़ादीकी तस्वीरपर ग़ौर करना चाहिए। "मैं एक खुदाई खिदमतगार हूँ। मेरे लिए मानवताकी सेवा ईश्वरकी सेवा है। यही इस्लामकी शिक्षा है और मैंने इस शिक्षाका पालन करनेका प्रयास सबकी सेवा करके किया है। धर्म, या कोई भी दूसरी अच्छी चीज़ गुलामीमें नहीं पनप सकती। अतः भारतकी आज़ादी मेरे लिए अहम सवाल है और आज़ादीका अर्थ है, इस देशमें रहनेवालोंके लिए स्वतन्त्रता और खुशहाली। सभी संप्रदायोंके बीच सौहार्द और सहयोगके आधार-पर ही भारतमें आज़ादी पनप सकती है। मैंने आजतक इसी उद्देश्यसे काम किया है और आगे भी जीवनभर करता रहूँगा। नफ़रत और दुर्भावना द्वारा भारत या भारतका कोई संप्रदाय कभी खुशहाल नहीं हो सकेगा।"

अंतरिम सरकार

१९४६

गांधीजीने कैबिनेट मिशनसे पत्राचार और साक्षात्कार द्वारा मसलेके वैधानिक और नैतिक पहलूपर स्पष्टीकरण प्राप्त करनेका प्रयास किया। उन्होंने यह दृष्टिकोण उपस्थित किया कि यदि मसविदेकी बातें आस्थापूर्वक कही गयी हैं, तो चूँकि, कैबिनेट मिशनने वक्तव्य यह दिया था कि १६ मईकी उसकी सारी योजना आत्मप्रेरित है, अतः वक्तव्यकी शब्दावली और अभिप्रेत अर्थमें मौजूद असंगतिको वैधानिक व्याख्या द्वारा हटाना सम्भव होना चाहिए।

प्रांतके विधानका स्वरूप निर्धारित करने और विधानका अन्तिम चयन करनेका अधिकार प्रांतोंसे छीनकर, विभागके बहुमतको सौंप दिया गया, जो प्रांतको उस प्रांतके प्रतिनिधियोंकी इच्छाके प्रतिकूल भी किसी प्रांतमें विलीन या किसी समूहमें शामिल होनेके लिए बाध्य कर सकता है। कांग्रेसने जिरह की कि इस व्यवस्थासे योजनामें दबावका तत्त्व आ गया है। अतः २४ मई १९४६ की कांग्रेस कार्यकारिणी समितिकी बैठकमें १६ मईकी योजनापर अपना अन्तिम मत न घोषित करते हुए पारित किया गया कि कैबिनेट मिशनके १६ मईके वक्तव्यकी धाराओंमें निहित असंगतियोंको दूर करनेके लिए और धाराओंमें संगति स्थापित करनेके लिए समिति, वक्तव्यके १५ वें वाक्य खण्डकी इस रूपमें व्याख्या करती है: "प्रथमतः प्रांत यह निश्चित करेंगे कि उन्हें जिस विभागमें रखा गया है उसमें वे रहना चाहेंगे या नहीं।" साथ ही समितिने कैबिनेट मिशन योजनाके कुछ दूसरे पहलुओंपर भी विचार-विमर्श किया ताकि संविधान निर्माणकारिणी संस्थाके निर्माणकी पूरी तस्वीर प्रस्तुत हो सके।

कार्यकारिणी समितिके २४ मईके प्रस्तावके बाद कुछ दिनोंतक मुस्लिम लीगके निर्णयकी प्रतीक्षामें वार्ताभंगकी स्थिति रही। ६ जूनको मुस्लिम लीगने कैबिनेट मिशन योजनाको मान्यता दे दी क्योंकि उसमें ६ मुस्लिम बहुमत प्रांतोंको विभाग ख और घ में लाज़िमी तौरपर रखकर "पाकिस्तानका बीज" बो दिया गया था।

इस बीच केन्द्रमें अन्तरिम सरकार बनानेकी दिशामें कोई प्रगति नहीं हो पायी थी। मुस्लिम लीगको ऐसी अन्तरिम सरकारमें कोई दिलचस्पी नहीं थी

जिससे कि पाकिस्तानके बननेमें किसी प्रकारकी बाधा उत्पन्न हो। अविभाजित भारतके आदर्शके प्रति प्रतिबद्ध कांग्रेसकी दलील थी कि भारतके संविधानके स्वरूपका निर्णय करना संविधान निर्माणकारिणी संस्थाका काम है। संविधान निर्माणकी अवधिमें प्रभावशाली ढंगसे प्रशासन चलाना अन्तरिम सरकारका काम है। अतः यह समानचेता लोगोंसे बनी होनी चाहिए जो समवेत रूपसे काम कर सकें। गांधीजीका अभिमत था कि इसका उत्तम तरीक़ा यह है कि ब्रिटिश सरकार कांग्रेस या मुस्लिम लीगको, जिसपर भी विश्वास हो, सरकार गठित करने दे। दोनों दलोंको खुश करनेका परिणाम होगा, कभी खत्म न होनेवाली देर और सरकारके रूपमें परस्परविरोधी तत्त्वोंका आगलगाऊ मिश्रण। अतः ब्रिटिश सरकार दोनोंमेंसे किसी एकको चुननेका खतरा उठाये। लेकिन कैबिनेट मिशनको इस दृष्टिकोणसे सहमत करना संभव नहीं हुआ। अतः केंद्रमें किसी न किसी समानताके आधारपर अन्तरिम सरकार गठित करनेका प्रयास चलता रहा। यह प्रयास विफल हुआ और १६ जूनको वाइसरायने एक बयान द्वारा इस विषयमें और बातचीत समाप्त करके अन्तरिम सरकारके गठनके लिए अपना प्रस्ताव प्रस्तुत किया : "यदि देशकी दोनों बड़ी पार्टियाँ या दोनोंमेंसे कोई एक पार्टी अन्तरिम सरकारमें शामिल होनेमें अनिच्छुक है, तो वाइसराय अन्तरिम सरकारके गठनकी दिशामें पहल करनेको इच्छुक है और वह १६ मईके बयानको स्वीकार करनेवालोंके यथासंभव प्रतिनिधित्वसे अन्तरिम सरकार गठित करेगा।"

कई संशोधनोंके बाद १४ सदस्योंके आधारपर अन्तरिम सरकारका गठन निश्चित हुआ जिसमें ६ कांग्रेस सदस्य होंगे और छःमेंसे एक हरिजन होगा; मुस्लिम लीगके ५ सदस्य होंगे और एक सिख और एक पारसी सदस्य होगा। १८ जूनको कांग्रेस कार्यकारिणी समितिने १६ मईकी दीर्घकालीन योजना और १६ जूनकी अंतरिम सरकार गठनकी अल्पकालीन योजनाको मान्य करते हुए प्रस्ताव स्वीकार किया; परंतु कैबिनेट मिशनको इसकी सूचना खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँकी सहमति प्राप्त करनेतकके लिए स्थगित रखी गयी।

इसी बीच १९ जूनको बात खुल गयी कि जिना साहबने वाइसरायसे कुछ आश्वासन मांगे थे जो कि उन्हें मिल गये। इनमेंसे एक यह भी था कि बग़ैर मुस्लिम लीगकी इजाज़तके अंतरिम सरकारमें कोई भी राष्ट्रीय मुस्लिम नहीं लिया जायगा, कांग्रेस कोटासे भी नहीं। इस विषयपर विचार करनेके लिए कार्यकारिणी समितिकी बैठक त्वरामें बुलायी गयी। २५ जूनको समितिने अंतरिम सरकारकी अल्पकालीन योजनाको अस्वीकृत करनेका और संविधान निर्माण-

कारिणी संस्था संबंधी दीर्घकालीन योजनाको स्वीकृत करनेका फैसला लिया इस शर्तपर कि प्रान्तोंके समूहन संबंधी विवादास्पद धाराओंपर समिति अपनी व्याख्यापर अडिग रहेगी जिसे सुलझानेके लिए समिति यह मामला संघीय न्यायालयमें ले जानेके लिए तैयार है जिसका निर्णय दोनों पक्षोंके लिए अनिवार्य रूपसे मान्य होगा।

उसी रोज़ मुस्लिम लीगकी समितिने अन्तरिम सरकारके गठनसे सम्बन्धित अल्पकालीन योजनाको स्वीकार कर लिया। मुस्लिम लीगको उम्मीद यह थी कि चूँकि कांग्रेसने अन्तरिम सरकार सम्बन्धी अल्पकालीन योजनाको अस्वीकार किया है अतः उसे अकेले ही अन्तरिम सरकारके गठनका मौक़ा मिलेगा। लेकिन कैबिनेट मिशनने व्यवस्था यह दी कि कांग्रेस कार्यकारिणी समितिने १६ मईकी योजनाके दीर्घकालीन अंशको स्वीकार करके अंतरिम सरकारमें शामिल होनेकी योग्यता अर्जित कर ली है और यद्यपि कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों ही अंतरिम सरकारमें शामिल हो सकती हैं परन्तु चूँकि एक बड़ी पार्टीने अन्तरिम सरकारमें शामिल होनेसे इनकार किया है अतः संयुक्त सरकारके निर्माणकी योजना रद्द हो गयी क्योंकि "ऐसी स्थितिमें बनी सरकार संयुक्त सरकार न होगी, अतः हमें १६ मईकी योजनाको स्वीकार करनेवालोंकी अंतरिम सरकार किसी दूसरे रूपमें गठित करनी होगी।" जिनाने कैबिनेट मिशनके निर्णयको "वादाख़िलाफी" क़रार दिया।

जूनके अंतमें कैबिनेट मिशन इंगलैंड वापस चला गया और जाते समय अंतरिम सरकारके गठनके प्रयासका भार लार्ड वैवेलके सिपुर्द कर गया। जुलाईमें अखिल भारतीय कांग्रेस समितिकी बैठक बम्बईमें हुई और उसमें गांधीजीकी अपीलपर कार्यकारिणी समितिने कैबिनेट मिशनकी १६ मईकी योजना स्वीकार कर ली। सात वर्षोंके कार्यकालके बाद आज़ाद अध्यक्षपदसे निवृत्त हुए और अध्यक्षपद नेहरूजीको मिला।

गांधीजीने प्रतिनिधियोंको सम्बोधित करते हुए बड़ी भावुकताके साथ कहा : "समाचारपत्रोंके कारण लोगोंमें यह ग़लत धारणा उत्पन्न हो गयी है कि मैंने दिल्लीमें जो कुछ कहा है उससे भिन्न बात यहाँ कह रहा हूँ। यह मैंने दिल्लीमें अपने एक भाषणमें कैबिनेट मिशनके प्रस्तावोंके सम्बन्धमें अवश्य कहा था कि जहाँ मैं पहले रोशनी देख रहा था, वहाँ अब मुझे अंधेरा दिख रहा है। वह अन्धकार अभीतक दूर नहीं हुआ है। संभवतः वह और भी घना हो गया है। अगर मुझे अपनी राह साफ़ नज़र आ रही होती तो मैं कांग्रेस कार्यकारिणी समितिसे

प्रस्तावोंको ठुकरानेकी बात कह सकता था। मेरे हृदयमें चूँकि गलतफ़हमियाँ भरी हुई थीं अतः मैं कोई कारण बतानेकी स्थितिमें नहीं था, वरना मैं प्रस्तावोंको ठोकर मारनेकी दो-टूक बात कहता। यह मेरा कर्तव्य था कि मैं अपनी ग़लत-फ़हमियोंको उनके सामने रखकर उन्हें सावधान कर देता। मगर उनका यह कर्तव्य था कि वे मेरी बातोंको तर्ककी कसौटीपर कसते और मेरा दृष्टिकोण तभी स्वीकार करते जब वह उस कसौटीपर खरा उतरता। उन्होंने जो फैसला लंबी बहसोंके बाद लगभग सर्वसम्मतिसे लिया है, आपके सामने है। कांग्रेस कार्यकारिणी समितिके सभी सदस्य आपके ईमानदार और तपे-तपाये सेवक हैं। मैं यह माननेको तैयार हूँ कि प्रस्तावित संविधान सभा जनताकी संसद नहीं होगी। इसके कई दोष हैं। लेकिन आप सभी खरे और तपे-तपाये सैनिक हैं। सैनिकको खतरेसे कभी डरना नहीं चाहिए। सैनिकको खतरेमें ही आनन्द मिलता है। यदि प्रस्तावित संविधान सभामें त्रुटियां हैं तो उन्हें दूर करना आपका काम है। यह संघर्ष के लिए चुनौती बननी चाहिए, पलायनका बहाना नहीं। मैंने जवाहरलाल नेहरू से कहा कि देशके लिए उन्हें कांटोंका ताज पहनना चाहिए और उन्होंने उसे स्वीकार कर लिया है। आप पीछे न हटें। मैं संविधान सभाको सत्याग्रहका एवज़ मानता हूँ। यह रचनात्मक सत्याग्रह है। रचनात्मक कार्यक्रमके प्रति अभीतक आप लोग न्याय नहीं कर पाये हैं।

"हम कायर न बनें और साहस और आत्मविश्वासके साथ अपना काम करें। धोखा खा जानेकी आशंका हमें भयभीत न कर सके। सत्याग्रहीको कोई धोखा दे ही नहीं सकता। मेरे दिमागमें जो अंधकार है उसकी परवाह क़तई मत कीजिए। भगवान उस अंधकारको प्रकाशमें परिणत करेगा।"

२८ जुलाईको, मुस्लिम लीगने कैबिनेट मिशन योजनाकी अपनी दी हुई स्वीकृति वापस ले ली। साथ ही पाकिस्तानके लिए 'सीधी कार्यवाही' करनेका निर्णय लिया। तय किया गया कि १६ अगस्तको सम्पूर्ण भारतमें विरोधके रूपमें 'सीधी कार्यवाही दिवस' मनाया जाय।

८ अगस्तको कांग्रेस कार्यकारिणी समितिकी बैठक पुनः हुई और उसमें कैबिनेट मिशनकी पूरी योजनाको मान्यता दे दी गयी। समितिने मुस्लिम लीग और सभी संबद्ध लोगोंसे अपील की कि देशके हितमें और अपने हितमें इस महत्कार्यमें सहयोग करें। १२ अगस्तको वाइसरायने कांग्रेस अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरूको अन्तरिम सरकार गठित करनेके लिए निमंत्रित किया। अन्तरिम सरकारमें सहयोग करनेके लिए नेहरूजीका निमंत्रण जिनाने अस्वीकार कर दिया। १५ अगस्त-

के दिन नेहरूजी जिनासे उनके घरपर मिले मगर वार्ताका कोई परिणाम नहीं निकला और हालत बदतर होती चली गयी।

मौलाना आज़ादने लिखा है : "१९४६ की १७ अगस्त, हिन्दुस्तानके इतिहासका काला दिन है। कलकत्तामें आशंका व्याप्त हो गयी थी जो इस बातसे और भी बलवती हो गयी कि सरकार मुस्लिम लीगके नियंत्रणमें थी और श्री एच. एस. सुहरावर्दी मुख्य मन्त्री थे। कलकत्ता नगर अभूतपूर्व हिंसा, रक्तपात और आतंककी लपेटमें आ गया। सैकड़ों जानें चली गयीं। हज़ारों घायल हुए और करोड़ों रुपयोंकी संपत्ति नष्ट हुई। लीगने जुलूस निकाले और जुलूसने हिंसा और लूट छेड़ दी। शीघ्र ही सारा शहर दोनों संप्रदायोंके गुण्डोंकी गिरफ़्तमें आ गया। पुलिस और सेना निष्क्रिय तमाशा देखती रही और मासूम जनताकी लाशें बिछती रहीं।"

कलकत्ताके हादसोंके बाद और अन्तरिम सरकारके गठन होनेसे पहले ही वाइसराय येन-केन-प्रकारेण मुस्लिम लीगको अन्तरिम सरकारमें शामिल कर लेनेकी जिद करने लगे। कांग्रेसी नेताओंके साथ बातचीतके दौरान वाइसरायने कहा कि वे मुस्लिम लीगको सरकारमें शामिल करनेके लिए कैबिनेट मिशनकी १६ मईकी योजनाकी, प्रांतोंके समूहन संबंधी व्यवस्थाको बिना शर्त स्वीकार कर लें और धमकी यह दी कि ऐसा न होनेपर संविधान सभाकी बैठक ही मैं नहीं बुलाऊँगा। इसपर गांधीजीने ब्रिटिश मंत्रिमंडलके सदस्योंको संदेश भेजा कि वाइसराय परिस्थितियोंसे पूर्णतया हतप्रभ जान पड़ते हैं और उन्हें एक योग्यतर विधिवेत्ताकी सहायताकी दरकार है। ब्रिटिश मंत्रिमंडलने हस्तक्षेप किया और उनके निदेशानुसार २ सितम्बर १९४६ को आधिकारिक रूपसे केंद्रमें जवाहरलाल नेहरूके नेतृत्वमें अन्तरिम सरकारकी स्थापना हुई।

यह दिन गांधीजीके लिए बड़े महत्त्वका था। गांधीजीने तड़के सबेरेके कुछ घंटे नेहरूजीके लिए एक मसविदा तैयार करनेमें बिताये जिसमें उन्होंने मौजूदा नाजुक वक़्तमें नयी सरकारके कर्त्तव्य बताये थे। शामकी प्रार्थना-सभाके भाषण में गांधीजीने इसी विषयपर भाषण किया। इस मंगल-दिवसको भारतीय इतिहास का सुनहरा दिन बताते हुए उन्होंने कहा, "यह मुकम्मिल आज़ादीकी ओर एक पग मात्र है, वह मंज़िल तो अभी हासिल नहीं हो पायी है। यह दिन आनन्द मनानेका नहीं है। अन्तरिम सरकारकी जिम्मेदारी मुस्लिम लीगके बग़ैर मंत्रियों ने अनिच्छासे ली है जो कि बिला शक मुसलमानोंका ज़बर्दस्त संगठन है। मुस्लिम लीगने सरकारमें शामिल होनेसे इनकार कर दिया। मुसलमान और हिंदू दोनों

ही भारतकी संतान हैं। मुसलमान हिंदुओंके भाई हैं। जो भी लोग भारतमें पैदा हुए हैं और भारतको अपनी मातृभूमि मानते हैं, चाहे वे हिंदू, मुस्लिम, पारसी, यहूदी, ईसाई, जैन या सिख हों, वे सब भारतकी संतान हैं; अतः वे सब भाई-भाई हैं और उनका आपसी रिश्ता खूनके रिश्तेसे ज्यादा पुख्ता है।

"आज मुसलमान हिंदुओंकी ओर अविश्वासकी दृष्टिसे देख रहे हैं और मुस्लिम लीग सही या ग़लत, यह मानती है कि मुसलमान शोक-दिवस मना रहे हैं। लेकिन इससे यह नहीं हुआ कि वे हमारे भाई नहीं रह गये। भाई अपने भाईके क्रोधका जवाब क्रोधसे नहीं दे सकता। हम उनके शोकमें शामिल नहीं हो सकते। लेकिन जहाँतक हो सकेगा हम उन्हें अपने निकट लानेकी कोशिश करेंगे और उन्हें किसी भी प्रकारसे उत्तेजित करनेका काम नहीं करेंगे। हम अपने आनंद और उल्लास का प्रदर्शन न करें; जश्न, भोज और रोशनियोंसे दीवाली मनानेसे परहेज़ करें। अवसरकी गंभीरताकी दृष्टिसे यह जश्न मनानेका समय है भी नहीं। इस्लाम, ईसाई और हिंदूधर्मके अनुसार यह अवसर दावतका नहीं, उपवासका है।

"इस अवसरपर लोगोंको अपने अन्तःकरणको टटोलकर देखना चाहिए कि सचमुच मुसलमान भाइयोंके प्रति उन्होंने कोई अन्याय तो नहीं किया है? अगर ऐसा हुआ है तो उसे खुलकर स्वीकार करना चाहिए और उस अन्यायके प्रतिकार का उपाय करना चाहिए। इसी मौकेपर मैं अपने मुस्लिम लीगके भाइयोंसे बड़े अ दरके साथ कहना चाहूँगा कि अंग्रेज और हिंदुओंको अपना दुश्मन मानकर उन्हें सीधी कार्यवाहीका धमकी देना न तो तर्कसंगत है और न उचित ही। लीग एक साथ दो घोड़ोंपर सवार नहीं हो सकती। यदि मुस्लिम लीग अंग्रेजोंसे असहयोग करती है तो उसे आपसमें सहयोगकी भावना रखनी होगी। फिर उन्हें अपने भाइयोंके साथ असहयोग करनेकी क्या आवश्यकता है? कांग्रेस कभी भी मुसलमानोंके खिलाफ ग्रेट ब्रिटेनसे मैत्री नहीं कर सकेगी। आज उसने अन्तरिम सरकारकी जिम्मेदारी ली है तो उसका उद्देश्य सबके लिए आज़ादी हासिल करना है, जिसमें मुस्लिम लीग भी शामिल होगी। आज़ादी किसी विशेष समुदाय या संप्रदायको नहीं मिलेगी। मुसलमानोंका हिन्दुओंको दुश्मन समझना और यह भूलनेकी कोशिश करना कि वे सदियोंतक साथ-साथ भले पड़ोसियोंकी तरह रहे हैं, एक ही मिट्टीसे जनमे, पले और बढ़े हैं और फिर उसी मिट्टीमें लौटकर विलीन होनेवाले हैं; सरासर ग़लत है। मैं तो यहाँतक कहूँगा कि मुस्लिम लीगका रवैया इस्लामके खिलाफ़ है। अगर उसके साथ कोई नाइंसाफी हुई है तो उसका इलाज, मिल-बैठकर विचार करना है और आपसके विचारसे मामला न सुलझ

सके तो उसको पंचनिर्णयके सिपुर्द करना है।"

उन्होंने प्रश्न उठाया कि मंत्रियोंका कर्त्तव्य क्या है और कहा, "उनका कर्त्तव्य है कि वे नमक सत्याग्रहको न भूलें और नमक कर रद्द करें। मेहनतकश जनताको आज़ादी दिलानेके कांग्रेसके निर्णयका यह एक प्रतीक है। अब उस निर्णयको क्रियान्वित करनेका अवसर आया है और ग़रीब आदमीको नमक हवा और पानीकी तरह मुफ्त मिलना चाहिए। प्रश्न करकी मात्राका नहीं है। ग़रीबों को नमक मुफ़्त मिलता है या नहीं, यह प्रश्न है। नमक-करकी समाप्तिसे आज़ादी ग़रीबसे गरीबतककी झोपड़ीतक पहुँच जायगी।

"मंत्रियोंके समक्ष दूसरा काम है शीघ्रातिशीघ्र साम्प्रदायिक एकताको स्थापित करना। अगर मेरी बात सुनी जाय तो मैं यह घोषणा करूँगा कि भविष्यमें कभी आंतरिक शांतिकी स्थापनाके लिए सेना न बुलायी जायगी। इस कामके लिए पुलिसका उपयोग भी निषिद्ध हो, यह देखना मैं पसंद करूँगा। एक सम्प्रदायके लोग दूसरे सम्प्रदायके लोगोंकी जान लेनेपर जो उतारू हो जाते हैं, उसका कोई दूसरा इलाज जनता खोजे। और अगर कोई बुरीसे बुरी बात बन पड़ती है तो जनतामें इतना हौसला होना चाहिए कि वह बग़ैर बाहरी मददके आपसमें लड़-कर निबट ले। मैं तो कहूँगा कि जबतक उन्हें अंग्रेजोंके हथियारोंकी आवश्यकता का अनुभव होता रहेगा तबतक उनकी गुलामी बराबर बनी रहेगी।

"तीसरा काम अस्पृश्यताके पूर्ण उन्मूलनका है और अन्तिम काम है गाँवके ग़रीब लोगोंके लिए खादीका प्रसार और प्रचार। मैं आशा करता हूँ कि अन्तरिम सरकार सही पग उठायेगी और भारतको सत्य, पवित्रता और सच्चे स्वराज्यके पथपर लगायेगी।"

१४ सितम्बरको सीमांत प्रदेशमें खुदाई खिदमतगारोंको संबोधित करते हुए ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार खांने दाउबेमें कहा :

"ईश्वरकी कृपासे हम लोगोंके बीच ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जो हमारी योजनासे परिचित न हो, लेकिन उसके व्यावहारिक पहलूकी हम उपेक्षा कर बैठते हैं। जिरगाके सदस्य हों या खुदाई खिदमतगार हों, सभी कामसे भागते हैं। आप पैसेको दांतोंसे पकड़ते हैं लेकिन रुपया खर्च करते समय लापरवाह हो जाते हैं। फसल पककर तैयार है। अगर आप छोटे-छोटे कामोंमें बझे रहेंगे तो फसल नहीं काट पायेंगे। हमने इस प्रांतके हर ज़िले और हर गांवका निरीक्षण किया। मुझे बताया गया कि कोई बड़ा खान कुछ मौलवियोंके साथ आया और सभाएँ हुईं। मुझे पता चलता है कि खुदाई ख़िदमतगार राशनकी दूकानोंपर और सिंडि-

केटोंमें काम करनेमें व्यस्त हैं। मैं जिरगेके लोगों या खुदाई खिदमतगारोंको हतोत्साहित नहीं कर रहा हूं लेकिन मुझे कुछ ईमानदार कार्यकर्ताओंकी सख्त जरूरत है जो पहले जैसे उत्साहसे काम कर सकें। मैं चाहूंगा कि वे खुदाके नामपर सबकी सेवा करें और अपनी सेवाओंके बदले कुछ भी न लें; जनताके बीच काम करें।

"हमारा आंदोलन आध्यात्मिक है। इसका पोषण वे ही कर सकते हैं जिनमें धैर्य और सहनशीलता हो। एक चरित्रवान ईमानदार कार्यकर्त्ता पार्टीको बल देता है लेकिन असंख्य चरित्रहीन सदस्य उसे हानि पहुँचाते हैं। बहुतसे लोग मेरे पास क्रुद्ध कर देनेवाली प्रार्थनाएँ लेकर आते हैं। जो व्यक्ति कभी किसीको चोट न पहुँचानेकी कसम खाता है, बेशक उसे तलवार या बंदूककी आवश्यकता नहीं। सच्चा मुसलमान कौन है इस सवालपर पैगम्बरने कहा था, 'जो दूसरे मुसलमानको वाणी या क्रियासे चोट नहीं पहुचाता'। हमें अपनेसे यह सवाल पूछना होगा कि हमने अपनी जुबान और हाथोंका इस्तेमाल किस तरह किया है? हम लोगोंमेंसे ऐसे बहुतसे लोग हैं जो नमाज़ और कुरान पढ़ते हैं लेकिन जुबानसे और कामसे दूसरोंको चोट पहुँचाते हैं। फिर हम मुसलमान होनेका दावा कैसे कर सकते हैं? सच्चा मुसलमान बनना सरल नहीं है। इसीलिए मैं आप लोगोंको तैयार होनेके लिए समय दे रहा हूं। मैंने देखा है कि अधिकतर लोग अपनी जिम्मेदारीको समझते नहीं। मैं ऐसे कार्यकर्ता चाहता हूं जो नियमित रूपसे ईमानदारीके साथ उन्हें जो भी काम दिया जाय, करें। उन्हें प्रशिक्षण दिया जायगा, पश्तो भाषा पढ़ना और लिखना सिखाया जायगा और पैगम्बर साहबकी जीवनी और शिक्षाओंसे उन्हें परिचित कराया जायगा और साथ ही उन्हें दुनियाकी घटनाओं और इतिहासकी जानकारी करायी जायगी।

"आज हम जो भी परेशानियाँ उठा रहे हैं उसका कारण है शासन तंत्रकी ग़लत प्रणाली। बहुतसे लोग कहते हैं कि सरकारी नौकर मुस्लिम लीगके साथ हैं, मगर मैं निश्चित रूपसे कहता हूं कि ऐसी बात नहीं है। उन्हें इस्लाममें कोई दिलचस्पी नहीं है। उन्हें लीगसे कोई मतलब नहीं है। वे तो खुदगर्ज़ हैं। बग़ैर मुस्लिम लीगके साथ संबंध स्थापित किये वे आप लोगोंको आकर्षित कैसे कर सकते हैं?

"आप लोग शायद यह बात जानते होंगे कि पुलिस, खान और सामंती रजवाड़ोंका जो रुतबा पहले हुआ करता था, अब नहीं रहा। अब धर्मोपदेशकोंके प्रति वह आस्था और श्रद्धा भी नहीं रही। उन्हें मालूम है कि खुदाई खिदमतगार

आन्दोलनका लक्ष्य क्या है । वे जान चुके हैं कि अब उनके इने-गिने दिन रह गये हैं इसलिए उन्हें अपने अस्तित्वकी चिंता है । अगर हम थोड़ेसे ईमानदार कार्यकर्ताओंका एक समूह बना सकें, तो ईश्वरकी इच्छा होगी तो हम लोग बहुत शीघ्र अपने उद्देश्यमें सफल हो जायँगे ।

"एक आदमी अपने बूतेपर कोई काम नहीं कर सकता, यदि दूसरे चरित्रवान् और निःस्वार्थ लोग उसका हाथ न बटायें । मैं केवल सीमांत प्रांतके पख्तूनोंके बीच ही काम नहीं करना चाहता बल्कि कबायली भाइयोंके बीच भी काम करना चाहता हूँ । हमारे विरोधी लोग यह प्रचार करके कि हिंदूराजकी स्थापना हो गयी है लोगोंके दिमाग़में ज़हर भर रहे हैं । मैं केवल भाषण करके इस दुर्भावनापूर्ण प्रचारका निराकरण नहीं कर सकता । मैं पख्तूनोंसे प्रार्थना करूँगा । मैं हर घर, हर गाँव और खुदाई खिदमतगारोंसे कहूँगा कि वे इस बातको लोगोंतक पहुँचायें । यह कहना ग़लत है कि हिन्दूराजकी स्थापना हुई है । यह राज हिंदुओंका नहीं है बल्कि भारतकी जनताका है । जिस वक़्त सरकारका गठन हो रहा था पांच सीटें मुसलमानोंके लिए निर्धारित की गयी थीं और बादमें ये सभी सीटें मुस्लिम लीगके लिए आरक्षित कर दी गयीं । कांग्रेसने दलील दी कि जो करोड़ों मुसलमान मुस्लिम लीगमें शामिल नहीं हैं उनका प्रतिनिधित्व भी सरकारमें होना चाहिए पर ब्रिटिश सरकारने इस बातपर कोई ध्यान नहीं दिया और इसीलिए कांग्रेसको अंतरिम सरकार बनानेसे इनकार हुआ । मुस्लिम लीग अंतरिम सरकार बनाकर इस मौकेका फायदा उठाना चाहती थी लेकिन वाइसराय बाधक बन गये । लीग यदि सरकार बनाती तो उसमें भी वे ही लोग होते जो आज पदोंपर हैं । क्या तब उसे हिंदूराज कहा जाता ? जब कांग्रेस सरकार गठित करती है तो उसपर हिंदूराजका लेबुल लगा दिया जाता है । असलमें यह सब अंग्रेजोंका प्रचार है । मुस्लिम लीगी भाई इसी धरतीसे पैदा हुए हैं और अंग्रेज उनके खैरख्वाह नहीं हैं । सरकारमें प्रवेश करनेके लिए मुस्लिम लीगके लिए दरवाज़ा खुला हुआ है । वे आगे आयें और मुस्लिमराज स्थापित करें ।

"मैं चाहता हूँ कि आप लोग मिथ्या प्रचारसे गुमराह न हों । दोस्त और दुश्मनमें फ़र्क करना सीखिए । वक्त बहुत नाज़ुक है । सत्ता हस्तांतरणके इस मौकेपर खुदगर्ज़ लोग दिक्कतें खड़ी करेंगे । आप लोग अगर इन खुदगर्ज़ोंके जालमें फँस जायँगे तो समूची क़ौमको तबाह कर डालेंगे ।"

एक हफ़्ते बाद आम सभामें बोलते हुए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने जनताको सावधान किया: "मुस्लिम लीगके प्रचारकोंसे सावधान रहिए और उनके शरारत-

भरे नारोंसे धोखा न खाइए।" लीगी लोग गाँव-गाँव घूमकर प्रचार कर रहे थे कि नेहरूजीकी बनायी हुई अंतरिम सरकार, खालिस हिंदुओंकी सरकार है। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने कहा कि जिस उसूलकी बुनियादपर अंतरिम सरकार बनी है उस उसूलसे मुस्लिम लीग भी बँधी हुई है। उन्होंने कहा : "सीमान्त मुस्लिम लीगका ताज़ा प्रचार यह है कि वज़ीरिस्तानमें बरबादी नेहरूकी सरकार के हुक्मसे हुई है। सच्चाई यह है कि बमबारी अगस्तमें हुई थी जब कि अंतरिम सरकार बनी ही नहीं थी। मुझे जब इसकी ख़बर मिली तो मैंने फ़ौरन यह सवाल उठा लिया, सार्वजनिक विरोध किया और तब यह कार्यवाही खत्म हुई। इस्लाम-के उन तथाकथित मशालबरदारोंने, जो आज कबायली लोगोंसे बड़ी हमदर्दी जता रहे हैं, उस वक्त उँगली भी नहीं उठायी जब कि बमबारी जारी थी।"

उन्होंने बताया कि केन्द्रमें लोकप्रिय सरकारके निर्माणके प्रतिकूल वातावरण बनानेके लिए ही वज़ीरिस्तानमें बमबारी की गयी थी। ज़बानी प्रचारके अलावा भोले-भाले कबायली लोगोंमें पर्चे बाँटे गये और उन्हें गुमराह करनेकी भरसक कोशिश की गयी कि बमबारी, सत्ताधारी कांग्रेसकी करनी है। लीगियोंको कबा-यली इलाक़ेमें घुसकर सभाएँ आयोजित करनेकी अनुमति देकर सरकार मुस्लिम लीगका खुला समर्थन कर रही है जब कि खुदाई खिदमतगार उस इलाक़ेमें अपनी ज़मीन जोतनेके लिए भी प्रवेश कर नहीं सकते। उन्होंने मांग उठायी कि अतीत की तरह अब भी कबायली लोगोंसे संपर्क स्थापित करनेमें कोई प्रतिबन्ध नहीं होना चाहिए। इस बातका संकेत देते हुए कि नेहरूजीके मेरे नाम सीलबंद पत्रमें संभवतः कबायलियोंके प्रति भावी नीतिकी चर्चा भी की गयी है, उन्होंने कहा कि यह बात स्पष्ट है कि कांग्रेस किसी भी हालतमें पुराने दृष्टिकोणसे विदेश मंत्रा-लय नहीं चला सकती। "कबायली इलाक़ोंमें बड़ी तेजीसे एक भयावह स्थिति उत्पन्न हो रही है जो स्वतंत्र भारतके हमारे उस स्वप्नको विफल कर सकती है, जो सफलताकी राहपर है।"

कबायली इलाक़ेमें सितम्बरके अंतमें प्रतिनिधियोंका जिरगा आयोजित किया गया जिसकी अध्यक्षता ईपीके फ़कीरने की। ईपीके फ़कीरने वज़ीरिस्तान और कबायली इलाक़ोंमें हवाई छापा समाप्त करनेके आदेशके लिए नेहरूजीकी प्रशंसा की। उन्होंने कहा : "हम अपनी आज़ादी और एकताकी रक्षाके लिए एक अरसे से जेहाद कर रहे हैं। हमें हिंदुओं और सिखोंसे कोई वैर नहीं है। हमारी लड़ाई अंग्रेजोंसे है। हमें उम्मीद है कि केन्द्रमें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस नेहरूके नेतृत्वमें प्रशासकीय उत्तरदायित्वोंके निर्वाहकालमें पड़ोसी कबीलोंके साथ भाईचारा

स्थापित करनेकी ईमानदार कोशिश करेगी। मुझे विश्वास है कि उनकी आर्थिक स्थितिको सुधारनेकी कोशिश की जायगी और उनके पिछड़ेपनको दूर करनेके लिए उन्हें शिक्षाकी सुविधाएँ मुहैया की जायँगी।" कबायली नेताओंके नामपर मुस्लिम लीगके विरोधी प्रचारकी चर्चा करते हुए उन्होंने कहा : "कोई भी खुद-दार और देशभक्त व्यक्ति, जिसे कबायली इलाक़ेसे प्यार है और जो इस्लामका वास्तविक महत्त्व समझता है, ब्रिटिश सरकार द्वारा समर्थित मुस्लिम लीगसे कोई रब्त-जब्त रख ही नहीं सकता।"

७ अक्तूबरको गांधीजीने नेहरू-जिना वार्ताकी चर्चा की और यह आशा व्यक्त की कि मुस्लिम लीग अंतरिम सरकारमें शामिल होगी। उन्होंने जनतासे कहा कि वह ईश्वरसे प्रार्थना करे कि अबकी बार कांग्रेस और मुस्लिम लीगका संबंध खिलाफतके दिनोंकी अपेक्षा भी अधिक घना और स्थायी हो और भविष्यमें भाई अपने भाईको न अपशब्द कहे, न जानसे मारनेकी कोशिश करे और सभी लोग शांतिपूर्वक रहें। लेकिन मनुष्यकी क्रियाएँ उसकी मानसिक अवस्थाओंपर निर्भर करती हैं। उपस्थित श्रोतागण भारतीय जनसमुद्रकी एक बूंदभर हैं, लेकिन अगर भाई अपने भाईके साथ शांतिपूर्वक रहनेको उत्सुक है तो कांग्रेस और मुस्लिम लीगको नजदीक आना होगा। यह सही है कि वाइसरायको इंगलैंडके ब्रिटिश मंत्रिमंडलसे आदेश प्राप्त करने होते हैं परंतु इसके बावजूद वह स्वेच्छाचारी शासक है। लेकिन आपके तपे-तपाये नेता जनताके आदमी हैं और उन्हें जनताकी इच्छा पूरी करनी होगी। जिस वक्त जनता आपसमें झगड़ना और हत्या करना बंद कर देगी उसी वक़्त वह आज़ाद हो जायगी और आज़ाद भारतमें करनेको बहुत काम हैं। आज भुखमरी है, गरीबी है, घूसखोरी है, भ्रष्टाचार और काला बाज़ार है। यह सब समाप्त करना है। यदि कांग्रेस और लीग एक हो जायें तो वे भारतमें जैसी नयी व्यवस्था चाहते हैं, उत्पन्न कर सकेंगे।

अक्तूबरके प्रारम्भमें भोपालके नवाबने गांधीजीसे मुलाकात की और उनसे समस्याके एक प्रस्तावित हलको लेकर बातचीत की। सारांशमें हल यह था कि चूंकि हालके चुनावमें मुस्लिम लीगने मुस्लिम सीटोंपर भारी बहुमतसे जीत हासिल की है अतः कांग्रेस मुस्लिम लीगको यह मान्यता दे कि उसे ही भारतके मुसलमानोंका प्रतिनिधित्व, सामान्यतया करनेका अधिकार है। इस मान्यताकी शर्त यह होगी कि मुस्लिम लीग भी कांग्रेसको भारतके शेष सभी वर्गोंके प्रति-निधित्वकी मान्यता दे, जिनमें वे मुसलमान भी शामिल होंगे जिन्होंने अपने भाग्य कांग्रेसके साथ जोड़ रखे हैं। साथ ही मुस्लिम लीग यह भी मान ले कि कांग्रेस

जिन लोगोंका प्रतिनिधित्व करती है, उनमेंसे अपने विवेकसे जिन लोगोंको भी सरकारमें शामिल करना चाहे, कर सकती है। इस हलका अंतिम प्रारूप तैयार किया गया और गांधीजीने उसपर हस्ताक्षर किये। प्रारूपके उत्तरार्धमें कहा गया था : "यह मान लिया जाता है कि अंतरिम सरकारके सभी मंत्रिगण एकताकी भावनाके साथ संपूर्ण भारतकी भलाईके लिए काम करेंगे और किसी भी हालतमें गवर्नर जनरलको हस्तक्षेप करनेका मौक़ा नहीं देंगे।"

जिना साहबने इस हलके पूर्वार्धसे सहमत होते हुए भी टीका की कि जहाँ-तक मेरा सवाल है, इस मसविदेके उत्तरार्धपर बहसकी जरूरत है। गांधीजीने भोपालके नवाबसे कहा कि पूर्वार्धपर मेरी स्वीकृति इस शर्तपर है कि जिना साहब इस पूरे हलको मान लें।

५ और ७ अक्तूबरको भोपालके नवाबके निवासस्थानपर नेहरूजीकी जिना साहबसे विस्तारसे बातचीत हुई। परन्तु ७ ता० को नेहरूजी जिनाका एक पत्र पाकर चकित रह गये। इस पत्रमें लिखी बातें वार्ताकी भावना और प्रवाहसे तो बेमेल थीं ही, साथ ही जिनाने उसमें अपनी नव-सूत्री मांगोंकी उस सूचीकी एक प्रतिलिपि भी नत्थी कर दी थी जिसे उन्होंने वाइसरायको भेजा था और जिसे वाइसरायने ४ अक्तूबरके पत्रमें अंशतः स्वीकार भी कर लिया था। परंतु, कांग्रेस जहाँ उन बातोंको सारतः इस शर्तपर माननेको तैयार थी कि गांधी फार्मूलाके उत्तरार्धपर मुस्लिम लीग स्वीकृति देकर कांग्रेससे समझौता कर ले, वहीं वाइस-रायने बग़ैर शर्तके बातें मान ली थीं। जिनाने कांग्रेससे समझौता न करते हुए सीधे वाइसरायसे काम निकाल लेना ठीक समझा। १५ अक्तूबरको घोषणा हुई कि मुस्लिम लीग अंतरिम सरकारमें शामिल होनेके लिए रज़ामंद है। नेहरूजीने वाइसरायको लिखा : "हमारे लिए यह जानकारी आवश्यक है कि जिना किस प्रकार शामिल होना चाहते हैं····मंत्रिमंडलमें शामिल होनेका आधार निश्चित रूपसे····यह मानकर होना चाहिए कि कैबिनेट मिशनका १६ मईका वक्तव्य स्वीकार कर लिया गया है।" जिनाका वह पत्र, जिसमें उन्होंने वाइसराय द्वारा अन्तरिम सरकारमें प्रदत्त पाँच सीटोंको क़बूल किया था, 'अंतरिम सरकारके गठन-की योजना और आधार'से सामान्यतया असहमत और 'लिये जा चुके निर्णयों' का विरोधी था। चार दिनों बाद, अंतरिम सरकारके लिए मुस्लिम लीग द्वारा नामांकित ग़ज़नफ़र अली खानने लाहौरमें छात्रोंकी सभामें बोलते हुए कहा : "हम अपने अभिलषित लक्ष्य पाकिस्तानकी उपलब्धिके लिए, अंतरिम सरकारमें, उसे संघर्षका अखाड़ा समझकर शामिल हो रहे हैं।"

१६ अक्तूबरको नेहरूजीने खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँकी प्रार्थनापर सीमान्त प्रान्तके दौरेके लिए दिल्ली छोड़ी। वाइसरायने नेहरूजीको कबायली इलाक़ेमें जानेसे विरत करनेकी चेष्टा की पर जब उन्होंने देखा कि नेहरूजी अपने इरादेपर अडिग हैं, तो उन्होंने गवर्नरको आवश्यक कार्यवाही करनेके लिए स्वतन्त्र कर दिया। सीमान्तके गवर्नर सर ओलफ कैरोने दिल्लीमें तीन दिन नेहरूजीको कबायली इलाक़ेमें जानेसे रोकनेकी कोशिशमें विताये।

१६ अक्तूबरके दोपहरको नेहरूजी विमान द्वारा पेशावर पहुँचे। मुख्य मंत्री निवासमें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने उनका स्वागत किया। हवाई अड्डेके प्रवेश-मार्गपर ५ हजार लीगी स्वयंसेवक हरे गणवेशमें लाठी, बल्लम और भालोंसे लैस, अब्दुल क़यूमके नेतृत्वमें थे, जिसने हालमें ही कांग्रेससे त्यागपत्र दिया था, और वे नारे लगा रहे थे। ज्यों ही नेहरूजी निकले उनके खिलाफ़ नारे लगाये गये और उनकी कारपर हमला करनेकी कोशिश की गयी। डा० खान साहब इतने परेशान हुए कि उन्होंने रिवाल्वर निकाल ली और गोली मार देनेकी धमकी दी। भीड़ने गाड़ीको राह दी। जब अब्दुल क़यूमसे यह पूछा गया कि अब, जब कि मुस्लिम लीग अन्तरिम सरकारमें शामिल हो चुकी है, इस प्रदर्शनकी क्या आवश्यकता है ? तो उसने जवाब दिया : "यदि दूसरी जगहोंपर शांति हो, तो भी सीमान्तमें शांति नहीं हो सकती।"

"सीमान्तका यह प्रश्न दुनियाका एक रहस्य है" खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने ’त्रकार सम्मेलनमें नेहरूविरोधी प्रदर्शनके लिए राजनीतिक विभागको दोषी ़राते हुए कहा : "पंडित नेहरू भी ऐसी स्थितिमें अच्छी तरह देख नहीं सकेंगे। ाज आपने जो कुछ देखा और आगे नेहरूजीके कबायली इलाक़ेमें जानेपर जो ुछ देखे जानेकी संभावना है और जो बातें आप लोग पिछले कुछ दिनोंसे सुनते चले आ रहे हैं, वे सब राजनीतिक विभाग द्वारा कल्पित और परिचालित हैं। मैं सीधा-सादा पठान हूँ और जो महसूस करता हूँ उसे खुलकर कहता हूँ। राजनीतिक विभागने नेहरूजीको कबायली इलाक़ेमें दौरेपर जानेसे रोकनेकी भरसक कोशिश की। वह नहीं चाहता कि नेहरूजी उधर जायँ। राजनीतिक विभागके अतिरिक्त दूसरे लोग भी हैं, जिनका नाम लेना मैं नहीं चाहता, जिन्हें नेहरूजीकी कबायली इलाक़ेके हृदयस्थलकी यात्रा नागवार लगती है। चूँकि नेहरूजीमें उनकी इच्छाओंको ठुकरानेकी हिमाकत है, अतः वे उन्हें सबक सिखाना चाहते हैं।"

एक पत्रकारके पूछनेपर कि क्या सरकार यह जानती है कि जब कि सरकार

नेहरूजीकी यात्रा योजनाको गुप्त रखे हुए है, मुस्लिम लीगको सारी योजना ब्यौरेके साथ मालूम है, मंत्री मेहरचंद खन्नाने यह कहते हुए हस्तक्षेप किया : "मुझे, सूचना-मंत्रीको इस यात्रा-योजनाकी कोई जानकारी नहीं थी। कबायली इलाक़ेसे प्रान्तीय सरकारका कोई संबंध नहीं है।"

यह पूछनेपर कि खुदाई खिदमतगारोंकी रैलीकी व्यवस्था क्यों नहीं की गयी, ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने कहा कि नेहरूजी विदेश-मंत्रीकी हैसियतसे सरकारी दौरेपर हैं अतः उनके स्वागतकी सारी जिम्मेदारी गवर्नर जनरलके एजेंटकी है। मैंने सरकारी अधिकारियोंको छूट दे रखी थी कि वे जैसा स्वागत चाहें, आयोजित करें। आगे उन्होंने कहा : "२१ अक्तूबरके उनके प्रोग्रामका जिम्मेवार मैं हूँ, जब मैं उन्हें पेशावरसे सरदरयाब ले जाऊँगा। मैं आप सबको निमंत्रित करता हूँ कि आइए, देखिए कि हम पठान उनका स्वागत कैसे करते हैं।"

सरकारकी दुहरी कार्यप्रणालीकी आलोचना करते हुए कि सीमान्तमें कबायली इलाक़ोंके प्रशासनमें गवर्नर भी गवर्नर जनरलके प्रतिनिधिके रूपमें काम करता है और राजनीतिक विभागके मातहत प्रत्येक डिप्टी कमिश्नर भी काम करता है, जिनपर जनताके प्रतिनिधि मंत्रिमण्डलका कोई दबाव नहीं चलता, ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने कहा : "जबतक यह कुचक्र चलता रहेगा तबतक कबायली इलाक़ोंमें ही नहीं, बल्कि जिन जिलोंका बंदोबस्त हो चुका है उनमें भी शांतिकी स्थापना होना दुस्साध्य है। बग़ैर राजनीतिक विभागकी अनुमतिके सीमांत प्रांतके मुख्य मंत्री डा० ख़ान साहब भी कबायली इलाक़ेमें प्रवेश नहीं कर सकते।"

ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँसे पूछा गया कि क्या वे कबायली इलाक़ेको भारतीय सरकारके अंतर्गत शामिल कराना चाहेंगे? उन्होंने जवाब दिया, "मैं अहिंसावादी हूँ। मैं यह हर्गिज़ नहीं चाहता कि कबायली लोगोंको जबरन हमारे साथ कर दिया जाय। मैं यह मामला पूरे तौरसे कबायली लोगोंपर छोड़ देना चाहूँगा। अगर वे हमारे साथ शामिल होना चाहेंगे तो हमें उनका स्वागत करनेमें बड़ी प्रसन्नता होगी, लेकिन अगर वे अलग रहना चाहेंगे तो हम इसमें भी उनकी मदद करेंगे। कबायली लोग सीमांतके लोगोंके भाई-बन्द हैं और उन्हें प्यारसे ही जीतना होगा, ताक़तसे नहीं। उनके साथ नया व्यवहार होना चाहिए। हम अपनी आजादीके लिए लड़ते रहे हैं। एक कांग्रेसी अपने भाइयोंकी आज़ादीके दायरेको संकुचित करनेकी बात सोच भी कैसे सकता है?"

यह पूछनेपर कि आप सीमांत प्रदेशपर अहिंसाकी नीतिको किस प्रकार चरितार्थ करेंगे, ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने कहा: "हम भारत सरकारकी सीमांत

नीतिके प्रति आक्रोश न लानेका प्रयत्न करेंगे।" मैं इस बातसे सहमत नहीं हूँ कि ब्रिटिश अधिकारियों और कबायली लोगोंके पिछले संबंधोंको देखते हुए कबीले के लोगोंको भारतसे शांतिपूर्ण सहयोग करनेके लिए तैयार करनेमें लम्बा समय लगेगा। उन्होंने आगे कहा : "मैं कबायली इलाक़ेमें, पहले पगके रूपमें प्राइमरी स्कूलों, नागरिक अस्पतालों और कुटीर उद्योगके प्रशिक्षण केन्द्रोंका संगठन करना चाहूँगा। जब कबायली इलाक़ेका प्रशासन पूरे तौरसे भारतीयोंके हाथमें आ जायगा तब ऐसी गतिविधियोंको बढ़ाकर व्यापक बनाया जा सकेगा। अगर राज-नीतिक विभाग ईमानदारीके साथ मुझसे इस मानवतावादी कार्यक्रममें सहयोग करे और राजनीतिक एजेंट परिवर्तित हृदयसे काम करें, तो मैं पांच वर्षोंके अंदर परिणाम उत्पन्न करनेका वायदा कर सकता हूँ। जहाँ बम बेकार हो जाते हैं, वहाँ प्यार कारगर हो सकता है। मैं मानता हूँ कि ब्रिटिश साम्राज्यवादियों द्वारा किये गये घावोंको ठीक करनेमें वक़्त लगेगा और हमें दिलोंसे शुबहा, आतंक और ग़लतफ़हमियोंको दूर करनेमें वक़्त लगेगा, किन्तु, मुझे अपनी अहिंसावादी दृष्टि-पर आस्था है। पाशविक बलसे उनका मनोबल तोड़नेकी अपेक्षा मैं उनकी आर्थिक उन्नति करके उन्हें भाई जैसी सेवा अर्पित करना चाहता हूँ।"

यह पूछनेपर कि क्या संक्रमणकी अवस्थामें बमबारी जैसे हिंसक उपायोंकी आवश्यकता न होगी, उन्होंने कहा : "अंग्रेजोंने कबायली लोगोंके संबंधमें अति-रंजनापूर्ण भ्रामक धारणाएँ फैला रखी हैं। आप जब उनके सम्पर्कमें आयेंगे तो आपको यह जानते देर न लगेगी कि वे कितने प्यारे लोग हैं। फिर आप बमबारी जैसी पाशविक बातें सोच भी नहीं सकेंगे।"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने कहा : "अन्तरिम सरकारके मसलेपर जिना साहब ने नेहरूजीसे समझौता न करके वाइसरायसे क्यों समझौता किया ? मैंने हालमें ही जो बात शबकादरमें कही थी वह अब सही साबित हो चुकी है कि कांग्रेस सर-कार जिस प्रकार सहमति और सहयोगके साथ चल रही है, उससे वाइसरायको परेशानी है। वाइसरायने सोचा होगा, 'अब मुझे कौन बचायेगा ?' और अपने पुराने यारोंकी ओर, मुस्लिम लीगियोंकी ओर, मुखातिब हुए। यह कैसी दर्दनाक विडम्बना है कि जिना साहब अपने भाइयोंके साथ समझौता न कर सके और वाइसरायसे समझौता करते उन्हें कोई दिक्कत न हुई ! अगर जिना साहब कांग्रेस-से समझौता करके अन्तरिम सरकारमें शामिल हुए होते और अपनेको वाइसराय-का औजार बनाते तो पण्डित नेहरू उनके अहसानमंद होते।" उन्होंने इस बात-पर शोक प्रकट किया कि अन्तरिम सरकारकी केवल एक सीटके लिए देशके कोने-

कोनेमें जान-मालका नुकसान किया गया।

१७ अक्तूबरको पंडित नेहरू, डा० खान साहब अब्दुल गफ्फ़ार खाँ और विदेश मंत्रालयके सचिव क्राइटन महोदयके साथ उत्तर वज़ीरिस्तान स्थित मीरन-शाहको विमान द्वारा रवाना हुए। खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँके लिए वज़ीरिस्तान-की यात्राका यह पहला अवसर था और उन्होंने कहा कि मैं इसे अपने जीवनका अत्यन्त सुखद क्षण मानता हूँ।

कबायली इलाक़ेकी यात्रा के पहले दौरमें नेहरूजीने डा० खान साहब और खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँके साथ कबायली लोगोंसे भेंट की। जब डा० खान साहब कबायली लोगोंको नेहरूजीका परिचय दे चुके तब उनके प्रतिनिधियोंने नेहरूजीसे उनके वज़ीरिस्तानके दौरेका मकसद पूछा। कुछ लोग चिल्लाये, "हम हिंदूराज नहीं चाहते।" उन लोगोंने यह स्पष्ट कर दिया कि वे अपनी आज़ादीमें किसी प्रकारका और किसीका हस्तक्षेप सहन न कर सकेंगे। उन्होंने कहा कि न हम कांग्रेसको मानते हैं और न मुस्लिम लीगको ही और अपनी जिंदगीको अपने इच्छानुसार बितानेके लिए आज़ाद रहना पसन्द करते हैं।

खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँने उन्हें बताया कि वे सच्ची आज़ादीका उपभोग कर नहीं पा रहे हैं। "हम आप लोगोंको मुकम्मिल आज़ादी पानेमें मदद पहुँचाना चाहते हैं। हम आप लोगोंसे दोस्ताना ताल्लुक़ात क़ायम करनेके लिए बेचैन हैं। हम आप लोगोंको आपकी मुसीबतोंमें मदद पहुँचाकर आपके दोस्त बनना चाहते हैं।"

एक ही रोज़में दो उग्र प्रदर्शन हुए। एक प्रदर्शन कबायली जिरगाके लोगोंने मीरनशाहमें और दूसरा रज़मकमें किया। इन प्रदर्शनोंको देखकर नेहरूजीके मुँह से उद्गार निकला कि ये सीमांतवासी ग़रीब जनताके प्रतिनिधि हैं। डा० खान साहबने ज़ोर देकर कहा कि इन्हें राजनीतिक विभागने बरग़लाया है। लगभग १०० कबायली प्रतिनिधियोंको गरमागरम बहसके बाद विदा देनेके पश्चात् नेहरू-जी राजनीतिक विभागके प्रतिनिधियोंकी ओर मुड़े और बोले : "ये ही वे पेंशन-याफ़्ता लोग हैं, जिनसे आप घबराते हैं? मैं कुछ समझ नहीं पा रहा हूँ।" जिरगा से उन्होंने कहा : "मैं मुहब्बतका पैग़ाम लेकर आया हूँ, मुझे आप लोगोंपर हुकू-मत करनेकी कोई इच्छा नहीं है। कबाइली लोगों द्वारा यह कहते हुए टोकनेपर कि "हम आज़ाद लोग हैं और अपनी प्रभुसत्ताको खोना नहीं चाहते" नेहरूजीने टीका की : "मुझे ताज्जुब होता है कि आप लोग, जो सरकारसे पैसा पाते हैं और उसीकी मर्ज़ीपर चलते हैं, कैसे आज़ादीकी बात करते हैं! हम लोग हिंदु-

स्तानकी आज़ादीके लिए लड़ रहे हैं। हम चाहते हैं कि आप भी विदेशी हुकूमत से पूरे तौरसे निजात पायें।"

नेहरूजीकी यात्रा, बाधाओंसे भरी थी। ये सारी बाधाएँ राजनीतिक एजेंसी द्वारा उत्पन्न की गयी थीं। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने इसका विस्तृत विवरण इस प्रकार दिया है :

"हम लोग पहले वज़ीरिस्तान गये जहाँ राजनीतिक एजेंसीके सभी अधिकारीगण अंग्रेज थे, जो विनीत किन्तु कुटिल थे। मीरनशाहमें पंडित नेहरूने राजनीतिक एजेंट और रेजिडेंटसे पूछा कि कबायली इलाक़ेमें करोड़ों रुपयोंके खर्चका क्या ठोस नतीजा निकला ? उन लोगोंने कोई उत्तर ही नहीं दिया। मैंने टोंककर कहा कि इन लोगोंने पख्तूनोंके लिए बहुत कुछ किया है। इससे अधिकारीगण खुश हो गये।

"मैंने कहा : 'इन लोगोंने कबायली लोगोंको इस हदतक बेईमान और रिश्वतका आदती बना दिया है कि वे लोग रुपयोंके लिए बड़ी खुशीसे अपनी जाति, वतन और इस्लामतकको बेच सकते हैं।' इस बातसे अधिकारीगण बेहद नाराज़ हुए। जब हम लोग खाना खाने बैठे तो बानाके एक नौजवान राजनीतिक एजेंटने पूछा, 'क्या हमने इस इलाक़ेके लिए कुछ भी नहीं किया ?' मैंने कहा, 'आपने कुछ भी नहीं किया, बताइए, आपने क्या किया है ?'

"वहाँसे विमान द्वारा पहले टांक गये और फिर लंडोला पहुँचे, जहाँका राजनीतिक एजेंट हिंदू था। वहाँके कबाइली लोग हमसे बड़े प्रेमसे मिले और हमें भेंट करनेके लिए भेड़ें लाये। जितनी देर उनसे बातचीत हुई, वे बराबर हमारा समर्थन और सहयोग करते रहे। वहाँसे हम पेशावर लौटे और दूसरे रोज़ खैबर गये, जहाँका राजनीतिक एजेंट मुसलमान था। जब हम जमरूद गये तब वहाँ हमें सड़कसे कुछ परे बैठे अफरीदियोंने जूते दिखाये। तोरखानमें चाय पीकर जब हम लांदी कोटल पहुँचे तो वहाँ सड़कपर बैठे लोगोंने हमपर पत्थर फेंके। राजनीतिक एजेंटकी कार हमारे आगे थी, वह रुक गयी और उसके रक्षकोंने भीड़पर गोलियाँ चलायीं। भीड़ छँट गयी। हमारी कारके शीशे फूट गये लेकिन चोट सिर्फ हमारे एक अंग्रेज साथीको आयी, जो उतरकर फोटो ले रहे थे।

"दूसरे रोज़ हम मालाकंदके इलाक़ेमें दौरा करनेवाले थे। हमें मालूम हुआ कि राजनीतिक एजेंट शेख महबूब अली, जो सिद्धान्तहीन और खतरनाक आदमी है, गवर्नरसे बात करने पेशावर गया था। इस बातको ध्यानमें रखकर मैंने पंडित नेहरूसे पूछा कि क्या वे इसपर भी मालाकंद जाना चाहेंगे ? उन्होंने कहा कि मैं

तो अपने प्रोग्रामपर अमल करूँगा। वज़ीरिस्तानमें हमारे साथ सैनिक थे, लेकिन खैबर एजेंसीमें हमारे साथ पुलिस थी। मैंने डा० खान साहबसे कहा कि मालाकंदमें हमारे साथ सैनिक रहने चाहिए। अगर आपसे यह नहीं हो सकता तो मैं खुदाई खिदमतगारोंका प्रबन्ध कर दूँगा। मैंने उनसे कहा कि किसी भी हालतमें महज पुलिसके साथ जाना मंजूर नहीं किया जाना चाहिए। डा० खान साहबने मुझे एतबार दिलाया कि वहाँपर वे सैनिकोंका प्रबन्ध कर सकेंगे। जब हम रिसालपुर पहुँचे, तो मैंने देखा कि केवल सिपाही मौजूद हैं। मैं बेहद नाराज हुआ और मैंने सोचा कि मुझे इन लोगोंके साथ मालाकंद नहीं जाना चाहिए। फिर मैंने सोचा कि पंडित नेहरू मेरी वजहसे यहाँ आये हैं और मुझे उनके साथ रहना ही चाहिए। हम मालाकंद ठीक वक़्तसे पहले ही पहुँच गये और वहाँ हमारे स्वागतके लिए कोई भी मौजूद न था। जब हम किलेमें चाय पी रहे थे हमने बाहरका शोर सुना और पता चला कि शेखके आदमी पहुँच गये हैं, हालांकि उन्हें पहुंच पानेमें ज़रा देर हुई, क्योंकि हम वक़्तसे पहले ही पहुँच गये थे। एजेंसीमें खुदाई खिदमतगार भी थे और उनके नेता राहद खानने हमें सावधान किया कि शेखने बहुत सारे गुण्डोंको जुटा लिया है और हमें उसके लिए आवश्यक व्यवस्था कर लेनी चाहिए। हमने रात मालाकंदमें गुजारी। शेख, डाक्टर खान साहबको खुश करनेकी कोशिशमें बराबर लगा हुआ था और वे चापलूसीके शिकार हुए जा रहे थे। दूसरे रोज सवेरे ज्यों ही हम चलनेके लिए तैयार हुए एक खुदाई खिदमतगारने आकर मुझसे कहा कि बाहर सड़कपर हमें रोकनेके लिए भारी भीड़ तैनात है, और हमें चौकस रहना होगा। मैं खान साहबको परे ले गया और उन्हें यह जानकारी दी। शेख हम लोगोंको दूरसे ताड़ रहा था। वह खान साहबके पास आया तो खान साहबने उससे सारी बातें कह दीं। शेखने कहा : "क्या आप मेरे लिए बापके बराबर नहीं हैं ? मैं पठान नहीं हूँ ? क्या मैं इतना गलीज़ हूँ कि आपको धोखा दूँगा ?" डा० खान साहब शेखकी बातोंपर भरोसा करते हुए, पुलिस रक्षकोंतकका इंतजार न करते हुए, शेखको आगे करके बढ़ चले। हम सब पीछे थे। किलेके फाटकपर जवाहरलालजीको विदा करनेके लिए कुछ अंग्रेज जुटे थे। शेख खिसक गया। ज्यों ही हम किलेके बाहर हुए और अंग्रेजोंसे कुछ दूर हुए, इंतजार करती भीड़ने हमपर पत्थर फेंकना शुरू किया। भीड़ने सड़कके बीचोबीच हमें बाधा देनेके लिए एक ट्रक खड़ी कर दी थी। एक पत्थर मेरी पीठपर गिरा और मुझे झाई आ गयी। कारकी अगली सीटपर बैठा हुआ जमादार नीचे झुक गया। डा० खान साहबने जमादारकी रिवाल्वर

छीन ली और उसे भीड़की ओर रुख करते हुए कड़कती हुई आवाज़ दी, "हट जाओ, वरना गोली मार दूँगा।" भीड़ फ़ौरन भाग खड़ी हुई। इसी प्रकार खान साहबने ट्रक ड्राइवरसे सड़क खाली करनेको कहा और वह भी गाड़ी लेकर खिसक गया। इस तरह हमारी रक्षा हो पायी। अंग्रेजोंकी आँखोंके सामने फाटकपर हमपर हमला हुआ और उन लोगोंने हमें बचानेकी कोई कोशिश नहीं की। हमारे दलमें प्रांतके मुख्य मंत्री और विदेश मंत्रालयके अध्यक्ष थे, जिनके जिम्मे समूचा कबायली इलाक़ा था। हम सब घायल हुए और कारके काँचके परदे फूट गये।

"दोबारा सफ़र शुरू करनेसे पहले मैंने डा० खान साहबसे कहा कि हमारी कार दो ट्रकोंके बीच चलनी चाहिए। अगर राहमें कहीं भीड़ नज़र आये, तो पाइलट ट्रक रुक जाय, रक्षक उतर जायँ और भीड़को हट जानेका आदेश दें। अगर लोग हटनेसे इनकार करें तो भीड़पर लाठीचार्ज किया जा सकता है। और यदि लाठीचार्ज बेअसर साबित हो तो पीछेवाली ट्रकके रक्षक गोली चलायें। जब हम मालाकंदसे दरगाई पहुँचे तो वहाँ उपस्थित भारी भीड़ने हमपर पत्थर बरसाना आरम्भ किया। जवाहरलालजीपर निशाना साधकर चलाये हुए एक पत्थरको रोकनेके लिए मैंने अपना हाथ आगे कर दिया। एक आदमीने कीचड़भरा मिट्टीका एक पात्र हमपर फेंक दिया जो मुझे और जवाहरलालजीको न लगकर डा० खान साहबको लगा, जिससे उनका सारा बदन गंदा हो गया। हम लोग बड़ी-बड़ी दिक्कतोंको झेलते हुए पेशावर पहुँचे और यह सब डा० खान साहबकी असावधानीके कारण हुआ। अगर हमें इजाज़त दी गयी होती तो हम अपने लिए उचित व्यवस्था स्वयं कर सकते थे।

"दूसरे रोज़ सरदरयावमें हमारे अपने केंद्रपर सभाका आयोजन किया गया था। हम लोगोंने एहतियातन ऐसी व्यवस्था कर दी थी कि सरकारी प्रोत्साहनके बावजूद किसीने सभाकी गतिविधिमें विघ्न उत्पन्न करनेका साहस नहीं दिखाया। हमने डॉ० खान साहबसे कह दिया था कि हम अपना इन्तजाम खुद कर लेंगे और उन्हें या उनकी सरकारको हमारी रक्षाके लिए कष्ट करनेकी जरूरत नहीं है। जब हमारा इन्तजाम पूरा हो गया और मैं जवाहरलालजीके साथ बैठा हुआ था तब मुझे पता चला कि कुछ अंग्रेज अधिकारी डा० खान साहबके निवास-स्थानपर गये और उन्होंने हमारी रक्षाके लिए सैनिक टुकड़ी भेजनेकी ज़िद की। डॉ० खान साहबने कहा : 'ठीक है, उन्हें भी आने दीजिए।' मैं अपनी बातपर अडिग रहा। मैंने अंग्रेज अधिकारियोंसे कहा : 'जब हमें आपकी मददकी जरूरत

थी तब तो आपने हमारी सुरक्षाका कोई प्रबन्ध किया नहीं। आज हमें आपकी या आपकी व्यवस्थाकी कोई आवश्यकता नहीं है, मेहरबानी करके हमें बख्श दीजिए और यह प्रबन्ध कर दीजिए कि आप लोगोंमेंसे कोई भी हमारे साथ न चले।' अंग्रेजोंने मालाकंदके कबायली लोगोंको, जिनके नेता मंकी शरीफके पीर साहब थे, सरदरयाबसे चौदह मील दूर मथुरा रोड और चारसद्दाकी सड़कके चौरास्तेपर हमपर हमला करनेके लिए प्रेरित किया। मुस्लिम लीग उत्पात खड़ा करनेके लिए उत्सुक थी, मगर उसे साहस नहीं हुआ। पेशावरसे सरदरयाबतक सड़कके दोनों ओर खुदाई खिदमतगार गणवेशमें डटे हुए थे। इन निःशस्त्र खुदाई खिदमतगारोंके पीछे इर्द-गिर्दके गाँवके लोग जुटे थे जिन्हें मालाकंदकी दुर्घटनाका पता चल जानेके कारण हमसे गहरी सहानुभूति उत्पन्न हो गयी थी। गाँवके लोगों ने ऐलान कर दिया कि यदि हमपर हमला हुआ तो वे हिंसाका जवाब हिंसासे देंगे। कुछ लीगी उपद्रव करनेकी नीयतसे सरदरयाब आये परन्तु जब उन्होंने खुदाई खिदमतगारोंके पीछे दृढ़तासे डटे सशस्त्र ग्रामीणोंको देखा तो चुपकेसे खिसक गये।"

सोमवार, २१ अक्तूबर १९४६ की शामके ४ बजे केंद्रपर २५ हजार लोगों की भारी भीड़ एकत्र हुई। दूर-दराजके लोग जुटे थे और सरदरयाबके पास ही रहनेवाले आजाद मुहम्मद कबीलेके नेतागण भी नेहरूजीके स्वागतके लिए आये थे।

खुदाई खिदमतगारोंकी ओरसे नेहरूजीके स्वागत-भाषणमें कहा गया : "केंद्रीय भारत सरकारके उपाध्यक्ष, आदरणीय नेता ! हम पख्तून लोग खुदाई खिदमत-गारोंके माध्यमसे आपका हार्दिक और निश्छल स्वागत करते हैं। बहादुर सेनानी, आपने देशकी स्वतन्त्रताके लिए जो कुर्बानियाँ दी हैं और जो कष्ट सहे हैं उनके लिए हम आपकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते हैं और हमारे खयालमें जनताकी राज-नीतिक प्रगति और अंग्रेजोंसे सत्ता प्राप्त करनेमें आपका योगदान महान् है। हम पख्तून यह जानते हैं कि आप हिंदू और मुसलमान या देशमें रहनेवाले दूसरे लोगों के प्रति किसी प्रकारका भेद-भाव नहीं बरतते। संकटापन्न मुसलमानोंका पक्ष लेकर जिस प्रकार आपने कश्मीरके हिंदू शासकसे व्यवहार किया वह इस बातका प्रत्यक्ष प्रमाण है कि आपके विचारोंमें सांप्रदायिकताके लिए कोई स्थान नहीं है और इसीलिए हिंदू और मुसलमान दोनोंकी दृष्टिमें आपको आदरका स्थान प्राप्त है।

"राष्ट्रनायक, सभी देशवासियोंके प्रति आपका व्यापक प्रेम और शुभचिंता

और पख्तूनोंके प्रति विशेष अनुराग सूरजकी धूपकी तरह उजागर है। आपने अपना यह अनुराग तभी प्रकट कर दिया था जब कि सत्ता और शक्ति आपके हाथोंमें नहीं थी। अब, जब कि आप सत्ता और शक्तिसे सम्पन्न हैं, हम पख्तून यह आशा करते हैं कि हमें आपकी गंभीरतर और दृढ़तर अनुराग-रश्मियोंका स्निग्ध आलोक प्राप्त होगा। प्रारम्भसे ही पख्तून लोग भारतीय राजनीतिमें अत्यंत गंभीर भूमिका अदा करते आ रहे हैं। पख्तूनोंकी भौगोलिक स्थितिने उन्हें भारतके चौकीदारों और रक्षकोंकी हैसियत प्रदान की है। आज आप एक सत्तारूढ़ व्यक्तिकी स्थिति-से हमारे इलाक़ेमें पधारे हैं और हम आपसे यह उम्मीद रखते हैं कि आप भौगो-लिक दृष्टिसे सामरिक महत्त्वकी हमारी स्थितिपर विचार करेंगे। इस बातका श्रेय आपको प्राप्त है कि पख्तूनोंकी आवाज़ भारतीयोंकी आवाज़में घुल-मिल गयी है। सन् १९३० के शानदार वर्षमें आपने कांग्रेस अध्यक्षकी हैसियतसे काँटोंका ताज अपने सिरपर धारण किया और उसी समय हमने भी बादशाह खाँके नेतृत्वमें अंग्रेजोंके खिलाफ बग़ावतकी आवाज़ बुलन्द की। अतीतकी ही भाँति आज भी हम भारतके कष्टों और संकटोंमें साझीदार हैं। आज आपके और हमारे त्याग सफल हुए हैं। देशमें कुछ परिवर्तन उत्पन्न हुआ है और भारतीयोंके साथ ही हम पख्तून भी उसमें साझीदार हैं। लेकिन हमारे प्रांतकी कुछ खास समस्याएँ हैं। हमारे लाखों पख्तून भाई हमारे प्रांतके इर्द-गिर्द रहते हैं। अगर हमारे और उनके संबंध बिगड़ गये तो उससे भारतपर बुरा असर पड़ेगा। भारतमें शांति बनाये रखनेके लिए हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम उनसे मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित करें। लेकिन अबतक केंद्रीय सरकारने उनके साथ जैसा बर्ताव किया है उससे उनके मनमें हमारे इरादोंके प्रति संदेह पैदा हो गया है। अतः इन संदेहोंको दूर करना आवश्यक है। केंद्रीय सरकारको चाहिए कि हमारे माध्यमसे वह इन कबा-यली लोगोंसे सम्पर्क बनाये रखे और इन्हें राजनीतिक विभागके निरंकुश शासनसे मुक्त करे, क्योंकि उक्त विभागने शांति और सुधारके नामपर भारतकी ग़रीब जनतासे लाखों रुपये उगाहकर इस इलाक़ेमें बरबाद किये हैं। आपको मालूम है कि हमारा प्रांत कितना ग़रीब है। हमारे यहाँ पीनेके पानीका भी आवश्यक प्रबन्ध नहीं है। कबायली लोगोंकी स्थिति हमसे भी बदतर है। आप भी इन सब बातोंसे वाकिफ़ होंगे और आप यहाँ अपने बहुतसे ज़रूरी काम छोड़कर ही आ पाये होंगे। इस मौकेका फायदा उठाकर हम आपसे अर्ज़ करना चाहते हैं कि यहाँसे वापस लौटनेसे पहले आप हमारे नेता फ़ख़्रे-अफ़ग़ानसे तय कर लें, कि यदि केंद्रीय सरकार हमारी बहबूदीके लिए कोई योजना बनाती है तो हमारे कबायली

भाइयोंकी भलाई करनेके संबंधमें भी उपेक्षा न करे और जीवनके नये आयामों-का द्वार खोलनेके लिए केंद्रीय सरकार उन्हें मदद पहुँचाये ।

"अन्तमें हम फिर आपका हार्दिक स्वागत करते हैं । आज़ादीकी लड़ाईमें हम सब आपके साथी हैं ।"

जवाबमें, जवाहरलाल नेहरूने कहा :

"केंद्रीय सरकारके उपाध्यक्षकी हैसियतसे मुझे दिये गये अभिनन्दन-पत्रके लिए मैं आप लोगोंको धन्यवाद देता हूं । मैं यहाँ आज एक पुराने मित्र और साथीकी हैसियतसे आया हूँ, सरकारके प्रतिनिधिके रूपमें नहीं । यह हैसियत तो आने-जानेवाली है मगर हमारी मैत्रीका बन्धन क्षणिक नहीं है । मैं यहां छः वर्षों के बाद आया हूँ और इन छः वर्षोंमें एक बहुत बड़ी क्रांति हो गयी है । युद्ध तो खत्म हो गया लेकिन इस दुनियाकी मुसीबतें खत्म नहीं हुईं । हम सोचते हैं कि पचास सालसे चली आ रही हमारी लड़ाई खत्म हुई, राष्ट्रीय सरकारकी स्थापना हो गयी, लेकिन इसके साथ ही हजारों कठिनाइयाँ और समस्याएँ हमारे समक्ष उपस्थित हो गयीं । फिर भी हमें साहस नहीं खो बैठना चाहिए । हमारा देश एक शानदार देश है । बरसोंकी मुसीबतों, कुर्बानियों और संघर्षके बाद हम अपनी धरतीके खुद मुख्तार हो पाये हैं । आज हम शक्तिशाली हैं और स्वाभिमानपूर्वक सिर ऊँचा करके चल सकते हैं, लेकिन हम लोगोंमें ग़लतफ़हमियाँ पैदा करनेकी हरचन्द कोशिशें की जा रही हैं । हमारे अज्ञानका लाभ उठाकर कुछ लोग हमारे घरोंको बरबाद करनेकी कोशिश कर रहे हैं । जैसा कि मैं पहले भी कह चुका हूं, मैं यह बात ज़ोर देकर कहना चाहता हूं कि जब हमें पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त होगी तो उससे भारतके सभी नरनारियोंका मंगल होगा, किसी समूह या दल-विशेषका नहीं । आपने अपनी ओरसे आज़ाद कबायली लोगोंका जिक्र किया और मैं यह बता देना चाहता हूँ कि मेरी यह यात्रा खास तौरसे उन्हें ध्यानमें रखकर आयोजित की गयी है । इन इलाक़ोंमें आज मेरा पाँचवाँ दिन है । इस बीच मैंने काफी तजुर्बे कर लिये हैं, कुछ अच्छे और कुछ बुरे भी ।

"बहुतसे लोगोंने मेरे यहाँ आनेपर एतराज किया । मगर मुझे इस बातकी खुशी है कि मैं यहाँ आया । मैं यहाँ प्यार और भाईचारेका पैग़ाम लेकर आया हूँ । कुछ लोगोंने उपद्रव और उत्पात खड़े किये, जिन्हें आप और हम रोक नहीं पाये । हम लोगोंको इस बातकी इजाजत नहीं दी गयी कि हम अपना इन्तज़ाम खुद कर लें और जो इन्तजाम किया गया था वह इतना नाकाफ़ी था कि हर कहीं कुछ न कुछ गड़बड़ी पैदा हो गयी । इन सब बातोंके पीछे हक़ीक़त यह है कि

इस देशमें ऐसे लोगोंके कुछ गिरोह हैं जो हम लोगोंमें फूट और नफ़रत पैदा करने-की चालें रचते रहते हैं। भारतकी आज़ादीकी लड़ाईमें हम और आप साथ-साथ कदमसे कदम मिलाकर चले और इस देशमें प्यार और मुहब्बतकी एक ऐसी फ़िज़ाँ तैयार की, कि हमें यह उम्मीद हो चली कि हमारे देशकी प्रगति और समृद्धिकी दीवारपर प्यारका पलस्तर होगा। हम लोग सरकारसे लड़े लेकिन अंग्रेजों की निजी सुरक्षा कभी खतरेमें नहीं पड़ी। वे गलियों, सड़कों और बाज़ारोंमें आज़ादीसे और बेफ़िक्रीसे घूमा किये। हमारे नेताओंने हमें एक सच्चे भारतीयकी शान और बहादुरीसे लड़ना सिखाया। मेहरबानी करके एक बात हमेशा याद रखिए कि कोई भी पार्टी या गिरोह, ऐसी अनुशासनहीन हरक़तोंसे, जिनसे महज़ बदइंत-ज़ामी फैलती है, कोई लाभ नहीं उठा सकता। इन ग़ैरजिम्मेदाराना हरक़तोंका दूसरा मंशा शायद हमें डरा देना था। लेकिन यह ज़ाहिर है कि जिन लोगोंने अत्याचारी और दमनकारी ब्रिटिश हुकूमतको चुनौती दी है, वे ऐसी टुच्ची हरकतों से डराये नहीं जा सकते। इन घटनाओंसे आपकी आँखें खुल जानी चाहिए और आपकी नींद टूटनी चाहिए। आपने सोचा कि देश आज़ाद हो गया है इसलिए हमारी जिम्मेदारियाँ ख़त्म हो गयीं, लेकिन ये वारदातें कुछ और ही इशारा करती हैं और हमें चेतावनी देती हैं कि अभी हमारी लड़ाई खत्म नहीं हुई है, और विरोध और नफ़रतके जो बीज आज बोये जा रहे हैं वे हमें तबाह और बर-बाद कर देनेवाले साबित होंगे। तलवार और राइफलके घाव जल्दी भर जाते हैं, लेकिन ऐसे घाव जल्दी नहीं भरते। इसीलिए सभी बड़े-बड़े पैगम्बरोंने इस बातपर ज़ोर दिया है कि लोगोंको आपसमें प्यार और भाईचारेकी भावनाके साथ रहना चाहिए। आज हमारे देशमें ऐसे लोग बहुत हैं, जो खुलकर नफ़रत और कटुताकी बातें फैला रहे हैं। हम यह ऐलान करते हैं कि यह देश हम सभीका है और हम सब मिलकर इसका उपभोग करेंगे और कोई भी दल या गिरोह दूसरोंकी पीठपर सवारी नहीं करेगा।

"आप भारतके इतिहाससे वाकिफ़ हैं। अंग्रेजोंने भारतको जीता नहीं, बल्कि हमारे मतभेदों और कमज़ोरियोंसे फ़ायदा उठाया। आज भी यही हालत है। वे हमारे अज्ञान, फूट और मतभेदोंसे लाभ उठा रहे हैं।

"जो कुछ भी हुआ वह आपके और हमारे लिए अच्छा ही हुआ। आपकी इस पाक धरतीपर मेरे और बादशाह खानके जो चंद खूनके क़तरे बिखर गये हैं, वे बेशक रंग लायेंगे। आप लोगोंको अपने दिमाग़से संकीर्णता निकाल देनी चाहिए क्योंकि आप लोग अपनेको खुदाई खिदमतगार कहते हैं। आप लोग जिस

प्रकार शरीरसे लंबे और तगड़े हैं, उसी प्रकार आपका दिल और दिमाग भी मजबूत होना चाहिए। मैं आप लोगोंके ज़रिए कबायली लोगोंतक यह पैग़ाम पहुँचा देना चाहता हूँ कि इधर कुछ दिनोंमें जो कुछ भी हुआ उसके लिए मेरे मनमें उनके खिलाफ कोई मलाल नहीं है। खुदाई खिदमतगारोंको कबायली इलाक़ेमें जानेकी कभी इजाज़त नहीं दी गयी, लेकिन शरारत करनेवालोंको छूट थी कि वे वहाँ जाकर प्रचार करें कि हिंदूराजकी स्थापना हो रही है। लेकिन जिस किसीने भी यह अफवाह फैलायी है, उसने सच नहीं कहा। मैं वहाँ हालातका जायज़ा लेने गया था। वज़ीरिस्तानपर बमबारीकी जिम्मेदारी हमपर भी थोपी गयी थी जब कि सच्चाई यह है कि बमबारी हम लोगोंके पदासीन होनेके एक माह पहले हुई थी। जब हमें बादशाह खाँसे बमबारीका पता चला तो हमने उसे रोक दिया। मगर कबायली लोगोंके बीच ऐसी झूठी अफवाहें फैला दी गयी हैं। इन अपढ़ लोगोंको ग़लत जानकारियाँ देकर गुमराह किया गया। वे दिलेर लोग हैं और मैं उनके इस गुणकी सचमुच क़द्र करता हूँ।

"यह मेरी पहली यात्रा है और मैं यहाँ बार-बार तबतक आता रहूँगा जब-तक कि झगड़ा तय न हो जाय। मैं कल चला जाऊँगा और इन वारदातोंकी याद ताज़ा रखूँगा। मैं आप लोगोंसे एक मुश्किल काम करनेकी अर्ज़ करूँगा—आप इन वारदातोंपर गुस्सा न करें। गुस्सा अपनेमें कोई अच्छी बात नहीं लेकिन अगर उसे ताक़तमें बदल दिया जाय तो उससे बड़े-बड़े नतीजे हासिल हो सकते हैं। बादशाह खाँ पर, जो कि उसूलके पक्के हैं, हुए हमलेपर आप लोगोंका रंज होना जायज़ है और आप लोगोंको रंज होना भी चाहिए, लेकिन सच्चे क्रोधसे हमें ताक़त पैदा करनी चाहिए और अपने देशको आगे ले जाना चाहिए और नादिरशाही हुकूमतको खत्म करना चाहिए।

"मैं अब विदा हो रहा हूँ लेकिन इस यात्राकी याद बनी रहेगी। मैं स्वागत-भाषणके लिए आप लोगोंको एक बार और धन्यवाद देता हूँ।"

अन्तमें बोलते हुए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने कहा :

"मैं इस मौक़ेपर बोलना नहीं चाहता था, लेकिन मैं आप लोगोंको होशियार कर देना चाहता हूँ। मैं एक पख्तून हूँ और मुझे सीधी बात कहनेकी आदत है। मैं आप लोगोंसे यह साफ़ कह देना चाहता हूँ कि जवाहरलाल नेहरू अपना दिल खोलकर आपके सामने पेश नहीं कर पाये, क्योंकि वे सरकारके एक जिम्मेदार आदमी हैं और इसलिए सरकारके खिलाफ नहीं बोल सकते।

"१९३१ ई० में गांधीजी भी सीमांत प्रांतमें आना चाहते थे, लेकिन तत्का-

लीन वाइसराय लार्ड विलिंगडनने उन्हें इस बातकी इजाज़त नहीं दी। तब गांधीजीने जवाहरलाल नेहरू और सरदार पटेलके नाम सुझाये थे लेकिन वाइसरायने सुझाव नामंजूर कर दिया। आखिरकार गांधीजीने वाइसरायको सूचना दी कि इसका परिणाम चाहे जो भी हो, देवदास सीमांत प्रांतकी यात्रा करेंगे। वाइसरायकी मर्जीके खिलाफ देवदास यहाँ आये। सरदरयावके इसी पुलपर 'सभ्य' सरकारने डाकुओंका एक गिरोह हमें मार डालनेके लिए भेजा था। खुदाकी मेहरबानीसे हम सब बच गये। ईश्वर जिसकी रक्षा करता है उसे कोई नहीं मिटा सकता।

"जवाहरलालजीने आप लोगोंको बताया कि उनके यहाँ आनेपर कुछ लोगोंने विरोध प्रकट किया। वाइसरायकी तरह हमारे गवर्नर साहबने भी उनके दौरेकी खिलाफ़त की। चूँकि नेहरूजीने उनकी परवाह नहीं की इसलिए उन लोगोंने इन्हें सबक सिखानेकी गंदी तदबीर की। जिन लोगोंके फायदे और तरक्कीके लिए नेहरूजीने दौरा करना क़बूल किया था, उन्हीं लोगोंको भड़काकर पत्थर फेंकवाया गया। इस बातपर उन लोगोंपर उत्तेजित हो उठना अच्छी बात नहीं है। पख्तूनों में फूटके बीज बोकर अंग्रेज हमें बरबाद करना चाहते हैं। मालाकंद एजेंसीमें जो कुछ भी हुआ वह हमारी असावधानी और गफ़लतसे हुआ है। हमारी जानें बच गयीं क्योंकि हमें ज़िंदा रहना था। उन लोगोंने हमें मार डालनेकी पूरी कोशिश की लेकिन ईश्वर कुछ और चाहता था और इसलिए आप लोगोंकी खिदमत करनेके लिए हम बच निकले। अंग्रेजोंने हमारे लिए एक जाल फैला रखा है लेकिन हम बच्चे नहीं हैं कि उनकी चालें समझ न सकें। वे हम लोगोंके बीच आपसी झगड़े पैदा करना चाहते हैं। हमें उनके जालमें फँसना नहीं चाहिए। वे हमसे कहते हैं कि आइए, हम एक-दूसरेपर भरोसा करें। क्या भरोसा पैदा करनेका यही तरीक़ा है? हमारे दौरेके मौकेपर मालाकंदके राजनीतिक एजेंट शेख महबूब अली अधिकारियोंसे मुलाकात करने पेशावर गये थे, और बादमें जो कुछ भी हुआ वह सब षड्यंत्रकारी अंग्रेज़ोंकी पूर्ण सहमतिसे हुआ। अबतक हमने उनपर भरोसा किया था। अब हमें भविष्यके लिए एक दृढ़ नीति निर्धारित कर लेनी चाहिए। जब सरदरयावमें हमने अपना इंतजाम पूरा कर लिया तब पुलिस और सेनाके लोग हमारे पास यह कहने आये कि वे हमारी सुरक्षाका प्रबन्ध करना चाहते हैं। मैंने बिना मुरव्वतके उनसे कह दिया कि हमें आपकी मदद नहीं चाहिए। हमें छोटे बच्चोंकी तरह बहकाया नहीं जा सकता। जब हमें उनकी मदद चाहिए थी तब तो वे हमें छोड़ गये। जब हमें उनका संरक्षण चाहिए था, तब तो वे गायब

हो गये। जब हमपर हमला हो चुका, तब वे नज़र आये। हम उनका खेल समझ सकते हैं और हम उनकी रणनीति समझते हैं।

"मैं आपको यह याद दिलाना चाहता हूँ कि अंग्रेज सिंहासनसे च्युत होना नहीं चाहते और इसके लिए वे चाहते हैं कि हम आपसमें लड़ते-लड़ते चुक जायें। हम अपने दुश्मनोंको जानते और पहचानते हैं और समझते हैं कि वक़्त बड़ा नाजुक है। जो दुश्मन हमारे धर्म, हमारे देश और हमारी जातिको तबाह करना चाहता है, वह हमें कहीं नींदमें गाफ़िल न पा जाय, बल्कि हमें लड़नेके लिए पूरे तौरसे तैयार पाये, यही मैं चाहता हूँ।"

काले बादल

१९४६-४७

सीमाप्रान्तके दौरेसे वापस आनेके बाद जवाहरलाल नेहरूने २३ अक्तूबर १९४६ को लार्ड बेवलको एक पत्र लिखकर याद दिलाया कि किस आधारपर कांग्रेसने अन्तरिम सरकारमें मुस्लिम लीगका शामिल होना स्वीकार किया है। उन्होंने जवाब दिया कि "मैंने श्री जिनाको साफ-साफ बता दिया है कि १६ वीं मईकी योजना मंजूर कर लेनेकी शर्तपर ही मुस्लिम लीग अन्तरिम सरकारमें शामिल हो सकती है·····और आपको जल्द-से-जल्द इस योजनाको मंजूर करनेके लिए अपनी परिषदकी बैठक बुलानी चाहिए। श्री जिनाने मुझे यकीन दिलाया है कि मुस्लिम लीग सहकारके इरादेसे ही अन्तरिम सरकार और संविधान सभामें शामिल होगी।" नेहरूने उन्हें फिर लिखा : "यद्यपि आपने श्री जिनाको यह बात साफ-साफ बता दी है फिर भी यह स्पष्ट नहीं होता कि इस संबंधमें मुस्लिम लीगका क्या दृष्टिकोण है। इसका साफ हो जाना इसलिए और भी आवश्यक हो जाता है कि मुस्लिम लीगने सरकारमें शामिल होनेके पहले कांग्रेससे कोई समझौता नहीं किया है।"

कलकत्तामें एकाएक मुस्लिम लीग द्वारा प्रत्यक्ष काररवाई दिवसके रूपमें उपद्रव शुरू कर दिये जानेके बाद वहाँकी हिन्दू जनता भी संघटित हो गयी और ईंटका जवाब पत्थरसे देने लगी। इसके बाद यह आवाज़ आने लगी कि कलकत्तेका बदला लेना चाहिए और किसी ऐसे क्षेत्रके हिन्दुओंपर ज़ोरदार हमला किया जाना चाहिए जहाँ मुसलमानोंकी तादाद ज्यादा हो। इसके लिए विशेष सहूलियत पूर्वी बंगालके नोआखाली ज़िलेमें दिखाई पड़ी जहाँकी आबादीमें सैकड़े पीछे ८५ मुसलमान थे। जिस दिन अन्तरिम सरकारमें मुस्लिम लीगके शामिल होनेकी घोषणा हुई ठीक उसी दिन नोआखालीमें मुसलमानोंने हत्या, बलात् अपहरण, बलात्कार, अग्निकाण्ड, लूटपाट, बलात् विवाह और धर्म-परिवर्तनका खूँखार दौर-दौरा शुरू कर दिया। वहाँ नागरिक प्रशासन जैसी कोई चीज़ ही नहीं रह गयी और बहुत जगहोंपर तो प्रशासनने गुण्डोंकी खुले आम मदद भी की। बंगाल और बिहारके सीमावर्ती ज़िलोंमें हजारोंकी संख्यामें शरणार्थियोंकी भीड़ आने लगी। उनकी जबानपर जुल्म और अत्याचारकी भयानक कहानियाँ थीं। इन्हें सुनकर सारे

हिन्दुस्तानमें रोषकी लहर दौड़ गयी और बिहारमें इसके प्रतिक्रियास्वरूप हिन्दू जनता उबल पड़ी। बिहारका बदला सीमाप्रान्तके हजारा क्षेत्रमें लिया गया और वहांके हिन्दू और सिख मुसलिम धर्मोन्मादके विशेष शिकार हुए। देखते-देखते संयुक्त प्रान्त, पंजाब और सिंधमें भी साम्प्रदायिक दंगोंका बोलबाला हो गया।

२३ अक्तूबरको दिल्लीमें कांग्रेस कार्य समितिकी बैठक हुई जिसमें पूर्वी बंगालकी घटनाओंपर निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकार किया गया :

"...इस समितिकी रायमें बर्बरताका यह विस्फोट मुस्लिम लीग द्वारा पिछले कई सालोंसे नफ़रत और गृहयुद्धकी सियासतको अमलमें लाये जानेका सीधा नतीजा है और है हिंसाकी उन धमकियोंका परिणाम जो पिछले कई महीनोंसे वह देती रही है। प्रान्तकी जनतापर जैसी भयानक विपत्ति आयी उसकी असली जिम्मेदारी प्रान्तीय सरकारपर है....

"इसीके साथ-साथ समिति बदलेकी भावनासे की जानेवाली साम्प्रदायिक हिंसा और उपद्रवोंके खिलाफ़ चेतावनी देना भी आवश्यक मानती है। इस समय राष्ट्रवाद और सम्प्रदायवादमें अन्तिम दुर्दान्त संघर्ष छिड़ा हुआ है। पूर्वी बंगाल में हुए दंगे साफ़ तौरसे उस राजनीतिक कुचक्रके अङ्ग हैं जो भारतीय राष्ट्रवाद-को तहस-नहस करने और लोकतान्त्रिक आज़ादीकी ओर देशके बढ़ते हुए क़दम-को रोक देनेपर आमादा है। इसलिए समिति इस चेतावनीपर बहुत ज़ोर देना अनावश्यक समझती है कि साम्प्रदायिकताके खिलाफ सिर्फ राष्ट्रीयतासे ही लड़ा जा सकता है, जवाबी साम्प्रदायिकतासे नहीं, जिसका नतीजा आखिरमें विदेशी हुकूमतको स्थायी बनाना ही हो सकता है।"

गांधीजीने जबसे नोआखालीकी घटनाओंके बारेमें सुना था वे यह सोच-सोच-कर बेहद परेशान थे कि आखिर इस स्थितिमें उनका क्या कर्तव्य होता है और अपनी प्रार्थना-सभाओंके भाषणमें वे अपने दिलके दर्दका बार-बार इजहार कर रहे थे। आखिरमें उन्होंने अपनेको अन्य सभी कामोंसे मुक्त कर नोआखाली जाने और वहाँ जबतक जरूरी हो ठहरनेका निश्चय कर लिया। इसके पीछे उनकी "करो या मरो" की भावना थी। उन्होंने यह दृढ़ निश्चय कर लिया कि वे वहाँ से तभी वापस आयेंगे जब उपद्रवोंसे पीड़ित लोगोंमें साहसका संचार हो जायगा और जुल्म करनेवाले दंगाइयोंमें पछतावेकी भावना पैदा हो जायगी और दोनों सम्प्रदायके लोगोंका एक साथ रहना सम्भव हो जायगा। २७ अक्तूबरकी प्रार्थना-सभामें भाषण करते हुए उन्होंने कहा कि मैं कल सवेरे ही कलकत्ता रवाना हो रहा हूँ। मैं किसीके बारेमें अपना कोई फैसला सुनाने बंगाल नहीं जा रहा हूँ।

मैं वहाँ एक जनसेवककी हैसियतसे जा रहा हूँ और वहाँके हिन्दू और मुसलमानों से समान रूपसे मिलूँगा। आज कुछ मुसलमान मुझे अपना दुश्मन समझ रहे हैं। किन्तु मुझे उनके गुस्सेकी परवाह नहीं है। कभी-कभी मेरे सहधर्मी भी मुझसे नाराज नहीं हुए हैं ? सत्रह वर्षकी उम्रसे ही मैंने यह पाठ पढ़ लिया है कि सारी दुनियाके लोग, फिर उनकी राष्ट्रीयता, रंग और देश जो भी हो, मेरे सगे सम्बन्धी है। यदि हमें ईश्वरका सेवक होना है तो हमें उसकी सारी सृष्टिका सेवक बनना पड़ेगा।

जिस समय गांधी कलकत्तामें थे अन्तरिम सरकारके चार मन्त्री—नेहरू, पटेल, लियाकत अली खाँ और अब्दुर्रब निश्तर शान्ति-प्रयासोंको मजबूत बनानेके लिए वहाँ तुरन्त पहुँच गये। देखते-देखते बिहारमें साम्प्रदायिक दंगे शुरू हो गये और वे लोग कलकत्तासे पटना पहुँचे। ६ नवम्बरको गांधीने बिहारसे अपील की : "यदि बिहारकी बदगुमानी जारी रही तो हिन्दुस्तानके सारे हिन्दुओंकी दुनिया निन्दा करेगी। बिहारी हिन्दुओंके ग़लत कामोंसे कायदे आजम जिना द्वारा कांग्रेसके खिलाफ़ किया गया यह व्यंग्य सही साबित हो सकता है कि आखिर कांग्रेस एक हिन्दू संघटन है, फिर चाहे वह इस बातकी कितनी भी डींग क्यों न हाँके कि उसमें कुछ सिख, मुसलमान, ईसाई, पारसी और दूसरे लोग भी हैं। बिहारी हिन्दुओंका यह कर्तव्य हो जाता है कि अपने यहाँके अल्पसंख्यक मुसलमानोंको अपना भाई समझें और उन्हें वही संरक्षण प्रदान करें जो वहाँके बहुसंख्यक हिन्दुओंको प्राप्त है। वह बिहार कांग्रेसका पहला कब्र खोदनेवाला न बन जाय जिसने कांग्रेसकी प्रतिष्ठा बढ़ानेके लिए इतना कुछ किया है। ..."

५ नवम्बरको राजेन्द्रप्रसादने घोषणा की कि यदि चौबीस घंटोंके भीतर बिहारमें साम्प्रदायिक दंगे बन्द न हो गये तो गांधीजी आमरण अनशन शुरू कर देंगे। शीघ्र ही वहाँ शान्ति हो गयी।

२० नवंबरको गांधीने अज्ञात और भीषण भविष्यका सामना करनेके लिए नोआखालीमें काजिरखिल स्थित अपना शिविर भंग कर दिया। श्रीरामपुरकी प्रार्थना-सभामें भाषण करते हुए उन्होंने बताया कि मैं यहाँ अपने केवल दो साथियोंके साथ आया हूँ। दूसरे साथी काजिरखिलमें ही छोड़ दिये गये हैं जिनमें से हर एक अपने कार्यके लिए एक-एक गाँव चुन लेगा। उनका खयाल था कि हिन्दू कार्यकर्ताके साथ एक मुस्लिम कार्यकर्ता भी रहे और दोनों एक साथ स्थानीय जनताके साथ घुल-मिलकर धीरे-धीरे ऐसा माहौल तैयार करें जिससे शरणार्थियोंका भय दूर हो जाय और वे अपने गाँवोंमें वापस आकर फिरसे अमन-

चैन और दोस्तीके साथ रहने लगें। मुझे भयसे नफ़रत है। हम किसी दूसरे आदमीसे क्यों डरें? आदमीको सिर्फ ईश्वरसे डरना चाहिए। वैसी सूरतमें उसका दूसरा हर तरहका डर भाग जाता है।

सीमाप्रान्तमें शान्ति कायम रखनेकी कोशिशोंमें अब्दुल ग़फ्फ़ारने गांधीका अनुकरण किया। अब्दुल कयूमने, जो हालमें ही कांग्रेस छोड़कर मुस्लिम लीगमें शामिल हो गये थे, कहा: "नवंबर १९४६ में कांग्रेसके मेरठ अधिवेशनसे वापस आनेके बादसे ही खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने अपनी मुस्लिम-विरोधी कारगुजारियाँ दुगुनी कर दी हैं। कबायली क्षेत्रमें शान्ति-स्थापनाके लिए जो प्रतिनिधिमण्डल भेजनेका उन्होंने निश्चय किया है वह मुस्लिम भारतके लिए खतरेकी चेतावनी है। इसका उद्देश्य भोले-भाले कबायलियोंको बहकाकर ज़रूरतके वक़्त हिन्दुस्तानी मुसलमानोंकी सहायतासे विरत करना है। नेहरूके खिलाफ़ जिस तरहके उग्र प्रदर्शन हुए हैं उनसे उनको इस बातका यक़ीन हो जाना चाहिए था कि पठान पूरी तरहसे जग गया है और अखण्ड हिन्दुस्तानसे वह कोई सरोकार न रखेगा। सीमाप्रान्तकी मुस्लिम लीग उनकी इन शरारतभरी कारगुजारियोंको नाकामयाब करनेके लिए हर तरहके ज़रूरी कदम उठायेगी।"

जिनाने यह फरमान जारी कर दिया कि 'मुस्लिम लीगका कोई भी नुमाइंदा संविधान सभामें शामिल नहीं होगा।' सभाकी कुल २९६ सीटोंमें कांग्रेसने २११ सीटोंपर कब्जा कर लिया था। संविधान सभाके लिए सीमाप्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाने खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ और मौलाना आजादको चुना था। ९ दिसम्बर, १९४६ को दिल्लीमें संविधान सभाकी बैठक हुई और बाबू राजेन्द्रप्रसाद उसके अध्यक्ष चुने गये। सीमाप्रान्तकी ओरसे राजेन्द्रप्रसादको बधाई देते हुए खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कहा:

"जिन लोगोंको जेलों और इसी तरहकी तकलीफ़देह दूसरी जगहोंमें साथ रहनेका मौक़ा मिलता है वे एक-दूसरेको बहुत करीबसे जान लेते हैं। मुझे इस बातका फ़ख़्र है कि मैं बहुत अरसेतक बाबू राजेन्द्रप्रसादके साथ जेलमें रहा हूँ। मैं उन्हें अच्छी तरह जानता हूँ और कह सकता हूँ कि उनका सबसे बड़ा गुण यह है जो हर एक हिन्दुस्तानीमें होना चाहिए कि उनका दिल और दिमाग़ फिरका-दाराना ख़यालातसे बिलकुल साफ़ है। यह एक बदनसीबी है कि हिन्दुस्तान-के लोगोंमें तरह-तरहके ग़लत ख़यालात बने हुए हैं। आप सभी लोग हिन्दू खाना और मुस्लिम खानाके बारेमें जानते हैं। किन्तु बाबू राजेन्द्रप्रसाद ऐसे सभी ख़यालातसे पूरी तरह आज़ाद हैं।

"इस सभामें अपने मुस्लिम लीगी भाइयोंकी गैरहाजिरीसे मुझे बहुत तकलीफ़ हो रही है। मुझे इस बातका अफ़सोस है कि मेरे मुस्लिम भाई उत्तर-पच्छिमी सरहदी सूबेके अवाम और खासकर मुझसे नाराज हैं। वे कहते हैं कि मैं उनके साथ नहीं हूं। ट्रेनमें सफर करते हुए मुझे अक्सर ऐसी बातें सुननेको मिलती हैं। मैं उनसे कहता हूँ कि मैं बराबर उनके साथ हूँ; मैं एक लमहेके लिए भी अपनेको उनसे जुदा नहीं रख सकता। यह ठीक है कि मैं मुल्लिम लीगके साथ नहीं हूँ। यह एक सियासी पार्टी है और यह ज़रूरी नहीं है कि हर आदमी इसमें शामिल हो। हर आदमी अपनी रायके मुताबिक काम करनेको आज़ाद है। हर आदमी ईमानदारीसे अपनी जनता और अपने वतनकी भलाईके लिए जो कुछ करना ज़रूरी समझता है उसे करनेका उसे हक़ है। किसीको भी मुझसे यह पूछनेका हक़ नहीं है कि मैं कांग्रेसके साथ क्यों हूँ। मैं इस बातकी ताईद करता हूँ कि उत्तर-पच्छिमी सरहदी सूबेकी जनता धन-दौलत और तालीमके मामलेमें आपसे बहुत पीछे है। हमारा सूबा छोटा है जब कि आपके सूबे बहुत बड़े हैं। लेकिन मैं यह कह सकता हूँ कि दूसरी बहुतसी बातोंमें सरहदी सूबेकी जनता आपसे किसी भी हालतमें पीछे नहीं है।

"जब हम अंग्रेजोंके आनेके पहलेके हिन्दुस्तानकी तवारीख पढ़ते हैं और आजकी हालतोंसे उसका मुकाबला करते हैं तब मुझे पता चलता है कि एक समय हिन्दुस्तानकी देहाती जनता बड़ी खुशहाल थी और अब उसकी हालत खस्ता हो गयी है। वह मुफ़लिसी और ग़रीबीकी जिंदगीमें गर्क है। मुझे इस बातसे बड़ी तकलीफ होती है कि हम जब भी अपनी कौमकी भलाईके लिए कुछ करना चाहते हैं हमारे रास्तेमें रोड़े अटका दिये जाते हैं। इसीसे उत्तर-पच्छिमी सूबेकी जनतामें मायूसी छा गयी है और उसे ऐसा लगता है कि वह पूरी तरह लाचार और बेबस हो गयी है। हमें नासदन, यह सोचना पड़ा है कि हम अपने इस अभागे वतनके लिए तबतक कुछ नहीं कर सकते जबतक हम इसे आज़ाद न बना लें। मैं अपने हिन्दुस्तानी भाइयोंसे यह बताना चाहता हूँ कि हम लोग महात्मा गांधीके साथ क्यों हैं। हमारा यह विश्वास है कि कांग्रेस देशको आज़ाद करने और यहाँके अवामकी ज़िंदगी सुधारनेकी कोशिश कर रही है। हम गुलामीसे ऊब चुके हैं इसीलिए कांग्रेसके साथ हैं। यह ठीक है कि तालीमके मामलेमें हम आपसे पीछे हैं लेकिन १९४२ के अहिंसक आन्दोलनमें सिर्फ हमारा ही सूबा अहिंसक तरीक़ेसे लड़ा था। हमारे पास हिन्दुस्तानके दूसरे हिस्सोंके मुकाबले जंगी हथियार कहीं ज्यादा तादादमें थे फिर भी हमने अहिंसाका तरीक़ा

ही अख्तियार किया। क्यों? मैं आपसे कहना चाहता हूँ, हम चाहे हिन्दू हों या मुसलमान, हम जनताको अहिंसासे ही जीत सकते हैं क्योंकि हिंसासे नफ़रत और अहिंसासे प्यार पैदा होता है। आप दुनियामें हिंसाके जरिये अमन नहीं ला सकते। मुझे इस बातकी बड़ी खुशी है कि बाबू राजेन्द्रप्रसाद भी अहिंसामें विश्वास करते हैं और मुझे पूरा यकीन है कि अगर उन्होंने इस सभाको अहिंसा पर चलनेका रास्ता दिखाया तो वे इसे कामयाबीकी मंजिलतक ले जा सकेंगे।"

पूर्वी बंगालके श्रीरामपुर गांवका माहौल, जहां मौतकी-सी शांति छायी हुई थी और जो करीब-करीब वीरान हो गया था, रातों-रात बदल गया जब दिसम्बरके अन्तिम सप्ताहमें नेहरू कृपालानीके साथ वहां पहुँचे। आसपासके गाँवोंके हिन्दू और मुसलमान दोनों उस स्थानपर आ बसे। गांधीको दिल्ली छोड़े हुए दो महीने हो गये थे। उनके दिल्लीसे जानेके बाद केन्द्रकी हालत बहुत अच्छी नहीं थी। शीघ्र ही संकट उपस्थित होनेके आसार पैदा हो गये थे। मुस्लिम लीगको शामिल करनेकी गरजसे "उद्देश्य संबंधी प्रस्ताव" पर आम बहस करनेके बाद संविधान सभाकी बैठक स्थगित हो गयी थी किन्तु मुस्लिम लीगने सभाका बहिष्कार करनेका अपना पुराना निश्चय वापस नहीं लिया और लार्ड वेवल, जिन्होंने इस बातका मौखिक आश्वासन दिया था कि वे लीगको आन्तरिम सरकारमें इस आधारपर ले आये हैं कि वह सहयोगकी भावनासे कार्य करेगी, उस समय रहस्यपूर्ण ढंगसे मौन बने रहे जब जिनाने इसका खण्डन किया कि मैंने वाइसरायको ऐसा कोई आश्वासन दिया है। कैबिनेट मिशन और कांग्रेसमें प्रान्तोंके पुनर्विभाजनसे सम्बद्ध अनुच्छेदोंकी व्याख्याके प्रश्नपर गतिरोध कायम था। इस मसलेका कोई समाधान अबतक नहीं खोजा जा सका था। ६ दिसम्बर के ब्रिटिश सरकारके निर्णयसे आसाम और उत्तर-पच्छिमी सीमाप्रान्तकी गंभीर समस्या उठ खड़ी हुई।

नेहरूने गांधीको बताया कि उनके दिल्लीसे जानेके बाद कांग्रेस और मुस्लिम लीगके बीचकी खाई किस प्रकार चौड़ी होती गयी है और किस प्रकार उसके अन्तरिम सरकारमें आनेके पूर्व नमक करको रद किये जानेके निर्णयकी घोषणाको वह बजट अधिवेशनतक टालती रही है और किस तरह लीगके इन हथकण्डोंके कारण कैबिनेटमें संकट पैदा हो गया है और कांग्रेसी सदस्योंको लार्ड वेवलको अपने इस्तीफेकी सूचना देनेके लिए बाध्य होना पड़ा है। नेहरूने गांधीको यह भी बताया कि लार्ड वेवल वर्तमान संकटका फायदा उठाकर किस तरह मुस्लिम लीगको अधिकसे अधिक सुविधाएँ दिलाते जानेका प्रयास कर रहे हैं और कांग्रेस-

पर दबाव डाल रहे हैं कि वह प्रान्तोंमें भी मुस्लिम लीगके साथ संयुक्त मंत्रिमंडल बनाये।

गांधीने कहा : "यह नहीं भूलना चाहिए कि कांग्रेस चाहे कितनी भी शक्तिशाली क्यों न हो गयी हो, आज जिस रूपमें संविधान सभाकी परिकल्पना की गयी है उसकी बैठक तभी हो सकती है जब इसके लिए ब्रिटिश सरकार कदम उठाये।" गांधीने यह भी कहा कि "यदि मुस्लिम लीगके बहिष्कारके बावजूद ब्रिटिश सरकारके पूर्ण सहयोगसे भी संविधान सभाकी बैठक हो तो भी यह बैठक ब्रिटिश फौजोंके 'दृश्य या अदृश्य' संरक्षणमें ही होगी फिर चाहे वे फौजें हिन्दुस्तानी हों या यूरोपीय। मेरी रायमें इन परिस्थितियोंमें हम कभी संतोषजनक संविधानका निर्माण नहीं कर सकते।" उन्होंने कांग्रेस कार्यसमितिके मार्गनिर्देशके लिए निम्नलिखित सुझाव दिये :

"१. संभवतः अब संविधान सभाको बहिष्कृत कर देनेका समय काफ़ी गुजर चुका है फिर भी मेरी रायमें कांग्रेसकी स्थितिको सुस्पष्ट करनेका अब भी यही सर्वोत्तम तरीक़ा है।

"२. दूसरा सर्वोत्तम मार्ग यह है कि जिनाके साथ परामर्श कर संयुक्त व्याख्या प्रस्तुत करते हुए कैबिनेट मिशनके वक्तव्यको स्वीकार कर लिया जाय।

"३. इसे स्पष्ट रूपमें समझ लेना चाहिए कि कोई भी कांग्रेसी व्यक्ति या इकाई अपने समुदाय या प्रान्तको कांग्रेसके दृष्टिकोणसे अलग करनेमें स्वतन्त्र होगी जिसे स्वीकार करनेकी स्वतन्त्रता कांग्रेसकी भी बनी रहेगी और इस हालतमें भी वह अलग होनेवाली इन इकाइयोंका खुले रूपमें मार्गदर्शन कर सकेगी। यह व्यवस्था कैबिनेटकी स्थितिके अनुकूल होगी क्योंकि उसने यह स्पष्ट कर दिया है कि वह किसी भी समुदाय या प्रान्तको किसी प्रकारसे बाध्य न करेगा। इसका यह परिणाम होगा कि वर्ग 'अ' के सदस्य कैबिनेट मिशनके वक्तव्यमें निहित शर्तोंके अनुरूप एक पूर्ण संविधान प्रस्तुत कर लेंगे और 'ब' तथा 'स' वर्गको अपना ऐसा संविधान बनाना होगा जैसा वे पूर्वमें आसाम, पश्चिममें सीमाप्रान्त, पंजाबमें सिख और बलूचिस्तानके, जिनके अलग हो जानेकी कल्पना इस समय की जा रही है, बावजूद बना सकेंगे।

"हो सकता है ब्रिटिश सरकार शायद किसी दूसरी संविधान सभाका निर्माण करे या उसे मान्यता प्रदान करे। यदि वह ऐसा करती है तो सदाके लिए अपनेको निन्दित बना लेगी। कैबिनेट मिशनकी शर्तोंके अनुरूप संविधान बन जानेके बाद वह बाकी सारी बातोंको भाग्यपर छोड़ देने, देशमें ब्रिटिश सत्ताके आखिरी

चिह्नको भी समाप्त कर देने और ब्रिटिश सिपाहियोंको सदाके लिए हिन्दुस्तानसे वापस हटा लेनेके लिए बाध्य है ।

"कांग्रेसकी इस स्थितिके सम्बन्धमें कभी यह नहीं सोचना चाहिए कि वह पूरी तरह जिनाके हाथोंमें खेल रही है । यदि जिना अपने विचारोंके प्रति ईमानदार हैं तो संसार कांग्रेसको इस बातके लिए धन्यवाद देगा कि उसने कायदे आजम जिनाको उनके पाकिस्तानके लिए एक पूर्णत: स्वीकार्य और निर्दोष सूत्र दे दिया है । कांग्रेसको कभी सही बातसे मुँह नहीं मोड़ना चाहिए क्योंकि वह मेरे सिद्धान्तोंके साथ पूर्णत: एकाकार है ।

"संविधान समूचे भारतके लिए होगा । उसमें एक विशिष्ट अनुच्छेद इस प्रकारका रखा जायगा जिससे बहिष्कार करनेवाले संविधानका लाभ उठा सकेंगे ।"

कांग्रेस नेताओंके साथ हुई वार्ताके बाद गांधीने जो समाधान प्रस्तुत किया संक्षेपमें यही उसका स्वरूप है । बादमें ६ जनवरी १९४७ के अखिल भारतीय कांग्रेस समितिके प्रस्तावमें इसे शामिल कर लिया गया । ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने इसका पूर्ण समर्थन किया था ।

नेहरूने गांधीको दिल्ली वापस आनेके लिए बहुत कहा किन्तु उन्हें इसमें सफलता न मिली । उन्होंने नेहरूसे कहा : "आप जब चाहें यहाँ चले आयें । जब भी आपको सलाह-मशविरा करना जरूरी लगे आप यहाँ आ सकते हैं । मेरा दावा है कि मैं आपके पिताकी तरह हूँ । आपके प्रति मेरा प्रेम मोतीलालजीसे किसी भी तरह कम नहीं है । आपने मुझे कल जो प्रारूप दिखाया था उसकी भावनासे विरत न हों । किसी-न-किसी रूपमें मैं अनुभव करता हूँ कि साम्प्रदायिक समस्याओं और राजनीतिक स्थितिके सम्बन्धमें मेरा निर्णय ठीक है । मेरी बुद्धि मेरी भावनाका पूरी तरहसे समर्थन करती है । मुझे प्रतिदिन इसकी सत्यताके प्रमाण मिलते जा रहे हैं । इसलिए मैं सुझाव देता हूँ कि राष्ट्रके इस पुराने और परीक्षित सेवकसे समय-समयपर परामर्श लेते चलना चाहिए ।"

इस बीच कुछ ऐसी महत्वपूर्ण घटनाएँ घटीं जिनका सारे देशपर प्रभाव पड़ा । मुस्लिम लीगके कराची अधिवेशनमें पारित प्रस्तावसे उसके संविधान सभामें शामिल होनेकी रही-सही आशा भी समाप्त हो गयी । १० फरवरी १९४७ को नेहरूने गांधीको लिखा : "हमने वाइसरायको सूचित कर दिया है कि कराचीमें पारित प्रस्तावको देखते हुए लीगी सदस्य सरकारमें बने नहीं रह सकते । वे लंदन से निर्देश मिलनेकी प्रतीक्षा कर रहे हैं ।"

२० फरवरी १९४७ को श्री एटलीने पार्लमेण्टमें एक वक्तव्य दिया जिसमें कहा गया था कि हिज मेजेस्टीकी सरकारका यह पक्का इरादा है कि जून १९४८ से पहले ही किसी तारीखको जिम्मेदार हिन्दुस्तानी हाथोंमें सत्ता सौंप देनेके लिए आवश्यक कदम उठाये जायें। १६ मई, १९४६ के राजकीय पत्रके अन्तर्गत उसने यह निश्चय किया है कि संविधान सभा द्वारा प्रस्तुत संविधान संस्तुतिके साथ पार्लमेण्टके समक्ष उपस्थित कर दिया जायगा। श्री एटलीने यह भी कहा कि यदि 'उस समयके पहलेतक पूर्ण प्रतिनिधि संविधान सभा द्वारा' कैबिनेट मिशन योजनाकी शर्तोंके अनुरूप कोई संविधान प्रस्तुत नहीं किया जा सका तो हिज मेजेस्टीकी सरकारको इसपर विचार करना होगा कि नियत तिथिपर ब्रिटिश भारतकी केन्द्रीय सरकारके अधिकार किन्हें हस्तान्तरित किये जायें। क्या इसकी सम्पूर्ण सत्ता ब्रिटिश भारतके लिए निहित किसी प्रकारकी केन्द्रीय सरकारको ही हस्तान्तरित कर दी जाय या कुछ क्षेत्रोंमें वर्तमान प्रान्तीय सरकारोंको या फिर और किसीको किसी भी ऐसे ढंगसे जो भारतीय जनताके सर्वोत्तम हितमें हो और सर्वाधिक तर्कसंगत हो ?

इसके साथ ही श्री एटलीने 'युद्धकालीन' वाइसरायके रूपमें वेवलकी नियुक्ति की समाप्ति और उनके स्थानपर लार्ड माउण्टबैटनकी उनके उत्तराधिकारीके रूपमें नियुक्तिकी घोषणा की जिन्हें ब्रिटिश भारतकी सरकारका दायित्व भारतीय हाथोंमें सौंपनेका कर्तव्य निर्दिष्ट किया गया था। एटलीके वक्तव्यपर अपनी प्रति-क्रिया व्यक्त करते हुए गांधीने नेहरूको लिखा :

"मैंने इस पूरे वक्तव्यकी कल्पना स्पष्ट रूपमें पहलेसे ही कर ली थी। श्री एटलीके भाषणकी मेरी व्याख्या यह है :

"१. उन भागोंके लिए स्वतन्त्रताको मान्यता दी जायगी जिन्हें इसकी इच्छा हो और जो ब्रिटिश संरक्षणके विना रहनेको प्रस्तुत हों;

"२. अंग्रेज वहाँ बने रहेंगे जहाँके लोग ऐसा चाहते हों;

"३. इससे उन प्रान्तों या देशके उन भागोंमें पाकिस्तानकी स्थापना हो जायगी जो इसे चाहते हों। किसीको भी किसी बातके लिए बाध्य नहीं किया जायगा। कांग्रेसी प्रांतोंको, यदि उन्होंने बुद्धिमत्तापूर्वक कार्य किया, वह चीज मिल जायगी जो वे चाहते हैं;

"४. संविधान सभा क्या करती है और अन्तरिम सरकारके रूपमें आप लोग क्या कर पाते हैं बहुत कुछ इस बातपर निर्भर करेगा;

"५. यदि ब्रिटिश सरकार ईमानदार है और ईमानदार बनी रहती है तो

यह घोषणा अच्छी है। अन्यथा यह खतरनाक है।

नेहरूने गांधीको लिखा : "श्री एटलीके वक्तव्यमें ऐसी वहुतसी बातें हैं जो अनिश्चित हैं। इनसे संकट पैदा हो सकता है। किन्तु मुझे इसका पूरा विश्वास है ......कि हमने भारत छोड़नेकी जिस माँगको वरावर दुहराया है उससे उसकी पूर्ति हो जाती है। १५ वीं मार्चको कार्यसमितिकी बैठक हो रही है। इस निर्णायक क्षणमें आपकी सलाहसे हमें बड़ी सहायता मिलेगी।"

गांधीने ३ मार्चको पटेलको लिखा : "मैं आज विहार जा रहा हूँ। आप सभी तपे-तपाये लोग वहाँ मौजूद हैं और काम कर रहे हैं। दूसरोंकी अनुपस्थितिमें मैं देशके इन भागोंमें एक नेता जैसा वन गया हूँ। मैं आपको भले ही यह सावित न कर सकूँ किन्तु मेरा दृढ़ विश्वास है कि यहाँ मैं जो कार्य कर रहा हूँ वह बड़े ही महत्त्वका है।"

गांधी ५ मार्चको प्रातःकाल पटना पहुँच गये। वे ज्यों ही वहाँ पहुँचे वावू राजेन्द्रप्रसाद विहार मन्त्रिमण्डलके सदस्योंके साथ उनसे डाक्टर सैयद महमूदके वासस्थानपर मिले। गांधी अपने कुछ सवसे पुराने सहकर्मियोंसे घिरे हुए सिर झुकाये बैठे हुए थे। उन्होंने अपनी सामर्थ्यभर सव कुछ किया था और वे सव गांधीके आदेशानुसार आगे भी सव कुछ करनेको तैयार थे। वे इसके लिए क्षमाप्रार्थी थे कि उनके सारे प्रयत्नोंके वावजूद विहारकी स्थिति पूरी तरह अच्छी नहीं वन पायी है। राजेन्द्रप्रसादने उन्हें वताया कि पश्चात्तापकी सच्ची भावना का अभी उदय नहीं हुआ है। विहार, वंगाल और शेष पूरे भारतमें यह भावना घर कर गयी है कि विहारने वंगालको 'वचा लिया'। बैठक एकाएक समाप्त हो गयी क्योंकि गांधीको विश्रामकी आवश्यकता थी।

तीसरे पहर सवसे पहले उन दो कार्यकर्ताओंको गांधीके सामने लाया गया जिन्हें खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँने पटनामें छोड़ दिया था। उन्होंने वहुत ही निराशाजनक रिपोर्ट दी। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ स्वयं विहारके सर्वाधिक उपद्रवग्रस्त क्षेत्रोंका दौरा कर रहे थे और उन्होंने गांधीको रिपोर्ट दी थी कि विहार सरकार मेरी इच्छाके अनुसार सव कुछ करनेको तैयार है किन्तु अधिकारी लोग इस समस्याका सामना न कर सकेंगे। 'केवल जनता ही यह कर सकती है।' उन्होंने यह सुझाव दिया कि इस उद्देश्यकी सिद्धिके लिए एक समिति वनायी जानी चाहिए किन्तु यह समिति गैरराजनीतिक हो। गांधीका भी ऐसा ही विचार था। उन्होंने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको तार भेजकर पटना आने और मिलनेके लिए कहा।

पटनामें अपनी प्रार्थना-सभाके प्रथम भाषणमें गांधीने बताया कि डाक्टर सैयद महमूदके निजी सचिव द्वारा मेरे पास भेजे गये उनके एक पत्रके कारण ही मुझे यहाँ आना पड़ा है। मैं इस विश्वाससे पूर्णतः आश्वस्त था कि मुझे उस बिहारमें जानेकी आवश्यकता न होगी जिसे मैं अपनी सेवाओंके अधिकारसे बराबर प्यारसे 'अपना विहार' कहता रहा हूँ किन्तु डाक्टर महमूदके पत्रसे मैं यह सोचनेके लिए विवश हो गया कि बिहारकी स्थिति वैसी नहीं है जैसी होनी चाहिए। बीती बातोंपर अफसोस करनेसे अब कोई फायदा नहीं है। मुझे आशा है कि यहाँके लोगोंने उपद्रवग्रस्त लोगोंकी क्षतिपूर्ति करने तथा उजड़े हुए लोगोंको फिरसे बसानेका कार्य बहुत कुछ कर लिया होगा और आगे भी करेंगे। यह कार्य निःसन्देह उतने ही बड़े पैमानेपर करना होगा जिस पैमानेपर अपराध किये गये हैं। इसीसे उनके वास्तविक पश्चात्तापका प्रमाण मिलेगा। यदि यहाँके कांग्रेसजन इन सारे उपद्रवोंका भार 'गुण्डा' तत्त्वोंपर छोड़कर अपनेको पाक-साफ़ बताते रहे और यह कहते रहे कि इसके लिए उन्हें जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता तो इससे वे कांग्रेसको एक दयनीय राजनीतिक दलका रूप दे देंगे और जैसा कि अपनी सेवाओंके आधारपर उसका हमेशासे दावा रहा है वह एक ऐसा राष्ट्रीय संघटन नहीं रह जायगी जो समूचे भारतका प्रतिनिधित्व करती है और जिसमें न केवल कांग्रेसजन और उससे सहानुभूति रखनेवाले लोग बलिक उसके विरोधी भी शामिल हैं। इस दावेको सिद्ध करनेके लिए कांग्रेसको देशके सभी समुदायों और वर्गोंके ग़लत कामोंके लिए अपनेको जिम्मेदार समझना होगा। यह कहना सच न होगा कि इस साम्प्रदायिक उन्मादमें कोई भी कांग्रेसजन शामिल नहीं हुआ था। अनेक कांग्रेसजनोंने अपने मुस्लिम भाइयोंकी रक्षाके लिए अपने प्राणोंकी बाजी लगा दी है किन्तु यह तथ्य क्रुद्ध और क्षतिग्रस्त मुसलमानों द्वारा बिहारके हिन्दुओंपर किये गये इस आरोपका उत्तर नहीं बन सकता कि बिहारमें हुआ अत्याचार 'इतिहासमें अपना सानी नहीं रखता।' यह समझनेकी बात है कि उन्होंने यह आरोप किस कटुताकी भावनासे किया होगा।

गांधीने कहा कि इस वक्तव्यको चुनौती दी जा सकती है किन्तु मैं अपराधोंकी आपेक्षिक जघन्यताको बारीकीसे तौलनेका दोषी नहीं बनना चाहता। मुझे इस बातका बड़ा दुःख है कि भारतके सभी भागोंमें ऐसे विवेकहीन हिन्दू मौजूद हैं जो इस झूठे विश्वासमें चिपके हुए हैं कि बंगालके मुसलमानोंने जो कुकृत्य किये हैं उन्हें बिहारने 'रोक दिया' है। सोचने और राय करनेका यह तरीक़ा विनाश और गुलामीका तरीक़ा है। यह विश्वास करना कायरता है कि एक अरसेसे

भारतमें जो बर्बरता की जा रही है उससे किसी जनताकी संस्कृति, धर्म और स्वतन्त्रताकी रक्षा की जा सकती है। गांधीने दृढ़तापूर्वक कहा कि जहाँ भी एक अरसेसे कोई ऐसी क्रूरता चली आ रही है उसका जन्म कायरतामें ही हुआ है और कायरतासे कभी भी किसी भी व्यक्ति या राष्ट्रका उद्धार नहीं हो सकता। अतएव बदला लेनेका सही तरीका यह है कि नोआखालीमें जैसे बर्बर कार्य हुए हैं उनका अनुकरण न करके बर्बरताका मुकाबला बहादुरी और मानवतासे किया जाय। इसमें प्रतिहिंसाकी भावनाकी कोई गुंजाइश नहीं है और अपनी प्रतिष्ठाके साथ किसी भी तरहका समझौता करनेका सवाल नहीं उठता।

गांधीजी पूर्ण सत्यकी जानकारी प्राप्त करना चाहते थे। वे मन्त्रियों, मुस्लिम लीगके नेताओं और स्थानीय प्रभावशाली मुसलमानों और हिन्दुओंसे मिले। उत्पीड़ित मुसलमान अपनी शिकायतें लेकर उनके पास आये। उन्होंने उनमेंसे कुछसे कहा कि आप लोग नोआखाली जाकर उसी तरहका कार्य करें जैसा मैं यहाँ कर रहा हूँ। आपके नोआखालीमें काम करते समय यदि यहाँ कोई अप्रिय घटना होगी तो मैं उसका मूल्य अपने प्राणोंसे चुकाऊँगा।

जिस समय गांधी पटना पहुँचे खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ देहाती क्षेत्रोंमें थे। उन्होंने गांधीको लिखा : "आप ठीक कहते हैं। हमारी अहिंसा आज कसौटीपर चढ़ी हुई है। जब मैं अपने चारों ओर घिरे राजनीतिज्ञोंको घृणाका प्रचार करनेके उद्देश्यसे परमात्मा और धर्मका नाम लेते हुए देखता हूँ तो मैं राजनीतिसे घृणा करने लगता हूँ।" पागलपनके उस माहौलके बीच खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने बिहारकी जनतासे कहा : "हिन्दुस्तान इस समय दोजख बना हुआ है। जब मैं यह देखता हूँ कि हम लोग अपने ही हाथोंसे अपने घरोंमें आग लगा रहे हैं तो मेरा दिल रो उठता है। मुझे ऐसा लगता है कि हिन्दुस्तानपर अंधेरा छाया हुआ है। चारों ओर रोशनीकी तलाशमें जब मेरी नजर जाती है मैं सिर्फ मायूस होकर रह जाता हूँ।" एक दूसरी सभामें उन्होंने कहा : "हिन्दुस्तानमें हिन्दू और मुसलमान रहते हैं लेकिन उनकी कौम एक है। कुछ सूबे हैं जहाँ हिन्दू बहुत अकलियतमें हैं। इसी तरह कुछ सूबोंमें मुसलमान अकलियतमें हैं। अगर नोआखाली और बिहारमें जो कुछ हुआ है वही दूसरी जगहोंमें दुहराया जाय तो इस कौमका मुक़द्दर हमेशा-हमेशाके लिए बिगड़ जायगा इसमें कोई शक नहीं है। जनताके नुमाइन्दा मंत्रियोंके अधीन काम करनेवाली सूबाई सरकारें बड़े फिरकादाराना दंगोंको रोकनेमें नाकामयाब रही हैं। मैं मुस्लिम लीगको यह याद दिलाना चाहता हूँ कि इस्लाम दुनियाका सबसे अधिक उदार मजहब है। यदि हम सच्चे

मुसलमान हैं तो हमें अपने भाइयोंमें सहिष्णुताकी भावना फैलानेकी पुरजोर कोशिश करनी चाहिए। आज दूसरे फिरके कहीं ज्यादा सहिष्णु हैं। हमें सच्चा मुसलमान बनकर यह दोष दूर करना चाहिए।"

१२ मार्चको गांधीने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके साथ देहातोंका दौरा शुरू किया। वे हर रोज शामको दौरेसे पटना वापस आ जाते थे। मोटरमें यात्रा करते हुए वे कुमारी मनु गांधीकी गोदमें सिर रखकर झपकियाँ ले लिया करते थे। उस समय उनके थके हुए पैर खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँकी गोदमें होते थे जिन्हें वे धीरे-धीरे सहलाया करते थे। एक सायंकालीन प्रार्थना-सभामें भाषण करते हुए उन्होंने ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत छोड़नेका निर्णय किये जानेकी चर्चा की। उन्होंने जनतासे पूछा कि यदि अंग्रेज इस देशसे जा रहे हैं, जैसा कि निश्चय है, तो आपका क्या कर्तव्य होता है? बंगाल और बिहारमें जो कुछ हुआ है या पंजाब और सीमाप्रान्तमें जो कुछ हो रहा है उससे बढ़कर पागलपन और क्या हो सकता है। क्या हमें अपनी मानवता भूल जानी चाहिए और अपनेमें ही मारपीट शुरू कर देनी चाहिए? इससे हमारी दासता ही दृढ़ होगी और अन्तमें मातृभूमिके हिन्दुस्तान, पाकिस्तान आदि अनेक नामोंसे टुकड़े हो जायँगे। गांधीने प्रत्येक हिन्दू और मुसलमानको यह सलाह दी कि यदि कहीं किसी प्रकारकी बाध्यता हो तो उन्हें नम्रतापूर्वक किन्तु दृढ़तासे उसके सामने झुकनेसे इनकार कर देना चाहिए। हिंसक प्रतिरोधकी अपेक्षा इसमें कहीं अधिक साहस अपेक्षित होता है। इसके बाद उन्होंने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके अहिंसक बन जानेकी कहानी सुनायी। उन्होंने कहा कि बादशाह खाँ एक ऐसे कबीलेमें पैदा हुए हैं जिसकी परम्परा ही ईंटका जवाब पत्थरसे देनेकी रही है। उसमें ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं जिनमें बदलेकी भावना पितासे पुत्रतक पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही हो। बादशाह खाँने यह अनुभव किया कि इस तरहकी बदलेकी कारर-वाइयाँ यदि हमेशा चलती रहें तो इससे केवल पठानोंकी दासता ही स्थायी बनती है। जब उन्होंने अहिंसा अपना ली तो उन्होंने देखा कि पठान कबायलियोंमें एक प्रकारका व्यापक परिवर्तन आता जा रहा है। इसका यह मतलब नहीं है कि प्रत्येक पठानमें परिवर्तन हो गया या स्वयं बादशाह खाँने अहिंसाके सर्वोच्च लक्ष्यको प्राप्त कर लिया किन्तु वे प्रतिदिन लक्ष्यके निकट आने लगे क्योंकि उन्होंने इसके सत्यका अनुभव कर लिया था। मैं चाहता हूँ कि मेरे श्रोतागण इसी प्रकारकी अहिंसाका अनुकरण करें।

१६ मार्चको गांधीका साप्ताहिक मौन शुरू हो गया इसलिए उन्होंने प्रार्थना-

सभामें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँसे भाषण करनेका अनुरोध किया। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने अपने भाषणमें कहा कि मुझे इस बातका सख्त अफ़सोस है कि आज मैं अपनेको चारों ओर अंधेरेसे घिरा हुआ पाता हूँ और मैं जितना ही हिन्दुस्तान के भविष्यके बारेमें सोचता हूँ यह अँधेरा उतना ही घना होता जाता है। अपनी बड़ीसे बड़ी पुरजोर कोशिशोंके बावजूद मुझे कहीं रोशनी नजर नहीं आती। आज हिन्दुस्तानमें आग लगी हुई है। सभी हिन्दू, मुसलमान, सिख और ईसाइयोंको सोचना है कि अगर हिन्दुस्तान जल जायगा तो उसमें सभीका नुक़सान होगा। मैं एक खुदाई खिदमतगार हूँ। ऐसा होनेके नाते और एक सच्चा मुसलमान होनेके सबबसे मैं उस वक़्त पीछे नहीं रह सकता जिस वक़्त मुझे जनताकी खिदमत करनेका कोई मौक़ा मिलता हो। इसीलिए इस वक़्त मैं आपके बीच हूँ। अंग्रेजोंकी इस घोषणाके बाद कि वे अबसे पन्द्रह महीनोंमें हिन्दुस्तान छोड़कर चले जायँगे आपकी जिम्मेदारी और भी ज्यादा बढ़ गयी है। आपको याद रखना चाहिए कि जो चीज प्यारसे हासिल की जा सकती है वह नफ़रत या ताक़त से हासिल नहीं की जा सकती। यूरोपका नमूना हमारे सामने एक खौफ़नाक चुनौतीके रूपमें मौजूद है। मुस्लिम लीगियोंको सामान्य रूपसे संबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि मैं आपसे जो कुछ कह रहा हूँ वह आपकी भलाईके लिए ही कह रहा हूँ। आप पाकिस्तान चाहते हैं, आप इसे प्यार और दूसरोंकी रजामंदगी से ही हासिल कर सकते हैं। अगर पाकिस्तान ताक़तसे हासिल किया गया तो इसे एक ऐसी नियामत ही समझना चाहिए जिसके बारेमें बराबर शक बना रहेगा। उन्होंने अन्तमें सभी सम्प्रदायोंसे अपील की कि वे उस आगको बुझानेमें जी-जानसे जुट जायँ जिसकी लपटें आज बंगालसे बिहार और फिर बिहारसे पंजाब और सीमाप्रान्ततक फैल चुकी हैं। आप सब लोगोंको समूचे देश और उसके सभी बाशिन्दोंकी भलाईकी नजरसे विचार करना चाहिए।

उस समयकी अनेक समस्याओंपर गांधी और खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके विचार एक तरहके थे और उनका एक दूसरेके प्रति बड़ा आकर्षण था। गांधीके बहुतसे पुराने सहकर्मी उनसे इस संबंधमें काफी बहस-मुबाहिसा किया करते थे कि उनको क्या करना चाहिए क्या नहीं लेकिन खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कभी ऐसा नहीं किया। एक अवसरपर गांधीके सहकर्मियोंकी चर्चा करते हुए उन्होंने कहा : "महात्माजी, मुझे यह सोचकर ताज्जुब होता है कि कभी-कभी बहुत पढ़े-लिखे लोग भी कैसी गवाँरों जैसी बातें करते हैं। उनमें मुनासिब-गैरमुनासिब में फरक कर पानेतककी जहनियत नहीं रह जाती। वे यह क्यों नहीं समझ पाते

कि मनु आपके लिए छ: महीनेकी बच्चीके बराबर है। मुझे आपकी पवित्रतामें पूरी श्रद्धा है। यह ठीक है कि शायद मैं आपकी जगहपर होऊँ तो जैसा आप करते हैं वैसा न कर पाऊँ क्योंकि मुझमें अपने ऊपर उतना भरोसा नहीं है किन्तु ये भले लोग आपको जिस तरह बेइन्तहा बहस-मुबाहिसेमें उलझा डालते हैं वह हमें बड़ा वाहियात लगता है और इससे सिर्फ वक़्तकी बरबादी होती है। क्या वे यह नहीं देख सकते हैं कि आपने अनेक क्षेत्रोंमें नामुमकिनको मुमकिन बना डाला है? आपने ऐसे अनेक क्षेत्रोंमें नयी राह दिखायी है जो बात उनकी समझ और कल्पनाके परे थी? अगर कोई यह कहे कि चूंकि किसी कामको कर सकनेको उसमें ताक़त नहीं है इसलिए उसकी कोशिश कोई भी न करे तो मैं उसको नासमझ ही कहूँ फिर वह चाहे कितना भी पढ़ा-लिखा शख्स क्यों न हो।"

बंगाल और बिहारकी विनाशलीलाके संबंधमें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके विचार और उसे शान्त करनेके लिए उनके द्वारा किये गये कार्योंका लेखा-जोखा निम्नलिखित है:

"कलकत्तामें सीधी काररवाईकी घोषणाका ही यह नतीजा हुआ कि सारे हिन्दुस्तानमें साम्प्रदायिक दंगे शुरू हो गये। कलकत्तेके दंगेमें कुछ हिन्दू मारे गये किन्तु जब हिन्दुओं और सिखोंने बदला लेनेकी गरजसे लीगके कारनामे अख्तियार कर लिये तो मुसलमानोंके जान-मालका जो नुकसान हुआ उसका बयान नहीं किया जा सकता—उस नुकसानको किसी भी तरहसे पूरा नहीं किया जा सकता था। इस आगको भड़कानेके लिए मुस्लिम लीगने कलकत्ताका बदला लेनेके बहाने नोआखालीमें दोजखका नजारा पैदा कर दिया। यहाँ जिस तरहके बहशियाना जुल्म हुए उससे शर्मके मारे इंसानियतका सिर झुक गया। हिन्दू भी ब्रिटेनकी 'फूट डालो और हुकूमत करो' की पालिसीके जालमें फँस गये और उन्होंने नोआखालीका बदला लेनेके बहाने बिहारके मासूम मुसलमानोंपर बेशुमार जुल्म ढाये। मुस्लिम लीग उस दिनका इन्तज़ार कर रही थी और उसके लिए खुदासे इस्तदुआ मना रही थी जब वह ग़लत और नाजायज़ तरीक़ोंसे हुकूमत अपने हाथमें ले लेगी और मुल्कका बँटवारा हो जायगा। उसकी यह मुराद पूरी हो गयी। उन्होंने मुल्कके एक कोनेसे दूसरे कोनेतक आग लगा दी और अपने हाथ खून और लूटपाटसे रंग लिये। लीगकी इन खूंखार हरकतोंसे ब्रिटिश नौकरशाहीकी बन आयी। वह दुनियाके सामने हिन्दुस्तानियोंको जानवरोंके रूपमें पेश करना चाहती थी जो एक-दूसरेके खूनके प्यासे हैं और इंसानोंकी तरह व्यवहार नहीं कर सकते। वह मजदूर सरकारको यह यकीन दिलाना चाहती थी कि अगर

अंग्रेज यहाँसे चले गये तो हिन्दुस्तानी आपसमें ही लड़-झगड़कर और एक-दूसरे-को कत्ल करके बरबाद हो जायँगे। मुस्लिम लीगकी पीठपर इन अंग्रेजोंका हाथ था। उसने मौकेका फायदा उठाकर मुल्कमें अराजकताकी हालत पैदा कर दी।

"मैं पटना जिलेमें हुए मुसलमानोंकी बरबादीका चश्मदीद गवाह हूँ। बिहारके कई हिस्सोंमें मुसलमानोंके घर लूटे, जलाये और बरबाद किये गये। कितनी जानें गयीं, ५० हजार एक सौ आदमी बेघर-बार हो गये, गाँवके गाँव बरबाद और वीरान हो गये। जो थोड़ेसे गाँववाले मुसलमान विपत्तिके मारे गाँवोंमें बच रहे थे उन्हें शिविरोंमें शरण दिया गया। मुस्लिम लीगियोंको अभी भी संतोष नहीं मिला था। वे इस विपत्तिका भी फायदा उठाना चाहते थे। उन्होंने इन मुसलमानोंको बंगाल जानेकी सलाह दी। मैं उन्हें उनके अपने पुराने घरोंमें फिरसे बसाना चाहता था। मैं बैरिस्टर यूनुसके शाही महलमें इन मुस्लिम लीगी नेताओंसे मिला। वे वहाँ सारे वक़्त मौजसे सोने या खाने-पीनेमें मशगूल थे। मैंने उनसे कहा कि मैं यहाँके मुसीबतजदा मुसलमानोंकी हिफ़ाजतके लिए आपकी मदद चाहता हूँ क्योंकि वे अबतक काफी दुःख भोग चुके हैं। मैंने उनसे कहा कि 'अगर आप ईमानदारीसे उन्हें बंगालमें बसाना चाहते हैं तो मैं आपके रास्तेका रोड़ा न बनूँगा लेकिन अगर आप उनसे अपनी सियासतका फायदा उठाना चाहते हैं तो यह बिलकुल ग़लत और गैरमुनासिब है। उनपर तो खुद ही दुःखका पहाड़ टूट पड़ा है। खुदाके वास्ते आप उसमें और इजाफ़ा न करें।' उनमें किसी तरहकी हमदर्दी न थी। उन्होंने उन्हें बंगाल भेज दिया। बारिशके पहले उनके उजड़े घरोंको फिरसे बनाकर उन्हें उनके गाँवोंमें फिरसे बसा देनेके लिए मैं जो भी कोशिश कर रहा था उसमें वे बराबर अड़ंगे डालते रहे। मुस्लिम लीगी इसका विरोध इसलिए करते थे कि वे तामीरकी बनिस्बत बरबादी-पर उतारू थे। जो लोग अपने घरोंको वापस न जाकर दूसरी जगहोंमें गये उनकी ज़िन्दगी ज्यादा मुसीबतमें थी। कुछ तो रास्तेमें ही और कुछ बंगाल पहुँचकर मर गये। इसके बाद वे होशमें आये और पटना लौट आये। उन्होंने यह महसूस किया कि लीगियोंमें कोई भी भलाई कर पानेकी न तो ताक़त है और न कोई इरादा है। वे सिर्फ उन्हें अपना मोहरा बना रहे हैं।

"मुसीबतजदा मुसलमान चाहते थे कि कोई उनके साथ उनके गाँवकी झोपड़ियोंतक चले ताकि उनमें छिपाकर रखी गयी अपनी कीमती चीजें वे वापस ला सकें किन्तु मुस्लिम लीगी इतने डरे हुए थे कि उनमेंसे कोई भी यह खतरा मोल लेनेको तैयार न हुआ। सिर्फ मैं ही उनके साथ जाया करता था और मेरे

रहते किसीके साथ कोई छेड़छाड़ न हुई। तरह-तरहकी मुसीबतें उठा लेनेके बाद पीड़ित मुसलमान मेरे पास आये और उन्होंने मुझसे प्रार्थना की कि मैं बिहार सरकारसे कहकर उनके पुराने घरोंको फिरसे बनवा दूँ ताकि वे अपने गाँवोंमें वापस जाकर फिरसे आबाद हो जायँ। चूँकि जल्द ही बारिश शुरू होनेवाली थी इसीलिए मैंने सोचा कि बिहारमें गांधीजीकी मौजूदगीसे इस काममें जल्दी होगी। मेरा ख़त मिलनेपर वे आ गये और उन्होंने उपद्रवग्रस्त क्षेत्रोंका दौरा शुरू कर दिया। उन्होंने उन्हें ढाढ़स बँधाया और उनमें हिम्मत और ताक़त पैदा की।

"अब पंजाब और उत्तर-पश्चिमी सरहदी सूबेकी बारी आयी। उस वक़्त मैं बिहारमें मुसलमानोंको मदद पहुँचानेका काम कर रहा था। सरहदी सूबेकी सभाकी बैठक चल रही थी। मुलतान, लाहौर, अमृतसर, अम्बाला, रावलपिण्डी, गुजरानवाला और पंजाबकी दूसरी जगहोंमें साम्प्रदायिक दंगे शुरू कर दिये गये। ये धीरे-धीरे पेशावरतक पहुँच गये। मुस्लिम लीगियोंने डाक्टर खान साहबपर हमले किये, उन्हें गालियाँ दीं और उनके इस्तीफेके लिए आन्दोलन चलाया। पेशावर शहरकी गलियों और बाजारोंमें मासूम और निर्दोष लोग कत्ल किये जाते थे। डाक्टर खान साहबके मन्त्रिमण्डलको गिरानेके लिए मुस्लिम लीगियोंने हिंसक आन्दोलन छेड़ दिया। इन उपद्रवोंके दौरान खुदाई खिदमतगारोंने वैसा ही काम किया जैसा कि मैं उनसे उम्मीद रखता था। वे दस हजारकी तादाद में अपने संकल्पके प्रति ईमानदारीके साथ अपने मुसीबतके मारे हिन्दू और सिख भाइयोंकी मददके लिए दौड़ पड़े और उन्होंने उनके जान-मालकी हिफ़ाजतमें कुछ भी न उठा रखा। इससे नाराज होकर मुस्लिम लीगने सूबेमें गवर्नरकी हुकूमत-की माँग उठायी।

"मुझे उम्मीद और यकीन है कि खुदा हमारे इस पवित्र कार्यमें हमारी मदद करेगा और जनता यह महसूस करेगी कि प्यार, सत्य और अहिंसा ही हर एक अच्छे, आज़ाद और खुशहाल समाजकी निशानी है।"

लंदनसे प्रकाशित होनेवाले 'डेली टेलीग्राफ' पत्रके एक संवाददाताने उसे पेशावरसे यह संवाद भेजा था : "दंगा करानेवाले एजेण्ट दूसरे प्रान्तोंसे आकर यहाँ एक अरसेसे बिहारसे लाये गये फटे कुरानके पन्नों और कत्ल किये गये मुसल-मानोंकी खोपड़ियोंके चित्रोंका प्रदर्शन करके मुस्लिम भावनाएँ उभाड़ रहे थे।" सरदार पटेलने गांधीको यह रिपोर्ट भेजी : "हजारा जिलेमें ९ लाख मुसलमान रहते हैं। यहाँ हिन्दुओं और सिखोंकी सम्मिलित संख्या ३१ हजार है। इनमेंसे २० हजार भाग गये हैं। करीब ४० से ५० व्यक्ति मार डाले गये हैं। अग्नि-

काण्ड और लूटकी घटनाएँ बड़े पैमानेपर हो रही हैं। सीमाप्रान्तमें बिहारका बदला लिया जा रहा है··· ····बादशाह खान बिहार गये हुए हैं, जहाँ कुछ भी नहीं हो रहा है। लेकिन वे वही करेंगे जिसे ठीक समझेंगे। डॉक्टर खान साहब, जो एक बड़े ही सज्जन व्यक्ति हैं, बड़ी मुसीबतमें फँसे हुए हैं। मुस्लिम लीग जहरीला प्रचार कर रही है।"

सीमा-प्रान्तमें उपद्रवोंकी दूसरी लहर फरवरीमें आयी। जनवरी महीनेमें एक सिख स्त्रीका, जिसके पतिको दंगाइयोंने मार डाला था, बलात् अपहरण कर लिया गया और जबर्दस्ती उसकी शादी एक मुसलमानसे कर दी गयी। डाक्टर खान साहबने यह आदेश जारी किया कि उस स्त्रीको उसके संबंधियोंको वापस कर दिया जाय। इसपर मुस्लिम लीगियोंने एक जुलूस निकालकर यह मांग की कि वह स्त्री फिरसे उसी मुसलमानको सौंप दी जाय जिससे उसकी जबर्दस्ती शादी हुई है। केन्द्रीय विधानमण्डलमें कांग्रेसके भूतपूर्व उपनेता अब्दुल कयूमने, जो हालमें ही कांग्रेस छोड़कर मुस्लिम लीग पार्टीमें शामिल हो गये थे, निषेधात्मक आदेशका उल्लंघन किया और वे गिरफ्तार कर लिये गये। इसके बाद डॉक्टर खान साहबके मन्त्रिमण्डलके विरुद्ध 'सिविल नाफरमानी' का आन्दोलन 'नागरिक अधिकारोंके समर्थन' के रूपमें छेड़ दिया गया। कानूनके उल्लंघन और साम्प्रदायिक हिंसाको उत्तेजित करनेके अभियोगमें बहुतसे मुस्लिम लीगी गिरफ्तार किये गये और उन्हें जेल भेज दिया गया। इसके बाद लीगने प्रशासनको ठपकर देनेका आन्दोलन चलाया। अदालतोंमें पिकेटिंग करायी गयी और रेलकी पटरियोंपर उपद्रवी भीड़ने धरने दिये जिससे ट्रेनोंके यातायातमें बाधा उपस्थित हुई। उपद्रवियोंने रेलकी पटरियाँ उखाड़ दीं और उन्हें तितर-बितर करनेके लिए आयी फौजोंपर पथराव किये।

रावलपिंडीमें मार्चमें ही उपद्रव शुरू हो गये। चारों ओर हत्या, आगजनी और लूटपाटका बोलबाला हो गया। कुछ समय बाद तक्षशिलाके पास एक ट्रेन रोक दी गयी और मुसाफिरोंपर हमला किया गया। करीब-करीब उसी समय पेशावर शहर और छावनीके क्षेत्रोंमें भी उपद्रव शुरू हो गया। लीगी लोग आस-पासके देहातोंमें हिन्दुओं और सिखोंको जबर्दस्ती मुसलमान बनाने लगे।

सरहदी सूबेमें ऐसी बदगुमानी शुरू हो जानेके बाद पेशावरकी गैरमुस्लिम जनतामें आतंक छा गया। दस दिनोंतक उन्होंने अपने घरोंके दरवाजे बंद कर लिये और अन्दर ही पड़े रहे। उस समय सरहदी असेंबलीमें बजट अधिवेशन चल रहा था। सरहदी मन्त्रिमण्डल इस भयके कारण कि यदि उसने उत्पन्न स्थिति-

का मुकाबला करनेके लिए कोई कड़ी काररवाई की तो शायद गवर्नर इसी बहानेसे असेंबली विघटित न कर दे, तुरन्त कोई काररवाई न कर सका। बजट ज्यों ही पास हो गया मन्त्रिमण्डलकी बैठक हुई और खुदाई खिदमतगारोंको बुलानेका निश्चय किया गया। दूसरे ही दिन दस हजार खुदाई खिदमतगार पेशावर आ गये। उनकी उपस्थितिसे शान्ति कायम करनेमें सहायता मिली।

इसके बाद डेरा इस्माईल खाँकी बारी आयी। मुसलमानोंकी एक बड़ी भीड़ने जिस नगरपर हमला किया था एक हज़ारसे भी अधिक गैरमुसलमानोंकी दूकानें बरबाद कर दीं। उपद्रव देखते-देखते गाँवोंमें भी फैल गया। कहीं-कहीं तो सारीकी सारी गैरमुस्लिम आबादी मौतके घाट उतार दी गयी या उसे जबर्दस्ती मुसलमान बना लिया गया। सरहदी घुड़सवारोंका जो दस्ता शहरमें मौजूद था उसने इसमें कुछ नहीं किया और उसकी नाकके नीचे उपद्रवी भीड़ गैरकानूनी कामोंमें लगी हुई थी। उसे हर तरहका जुल्म करनेकी खुली छूट मिली हुई थी किन्तु पंजाबसे उलटे सरहदी सूबेमें साम्प्रदायिक हिंसा डॉक्टर खान साहबके मन्त्रि-मण्डलको विघटित करनेमें सफल न हो सकी।

अन्तरिम सरकारके कांग्रेसी सदस्य अंग्रेज अफसरोंके षड्यन्त्र और मुस्लिम लीगकी अड़ंगेबाजीसे बड़े परेशान थे। नेहरूने फरवरीमें गांधीको लिखा : "हम इधर-उधर सभी तरफ लुढ़क रहे हैं। कभी-कभी तो मुझे संदेह हो जाता है कि क्या हम कोई भी सही दिशा पकड़ पा रहे हैं? हमारे सामने निरंतर संकटकी स्थिति बनी हुई है और स्थितिपर हमारी कोई खास पकड़ कायम नहीं रह गयी है।"

गांधी बिहारमें हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच मेल-मिलाप करानेकी कोशिश कर रहे थे उसी समय उन्हें भाग्यकी विडम्बनासे पत्रोंमें कांग्रेसका वह प्रस्ताव पढ़नेको मिला जिसमें कांग्रेसने पंजाबके विभाजनकी माँग की थी। इस संबंधमें न तो उनसे कोई परामर्श किया गया था, न उन्हें कोई पूर्व सूचना ही दी गयी थी। प्रस्तावमें कहा गया था : "हालकी दर्दनाक घटनाओंसे यह स्पष्ट हो चुका है कि पंजाबमें हिंसा और ज़ोर-जबर्दस्तीसे समस्याका कोई समाधान नहीं हो सकता और ज़ोर-जबर्दस्तीपर आधृत कोई भी व्यवस्था वहाँ स्थायित्व नहीं पा सकती। ऐसी सूरतमें ऐसा कोई रास्ता निकाल लेना आवश्यक हो गया है जिसमें कमसे कम बाध्यता हो। इसके लिए पंजाबका विभाजन आवश्यक होगा जिससे उसका मुस्लिमबहुल भाग गैरमुस्लिमबहुल भागसे अलग कर दिया जाय।"

नेहरूने गांधीको लिखा : "मेरा और कार्यसमितिके अधिकांश सदस्योंका

यह विश्वास हो गया है कि हमें विभाजनके लिए दबाव डालना चाहिए जिससे वास्तविकता सामने आ जाय। वस्तुतः जिनाने बँटवारेकी जो मांग की है यही उसका एक मात्र उत्तर है।"

सरदार पटेलने गांधीको लिखा : "पंजाबके बारेमें प्रस्तुत प्रस्तावकी आपके सामने व्याख्या कर पाना कठिन है। पंजाबकी हालत बिहारसे कहीं ज्यादा खराब है। यहाँ सेनाने नियन्त्रण प्राप्त कर लिया है। इसके फलस्वरूप सतही तौरपर स्थिति कुछ शान्त मालूम होती है किन्तु कोई नहीं कह सकता कि कब फिरसे उपद्रव भड़क उठे। यदि ऐसा हुआ तो इससे दिल्ली भी प्रभावित हुए बिना नहीं रह पायेगी।"

विभाजन

१९४७

२२ मार्चको लार्ड वेवलके स्थानपर लार्ड माउण्टबैटन भारतके वाइसराय वनकर आ गये। उन्होंने सबसे पहले गांधीको दिल्ली बुलाया। गांधी और खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ ३१ मार्चको राजधानी पहुँच गये। १ अप्रैलको एशियाई संबंध सम्मेलनमें प्रश्नोंका उत्तर देते हुए गांधीने कहा : "यह एक महान् घटना है कि हमारे इतिहासमें पहली बार एक ऐसे सम्मेलनका आयोजन हमारे देशकी धरती-पर हो रहा है। यह बड़े दुःखकी बात होगी यदि हम इस सम्मेलनसे बिना इस दृढ़ संकल्पके विदा हुए कि एशिया जीवित रहेगा और किसी भी पश्चिमी राष्ट्रकी तरह स्वतन्त्र रहेगा।"

इसके बाद उन्होंने सम्मेलनके सम्भ्रान्त प्रतिनिधियोंसे बड़े ही हार्दिक एवं स्पष्ट रूपमें कहा : "हम नहीं जानते कि हम आपसमें किस तरहसे शान्ति कायम रख सकते हैं। हमारा विचार है कि इस प्रकार हम जंगली कानूनकी ओर लौट जायेंगे। मैं यह नहीं चाहता कि आप इस अनुभवके साथ अपने-अपने देशोंको लौटें। मैं चाहूँगा कि आप इसे यहीं गाड़ दें। भारत स्वतन्त्रताके युगमें प्रवेश कर रहा है। हम अपने स्वामी स्वयं होना चाहते हैं। किन्तु हम अपने मालिक खुद कैसे हो सकेंगे? मैं यह नहीं जानता; मेरा विश्वास है कि पण्डित नेहरूको भी यह नहीं मालूम है; मैं समझता हूँ बादशाह खानको भी इसकी जानकारी नहीं है। हम केवल यही जानते हैं कि हमें अपना कर्तव्य करना चाहिए और बाकी सारी बातें भगवान्‌पर छोड़ देनी चाहिए। मनुष्यको अपने भाग्यका विधाता समझा जाता है किन्तु यह मात्र आंशिक सत्य है। वह अपने भाग्यका निर्माण उसी हद-तक कर सकता है जिस हदतक वह महान् शक्ति इसके लिए उसे अनुमति देती है। वह महान् शक्ति हमारी सभी इच्छाओं, हमारी सभी योजनाओंसे ऊपर है और वह स्वयं अपनी योजनाएँ कार्यान्वित करती है। मैं उस शक्तिको अल्लाह, खुदा या ईश्वरके नामसे न पुकारकर सत्यके नामसे पुकारता हूँ। सारा सत्य उसी महान् शक्तिके हृदयमें निहित है। एशियाके विभिन्न भागोंसे आये हुए आप सब महानुभाव इस सम्मेलनकी मधुर स्मृतियाँ अपने साथ ले जायें और सत्यके उसी महान् प्रासादके निर्माणका प्रयत्न करें।"

यह अपने ढंगका निराला सम्मेलन था। इसमें एशियाके प्राय: सभी देशों—अरब देश, तिब्बत, मंगोलिया और दक्षिण-पूर्वी एशियाके देश तथा सोवियत संघके एशियाई गणतन्त्रोंको प्रतिनिधित्व मिला था। केवल मुस्लिम लीग संघटन इसमें शामिल नहीं हुआ था। उसने इस सम्मेलनकी निन्दा करते हुए कहा था : "यह एशियाई जनताके भावी नेताके रूपमें अपनेको राजनीतिक दृष्टिसे बढ़ा-चढ़ाकर प्रदर्शित करनेके लिए हिन्दू कांग्रेस द्वारा किया गया एक छद्म प्रयास है।" उसने इसपर खेद भी प्रकट किया था कि, "मुस्लिम देशोंके कई संघटन धोखेमें आकर इस एशियाई संबंध सम्मेलनमें शामिल हो रहे हैं।"

२ अप्रैलको सम्मेलनके अन्तिम अधिवेशनमें भाषण करते हुए गांधीने कहा कि पश्चिमको ज्ञानका प्रकाश पूर्वसे ही मिला है। जरथुस्त्र प्रथम एशियाई सन्त और ज्ञानी थे। उनके बाद बुद्ध आये; उनके बाद मूसा, ईसा और मुहम्मद आये जो सभी पूर्वके थे। उन्होंने कहा : "मैं चाहता हूँ कि आप एशियाका सन्देश ग्रहण करें। इसे पश्चिमी चश्मोंसे अथवा परमाणु बमके अनुकरणसे नहीं सीखा जा सकता। यदि आप पश्चिमको कोई सन्देश देना चाहते हैं तो वह प्रेम और सत्यका ही सन्देश हो सकता है। आज पश्चिम विवेक प्राप्त करनेके लिए छटपटा रहा है। वह परमाणु बमोंकी वृद्धिके कारण निराश हो चुका है क्योंकि परमाणु बमोंकी वृद्धिका अर्थ होता है न केवल पश्चिमका बल्कि समस्त संसारका सम्पूर्ण विनाश। आपका यह कर्तव्य होता है कि आप संसारको उसकी कुटिलता और पापका ज्ञान करायें। आपके और हमारे महान् उपदेष्टाओं और शिक्षकोंने हमारे लिए यही विरासत छोड़ी है।"

गांधीका यह विश्वास था कि 'यदि भारतका पतन होता है तो एशियाका पतन हो जायगा।' साम्प्रदायिक हिन्दू उनकी प्रार्थना-सभाओंमें उपद्रव किया करते थे। उन्हें उनकी प्रार्थनाओंमें कुरानका पाठ किये जानेपर आपत्ति थी। वे पूछते थे, "आप किसी मस्जिदमें जाकर गीताके श्लोकोंका पाठ क्यों नहीं करते?" वे इसके जवाबमें कहते थे, "आप अपनी अविवेकपूर्ण धर्मान्धतासे हिन्दू धर्मका कोई हित नहीं कर रहे हैं बल्कि उसके विनाशकी ही तैयारी कर रहे हैं। यहाँ हमारे सामने बादशाह खान मौजूद हैं। वे पूरी तरहसे ईश्वरभक्त हैं। यदि आप किसी खुदाके बन्देको हाड़-मांसके रूपमें मूर्तिमान् देखना चाहते हैं तो इन्हें देखिए। क्या आपको इनके प्रति भी सम्मान नहीं है?"

गांधीकी लार्ड माउण्टबैटनसे कई मुलाकातें हुईं। पहली मुलाकात ३१ मार्चको हुई। १ अप्रैलको अपनी दूसरी मुलाकातमें, जिसमें खान अब्दुल गफ्फार

ख़ाँ भी उनके साथ थे, उन्होंने वाइसरायसे कहा कि आप प्रशासनका भार स्वीकार करनेके लिए जिनाको निमन्त्रित कीजिए। माउण्टवैटनने पूछा, "इसपर जिनाकी क्या प्रतिक्रिया होगी ?" गांधीने जवाब दिया, "जिना कहेंगे कि, फिर वही नटखट गांधी आ गया !" माउण्टवैटनने मुस्कराते हुए पूछा, "क्या उनका यह कहना ठीक न होगा ?" गांधीने कहा, "नहीं। क्योंकि मैं पूरी तरह निष्ठावान् हूँ।" उन्होंने माउण्टवैटनको आगाह किया कि उन्हें दृढ़तासे काम लेना होगा और अपने पूर्ववर्तियों द्वारा किये गये सभी पापोंके परिणामोंका सामना करनेके लिए तैयार रहना होगा। 'फूट डालो और शासन करो' की ब्रिटिश प्रणालीके फलस्वरूप एक ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गयी है जिसमें केवल एक ही विकल्प रह गया है कि या तो शान्ति और कानून बनाये रखनेके लिए ब्रिटेनकी हुकूमत चलती रहे या सारा देश रक्त-स्नान करने लगे। रक्त-स्नानका सामना करना होगा और उसे स्वीकार करना होगा।

गांधीने लार्ड माउण्टवैटनके समक्ष समझौतेका जो प्रारूप प्रस्तुत किया था उसका निष्कर्ष यह था कि केन्द्रमें सरकार बनानेका विकल्प जिनापर छोड़ दिया जाय, सरकारके लिए सदस्योंके चुनावकी जिम्मेदारी भी पूरी तरह उन्हींपर छोड़ दी जाय—फिर चाहे वे उसमें केवल मुसलमानोंको ले लें या केवल गैरमुसलमानोंको या फिर सभी वर्गों और मतवादोंके प्रतिनिधियोंको चुन लें। जहाँतक कांग्रेसका सवाल है वह सारे भारतके हितमें किये गये किसी भी कार्यमें उनकी सरकारका पूर्ण समर्थन करेगी। इसके एकमात्र निर्णायक लार्ड माउण्टवैटन अपने व्यक्तिगत रूपमें होंगे। ऐसा हो जानेके बाद, जिना सत्ता हस्तान्तरणके पूर्व ही संविधान सभामें पाकिस्तानकी माँग प्रस्तुत करनेके लिए पूर्णतः स्वतन्त्र होंगे बशर्ते वे इसके लिए समर्थन प्राप्त करनेके उद्देश्यसे तर्क और विवेकको अपील करें, न कि बल-प्रयोग और धमकियोंका सहारा लें। इस तरह किसी भी प्रान्त या उसके किसी हिस्सेको उसकी इच्छाके विरुद्ध पाकिस्तानमें शामिल होनेके लिए बाध्य न किया जाय। यदि जिना इस प्रस्तावको ठुकरा दें तो यही प्रस्ताव अविकल रूपमें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेससे किया जाय।

वाइसरायने गांधीसे कहा कि आपके प्रस्तावमें मेरे लिए 'कई आकर्षण' हैं। यह जानकर कि लार्ड माउण्टवैटन उनके साथ हैं गांधीको यह विश्वास हो गया कि उन्हें नेहरू और कार्यसमिति द्वारा अपना प्रस्ताव स्वीकृत करा लेनेमें कोई कठिनाई न होगी। किन्तु वाइसरायके परामर्शदाता गांधीके साथ किसी भी प्रकारका औपचारिक समझौता करनेके विरुद्ध थे। वाइसरायने भी जब दूसरी

वार विचार किया तो उन्हें ऐसा लगने लगा कि इस प्रस्तावपर दूसरी पार्टियोंकी प्रतिक्रिया जान लेनेके पूर्व इसपर अपनी व्यक्तिगत सहमति प्रदान कर देना बुद्धिमत्ता न होगी। उन सबने मिलकर यह निश्चय किया कि इसके पूर्व कि गांधी अपना विचार मनवानेके लिए कांग्रेसपर अपना पूरा जोर डालना शुरू कर दें, नेहरूको यह सूचना दे दी जाय कि माउण्टवैटन गांधीकी योजनाके प्रति वचन-बद्धताकी स्थितिसे बहुत दूर हैं।

गांधीने वाइसरायके समक्ष अपनी जिस योजनाकी रूप-रेखा प्रस्तुत की थी उसे मान लेनेके लिए वे कांग्रेस कार्यसमितिके सदस्योंपर पूरे जोरशोरसे दबाव डालने लगे। इस संबंधमें काफी गरम बहस उठ खड़ी हुई। ब्रिटेनकी छत्रछाया-में देशका किसी भी प्रकारका विभाजन हो—गांधी और अब्दुल ग़फ्फ़ार इसके तीव्र विरोधी थे। गांधीके विचारसे अंग्रेजों द्वारा पंजाब और बंगालका विभाजन करवानेका कोई भी प्रस्ताव यदि कांग्रेस करती है तो बहुत ही खेदजनक होगा। वे विभाजनके समूचे सिद्धान्तके ही विरोधी थे। उनके खयालसे विभाजन द्वारा कोई भी कठिनाई हल न हो सकेगी। इसके विपरीत इससे मौजूदा कठिना-इयाँ और गम्भीर हो जायँगी और नयी कठिनाइयाँ भी पैदा हो जायँगी किन्तु उन्होंने यह देखा कि खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको छोड़कर वे कार्यसमितिके किसी भी सदस्यको अपने साथ न कर सके और वे सदस्य भी गांधीसे अपने दृष्टिकोणके लिए समर्थन प्राप्त न कर सके। दूसरे दिन गांधीने वाइसरायको पत्र लिखकर सूचित कर दिया कि आगामी वार्ताओंमें वे उन्हें शामिल न करें। १२ अप्रैलको वे अपने कांग्रेसी सहकर्मियोंसे विदा होकर बिहार वापस आ गये। नेताओंका व्यवहार उनके प्रति रूखा हो गया था। उन्होंने कहा है : "सरदारसे मेरी मुलाकात केवल कुछ मिनटोंकी हुई है। कभी-कभी मैं ऐसा अनुभव करता हूँ कि इस पूरे समूहमें मैं ही एक ऐसा आदमी रह गया हूँ जिसके पास फालतू वक़्त है।"

वाइसरायसे हुई वार्ताका एक छोटासा परिणाम यह हुआ कि वाइसरायकी छत्रछायामें साम्प्रदायिक शान्तिके लिए एक अपील निकली जिसपर जिना और गांधीके हस्ताक्षर थे। गांधीने कहा कि जहाँतक मेरे हस्ताक्षरका सवाल है उसका कोई मूल्य नहीं है क्योंकि मेरा हिंसामें कभी विश्वास नहीं रहा है किन्तु यह जरूर महत्त्वपूर्ण है कि जिनाने इसपर हस्ताक्षर किये हैं। यदि इसके हस्ता-क्षरकर्ताओंने अपीलकी भावनाका पूरी तरह पालन किया तो यह उम्मीद की जा सकती है कि देशमें साम्प्रदायिक उपद्रव और रक्तपात बन्द हो जायगा।

गांधीने वाइसरायको चेतावनी दी कि जबतक "पाकिस्तानकी स्थापनाके पूर्व शान्ति-स्थापना" की बातपर जोर नहीं दिया जाता वे जो कुछ भी अच्छा कार्य करना चाहते हैं वह धूलमें मिल जायगा। वाइसरायने यह अनुभव किया कि हिंसाकी एकमात्र दवा यह है कि मुख्य राजनीतिक प्रश्नपर कांग्रेस और लीग के बीच तत्काल समझौतेका प्रयत्न किया जाय। अप्रैलके मध्यतक लार्ड माउण्ट-बैटनने अपनी योजनाकी मोटी रूपरेखा तैयार कर ली। उसके बाद उन्होंने इस योजनाके प्रति अपने विचार प्रकट करनेके लिए विभिन्न क्षेत्रोंसे सम्बद्ध गवर्नरोंका सम्मेलन बुलाया : (१) यदि भारतीय दल इसके लिए सहमत हों तो भारतका विभाजन कर दिया जाय; (२) प्रांतोंको सामान्यतः अपना भविष्य निर्धारित करनेके लिए स्वतन्त्रता रहे; (३) मतदानके उद्देश्यसे बंगाल और पंजाबका राष्ट्रीय स्तरपर बिभाजन हो; (४) आसामके मुस्लिमबहुल सिलहट जिलाको बंगालके विभाजनसे निर्मित मुस्लिम प्रान्तमें शामिल होनेकी छूट रहे; (५) उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तमें यह जाननेके लिए आम चुनाव कराया जाय कि वह भारतके किस हिस्सेके साथ रहना चाहता है।

लार्ड माउण्टबैटनने १८ अप्रैलको दिल्लीमें सर ओलफ कैरो, डाक्टर खान साहब और पण्डित नेहरूसे वार्ता की। उन्होंने निश्चय किया कि सरहदी सूबेमें उपद्रवोंको शान्त करनेकी दिशामें एक क़दम यह उठाया जाय कि वहाँ राजनीतिक कैदियोंको मुक्त कर दिया जाय। २४ अप्रैलको जिनाने घोषित किया कि मुझे लार्ड माउण्टबैटनने इस निश्चयकी सूचना दी है और मुझे पूरा विश्वास है कि वाइस-राय मुस्लिम लीगके साथ न्याय करेंगे। इसके अनुसार उन्होंने सीमाप्रान्तमें शान्ति-स्थापनाकी आवाज़ उठानेवालोंकी आवाजमें अपनी आवाज़ भी मिला दी किन्तु एक पखवाड़े बाद सीमाप्रान्तकी मुस्लिम लीगने आन्दोलन वापस न लेनेका निश्चय किया तो जिनाने भी इसका समर्थन किया। २७ अप्रैलको डाक्टर खान साहबने पेशावर वापस आनेपर राजनीतिक बन्दियोंकी रिहाईका आदेश जारी किया।

इस बीच माउण्टबैटनने सीमाप्रान्तकी स्थिति स्वयं देखनेके उद्देश्यसे वहाँ-की यात्रा करनेका निश्चय कर लिया था। वे २८ अप्रैलको पेशावर पहुँच गये। वाइसरायके प्रेस अटैची श्री एलन कैम्पबेल जानसनने इस यात्राका वर्णन इस प्रकार किया है :

"गवर्नमेण्ट हाउसमें पहुँचनेपर हमारे सामने एक ऐसी संकटकी स्थिति थी जिसे करीब-करीब आतंककी स्थिति कहा जा सकता है। गवर्नर सर ओलफ कैरो

ने कुछ विक्षोभकी अवस्थामें आकर हम लोगोंसे कहा कि मुस्लिम लीगका एक बड़ा जुलूस यहाँसे एक मीलकी दूरीपर रह गया है। वह वाइसरायके सामने अपनी शिकायत पेश करेगा। यह प्रदर्शन काफी उग्र है और सम्भवतः जुलूसके लोग गवर्नमेण्ट हाउसकी ओर बढ़ते हुए कानूनका भी उल्लंघन कर सकते हैं। कैरोके अनुसार वाइसरायके सामने इस योजनाको पहले ही खत्म कर देनेका एकमात्र यही विकल्प है कि वे स्वयं जुलूसके सामने उपस्थित हो जायें और भीड़को अपना दर्शन दे दें। प्रदर्शनकारियोंकी तादाद ७० हजारसे भी अधिक है। वे प्रान्तके सुदूर हिस्सोंसे आ रहे हैं। उनमेंसे अधिकांश तो प्रदर्शनमें शामिल होनेके लिए कई दिनोंसे यात्रा कर रहे हैं। माउण्टबैटनने कैरो और मुख्य मन्त्री डाक्टर खान साहबके साथ 'संक्षिप्त मन्त्रणा' की और यह तय पाया गया कि वाइसराय अविलम्ब प्रदर्शनकारियोंसे जाकर रास्तेमें ही मिल लें। इसपर माउण्टबैटन, मोटरसे प्रदर्शनकारियोंके पास चले गये। लेडी माउण्टबैटनने भी बड़ी हिम्मतके साथ उनके साथ जानेका अनुरोध किया। हमारे सामने जो भीड़ थी वह निश्चय ही भयानक थी। लोग तरह-तरहके संकेत कर रहे थे। पाकिस्तानके चिह्न सफेद चाँदके साथ असंख्य गैरकानूनी हरे झण्डे फहरा रहे थे और बीच-बीचमें प्रदर्शनकारी 'पाकिस्तान जिन्दाबाद' के नारे लगाते जा रहे थे। हमारे पहुँचनेसे कुछ ही मिनटों बाद तनाव गायब हो गया और 'माउण्टबैटन जिंदाबाद' के नारे लगने लगे।"

भोजनके बाद लार्ड माउण्टबैटनने कई मुलाकातें कीं। उनकी कुछ मुलाकातें तो डाक्टर खान साहब और उनके मन्त्रिमण्डलके ४ मन्त्रियोंके साथ हुईं और दूसरी स्थानीय हिन्दुओं और उन मुस्लिम लीगके नेताओंसे जिन्हें उनसे मिलनेके लिए जेलसे बाहर लानेकी विशेष व्यवस्था कर दी गयी थी।

लार्ड माउण्टबैटन डाक्टर खान साहब और उनके साथियोंसे गवर्नरकी उपस्थितिमें मिले। वाइसरायने आरम्भमें यही कहा कि मैं डाक्टर खान साहब के इस जनभावनोचित परामर्शकी सराहना करता हूँ कि मुझे स्वयं प्रदर्शनकारियोंसे मिलने जाना चाहिए। मैंने केवल यही किया कि वहाँ जाकर प्रदर्शनकारियोंके सामने एक ऊँचे स्थानपर खड़ा हो गया। मैंने जिनाको पहले गवर्नमेंट हाउसके पासतक जुलूस निकालनेकी अनुमति देनेसे इनकार कर दिया था। डाक्टर खान साहबने अपनी ओरसे कहा कि मैंने प्रयत्नपूर्वक लाल कुर्तीवालोंका जुलूस रोकवा दिया था।

वाइसरायने कहा कि यहाँ भारतको भारतीयोको सौंपने आया हूँ। मैं

जनताकी इच्छाके अनुसार सत्ता हस्तान्तरित करने आया हूँ। मैं पंजाब और बंगालके लिए व्यवस्था कर रहा हूँ किन्तु मुझे सीमाप्रान्तकी स्थितिसे विशेष कठिनाई हो रही है। मैं मुस्लिम लीगसे यह कहनेवाला हूँ कि मैं हिंसाके सामने नहीं झुकूंगा। मैं निजी रूपसे आपको यह बता रहा हूँ कि मेरी दृष्टिमें चुनाव आवश्यक हैं किन्तु मैं मुसलमानोंको इसकी कोई पक्की गारण्टी नहीं दे सकता। जिनाका यह वादा है कि यदि कोई चुनाव होगा तो उसमें किसी तरहकी हिंसा न होगी। आपको मेरी ईमानदारीपर विश्वास करना चाहिए। जिना इस स्थितिको स्वीकार करते हैं और वे अपने अनुयायियोंको सिविल नाफरमानी वापस लेनेको कह रहे हैं। माउण्टबैटनने मुस्लिम लीग हाई कमाण्ड द्वारा स्थापित सामान्य नियंत्रणके सम्बन्धमें पूछताछ की। इसके जवाबमें उन्हें बताया गया कि स्थानीय मुस्लिम लीग पागल हो उठी थी और खुदमुख्तार बन बैठी थी। अन्तिम चुनावमें पाकिस्तानके सवालपर मुस्लिम लीग निश्चित रूपसे हार चुकी है और मुस्लिम लीगी नेता अब्दुर्रब निश्तरतक जीत न सके।

जब डॉक्टर खान साहब पठानिस्तानके सवालपर बोलने लगे तो विचार-विमर्शमें विस्फोटक स्थिति पैदा हो गयी। कहा गया कि इससे पाकिस्तानकी साम्प्रदायिक और राजनीतिक अखण्डताको आघात पहुँचेगा और उसके अन्दर एक नया सीमावर्ती प्रदेश कायम हो जायगा। डॉक्टर खान साहबने चेतावनी दी कि यदि आप "पठान जातिको बरबाद कर देते हैं तो इसके भयंकर परिणाम होंगे।"

माउण्टबैटनने पूछा कि उत्तर-पश्चिमी सीमा-प्रान्तमें संयुक्त सरकार क्यों नहीं है? डॉक्टर ख़ान साहबने उत्तेजित स्वरमें इसका उत्तर दिया कि, "यदि कांग्रेस संयुक्त मन्त्रिमण्डल बनाना चाहती है तो मैं उसमें नहीं रहूँगा। हमारी जनता बड़ी गरीब है। यहाँ मुस्लिम लीग केवल अपने और विशेष सुविधाप्राप्त खानोंकी जातिके हितोंका प्रतिनिधित्व करती है।" कैरोने कहा कि, "कांग्रेस समर्थकोंमें भी कुछ बहुत ही सम्पन्न हैं।"

माउण्टबैटनने प्रान्तमें साम्प्रदायिक भावनाकी स्थितिके संबंधमें पूछताछ की। कैरोने बताया कि, "मुस्लिम जनता हिन्दुओं और सिखोंकी रक्षा कर रही है। केवल हजारामें यह स्थिति नहीं है। मुसलमानोंके दिल और दिमाग़ स्वस्थ हैं।" डाक्टर खान साहबने कहा कि अधिकारियोंने मुसलमानोंको कानूनका उल्लंघन करनेकी छूट दे दी है। कैरोने कहा कि मुझे किसी एक भी ऐसे उदाहरणका पता नहीं है जिसमें अधिकारी अपना कर्तव्य पूरा करनेकी कोशिश न कर रहे हों

किन्तु उन्हींको बराबर दोषी ठहराया जाता है।

संवैधानिक पद्धतिपर विचार-विमर्शके सिलसिलेमें गवर्नरने शिकायत की कि मुख्य मन्त्रीकी ओरसे मुझपर प्रशासनिक दबाव डाला जाता है और मुख्य मन्त्रीने शिकायत की कि गवर्नर उनके कामोंमें हस्तक्षेप करते हैं। इस बहसके बीच माउण्टबैटनने कहा : "मैं यहाँ निःस्वार्थ भावसे काम करने आया हूँ। मैं जनताकी इच्छाके अनुसार सत्ता हस्तान्तरित करना चाहता हूँ। आदर्श रूपमें मैं यहाँ जन-मत संग्रह करना चाहूँगा किन्तु समय नहीं है।" इसके बाद उन्होंने विभाजनमें निहित बातोंपर सामान्यतः विचार-विमर्श किया। इसमें खासकर उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तके संदर्भमें बातें हुईं। उन्होंने कहा कि "मेरी समस्या यह है कि हमारे जानेके बाद चुनाव कराया जाय या पहले तथा कानून और शान्ति-व्यवस्था सरकारको कायम रखनेके लिए पर्याप्त है या नहीं।" उन्होंने चुनावोंके संबंधमें सलाह देनेके लिए हाई कमानोंकी एक संयुक्त समिति बनानेका सुझाव दिया और कहा कि मेरा निर्देश निष्पक्षताकी ओर है।

इस बैठकके समाप्त होनेपर स्थानीय हिन्दू प्रतिनिधियोंका एक अधिवेशन हुआ।

माउण्टबैटनने कहा : "मैं तथ्योंकी जानकारी प्राप्त करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। क्या आप सरकारका समर्थन करते हैं?"

प्रतिनिधिमण्डलने उत्तर दिया : "हम किसी भी सरकारके अधीन शान्ति-पूर्वक रहनेको तैयार हैं।"

माउण्टबैटनने कहा : "मैं आपके इस स्वस्थ दृष्टिकोणसे प्रसन्न हूँ। मैं संवैधानिक ढंगसे कार्य करनेकी कोशिश कर रहा हूँ।"

पुलिसकी कमीकी शिकायतें की गयीं। कहा यह गया कि जो थोड़ीसी पुलिस है उसपर भी कार्यभार बहुत अधिक है। पुलिसकी चार टुकड़ियाँ नगरमें मौजूद हैं किन्तु पेशावरमें कई हत्याएँ हुई हैं और पुलिस प्रभावकारी ढंगसे कोई कारर-वाई न कर सकी। माउण्टबैटनने पुलिसके स्थानपर सैनिकोंके प्रयोगसे होनेवाले खतरेपर जोर दिया। दोनोंके दो भिन्न कार्य होते हैं। उन्होंने कहा कि इस समय सरहदी सूबेमें अन्य स्थानोंकी अपेक्षा कहीं अधिक फौजें हैं। कैरोने कहा कि मेरे २५ वर्षोंके अनुभवमें, जिसमें १९३०-३१ का वर्ष भी शामिल है, कभी भी फौजोंका इतना उपयोग नहीं किया गया जितना इस समय यहाँ हो रहा है। माउण्टबैटनने कहा कि मैं व्यापकतर समाधानके लिए प्रयत्नशील हूँ और चाहता हूँ कि शीघ्रातिशीघ्र अनिश्चयकी स्थिति खत्म हो जाय किन्तु मुझे ऐसा समाधान

खोज निकालना है जो सबको स्वीकार हो ।

तीसरी बैठक उन मुस्लिम लीगियोंके साथ हुई जिन्हे इस अवसरके लिए जेलोंसे रिहा कर दिया गया था । इनके प्रतिनिधिमण्डलमें नौजवान धर्मोन्मादी मंकी शरीफके पीर और अब्दुल कयूम थे । वे बहुत देरतक बोले । उनके स्वरमें अत्यधिक उग्रता थी । माउण्टबैटनने यह निर्देश दिया कि इन सब लोगोंको एक ही जेलमें रखा जाय जिससे ये एक-दूसरेसे मिलकर सलाह-मशविरा कर सकें । उन्होंने इस बातसे भी सहमति प्रकट की कि उन्हें पैरोलपर रिहा किया जाय जिससे वे दिल्ली जाकर जिनासे सलाह कर सकें ।

गवर्नरने वायसरायको यह समझानेका प्रयास किया कि वे अनुच्छेद ९३ के अन्तर्गत सरहदी सूबेमें गवर्नरका शासन लागू करें और उसके बाद नये चुनावोंका आदेश दें । उन्हें मन्त्रिमण्डलकी वह रिपोर्ट भी प्राप्त हुई जो वाइसरायकी यात्राके दौरान हुई उसकी एक बैठकके संबंधमें थी । वाइसरायने अपने मुख्य मन्त्रीकी उस टिप्पणीको अग्रसारित करनेसे इनकार कर दिया जिसमें इसका संशोधित रूप प्रस्तुत किया गया था । इसे गवर्नरकी उपेक्षा करके सीधे दिल्लीके अधिकारियोंके पास भेजा गया था ।

१ मईको कांग्रेसी नेताओंके अनुरोधपर गांधी फिर नयी दिल्लीसे पटना आ गये । उस समय लार्ड माउण्टबैटन अपनी योजना तैयार कर चुके थे । इसपर वे गवर्नरोंसे विचार-विमर्श भी कर चुके थे । माउण्टबैटन योजनापर विचार करनेके लिए कार्यसमितिकी बैठक बुलायी गयी ।

गांधीने १ मईको भंगी कोलोनीमें नेहरूसे इस योजनापर एक घंटे विचार-विमर्श किया । उनका यह दृढ़ मत था कि लीगके मुकाबले लाभजनक स्थिति प्राप्त करनेके लिए कांग्रेसको अंग्रेजोंके साथ कूटनीतिका खेल नहीं खेलना चाहिए । किसी भी हालतमें कांग्रेसी नेताओंको अंग्रेजोंके साथ भारतकी एकताका सौदा नहीं करना चाहिए । इसके स्थानपर उन्हें यही माँग करनी चाहिए कि ब्रिटेन सीधे और साफ़ ढंगसे काम करे और सत्ता हस्तान्तरणके पूर्व कड़ाईसे कानून और शान्तिकी व्यवस्था सारे देशमें लागू करे और किसी भी ऐसी पार्टीसे बात करनेसे इनकार कर दे जो कानूनी व्यवस्थाका सम्मान न करती हो और सहयोगके लिए तैयार न हो । उन्होंने यह भी कहा कि यदि अंग्रेज इसके लिए तैयार न हों तो वे इस खेलसे अलग हो जायँ और उनके भारत छोड़नेतक समय बिता लें और इसके संबंधमें समझौता करनेका कार्य भारतीय पार्टियोंपर छोड़ दें ।

किन्तु कांग्रेस हाई कमानको यह भय था कि यदि मामलेको यों ही छोड़ दिया गया तो इस बीच तैयार होनेवाली अराजकता और विघटनकी ताकतें उसे धर दबायेंगी। कलकत्ता, दिल्ली, लाहौर, कानपुर, अमृतसर, बन्नू और डेरा इस्माईल खाँसे साम्प्रदायिक उपद्रवोंमें कत्ल होनेकी घटनाओंके समाचार आ रहे थे। अन्तरिम सरकारमें मुस्लिम लीगकी बराबर बनी रहनेवाली अड़ंगे-बाजी और सरकारी नौकरियोंमें बढ़ती हुई साम्प्रदायिकता और अराजकताकी वृद्धिसे निराश होकर कांग्रेसी नेता विभाजनकी माउण्टबैटन-योजनाको स्वीकार कर लेनेके लिए तैयार थे। गांधीको कांग्रेस हाई कमान द्वारा प्रस्तुत 'छोटी बुराई' का तर्क कभी मान्य न हुआ। गांधीने उन्हें बताया कि पाकिस्तानमें अल्पसंख्यकों की रक्षाकी जो घोषणा जिनाने की है उसका सम्मान उसके पालनकी अपेक्षा उसके उल्लंघनके रूपमें ही हो रहा है। ब्रिटिश सत्ता दोषी पार्टीकी निन्दा करने-के लिए कर्तव्यतः बाध्य है किन्तु इसके लिए वह तैयार नहीं दिखाई देती। इससे मेरी दृष्टिमें उसकी ईमानदारी संदिग्ध हो जाती है। यदि कांग्रेसने विभाजनका तर्क स्वीकार कर लिया तो इससे अन्ततः भारतका विघटन हो जायगा और व्यापक संघर्षको बढ़ावा मिलेगा।

१ मईकी शामको कार्यसमितिकी बैठक हुई। गांधीजीने इस बैठकमें कोई खास रुचि नहीं ली। उन्होंने यह अनुभव किया कि उनके तथा कार्यसमितिके सदस्योंके विचारोंमें इतनी विभिन्नता है कि कार्यसमितिके विचार-विमर्शमें उनके शामिल होनेसे किसी उपयोगी प्रयोजनकी सिद्धि नहीं हो सकेगी किन्तु फिर भी सदस्योंने उनसे उपस्थित रहनेका आग्रह किया और वे सहमत हो गये।

कार्यसमिति द्वारा विभाजनके सिद्धांतको स्वीकार करनेके निर्णयका क्रिया-त्मक भाग नेहरू द्वारा वाइसरायको लिखे गये इस पत्रमें शामिल है : "उन प्रस्तावोंके संबंधमें, जिन्हें मैं समझता हूँ, लार्ड इस्मे अपने साथ लंदन ले जा रहे हैं, हमारी समिति सुस्पष्ट रूपमें निर्धारित क्षेत्रोंपर लागू आत्मनिर्णयपर आधृत विभाजनका सिद्धान्त स्वीकार करनेको तैयार है। इसमें बंगाल और पंजाबका विभाजन निहित है। जैसा कि आप जानते हैं हम भारतकी एकतासे भावनात्मक दृष्टिसे पूर्णतः आबद्ध हैं किन्तु हमने संघर्ष और ज़ोर-जबर्दस्तीको दूर करनेके लिए ही भारतका विभाजन स्वीकार कर लिया है। विभाजनको लागू करनेके लिए यह आवश्यक है कि इससे प्रभावित क्षेत्रोंकी जनताकी इच्छाओं और हितोंको पूरा करनेके लिए हर तरहका प्रयत्न किया जाय। विभाजनसे अलग और उससे पहले ही हालकी घटनाओंने बंगाल और पंजाबके प्रशासनिक विभाजनको सुस्पष्ट कर

दिया है और उसे तात्कालिक आवश्यकताका रूप दे दिया है।"

नेहरूने आगे कहा : "किसी सांविधानिक ढंगसे निर्मित ऐसी प्रान्तीय सरकारको समाप्त कर देनेके प्रस्तावपर विचार नहीं होना चाहिए और उसका विरोध किया जाना चाहिए जिसमें अल्पसंख्यक अच्छी तादादमें हों।" स्पष्टतः इसमें योजनाके सीमाप्रान्त सम्बन्धी भागकी ओर संकेत किया गया था। योजना-पर कांग्रेसी नेताओंके साथ सामान्य ढंगसे ही विचार हुआ था, उन्हें इसकी मूल प्रति नहीं दिखायी गयी थी।

५ मईको लार्ड माउण्टबॅटनने एकके बाद दूसरी कई मुलाकातोंके लिए गांधी और जिनाको आमन्त्रित किया। कभी-कभी इन मुलाकातोंमें वे दोनों एक साथ उपस्थित पाये जाते थे। इसका लाभ उठाकर माउण्टबॅटनने उन दोनोंकी बैठक-की व्यवस्था कर दी। इसके सिलसिलेमें दूसरे दिन शामको गांधी जिनासे उनके वासस्थानपर मिले और तीन घंटेतक उनकी वार्ता हुई। इस वार्ताके संबंधमें गांधीने वाइसरायको लिखा :

"हमने अहिंसाके सम्बन्धमें संयुक्त वक्तव्य निकालनेपर वार्ता की। उन्होंने अहिंसामें अपनी दृढ़ आस्था व्यक्त की। उन्होंने अपने द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रेस वक्तव्यमें भी इस आस्थाको दुहराया है।

"हमने पाकिस्तानके साथ-साथ विभाजनपर भी बातचीत की। मैंने उनसे कहा कि पाकिस्तानके विरुद्ध मेरा दृष्टिकोण पूर्ववत् बना हुआ है और उन्हें यह सुझाव दिया कि अहिंसामें आस्थाकी अपनी घोषणाको देखते हुए उन्हें अपने विरोधियोंका मत-परिवर्तन तर्क द्वारा करना चाहिए, न कि शक्ति-प्रदर्शन द्वारा। उनका यह दृढ़ मत था कि पाकिस्तानके प्रश्नपर किसी तरहका विचार-विमर्श नहीं हो सकता। तर्कसंगत बात तो यह है कि अहिंसामें विश्वास रखनेवालेके लिए कोई भी चीज़, यहाँतक कि परमात्माका अस्तित्व भी इसके क्षेत्रके बाहर नहीं हो सकता।"

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ बड़े दुःखी और उदास थे। उन्होंने और उनके खुदाई खिदमतगारोंने अपना भाग्य कांग्रेसके साथ जोड़ रखा था और अब ऐसा प्रतीत होने लगा था कि वे भारतके साथ न रह सकेंगे। मुस्लिम लीगके साथ अपने सैद्धान्तिक मतभेदोंके कारण उनका पाकिस्तानमें भी कोई स्थान न होगा। उन्होंने दुःखपूर्वक कहा, "हम दोनोंकी दृष्टिमें बहिष्कृत हो जायँगे।" फिर भी उनका कहना था कि "जबतक महात्माजी मौजूद हैं मैं चिन्ता नहीं करता।" वे अस्वस्थ थे किन्तु फिर भी कोई दवा नहीं लेना चाहते थे। नयी दिल्लीमें गांधी-

जीके निवासके अन्तिम दिन उन्हें बुखार था फिर भी वे रातमें पहलेकी ही तरह गांधीके हाथ-पाँव दबाते रहे। गांधीने उन्हें रोका किन्तु उन्होंने यही जवाब दिया : "यह आखिरी दिन है इसलिए मुझे न रोकिए। इससे मैं स्वस्थ हो जाऊँगा।"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ १०॥ बजेतक जागते रहे। जब उनसे कहा गया कि अपनेको बहुत ज़्यादा न थकायें तो उन्होंने कहा : "जल्दी ही हम लोग हिन्दुस्तानमें ग़ैरमुल्की हो जायँगे। हमारी लम्बी लड़ाईका यह आखिरी नतीजा होगा कि हम बापूसे दूर, हिन्दुस्तानसे दूर, आप सब लोगोंसे दूर पाकिस्तानकी हुकूमतमें चले जायँगे। कौन जानता है भविष्यमें हम लोगोंका क्या होनेवाला है?" जब गांधीने मनुसे ये बातें सुनीं तो उन्होंने कहा : "निश्चय ही बादशाह खान एक फकीर हैं। स्वतंत्रता आयेगी किन्तु बहादुर पठान अपनी आज़ादी खो देगा। उनके सामने एक खौफ़नाक भविष्य है। लेकिन बादशाह खाँ खुदाई बन्दे हैं।"

७ मईको गांधी कलकत्ता चले गये। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने उन्हें रेलवे स्टेशनपर विदा किया। विदाईके अवसरपर काँपती हुई भारी आवाज़में उन्होंने कहा, "महात्माजी, मैं आपका सिपाही हूँ। आपका शब्द मेरे लिए कानून है। मेरा आपमें पूर्ण विश्वास है। मेरा और कोई सहारा नहीं है।" गांधी अक्सर उनकी याद किया करते थे। उन्होंने उन्हें उतमनजईमें एक स्कूल बनवानेके लिए कलकत्तासे ३६ हजार रुपये भेजे।

गांधी इन सब बातोंपर जितना ही विचार करते थे उन्हें उतनी ही तीव्रता से अनुभव होता था कि एक बहुत ही ग़लत क़दम उठाया जा रहा है। अन्तमें सभी पार्टियोंको इसकी भारी कीमत चुकानी पड़ेगी। उन्होंने विनाशको यथा-संभव रोकनेका दूसरा प्रयास करनेका निश्चय किया। उन्होंने लार्ड माउण्टबैटन-को ट्रेनसे पटना जाते समय सफरमें ही ८ मईको यह निजी पत्र लिखा :

"इसके विपरीत चाहे जो भी कहा जाय अंग्रेजोंके लिए यह एक सबसे भयं-कर भूल होगी यदि वे किसी भी रूपमें भारतके विभाजनके भागीदार बनते हैं। यदि इसे होना ही है तो इसे अंग्रेजोंके यहाँसे चले जानेके बाद होने देना चाहिए; तब चाहे यह विभिन्न पार्टियोंके बीच समझौतेसे हो या सशस्त्र संघर्षसे जो कायदे आजमके अनुसार निषिद्ध है। अल्पसंख्यकोंकी रक्षाकी गारण्टी एक पंच अदालत-की स्थापनासे की जाती है। प्रतिस्पर्धी पार्टियोंमें मतभेद होनेकी सूरतमें यह अदालत विचार करेगी......

"इस स्थितिमें सीमाप्रान्त अथवा अन्य किसी प्रान्तमें जनमत संग्रह कराना

स्वयं एक खतरनाक चीज़ है। आपको उन तथ्योंके साथ निबटना है जो आपके सामने हैं। किसी भी हालतमें मुख्य मन्त्रीके रूपमें डाक्टर खान साहबकी उपेक्षा करके कुछ नहीं किया जा सकता और न किया जाना चाहिए। कृपया नोट करें कि यह वाक्यांश उसी सूरतमें प्रासंगिक है यदि अन्ततोगत्वा विभाजनका ही समर्थन करना हो।

"मेरा दृढ़ विश्वास है कि पंजाब और बंगालका विभाजन हर हालतमें ग़लत है और यह मुस्लिम लीगको अनावश्यक रूपसे उत्तेजित करता है। यह और इसी तरहकी अन्य सभी नवीन बातें अंग्रेजोंके यहाँसे चले जानेके बाद ही हो सकती हैं, पहले नहीं और वह भी पारस्परिक समझौते द्वारा ही·······

"यदि आपको अपने पीछे अराजकताकी विरासत नहीं छोड़नी है तो आपको अपनी इच्छाके अनुसार समस्त भारतकी सरकारको, जिसमें विभिन्न राज्य भी शामिल हैं, किसी भी एक पार्टीपर छोड़ देना चाहिए। संविधान सभाको भारतके उस भागके प्रशासनकी भी व्यवस्था करनी है जिसका मुस्लिम लीग प्रतिनिधित्व नहीं करती।"

८ मईको लाहौरसे जाते हुए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने संवाददाताओंसे हुई एक मुलाकातमें कहा कि यदि सीमाप्रान्तमें नये चुनाव करानेका प्रस्ताव कार्यान्वित किया गया तो वहाँ रक्तपात हुए बिना न रहेगा। नये चुनावोंके प्रस्तावके पीछे एक बहुत ही बुरा इरादा है। इसका उद्देश्य पाकिस्तानके प्रश्नपर जनमत जानना नहीं है क्योंकि पठानोंने इस सम्बन्धमें अपना साफ़ फैसला एक साल पहले ही दे दिया है। इसका उद्देश्य ग़लत या सही ढंगसे मुस्लिम लीगको गद्दीनशीन बनाना है। उन्होंने कहा कि सरहदी सूबेमें मुस्लिम लीगका आंदोलन सिर्फ शहरी इलाक़ोंतक ही महदूद है और वहाँ भी अबतक वह खत्म हो गया होगा अगर उसे गवर्नरका सक्रिय समर्थन न मिल रहा हो। मैंने जो कुछ देखा और सुना है उससे मुझे अंग्रेजोंके भारत छोड़नेके इरादेमें बहुत सन्देह हो रहा है। यदि उनमें सचमुच ईमानदारी है तो सीमाप्रान्तमें उपद्रव शुरू करनेमें उनका उद्देश्य उन खुदाई खिदमतगारों और बहुसंख्यक पठानोंको यहाँसे जाते-जाते ठोकर लगा जाना है जिन्होंने उनकी विदाईमें इतनी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है और जिन्हें वे इसके लिए सजा देना चाहते हैं। नये सिरेसे आम चुनाव करानेमें अंग्रेजोंका एक यही उद्देश्य है कि वे भारत छोड़नेसे पहले अपने पिट्ठू और गुर्गे मुस्लिम लीगियोंको अतीतमें की गयी उनकी सेवाओंके लिए पुरस्कृत करना चाहते हैं। उन्होंने गवर्नरपर यह आरोप लगाया कि वे मन्त्रियोंकी उपेक्षा करके अपनी मनमानी

कर रहे हैं। उन्होंने यह रहस्योद्घाटन भी किया कि उन मुस्लिम लीगी नेताओंको, जो जेलमें थे और इस समय दिल्लीमें हैं, गवर्नरने पैरोलपर छोड़ दिया और जेलोंके मन्त्रीको इसकी सूचनातक न दी।

उन्होंने बताया : "सीमाप्रान्तमें मेरे पुत्र गनीने हालमें जिस जल्मे पख्तून नामक संघटनकी स्थापना की है उसका लाल कुर्ती आन्दोलनसे कोई सम्बन्ध नहीं है। यह बिलकुल स्वतन्त्र संघटन है। मेरी अब भी अहिंसामें आस्था है क्योंकि मेरा दृढ़ विश्वास है कि सामान्यतः सारे देशको और सीमाप्रान्तको अहिंसा स्वीकार करनी चाहिए। हिंसासे घृणा फैलती है और अहिंसासे प्रेमका विस्तार होता है।"

जिन परिस्थितियोंमें जल्मे पख्तूनका निर्माण हुआ उनपर प्रकाश डालते हुए ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँने कहा :

"इस नये दलका निर्माण सीमाप्रान्तमें मुस्लिम लीग द्वारा चलाये गये हिंसात्मक आन्दोलनकी पठानोंपर होनेवाली प्रतिक्रियाका प्रत्यक्ष परिणाम है। मैं इधर साढ़े तीन महीनोंसे अपने सूबेके बाहर था। इस बीच मुस्लिम लीगने यहाँ उग्र हिंसात्मक और आतंकवादी आन्दोलन छेड़ रखा था जिससे सीमाप्रान्त-की जनता अत्यधिक उत्तेजित हो गयी। इससे अबतक जिन लोगोंकी अहिंसामें आस्था थी वे हिंसाकी ओर मुड़ने लगे।

"सीमाप्रान्तमें वापस आनेपर मैंने अपने कार्यकर्ताओंको एकत्र कर उनसे कहा कि मैं अपना अहिंसाका सिद्धान्त छोड़नेको तैयार नहीं हूँ। लेकिन आपमें से यदि किसीका हिंसामें विश्वास हो तो उसे इसकी साफ़ घोषणा कर देनी चाहिए। उनमेंसे कुछ लोगोंका यह दृढ़ मत था कि अहिंसक लोगोंकी हिफ़ाजतके लिए मौजूदा परिस्थितियोंमें एक विशेष संघटन बनाना जरूरी है। इस तरहसे जल्मे पख्तूनका जन्म हुआ। इस पार्टीका उद्देश्य आत्मरक्षा करना है, न कि आक्रमण। जल्मे पख्तूनके स्वयंसेवक हिंसामें विश्वास करते हैं। वे गाढ़े लाल रंग-की वर्दी पहनते हैं और आग्नेयास्त्रोंसे लैस रहते हैं।"

बिहारमें रहते समय ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँने गम्भीरतापूर्वक राजनीतिसे हट जानेका विचार किया था। उन्हें सत्तागत राजनीतिकी क्षुद्रता और स्वार्थ-परतासे घृणा हो गयी थी किन्तु सीमाप्रान्तकी हालकी घटनाओंसे उन्हें इसके विपरीत कार्य करना पड़ा। उन्होंने अनुभव किया कि इस समय राजनीतिसे संन्यास ग्रहण करनेका अर्थ होगा पठानोंको उनके सबसे बड़े संकटकी घड़ीमें उन्हें मझधारमें छोड़ देना। मईके मध्यमें शबकदरमें आयोजित एक सभामें भाषण

करते हुए उन्होंने कहा : "हम एक बड़े ही संकटकी घड़ीसे गुजर रहे हैं। अंग्रेज और उनके दलाल अपने हाथसे शासन-सत्ता चली जानेकी सम्भावनासे बड़े व्यग्र हैं। कुछ लोग आपको इस्लामका नाम लेकर बहकाते हैं। मैं आपको भविष्यके खतरोंसे आगाह करना अपना फ़र्ज समझता हूँ जिससे मैं इंसानके सामने और क़यामतके दिन खुदाके सामने अपनेको सही साबित कर सकूँ।"

गवर्नर सर ओलफ कैरोकी चर्चा करते हुए उन्होंने कहा : "मैं दिल्ली गया हूँ और मुझे नजदीकसे इस बातकी जानकारी है कि वही शख्स, जो आप लोगोंसे जिरगामें मिलता है और आपका दोस्त होनेका दावा करता है, आपके खिलाफ रिपोर्ट देता रहा है और दिल्लीके हुक्मरानपर इसके लिए दबाव डालता रहा है कि वे आपके ऊपर मौत और बरबादी बरपा करनेके लिए बमबाजोंके बड़े दस्ते तैयार रखें। जब वह फिर जिरगामें आये तो आप उससे पूछें कि मैं जो कुछ कहता हूँ, वह सच है या नहीं ? अगर वह इससे इनकार करे तो आप उससे कहें कि वह मेरे सामने आये। मैं उसपर जो अभियोग लगा रहा हूँ उसे साबित करनेके लिए एकके बाद एक बहुत सारे नजीर पेश कर दूँगा।"

उन्होंने यह भी बताया कि हालमें ही कैरोने अपने मन्त्रियोंसे कहा था कि आप हमेशा यह याद रखें कि आपमें और भारतमें कोई ऐसी चीज नहीं है जो एक-दूसरेसे मेल खाती हो और यदि आप कांग्रेस छोड़ देनेके लिए राजी हो जायँ तो मैं आपको हर तरहकी सहायता दूँगा।

उन्होंने पूछा कि, 'आखिर सर ओलफ कैरो सरहदी सूबेमें नये सिरेसे चुनाव क्यों कराना चाहते हैं ?' १९४६ के चुनावोंमें, जो पाकिस्तानके ही खास मसलेपर लड़े गये थे, ५० सीटोंमें कांग्रेसको ३२ सीटें मिली थीं जिनमें कुल ३८ मुस्लिम सीटोंमें उसे मिली हुई २१ सीटें भी शामिल हैं। इसके अतिरिक्त उसे सभी हिन्दू सीटें और ३ सिख सीटोंमें २ सीटें भी मिली थीं। जिन १७ मुस्लिम सीटोंपर उसके विरोधियोंने कब्जा किया था उनमें ११ हजाराकी थीं जो एक गैरपश्तोभाषी जिला है। "सर ओलफका इरादा बिलकुल साफ़ है। वे अपने उन पिट्ठुओं और गुर्गोंको—उन खानों, नवाबों और कुछ अफसरोंके हाथमें हुकूमतकी बागडोर देना चाहते हैं जिन्होंने अंग्रेजोंकी मदद और खुदाई खिदमतगारोंकी खिलाफ़त की थी। सत्ता हस्तान्तरणके समय गवर्नर कैरो अंग्रेजोंके दोस्तों को सत्ता हस्तान्तरित करनेके लिए अत्यन्त व्यग्र हैं। इसके अलावा नये चुनावका और कोई मतलब नहीं हो सकता। क्योंकि सिर्फ एक साल पहले ही पठानोंने पाकिस्तानके सवालपर अपना फैसला दे दिया है। उस मुस्लिम लीगके साम्प्र-

दायिक आन्दोलनको सियासतका दर्जा देना बेईमानी है जिसके अनुयायी अपराध करते रहे हैं।"

गवर्नरका यह तर्क था कि "सरहदी सूबेमें जो उग्र और हिंसात्मक प्रदर्शन हुए हैं उनसे पता चलता है कि लोगोंका मन्त्रिमण्डलमें विश्वास नहीं रह गया है।" खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने कहा कि यदि गवर्नरने अपना फर्ज पूरा किया होता तो वे रक्तपात रोकनेमें मदद कर सकते थे। १९३० में एक सिरफिरे पठानने एक अंग्रेज अफसरको गोली मार दी थी। उसे तुरन्त गिरफ्तार कर लिया गया और उसपर मुकदमा चलाकर ४८ घंटोंके भीतर उसे फाँसी दे दी गयी। जब मिस मोली एलिसका अपहरण हुआ था तो उनका उद्धार जिस मुस्तैदी और जल्दीसे किया गया उसके संबंधमें एक प्रमुख टोरी अखबारने लिखा था कि यह इस बातका उदाहरण है कि एक अंग्रेज महिलाकी प्रतिष्ठा बचानेके लिए किस तरह पूरे ब्रिटिश साम्राज्यके साधनोंको संचालित किया जा सकता है। लड़ाईके छः सालोंमें जिस समय खुद अंग्रेज विपत्तिमें फँसे हुए थे पूरे कबायली क्षेत्रमें किसी भी तरहका उपद्रव नहीं होने पाया। उस समय ब्रिटेनको शान्तिकी जरूरत थी इसलिए शान्ति क़ायम रही। इस समय सैकड़ों व्यक्तियोंका कत्ल हो गया, हजारों लोग अनाथ, असहाय और बेघरबार हो गये फिर भी सीमाप्रान्तकी ब्रिटिश हुकूमत हाथपर हाथ रखे बैठी रही। उसके मन्त्रियोंने कड़ी काररवाई करनेके लिए उससे बार-बार कहा किन्तु वह मौन दर्शक बनी रही। इतना ही नहीं, उसने इस अराजकताके बहाने उन मन्त्रियोंको हटानेका भी इरादा जाहिर किया जो अत्यधिक बहुमतसे चुने गये थे और जिनका अब भी विधानमण्डलोंमें बहुमत है। "कैरोको इसके लिए लज्जित होना चाहिए कि प्रान्तमें चार सौ निरपराध लोगोंको मार डाला गया किन्तु आजतक एक भी अपराधी गिरफ्तार नहीं हुआ। यह कैसा प्रशासन है ?"

उन्होंने मुस्लिम लीगियोंसे हार्दिक अपील की कि भारतसे अंग्रेजोंके चले जानेके बाद उत्पन्न होनेवाली विभिन्न समस्याओंसे कैसे निबटा जाय इसपर वे संयुक्त जिरगामें बैठकर खुदाई खिदमतगारोंसे सलाह-मशविरा करें। "हम आज ही उनसे अपने सारे मतभेद मिटा सकते हैं अगर वे हमसे भाइयोंकी तरह मिलें और अपने हिंसात्मक तरीक़े छोड़ दें। यदि ईमानदारीसे कोशिश की जाय तो हम आपसमें सम्मानजनक समझौता कर सकते हैं।" उन्होंने कहा कि, "लीगियोंको हिन्दुओंके प्रभुत्वका डर है जब कि हमें अंग्रेजोंके प्रभुत्वका डर है। हम आपसमें मिलें और एक-दूसरेको अपने विचार समझायें। हम उनका डर दूर करनेको

तैयार हैं। लेकिन मैं पूछता हूँ कि क्या वे हमारा डर भी दूर करेंगे ?"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने आगे कहा : "लार्ड माउण्टबैटनने नयी दिल्लीमें मुझसे हुई एक मुलाकातमें ज़ोर देकर यह बात कही थी कि मैं हिन्दुस्तानका आखिरी वाइसराय हूँ। अंग्रेज जल्द ही हिन्दुस्तान छोड़ने जा रहे हैं। वे निर्धारित तारीखके पहले ही सत्ता हस्तान्तरित कर देना चाहते हैं ताकि भारत और ब्रिटेनके बीच दोस्तीके संबंधपर मुहर लग जाय। मैंने उनसे पूछा कि, 'जब मैं सरहदी सूबेमें आपके कुटिल व्यवहारको देखता हूँ तो आपपर कैसे भरोसा किया जाय ?' उन्होंने इसके लिए मुस्लिम लीगको जिम्मेदार बताया। मैंने पूछा, 'आखिर मुस्लिम लीग क्या है ? यह सब तो कैरोकी माया है।' बच्चों, स्त्रियों और बुड्ढों के कत्ले आम और इन दंगोंसे इस्लाम और मुसलमानोंका क्या फायदा होनेवाला है ? और पख्तूनोंको इससे किस तरह कोई लाभ हो सकता है ? ये सारी वारदातें पाक कुरानके उपदेशों और पैगम्बरके संदेशोंके विरुद्ध हैं। निर्दोष गरीब आदमीपर हाथ छोड़ना पख्तून परम्पराके विरुद्ध है। अभी उस दिन एक सिख फेरीवालेको सड़कपर ही कत्ल कर दिया गया जब कि उसने इस्लाम कबूल कर लेनेका इरादा भी जाहिर कर दिया था। क्या यह सब इस्लामके लिए किया जा रहा है ? मैं लीगी भाइयोंको चेतावनी देता हूँ कि वे जो तरीक़े अख्तियार कर रहे हैं उनसे उनका और मुसलिम समुदायका विनाश हो जायगा। वे जो आग जला रहे हैं वह धू-धू कर चारों ओर फैल जायगी और उसके रास्ते जो कुछ भी आयेगा उसे वह जलाकर खाक कर देगी।"

उन्होंने कहा : "यह अंग्रेजोंकी चाल है जिससे वे हिन्दू और मुसलमानोंको उनका सरंक्षण पाने और इस प्रकार उन्हें यहाँ बनाये रखनेके लिए विवश कर देना चाहते हैं। पंजाबके शिविरों और दूसरी जगहोंमें शरण लेनेवाले उपद्रवपीड़ित लोग यही माँग कर रहे हैं।"

उन्होंने लार्ड माउण्टबैटनसे एक ईमानदार व्यक्तिकी तरह कार्य करनेकी अपील की। उन्होंने कहा कि आपको यहाँ भलाई करनेके लिए भेजा गया है इसलिए आप अपनेको दलगत राजनीतिसे ऊपर रखें।

लार्ड माउण्टबैटनने सभी सम्बद्ध राजनीतिक दलों द्वारा उनकी योजनापर विचार किये जानेकी तिथि १७ मई, १९४७ निश्चित की थी किन्तु इसी बीच ब्रिटिश सरकारने वाइसराय द्वारा लार्ड इस्मेके हाथ मईके प्रथम सप्ताहमें भेजे गये योजना-प्रारूपमें कुछ महत्त्वपूर्ण परिवर्तन कर दिये। सीमाप्रान्तमें फिरसे चुनाव करानेके पूर्व डाक्टर खाँ साहबके मन्त्रिमण्डलको बरखास्त कर देनेका

प्रस्ताव भी इन परिवर्तनोंमें शामिल था जिसका पहले ही पता चल गया। इसकी कांग्रेसी नेताओंमें बड़ी तीव्र प्रतिक्रिया हुई। उन्होंने यह चेतावनी दी कि यदि सीमाप्रान्तीय मन्त्रिमण्डलमें किसी प्रकारकी दस्तंदाजी की गयी तो ब्रिटिश सरकार के प्रस्तावके प्रति कांग्रेसका समूचा दृष्टिकोण बदल सकता है। लंदनमें कुछ और ऐसे संशोधन किये गये जो कांग्रेसको बड़े नागवार लगे। इन परिवर्तनोंके प्रति नेहरूकी प्रतिक्रिया इतनी उग्र हुई कि लार्ड माउण्टबैटनको प्रस्तावित बैठककी तिथि बदलकर २ जून कर देनी पड़ी और योजनाका प्रारूप फिरसे तैयार किया गया। एक संशोधन यह था कि जहाँ योजनाके पहले प्रारूपमें सामान्यतः सभी प्रान्तोंको अपना भविष्य निर्धारित करनेका अधिकार दिया गया था वहाँ संशोधित प्रारूपमें उसे छीन लिया गया। उदाहरणके लिए पहले सरहदी सूबा यदि चाहता तो भारत और पाकिस्तानके बाहर अपने लिए स्वतंत्र अस्तित्वका विकल्प चुन सकता था। संशोधित प्रारूपमें पाकिस्तानके बाहर सीमाप्रान्तका कोई अस्तित्व नहीं रह गया। इसी तरह बंगालके हिन्दुओं और मुसलमानों दोनोंकी इच्छा रहते हुए भी कांग्रेस और लीगमें समझौता हुए बिना 'प्रभुतासम्पन्न संयुक्त बंगाल' का भविष्य सदाके लिए खत्म हो गया।

वाइसरायको आगे विचार-विमर्शके लिए लंदन बुलाया गया। उनकी अनुपस्थितिमें जिनाने दिल्लीमें आयोजित एक प्रेस सम्मेलनमें भाषण करते हुए कहा कि लीग बंगाल और पंजाबके विभाजनका आखिरी दमतक विरोध करेगी। उनका मतलब यह था कि इन दोनों प्रान्तोंको पूरी तरह पाकिस्तानमें शामिल किया जाय। इसके बाद उन्होंने नये राज्यके दोनों अंगोंको मिलानेके लिए बीचमें उनको जोड़नेवाले एक गलियारेकी भी माँग की।

लार्ड माउण्टबैटन अपनी अन्तिम योजनाके साथ ३१ मईको दिल्ली लौट आये। कांग्रेसी नेताओंके अनुरोधपर गांधी कुछ दिनों पहले ही दिल्ली पहुँच गये थे। जिनाकी नयी माँगोंके फलस्वरूप विभाजन-योजनाके विरुद्ध कांग्रेसी दृष्टिकोणमें जो कठोरता आ गयी थी उससे गांधीको कांग्रेस हाई कमान और ब्रिटिश सरकार दोनोंपर एक बार फिर इस बातके लिए ज़ोर डालनेका दूसरा मौका मिल गया कि वे लार्ड माउण्टबैटनकी विभाजन-योजनाके विपरीत कैबिनेट मिशनकी योजनापर ही विचार ही करें। गांधीने पुनः 'विभाजनके पूर्व शान्तिस्थापन' का नारा दिया। उन्होंने कहा कि जबतक वाइसराय पूरी तरह शान्तिकी उस अपीलको कार्यान्वित नहीं कर लेते जिसपर उनके साथ ही जिनाने भी हस्ताक्षर किये हैं उन्हें मुस्लिम लीगके साथ किसी प्रकारकी वार्ता करनेसे

इनकार कर देना चाहिए। इसके लिए वाइसराय भी वचनबद्ध हैं और वे एक प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। यदि कांग्रेसने दुर्बलता नहीं दिखायी तो मुस्लिम लीगको तलवारकी नोकपर अपनी मांगोंको बढ़ाते जानेकी जगह, जैसा कि वह अबतक करती रही है, कांग्रेसके पास आकर समझदारीकी बात करनी होगी।

३१ मईको सबेरे गांधीके प्रातःकालीन भ्रमणमें राजेन्द्रप्रसादने उसी दिन तीसरे पहर होनेवाली कार्यसमितिकी बैठकके संदर्भमें कुछ वार्ता की। कांग्रेसी नेताओंने यह विश्वास पाल रखा था कि यदि विभाजन स्वीकार कर लिया जाय तो देशमें शान्ति पुनः कायम हो जायगी। गांधीका यह दृढ़ मत था कि शान्ति विभाजनके पहले स्थापित होनी चाहिए; शान्ति-स्थापनाके पहले विभाजन स्वीकार करना घातक होगा। जिस तरहकी घटनाएँ हो रही हैं उन्हें देखते हुए यह तय है कि विभाजनके बाद अल्पसंख्यक पाकिस्तानमें नहीं रह सकेंगे। शरणार्थियोंका ताँता लग जायगा और चारों ओर अराजकता फैल जायगी।

अभी वार्ता समाप्त नहीं हुई थी। बीचमें ही गांधीका भ्रमण समाप्त हो गया। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ गांधीजीकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्हें देखते ही वे बोले : 'महात्माजी, अब तो आप हमें पाकिस्तानी मानेंगे। सरहदी सूबा और बलूचिस्तानके सामने भयानक स्थिति उत्पन्न हो गयी है। हम नहीं जानते कि हमें क्या करना है।"

गांधीने कहा : "अहिंसामें निराशाकी कोई गुंजाइश नहीं है। यह आपकी और खुदाई खिदमतगारोंकी परीक्षाकी घड़ी है। आप यह घोषणा कर सकते हैं कि पाकिस्तान आपको मंजूर नहीं है और इसके लिए बुरेसे बुरे परिणामका बहादुरीसे सामना कर सकते हैं। उन लोगोंके लिए क्या डर हो सकता है जो करने या मर जानेका सङ्कल्प ले चुके हैं? ज्यों ही परिस्थितियाँ अनुकूल हुईं मैंने सीमाप्रान्त जानेका इरादा कर लिया है। मैं इसके लिए कोई पासपोर्ट नहीं लूँगा क्योंकि मैं विभाजनमें विश्वास नहीं करता। और यदि इसके फलस्वरूप कोई मुझे मार डालता है तो मैं इससे खुश होऊँगा। यदि पाकिस्तान बनता ही है तो मेरा स्थान पाकिस्तानमें ही होगा।"

ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने कहा : "मैं समझ रहा हूँ। मैं आपका और ज्यादा वक़्त नहीं लूँगा।" खान अब्दुल गफ़्फ़ार ख़ाँ ज्यों ही कमरेसे बाहर हुए गांधीने उनसे कहलाया कि वे अपने ही कमरेमें शांतिपूर्वक विश्राम करें। वे इतने सतर्क रहते थे। उन्होंने सोचा कि यदि वे अपने कमरेमें आये और मेरे साथ ठहरे तो इससे मेरे आराममें खलल पहुँचेगा।

दूसरे दिन सुबह १ जूनको गांधी रोजसे पहले ही जग गये। अभी प्रार्थना शुरू होनेमें आध घंटेकी देर थी इसलिए वे अपने बिस्तरेमें ही पड़े-पड़े धीमी आवाज़में सोचने लगे : "आज मैं अपनेको बिलकुल अकेला पाता हूं। यहांतक कि सरदार और जवाहरलाल भी मेरी धारणाको ग़लत समझते हैं और यह मानते हैं कि यदि विभाजन मान लिया जाय तो शान्ति निश्चित रूपसे क़ायम हो जायगी। मेरा वाइसरायसे यह कहना भी कि यदि विभाजन होना ही है तो इसे ब्रिटिश हस्तक्षेप या ब्रिटिश शासनके अन्तर्गत नहीं होना चाहिए, पसंद नहीं आया। उन्हें यह आशंका होती है कि कहीं वृद्धावस्थाके कारण मेरा दिमाग़ तो खराब नहीं हो गया है? फिर भी जैसा कि मैं दावा करता हूं यदि मुझे कांग्रेस और ब्रिटिश जनताके प्रति अपनेको निष्ठावान मित्र साबित करना है तो मैं जो अनुभव करता हूं उसे मुझे कहना ही होगा। मैं साफ़-साफ़ देख रहा हूं कि हम लोग सारा काम ग़लत ढंगसे कर रहे हैं। हम इसके पूरे परिणामका इस समय भले ही अंदाज न लगा पाते हों लेकिन मुझे तो साफ़ दिखाई दे रहा है कि इस कीमतपर मिली आज़ादी अंधकारपूर्ण होगी। मैं बादशाह खांकी तकलीफ़ बर्दाश्त नहीं कर सकता। उनकी आन्तरिक व्यथासे मेरा हृदय मथा जा रहा है। किन्तु यदि मैं आँसू बहाने लगता हूँ तो यह कायरता होगी और वह बहादुर पठान टूट जायगा। इसीलिए मैं अपना काम अविचलित ढंगसे किये जा रहा हूँ। यह कोई साधारण बात नहीं है।"

वे आगे कहने लगे, "हो सकता है वे सभी लोग सही हों और अकेला मैं ही अँधेरेमें भटक रहा होऊँ। संभवत: मैं इसे देखनेके लिए जिंदा न रहूँगा किन्तु आज मैं जिस अशुभकी आशंका कर रहा हूं यदि वह भारतपर छा गया और उसकी स्वतन्त्रता खतरेमें पड़ गयी तो भावी संततिको यह मालूम रहे कि इसके बारेमें सोचते हुए इस बुड्ढे आदमीको कैसी पीड़ाका अनुभव हुआ था। कभी यह न कहा जाय कि गांधी राष्ट्रके अंग-भंगमें भागीदार हुआ था। किन्तु आज तो सभी लोग आज़ादीके लिए अधीर हो रहे हैं। इसलिए लाचारी है।" उन्होंने विभाजन के साथ आज़ादीकी उपमा उस 'काठकी रोटी' से दी थी जिसे 'यदि कांग्रेसी नेताओंने खाया तो वे उदर-शूलसे मर जायेंगे और नहीं खाया तो भूखों मर जायेंगे।"

तीसरे पहर कांग्रेस कार्यसमितिकी बैठक हुई। बैठकके अन्तमें यह स्पष्ट दिखाई देने लगा कि भारतका विभाजन अपरिहार्य है। शामको यह ख़याल कर कि गांधीजी की प्रार्थना-सभाओंमें इधर कई दिनोंसे कुरानकी आयतोंके पाठके वक़्त प्रदर्शन

होते रहे हैं खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने उनकी सभामें शामिल न होनेका इरादा जाहिर किया ताकि किसीको उनकी उपस्थिति नागवार न लगे किन्तु गांधीने उनके आनेपर जोर दिया अतः उन्हें भी गांधीका साथ देना पड़ा। सभामें गांधीने बड़ी व्यथाके साथ इस बातका जिक्र किया। अपनी बगलमें बैठे बादशाह ख़ाँकी ओर संकेत करते हुए उन्होंने कहा : "देखिए, वे यहाँ कितनी बेचैनी और उलझनका अनुभव कर रहे हैं। आपको इससे सबक लेना चाहिए। हमें दूसरोंकी भावनाओंके प्रति कोमल सम्मानकी भावना रखनी चाहिए।"

२ जूनको लार्ड माउण्टबैटनने नेताओंको बुलाकर उन्हें वह योजना दे दी जिसमें दो राज्योंके निर्माण और भारत-विभाजनपर मुहर लगा दी गयी थी। ३ जूनको वाइसरायने रेडियोसे इस योजनाको प्रसारित कर दिया।

"तीसरी जूनके प्रस्ताव" या ब्रिटेनके सम्राट्की सरकारके प्रस्तावमें यह व्यवस्था की गयी थी कि यदि मुस्लिमबहुल प्रान्तोंके मुस्लिम प्रतिनिधियोंकी माँग हो तो पाकिस्तानका निर्माण किया जा सकता है। उसमें यह व्यवस्था भी थी कि बंगाल और पंजाबका भी विभाजन किया जा सकता है यदि इन प्रान्तोंकी विधानसभाओंमें पार्टियोंके लोग बहुमतसे इसकी माँग करें। इस उद्देश्यसे इन दोनों प्रान्तोंकी विधानसभाओंकी बैठक दो पृथक् भागोंमें होगी जिनमें क्रमशः मुस्लिमबहुल तथा मुस्लिम अल्पसंख्यक जिलोंके प्रतिनिधि शामिल होंगे। इसमें यह भी प्रस्तावित था कि सिलहट जिलेमें यह जाननेके लिए जनमत संग्रह कराया जायगा कि वह आसामके साथ रहेगा या पूर्वी बंगालमें शामिल होगा। उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तमें भी इसी तरहका जनमत संग्रह यह जाननेके लिए कराया जायगा कि वह पाकिस्तानमें शामिल होगा या नहीं। ब्रिटेनकी प्रभुसत्ता समाप्त हो जानेके बाद देशी राज्य यह निर्णय करनेके लिए स्वतन्त्र होंगे कि वे संविधान सभामें शामिल होंगे या उसके बाहर अकेले बने रहेंगे। ब्रिटिश सरकार किसी भी भारतीय राज्यको पृथक् उपनिवेशकी मान्यता नहीं दे सकती। प्रस्तावमें यह कहा गया था कि नये संविधान या संविधानोंके बन जानेतक इसका आधार डोमिनियन स्टेट्स होगा और भारतीय जनताको भविष्यमें अपने इच्छानुसार व्यवस्था कर लेनेकी स्वतन्त्रता होगी। प्रस्तावमें यह भी कहा गया था कि "इस योजनामें ऐसी कोई बात नहीं है जिससे भारतके विभिन्न सम्प्रदाय संयुक्त भारतके निर्माणके लिए कोई वार्ता न कर सकें।"

३ जूनको कांग्रेस कार्यसमितिकी बैठक हुई। इसमें पहले-पहल जिन मुद्दोंपर विचार-विमर्श हुआ उनमें उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तके भविष्यका प्रश्न सर्व-

प्रमुख था। नयी योजनाने इस प्रान्तके लिए एक विचित्र स्थिति पैदा कर दी थी। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ और उनके दलने सदा कांग्रेसका समर्थन और मुस्लिम लीगका विरोध किया था। लीग खान बन्धुओंको अपना घोर शत्रु मानती थी। विभाजन खान बन्धुओं और खुदाई खिदमतगारोंको बड़ी ही खराब स्थितिमें रख देता था। यह उन्हें मुस्लिम लीगकी दयापर छोड़ देता था।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ तो इससे बिलकुल स्तब्ध रह गये। कुछ मिनटों-तक तो उनके मुँहसे कोई बोल नहीं फूटा। उसके बाद उन्होंने समितिको याद दिलाया कि मैं बराबर कांग्रेसका समर्थन करता रहा हूँ। अगर कांग्रेसने हमें छोड़ दिया तो सरहदी सूबेकी जनतापर इसकी बड़ी भयानक प्रतिक्रिया होगी। दुश्मन उनपर हँसेंगे। उनके दोस्त भी यही कहेंगे कि जबतक कांग्रेसको सरहदी सूबेकी ज़रूरत थी उसने खुदाई खिदमतगारोंका समर्थन किया और जब उसे मुस्लिम लीगसे समझौता करनेकी इच्छा हुई तो उसने सीमाप्रान्त और उसके नेताओंसे सलाहतक न की और विभाजनका विरोध करना छोड़ दिया। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने बार-बार कहा कि अगर कांग्रेसने अब खुदाई खिदमतगारोंको भेड़ियोंके सामने फेंक दिया तो मैं इसे बहुत बड़ी धोखाधड़ीका काम समझूँगा। सरदार पटेल और राजगोपालाचारी दोनों सरहदी सूबेमें जनमत संग्रह करानेका दृढ़तासे समर्थन करते थे। अन्ततः जब कार्यसमितिने विभाजन और सीमाप्रान्तमें जनमत संग्रह कराना स्वीकार कर लिया तो खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने गांधी और कार्य-समितिसे कहा : "हम पख्तून बराबर आपके साथ रहे और आज़ादी हासिल करनेके लिए हमने बड़ीसे बड़ी कुर्बानी की किन्तु अब आपने हमें छोड़ दिया और भेड़ियोंके सामने फेंक दिया। हम कभी जनमत संग्रह कराना स्वीकार नहीं कर सकते क्योंकि हमने हिन्दुस्तान और पाकिस्तानके सवालपर निर्णायक रूपसे चुनाव जीते हैं और दुनियाके सामने इस सवालपर पख्तूनोंके नुक़्ते नजरको साफ़-साफ़ जाहिर कर दिया है। अब चूँकि हिन्दुस्तानने हमें छोड़ दिया है हम हिन्दुस्तान और पाकिस्तानपर जनमत संग्रह क्यों करायें? अब यदि इसे होना ही है तो यह पख्तूनिस्तान या पाकिस्तानके सवालपर होगा।"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ समितिकी बैठकसे लौटते वक़्त बड़े ही मायूस और किंकर्तव्यविमूढ़ थे। यह तो पख्तूनोंके लिए मौतका परवाना ही था। वे सीढ़ियों-पर 'तोबा तोबा' करके बैठे रहे। उन्होंने लिखा है : "विभाजन और सीमाप्रान्तमें जनमत संग्रहके संबंधमें हाई कमानने जो सलाह ली उसमें उसने हमारी कोई सलाह-तक न ली। सिर्फ गांधीजी और मैंने इसका विरोध किया। सरदार पटेल और

राजगोपालाचारी विभाजन और हमारे सूबेमें जनमत संग्रह करानेके पक्षमें थे। सरदार कहते थे कि मुझे इसके बारेमें कुछ परेशान होनेकी ज़रूरत नहीं है। मौलाना आज़ादने, जो मेरी बगलमें बैठे हुए थे, मुझे उदास देखकर कहा कि, 'अब आपको मुस्लिम लीगमें शामिल हो जाना चाहिए।' मुझे यह जानकर बड़ा दु:ख हुआ कि हमारे ये साथी हमें क्या समझते हैं। जिन उद्देश्योंके लिए हम वर्षोंसे लड़ते रहे हैं उनके प्रति इनका कैसा दृष्टिकोण है। क्या वे यह कल्पना करते थे कि हम सत्ता प्राप्त करनेके लिए अपने सिद्धान्तोंको छोड़ सकते हैं? कार्यसमितिके निर्णयके बाद मैंने महात्माजीसे बड़े ही अफसोसके साथ शिकायत की कि, 'आपने हमें भेड़ियोंके सामने फेंक दिया है।' गांधीजीने बड़े ही व्यथित हृदयसे उत्तर दिया कि मेरा पूर्ण विश्वास है कि यदि सीमाप्रान्तके साथ न्याय नहीं किया गया और खुदाई खिदमतगारोंपर अत्याचार किया गया तो भारत उनकी मदद करनेके लिए वचनबद्ध है और जहाँतक मेरा सवाल है मैं भारत सरकारको इस मामलेको अपने निजी मामलेके रूपमें ग्रहण करनेकी सलाह देनेमें न हिचकूँगा। गांधीजीने आगे मेरे पुत्रसे भी अपना यही वक्तव्य दुहराया था। जब गनीने उनसे पूछा कि वैसी सूरतमें आपकी अहिंसाका क्या होगा तो गांधीजी-ने उससे कहा था कि इस मामलेमें हमारी अहिंसाके बारेमें परेशान होनेकी जरूरत नहीं है। "मैं अहिंसक हूँ, सरकार नहीं।"

कांग्रेस कार्यसमितिका फैसला कांग्रेस प्रेसिडेण्टने वाइसरायको एक पत्रमें भेजा। इसमें यह वक्तव्य भी निहित था: "हमारा सदाकी भाँति आज भी अखण्ड हिन्दुस्तानमें विश्वास है। हम तहे दिलसे यह विश्वास करते हैं कि जब मौजूदा भावनात्मक उत्तेजनाएँ समाप्त हो जायँगी और हमारी समस्याओंपर समुचित परिप्रेक्ष्यमें विचार किया जायगा तो उससे भारतके सभी हिस्सोंका स्वैच्छिक एकीकरण हो जायगा।"

नेहरू और पटेलने विभाजनको यह सोचकर स्वीकार किया था कि पाकि-स्तान मान लेनेपर जिनासे उनका पिण्ड छूट जायगा और फिर उनका नाम सुनने को न मिलेगा। नेहरूने निजी रूपसे इस संबंधमें कहा था कि, "सिर काटकर हम सिरदर्दसे छुटकारा पा लेंगे।"

जिनाकी अध्यक्षतामें मुस्लिम लीग कौंसिलने ब्रिटिश सरकारके प्रस्तावको अमन-चैन और शान्तिके हितमें 'एक समझौते' के रूपमें स्वीकार किया और बंगाल तथा पंजाबके विभाजनपर खेद प्रकट किया।

३ जूनकी शामको लार्ड माउण्टबैटन और उनके बाद नेहरू तथा जिनाने

रेडियोपर जनताके नाम भाषण किये। नेहरूने कहा कि सभीको भारतका अंग-भंग करना बिलकुल पसंद न था किन्तु वे यह नहीं देख सकते थे कि बराबर भारतका खून बहता रहे। इन परिस्थितियोंमें इसका शल्य उपचार अनिवार्य हो गया।

जिस समय नेतागण रेडियोपर भाषण करनेवाले थे उसके ठीक पहले गांधीने अपनी प्रार्थना-सभाके भाषणमें कहा कि नेतागण आलोचनासे परे नहीं हैं। उन्होंने नेहरूको 'अपने राजा' के रूपमें चर्चा करते हुए कहा कि "हमें उन सभी बातोंसे प्रभावित नहीं होना चाहिए जो राजा करता या न करता हो। यदि वह किसी अच्छी बातकी सलाह देता है तो हमें उसकी तारीफ़ करनी चाहिए। यदि वह ऐसा नहीं करता तो उसे स्वयं उसे कहना पड़ेगा।"

ब्रिटेनके सम्राट्की सरकारकी घोषणामें निरूपित योजनापर भाषण करते हुए गांधीने ४ जूनको कहा कि मैंने बार-बार इस बातपर जोर दिया है कि शक्ति-प्रदर्शनके सामने जरा भी झुकना बिलकुल ग़लत है। कांग्रेस कार्यसमिति-का कहना है कि वह शस्त्रोंके शक्ति-प्रदर्शनके सामने नहीं झुकी है, उसे परिस्थि-तियोंके दबावके सामने झुकना पड़ा है। बहुसंख्यक कांग्रेसजन यह नहीं चाहते थे कि वे अनिच्छुक भागीदारोंके साथ कार्य करें। उनका आदर्श अहिंसा है अतएव वे जोर-जबर्दस्तीकी नीतिपर नहीं चल सकते। अतएव वे वर्तमान महत्त्वपूर्ण समस्याके उलटे-सीधे सभी पहलुओंपर सावधानीसे विचार कर भारतीय संघके उन भागोंको उससे अलग करनेके लिए अनिच्छापूर्वक तैयार हो गये जिन्होंने संविधान सभाका बहिष्कार कर रखा था। इसके बाद उन्होंने मुस्लिम लीगकी ग़लत नीतिपर दुःख प्रकट करते हुए कहा कि उसे हिन्दू प्रभुत्वका डर था और वह ग़लतीसे यह कहती है कि वह अपने देशमें अपनी हुकूमत चलायेगी। अस-लियत तो यह है कि भारत उन सभी लोगोंकी मातृभूमि है जो यहाँ जन्मे और बड़े हुए हैं। क्या मुसलमान उससे अलग होकर रहेंगे? क्या पंजाब वहाँके हिन्दुओं, सिखों, ईसाइयों, यहूदियों और पारसियोंकी भी मातृभूमि नहीं है?

गांधीजीने कहा कि जो कुछ हुआ है उसके लिए मैं लार्ड माउण्टबैटनको दोष नहीं दे सकता। वाइसरायने तो साफ़-साफ कहा था कि वे अखण्ड भारत चाहते हैं किन्तु चाहे कितनी भी अनिच्छासे ही क्यों न हो जब कांग्रेसने मुसलमानों की स्वतन्त्र स्थिति कबूल कर ली तो वे लाचार हो गये।

गांधीने कहा कि वाइसरायने यह कोशिश करनेमें कुछ भी न उठा रखा कि जनता १६ मईके कैबिनेट मिशनके वक्तव्यको कार्यान्वित करे किन्तु वे इसमें

असफल हो गये। किन्तु इस स्वीकृत तथ्यके सामने मेरा और आप लोगोंका क्या कर्तव्य होता है ? मैं इसलिए कांग्रेसका सेवक हूँ कि मैं देशका सेवक हूँ। अतः मैं कभी उसके प्रति अनिष्ठा नहीं रख सकता। जवाहरलाल और वाइसरायने कहा है कि किसीपर कोई चीज़ जबर्दस्ती नहीं लादी गयी है। घोषणामें जिस समझौतेका उल्लेख हुआ है वह सभी पार्टियों द्वारा स्वेच्छापूर्वक किया गया है। उसे आगे चलकर कभी भी पारस्परिक सहमतिसे बदला जा सकता है। आपने मुस्लिम लीगसे अपील की कि चूंकि अब उसकी इच्छा पूरी हो गयी है अतः अब वह विभिन्न पार्टियोंमें बीच-बचाव करानेके भारी कार्यसे वाइसरायको मुक्त कर दे। अब हर तरहकी हिंसा बंद हो जानी चाहिए और कायदे आजम जिनाको कांग्रेसी नेताओंको बुलाकर आगामी कार्योंको सर्वोत्तम ढंगसे करनेके लिए उनके साथ विचार-विमर्श करना चाहिए।

जनमत-संग्रह

१९४७

तीसरी जूनकी योजनाकी घोषणाके तत्काल बाद ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने कहा : "यह मुस्लिम लीगके लिए विजय हो सकती है किन्तु इससे इस्लामकी विजय नहीं होती। इससे दो हिन्दुस्तान होनेवाले हैं जिनमें हर एकको तबतकके लिए डोमिनियन स्टेट्स प्राप्त होगा जबतक उनकी संविधान सभाएँ अपना फैसला नहीं दे देतीं। पठान एक दिनके लिए भी डोमिनियन स्टेट्स नहीं चाहते। वे अपना स्वतन्त्र संविधान बनाना पसन्द करेंगे और भारतके उस भागके साथ रहेंगे जो मुकम्मल आज़ादी हासिल करेगा। पठान सारी दुनियाके दोस्त होंगे और किसी-के दुश्मन न होंगे। जनमत-संग्रहका कोई सवाल नहीं उठता। लेकिन मैं इसका किसी भी दिन स्वागत करनेको तैयार हूँ बशर्ते इसे डरा-धमकाकर या बाहरी दबावसे न कराया जाय। सारा हिन्दुस्तान जानता है कि सरहदी सूबेको हालमें कैसी तकलीफें झेलनी पड़ी हैं और अब आगे भी झेलनी पड़ सकती हैं। इसलिए मेरी सलाह यह है कि जबतक सियासी माहौल साफ़ नहीं हो जाता सरहदी सूबेको अकेला छोड़ दिया जाय। जब हिन्दुस्तानके दोनों हिस्से अन्तिम आज़ादी या ब्रिटिश राष्ट्रमण्डलकी सदस्यताके सम्बन्धमें अपना फैसला कर लें तब उससे अपने विकल्पकी घोषणा करनेके लिए कहा जा सकता है।"

गांधी ख़ान बन्धुओंकी बातोंको पूरी तरह मानते थे। उनके ख़यालसे इस समय जो घटनाएँ घट रही हैं धर्मोन्मादी लोग प्रस्तावित जनमतसंग्रहका नाजायज फायदा उठायेंगे। मौजूदा स्थितिमें पठानोंसे पूछा जायगा कि वे हिन्दुओंके साथ रहेंगे या मुसलमानोंके साथ? कांग्रेस हिन्दू संघटन नहीं है किन्तु भोलाभाला पठान मौजूदा उलझन और अस्पष्टतामें इस फ़रकको नहीं समझ पायेगा। ब्रिटिश अफसरोंकी मददसे मुस्लिम लीगका प्रचार बराबर बढ़ता जा रहा है। लार्ड माउण्टबैटनके निजी कर्मचारियोंके प्रधान लार्ड इस्मेके अनुसार उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तकी स्थिति वर्णसंकर जैसी है। वह मुस्लिमबहुल प्रान्त है फिर भी वहाँ कांग्रेस मन्त्रिमण्डल पदारूढ़ है। गवर्नर सर ओलफ कैरो मुस्लिम लीगकी तरफदारी कर रहे हैं। सोमवार, २ जून १९४७ को गांधी एकाएक वाइसराय-से मिलने चले गये। वे ख़ासकर उन्हें गवर्नरको हटानेके लिए ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार

ख़ाँ द्वारा दिया गया सन्देश देने गये थे। कांग्रेसी नेता और वाइसराय इसके लिए व्यग्र थे कि कहीं गांधी भारतका अङ्गभङ्ग रोकनेके लिए अपने अन्तिम प्रयासमें कोई बड़ा कदम न उठा लें। एलन कैम्पबेल जान्सनने लिखा है : "इस मुलाकातमें माउण्टबैटन बड़े भयभीत थे। आप इस बातकी कल्पना कर सकते हैं कि जब महात्मा गांधीने प्रयोगमें आ चुके अनेक लिफाफोंको पीठपर लिखकर यह बताया कि मैं आज मौन रहता हूँ तो यह जानकर माउण्टबैटनको कैसा आश्चर्य हुआ होगा और कितनी राहत मिली होगी।" महात्मा गांधीने उन लिफाफों पर लिखा था : "मुझे आपसे दो विषयोंपर ज़रूरी बातें करनी हैं किन्तु मैं आज वार्ता नहीं करूँगा। किन्तु यदि हमारी फिर मुलाकात हुई तो मैं इनकी ज़रूर चर्चा करूँगा।" श्री कैम्पबेलने इस महत्त्वपूर्ण संदेशका उल्लेख नहीं किया है जिसे महात्मा गांधीने उन लिफाफोंपर लिखा था : "बादशाह ख़ाँ मेरे साथ भंगी कोलोनीमें ठहरे हुए हैं। उन्होंने मुझसे कहा है कि 'आप वाइसरायसे कहें कि वे गवर्नरको हटा दें। जबतक वे विदा नहीं हो जाते हमें शांति नहीं मिलेगी।' मुझे नहीं मालूम कि उनका यह कहना सही है या ग़लत किन्तु वे सत्यवादी व्यक्ति हैं। यदि इसे किया जा सकता है तो इसे सरकारको या आपको कर देना चाहिए।"

तीसरी जूनकी योजनाके अन्तर्गत जनमतसंग्रहकी शर्तोंमें जबतक लीगकी सहमति न हो कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता था और कांग्रेस उस समय इसे कोई समस्या बनानेको तैयार नहीं थी। ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँकी यह दृढ़ भावना थी कि मौजूदा परिस्थितियोंमें जनमतसंग्रहमें भाग लेना न केवल निरर्थक है बल्कि खतरनाक भी है। फिर भी अपने कांग्रेसी सहयोगियोंका अनुरोध स्वीकार कर उन्होंने इस समस्याको जिरगाके सामने रखना मान लिया।

कांग्रेस हाई कमानकी रायमें पठानोंको स्वायत्तताकी रक्षाके लिए उनके सामने केवल यही रास्ता है कि वे जनमतसंग्रहमें अपनी पूरी शक्तिसे भाग लें और उसमें विजय प्राप्त करें। अन्यथा भारतके अंगके रूपमें सीमाप्रान्तके संघर्षमें हमेशाके लिए उनकी पराजय हो जायगी। किन्तु सीमाप्रान्तको भारतका अंग बनाकर रखना गांधीका कभी उद्देश्य न था। वे उसकी रक्षा स्वयं पठानोंके लिए करना चाहते थे। वे उसकी रक्षा अहिंसाके उस आदर्शके लिए करना चाहते थे जो खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ और उनके बीच मैत्रीका एकमात्र आधार था। उनके खयालसे सीमाप्रान्त बहादुरोंकी अहिंसाका एक उदाहरण प्रस्तुत कर एक दिन भारत और पाकिस्तान दोनोंके लिए लाभदायक सिद्ध हो सकता है और

दोनोंके बीच एक सुनहले सेतुका कार्य कर सकता है। उन्होंने अपनी निजी हैसियतसे इस उद्देश्यकी सिद्धिमें लार्ड माउण्टबैटनकी सेवाओंका उपयोग करनेकी कोशिश की। ६ जूनको लार्ड माउण्टबैटनसे हुई एक मुलाकातमें गांधीने उन्हें सुझाव दिया कि वे जिनासे निम्नलिखित विचारोंके आधारपर बातचीत करें :

"मुझे इसकी बड़ी चिन्ता है कि उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तमें जनमतसंग्रह करानेसे व्यापक रक्तपात और पठान भाइयोंमें परस्पर रक्तरंजित संघर्ष होंगे और मैं चाहता हूँ कि किसी प्रकार इसका टाला जाना संभव हो जाय। अब चूंकि आपको अपना पाकिस्तान मिल गया है क्या आपके लिए यह विवेकपूर्ण कार्य न होगा कि आप स्वयं सीमाप्रान्त चले जायँ और वहाँकी जनतासे, चाहे वह किसी भी पार्टीकी हो, और वर्तमान मन्त्रिमण्डल तथा उसके समर्थकोंसे सीधे वार्ता करें? आप उन्हें समझा सकते हैं कि पाकिस्तान, जो अभीतक एक खामखयालीकी चीज़ थी, वस्तुतः क्या है और इस प्रकार आप यह आशा कर सकते हैं कि सीमा-प्रान्त पाकिस्तानका एक प्रान्त बनना स्वीकार कर ले और उसे अपना प्रान्तीय संविधान बनानेकी पूर्ण स्वाधीनता रहे।

"यदि आप अपने इस समझाने-बुझानेके प्रयासमें सफल हो जाते हैं तो प्रस्तावित जनमत संग्रह और उससे होनेवाली सारी उलझनें टाली जा सकती हैं। यदि आप इस सुझावको मानना पसंद करते हों तो मैं आपको इसका पूर्ण विश्वास दिला सकता हूँ कि खान बन्धु और उनके अनुयायी आपसे दोस्तोंकी तरह मिलेंगे और आपकी बातें ध्यानपूर्वक सुनेंगे।"

गांधीने यह अनुरोध किया कि यदि वे जिनाको मेरी यह अपील मनवानेमें सफल न हो सकें तो कमसे कम उन्हें इस तथ्यकी जानकारी तो अवश्य करा दी जाय ताकि वे सारी स्थितिपर फिरसे विचार करें। उन्होंने कहा कि जनमत संग्रहके फलस्वरूप होनेवाले रक्तरंजित संघर्षोंकी संभावनासे खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ इतने चिन्तित हैं कि इसे समाप्त करनेके लिए अपनी प्रतिष्ठाके अनुरूप किसी हदतक जा सकते हैं। अन्तमें वे अपने भाई और मन्त्रिमण्डलके उनके साथियोंसे इस्तीफा देने तथा वाइसरायसे सीमाप्रान्तको अनुच्छेद ९३ के अन्तर्गत रखनेके लिए भी कह सकते हैं।

सीमाप्रान्तकी समस्याको लेकर गांधी और कांग्रेस हाई कमानके बीच उप-स्थित मतभेद चरम सीमापर पहुँच गया। ६ जूनकी रातको वल्लभभाई पटेलने उनसे एक घण्टेतक बातचीत की। दूसरे दिन गांधीने नेहरूको लिखा : "हम जितनी बार मिलते हमारी यह धारणा उतनी ही दृढ़ होती जाती है कि हमारे

बीच विचारोंकी खाई आशंकासे भी अधिक गहरी है। सरदार कहते हैं कि वर्तमान स्थितिके अधिकांशतः आप ही जिम्मेदार हैं। उनकी रायमें बादशाह खाँका प्रभाव घट रहा है। बादशाह खाँसे मिलनेपर मुझे ऐसी कोई बात नहीं दिखाई देती। वे आज जिस भी रूपमें हैं उस रूपमें वे शुरूसे हैं। निस्सन्देह आज उनमें पहलेकी अपेक्षा अधिक दृढ़ता है। मैं यह भी अनुभव करता हूँ कि बादशाह खाँके बिना डाक्टर खान साहब और उनके सहयोगी कहींके न रह जायंगे। जहाँतक कांग्रेसके प्रभावका संबंध है उन्हींका महत्त्व है।" लार्ड माउण्टबैटनके साथ हुई अपनी वार्ताका उल्लेख करते हुए उन्होंने आगे लिखा : "यदि कायदे आजम सीमाप्रान्त नहीं जाते और बादशाह खाँ, उनके भाई तथा उनके अन्य सहयोगियोंको राजी करनेका प्रयास नहीं करते तो सीमा-प्रान्तीय मन्त्रिमण्डल तथा संसदके बहुसंख्यक सदस्योंको इसी आधारपर इस्तीफा दे देना चाहिए कि इस समय जनमत संग्रह करानेसे व्यापक रक्तपात होगा और संभव है कि इससे वहाँ रक्तरंजित पारस्परिक संघर्षोंका स्थायी सिलसिला आरंभ हो जाय इसलिए इसे दूर करनेके लिए मानवीय दृष्टिसे जो भी संभव हो उसे करना चाहिए। राजकुमारी अमृतकौरका कहना है कि आपका विचार इससे भिन्न है। आपके विचारसे इसी समय जनमत संग्रह होना चाहिए। इससे रक्तपात नहीं होगा बल्कि मेरे विचारोंके कार्यान्वियनसे ही रक्तपातकी संभावना अधिक है। मैं इस विचारसे सहमत नहीं हो सकता। मैंने बादशाह खाँसे कह दिया है कि यदि इस संबंधमें मैं आपको अपने विचारोंसे सहमत नहीं कर पाऊँगा तो मैं सीमा-प्रान्तीय सलाह-मशविरेसे दूर हो जाऊँगा और आगे इस संबंधमें आप ही उनका मार्गदर्शन करेंगे। मैं अपनेको उनके और आपके बीचमें नहीं डालूंगा और न डाल सकता हूँ। आखिर आप ही तो उन्हें मेरे पास लाये हैं ? अब आप ही फैसला करेंगे और मुझे सूचित करेंगे।"

नेहरूने उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तकी स्थितिके संबंधमें अपने विचार विस्तारपूर्वक गांधीके पास लिखकर भेजे थे। उसका निचोड़ यह था कि मुख्यतः मुस्लिम लीगके आन्दोलन और अंशतः गवर्नरके आग्रहसे दो महीने पहले नये सिरेसे चुनाव करने और अनुच्छेद ९३ के अन्तर्गत शासन लागू करनेका सवाल उठा। कांग्रेस हाई कमानने इसपर तीव्र आपत्ति की थी जिससे यह प्रस्ताव छोड़ दिया गया। सीमाप्रान्तमें मुस्लिम लीग आन्दोलनको अनेक तरीक़ोंसे अंग्रेज और भारतीय अफसरोंका प्रोत्साहन मिलता रहा है। यदि यह सहायता न मिलती होती तो इससे आसानीसे निबटा जा सकता था। 'इसमें कोई सन्देह नहीं है कि सीमाप्रान्तीय अधिकारी प्रान्तीय सरकारको सहयोग देना तो दूर रहा, कभी-कभी उसके

काममें अड़ंगा भी डालते रहे हैं। सीमाप्रान्तमें उनकी सहानुभूति मुस्लिम लीगके नेताओंके साथ है। उनमेंसे कई तो ब्रिटिश सरकारके पुराने निष्ठावान् सेवक रहे हैं और उनका उससे घनिष्ठ संबंध रहा है। पिछले कुछ महीनोंमें इन अधिकारियोंके संबंधमें एक कठिनाई उत्पन्न हो गयी है। यह अच्छी तरह मालूम है कि ये लोग अब बिदा हो रहे हैं किन्तु अभीतक उनकी बिदाईकी कोई तारीख निर्धारित नहीं हुई है। उनके बारेमें जनताकी इतनी शिकायत है कि अब मामला एक-दोको हटा देनेका नहीं रह गया है बल्कि यह सभी अधिकारियोंका बन गया है। इसका नतीजा यह हुआ है कि जो थोड़ेसे अधिकारी हटा भी दिये जाते फिलहाल वे भी बने हुए हैं। किसी भी हालतमें प्रायः वे सभी अधिकारी सीमाप्रान्तसे शीघ्र ही बिदा होनेवाले हैं अतएव हमें अपने आगेका कार्यक्रम इसी आधारपर बनाना चाहिए। इस सवालको इस समय उठानेमें कोई तुक नहीं है।''

नेहरूने आगे लिखा कि जनमत संग्रहका सवाल 'ठीक-ठीक पाकिस्तानके मसले' पर नहीं उठा है बल्कि हालमें हुए कुछ परिवर्तनों और अखिल भारतीय स्थितिमें हुए नये विकासके कारण ही यह प्रश्न उपस्थित हुआ है। फिर भी कांग्रेस हाई कमानका दृष्टिकोण इस संबंधमें यही रहा है कि, ''दूसरी बातोंके अलावा जबतक मुस्लिम लीगका आन्दोलन पूरी तरह बंद नहीं होता और प्रान्तीय सरकारकी राय नहीं ले ली जाती सीमाप्रान्तमें किसी तरहका वास्तविक चुनाव नहीं हो सकता है।'' इसके बाद भारतमें परिवर्तन किये जानेकी मुख्य योजनाका विकास होता है। इसका परिणाम संभवतः यह होनेवाला है कि पश्चिमी पंजाब भारत संघसे अलग हो जायगा जिसका मतलब यह होगा कि सीमाप्रान्त भारत संघसे व्यावहारिक दृष्टिसे कट जायगा। ''इससे एक नयी स्थिति पैदा हो गयी और फिर यह कहा गया कि इस नयी स्थितिको देखते हुए सीमाप्रान्तमें यह जाननेके लिए जनमत संग्रह कराना जरूरी हो जाता है कि वह किस संविधान सभामें शामिल होना चाहता है। अतएव यह प्रस्ताव केवल सीमाप्रान्तके लिए न होकर एक बृहत्तर योजनाका अंग बन जाता है जिसके अनुसार सीमाप्रान्त, बलूचिस्तान और सिलहटमें जनमत संग्रह करानेकी व्यवस्था की गयी है। मौजूदा विशिष्ट परिस्थितियोंके बावजूद यह एक तर्कसंगत एवं विवेकसंगत प्रस्ताव प्रतीत होता है।''

''इस तरह सीमाप्रान्तमें जनमत संग्रह करानेका प्रश्न पंजाब और बंगालके संबंधमें किये गये 'कुछ पूर्वकालीन निर्णयोंपर निर्भर है।' किन्तु इसकी पूरी संभावना है कि बंगाल और पंजाबके कुछ भाग भारत संघसे अलग हो जानेका

ही फैसला करेंगे अतः हमें यह मानकर चलना चाहिए कि उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तका फैसला जाननेका सवाल अवश्य उठेगा। वर्तमान स्थिति यह है कि ब्रिटिश सरकार और वाइसराय इस जनमत संग्रहके लिए निश्चित रूपसे वचनबद्ध हैं और हममेंसे भी कुछ लोग कमो-बेश इसी रूपमें वचनबद्ध हैं। अतः जनमत संग्रहका सवाल बिलकुल तय जैसा लगता है और यह साफ़ नहीं है कि आखिर हम इसके बाहर कैसे जा सकते हैं। वाइसरायके लिए तो यह और भी कठिन है। इस योजनामें कोई परिवर्तन करनेसे बड़े पैमानेपर संघर्ष हो सकता है। अतएव हमें यह मान लेना चाहिए कि जनमत संग्रह होकर रहेगा।"

जनमत संग्रहके दौरान शान्तिपूर्ण परिस्थितियाँ कायम रखनेके लिए नेहरूने कहा कि इसे बाहरसे बुलाये गये अंग्रेज सैनिक अधिकारियोंके तत्त्वावधानमें कराया जाना चाहिए। "प्रांतीय सरकार इस जनमत संग्रहकी व्यवस्थाके साथ घनिष्ठ रूपसे सम्बद्ध रहेगी।" सामान्यतः मैं ऐसा नहीं सोचता हूँ कि 'किसी बड़े हिंसात्मक संघर्ष' की सम्भावना है। मैं यह भी निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता कि इस जनमत संग्रहका क्या परिणाम होगा किन्तु सीमाप्रान्तसे लौटनेके बाद वाइसरायने मुझसे कहा था कि गवर्नरसे लेकर नीचेके सभी अंग्रेज अधिकारियोंने, जो कांग्रेसके विरोधी हैं, अपनी यह राय जाहिर की है कि कांग्रेस और लीग दोनोंको करीब-करीब बराबर-बराबर मत मिलनेकी सम्भावना है। ऐसी सूरतमें हो सकता है कि कांग्रेस ही विजयी हो जाय किन्तु मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इस सम्बन्धमें कुछ निश्चित रूपसे नहीं कहा जा सकता।

"सीमाप्रान्तके लोगोंसे पूर्ण प्रभुतासम्पन्न स्वतन्त्रताके लिए मतदान करनेकी अनुमति देनेके सम्बन्धमें यदि कोई प्रस्ताव रखा जाय तो इससे कुछ कठिनाइयाँ पैदा हो जाती हैं।" वाइसरायने कहा कि इससे मैं तभी सहमत हो सकता हूँ जब दोनों पार्टियाँ सहमत हो जायँ। जब वोटरके सामने तीन तरहके सवाल रख दिये जायँगे तो इससे वह कुछ उलझनमें पड़ जायगा। इससे मत भी विभाजित हो सकते हैं।

जहाँतक इस सुझावका सम्बन्ध है कि सीमाप्रान्तीय कांग्रेस जनमत संग्रह का बहिष्कार कर दे नेहरूजीने यह तर्क उपस्थित किया कि "इसका सीधा अर्थ होगा उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तमें मुस्लिम लीगका प्रभुत्व स्वीकार कर लेना अर्थात् व्यवहारतः मुस्लिम लीग आन्दोलनके सामने आत्म-समर्पण कर देना।" उन्होंने आगे कहा: "यह कहना तो कठिन है कि इससे शान्तिपूर्ण परिस्थितियों का निर्माण हो सकेगा या नहीं किन्तु मैं ऐसा समझता हूँ कि इस तरहके बहिष्कार

या आत्मसमर्पणसे संघर्ष और रक्तपातकी सम्भावना अधिक बढ़ जायगी क्योंकि मुस्लिम लीग इस आत्मसमर्पणको लीगकी एक भारी विजय मानकर जश्न मनायेगी। तब उसके इस दावेका औचित्य प्रमाणित हो जायगा कि वर्तमान मन्त्रिमण्डल प्रान्तकी अधिकांश जनताका प्रतिनिधित्व नहीं करता। यदि जनमतसंग्रह अथवा उसके बहिष्कार द्वारा प्रान्तीय मन्त्रिमण्डलके विरुद्ध फैसला सामने आ जाता है तो उसका क़ायम रह पाना कठिन प्रतीत हो रहा है। सम्भवतः प्रांतीय विधानमण्डलके लिए तुरन्त ही चुनाव करानेका प्रश्न उठ खड़ा होगा। जनमत संग्रहकी उपेक्षा करके हम संकट और कठिनाईकी उपेक्षा नहीं कर सकते और इससे प्रान्तीय मन्त्रिमण्डल भी क़ायम नहीं रह सकता। चुनाव तो अपने सभी सम्भाव्य अशुभ परिणामोंके साथ ही सम्पन्न होता है। इसे छोड़कर दूसरा एकमात्र विकल्प यही रह जाता है कि शान्तिपूर्ण ढंगसे पाकिस्तानकी कल्पनाके सामने आत्मसमर्पण कर दिया जाय किन्तु मुझे इसमें बड़ा सन्देह है कि अधिकांश पठानों को यह कबूल हो सकता है।''

नेहरूने यह बात जोर देकर कही : ''सीमाप्रान्तका भविष्य लम्बे अरसे के लिए निश्चित होने जा रहा है। ऐसी हालतमें जनमत संग्रहसे अलग रहनेका निश्चय बहुत ही ग़लत होगा। उसपर भी इस निर्णयको लोकतान्त्रिक ढंगसे न कर लेना तो और भी ग़लत है।'' नेहरूकी टिप्पणीमें आगे कहा गया : ''मुझे तो हिंसाको दूर करने और उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तमें स्वयं अपने भविष्यके सम्बन्धमें यह कार्य-पद्धति बहुत ही खतरनाक दिखाई देती है। लोकतान्त्रिक ढंग से लड़ाई लड़ने और उसमें हार जानेसे हम बहुत समयके लिए कमजोर नहीं होंगे और हम आगे चलकर अपना संघर्ष दूसरे तरीक़ोंसे चला सकते हैं। लेकिन परिणामोंके डरसे संघर्ष ही छोड़ देना हमारी दृढ़ताके अभावका द्योतक होगा और इससे उस संघटनका अन्त हो जायगा जो इस मसलेका सामना करनेमें असमर्थ होगा। इन सारी परिस्थितियोंपर विचार करते हुए मुझे यही प्रतीत होता है कि अब जनमत संग्रहको स्वीकार कर लेना और अपनी पूरी ताक़तसे उसके लिए तैयारी करना ही हमारे लिए एकमात्र सही रास्ता रह जाता है। हमें इसमें विजय प्राप्त करनेकी पूरी सम्भावना है। हमें इस नारेके साथ जनमत संग्रहमें शामिल होना चाहिए कि हम सीमाप्रान्तमें व्यापकतम स्वाधीनता और स्वतन्त्रता चाहते हैं। यद्यपि यह पूर्ण प्रभुतासम्पन्न स्वतन्त्रताका सीधा सवाल नहीं है फिर भी यह उसीका एक बदला हुआ रूप है जिससे हमें आगे चलकर बड़ी सहायता मिलेगी। व्यावहारिक बात तो यह है कि पश्चिमी पंजाबमें पाकिस्तान बन जाने

के बाद और भारतका सीमाप्रान्तसे पूर्णतः सम्बन्ध-विच्छेद हो जानेके बाद उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तमें इस सम्बन्ध विच्छेद तथा अन्य कारणोंसे उसे पर्याप्त मात्रामें स्वायत्तता और स्वतन्त्रता मिल जायगी।"

इस तरह नेहरूके अनुसार कांग्रेसके सामने जनमत संग्रहको स्वीकार कर उसमें शामिल होनेके बावजूद और कोई रास्ता नहीं था। "यदि इस रास्तेको स्वीकार करनेमें रक्तपातका खतरा है तो अन्य रास्तोंके अख्तियार करनेपर यह खतरा और बढ़ जाता है। जिस रास्तेका मैं सुझाव दे रहा हूँ वह लड़ाईको बहादुरी और स्पष्ट रूपमें शान्तिपूर्वक स्वीकार करनेका रास्ता है। जिस समय अन्तिम निर्णय किये जा रहे हों उस समय संघर्षसे दूर रहनेका नतीजा हमारी जनताके लिए गम्भीर मनोवैज्ञानिक क्षतिके रूपमें हमारे सामने आयेगा।"

कांग्रेसी नेताओंके निर्णयको प्रभावित करनेमें उस समय उपस्थित कठिन स्थितिकी वाध्यता और उस स्थितिमें लार्ड माउण्टबैटन द्वारा अदा की गयी भूमिका नजर आती है। नेहरूकी टिप्पणीमें आगे कहा गया था : "कुछ हदतक लार्ड माउण्टबैटन स्वभावतः अतीत और वर्तमानकी व्यवस्थासे आवद्ध थे किन्तु वे सही दिशामें आगे बढ़नेके लिए यथासम्भव पूरा प्रयत्न कर रहे हैं। वे सीमाप्रान्तकी समस्याकी कठिनाइयाँ अच्छी तरह समझते हैं और अपनी शक्तिके अनुरूप उनके समाधानके लिए सब कुछ करना चाहते हैं। उनका दृढ़ विश्वास है कि भारतके कुछ भागोंके उससे अलग हो जानेके कारणउत्पन्न परिस्थितियोंमें सीमाप्रान्तकी जनताको जनमत संग्रह द्वारा फैसला करनेका एक मौक़ा अवश्य मिलना चाहिए। वे स्वयं इससे वचनबद्ध हैं और अपनी प्रतिष्ठा और निष्पक्षताको क्षति पहुँचाये विना वे इससे मुकर नहीं सकते। वैसी हालतमें वे इस्तीफा दे देना ही पसंद करेंगे।"

गांधीने ९ जूनको बड़े दुःखके साथ नेहरूको लिखा : "यदि मैं आपके सिद्धांतों को स्वीकार करता होता तो मैंने सम्पूर्ण रूपसे आपके साथ सहमति प्रकट की होती। मैं एक दूतके मार्फत आपका सन्देश बादशाह खाँके पास भेज रहा हूँ। मैं अपने और कार्यसमितिके अन्य सदस्योंके बीच उपस्थित दृष्टिकोण और विचारोंकी विभिन्नतापर जितना ही विचार करता हूँ उतना ही यह अनुभव करता हूँ कि मेरी उपस्थिति अनावश्यक है .... क्या मैं दो या तीन दिनोंमें बिहार वापस नहीं जा सकता ?" समस्याके मूलकी ओर संकेत करते हुए उन्होंने नेहरूसे पूछा : "क्या आपके लिए पाकिस्तानकी तस्वीरको जनताके सामने रखे बिना जनमत-संग्रह कराये जानेपर जोर देना ग़लत न होगा ?"

गांधीने लार्ड माउण्टबैटनको यह लम्बा पत्र लिखा :

"यद्यपि आपने कृपापूर्वक मुझे लिखा है कि मैं जब चाहूँ आपसे मिल सकता हूँ किन्तु मैं आपकी इस कृपाका लाभ उठानेमें असमर्थ हूँ। मैं कुछ ऐसी बातोंको लिखित रूपमें आपके सामने रख देना चाहता हूँ जिन्हें मैं योजनाके समुचित और त्वरित कार्यान्वयनके लिए आवश्यक समझता हूँ :

"१. जहाँतक सीमाप्रान्तमें जनमत-संग्रहका प्रश्न है मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मेरे विचार पण्डित नेहरू और उनके साथियोंसे मेल नहीं खाते। जैसा कि मैंने आपसे बताया था कि चूंकि मेरा प्रस्ताव उन्हें स्वीकार्य नहीं है अतः इसके साथ आगे बढ़नेका मेरा उत्साह नहीं रह गया है।

"२. फिर भी इसका मेरे इस दूसरे प्रस्तावपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता कि जनमत-संग्रह करानेके पहले आपको कायदे आजम जिनासे कहना चाहिए कि वे सीमाप्रान्त जायें और वहाँ बादशाह खाँ और उनके खुदाई खिदमतगारोंको, जिन्होंने प्रान्तको जैसा भी वह अच्छा या बुरा बन पाया है उसके बनानेमें हाथ बँटाया है, अपने पक्षमें करनेके लिए राजी करे। यह ठीक है कि वहाँ जानेके पहले उन्हें इस बातका आश्वासन मिलना चाहिए कि वहाँ लोग उनकी बातोंको हृदयसे ध्यानपूर्वक सुनेंगे।

"३. चाहे उन्हें यह विचार पसन्द हो या नहीं कायदे आजमसे यह कहा जाना चाहिए कि सीधे और सरल पठानोंसे यह कहनेके पहले कि वे हिन्दुस्तान और पाकिस्तानके बीच अपना चुनाव कर लें, वे अपनी पाकिस्तानकी योजनाका सही तस्वीर उनके सामने रखें। यदि श्री जिना इसके लिए तैयार नहीं होते तो इस समय वहाँ जो कांग्रेस और संविधान सभा कार्य कर रही है उसे ही भविष्यकी पूरी तस्वीर वहाँकी जनताके सामने रखनेके लिए कहा जाना चाहिए। मेरी यह आशंका है कि हिन्दुस्तान और पाकिस्तानके सम्बन्धमें बिना यह जाने हुए कि वे वस्तुतः क्या हैं उनके बीच चुनाव करनेकी बात कहना अनुचित है। वहाँके निर्वाचकोंको कमसे कम इसकी जानकारी होनी चाहिए कि उसका स्वरूप कहाँ पूरी तरहसे रक्षित रहेगा।

"४. अभी सीमाप्रान्तमें कोई शान्ति नहीं है। जबतक वहाँ उपद्रव और कलहकी स्थिति नहीं समाप्त हो जाती क्या सच्चा जनमतसंग्रह हो सकता है? इस समय लोगोंके दिल-दिमाग़ इतने उत्तेजित हैं कि वे समग्र दृष्टिसे किसी बात-पर विचार नहीं कर सकते। अपने अनुयायियों द्वारा किये गये उपद्रवोंके लिए कांग्रेस या लीग कोई भी जिम्मेदारीसे मुक्त नहीं हो सकती। यदि इस प्रदेशमें

शान्ति स्थापित नहीं हो जाती तो सारी इमारत धराशायी हो जायगी और विभाजनके बावजूद आप एक ऐसी विरासत छोड़ जायँगे जिसपर आप गर्व न कर सकेंगे ।"

गांधीने सरहदी सूबेके सम्बन्धमें नेहरू द्वारा की गयी टिप्पणी अपने इस मन्तव्यके साथ खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके पास भेज दी : "यह मेरे और उनके बीच उपस्थित मतभेदका परिणाम है । इन परिस्थितियोंमें मैं अब आपका मार्ग-दर्शन नहीं कर सकता । अब आप जैसा सर्वोत्तम समझें करें ।"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने इसी पत्रके साथ ही लिखे पेशावरसे ८ जूनको गांधीको यह पत्र लिखा था : "मैंने अपने सभी प्रमुख कार्यकर्त्ताओंसे परामर्श किया है । हम सबका यह सुविचारित मत है कि हम तीसरी जूनकी योजनाके अनुच्छेद ४ में उल्लिखित समस्याओंपर जनमत-संग्रह करनेपर सहमत नहीं हो सकते । इसके अतिरिक्त इस प्रांतमें जैसी परिस्थितियाँ हैं उनके कारण जनमत-संग्रह करानेसे गंभीर हिंसात्मक घटनाएँ होंगी । हम लोग पाकिस्तानके भी विरुद्ध हैं और हम हिन्दुस्तानके अन्तर्गत एक स्वतन्त्र पठान राज्यकी स्थापना करना चाहते हैं ।"

नेहरूकी टिप्पणी मिलनेपर उन्होंने गांधीको फिर ११ जूनको लिखा : "आज शामको प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी, कांग्रेस संसदीय दल और खुदाई खिदमत-गारोंके सालारोंकी एक संयुक्त बैठक ४ घंटेतक हुई । प्रांतके सभी हिस्सोंके प्रति-निधि इस मीटिंगमें शामिल थे । सबकी सम्मिलित राय यह है कि हमें जनमत-संग्रहमें भाग नहीं लेना चाहिए । सबकी यही इच्छा है कि इस मसलेको पाकि-स्तान या स्वतन्त्र पठान राज्यके आधारपर बदल दिया जाय ।"

१२ जूनको लार्ड माउण्टबैटनने गांधीजीको लिखा :

"मैंने आपके द्वारा सुझाये आधारपर श्री जिनासे वार्ता की । उन्होंने मुझे आपको निम्नलिखित उत्तर भेजनेका अधिकार दिया है :

"श्री जिना आपके इस सुझावको सहर्ष स्वीकार कर लेंगे कि वे सीमाप्रांत जाकर पाकिस्तानका प्रश्न वहाँके नेताओं और जनताके समक्ष प्रस्तुत करें बशर्ते आप कांग्रेससे यह आश्वासन प्राप्त कर लें कि कांग्रेसी इसमें किसी प्रकारका हस्तक्षेप न करेंगे ।

"उन्हें यह भी स्वीकार है कि इस तरीक़ेसे जनमत-संग्रहका विचार त्यागा जा सकता है और उसके फलस्वरूप होनेवाले रक्तपातका खतरा रोका जा सकता है ।"

गांधीने माउण्टबैटनको लिखा : "मैंने कायदे आजम जिनाको एक पत्र भेजा है ... कायदे आजमने मेरा सुझाव स्वीकार करनेके पूर्व जो शर्त रखी है उसके अभिप्राय बड़े खतरनाक हैं ... अतएव यदि जिनाको यात्रा करनी ही है तो इसका उद्देश्य मन्त्रियों, बादशाह खाँ और उनके खुदाई खिदमतगारोंको समझा-बुझाकर पाकिस्तानके सम्बन्धमें उनका मत-परिवर्तन करना होना चाहिए। किसी भी हालतमें इसे प्रचार-यात्राका रूप नहीं लेना चाहिए।"

गांधीने जिनाको जो चिट्ठी लिखी उसमें कहा गया था कि "हिज एक्सेलेंसी वाइसराय महोदयने मुझे लिखा है कि आप सीमाप्रांत जाकर पाकिस्तान संबंधी अपने विचार वहाँके नेताओं और जनताके सामने रखेंगे। किन्तु इसके लिए आपने यह शर्त लगा दी है कि मैं पहले कांग्रेससे यह आश्वासन प्राप्त कर लूँ कि वह कोई हस्तक्षेप न करेगी। मैं यह समझ नहीं पा रहा हूँ कि कांग्रेससे यह आश्वासन कि वह हस्तक्षेप नहीं करेगी, प्राप्त करनेका क्या अर्थ है ?"

जिनाने इसका बहुत ही संक्षिप्त उत्तर यों भेजा :

"मैं सोचता था कि आपके लिए मेरा यह अभिप्राय सुस्पष्ट होगा कि कांग्रेस-को यह वचन देना होगा कि वह सीमाप्रांतकी जनतामें किसी भी प्रकारकी दस्तन्दाजी न करेगी।"

गांधीने १४ जूनको जिनाको लिखा : "मैं सोचता था कि हिज एक्सेलेंसीने आपका अभिप्राय साफ़ तौरपर नहीं समझा है किन्तु अब मैं समझ रहा हूँ कि ऐसा सोचना मेरी ग़लती थी। मैं कांग्रेसको हाराकीरी (आत्महत्या) करनेके लिए नहीं कह सकता।"

एक संवाददाताने गांधीको लिखा कि आपने एक समय घोषणा की थी कि यदि भारतका अंग-भंग हुआ तो मैं इसे अपने शरीरका विच्छेद मानूँगा। क्या अब आप दुर्बल हो गये हैं ? संवाददाताने गांधीको प्रस्तावित विभाजनके विरुद्ध आन्दोलनका नेतृत्व करनेके लिए भी आमन्त्रित किया था। गांधीने उसे लिखा कि मैं आपके इस व्यंग्यके लिए अपनेको दोषी नहीं मान सकता। जिस समय मैंने यह वक्तव्य दिया था मैं जनमतकी आवाज़ ही बुलन्द कर रहा था। किन्तु जब जनमत ही मेरे विरुद्ध हो गया तो क्या मैं उसके साथ ज़बर्दस्ती कर सकता हूँ ? उक्त संवाददाताने आगे चलकर यह भी लिखा था कि आप अक्सर यह कहा करते थे कि असत्य और बुराईसे समझौता नहीं हो सकता। आपका यह कथन सत्य ही था। किन्तु इसके साथ ही साथ इसका प्रयोग भी निश्चित रूपसे सही होना चाहिए। इसके जवाबमें बड़ी ही बहादुरीसे गांधीने कहा था कि यदि गैर-

मुस्लिम जनता ही मेरे साथ हो तो मैं वह रास्ता दिखा सकता हूँ जिसपर चलकर प्रस्तावित विभाजन-योजनाको व्यर्थ किया जा सकता है। फिर भी मैं यह स्वीकार करता हूँ कि अब मैं पिछड़ गया हूँ या कमसे कम लोग मुझे ऐसा समझने लगे हैं। हमने पिछले तीस सालोंसे जो सबक सीखा था हम उसे भूल गये हैं। हम यह भूल गये हैं कि असत्यपर सत्यसे, हिंसापर अहिंसासे, अधैर्यपर धैर्यसे और उत्तेजनापर शान्तिसे ही विजय पायी जा सकती है। हम स्वयं अपनी छायाओंसे डरने लगे हैं। कुछ लोगोंने हमें विरोधका नेतृत्व करनेको आमन्त्रित किया है। किन्तु केवल विरोध करनेकी भावनाको छोड़कर मुझे इसके लिए आमन्त्रित करनेवालोंमें और मुझमें दूसरी और कोई समानता नहीं है। मैं जिस आधारपर विरोध करना चाहता हूँ वह मुझे आमन्त्रित करनेवालोंके आधारसे सर्वथा भिन्न है। क्या घृणा और प्रेममें कोई मेल बैठ सकता है?

जूनके मध्यमें अखिल भारतीय कांग्रेस कार्यसमितिकी बैठक दिल्लीमें हुई। कार्यसमितिके प्रस्तावके विरोधमें बड़ी उग्र भावनाएँ व्यक्त की गयी थीं। अतः गांधीके लिए इस विवादमें हस्तक्षेप करना आवश्यक हो गया। प्रतिनिधियोंके समक्ष चालीस मिनटतक भाषण करते हुए गांधीजीने तीसरी जूनकी योजनाको स्वीकार करनेवाले प्रस्तावका जोरदार समर्थन किया। जो लोग देशमें तत्काल क्रान्ति या उथल-पुथल कर देनेकी बातें कर रहे हैं वे इस प्रस्तावको ठुकराकर अपना लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं किन्तु प्रश्न यह है कि क्या उनमें कांग्रेस और सरकारका सूत्र संभाल लेनेकी ताकत है? उन्होंने कहा, "जो भी हो, मुझमें तो यह ताक़त नहीं है, अन्यथा मैं आज विद्रोहकी घोषणा कर देता।"

उन्होंने कहा कि योजनाके संबंधमें मेरे जो विचार हैं उन्हें सभी लोग जानते हैं। योजनाको स्वीकार करनेकी जिम्मेदारी केवल कार्यसमितिपर नहीं है, और भी दो पार्टियाँ हैं—ब्रिटिश सरकार और मुस्लिम लीग। यदि इस समय अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने कार्यसमितिके फ़ैसलेको ठुकरा दिया तो दुनिया उसके बारेमें क्या सोचेगी? सभी पार्टियोंने उसे स्वीकार कर लिया है और निश्चय ही कांग्रेसके लिए अपने दिये गये वचनसे मुकर जाना ठीक न होगा। यदि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी इसके विरुद्ध बड़ी ही तीव्र भावना है और वह यह समझती है कि इससे देशका बहुत नुकसान होगा तो वह इस योजनाको ठुकरा सकती है। इसका परिणाम यह होगा कि उसे बिलकुल ऐसे नये नेताओंकी श्रेणी ख़ोज निकालनी होगी जो न केवल कार्यसमितिका निर्माण करेंगे बल्कि सरकारका सूत्र भी सँभालेंगे। यदि प्रस्तावका विरोध करनेवाले लोग ऐसे नये नेताओंका

पता लगा सकते हों तभी अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी यदि चाहे तो इसे अस्वीकार कर सकती है। इसके साथ ही आप लोगोंको यह भी न भूलना चाहिए कि इस समय देशमें शान्ति-स्थापना सबसे महत्त्वपूर्ण है।

कांग्रेस निश्चित रूपसे पाकिस्तानके विरुद्ध थी और स्वयं मैंने भारतके विभाजनका डटकर विरोध किया था फिर भी आज मैं अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके समक्ष उसपर यह दवाव डालनेके लिए उपस्थित हुआ हूँ कि भारतके बँटवारेका प्रस्ताव स्वीकार कर ले। कभी-कभी ऐसे निर्णय करने पड़ जाते हैं जो पूर्णतः अस्वीकार्य होते हैं। कार्यसमितिके सदस्य देशके तपे-तपाये परीक्षित नेता हैं। कांग्रेसकी आजतककी सारी उपलब्धियोंके लिए वे जिम्मेदार हैं। स्वयं कांग्रेसकी वे रीढ़ हैं। अतएव वर्तमान समयमें उन्हें हटाकर उनकी जगह-पर दूसरोंको बैठा देना भले ही असंभव न हो पर यह बुद्धिमानी न होगी। कांग्रेसजनोंको स्वयं अपने कर्त्तव्यका ज्ञान करना चाहिए और उसे शांतिपूर्वक सम्पन्न करना चाहिए। कभी-कभी ग़लतियोंसे भी शुभ हो जाता है। रामको उनके पिताकी ग़लतीसे वनवास मिला था किन्तु इसका शुभ परिणाम यह हुआ है कि रावण, जो अशुभ था, पराजित हुआ। गांधीने कहा : "मैं यह मानता हूँ कि जो कुछ स्वीकार किया जा रहा है वह अच्छा नहीं है किन्तु इसमेंसे अच्छाई निश्चित रूपसे प्रकट होगी।" मुझे आशा है कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी इस दोषपूर्ण योजनामेंसे भी उसी प्रकार अच्छाई निकाल लेगी जैसे गंदी वस्तुओंसे सोना निकाल लिया जाता है। इस योजनासे उन्हें जिना साहबके इस सिद्धान्तको असत्य सिद्ध करनेका एक अवसर मिलता है कि मुसलमान एक पृथक् राष्ट्र हैं और वे हिन्दुओंसे अलग हैं। अब हिन्दुस्तानमें छोटे-छाटे अल्पसंख्यकोंको भी अपनेको सुरक्षित और खुशहाल अनुभव करना चाहिए। मैं यह जोर देकर कहना चाहता हूँ कि इस अपूर्ण योजनाको भी स्वीकार करके इससे अच्छाई निकाल सकते हैं और भारतको एक ऐसा राष्ट्र बना सकते हैं जहाँ किसी प्रकारका भेदभाव और असमानताएँ नहीं हैं।

बहस समाप्त होनेपर प्रस्ताव १५ के विरुद्ध १५७ मतोंसे स्वीकृत हो गया। कुछ लोगोंने मतदानमें भाग नहीं लिया।

१६ जूनको प्रार्थना-सभामें भाषण करते हुए गांधीजीने कहा :

"आज मुझे बताया गया है कि इस समय देशमें प्रेमका नियम निष्क्रिय हो गया है। मैं आपसे पूछता हूँ कि आप प्रतिदिन किस प्रेरणासे इन प्रार्थना-सभाओंमें आते हैं? इसके लिए कोई बाध्यता तो है नहीं, फिर भी आप प्रेमसे आकर्षित

होकर आते हैं और मैं जो भी कहता हूँ उसे धैर्यपूर्वक सुनते हैं। यदि सभी हिंदू मेरे विचारोंको सुनने और मानने लगें तो हम एक ऐसा उदाहरण पेश कर सकते हैं जिसका अनुसरण करनेके लिए संसार बाध्य हो जायगा।

"आप कहेंगे कि मैं यही बात मुसलमानोंसे क्यों नहीं कहता ? मेरा उत्तर यह है कि इस समय वे मुझे अपना शत्रु समझते हैं। हिन्दू हमें अपना शत्रु नहीं समझते। इसीलिए मैं उनसे कहता हूँ कि वे अपने हथियारोंको समुद्रमें फेंक दें और वीरोंकी अहिंसाकी वह शक्ति प्राप्त करें जिसका कोई मुकाबला नहीं कर सकता।

"क्या मुझमें वह वीरोंकी अहिंसा है ? केवल मेरी मृत्यु ही इसे प्रमाणित कर सकती है। यदि कोई मुझे मार दे और मैं हत्यारेके लिए प्रार्थना, और भगवान्का स्मरण करता हुआ अपने हृदयमें उसकी प्राणमय अवस्थितिकी अनुभूतिके साथ मर सकूँ तभी यह कहा जा सकेगा कि मुझमें वीरोंकी अहिंसा थी। यदि हिन्दू या केवल सिख लोग भी अपनेमें वह सामर्थ्य पैदा कर लें तो वे भारतकी समस्या हल कर लेंगे।

"लेकिन आज तो बादशाह खाँ जैसे वीर और बहादुर पठानमें भी यह सामर्थ्य पूरी तरहसे नहीं रह गया है। उन्हें इसकी आशंका है कि यदि किसीने उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तको भारत संघमें शामिल होनेके लिए कहा तो वहाँ इतना बड़ा पारस्परिक संघर्ष छिड़ जायगा जितना वहाँ कभी नहीं हुआ था। ऐसी हालतमें वे क्या कर सकते हैं ? वीरोंकी अहिंसा कोई ऐसी वस्तु नहीं है जिसे हुक्म देकर तैयार कर लिया जाय।"

१८ जूनको गांधीजी खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके साथ वाइसराय भवनमें जिनासे मिले। बादमें वे जिनासे उनके वासस्थानपर भी मिले। अब चूँकि कांग्रेसने भारतका विभाजन स्वीकार कर लिया था इसलिए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने जिनासे कहा कि पठान पाकिस्तानमें शामिल होनेके लिए पूरी तरह तैयार हैं बशर्ते (१) यह सम्मानपूर्ण आधारपर हो; (२) स्वतन्त्रताके बाद यदि पाकिस्तान ब्रिटिश डोमिनियनमें रहनेका निर्णय करे तो निश्चित जिलों अथवा कबायली क्षेत्रोंके पठानोंको ऐसे किसी डोमिनियनसे अलग होकर अपना स्वतन्त्र राज्य बनानेकी स्वतन्त्रता हो और (३) कबायली जनतासे सम्बद्ध सभी मामलोंको निपटानेका अधिकार स्वयं पठानोंको हो और उसमें गैरपठान लोग दस्तंदाजी न करें और न उनपर अपना प्रभुत्व जमायें—यह उनका एक ऐसा अधिकार है जिसे वर्तमान संविधान सभा भी स्वीकार करती है। वार्ता मैत्रीपूर्ण वातावरणमें

एक घंटेसे भी अधिक समयतक चलती रही यद्यपि समझौतेका प्रयास विफल हो गया। जिना अब्दुल ग़फ़्फ़ारको बाहर प्रतीक्षा करती हुई मोटरतक पहुँचाने और उन्हें विदा करने उनके साथ बाहरतक आये।

१८ जूनको एक प्रार्थना-सभामें भाषण करते हुए गांधीजीने कहा कि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ इस बातके लिए पूरी कोशिश कर रहे हैं कि किसी तरह सीमाप्रान्तमें रक्तपात न हो। उन्होंने सभामें एकत्र लोगोंसे बादशाह खाँके उद्देश्यकी सफलताके लिए प्रार्थना करनेको कहा। पठानिस्तानके रूपमें एक स्वतंत्र सीमाप्रान्तकी स्थापनाके लिए किये जानेवाले आन्दोलनकी चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि यह आन्दोलन अब स्थायी होगा क्योंकि यह एक सुदृढ़ आन्दोलन है। यदि यह भारतविरोधी आन्दोलन होता है तो यह एक बुरी बात होगी। यदि इसका उद्देश्य, जैसा कि मैं समझता हूँ, पठानोंके जीवन और संस्कृतिको सुरक्षित और विकसित करना है तो इसे हर तरहका प्रोत्साहन मिलना चाहिए। भौगोलिक दृष्टिसे भी यह भारतका एक टुकड़ा मात्र है और भारतके करोड़ों देशवासियोंके मुकाबले पठानोंकी संख्या भी अत्यल्प है। किन्तु युद्धोचित शौर्यपूर्ण गुणों और भारतके नक्शेपर उनकी विशिष्ट स्थितिके कारण उनका अपना निजी महत्त्व हो जाता है। सीमाप्रान्त एक कांग्रेसी प्रान्त है। जिस समय कांग्रेसकी स्थिति डावाँडोल थी उस समय भी यह एक कांग्रेसी प्रान्त था और आज भी वह एक कांग्रेसी प्रान्त है जब वह सत्तारूढ़ है। संविधान सभामें भी इसे प्रतिनिधित्व प्राप्त है किन्तु इस समय इसके सामने एक नाजुक स्थिति पैदा हो गयी है। वहाँ शीघ्र ही जनमतसंग्रह होनेवाला है। कांग्रेस और लीग दोनों इसके लिए वचनबद्ध हैं। किसीको यह शर्त बदलनेकी आज़ादी नहीं है। सवाल पाकिस्तान और हिन्दुस्तानके बीच चुनाव करनेका है। उनके सामने जो कुछ हुआ है उसके सन्दर्भमें इसके पीछे एक बड़ा ही शरारतभरा अभिप्राय है। पूछा यह जायगा कि वे हिन्दुओंके साथ रहेंगे या मुसलमानोंके साथ? कांग्रेस हिन्दू संघटन नहीं है। वह कभी भी हिन्दू संघटन नहीं रही है और मैं आशा करता हूँ कि भविष्यमें भी वह हिन्दू संघटन नहीं बनेगी। किन्तु पठानोंका दिमाग़ उस उलझनमें, जो दिनपर दिन और जटिल होती जा रही है, इस फ़रकको कैसे समझ पायेगा? मैं कांग्रेसको सलाह दूंगा कि वह अपनी स्थिति साफ़ कर दे। इसी तरह मैं मुस्लिम लीगको भी अपनी स्थिति साफ़ करनेको कहूँगा। दोनोंको पठानोंकी भावनाका सम्मान करना चाहिए और उन्हें अपने आन्तरिक प्रशासन और मामलोंके सम्बन्धमें अपना संविधान बनानेकी स्वतन्त्रता देनी चाहिए। इससे पठानोंकी एकता मजबूत होगी, आन्तरिक संघर्ष

दूर हो सकेगा और पख्तून संस्कृति एवं पश्तो भाषाका विकास होगा। यदि वे यह कर सके तो वे पाकिस्तान या भारत संघ किसीसे भी संघबद्ध हो जानेके लिए संयुक्त रूपसे कहीं अधिक समर्थ हो जायँगे। चाहे जनमतसंग्रह हो या न हो मैं यह सलाह हर हालतमें दूंगा। समयसे पहले जनमतसंग्रह करना अंधेरेमें कूदना होगा।

गांधीको, जिन्होंने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँसे अपनी उक्त प्रार्थनाके साथ जिनासे मिलनेका अनुरोध किया था, जिनासे मुलाकातके बाद उसकी असफलताके कारण बड़ी बेचैनीका अनुभव हुआ। वे उस रातके साढ़े बारह बजेतक जागते रह गये। वे रोज प्रातःकाल ३ बजे उठ जाया करते थे किन्तु उस दिन उनकी नींद पहले ही टूट गयी और वे सोचने लगे : "यद्यपि मैंने १२५ वर्षोंतक जीनेकी इच्छा छोड़ दी है फिर भी मैं बादशाह खाँके बारेमें सोचे बिना नहीं रह सकता। बादशाह खाँ एक अद्भुत व्यक्ति हैं। मुझे दिनपर दिन उनकी गंभीर आध्यात्मिक प्रकृतिका ज्ञान होता आ रहा है। उनमें धैर्य, निष्ठा और अहिंसाका विनयके साथ सम्मिलन हुआ है। असंख्य पठानोंने उन्हें अपना बिना ताजका बादशाह माना है। ऐसे व्यक्तिके लिए पराजय जैसी कोई चीज़ नहीं हो सकती। मुझे पूर्ण विश्वास है कि उनके लिए बड़ासे बड़ा बलिदान भी साधारण बात होगी। वे अन्तिम श्वासतक पठानोंकी सेवा करते हुए प्राणत्याग करेंगे। वे इसीलिए जीवित हैं। वे व्रतधारी पुरुष हैं। उनमें विवेकका प्रकाश है। उनके हृदयमें मानवमात्रके प्रति प्रेम भरा हुआ है। वे किसीसे घृणा नहीं करते।"

इसके बाद गांधी लेट गये और उन्होंने सोनेकी कोशिश की किन्तु थोड़ी ही देर बाद उनकी आँखें फिर खुल गयीं और वे कहने लगे : "नहीं, मैं सो नहीं सकता। उनके विचारने मेरी नींद हर ली है।"

तिरुवांकुरके दीवान सर सी० पी० रामस्वामी ऐयरने गांधी और कांग्रेसकी इसके लिए निंदा की थी कि उन्होंने सीमाप्रान्तके लिए स्वतन्त्र पठानिस्तान की मांग स्वीकार कर ली है। उनका कहना था कि ऐसी हालतमें वे स्वतन्त्र तिरुवांकुरके प्रति कैसे आपत्ति कर सकते हैं।

गांधीने कहा कि तिरुवांकुर और पठानिस्तानकी तुलना नहीं की जा सकती। पठान स्वतन्त्र नहीं होना चाहते। वे केवल यह चाहते हैं कि पाकिस्तान और भारत संघकी पूरी तस्वीर सामने आ जानेपर उसे देखकर वे स्वयं अपना संविधान तैयार कर सकें। वे अपना स्वतन्त्र तीसरा राज्य नहीं बनाना चाहते। वे केवल अन्य प्रान्तोंकी तरह स्वायत्तता चाहते हैं जिससे वे केन्द्रके साथ निष्ठाबद्ध रहते

हुए अपने आन्तरिक मामलोंमें हस्तक्षेप पसंद न करेंगे। यदि बादशाह खाँका इरादा इससे कुछ भिन्न है तो मुझे उनसे संबंध-विच्छेद कर लेनेमें कोई संकोच न होगा यद्यपि वे मेरे पुराने मित्र हैं। सर सी. पी. दोनों डोमिनियनोंसे अलग एक स्वतन्त्र राज्य बनाना चाहते हैं। यदि इसकी अनुमति दे दी गयी और दूसरों ने भी इसीका अनुसरण किया तो इसका यह परिणाम होगा कि भारत कई राज्योंमें विभक्त हो जायगा। इन छोटे-छोटे राज्योंको एक सम्राट्की ज़रूरत होगी। अतः जो सम्राट् इस समय विदा हो रहा है वह दूनी ताक़तसे फिर वापस आ सकता है। यह एक ऐसी विनाशकारी घटना होगी जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। तिरुवांकुर और सीमाप्रान्तमें इसलिए भी तुलना करना भ्रामक होगा कि सर सी० पी० महाराजाकी ओरसे बोल रहे हैं जब कि सीमाप्रान्तीय नेता अपनी जनता—जिरगा की ओरसे बोल रहे हैं। एक विशुद्ध निरंकुश तंत्र है तो दूसरा पूर्ण लोकतन्त्र।

जिनासे हुई वार्ताकी विफलताके बाद मुस्लिम लीगी अखबारों और खासकर 'डान'ने खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँपर बड़े गंदे प्रहार किये। १९ जूनको खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने जिनाको लिखा :

"मुझे 'डान'की रिपोर्ट पढ़कर बड़ा दुःख हुआ है। उसमें कुछ ऐसे वक्तव्य दिये गये हैं जो पूरी तरह झूठ हैं जैसे यह कहना कि कांग्रेसने मुझे तथा मेरे 'पिट्ठुओं' को आर्थिक सहायता देना अस्वीकार कर दिया है। आर्थिक सहायता माँगने या पानेका कोई सवाल ही नहीं उठा है। इसकी कहीं चर्चातक भी नहीं हुई है।

"मैं आपसे इसलिए मिला था कि शायद सभी सम्बद्ध लोगोंके लिए कोई शान्ति एवं सम्मानपूर्ण रास्ता निकल आये। दुर्भाग्यवश हम लोगोंमें सहमति न हो सकी। किन्तु किसी भी हालतमें 'डान'की शब्दावली और स्वर ऐसे नहीं हैं जिनसे किसी तरहके दोस्ताना व्यवहार या समझौतेका रास्ता बनता हो।"

सीमाप्रान्तके अपने सभी सहकर्मियोंसे परामर्श कर खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने जिनाको निम्नलिखित प्रस्तावकी सूचना दी : "सरहदी सूबा कांग्रेस कमेटी, कांग्रेस संसदीय दल, खुदाई खिदमतगार और जल्मे पख्तूनके सदस्योंकी बन्नूमें २१ जून, १९४७ को सरहदी कमेटीके सदर खान अमीर मुहम्मद खाँकी सदारतमें हुई बैठक एक रायसे यह तय करती है कि सभी पख्तूनोंका एक आज़ाद पठान राज्य बनाया जाय। इस राज्यका संविधान लोकतन्त्र, समानता और सामाजिक न्यायकी इस्लामी धारणाके आधारपर तैयार किया जायगा। यह

बैठक सभी पठानोंको अपने इस चिर-अभिलषित लक्ष्यकी प्रगतिके लिए और गैर-पख्तून प्रभुत्वके सामने आत्मसमर्पण न करनेके लिए ऐक्यबद्ध होनेकी अपील करती है।"

२४ जूनको पेशावरसे दिये गये एक वक्तव्यमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने कहा :

"ब्रिटिश प्रभुत्वकी समाप्तिके फलस्वरूप भारतमें जो महान् परिवर्तन हो रहे हैं उनसे सारा भारत ही नहीं बल्कि सीमाप्रान्त भी प्रभावित होगा। मैंने इन परिवर्तनोंपर पर्याप्त विचार किया है और मैंने अपने सहकर्मियोंसे भी सलाह ली है।

"हम एक पीढ़ीसे भी अधिक समयसे सीमाप्रान्तकी आज़ादीके लिए संघर्ष कर रहे हैं। इस संघर्षमें हम पठानोंने बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ सही हैं किन्तु हमने कभी अपना संघर्ष नहीं छोड़ा। हमारा संघर्ष ब्रिटेनके शासन और प्रभुत्वके विरुद्ध था। इस संघर्षमें हमने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेससे दोस्ती की जो ब्रिटेनसे हमारी ही तरह लड़नेवाली महान् संस्था थी।

"स्वभावतः इन परिस्थितियोंमें हमारा कांग्रेसके साथ बहुत ही निकटका भाईचारा और साहचर्य पैदा हो गया। स्वातन्त्र्य संघर्षके दौरान जिस समय हम सीमाप्रान्तके लोग बड़े संकटमें फँसे हुए थे कांग्रेस ही हमारी सहायताके लिए आगे बढ़ी। हमने लीगसे मददके लिए बार-बार अनुरोध किया किन्तु हमें उससे निराशा ही मिली। वास्तविकता तो यह है कि सीमाप्रान्तकी वर्तमान मुस्लिम लीगके अनेक नेताओंने हमारे सगे-संबंधियों एवं भाइयोंके खिलाफ़ अंग्रेजोंकी मदद की।

"हम हमेशासे हिन्दुस्तान और खासकर पठानोंकी आज़ादीके लिए संघर्ष करते रहे हैं। हम मुकम्मल आज़ादी चाहते हैं। अब भी हमारा यही आदर्श बना हुआ है और हम इसके लिए काम करते रहेंगे।

"दुर्भाग्यवश हालकी घटनाओंने हमारे रास्तेमें बड़ी अड़चनें पैदा कर दी हैं। ३ जूनकी घोषणामें कहा गया है कि उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तमें जनमत-संग्रह कराया जायगा और उसमें वर्तमान विधानसभाके मतदाताओंके समक्ष सिर्फ यह विकल्प रखा जायगा कि वे चाहें तो भारतीय संघकी संविधान सभामें शामिल हो जायें या पाकिस्तानी संविधान सभामें। इससे हमारा विकल्प सीमित हो जाता है। हम इनमेंसे कोई विकल्प माननेको तैयार नहीं हैं। हम अपने इच्छानुसार स्वतन्त्र पठान राज्यके लिए वोट नहीं दे सकेंगे।

"सीमाप्रान्तमें पिछले कुछ महीनोंमें जो कुछ हुआ है हमें उसपर विचार करना होगा। लीगियोंने संघटित रूपसे आतंकवादी आन्दोलन चला रखा है जिसमें सैकड़ों निर्दोष पुरुष, स्त्री और बच्चोंकी हत्या की गयी है। लूटपाट और आगजनीसे करोड़ोंकी सम्पत्ति बर्बाद कर दी गयी है। इस तरह सारा वातावरण साम्प्रदायिक उन्माद और भावोत्तेजनासे भरा हुआ है।

"इस समय भी मुस्लिम लीगके प्रमुख सदस्य जनताको इसलिए डराने-धमकानेका भीषण आन्दोलन चला रहे हैं कि वह जनमत-संग्रहमें लीगके खिलाफ़ वोट न दे।

"साफ़ है कि वे न सिर्फ प्रान्तसे बाहर गये हज़ारों-लाखों शरणार्थियोंको ही जनमत-संग्रहमें वोट देनेसे रोक रहे हैं बल्कि दूसरोंको भी धमकी दे रहे हैं कि अगर वे वोट देने गये तो इसका खतरा भी उठानेको तैयार रहें। वे जनताको उन भीषण उपद्रवोंकी याद दिला रहे हैं जिन्होंने पिछले महीनोंमें प्रान्तका चेहरा ही बिगाड़ दिया है। मौजूदा मसलेको काफिरों और इस्लामके बीच चुनावके मसलेके रूपमें पेश कर वे सीधे-सादे पठानोंकी मजहबी भावनाओंको भी उभाड़ रहे हैं।

"इसलिए मौजूदा सवालोंपर, जो मुख्यतः साम्प्रदायिक ढंगके हैं, आजकी हालतमें जनमत-संग्रह कराना बहुत ही गहरे षड्यन्त्रका परिणाम है। कुछ उच्च पदस्थ अधिकारी और राजनीतिज्ञ लीगी आन्दोलनको शान्तिपूर्ण बता रहे हैं। हमने ऊपर अभी जो निष्कर्ष निकाला है उसकी इससे पुष्टि हो जाती है।

"यह आवश्यक है कि जनमत-संग्रहमें हमें स्वतन्त्र पठान राज्यके लिए वोट देनेका अवसर दिया जाय।

"वाइसरायने कहा है कि सम्बद्ध पार्टियोंकी सहमतिके बिना वे निर्धारित कार्य-पद्धतिमें किसी तरहका फेर-बदल करनेमें असमर्थ हैं। मैंने कांग्रेसके नेताओंसे परामर्श किया तो उन्होंने मुझे इस बातका आश्वासन दिया कि वे पूरी तरह चाहते हैं कि हमें इसका अवसर प्रदान किया जाय। मुस्लिम लीगकी ओरसे श्री जिनाने स्वतन्त्र पठान राज्यकी कल्पनाको पूरी तरह ठुकरा दिया और कहा कि मैं इस प्रश्नपर पठानोंको वोट प्रदान करनेका अवसर दिया जाना कभी मान नहीं सकता। इससे साफ़ जाहिर होता है कि लीग साम्प्रदायिक मसलोंका पूरा लाभ उठाना चाहती है।

"मैंने इस मामलेमें अपने और अपने सहकर्मियोंकी इच्छाके कारण सम्बद्ध विभिन्न पक्षोंसे समझौता करनेके उद्देश्यसे यथाशक्ति पूरा प्रयत्न किया। मुझे इसका खेद है कि श्री जिनाके सहमत न होनेके कारण समझौता संभव न हो

सका। शायद उन्होंने सोचा कि मैं उनसे अपनी दुर्बलताके कारण मिल रहा हूँ, मैं उनसे मुसलमानोंमें एकता कायम रखनेके लिए एक मुसलमानके रूपमें मिल रहा हूँ। किन्तु मैं उनसे अपनी दुर्बलता नहीं बल्कि अपने उद्देश्योंमें निहित शक्तिके कारण और सीमाप्रान्तमें शान्ति तथा स्वतन्त्रताकी रक्षाके लिए मिला था।

"मेरा दृढ़ मत है कि बहुसंख्यक पख्तून स्वतन्त्र पठान राज्यकी स्थापनाके पक्षमें हैं। इस संबंधमें जनताकी इच्छा जाननेके लिए मैं जनमत संग्रह या चुनाव करानेके लिए तैयार हूँ।

"इन परिस्थितियोंमें हमें क्या करना है? मेरा दृढ़ विश्वास है हम उपर्युक्त कठिनाइयोंके कारण जनमत-संग्रहमें शामिल नहीं हो सकते। मैं इन सभी खुदाई खिदमतगारों और अन्य लोगोंसे, जो स्वतन्त्र पठान राज्यमें विश्वास करते हैं, जनमत-संग्रह में शामिल न होने और शान्तिपूर्ण ढंगसे उसका बहिष्कार करनेकी अपील करता हूँ।

"लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि हम हाथपर हाथ धरे बैठे रहेंगे। ब्रिटिश दासताके विरुद्ध अपने १८ वर्षोंके लंबे स्वातन्त्र्य-संघर्षको सफलतातक पहुँचा देनेके बाद हमारे सामने आज एक नया खतरा पैदा हो गया है। पख्तूनोंकी आज़ादी ही नहीं, उनकी हस्तीतक दाँवपर लग गयी है। अतएव मैं उन सभी पठानोंका, जिन्हें अपनी मातृ-भूमिसे प्रेम है, एकता स्थापित करने और अपने चिरअभिलषित लक्ष्यकी प्राप्तिके लिए संघर्ष करनेका आह्वान करता हूँ।

"मेरी अब भी कितनी इच्छा है कि इस अन्तिम घड़ीमें भी श्री जिना हमारी स्थितिके साथ न्याय कर पाते और एक पठानको दूसरे पठानसे अलग करनेकी हरकतोंसे बाज आते।"

२७ जूनको एक बैठकमें भाषण करते हुए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने कहा : "हमने पठानिस्तानकी स्थापनाका निश्चय किया है जो सभी पठानोंका एक स्वतन्त्र राज्य होगा। इसका कोई राजा न होगा। उसपर सारी पठान जाति संयुक्त रूपसे शासन करेगी। पठानोंने इस आज़ादीके लिए कांग्रेसका साथ दिया और हम संयुक्त रूपसे अपने समान शत्रुसे लड़े। उस समय हमें हिन्दू और हिन्दुओंका दलाल कहा जाता था, किन्तु अब, जब हमने हिन्दुस्तानमें शामिल होना अस्वीकार कर दिया है, तो हमें पाकिस्तान बनाम हिन्दुस्तानके सवालपर जनमत-संग्रहमें शामिल होनेके लिए बाध्य किया जा रहा है।"

उन्होंने कहा : "हमें किसी भी प्रकारकी दासतासे मुक्त होनेके लिए संघटित होना चाहिए। इसके बाद हम पारस्परिक हितोंमें अन्य मुस्लिम देशोंके साथ

भाईचारेका संबंध रख सकते हैं। क्या अफगानिस्तान, ईरान, इराक, अरब और मिस्रकी अपनी स्वतन्त्र सरकारें नहीं हैं ? क्या वे सभी मुसलमान नहीं हैं ? किन्तु इस्लामके ही सिद्धान्तोंके अनुसार कोई उदारताका कार्य अपने घरसे ही शुरू होता है। क्या मेरे लिए अपने पठान भाइयोंको अज्ञात भविष्यके अन्धकारमें फेंक देना बेईमानी नहीं होगी ? केवल हमारे ही नहीं, सारे संसारके सामने भीषण भविष्यकी संभावना है। तीसरे विश्व-युद्धके बीज बो दिये गये हैं। हर एक देश उस लड़ाईको अपनी सीमाओंसे दूर रखनेकी कोशिश कर रहा है। उस संकटकालके लिए अंग्रेज सीमाप्रान्तको रूसके विरुद्ध सैनिक अड्डा बनाना चाहता है। इस सिलसिलेमें जनरल माउण्ट गोमरीका भारत पहुँचना और श्री जिनाके साथ हुई उनकी बैठकें निस्सन्देह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।"

खान बंधुओंका अन्तिम निर्णय कांग्रेस अध्यक्षके मार्फत २८ जूनको वाइसरायको भेज दिया गया :

"जब कभी सीमाप्रान्तका प्रश्न उठा है हमने आपसे कहा है कि हमारी ओरसे इस संबंधमें कोई उत्तर दिये जानेके पूर्व यह आवश्यक है कि सीमाप्रान्तके मन्त्रियों और नेताओंसे परामर्श कर लिया जाय। इस मामलेका उनसे घनिष्ठ संबंध है और स्थितिके संबंधमें वे योग्यतम निर्णायक हैं। वे इस बातके सख्त विरोधी हैं कि प्रान्तमें ऐसा कोई सवाल उठाया जाय जिसका विशुद्ध रूपसे साम्प्रदायिक या हिन्दू-मुसलमानके सवालके रूपमें लाभ उठाया जा सके। इस साम्प्रदायिक मसलेको दूर करनेका सबसे अच्छा तरीक़ा यह था कि जनताके सामने असली सवाल रखा जाय। यह सवाल स्वतन्त्र पठान राज्यकी स्थापना था जो आगे चलकर भारत संघ या पाकिस्तानसे अपने संबंध स्थिर करता। इसी तीव्र भावनाके अनुरूप मैंने आपको २ जूनको लिखा था कि प्रस्तावित जनमत-संग्रहमें ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि जनता अपनी स्वाधीनता और बादमें शेष भारतके साथ अपने संबंधोंके बाबत फ़ैसला देनेके लिए वोट दे। मैं यह समझता हूँ कि जबतक मुस्लिम लीगको यह प्रस्ताव मान्य न हो आप इसे माननेमें असमर्थ हैं। इससे हमारी कठिनाइयाँ बढ़ गयी हैं और हम इस मामलेमें बड़े चिन्तित हैं।

"हमने योजना स्वीकार कर ली है। इसके साथ ही हम उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तपर ऐसी कोई कार्यपद्धति नहीं लाद सकते जिसका वहाँकी जनता और नेता विरोध करते हों। हमने फिरसे खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँसे बातचीत की है। उन्होंने हमें बताया है कि सीमाप्रान्तकी जनतामें इस संबंधमें बड़ी ही तीव्र भावना है कि उसे उसकी स्वतन्त्रताके प्रश्नपर फ़ैसला देनेका अवसर प्रदान किया

जाय। वह किसी भी ऐसे जनमत-संग्रहमें शामिल होनेके विरुद्ध है जिसमें मसला पूरी तरह साम्प्रदायिक रूप ग्रहण कर ले। बादशाह ख़ाँका कहना है कि यदि मसला पठानिस्तान और पाकिस्तानके बीच चुनाव करनेका नहीं होगा तो वे अपने अनुयायियोंको जनमत-संग्रहसे दूर रहनेकी सलाह देंगे। उनका कहना है कि इससे स्थितिका तनाव कुछ कम होगा यद्यपि चाहे कुछ समयके लिए ही हो प्रान्तमें कांग्रेसका अस्तित्व समाप्त हो जायगा।"

२९ जूनको गांधीने वाइसरायको लिखा :

"बादशाह ख़ाँने मुझे लिखा है कि वे उसे योजनाको कार्यान्वित कर रहे हैं जिसपर मैंने आपसे और उन्होंने कायदे आजम जिनासे विचार-विमर्श किया था। योजना यह थी कि स्वतन्त्र पठानिस्तान अपना स्थानीय संविधान स्वयं तैयार करे और पाकिस्तान तथा भारत संघका संविधान बन जानेपर यह तय करे कि वह इनमेंसे किसके साथ रहेगा। इस योजनाको स्वीकृत करानेमें वे विफल हो चुके हैं। अतएव जनमत-संग्रहमें उनके अनुयायी किसी प्रकारका हस्त-क्षेप नहीं करेंगे और वे मतदानमें शामिल न होंगे। वे यह पूरी तरह अनुभव कर रहे हैं कि इस सूरतमें सीमाप्रान्त संभवतः पाकिस्तानको मिल जायगा।

"वे यह भी चाहते हैं कि मैं, आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित कर दूँ कि जनमत-संग्रहको प्रभावित करनेके लिए बहुतसे मुसलमान स्त्री-पुरुष सीमा-प्रान्तमें भेजे जा रहे हैं और बहुतसे प्रमुख मुसलमान भी वहाँ इसी उद्देश्यसे भेजे जा रहे हैं। इससे रक्तपातकी संभावना और बढ़ गयी है तथा स्थिति और भी ख़राब हो सकती है।

"उनका यह भी कहना है कि जहाँतक उन्हें मालूम है कई हज़ार गैरमुसल-मान शरणार्थियोंको जनमत-संग्रहमें भाग लेनेका कोई अवसर नहीं मिलेगा। उन्हें धमकाया जा रहा है कि यदि उन्होंने अपने मतदानके अधिकारका प्रयोग किया तो इसके लिए उन्हें बड़ीसे बड़ी यातनाएँ भोगनी पड़ेंगी।

"आज अखबारोंमें मैंने कायदे आजम जिनाका यह बयान पढ़ा है कि यदि पठान वोट देनेसे विरत रहते हैं तो इससे जनमत-संग्रहकी शर्तोंका उल्लंघन होगा। मुझे इस दलीलमें कोई सार नहीं दिखाई देता।"

जिनाने कांग्रेसपर यह आरोप किया कि कांग्रेस द्वारा 'पठानिस्तान' के समर्थनसे उसके द्वारा स्वीकृत तीसरी जूनकी योजनाका उल्लंघन होता है। उन्होंने गांधी और खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँकी इसके लिए तीव्र निन्दा की कि वे लोग इस धारणाको बराबर बल प्रदान करते जा रहे हैं। उन्होंने वादा किया

कि सीमाप्रान्त पाकिस्तानकी एक स्वायत्तशासी इकाई होगा। मुस्लिम लीगियों-ने यह विषैला प्रचार भी चला दिया कि खान बन्धुओंने अफगान सरकारको भारत और अफगानिस्तानकी मध्यवर्तिनी रेखा डूरण्ड रेखाके संशोधनकी माँग करनेके उद्देश्यसे उभाड़नेके लिए उसके पास दूत भेजा है।

डाक्टर खान साहबने नेहरूको लिखे गये एक पत्रमें लिखा : "हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि हमने कभी अफगानिस्तानमें शामिल होनेका विचार नहीं किया है। हमें पहली बार यह मालूम हुआ है कि अफगान सरकारने आधिकारिक तौरपर भारत सरकारसे सम्पर्क स्थापित किया है। हम लोग एक संकटकी स्थितिमें डाल दिये गये हैं; स्वभावतः अफगान सरकार इस स्थितिका लाभ उठा रही है और उसका शोषण कर रही है। हमें किसी ऐसे कांग्रेसी दूतके बारेमें कोई जानकारी नहीं है जिसे अफगान सरकारके पास भेजा गया हो।"

गांधीजीने ३० जूनको एक प्रार्थना-सभामें भाषण करते हुए कहा :

"जनमत-संग्रहका प्रश्न सीमाप्रान्तकी जनताके सामने बड़े ही महत्त्व रूपमें टिका हुआ है क्योंकि सीमाप्रांत पहलेसे ही कांग्रेसी प्रान्त रहा है और अब भी सरकारी रूपमें कांग्रेसी प्रांत है। बादशाह खाँ और उनके सहकर्मी यह पसंद नहीं करते कि उन्हें हिन्दुस्तान या पाकिस्तानमें चुनाव करनेके लिए कहा जाय। इसका सीधा अर्थ हिन्दुओं या मुसलमानोंमें चुनाव करना होगा। बादशाह खाँ इस कठिनाईपर कैसे विजय पा सकते हैं। कांग्रेसने यह वचन दिया है कि जन-मत-संग्रह डाक्टर खान साहबसे परामर्श करके ही होना चाहिए किन्तु इसका निरीक्षण प्रत्यक्ष रूपसे वाइसराय करेंगे। जनमत-संग्रह इसी रूपमें निर्धारित तिथिपर होगा। खुदाई खिदमतगार अपने मताधिकारका प्रयोग नहीं करेंगे जिससे मुस्लिम लीगको मैदान मार लेनेकी पूरी सुविधा मिल जायगी। किन्तु इससे वे अन्तरात्माके विरुद्ध आचरण करनेसे बच जायेंगे। इस कार्यपद्धतिसे जनमत-संग्रहकी शर्तोंका क्या कोई भी उल्लंघन होता है ? जिन खुदाई खिदमतगारोंने अंग्रेजोंके खिलाफ बहादुरीसे लड़ाई लड़ी है उन्हें जनमत-संग्रहमें हार जानेका कोई अफसोस नहीं हो सकता। पार्टियोंके लिए हमेशा चुनावमें शामिल होना ही होता है, कभी-कभी हारकी निश्चित संभावनापर भी। बहिष्कार करनेवाली पार्टी के लिए पराजय कुछ कम निश्चित नहीं होती।

"बादशाह खाँपर पठानिस्तानको नयी आवाज़ उठानेका आरोप किया जा रहा है। जहाँतक मुझे मालूम है, कांग्रेस मन्त्रिमण्डलके अस्तित्वमें आनेके पहले ही बादशाह खाँके मस्तिष्कमें अपने आन्तरिक मामलोंमें पठानोंकी स्वतन्त्रताका

विचार वर्तमान था। वे कोई नया राज्य क़ायम नहीं करना चाहते। यदि उन्हें अपना स्थानीय संविधान बनानेकी छूट दे दी जाय तो वे सहर्ष हिन्दुस्तान या पाकिस्तानमें किसी एकके साथ शामिल होनेका निश्चय कर सकते हैं। यदि पठानोंको नीचा दिखाने और उन्हें गुलाम बनानेकी नीयत न हो तो उनकी स्वायत्तताकी इच्छापर आपत्ति करनेकी बात सोच पाना मेरे लिए और कठिन है।

"अधिक गंभीर आरोप यह किया गया है कि बादशाह खाँ अफगानिस्तानके हाथमें खेल रहे हैं। मेरे विचारसे वे पर्देकी आड़में कोई काम नहीं कर सकते। वे कभी यह गवारा नहीं कर सकते कि सीमाप्रांतको अफगानिस्तान हड़प ले।

"उनका दोस्त होनेके नाते, क्योंकि मैं उनका दोस्त हूँ, उनमें मुझे केवल एक कमी दिखाई देती है। उन्हें अंग्रेजोंके वचनों और इरादोंपर एतबार नहीं होता। वे उनके प्रति बहुत शंकालु हैं। मैं सबसे यह कहना चाहूँगा कि वे उनकी इस त्रुटिपर, जो औरोंमें भी पायी जाती है, ध्यान न दें। बात केवल यह है कि उनके जैसे नेतामें यह कमी कुछ खटकती है। किन्तु मेरा यह तर्क है कि मैंने जिस चीज़को उनकी कमी बताया है, जो एक मानीमें है भी, उसे दूसरी मानीमें गुण भी कहा जा सकता है क्योंकि वे कोशिश करके भी अपने विचारोंको छिपा नहीं सकते। वे इतने ईमानदार हैं।"

४ जुलाईको वाइसरायने गांधीको लिखा : "सीमाप्रान्तसे मुझे रिपोर्ट मिली है कि लाल कुर्तीवाले जनतापर दबाव डाल रहे हैं कि वह मतदानमें भाग न ले। मेरी समझमें आप इससे सहमत होंगे कि इस तरहके किसी कार्यसे उसी हिंसाको प्रोत्साहन मिलनेकी संभावना है जिससे बचनेके लिए मैं और आप इतने चिन्तित हैं। मेरा विश्वास है कि यदि यह रिपोर्ट सच है तो आपने अपने पत्रमें जिस नीतिकी व्याख्या की है उसकी दृष्टिसे आप खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको उसी नीतिको कार्यान्वित करनेको कहेंगे।"

५ जुलाईको गांधीने जवाब दिया : "यह ठीक है कि बादशाह खाँ और उनके सहकर्मियों द्वारा इस समय यह आन्दोलन चलाया जा रहा है कि वोटर मतदानमें भाग न लें। किन्तु मतदानके दिनोंमें किसी तरहका प्रदर्शन नहीं होगा और मतदानके समय ये लोग वोटरोंके पास नहीं जायँगे। यदि आपका यही अभिप्राय है तो मैं आज शामकी प्रार्थनामें इसकी सहर्ष चर्चा करूँगा। यदि आप कहें तो मैं बादशाह खाँके पास पहुँचनेके लिए और द्रुतगामी तरीका अख्तियार करनेको तैयार हूँ। यदि आपके दिमाग़में और कोई बात हो तो कृपया उसे मुझे सूचित करें।"

वाइसरायने गांधीसे अपील की : "यदि आप थोड़ा और आगे बढ़कर मतदानके दिनोंके पूर्व किसी भी ऐसे आन्दोलनको रोकवानेकी चेष्टा करें जिससे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे उपद्रव होनेकी संभावना हो तो स्वभावतः मैं इसके लिए आपका कृतज्ञ होऊँगा। मेरी समझमें यह बड़ा जरूरी है कि यथासंभव शीघ्रसे शीघ्र खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको आपकी सलाह मिल जाय। यदि आप उन्हें कोई पत्र भेजना चाहें तो मैं उसे एक विशेष दूत द्वारा पेशावर भेजवा दूँ और गवर्नरसे कहला दूँ कि वे इसे आगे बढ़ा दें। मैं आपकी सहायताके लिए बड़ा आभारी हूँ।"

५ जुलाईके अपने दूसरे पत्रमें गांधीने वाइसरायको लिखा : "ज्यों ही अपनी प्रार्थना-सभाका भाषण समाप्त कर टहलनेके लिए जा रहा था आपका कृपापत्र प्राप्त हुआ। सौभाग्यवश दोपहरको मेरी एक पठानसे मुलाकात हुई जिसे मैं खुदाई खिदमतगारके रूपमें जानता हूँ। वह पेशावर जा रहा था। इसलिए मैंने उसे एक सन्देश दे दिया। उस सन्देशकी प्रतिलिपि मैं इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ। आप यह पत्र पढ़ लें। यदि आप सोचते हों कि जो नया मुद्दा आपने उठाया है वह इसमें शामिल हो चुका है तो जैसा आपने कहा है इसी पत्रको अपने विशेष दूतसे भेज दें। मैं आशा करता हूँ कि बादशाह खाँ और उनके अनुयायियोंकी ओरसे कोई उपद्रव नहीं होगा। पठान खुदाई खिदमतगारके मार्फत जो संदेश मैंने भेजा है उसमें बादशाह खाँको लिखे गये मेरे पत्रकी अपेक्षा कहीं अधिक बातोंका समावेश कर दिया गया है।"

'प्रिय बादशाह खाँको' संबोधित गांधीके ५ जुलाईके पत्रमें लिखा गया था :

"खुदाई खिदमतगार आलम खाँने मुझसे १२ बजे भेंट की थी। उसने मुझसे कहा था कि वह आज रातको ही पेशावर जा रहा है। मैंने उसके मार्फत कोई पत्र नहीं भेजा किन्तु मैंने उससे यह अवश्य कह दिया कि मुस्लिम लीगके खिलाफ़ कोई प्रदर्शन नहीं होना चाहिए। वर्तमान तनाव और ग़लतफहमीकी स्थितिमें यह पर्याप्त है कि खुदाई खिदमतगार किसी ओर वोट न दें। जहाँतक अपने आन्तरिक मामलोंका प्रश्न है वे पाकिस्तान और भारत संघके हस्तक्षेपके बिना पूर्ण स्वायत्तताके अधिकारी हैं। पाकिस्तान और भारत संघके संविधान जब तैयार होकर प्रकाशित हो जायँ और जब सीमाप्रान्त स्वयं अपना स्वायत्तशासी संविधान बना ले तब वे यह फैसला कर सकते हैं कि वे उक्त दोनों देशोंमें किसके साथ रहेंगे। हर हालतमें मुस्लिम लीगके सदस्योंसे संघर्ष बचाना चाहिए। पठानोंकी वास्तविक बहादुरीकी इस समय परीक्षा हो रही है। विरोधियोंके प्रहारका सामना

मुस्कराहटसे करके अथवा विना किसी प्रकारकी वदलेकी काररवाई किये उनके प्रहारसे मरकर भी इसे प्रकट करना है। बहिष्कारसे निश्चय ही पाकिस्तानियोंकी कानूनी विजय हो जायगी किन्तु यदि हिंसासे जरा भी डरे बगैर अधिकांश पठान गरिमापूर्ण ढंगसे जनमत संग्रहसे तटस्थ रह गये तो यह उनकी एक नैतिक पराजय होगी। अधिकारियोंके किसी आदेशका कोई विरोध नहीं होना चाहिए और उनकी खिलाफतमें किसी तरहका कोई जुलूस नहीं निकाला जाना चाहिए।

"मैंने आपकी चिट्ठी पानेपर तुरन्त उसके अनुसार कार्य किया। मैंने हिज एक्सेलेंसीके पास एक लम्बा पत्र लिखा जिसपर उन्होंने काररवाई की। आपने यह भी देखा होगा कि मैंने अपनी प्रार्थना-सभाके एक भाषणमें सीमाप्रान्तके प्रश्नपर कैसे विचार प्रकट किये हैं। मैं आपको यह पत्र भी वाइसरायके उस पत्रके फलस्वरूप लिख रहा हूँ जिसमें उन्होंने शिकायत की है कि खुदाई खिदमतगारों द्वारा उपद्रव किये जानेकी आशंका है।

"मैं आशा करता हूँ कि आप जिस तनावकी स्थितिमें कार्य कर रहे हैं उसका आपके स्वास्थ्यपर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ रहा होगा।"

दो दिनों वाद गांधीने उन्हें पुनः लिखा : "अवतक आपका कोई समाचार नहीं मिला। मुझे आशा है कि आपको मेरा लंबा पत्र मिल गया होगा और आपने उसके अनुसार कार्य भी किया होगा। मनसा, वाचा और कर्मणा अहिंसासे पूर्णतः प्रतिबद्ध रहनेमें ही मेरी आपकी प्रतिष्ठा है। अवतक (९-३०) अखबारोंमें कोई समाचार देखनेको नहीं मिला। बापूके प्यार !"

१२ जुलाईको लिखे गये खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके पत्रमें चिन्ताजनक समाचार थे :

"मैं और मेरे कार्यकर्ता जनतासे यह कहते हुए गाँव-गाँव घूम रहे हैं कि मुस्लिम लीगियों द्वारा उत्तेजित किये जानेके बावजूद वह अहिंसक बनी रहे। मुस्लिम लीगी लोग रोज-ब-रोज जुलूस निकाल रहे हैं और अत्यन्त आपत्तिजनक नारे लगा रहे हैं। वे हमें काफिर कहते हैं और गालियाँ बकते हैं। व्यक्तिगत रूपसे मेरा अपमान किया गया है और गालियाँ दी गयी हैं। मैं अनुभव करता हूँ कि मुस्लिम लीगियों, अधिकारियों और जनमत-संग्रहका संचालन करनेवाले अफसरोंमें संघटित षड्यन्त्रकी योजना बनी हुई है। प्रेसाइडिंग अफसरोंने सैकड़ों-हज़ारों जाली वोटें डलवा दिये हैं। कुछ जगहोंमें तो ८० से ९० फीसदी वोट पड़े हैं। ऐसा तो किसी भी चुनावमें नहीं सुना गया है। फिर ध्यान देनेकी बात यह है कि इतने वोट उस मतदाता सूचीके आधारपर पड़े हैं जो दो साल पहले

तैयार की गयी थी।

"हम लोग बहुत ही कठिन परिस्थितियोंसे गुजर रहे हैं फिर भी हमने मन, वचन और कर्मसे अहिंसाका पालन किया है। मेरे लिए यह कहना आसान नहीं है कि इस तरहकी हालत कबतक बनी रह सकती है। थोड़ेमें कहना यह है कि अफसरोंकी शह पाकर मुस्लिम लीगी उपद्रव करनेपर उतारू हो गये हैं। हमने एक इन्सानके लिए जहांतक मुमकिन हो सकता है उनसे झगड़ा बचानेकी हर कोशिश की है।

"दूसरी चीज़, जिससे हमको सबसे अधिक चिन्ता हो गयी है, यह है कि इस समय हमारे प्रान्तमें बहुत बड़ी तादादमें पंजाबी आ गये हैं जो जनताको हिंसाके लिए उभार रहे हैं। इतना ही नहीं, वे सार्वजनिक सभाओंमें यहांतक कह रहे हैं कि लाल कुर्तीवालोंके शीर्षस्थ नेताओंका काम तमाम कर देना चाहिए। वे साफ़-साफ़ यह घोषणा कर रहे हैं कि पाकिस्तान बन जानेके बाद नूरेम्बर्गके समान लाल कुर्तीवालोंपर मुकदमा चलाया जायगा और इन गद्दारोंको फांसीपर चढ़ा दिया जायगा। श्री जलालुद्दीन एम० एल० ए० (हजारा) ने एक सार्वजनिक सभामें कहा है कि यदि किसी मुस्लिम मन्त्रीने हजाराका दौरा किया तो उसे मार डाला जायगा।"

जुलाईमें हाउस आव कामंसमें भारतीय स्वतन्त्रता विधेयक प्रस्तुत किया गया और उसे तीन दिनोंमें ही शाही स्वीकृति प्राप्त हो गयी। इस बीच पंजाब और बंगालकी विधानसभाओंके सदस्योंने अपने प्रान्तोंके विभाजनकी पुष्टि कर दी।

सीमाप्रान्तका जनमत-संग्रह ६ जुलाईको शुरू हुआ। जिस समय जनमत-संग्रह हो रहा था सर ओलफ कैरोको अवकाशग्रहणके लिए छुट्टी दे दी गयी थी। प्रान्तकी गवर्नरी और जनमत-संग्रहके संचालनका अधिकार सर राब लाकहार्टको सौंप दिया गया था जो उस समयतक भारतीय सेनाकी दक्षिणी कमानके प्रधान थे। १८ जुलाईको जनमत-संग्रह समाप्त हो गया और उसके परिणामकी घोषणा २० जुलाईको कर दी गयी। पाकिस्तानके लिए २ लाख ८९ हजार २४४ वोट पड़े और भारतके लिए २ हजार ८७४ वोट। इसका मतलब यह हुआ कि प्रान्त के सम्पूर्ण मतदाताओंमें केवल पचास प्रतिशतने पाकिस्तानमें शामिल होनेकी इच्छा व्यक्त की थी। खुदाई खिदमतगार मतदानसे अलग रहे और उनका बहिष्कार सभी क्षेत्रोंमें व्यवस्थित और शान्तिपूर्ण ढंगसे चलता रहा। उनका यह कार्य चाहे जितना भी तुच्छ रहा हो उसने खुदाई खिदमतगारोंकी इच्छाका बड़े ही जोरदार ढंगसे प्रदर्शन कर दिया।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ लिखते हैं : "हमारे प्रान्तमें जनमत-संग्रह सर्वाधिक प्रतिकूल परिस्थितियोंमें हुआ था। खुदाई खिदमतगार क्रुद्ध और मायूस थे; उन्होंने जनमतसंग्रहका बहिष्कार किया। पुलिस और सेना बहुतसे लोगोंको मतदान केन्द्रोंपर जबर्दस्ती ले गयी और मुस्लिम लीगके पक्षमें जाली नामोंके वोट डलवाये गये। कर्नल बशीरने मुझे बताया कि उनकी कंपनी बन्नूके पास थी। उसे पाकिस्तानके पक्षमें वोट देनेके लिए तीन बार ले जाया गया। जालसाजीका एक ठोस प्रमाण यह है कि सीमाप्रान्तकी कांग्रेस कमेटीके अध्यक्षतकके नामसे भी जाली वोट पड़ गया था।"

वे लिखते हैं : "यह प्रश्न अनुचित था कि हम हिन्दुस्तानमें शामिल होना चाहते हैं या पाकिस्तानमें। हिन्दुस्तानने हमें छोड़ दिया था और दुश्मनोंके हवाले कर दिया था अतः जबर्दस्ती हिन्दुस्तानमें शामिल होना पख्तूनोंके आत्मसम्मान और चरित्रके विरुद्ध था। पाकिस्तानके सवालपर हम पहले ही अपना यह मजबूत फैसला दे चुके थे कि हम पाकिस्तानमें शामिल नहीं होना चाहते। इसीलिए हमने यह माँग की थी कि जनमतसंग्रह करना ही है तो इसे पख्तूनिस्तान या पाकिस्तानके सवालपर होना चाहिए। हमारी मांग ठुकरा दी गयी और हिन्दुस्तान या पाकिस्तानके सवालपर जनमतसंग्रह करानेका निश्चय हमपर लाद दिया गया।"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने जोर देकर कहा है कि "१९४६ के चुनावके नतीजेने साफ़ फैसला दे दिया था किन्तु अंग्रेज हमपर जनमतसंग्रह लादकर हमें सजा देना चाहते थे। और जगहोंमें तो प्रान्तीय असेंबलियोंको हिन्दुस्तान या पाकिस्तानके बीच चुनाव करनेको कहा गया था किन्तु हमारे प्रान्तको अपवाद रूपमें माना गया। सीमाप्रान्तकी असेंबलीके जनप्रातिनिधिक रूपकी उपेक्षा कर दी गयी। क्रोध और मायूसीमें हमने दुनियाके सामने अपनी आपत्ति पेश करनेका फैसला किया और जनमतसंग्रहका बहिष्कार कर हमने अपना प्रतिवाद जाहिर कर दिया। जिस बातकी हमें सबसे ज्यादा तकलीफ़ हुई वह यह थी कि कांग्रेसने हमारा साथ नहीं दिया और पख्तूनोंको बेबसीकी हालतमें दुश्मनोंको सौंप दिया। आसामके मामलेमें, जब कि वहाँके मुख्य मंत्री बारदोलोईने कैबिनेट मिशन योजनाके प्रान्तोंके समूहीकरण अनुच्छेदका विरोध किया तो कांग्रेस कार्यसमितिने इसके प्रति उदासीनता नहीं दिखायी और उस अनुच्छेदको रद करवाया। मैं समूहीकरण अनुच्छेदके विरुद्ध नहीं था। जब गांधीजीने मुझसे इसका कारण पूछा तो मैंने कहा कि मैं भारतका विभाजन छोड़कर किसी भी योजनाका समर्थन कर

सकता हूँ।"

खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँ लिखते हैं : "कांग्रेसने जो कमजोरी दिखायी थी उससे हमारी जनताको वहुत बड़ी निराशा हुई थी। मुझे यह कहते खेद हो रहा है कि हमने कांग्रेस नहीं छोड़ी किन्तु कांग्रेसने हमें छोड़ दिया। यदि हम कांग्रेस छोड़नेपर तैयार हो जाते तो अंग्रेजोंने हमारी सभी माँगें मान ली होतीं। मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि कांग्रेसने हमारी माँगका उसी ढंगसे समर्थन किया होता जैसा कि उसने गुरदासपुरके मामलेमें किया था तो जिना हमारे पख्तूनिस्तान या पाकिस्तान सम्बन्धी प्रस्तावको माननेके लिए वाध्य हो जाते। जिनाने हमारे पास कई वार सन्देश भेजे थे कि हम उनके साथ हो जायँ तो वे हमारी सभी मांगें स्वीकार लेंगे। इसी तरहका एक संदेश मेरे पास उस समय आया था जव कांग्रेस कार्यसमिति विभाजनपर विचार कर रही थी। सन्देशमें यह कहा गया था कि जव भारतका विभाजन होने ही जा रहा है तो मैं मुस्लिम लीगमें क्यों नहीं शामिल हो जाता। इसके वाद मैं जो भी चाहूँ मुझे प्राप्त हो सकता है किन्तु हमने कभी अपने उसूलोंके साथ समझौता नहीं किया।"

अन्तमें वे लिखते हैं : "चूँकि हम जनमत-संग्रहमें शामिल नहीं हुए, मुस्लिम लीगको किसी भी अड़चनका सामना नहीं करना पड़ा। हिंसा, धोखाधड़ी, दंगा-बाजी और ब्रिटिश षड्यन्त्रके वावजूद लीगको मुश्किलसे ५० फीसदी वोट ही मिल सके और पख्तूनोंका भाग्य हमेशाके लिए तय कर दिया गया।"

सरदार पटेल और मौलाना आजादका विश्वास था कि जनमतसंग्रहके नतीजोंसे यह साफ़ हो गया है कि सीमाप्रान्तमें खान बन्धुओंका प्रभाव घट रहा है। मौलाना आज़ादने कहा कि खान वन्धुओंको 'अलोकप्रियता' का एक कारण यह है कि वे अपनेसे मिलने आनेवाले पठानोंको विस्कुटतक नहीं देते और उन्होंने कांग्रेस द्वारा दी गयी निधिको खर्च करनेमें बड़ी कंजूसी दिखायी है। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ पहले वक्तव्यको पख्तून परम्परापर कलंकके समान मानते हैं। यह हर तरहसे ग़लत है। पठान अपनी रोटीके आखिरी टुकड़ेको भी अपने मेहमानके साथ बाँटकर खाता है। जहाँतक निधिकी शाहखर्चीका सवाल है वे सिद्धान्त और व्यवहार दोनों आधारोंपर इसका बराबर विरोध करते रहे हैं। खुदाई खिदमतगार संघटनकी सदस्य संख्या लाखोंमें थी। कांग्रेस जो भी निधि देती वह समुद्रमें बूँदके समान ही होती। इसके अतिरिक्त कांग्रेसी सहायतापर निर्भर करनेसे वे चरित्रभ्रष्ट और कमजोर हो जाते। अपने संघटनको मजवूत वनानेके लिए उन्हें रुपयेकी नहीं, चरित्रकी आवश्यकता थी। निधियाँ तो शीघ्र ही समाप्त

हो जायेंगी किन्तु यदि उन्होंने चरित्रकी निधि स्थापित कर ली तो यह उनके जीवन-स्रोतकी अक्षय निधि बन जायगी। "खुदाई खिदमतगार विशुद्ध रूपसे मात्र राजनीतिक संघटन नहीं है। यह एक साथ ही राजनीतिक, सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक संघटन है। खुदाई खिदमतगारोंने कभी भी बाहरी आर्थिक सहायताकी माँग नहीं की है। हमें कभी कांग्रेससे कोई आर्थिक सहायता नहीं मिली है और यदि कभी उसने कोई ऐसी मदद दी भी है तो वह सीमाप्रांतके कांग्रेस संसदीय बोर्डको मिली है। हम सार्वजनिक धनको अनावश्यक रूपसे खर्च करना खुदाके सामने एक अपराध मानते हैं। हमारा आन्दोलन कभी मुरझाया नहीं है, न कभी मुरझायेगा।"

गांधीसे सलाह-मशविरा करनेके लिए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ २७ जुलाई-को दिल्ली पहुँचे। उनकी बड़ी लंबी वार्ता हुई। गांधीजी ३० जुलाईको कश्मीर चले गये और खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ अपने प्रान्त लौट आये। गांधीजीने उनसे कहा कि, "आपका कर्तव्य पाकिस्तानको सचमुच पाक बनाना है।" इसके बाद उनकी कोई मुलाकात नहीं हुई।

जनमत-संग्रह और विभाजनके बाद खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने हिन्दुस्तानके अपने किसी भी सहकर्मी और सहयोगीसे किसी तरहकी कोई खत-किताबत नहीं की। पाकिस्तानमें वे बराबर जुल्म और हर तरहके अपमानके शिकार बने रहे। नवंबरमें गांधीको जो रिपोर्ट मिली वह बेचैन कर देनेवाली थी। इससे वे खान बंधुओंकी जीवन-रक्षाके लिए अत्यन्त चिन्तित हो उठे। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको लिखे गये एक पत्रमें गांधीने उन्हें स्पष्ट रूपसे सुझाव दिया कि वे सीमा-प्रान्त छोड़कर भारत चले आयें और यहाँसे अपने अहिंसात्मक टेकनीकका विकास करें। गांधीने लिखा कि, "यह काम आप मेरे साथ यहाँ रहकर कर सकते हैं, अन्यथा क्या होगा मैं कुछ नहीं जानता।" दूसरा एक मात्र विकल्प यही हो सकता है कि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ पाकिस्तानमें ही बने रहें और पाक अधिकारी उनपर जो भी बड़ासे बड़ा जुल्म करना चाहें करें और वे उसका सामना करें। गांधीने कहा कि, "मैं ऐसा नहीं मानता, जैसा कि कुछ लोग कहते हैं, अहिंसा का प्रयोग केवल सभ्य या अर्धसभ्य समाजमें ही किया जा सकता है। अहिंसाके लिए ऐसी कोई सीमा निर्धारित नहीं की जा सकती।" इसके उत्तरमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने गांधीको लिखा था कि आप चिन्ता न करें। केवल मुझे और मेरे साथियोंके लिए अपने आशीर्वाद और प्रार्थनाएँ भेजते रहें।

३० जनवरी १९४८ को गांधी एक उन्मादी हिन्दूके हाथों एकताके उस

महान् उद्देश्यके लिए शहीद हो गये जिसके लिए वे जीवनभर प्रयास करते रहे। वे हिंसा और घृणाके विरुद्ध लड़ते हुए मरे। जिस समय खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ अपने पुत्रके साथ शाही बाग नामक गाँवमें भोजन कर रहे थे उन्होंने गांधी-जीके निधनका स्तब्धकारी समाचार रेडियोसे सुना। गह सुनकर उनका खाना रुक गया और वे स्तब्ध रह गये। खुदाई खिदमतगारोंने अपने महान् मददगार और दोस्त गांधीजीके निधनपर शोक प्रकट करनेके लिए सभाका आयोजन किया जिसमें उन्होंने कहा कि इससे उनकी महान् क्षति हुई है। उनके सबसे महान् और निष्ठा-वान् अनुयायी खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने कहा : "इन घोर अन्धकारपूर्ण दिनोंमें हमारी सहायता करनेवाले वे ही एक मात्र आशाकी किरण थे।"

पाकिस्तानके नागरिक

१९४७–४८

पाकिस्तानकी स्थापना स्वतन्त्र भारतकी स्थापनासे एक दिन पूर्व १४ अगस्त १९४७ को हुई। जिना इसके प्रथम गवर्नर जनरल बने। पाकिस्तान ही वह एक मात्र राज्य है जिसकी स्थापना राष्ट्रीय आधारपर न होकर धार्मिक आधारपर हुई है। चूंकि मुसलमानोंकी सुनिश्चित बहुसंख्या ब्रिटिश भारतके उत्तर-पश्चिमी और उत्तर-पूर्वी क्षेत्रोंमें ही थी अतः पाकिस्तानका निर्माण इस उपमहाद्वीपके इन दो दूरस्थ क्षेत्रोंके योगसे हुआ। इन्हें पश्चिमी पाकिस्तान और पूर्वी पाकिस्तान कहा गया। कुल मिलाकर पाकिस्तानको अविभाजित भारतका २३ प्रतिशत क्षेत्र और १९ प्रतिशत जनसंख्या प्राप्त हुई।

सीमाप्रान्तकी जनताने पाकिस्तानके स्थापना समारोहमें अत्यल्प उत्साहका प्रदर्शन किया। खुदाई खिदमतगारोंके कड़े अनुशासनकी प्रशंसा करनी चाहिए कि १५ अगस्तको सभी सरकारी इमारतोंपर पाकिस्तानी झंडोंको लगाये जानेका कार्यक्रम शान्तिपूर्वक सम्पन्न हो गया और कोई अप्रिय घटना नहीं घटी। उस दिन तत्कालीन सीमाप्रान्तीय गवर्नर सर जार्ज कनिंघमने निष्ठाकी शपथ ग्रहण की। डाक्टर खान साहब और उनके सहयोगियोंको समारोहमें शामिल होनेके लिए आमन्त्रित किया गया था किन्तु उनसे शपथग्रहणके लिए नहीं कहा गया। गवर्नरने डाक्टर खान साहबसे पूछा था कि क्या आप और आपके सहयोगी भी समारोहमें शामिल होंगे ? डाक्टर खान साहबने उत्तर दिया कि हम लोग समारोहमें अवश्य शामिल होंगे; तो गवर्नरने उन्हें चेतावनी दी कि चूंकि समारोहकी सारी व्यवस्था मुस्लिम लीग नेशनल गार्डोंके हाथमें है अतएव डाक्टर खान साहब और उनके सहयोगी अपनी ही जिम्मेदारीपर इसमें शामिल हो सकते हैं। गवर्नर उनकी सुरक्षाकी जिम्मेदारी नहीं ले सकते। डाक्टर खान साहबको दालमें कुछ काला नजर आया। इसलिए वे समारोहमें शामिल नहीं हुए। "हमसे कभी निष्ठाका शपथग्रहण करनेको नहीं कहा गया। हमसे केवल तत्काल त्याग-पत्र दे देनेको ही कहा गया। हमने इससे इनकार कर दिया। तब हमारा मन्त्रि-मण्डल बर्खास्त कर दिया गया।" २२ अगस्त, १९४७ को डा० खान साहबके मन्त्रिमण्डलके स्थानपर अब्दुल कयूमका मन्त्रिमण्डल आ गया।

तीसरी और चौथी सितम्बरको सरदरयावमें प्रान्तीय जिर्गा, संसदीय दल, जल्मे पख्तून, खुदाई खिदमतगार और कबायली क्षेत्रोंके प्रतिनिधियोंकी एक बड़ी सभामें निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकृत हुए :

"(क) खुदाई खिदमतगार पाकिस्तानको अपना मुल्क मानते हैं और यह संकल्प लेते हैं कि वे इसके हितोंकी रक्षा करने तथा इसे सुदृढ़ बनानेके लिए यथा-संभव कोई प्रयत्न न उठा रखेंगे और इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए हर तरहकी कुर्बानी देनेको तैयार रहेंगे ।

"(ख) डाक्टर खान साहबके मन्त्रिमण्डलका बर्खास्त किया जाना और उसकी जगह अब्दुल कयूम मन्त्रिमण्डलकी स्थापना अलोकतान्त्रिक है किन्तु चूँकि हमारा देश एक संकटकी घड़ीसे गुजर रहा है अतएव खुदाई खिदमतगार ऐसा कोई काम न करेंगे जिससे प्रान्तीय या केन्द्रीय सरकारके रास्तेमें किसी तरहकी कठिनाई पैदा हो ।

"(ग) देशके विभाजनके बाद खुदाई खिदमतगार अखिल भारतीय कांग्रेस संघटनसे अपना सम्बन्ध-विच्छेद करते हैं और तिरंगा झण्डाकी जगह अपनी पार्टीके प्रतीक रूपमें लाल झण्डा स्वीकार करते हैं ।"

इस सभामें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने पुनः पख्तूनिस्तानकी अपनी माँगकी व्याख्या करते हुए कहा कि इसका उद्देश्य यह है कि पाकिस्तान राष्ट्रके अन्दर पख्तूनोंको अपने आन्तरिक मामलोंकी व्यवस्था करनेकी पूरी आज़ादी देनेके लिए उनकी एक स्वतन्त्र इकाई बना दी जाय । एक दूसरे प्रस्तावमें कहा गया, "इस नये राज्यमें उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तके छहों निर्धारित जिले तथा आसपासके ऐसे क्षेत्र होंगे जहाँ पठानोंकी आबादी हो और जो अपनी स्वतन्त्र इच्छासे इसमें शामिल होना चाहते हों। यह राज्य प्रतिरक्षा, वैदेशिक मामलों और संचार साधनों-के संबंधमें पाकिस्तानसे समझौता करेगा ।"

"उन्होंने कहा कि मैं अपने सारे जीवन पख्तूनिस्तानकी स्थापनाके लिए कार्य करता रहा हूँ । पख्तूनोंमें एकताकी स्थापनाके उद्देश्यसे ही १९२९ में खुदाई खिदमतगार संघटनकी शुरुआत की गयी । मैं आज भी उन्हीं सिद्धान्तोंको मानता हूँ । अतः मेरा रास्ता बिलकुल साफ़ है । मैं इसे कभी नहीं छोड़ूँगा, भले ही मैं दुनियामें अकेला रह जाऊँ ।"

इन सारी बातोंके बावजूद खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँ और खुदाई खिदमतगार को अपमानित करनेका आन्दोलन चलता रहा किन्तु कोई भी जुल्म अब्दुल ग़फ्फ़ारको आतंकित न कर सका और वे अपने आदर्शकी प्राप्तिके लिए जनमतके

शिक्षण और संघटनका कार्य अथक रूपमें चलाते रहे। फरवरी १९४८ में उन्होंने पाकिस्तान संविधान सभामें शामिल होनेके लिए कराची जानेका निश्चय किया। इसमें उनका उद्देश्य यह था कि बाकायदा प्रचार द्वारा पाकिस्तानके मुसलमानोंमें उनके और खुदाई खिदमतगारोंके बारेमें जो ग़लतफ़हमी पैदा कर दी गयी है उसे दूर कर दिया जाय। अखबारोंको दिये गये अपने कई वक्तव्योंमें उन्होंने पख्तूनिस्तानके संबंधमें अपना दृष्टिकोण स्पष्ट किया : "पख्तूनिस्तान पाकिस्तानका एक स्वायत्तशासी इकाई होगा। यह उसी तरह पठानोंका राज्य होगा जैसे सिंध सिंधियोंका, पंजाब पंजाबियोंका और बंगाल बंगालियोंका है। उत्तर-पश्चिमी सरहदी सूबाका नाम अंग्रेजोंका दिया हुआ है। यह नाम क़ायम नहीं रखा जा सकता।" उन्होंने साफ़-साफ़ शब्दोंमें इस आरोपको निराधार बताया कि मैं पख्तूनिस्तानका एक प्रभुतासम्पन्न राज्य क़ायम कर पाकिस्तानके दो टुकड़े कर देना चाहता हूँ। उन्होंने कहा कि मैं पाकिस्तानके संविधानके प्रति निष्ठा की शपथ लेने जा रहा हूँ केवल इसी एक तथ्यसे ही यह आरोप झूठा सिद्ध हो जाता है। अपनी माँगकी पृष्ठभूमिपर प्रकाश डालते हुए उन्होंने कहा कि सीमाप्रांतके लोग पिछड़े हुए हैं। वहाँकी अधिकांश जनता ग़रीब और मध्यम वर्गकी है। उनमें कोई पूँजीवादी वर्ग नहीं है जब कि पाकिस्तानपर बहुत धनी जमींदारों, पूँजीपतियों और ऊँचे तबकेके लोगोंका प्रभुत्व है। अंग्रेज शासक पठानों की नैतिकता गिरानेमें उतने सफल नहीं हो सके जितने कि पाकिस्तानी अधिकारी हुए हैं।

जब उनसे पूछा गया कि क्या उनके संघटनका इपीके फकीरसे कोई संबंध है तो उन्होंने इसका नकारात्मक उत्तर देते हुए इस तरहके समाचारोंको बिलकुल मनगढ़न्त और झूठा बताया।

उन्होंने इस बातसे भी इनकार किया कि पख्तूनिस्तानके प्रश्नपर उनके संघटन और अफगानिस्तानके बीच किसी प्रकारका संबंध है। उन्होंने कहा कि हम लोगों और अफगानिस्तानके बीच रक्त-संबंधको छोड़कर और कोई संबंध नहीं है। उन्होंने यह भी कहा कि मुझे इसकी कोई जानकारी नहीं है कि अफगानिस्तान सरकारने हालमें पठानोंको आत्मनिर्णयका अधिकार प्रदान करनेकी दिशामें कोई पहल की है अथवा अफगानिस्तान और पाकिस्तानके बीच अन्य कोई मसले उठ खड़े हुए हैं। उन्होंने कहा कि यह मामला पूरी तरहसे दोनों सरकारोंका है, इससे मेरा या मेरे संघटनका कोई सरोकार नहीं है।

इस आरोपका कि उनकी पख्तूनिस्तानकी माँगसे प्रान्तवादको बढ़ावा मिलता

है अतएव यह इस्लामके भाईचारेकी भावनाके विपरीत है, जोरदार खण्डन करते हुए खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कहा कि, "इस्लामका सार तत्त्व समानतामें निहित है, न कि इस सिद्धान्तमें कि एक व्यक्ति दूसरेपर अपना प्रभुत्व जमाये। हम पठान दूसरेके अधिकार नहीं छीनना चाहते और न यह चाहते हैं कि दूसरे लोग हमारे अधिकारोंको हड़प लें। पाकिस्तानमें चार तरहके लोग बसते हैं—पठान, बंगाली, पंजाबी और सिंधी। हम सब भाई-भाई हैं। हम चाहते हैं कि इनमें कोई भी एक-दूसरेके मामलेमें दस्तन्दाजी न करे और प्रत्येकको पूर्ण स्वायत्त शासन सुलभ हो। यदि किसीको दूसरेकी मददकी ज़रूरत हो और वह इसकी माँग करे तो उसे वह दी जाय।"

यह पूछे जानेपर कि क्या इससे पाकिस्तान कमजोर न हो जायगा उन्होंने कहा कि इससे पाकिस्तान कमजोर होनेके बजाय और मज़बूत होगा क्योंकि इससे पाकिस्तानकी विभिन्न इकाइयोंमें परस्पर ऐच्छिक सहकारकी भावना पैदा होगी। उन्होंने कहा कि, "मैंने कायदे आजम जिनासे कहा था कि आप स्वयं अपनी प्रतिरक्षाके लिए और पाकिस्तानके मुसलमानोंकी प्रतिरक्षा तथा इन्सानियतकी भलाईके लिए ही पठानोंको एक सुदृढ़ जातिके रूपमें तैयार करें। मैं मानवताका विनम्र सेवक हूँ।"

यह पूछे जानेपर कि क्या वे अब पख्तूनिस्तानके सवालपर मतसंग्रहकी माँग करेंगे और उन्होंने जनमत-संग्रहका विरोध क्यों किया था तो ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कहा कि जनमत-संग्रहके विरोधके कई कारण थे। उसमें ग़लत सवाल तो उठाये ही गये थे, वह तरीक़ा भी ग़लत था। अब इसपर नये सिरेसे मतसंग्रह करानेकी ज़रूरत नहीं है। इसे पाकिस्तानसे प्रत्यक्ष वार्ता करके निपटाया जा सकता है।

जब उनसे पूछा गया कि गांधीकी मृत्युके बाद क्या भारतमें मुसलमानोंकी स्थिति नहीं बिगड़ जायगी, ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कहा: "जबतक भारतमें जवाहरलाल नेहरू, राजेन्द्रप्रसाद तथा अन्य कई लोगों जैसे शीर्षस्थ नेता जीवित हैं, जिनका गांधीजीके सिद्धान्तोंमें अटूट विश्वास है, भारतके मुसलमानोंके लिए कोई भय नहीं है।"

पठानोंपर कहाँतक अत्याचार किया जा रहा है इसका उदाहरण देते हुए ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँने कहा कि जनवरी १९४८ में एक ख़ुदाई खिदमतगार नौजवान मेरे पास आकर रहने लगा था। उन दिनों प्रान्तमें उपद्रव हो रहे थे इसलिए उसने अपने साथ एक पिस्तौल रख ली थी कि कहीं यदि उसकी जानपर

कोई खतरा आया तो इससे वह अपनी रक्षा कर सकेगा। यह पिस्तौल उसके चाचाकी थी। उस लड़के और उसके चाचा दोनोंने कहा कि बादशाह खाँको पिस्तौलसे कोई सरोकार नहीं है और न तो उन्हें इसकी कोई जानकारी है, फिर भी उसे पकड़ लिया गया और उसपर दो रुपयेका जुर्माना हुआ और जुर्माना न देनेपर अदालत उठनेतककी कैदकी सजा दी गयी। लड़केने जुर्माना देनेसे इनकार कर दिया।

उन्होंने अहिंसामें अपनी आस्था दुहराते हुए कहा : "मैं व्यावहारिक आदमी हूँ। मैं किसी भी मामलेमें नतीजेको देखकर ही फैसला करूँगा। इस समय मेरा मुख्य काम इन्तज़ार करना और सारी बातोंको ग़ौरसे देखना होगा। मैं अपने सभी कामोंमें अहिंसाका पालन करूँगा। अहिंसा मेरे जीवनका आधार है।"

जब २३ फरवरी १९४८ को खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कराचीमें पाकिस्तान पार्लमेण्टकी पहली बैठकमें भाग लिया और पाकिस्तानके प्रति निष्ठाकी शपथ ली तो जिनाने उन्हें चायपानके लिए आमन्त्रित किया। जिनाने उन्हें गलेसे लगाते हुए कहा, "आज मैं यह अनुभव करता हूँ कि मेरा पाकिस्तानका स्वप्न पूरा हो गया।" दूसरे दिन जिनाने खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको भोजनके लिए बुलाया। उनमें देरतक पाकिस्तानके भविष्यके सम्बन्धमें वार्ता होती रही। जिनाने कहा कि मैं सांविधानिक गवर्नर जनरल हूँ और मेरी दृष्टिमें सभी पार्टियाँ मुस्लिम लीग संघटनके समान हैं। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने जिनाको सीमाप्रान्त आनेका न्योता दिया और उनसे अनुरोध किया कि वे उन्हें उनका स्वागत करने और खुदाई खिदमतगारोंसे उनका परिचय करानेका मौक़ा दें।

जब ५ मार्च, १९४८ को पहली बार पाकिस्तान पार्लमेण्टमें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने उर्दूमें भाषण किया तो सबकी आँखें उनकी ओर लगी हुई थीं :

"यह कटौतीका प्रस्ताव पेश करते हुए मेरा उद्देश्य इस सभामें पाकिस्तानी प्रशासनके संबंधमें कुछ कहना है। मैं इस प्रस्ताव द्वारा पाकिस्तान सरकारको गिराना नहीं चाहता और न तो उसकी ग़लतियाँ ही निकालनेका मेरा कोई इरादा है। मैं इस सरकारको कुछ जिम्मेदार लोगों और दूसरे लोगों द्वारा मेरे और मेरे दलके विरुद्ध पैदा की गयी कुछ ग़लतफ़हमियोंपर भी रोशनी डालना और उन्हें दूर करना चाहता हूँ।

"सबसे पहले मैं यह कहना चाहता हूँ कि मुझपर और मेरे दलपर यह आरोप लगाया जाता है कि हम पाकिस्तानको बरबाद कर देना चाहते हैं और हमारा इरादा उसे टुकड़े-टुकड़े कर देनेका है। मैं इस संबंधमें कोई तर्क देना

नहीं चाहता। मुझे सिर्फ इतना ही कहना है कि मुझे अपने सूबेमें जब भी बोलनेका मौक़ा मिला है मैंने इस मुद्देपर काफ़ी रोशनी डाली है। फिर भी पाकिस्तानके जिम्मेदार लोगोंको इस बारेमें शुबहा है कि मैं पाकिस्तानका दोस्त हूँ या दुश्मन। वे सोचते हैं कि मैं शायद पाकिस्तानको बरबाद कर डालना चाहता हूँ। लेकिन वे इससे इनकार नहीं कर सकते कि मैंने इस ग़लतफ़हमीको दूर करनेकी बार-बार कोशिश की है। उन्हें यह भी मालूम है कि मुझे जब भी अपने सूबेके विभिन्न क्षेत्रोंकी जनताके सामने बोलनेका मौक़ा मिला है मैंने उनसे साफ़-साफ़ कहा है कि मेरी यह राय रही है कि भारतका बँटवारा नहीं होना चाहिए क्योंकि आज हमने भारतमें इस बँटवारेका नतीजा देखा है—हज़ारों-हज़ारों जवान और बुड्ढे लोग, मर्द और औरतें कत्ल कर दी गयी हैं। वे बरबाद हो गये हैं। लेकिन अब, जब कि बँटवारा हो ही गया, उसका झगड़ा खत्म हो गया।

"मैंने भारतके बँटवारेके ख़िलाफ कई बार भाषण किये हैं लेकिन सवाल तो यह है कि क्या मेरी बात किसीने सुनी? हमने सीमाप्रान्तमें मुस्लिम लीग सरकारसे कहा कि हम आपको यहाँ सरकार बनानेका एक मौक़ा देते हैं लेकिन सरकारने पठानोंके साथ जो व्यवहार किया वह इतना ख़राब था कि उसे बड़ी मुश्किलसे ही बर्दाश्त किया जा सकता था। लोग मेरे पास आकर पूछते थे : "आखिर अब आप क्या करना चाहते हैं क्योंकि पाकिस्तानने हमारी जो हालत कर रखी है वह काबिले बरदाश्त नहीं है। हम लोग ब्रिटेन जैसी दुनियाकी उस बड़ी ताक़तके ख़िलाफ़ लड़ चुके हैं जो हमपर हुकूमत करना चाहती थी।" मैंने उन्हें समझाया कि आज स्थिति बदल गयी है। वह तो विदेशी जुआ था, आज मुसलमानोंकी अपनी हुकूमत है। मैंने बार-बार पाकिस्तान सरकारसे कहा है कि हम इस बातके लिए तैयार हैं कि आप हमपर शासन करें। भाई-भाईमें लड़ाई करानेकी कोशिशें की गयीं ताकि वे एक-दूसरेके कत्ले आममें लग जायें। लड़ाई लड़ानेवालोंकी यह ख़्वाहिश थी। वे उम्मीद करते थे कि इस तरहसे उनके वतनसे प्यार करनेवाले जज़बात लड़ाई-झगड़ेकी ओर मुड़ जायँगे और सरकारका रचनात्मक काम रुक जायगा। मैं इस ख़तरेको पूरी तरह समझता हूँ। आप मेरे बारेमे चाहे जो भी सोचें, मैं ध्वंस नहीं, निर्माण चाहनेवाला शख़्स हूँ। यदि आप मेरी ज़िदगीका हाल पढ़ें तो आपको पता चलेगा कि मैंने अपनी सारी ज़िन्दगी वतनकी भलाई और तरक्कीमें लगा दी है। मैं आपको यह भी बता दूँ कि खुदाई खिदमतगार एक सामाजिक आन्दोलन था, न कि राजनीतिक। लेकिन यह एक लंबी कहानी है। मैं इसे दुहराना नहीं चाहता। इस सामाजिक आन्दोलनको राज-

नीतिक आन्दोलनमें बदलनेके लिए कौन जिम्मेदार थे ? किसने हमें कांग्रेसके साथ कर दिया ? अंग्रेजोंने। मैं इसकी चर्चा सिर्फ यहीं नहीं कर रहा हूँ, मैंने इसका जिक्र ऊँचेसे ऊँचे अंग्रेज अधिकारियोंके सामने भी किया है क्योंकि खुदाने मुझमें ऐसी हिम्मत दी है।

"हमपर यह इल्जाम लगाया जाता है कि खुदाई खिदमतगार सरकारको रचनात्मक काम नहीं करने देते क्योंकि ऐसा कोई काम शान्तिके माहौलमें ही हो सकता है। किन्तु हम यह घोषणा कर चुके हैं कि यदि पाकिस्तान सरकार हमारी जनता और हमारे वतनके लिए कोई भी काम करेगी तो हम उसका साथ देंगे। मैं यह फिर कह देना चाहता हूँ कि मैं पाकिस्तानकी बरबादी नहीं चाहता। बरबादीमें हिन्दू, मुसलमान, सीमाप्रान्त, पंजाब, बंगाल या सिंध किसीकी भलाई नहीं है। सिर्फ निर्माणसे ही भलाई हो सकती है। मैं आपको यह साफ़-साफ़ बता देना चाहता हूँ कि मैं बरबादी करनेमें किसी आदमीकी मदद नहीं कर सकता। मैं इस सदनके सामने यह घोषणा करता हूँ कि अगर आपके सामने कोई रचनात्मक योजना है, अगर आप सिद्धान्तसे नहीं, व्यावहारिक ढंगसे हमारी जनताके लिए कोई रचनात्मक काम करना चाहते हैं तो मेरी जनता और मेरी अपनी सेवाएँ आपको समर्पित हैं।

"मैं पिछले सात महीनोंसे पाकिस्तानी प्रशासनको देख रहा हूँ किन्तु मुझे इस प्रशासन और ब्रिटिश प्रशासनमें कोई फ़र्क नजर नहीं आता। मैं ग़लत हो सकता हूँ लेकिन आम लोगोंकी यही राय है। अगर आप किसी ग़रीबके पास जाकर उससे पूछें तो मेरे विचारकी पुष्टि हो जायगी। आप उनकी आवाज़को ताक़तसे दबा सकते हैं। लेकिन याद रखिये ताक़त या बलप्रयोग बहुत दिनोंतक नहीं चल सकता; ताक़तसे सिर्फ कुछ दिनोंतक काम चलाया जा सकता है। अगर आप ताक़तका प्रयोग करेंगे तो जनता आपको नफ़रत करने लगेगी। इसे छोड़िए, मैं आपसे कहता हूं अंग्रेजोंके वक़्तसे भी आज अधिक भ्रष्टाचार है; ब्रिटिश हुकूमतमें जितनी बेचैनी थी आज उससे भी ज़्यादा है।

"मैं यहाँ दोस्तकी हैसियतसे आया हूँ। मैं आपके सामने जो तथ्य पेश कर रहा हूँ आप कृपया उसपर ग़ौर करें। अगर आप उन्हें पाकिस्तानके लिए उपयोगी समझें तो बहुत अच्छा, नहीं तो उनकी उपेक्षा कर दें। हम लोग अंग्रेजोंके खिलाफ़ क्यों लड़ते थे ? हम उन्हें मुल्कसे निकाल बाहर करनेके लिए लड़ रहे थे ताकि यह मुल्क हमारा हो जाय और हम इसपर हुकूमत कर सकें। हम आज पुरानी हुकूमतके वक़्तसे भी ज़्यादा अंग्रेजोंको पाते हैं। इतना ही नहीं, ज़्यादा-से-

ज़्यादा अंग्रेज हुकूमतके लिए बाहरसे बुलाये जा रहे हैं। हमारी बदकिस्मती है कि आज भी वही पुरानी नीति चल रही है—हर जगह वही पुराना तरीक़ा अख्तियार किया जा रहा है फिर चाहे वह सरहदी सूबा हो या कबायली इलाक़ा। हमें इसमें कोई तबदीली नहीं दिखाई देती। हमारे हिन्दू भाइयोंने अपने सूबोंमें हिन्दुस्तानी गवर्नरोंकी नियुक्ति की है, न सिर्फ मर्द बल्कि एक औरत भी गवर्नर हो गयी है। क्या बंगाल या पंजाबमें ऐसे मुसलमान नहीं हैं जो हमारे गवर्नर हो सकते हों? जिन अंग्रेजोंको हमने बाहर निकाल दिया था उन्हें फिरसे बुला लिया गया है और हमारे सिरपर बैठा दिया गया है। क्या यही इस्लामी भाईचारा है? प्रशासनमें सिर्फ यही बुराई नहीं है, और भी बुराइयाँ हैं। सरकारने कुछ अध्या-देश जारी किये हैं। मुझे यह देखकर सबसे ज़्यादा तकलीफ़ होती है कि जब कभी सरहदी सरकार कोई विज्ञप्ति जारी करती है तो उसकी भाषा और भावना वही होती है जैसी पुराने वक़्तमें हुआ करती थी। अगर कोई झूठ बोलता था तो वह गैरमुल्की था। वह यहाँ हमारी तरक्कीके लिए नहीं आया था। वह हमारे शोषणके लिए और स्वार्थ सिद्ध करने आया था। लेकिन हमें अंग्रेजोंके खिलाफ़ कोई शिकायत नहीं करनी है। हमें पाकिस्तानके खिलाफ़ शिकायत करनी है क्योंकि वे हमारे भाई हैं और यह सरकार हमारी सरकार है।

"अब हमें पुराने अंग्रेजी हथकण्डे छोड़ देने चाहिए। अगर हमने पुराने तरीक़े जारी रखे तो जिस पाकिस्तानको हमने अनेक कठिनाइयोंसे पाया है उसे खो देंगे।

"मैं आपसे और एक बात कहना चाहता हूँ। मुझपर प्रायः यह इल्ज़ाम लगाया जाता है कि मैं पठानोंमें पृथक् राष्ट्रीयताकी भावना पैदा करता हूँ और प्रान्तीयताको बढ़ावा देता हूँ। दरअसल इस प्रान्तीयताको आप पैदा कर रहे हैं। हम पठान ये सारी बातें नहीं जानते। हमें यह मालूम ही नहीं है कि प्रान्तीयता किस चिड़ियाका नाम है। पठानोंमें ऐसी कोई चीज़ है ही नहीं। आप सिंधका उदाहरण लें। क्या हमने सिंधमें प्रान्तीयता पैदा की है? सवाल यह है कि प्रान्तीयता पैदा कैसे होती है?

बीचमें गज़नफ़र अली खाँने रोकते हुए पूछा, "हमारा विश्वास पाकिस्तानमें है, प्रान्तीयतामें नहीं।"

खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँने पूछा, "पंजाबियोंको छोड़कर प्रान्तीयता और किसने सिखायी? हो सकता है कि आप इस्लामके नामपर जनताको कुछ दिनों-तक गुमराह करते रहें लेकिन यह बहुत दिनोंतक नहीं चल सकता। यह एक

अस्थायी चीज़ होगी। मैं पूछना चाहता हूँ कि आखिर ये परिस्थितियाँ किसने पैदा कीं और क्यों ? यह प्रकृतिका नियम है कि कोई भी चीज बिना कारणके नहीं होती और इसीसे कहता हूँ कि ये हालात बिना किसी कारणके नहीं पैदा हुए हैं।"

प्रधान मन्त्री लियाकत अली खाँने कहा : "ये हालात पैदा किये गये हैं।"

ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ : "मैं आपको बताना चाहता हूँ कि आप जितना ही इन बातोंपर जोर देंगे कटुता उतनी ही बढ़ेगी। मैं कटुता पैदा नहीं करना चाहता। आप मेरी प्रकृतिसे वाकिफ़ हैं। मुझे तक़रीर करना पसंद नहीं है। मैं ऐसा पहली बार कर रहा हूँ और यह भी सिर्फ इसलिए कि मैं आपको अपने विचारोंसे अवगत कराना चाहता हूँ।"

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कहा : "प्रधान मन्त्रीके पेशावरके दौरेके वक़्त हमारे मुस्लिम लीगी भाइयोंने भी उनके सामने पख्तूनिस्तानकी माँग पेश की थी। लेकिन उन्होंने कहा था कि मैं खैबरसे लेकर चटगाँवतक सभी मुसलमानों-को एक करना चाहता हूँ। लेकिन वैसी सूरतमें एक पट्टीमें बसे हुए उन पठानों-में एका क़ायम करनेपर आपको क्या एतराज़ हो सकता है जिन्हें अंग्रेजोंने एक-दूसरेसे अलग कर दिया था और यह काम कैसे इस्लामके खिलाफ़ है ? हम चाहते हैं कि आप सभी पठानोंको एक करनेमें हमारी मदद करें।"

फ़ीरोज खाँ नूनके कहा : "और तब आप अफगानिस्तानमें शामिल हो जायँ !"

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने जवाब दिया : "हम सिर्फ आपके ही साथ रह सकते हैं, अफगानिस्तानके साथ नहीं। हमपर आपका दावा अफगानिस्तानसे ज्यादा है।"

खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँने सवाल किया : "जब हमारे बंगाली भाई खैबरसे दो हजार मीलकी दूरीपर रहते हुए भी पाकिस्तानमें शामिल हो सकते हैं और हमारे भाई हो सकते हैं तो हमारे ही अपने पठान भाई, जो हमारे इतने करीब हैं और जिन्हें अंग्रेजोंने इसलिए टुकड़े-टुकड़े कर रखा था कि उनकी एकतासे उनके लिए खतरा था, क्यों नहीं पाकिस्तानके साथ रह सकते ? आप हमारे भाई हैं तो हमसे डरते क्यों हैं ?"

लियाकत अली खाँने कहा : "मेहरबानी करके आप अपनी बातका और खुलासा कीजिए।"

ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ : "मैं आपको अभी बताता हूँ कि हमारे पठा-

निस्तानका मतलब क्या है । इस सूबेमें रहनेवाले लोग सिंधी कहे जाते हैं और उनका मुल्क सिंध है । इसी तरहसे पंजाब और बंगाल पंजाबियों और बंगालियों का मुल्क है । इसी तरह उत्तर-पश्चिमी सरहदी सूबा है । हम वहाँके रहनेवाले लोग एक हैं और हमारा मुल्क पाकिस्तानके अन्दर है; हम भी यही चाहते हैं कि हमारे मुल्कके नामसे ही यह पता चल सके कि यह हम पठानोंका मुल्क है । क्या यह इस्लामके सिद्धांतोंके अनुसार कोई गुनाह है ?"

लियाकत अली : "क्या पठान किसी मुल्कका नाम है या यह एक बिरादरी है ?"

खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँने कहा : "पठान एक बिरादरीका नाम है और हम उस मुल्कका नाम पठानोंके नामपर रखेंगे । मैं यह समझाना चाहता हूँ कि भारतके लोग हमें पठान कहते थे और ईरानी लोग हमें अफ़गान कहते थे । हमारा असली नाम पख़्तून है । हम पख़्तूनिस्तान चाहते हैं और चाहते हैं कि डूरण्ड लाइनके इस ओर रहनेवाले सभी पठान एक होकर पख़्तूनिस्तानमें रहने लगें । आप इसमें हमारी मदद करें । यदि आपकी यह दलील है कि इससे पाकिस्तान कमज़ोर होगा तो मैं कहूँगा कि एक पृथक् राजनीतिक इकाई बना देनेसे पाकिस्तान कभी कमज़ोर नहीं हो सकता । इससे वह और भी मजबूत हो जायगा । बहुत-सी दिक्कतें विश्वासकी कमीके कारण पैदा होती हैं । जब विश्वास पैदा हो जाता है तो सभी कठिनाइयाँ दूर हो जाती हैं । सरकार विश्वासके आधारपर चलायी जाती है, अविश्वासके आधारपर नहीं ।

"दूसरी बात यह है कि हमसे मुस्लिम लीगमें शामिल हो जानेके लिए कहा जाता है । मेरे विचारसे मुस्लिम लीग अपना काम पूरा कर चुकी है । पाकिस्तान बन जानेके बाद उसका काम ख़त्म हो गया है । अब हमारे देशमें आर्थिक आधारपर ऐसी संघटित पार्टियाँ होनी चाहिए जो मौजूदा असमानताओंको खत्म कर सकें । अगर हममें कोई मतभेद हो तो हमें उसे विचार-विमर्शसे दूर करना चाहिए । इस्लाम सहिष्णुताकी शिक्षा देता है ।

"पाकिस्तान ग़रीब देश है । उसकी सरकार सरमायादारों जैसी नहीं होनी चाहिए । हमें यह पता लगाना है कि पाकिस्तानका राज कैसे चलाया जाय ।

"हमारे सामने अपने पुराने पुरखोंकी महान् परंपरा है । हमारे जिन पैगम्बरोंने इस्लामी सल्तनतका निर्माण किया वे तीन ही हैं । जबतक हम अपने इन नेताओंकी कुर्बानी और सहानुभूतिकी भावनाका अनुकरण नहीं करेंगे हम अपने राज्यका निर्माण ठोस बुनियादपर नहीं कर सकेंगे । आप सब हजरत अलीके नाम

से परिचित हैं। उन्होंने जो कुछ भी किया इस्लाम और जनताके लिए किया। कहा जाता है कि एक बार उनके विरोधीने उनके मुँहपर तमाचा मार दिया। हजरत अलीने उसे छोड़ दिया क्योंकि उस वक़्त उसकी जान ले लेनेसे निजी ईर्ष्या-द्वेषकी भावना प्रकट होती। यही भावना हमारी भी होनी चाहिए। अब हम हजरत अबू बकरकी ज़िंदगीपर विचार करें। खलीफाके रूपमें उनको बहुत थोड़ी रकम भत्तेमें मिलती थी। उन्होंने वही रकम सभी दूसरे मुसलमानोंके लिए निश्चित कर दी। उनका यह कहना था कि हर आदमीके जीवनकी आवश्यकताएँ समान हैं। ऐसा नहीं जैसा आप रहते हैं कि आपकी आवश्यकता ज्यादा है, दूसरोंकी कम। यही बात हजरत उमरके बारेमें भी है। जो मुस्लिम साम्राज्य इतने दिनोंतक चला उसका निर्माण अबू बकर और उमरने किया था। आपको मालूम होगा कि अगर कोई मामूली आदमी भी हजरत उमरकी आलोचना करने का साहस करता था तो हजरत उमर उसे कभी डराते या धमकाते नहीं थे और न तो उससे गुस्सा होते थे। हजरत उसके सामने सच्चे तथ्य रखकर उसे संतुष्ट करनेकी कोशिश करते थे। ऐसे लोगोंके नेतृत्व और मार्गदर्शनमें मुसलमान कभी गुमराह नहीं हो सकते। अगर आप वही भावना पैदा करते हैं तो आपका राज्य भी उसी तरह दृढ़ हो सकता है। जब उन्हें खलीफा चुना गया और उनके भत्तेका सवाल उठा तो उन्होंने कहा, "मैं मुसलमानोंका सेवक हूँ और मुझे मदीनाके किसी भी मजदूरको मिलनेवाला भत्ता ही मिलना चाहिए। इसीलिए मैं कहता हूँ कि अगर पाकिस्तान ग़रीब है तो हमें इसी सिद्धान्तपर उसका शासन चलाना चाहिए। अपने मौजूदा रवैयेसे पाकिस्तानकी तरक्क़ी नहीं हो सकती। अगर पाकिस्तानकी सरकार इस्लामी सिद्धान्तपर चलायी जाय तो मैं निश्चय ही उसका समर्थन करूँगा।

"पाकिस्तानके बारेमें मेरा खयाल है कि उसे आज़ाद पाकिस्तान होना चाहिए। उसे किसी विशेष बिरादरी या व्यक्तिके प्रभावमें नहीं रहना चाहिए। पाकिस्तानको उसकी सारी जनताके लिए होना चाहिए। सभीको समान रूपसे लाभ होना चाहिए और मुट्ठीभर लोगों द्वारा सबका शोषण नहीं होना चाहिए। हम चाहते हैं कि पाकिस्तानकी सरकार उसकी जनताके हाथोंमें हो। जहाँतक प्राविधिक विशेषज्ञोंका सवाल है पाकिस्तान उन्हें अमेरिका और इंगलैण्ड जैसे देशोंसे बुला सकता है लेकिन जहाँतक प्रशासनका सवाल है मैं इस बातसे सहमत नहीं हो सकता कि पाकिस्तानमें योग्य आदमियोंकी कमी है और यहाँके सारेके सारे लोग निकम्मे हैं। जब हिन्दू अपने राजकाजका काम खुद चला सकते हैं तो हम क्यों

नहीं चला सकते ? बहुत सारे अंग्रेजोंकी जगह यहाँकी सरकारी नौकरियोंमें बर-करार हैं और नये अंग्रेज चलते आ रहे हैं। मैं यह जोर देकर कहना चाहता हूँ कि इससे पाकिस्तानकी भलाई नहीं हो सकती।"

अखबारोंको दिये गये एक वक्तव्यमें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने अपने और खुदाई खिदमतगारोंपर किये गये जुल्मोंकी एक लंबी सूची दी। उन्होंने कहा कि पाकिस्तानकी सरकारने इस तथ्यसे इनकार कर दिया है कि उसने 'पख्तून' पत्र-का प्रकाशन बंद कर दिया है। उसका कहना है कि सिर्फ जिलेके अधिकारियोंने प्रकाशकके त्यागपत्र दे देनेके बाद उसका प्रकाशन जारी रखनेकी घोषणा स्वीकार नहीं की है। "अगर किसी पत्रके प्रकाशनके घोषणापत्रको अस्वीकार कर दिया जाय और इसके फलस्वरूप उसका प्रकाशन बंद हो जाय तो इसे यदि उस अखबारका दम घोंटना नहीं कहेंगे तो किसे कहेंगे ?"

"जहाँतक नागरिक स्वतन्त्रताका सवाल है मुझे मरदान जिलेमें सामाजिक संपर्क स्थापित करनेतककी अनुमति नहीं दी गयी। जब मुझे अदालतमें उपस्थित होना था उस समय फौजदारी कानूनकी दफा १४४ पूरे क्षेत्रपर लागू कर दी गयी। धार्मिक समारोहोंके अवसरपर वही दफा पूरे मरदान और पेशावर जिलों-पर लागू कर दी गयी। सच तो यह है कि उस दफाका उद्देश्य उन लोगोंका दमन करना था जो अधिक खाद्यके लिए आन्दोलन कर रहे थे। किन्तु चूँकि इसका प्रभाव मुस्लिम लीगपर भी पड़ता है इसलिए यह नहीं कहा जा सकता नागरिक स्वतन्त्रता सुरक्षित है। इसके विपरीत इससे इसी आरोपको बल मिलता है कि सरकारी दलके लोगोंके लिए भी बुनियादी आज़ादी खत्म हो गयी है। हज़ारों लोगोंको बिना किसी कानूनी काररवाईके जेलोंमें डाल दिया गया है। यह सब जन सुरक्षा अध्यादेशकी ४० वीं दफाके अन्तर्गत किया गया है। क्या इस संबंधमें सरकार अपने आँकड़े प्रस्तुत कर सकेगी ?"

इसके अतिरिक्त खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कहा कि मैं उस व्यवस्थाके स्वरूप से ठीक-ठीक परिचित नहीं हूँ जिसके द्वारा विरोधी दलोंके समाचारोंका दमन किया जाता है। किन्तु यह तथ्य तो साफ़ ही है कि खुदाई खिदमतगारोंकी दो महत्त्वपूर्ण सभाओंकी काररवाई कहीं भी किसी अखबारमें नहीं छपी जब कि अखबारोंके प्रतिनिधि उनमें मौजूद थे। निश्चय ही अखबारोंके प्रतिनिधियोंने यह सारे कष्ट बिना किसी उद्देश्यके नहीं उठाया है।

"जिस समय मुल्कपर विदेशी हुकूमत थी ये सारी बातें समझमें आ सकती थीं। किन्तु आज, जब कि पाकिस्तान आज़ाद हो गया है और यह कहा जाता है

कि वहाँ एक लोकप्रिय इस्लामी सरकारकी स्थापना हो गयी है, यह बात मेरी कल्पनासे बाहर है कि प्रान्तीय सरकार विदेशी साम्राज्यवादियोंकी नौकरशाहीके वे ही पुराने हथकण्डे क्यों अपना रही है।

अखबारोंमें एक हृदयस्पर्शी घटनाका विवरण इस प्रकार छपा था : "तीस खुदाई खिदमतगार, जो खुद ग़रीब हैं, अपने खर्चेसे आये हैं और उन्होंने अपनेको बादशाह खाँके अंगरक्षकोंमें शामिल कर लिया है। वे जहाँ कहीं भी जाते हैं बारी-बारीसे उनपर पहरा देते रहते हैं ताकि कहीं कोई उनपर हमला कर उनकी जान न ले ले।"

कराचीमें बादशाह खाँके सम्मानमें सिंधके अल्पसंख्यक समुदायकी ओरसे एक दावत दी गयी। इसमें उस समुदायके एक प्रतिनिधिने कहा कि महात्मा गांधीके जीवित रहते हम लोग अपनी कठिनाइयोंको हल करनेके लिए उनके पास जाया करते थे किन्तु उनके देहान्तके बाद हमें बादशाह खाँके पास जाना होगा क्योंकि हम सबके लिए "महात्माजीके बाद वे ही दूसरे आदरणीय व्यक्ति" हैं। इसीलिए उन्होंने बादशाह खाँसे अनुरोध किया कि हमारे सामने आगे जो कठिन समय आनेवाला है उसमें आप हमारा मार्ग-दर्शन करें। इसके उत्तरमें बादशाह खाँने उनसे कहा कि यह सबके लिए परीक्षाकी घड़ी है। सरहदी सूबेमें खुदाई खिद-मतगारोंका मन्त्रिमण्डल बन गया था लेकिन कुछ साल बाद वह इसलिए खत्म हो गया कि वह जनताकी उतनी सेवा न कर सका जितनी उसे करनी चाहिए थी। उसने पूरी तरह अपने संकल्प पूरे नहीं किये। मैंने कांग्रेस कार्य-समितिको सरहदी मन्त्रिमण्डलकी इस कमज़ोरीसे आगाह किया था लेकिन कांग्रेस कार्य-समिति या खुद मन्त्रिमण्डलने इस ओर ध्यान नहीं दिया और परिस्थितिमें कोई सुधार नहीं किया। "दुनियामें आखिरमें सच्चाई और धार्मिकताकी ही विजय होगी; सिर्फ निःस्वार्थ और ईमानदार नेता ही देशकी तरक्क़ी कर सकते हैं। भारत और पाकिस्तान दोनों देशोंके नेताओंमें जब ये गुण दिखाई देने लगेंगे तभी इन देशोंकी खुशहालीका रास्ता खुल सकेगा।" खुदा इंसानका बराबर इम्तहान लेता रहता है लेकिन इन इम्तहानोंमें वे मुल्क, संघटन और व्यक्ति ही अन्तमें कामयाब होते हैं जो विपत्तियोंका मुकाबला धैर्य और हिम्मतके साथ कर सकते हैं। इम्तहान-की घड़ीमें आप लोगोंको गुस्सेपर काबू पाना चाहिए और नैतिकता और आदर्शों-की ठोस संहिता बनाकर उसका हर कठिनाईके दौरान कड़ाईसे पालन करना चाहिए।

पठानोंकी एक सभामें, जिसमें अधिकांश मजदूर थे, उन्होंने कहा कि पिछले

पचीस सालोंसे अंग्रेजोंके खिलाफ़ लड़ी जानेवाली आज़ादीकी लड़ाईमें उन्होंने सबसे आगे रहकर मोर्चा सँभाला है और उन्हींके कारण पाकिस्तानका निर्माण हो सका है। पाकिस्तानी प्रशासनके सिरपर बैठे सरमायादार लोग पठानोंसे इस-लिए डरते हैं कि वे निःस्वार्थ हैं और बराबर मुल्कके लिए हर तरहकी तकलीफ़ उठानेके लिए तैयार रहते हैं। पाकिस्तान बननेके बादसे ही सरहदी सूबेमें अध्या-देशका शासन चल रहा है। पठानोंको अपने भविष्यके संबंधमें आशंका है और वे यह जानना चाहते हैं कि आखिर पाकिस्तानमें उनका क्या स्थान है। यदि उनके साथ समानताका व्यवहार करनेका इरादा है तो उनसे इसकी सलाह ली जानी चाहिए कि पाकिस्तानमें प्रशासनका कौन-सा तरीक़ा हो और इसके अलावा दूसरे मामलोंमें भी उनके विचार जानने चाहिए। भारतमें प्रांतोंमें गवर्नरोंकी नियुक्तिके समय प्रान्तीय मन्त्रिमण्डलोंसे सलाह ली जाती है जब कि सीमाप्रांतमें एक ऐसे नौकरशाहको पख्तूनोंपर लाद दिया गया है जिससे वे नफ़रत करते हैं।

कराचीमें अपने तीन महीनेके घटनाबहुल प्रवासका वर्णन करते हुए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ लिखते हैं :

"बँटवारेके बाद अयूब खाँके भाईने, जो संविधान सभाके सदस्य थे, मेरे सामने यह प्रस्ताव रखा कि हम दोनों पार्लमेण्टकी बैठकमें शामिल हों और यह देखें कि हम वहाँ क्या कर सकते हैं। बादमें मुझे पता चल गया कि उनका इरादा उस समयकी अशान्त परिस्थितिमें अपना उल्लू सीधा करना था। आगे चलकर उन्होंने हम लोगोंके खिलाफ़ काम करनेके लिए ह्विप नियुक्त कर दिया और उनकी इस सेवाका उन्हें यह इनाम मिला कि वे उपमन्त्री बना दिये गये।

"मार्च १९४८ में हमने सिंधके श्री सैयदके साथ अवामी पार्टीकी स्थापना की। लियाकत अलीने पार्लमेण्टमें किये गये अपने एक भाषणमें हमारी निन्दा करते हुए 'हिन्दू' और 'गद्दार' कहा। उन्होंने इस सिलसिलेमें उर्दूका एक शेर भी पढ़ा जिसका यह मतलब होता है कि उन्होंने यह सोच रखा था कि आखिरमें हम लोग उनके साथ एक हो गये हैं किन्तु बादमें यह देखकर निराशा हुई कि हम अब भी अजनबी हैं। इसके जवाबमें मैंने फिरसे यह बात दुहरायी कि हम मुसल-मान हैं और उन्हींके भाई हैं बशर्ते वे हमें इसी रूपमें कबूल करें। मैंने कहा कि हम पाकिस्तानी हैं; हमने पाकिस्तानी झण्डेके प्रति निष्ठाकी शपथ ली है। मैंने लियाकत अलीसे पूछा कि क्या यह ताज्जुबकी बात नहीं है कि जिन्हें नमाज पढ़ने-की भी तमीज न हो और जो लोग शरणार्थियोंके रूपमें पाकिस्तान आये हों वे लोग भी हमारे मुसलमान और पाकिस्तानी होनेके अधिकारपर एतराज करें?

लियाकत अलीने यह कहकर कि यह इनकिलाब है अपनी बातकी लीपा-पोती कर दी।

"डाक्टर एम० ए० अंसारी मेरे और गुलाम मुहम्मद दोनोंके दोस्त थे। इसीलिए उनके मार्फत गुलाम मुहम्मद हमें भी जानते थे। उन्होंने हमसे कहा कि यदि हम उनके दलमें शामिल हो जायँ तो वे हमारे नामजद उम्मीदवारोंको केन्द्रीय मन्त्रिमण्डलमें पहुँचा देंगे और हमें अम्बेसडरोंकी नियुक्तिमें भी उचित भाग देंगे। हमने उद्देश्योंके बुनियादी तफरकेके आधारपर उनके दलमें शामिल होनेसे इनकार कर दिया।

"कराचीमें जिनाने मुझे अपने साथ खाना खानेकी दावत दी। खानेके बाद उन्होंने मुझे रोक रखा और अलग कोठरीमें ले गये। उन्होंने पूछा कि 'आप हमारे साथ काम क्यों नहीं करते?' मैंने उनसे कहा कि हमारा काम मुख्यतः सामाजिक है। स्वयं आपने केन्द्रीय सभामें एक वक़्त, जब कि अंग्रेज सरकारने हमारे आन्दोलनको राजनीतिक करार दिया था तो हमारे पक्षका समर्थन किया था। आपने कहा था कि ब्रिटिश सरकारने ही ऐसी हालत पैदा कर दी जिससे हमारा सामाजिक काम करना असंभव हो गया और हमें जबर्दस्ता लाचार होकर राजनीतिमें आना पड़ा। मैंने पूछा कि इस सूरतमें, जब कि अभी उस दिन लियाकतने हमें 'हिंदू' और 'गद्दार' कहा है, एक साथ काम करनेका गुंजाइश ही कहाँ रह जाती है। जिनाने क्षमा-याचनाके स्वरमें कहा कि लियाकतकी फब्तियाँ बड़ी बेजा और गैरमुनासिब हैं जिसके लिए मुझे अफ़सोस है।

"हमने अपने सामाजिक कार्यमें मुस्लिम लीगसे सहकार करनेकी प्रार्थना की थी। इससे निराश होनेपर ही हम कांग्रेसके पास गये। मैंने उनसे कहा कि 'मेरा यह विश्वास है कि किसी भी पिछड़ी जनतामें स्वस्थ राजनीतिक भावनाका उदय नहीं हो सकता और बिना स्वस्थ राजनीतिक भावनाके किसी तरहके लोकतन्त्र-की स्थापना संभव नहीं है। इसीलिए मैंने अपनेको सामाजिक कार्यमें लगा रखा है।' इससे जिना बहुत प्रभावित हुए। वे अपनी कुर्सीपरसे उठकर खड़े हो गये और मुझे गलेसे लगा लिया। उन्होंने मुझे यथाशक्ति हर तरहकी मदद देनेका वादा किया। मैंने उनसे कहा कि, मैं आपकी मदद नहीं चाहता, मैं आपका विश्वास और सहकार चाहता हूँ।"

"उन्होंने कहा कि मैंने अभी ही दो लाख चरखोंका आर्डर कर दिया है। मैं सरहदी सूबेकी अपनी आगामी यात्रामें खुदाई खिदमतगारोंसे मिलूँगा। आपको चाहिए कि आप इन चरखोंसे अपना काम आगे बढ़ा दें। मैंने उनसे कहा कि

चरखे बना लेना आसान है लेकिन उन्हें चला पाना उतना आसान नहीं है।

"जिस समय मैं सरहदी सूबेके लिए रवाना हुआ अभी संविधान सभाकी बैठक चल ही रही थी। मैंने कार्यकर्ताओंसे जिनाके साथ हुई अपनी मुलाकातके बारेमें बताते हुए उन्हें रचनात्मक कार्यका एक जोरदार आन्दोलन चलानेको कहा।"

अप्रैल १९४८ के मध्य गवर्नर जनरलके रूपमें जिनाने सरहदी सूबेका अपना पहला सरकारी दौरा किया। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ उनसे मिले और उन्होंने उनसे भावी कार्यक्रमके बारेमें पूछा। १८ अप्रैलको खुदाई खिदमतगारोंकी एक बैठक हुई जिसमें एक प्रस्ताव पास हुआ। इस प्रस्तावको निम्नलिखित पत्रके रूपमें जिनाके पास भेज दिया गया :

"मेरी आपके साथ जो बातें हुई थीं उन्हें मैंने खुदाई खिदमतगार संगठनके प्रतिनिधियों सामने पेश कर दिया है। उन्होंने एकमतसे यह निश्चय किया है कि वे पाकिस्तानको मजबूत बनाने और उसकी हिफ़ाजत करनेमें किसी तरहकी कोशिश न उठा रखेंगे। उन्होंने यह भी तय किया है कि वे ऐसा कोई भी काम न करेंगे जिससे सरकारी काममें किसी भी तरहकी अड़चन पैदा हो लेकिन वे सरकारकी वैध आलोचना करते रहेंगे।"

पेशावरमें जिनासे हुई अपनी मुलाकातके बारेमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ लिखते हैं :

"गवर्नर जनरलके बलूचिस्तान स्थित भूतपूर्व एजेन्ट सर अम्ब्रोज हुण्डास की नियुक्ति सर जार्ज कनिंघमके स्थानपर हुई थी। चीफ सेक्रेटरी, चीफ इंजीनियर, रेवेन्यू कमिश्नर तथा खुफिया विभागके डाइरेक्टर आदि सभी महत्त्वपूर्ण पदोंपर अंग्रेज तथा उनके गुर्गे नियुक्त थे। जब उन्हें यह मालूम हुआ कि हमारा जिनासे समझौता हो गया तो उन्हें इससे भय हो गया। मुख्य मंत्री खान अब्दुल कयूम खाँ और उनके अंग्रेज मददगारोंके गुटको ऐसा लगने लगा कि उनके पैरोंके नीचेकी जमीन खसकने लगी है। उन्होंने सोचा कि अगर अब भी समय रहते उन्होंने कुछ नहीं किया तो हमारे दिन लद गये हैं। वे सब एक हो गये और उन्होंने हमारे बीच दरार डालनेका षड्यन्त्र शुरू कर दिया।

"जब जिना सरहदी सूबेमें आये और खुदाई खिदमतगारोंसे उनकी वार्ताका सवाल सामने आया तो उन लोगोंने उन्हें समझाया कि इस तरहका कोई मौक़ा देना बड़ा ग़लत होगा। अंग्रेज अफसरोंने कहा कि हमने खुदाई खिदमतगारोंके आन्दोलनको सिर्फ चार महीनेकी मोहलत दी, उसका यह नतीजा हुआ कि अब

उसपर काबू पाना मुश्किल हो गया है। उन्हें निर्दोष और निरीह बना देनेका सिर्फ एक ही तरीक़ा है कि उन्हें मुस्लिम लीगमें हजम कर लिया जाय। उन्होंने जिनाको यह भी समझाया कि खुदाई खिदमतगार बड़े ही ख़तरनाक लोग हैं। अगर आप उनके किसी जलसेमें शरीक हुए तो उसका नाजायज़ फ़ायदा उठायेंगे और यह भी मुमकिन है कि वे आपको कत्ल कर दें।

"जब हम लोग जिनासे मुलाकातके लिए समय निर्धारित करने गये तो उन्होंने यह बहाना करके हमारा निमन्त्रण अस्वीकार कर दिया कि किसी गैर-सरकारी सभामें उनके जानेसे दूसरे लोगोंको बुरा लग सकता है इसलिए वे ऐसा कोई भी निमन्त्रण संभवतः स्वीकार न कर सकेंगे। यह उनका कोरा बहाना ही था क्योंकि इसके बाद वे कई गैरसरकारी सभाओंमें शामिल हुए थे।

"अपने खिलाफ इस तरहके झूठे प्रचारको देखते हुए हम जिनाके दौरेसे संबद्ध किसी कार्यक्रममें शामिल नहीं हुए। गवर्नमेन्ट हाउसमें आमन्त्रित होनेके कारण सिर्फ मैं उनसे वहाँपर जाकर मिला। उन्होंने मुझसे पूछा कि क्या बात है जिससे आप मेरे स्वागतमें आयोजित किसी भी जलसेमें नहीं दिखाई पड़े। उनका मतलब यह था कि शायद हम लोगोंने उनके दौरेका बहिष्कार कर रखा है और इस तरह उनका अपमान किया है। मैंने उन्हें जवाब दिया कि मैं स्वभावतः फकीर हूँ। मुझे अमीरोंकी दावतों और स्वागत-सभाओंमें जानेमें संकोच होता है। इसके बाद जिनाने कहा कि मुल्ककी भलाईके लिए हम लोगोंके लिए सही रास्ता यही होगा कि हम मुस्लिम लीगमें पूरी तरहसे मिल जायँ। मैंने उनसे पूछा कि, आप हमारी सेवाओंका लाभ उठाना चाहते हैं या यह चाहते हैं कि हम किसी तरहकी सेवा करनेके लिए अयोग्य और निकम्मे हो जायँ?"

"जिनाने कहा, 'बेशक मैं आपकी सेवाओंका भी फायदा उठाना चाहता हूँ।'

"मैंने उन्हें जवाब दिया, 'तो आप अपनी अध्यक्षतामें खुदाई खिदमतगार संगठनकी स्थापना होने दीजिए। मैं सिर्फ इसी तरहके संगठनके मार्फत काम कर सकता हूँ।'

"जिनाने कहा, 'लेकिन मैं तो आपसे कह चुका हूँ कि मैं आपके साथ हूँ। आप जो भी कहेंगे मैं उससे सहमत रहूँगा। तब आप कोई काम करनेके योग्य क्यों नहीं रहेंगे?'

"मैंने उत्तर दिया : 'मैं इन मुस्लिम लीगियोंके साथ काम नहीं कर सकता।'

'क्यों नहीं?' जिनाने पूछा।

"मैंने कहा, 'वे लोग ईमानदार नहीं हैं, वे सबके सब खुदगर्ज लोग हैं और

जनताको लूटनेका इरादा रखते हैं ।'

"जिनाने पूछा, 'इसका क्या सबूत है ?'

"मैंने कहा : 'हिन्दुओंकी करोड़ों रुपयेकी जायदादपर उन्होंने कब्जा कर रखा है । शरैयतमें जैसा कहा गया है क्या इनमेंसे किसीने इस माल-ए-ग़नीमतमें से अपना हिस्सा जनताके कोषमें दिया है ?'

"जिनाने कहा : 'लेकिन निश्चय ही सबके सब लोग उसी श्रेणीमें नहीं आते । कुछ-न-कुछ अपवाद तो होंगे ही ।'

"मैंने कहा : 'जरूर अपवादस्वरूप वे लोग हैं जिन्हें लूटका माल पानेका मौका नहीं मिला है ।'

"इसके बाद अब्दुल कयूम और उनके गुटके लोगोंने बाकायदा ऐसे कई आदमियों और गुटोंको नियुक्त कर दिया जो हमारे खिलाफ़ जिनाका कान भरने लगे । जिना उनकी बातोंमें आ गये ।

"इस खेलकी आखिरी चाल पहले सिरेकी मक्कारीके साथ चली गयी थी । जिना एक सार्वजनिक सभामें भाषण करनेवाले थे । अब्दुल कयूमने अपने दलालों को सभास्थलकी खास-खास जगहोंपर यह निर्देश देकर तैनात कर दिया था कि जिनाके भाषणके समय वे रह-रहकर उठ खड़े हों और अशान्ति पैदा कर वहाँसे चलते बनें । जब कभी ऐसा कोई आदमी उठता और अशान्ति पैदा करता तो कयूम चिल्ला पड़ते 'अरे, खुदाई खिदमतगारोंका बदमाश, तू चुप क्यों नहीं रहता ?' उनकी यह चाल काम कर गयी । जिनाको यह यकीन हो गया कि खुदाई खितमगार बदमाश लोग हैं और वे उन्हें मार डालनेपर आमादा हैं । सरहदी सूबेसे विदा होनेके पहले ही उन्होंने यह निर्देश दे दिया कि जैसे भी हो खुदाई खिदमतगारोंको कुचल दिया जाय । इस काममें लियाकत अलीको खुली छूट दे दी गयी । उन्हें यह अधिकार भी दे दिया गया कि वे अपनी इच्छासे किसी भी डिप्टी कमिश्नर या गजटेड अधिकारीको मुअत्तल या बरखास्त कर सकते हैं ।

"जिनाकी बिदाईके बाद ग़नीने डाक्टर खान साहबको सूचित किया कि खुदाई खिदमतगारोंके दमनके लिए सर जी. कनिंघमको फिरसे गवर्नरके रूपमें वापस बुलाया जा रहा है । कनिंघमने सरकारी अधिकारियोंको सलाह दी कि वे ऐसा कोई काम न करें जिससे खुदाई खिदमतगार नाराज हो जायें । उन्होंने ग़नीको बुलाकर यह समझाया कि खुदाई खिदमतगारोंको सरहदी मुस्लिम लीगके साथ मिलकर काम करना चाहिए । मैंने ग़नीसे कहा कि वह कनिंघमको साफ़-साफ़

बता दे कि हमारे लिए ऐसा कर पाना शायद ही सम्भव हो। हमारा दृष्टिकोण रचनात्मक है और उनका विध्वंसात्मक। ऐसी सूरतमें हम उनके साथ कैसे काम कर सकते हैं।''

खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँ शीघ्र ही पाकिस्तानी संविधान सभामें शामिल होनेके लिए कराची वापस आये। मईके शुरूमें ही उन्होंने संवाददाताओंसे हुई एक मुलाकातमें यह घोषित कर दिया था कि, ''उनकी पार्टी मुस्लिम लीगमें नहीं शामिल होगी क्योंकि उसमें वैयक्तिक स्वतन्त्रताके अधिकारको कोई मान्यता प्राप्त नहीं। मुस्लिम लीग और खुदाई खिदमतगार संगठनके दृष्टिकोण और कार्यपद्धतिमें जमीन-आसमानका अन्तर है यह तो एक बात हुई, दूसरे मुझे यह देखकर बड़ा दुःख होता है कि मुस्लिम लीग उन लोगोंके खिलाफ़ बड़ी ही बेसब्री और गुण्डागर्दीका व्यवहार करती है जिनके विचार उनसे मेल नहीं खाते और जो ग़लत कामको सही करना चाहते हैं। अनेक प्रमुख लीगी कार्यकर्ताओंको भी सिर्फ़ इसीलिए पंचमांगी कह दिया जाता है कि वे सरहदी मन्त्रिमण्डलके अनेक ग़लत कामोंकी खुली आलोचना करनेकी हिम्मत दिखाते हैं। जब उन नेताओंके प्रति ऐसा व्यवहार किया जा रहा है जिन्होंने पाकिस्तानकी स्थापनाके लिए सरहदी जनमत-संग्रहमें काम किया था तो आज उन खुदाई खिदमतगारोंके मुस्लिम लीगमें शामिल होनेका क्या फायदा है जो पख्तून जातिकी सेवामें हर तरहके विरोधोंका बहादुरीसे सामना करते रहे हैं और जिन्हें आज शामिल होनेके बाद कल ही निकाल बाहर किया जायगा।''

१३ मईको खान अब्दुल गफ्फ़ार खाँने घोषित किया कि उन्होंने खुदाई खिदमतगार आन्दोलनको पाकिस्तानके सभी प्रान्तोंमें फैला देनेका निश्चय किया है। खुदाई खिदमतगारोंका उनका संगठन हालमें बनी उस पाकिस्तानकी अवामी पार्टीके साथ स्वयंसेवक दलके रूपमें कार्य करेगा जिसने उन्हें अपना अध्यक्ष चुना है। खान अब्दुल गफ्फार खाँने कहा कि यह एक गैरसाम्प्रदायिक संगठन है। इसमें पाकिस्तानके सभी प्रगतिशील वर्ग शामिल हैं। इसके सामने उदार लोकतान्त्रिक आदर्श है। इसके उद्देश्य और लक्ष्य इस प्रकार हैं : ''पाकिस्तानको एक ऐसे 'समाजवादी गणतन्त्रोंके संघ' के रूपमें मानकर उसकी सुरक्षा और दृढ़ताके लिए काम करना जो जनताकी ऐच्छिक सहमतिसे सत्ता और अधिकार प्राप्त करता है; सबके लिए पूर्ण स्वायत्तताकी व्यवस्था करना और सभी पड़ोसी राज्यों तथा खासकर भारत संघसे सांस्कृतिक सम्बन्ध बढ़ाना।''

इस नये दलकी स्थापनापर सरकारी अधिकारी सख्त नाराज हो गये। खान

अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको पहले सिरेका विघटनवादी कहा गया। उन्होंने संवाद-दाताओंसे हुई एक भेंटमें कहा कि, "मैं इस बातपर जितना सोचता हूँ उतना ही मेरी समझमें यह नहीं आता कि आखिर सत्ताधारी लोग क्या करनेपर तुले हुए हैं। वे एक ओर तो इस्लामके नामपर मुल्ककी एकता और ताक़त बढ़ाने की अपील करते हैं लेकिन दूसरी ओर वे उन लोगोंके प्रति संकीर्ण दृष्टि और तुच्छ बुद्धिकी नीति बरतते हैं जो पाकिस्तानकी एकता और खुशहालीके बुनियादी सिद्धान्तपर तो उनके साथ एकमत हैं किन्तु इस लक्ष्यको हासिल करनेके लिए वे जो तरीक़ा और दृष्टिकोण अपनाना चाहते हैं वे सत्ताधारियोंसे मेल नहीं खाते। बगलके भारत डोमिनियनमें हिन्दू महासभा और डाक्टर अम्बेडकरका परिगणित जाति संघ कांग्रेसके घोर विरोधी थे किन्तु ज्यों ही भारतने आज़ादी हासिल की सभी प्रतिद्वन्द्वी दल एक दूसरेसे सहयोग करने लगे जिसका परिणाम यह हुआ कि डाक्टर श्यामाप्रसाद मुखर्जी और डाक्टर अम्बेडकर इस समय पण्डित नेहरू और सरदार पटेलके सहयोगी हैं यद्यपि उन्होंने अपने संघटनोंको सत्तारूढ़ कांग्रेस पार्टीमें विलीन नहीं कर दिया है। इसके विपरीत पाकिस्तानमें जो कुछ हो रहा है वह बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण है। अगर यही सिलसिला जारी रहा तो मुस्लिम लीगी नेताओंको नहीं बल्कि सारे मुल्कको तकलीफ़ उठानी होगी। मैं कितनी बार पाकिस्तानके प्रति निष्ठा व्यक्त कर चुका हूँ फिर भी मेरी पार्टीके प्रति उनका जैसा शत्रुतापूर्ण रवैया है उससे वे मुसलमानोंमें फूट डाल रहे हैं। मैंने उनसे साफ़-साफ़ कह दिया है कि, "हम आपके प्रशासनके रास्तेमें किसी तरह-की अड़चन नहीं पैदा करना चाहते; हम सत्ता नहीं चाहते; मन्त्रिमण्डलोंपर आपका ही एकाधिकार बना रहे; आप सिर्फ हमें अपनी जनताकी सेवा अपने तरीक़ेसे करनेकी छूट दे दें।' फिर भी वे हमें शान्तिसे नहीं रहने देना चाहते। उनके अनुसार राज्यके प्रति निष्ठाका केवल यही मानदण्ड है कि एकदलीय शासनके सामने बिना शर्त आत्मसमर्पण कर दिया।"

मई, १९४८ के तीसरे सप्ताहमें संविधान सभाकी बैठक समाप्त होनेपर खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ सरहदी सूबा वापस आ गये। उन्होंने जनताके सामने जमैयत-उल-अवाम (जनता पार्टी) का कार्यक्रम प्रस्तुत किया। उन्होंने इस सिलसिलेमें काजी अताउल्ला खाँके साथ पेशावर और मरदान ज़िलोंके गाँवोंसे अपना दौरा शुरू किया।

मरदानकी एक बहुत बड़ी सभामें भाषण करते हुए उन्होंने कहा कि, "मैंने पाकिस्तान संविधान सभाका नाटक देखा है। पाकिस्तानी नेताओं और पुराने

अंग्रेज नौकरशाहोंमें कतई कोई फरक़ नहीं है। सबसे आसान दलील यह दी जाती है कि पाकिस्तान अभी अपने बचपनके दिनोंसे गुजर रहा है। मैं उन्हें हिन्दुस्तानकी ओर देखनेके लिए आमन्त्रित करता हूँ। वहाँके नेताओंने तूफानी मौसम के बावजूद राज्यके जहाजको सुरक्षित ढंगसे किनारे लगा लिया है। उन्होंने संविधानका प्रारूप तैयार कर लिया है जब कि पाकिस्तानमें अभीतक ऐसी कोई चीज़ नहीं हो सकी है। इससे केवल यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि पाकिस्तानके नेता लोकतान्त्रिक व्यवस्थासे डरते हैं। नेता केवल स्वार्थ सिद्ध करनेमें लगे हुए हैं और पाकिस्तानको अपनी निजी जागीर समझते हैं। यह बड़े खेदकी बात है कि ये सभी शरणार्थी हैं; इनका मूलतः पाकिस्तानसे कोई संबंध नहीं है।"

उन्होंने अपने भाषणमें जिनाको भी नहीं छोड़ा। "पाकिस्तानके गवर्नर जनरलके रूपमें कायदे आजम जिना मुस्लिम राष्ट्रके प्रतिनिधि नहीं हैं। उन्हें ब्रिटेन के बादशाहने नियुक्त किया था और इस रूपमें वे उनके प्रति जिम्मेदार हैं, न कि राष्ट्रके प्रति। मैं इस अवसरपर आपसे साफ़ कह देना चाहता हूँ कि जिस इस्लामी कानून या कुरानके कानूनको लागू करनेके लिए आप इतने दिनोंसे चिल्लाते रहे हैं और जिसके लिए आपके सगे-संबंधियोंने अपनी जानें कुर्बान कर दीं वह पाकिस्तानमें कभी भी लागू न होगा।"

अन्तमें उन्होंने कहा : "मेरे पठान भाइयो, मैं आपको आगाह करना चाहता हूँ कि आप पाकिस्तान राज्यके साझेदार हैं। आप इस राज्यके चौथाई भागके हकदार हैं। अब यह आपके ऊपर है कि आप जग जायें और एक होकर आपका जो कुछ है उसे पानेका संकल्प लें। आप दृढ़ताके साथ एक होकर कार्य करें और पाकिस्तानी नेताओंने आपके चारों ओर जो बालूकी दीवार उठा रखी है उसे ढहा दें। हम मौजूदा हालतको अब बिलकुल गवारा नहीं कर सकते। आप कमर कसकर तैयार हो जायें और पख्तूनोंकी उस आज़ादीकी ओर उनसे आगे बढ़ें जिन्होंने अबतक न जाने कितनी कुर्बानियाँ दी हैं और मुसीबतें सही हैं। हम तबतक चैन न लेंगे जबतक हम पख्तूनिस्तान—अर्थात् ऐसा शासन जो पख्तूनोंका हो, पख्तूनोंके लिए हो और पख्तूनों द्वारा हो, बनानेमें कामयाब न हो जायें।"

असन्तुष्ट जनता बहुत बड़ी तादादमें उनके झण्डेके नीचे एकत्र होने लगी। सरहदी सरकार आतंकित हो गयी और उसने उन्हें गिरफ़्तार करनेका निश्चय किया। उत्तरी ज़िलोंका दौरा समाप्त करनेके बाद वे दक्षिणी जिलोंके लिए रवाना हुए। १५ जून, १९४८ को प्रातःकाल वे कोहाटमें बहादुर खेलके निकट

गिरफ्तार कर लिये गये। उन्हें वहाँ भूखा-प्यासा शामतक रखा गया। उनके पुत्र वली और दो अन्य व्यक्ति भी गिरफ्तार कर लिये गये।

एक प्रेस सम्मेलनमें अब्दुल कयूमने खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँकी गिरफ्तारी-को उचित बताते हुए उनपर आरोप किया कि वे सक्रिय रूपसे सरकारके विरुद्ध खुला षड्यन्त्र करनेमें लगे हुए हैं। उन्होंने कहा कि मेरी सरकारने बहुत पहले उसी समय गिरफ्तार करनेका निश्चय किया था जब वे कराचीसे वापस आये थे और दौरा शुरू किया था। लेकिन पाकिस्तानी सरकारने उत्तर-पच्छिमी सरहदी सूबा सुरक्षा अध्यादेशकी बार-बार याद दिलानेपर भी गवर्नर जनरलके हस्ताक्षर के साथ वापस नहीं किया था। मेरी सरकार उन सभी लोगोंके खिलाफ़ कारर-वाई करना चाहती है जो पंचमांगियोंके रूपमे काम कर रहे हैं।

बन्नूकी मुख्य सड़कपर बंदा दाऊद शाह स्थित एक छोटेसे मिट्टीसे पुते विश्राम-आवासमें खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँपर 'विद्रोह' करने और विद्रोही इपीके फकीरके साथ 'काम करने' का आरोप लगाकर मुकदमा चलानेकी संक्षिप्त काररवाई की गयी। कोहाटके डिप्टी कमिश्नरने, जो उनके खिलाफ़ मुकदमेकी काररवाई कर रहा था, अपने पक्षमें सफाई देनेको कहा लेकिन खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँने सिर्फ यही कहा कि मैं निर्दोष हूँ और इसके लिए कोई भी सबूत देनेसे इनकार कर दिया। इसके बाद उनसे पूछा गया कि क्या वे सरहदी अपराध कानूनकी दफा ४० के अन्तर्गत अपेक्षित जमानत देंगे? खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँने कहा कि अतीतमें मैंने कभी इस तरहकी जमानतें नहीं दी हैं और इस वक़्त भी नहीं दूँगा। इसपर उन्हें तीन सालकी सख़्त क़ैदकी सजा दे दी गयी और पच्छिमी पंजाबके माउण्टगोमरी जेल भेज दिया गया। उन्हें अपने साथका सरोसामान भी ले जानेकी अनुमति नहीं दी गयी और इस यात्रामें जो लोग उनके साथ आये थे उनसे मिलने भी नहीं दिया गया।

पाकिस्तानके क़ैदी

१९४८–५४

पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तकी सरकारको ८ जुलाई सन् १९४८ को एक असामान्य अधिकार मिल गया कि वह जिन संगठनोंको शान्ति और सुरक्षाके लिए आपत्तिजनक समझे उनको अध्यादेशके द्वारा अवैध घोषित कर दे। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके गिरफ़्तार कर लिये जानेके बाद उन्हींके मार्गपर चलते हुए साधारण खुदाई खिदमतगारोंतकने अपनेको एक क्रूर प्रतिशोधके हवाले कर दिया। बादशाह खाँके इस निर्देशके बावजूद कि वे लोग जेलमें न जायँ, एक हज़ारसे भी अधिक खुदाई खिदमतगार कारागारोंमें भर गये। उनमेंसे कुछ पुलिस थानोंके आगे प्रदर्शन करते हुए भावनाजन्य उत्तेजनाकी स्थितिमें गिरफ्तार किये गये। उनसे कड़ा प्रतिशोध १२ अगस्त १९४८ को लिया गया जिसकी तुलना केवल अमृतसरके (जलियाँवाले बाग़के) हत्याकाण्डसे की जा सकती है। उस दिन पुलिसने चारसद्दाके निकट बाब्रा गाँवमें प्रदर्शनके लिए एकत्रित खुदाई खिदमतगारोंकी भीड़पर गोली-वर्षा की और गाँवके सामनेके मैदानको एक खूनी बूचड़खाना बना दिया। सरकारी तौरपर हताहतोंकी संख्यामें पन्द्रह व्यक्ति मृत और पचास घायल बतलाये गये परन्तु बादमें प्राप्त सूचनाओंके आधारपर यह संख्या बढ़कर कई सौतक पहुँच गयी। एक प्रत्यक्षदर्शीने कुरानकी शपथ लेकर कहा कि वहाँ लगभग दो हज़ार लोग मरे। आज भी इस इलाकेका सबसे बड़ा कब्रिस्तान बाब्रा गाँवके पड़ोसमें ही बना हुआ है।

एक प्रत्यक्षदर्शीके कथनानुसार इस गोलीकांडमें पुलिसका एक ताक़तवर जत्था अप्रत्याशित रूपसे १२ अगस्तको वहाँ पहुँच गया। गाँवके लोग नमाज़ पढ़नेके लिए मस्जिदमें एकत्र थे और कुछ बाहर भी थे। पुलिसने बाहर खड़ी भीड़पर आपत्ति की और भीड़को बिना कोई चेतावनी दिये हुए उसपर गोली चला दी। उससे लगभग ५० व्यक्ति मारे गये और ४०० घायल हुए। दूसरी बार उस समय गोली चली जब कि चालीसके लगभग महिलाएँ, जो मस्जिदमें थीं, उससे बाहर निकलीं। उनमेंसे बहुतसी अपने सिरपर कुरानकी छोटी प्रतियाँ रखे थीं। गोलियोंने उस पवित्र ग्रन्थको भी, जिसे वे महिलाएँ लिये जा रही थीं, छेद दिया। गोली चला चुकनेके बाद पुलिसने गाँवको लूटना शुरू कर दिया। उन

लोगोंकी एक चारपाईतकको न छोड़ा गया। गाँवको लूटते समय पुलिसने बिना देखे-भाले अन्धाधुन्ध गोली चलायी जिससे कई बालक मारे गये। गाँववाले आतंकित होकर खेतों और खाइयोंकी ओर भागे लेकिन वे वहाँ भी न बच सके। समाचारपत्र चुप थे। उनको तथ्योंका सही वर्णन प्रकाशित करनेसे रोक दिया गया था।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने बाब्राकी घटनाओंका वर्णन इन शब्दोंमें किया है :

"इन लोगोंकी गिरफ्तारीके लगभग डेढ़ महीने बाद, जब कि डा० खान साहब बाहर थे, खुदाई खिदमतगार जुमाकी नमाज़के लिए चारसद्दा इकट्ठे हुए। वे अपने जेल गये हुए साथियोंके लिए भी प्रार्थना करना चाहते थे और उनकी रिहाईकी मांग करना चाहते थे। वह मस्जिद, जिसमें ये सब लोग एकत्र हुए थे, एक ऊँचे स्थानपर बनी हुई थी। वे सब एक व्यवस्थित ढंगसे जुलूसके रूपमें आगे बढ़ते जा रहे थे। एक वृद्ध पुरुष उनका नेतृत्व कर रहे थे। स्त्रियाँ अपने सिरोंपर कुरानकी प्रतियाँ रखे हुए थीं। अब्दुल कयूमने अपनी पुलिसकी टुकड़ियाँ मस्जिदपर तैनात कर दी थीं। जैसे ही वह जुलूस मस्जिदकी ऊँचाईके नीचे पहुँचा उसके ऊपर मशीनगनसे गोलियाँ बरसने लगीं। गोलियोंको इस बरसातमें कुरानकी प्रतियोंकी धज्जियाँ उड़ गयीं और स्त्रियोंके मस्तक भी उड़ गये। खुदाई खिदमतगारोंके कमाण्डरने उनको लेट जानेका आदेश दिया। जो लोग झुके हुए थे उनके शरीर गोलियोंकी मारसे चलनी हो गये। जो लोग बच गये थे उनको नमाज़ पढ़ते समय मारा गया। उनसे कहा गया कि 'हिन्दू' होनेके कारण उनको नमाज़ पढ़नेका कोई हक़ नहीं है। उस मस्जिदकी, जिसमें कि वे अब एकत्र हुए थे, 'हिन्दू मस्जिद' का नाम दे दिया गया। उनके कपड़े उतार दिये गये। फिर उनको तालाबोंमें फेंक दिया गया। उनके आधे सिर और एक ओर की मूँछें मूंड़ दी गयीं और गधोंपर बैठाकर गाँवमें उनकी सवारी निकाली गयी। उनकी स्त्रियोंके आगे उनको अभद्र और अमानवीय यातनाएँ तो दी ही गयीं, उनका जो अपमान किया गया उसे शब्दों द्वारा कहा नहीं जा सकता। डा० खान साहब और ग़नीको भी गिरफ्तार कर लिया गया।"

इस मानव-संहारके पश्चात् खुदाई खिदमतगारोंकी शिकारकी तरह खोज की गयी, जिसमें कि सेनाने भाग लिया। खुदाई खिदमतगार शान्त रहे और वे तनिक भी उत्तेजित नहीं हुए। सितम्बरके मध्यमें खुदाई खिदमतगारोंका संगठन अवैध घोषित कर दिया गया और खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके सरदरयाबके केन्द्रकी

कुर्की कर ली गयी।

अब्दुल कयूमने अपना प्रभुत्व बनाये रखनेके लिए उस मुस्लिम लीगके ऊपर भी हमला करना शुरू कर दिया जिसने कि उनको मुख्य मंत्रित्व दिलाया था। अपने हाथोंमें अधिकार लेते ही उन्होंने दमन, भ्रष्टाचार और कुनबापरस्तीको प्रोत्साहन देना प्रारम्भ कर दिया। पेशावरकी एक सार्वजनिक सभाको सम्बोधित करते हुए मि० जिनाने कड़ी चेतावनी दी, "हमारी 'सर्च लाइट' अपने मंत्रियोंके ऊपर पड़ रही है। हम उनके कार्योंका 'एक्स रे' करेंगे।" सितम्बर १९४८ में मि० जिनाकी मृत्यु हो गयी। इससे अब्दुल कयूमकी हिम्मत और भी बढ़ गयी। उन्होंने खुदाई खिदमतगारोंकी गिरफ्तारीका कारण बतलाते हुए भारतके विरुद्ध कुछ अत्यंत गम्भीर आरोप लगाये। १९ मार्च सन् १९४९ को प्रधान मंत्री पं० नेहरूने संविधान सभामें यह कहा :

"सरकारका ध्यान पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तकी सरकार द्वारा जारी की गयी एक विज्ञप्तिकी ओर आकर्षित किया गया है। उसमें एक षड्यंत्रके सम्बन्धमें, जिसमें कि हजारा जिलेके लाल कुर्तीवाले शामिल बतलाये गये हैं, कई तरहके आरोप किये गये हैं। सरकारने इस विज्ञप्तिको आश्चर्य और अत्यंत खेदके साथ देखा है। यद्यपि उसमें भारतका विशेष रूपमें उल्लेख नहीं किया गया है, फिर भी उसके सारे शब्द अप्रत्यक्ष रूपसे यह अभियोग लगाते हैं कि पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तकी सरकार और पाकिस्तानकी सरकारके बीच भारतीय संघ एक पक्ष है। उसमें यह भी कहा गया है कि लाल कुर्तीवालोंको भारतकी ओरसे धन भेजा जाता है। जहाँतक उसका सम्बन्ध है, भारत-सरकार इन आरोपोंका खण्डन करती है।···

"सीमा-प्रान्त और इसी तरहसे पश्चिमोत्तरके कबायली इलाकोंकी अत्यंत गम्भीर घटनाओंके बारेमें अबतक सरकारने कोई मत व्यक्त नहीं किया है क्योंकि वह अन्य सरकारोंके आन्तरिक मामलोंमें किसी प्रकारका कोई हस्तक्षेप नहीं करना चाहती फिर भी वहाँ जो स्थितियाँ उभर रही हैं उनपर एक बढ़ती हुई चिन्ताके साथ उसकी दृष्टि रही है। ज़ाहिर है कि खुदाई खिदमतगार या लाल कुर्तीवालोंने, जैसा कि वे अक्सर कहलाते हैं, ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ और डॉ० खान साहबके नेतृत्वमें विदेशी सत्तासे आजादीकी लड़ाई लड़नेमें एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। उनकी ऊँचे दर्जेकी सच्चाई, स्वार्थ-त्याग और देश-भक्तिकी न केवल सारे भारतमें बल्कि विश्वके अन्य भागोंमें भी सराहना की गयी है। यद्यपि उनको अत्यधिक उत्तेजित किया जाता रहा फिर भी उन्होंने

शांतिपूर्वक कार्य करनेका एक उल्लेखनीय आदर्श प्रस्तुत किया है। उन्होंने एक ऐसा स्तर क़ायम कर दिया है, जिसको निभाते हुए काम करना भारतके अन्य प्रान्तोंके लोगोंके लिए भी सरल नहीं है। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने अहिंसात्मक कार्यके सिद्धांतको वीर तथा युद्ध-प्रिय पठानोंतक पहुँचाया और उनकी महान् शक्तिको शान्तिमय स्रोतोंमें बदल दिया। भारतके विभाजनसे उद्विग्न होते हुए भी उन्होंने उसे पूरी ईमानदारीके साथ स्वीकार किया और नयी व्यवस्थाके प्रति अपने लगावसे सार्वजनिक रूपमें घोषित किया। लेकिन इसके साथ उन्होंने यह दावा भी किया कि पठान आंतरिक मामलोंमें स्वायत्त शासनके अधिकारी हैं। उन्होंने एक नीतिके रूपमें पाकिस्तानको स्वीकार किया लेकिन इसके साथ ही पठानोंकी आंतरिक स्वतंत्रताके लिए वे शान्तिपूर्ण ढंगसे प्रयत्न करते रहे। किसी भी ऐसे आदमीके लिए, जो कि स्वाधीनताके इस शानदार लड़ाकेसे परिचित रहा है, यह विश्वास कर लेना असम्भव है कि उसका किसी गुप्त गतिविधिसे भी कोई सम्बन्ध हो सकता है। स्पष्टवादिता, सच्चाई, साहस और अपनी जनताके प्रति उनकी निष्ठा उनके विशिष्ट गुण हैं।

"भारतकी सरकार और जनताने विभाजन और उसके परिणामोंको स्वीकार कर लिया, इन परिवर्तनोंको निष्ठापूर्वक सहन कर लिया और पाकिस्तानके भीतरकी किसी स्थानीय घटनाको लेकर हस्तक्षेप नहीं किया लेकिन उसके लिए यह असम्भव है कि वह उन वीरतम और उत्कृष्टतम सेनानियोंके भाग्यके प्रति गहरी दिलचस्पी न रखे जिन्हें कि हिन्दुस्तानने ही पेश किया है। अतः वे उन अनेक घटनाओंसे दुःखी हैं जिनमें कि शांत खुदाई खिदमतगारों और उनके नेताओंपर घोर दमन किया गया है। उनके साथ खास तौरपर ऐसा व्यवहार किया गया है जिसकी किसी भी सरकारसे अपेक्षा नहीं की जा सकती।

"खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको, जो भारतकी पिछली पीढ़ीके सर्वाधिक प्रतिष्ठित पुरुषोंमेंसे एक हैं, एक वर्षसे भी अधिक समयतक नजरबन्दीकी हालतमें रखा गया और इस अवधिमें उनका स्वास्थ्य बहुत बिगड़ गया। पिछले साल या उससे भी पहले सीमाप्रान्तमें कौनसी घटनाएँ हुई यह मैं नहीं गिनाना चाहता। लेकिन जो कुछ हुआ उसकी कहानी समाचार-पत्रोंमें समय-समयपर आती रही है। वह अत्यंत खेदजनक है। हम बिलकुल मौन रहे और विभाजनके पश्चात् खुदाई खिदमतगारों और उनके नेताओंसे हमारा कोई सम्बन्ध नहीं रहा लेकिन उन पुराने साथियोंकी तक़लीफें, जो भारतकी आज़ादीकी लड़ाईमें हमारे साथ कंधेसे कंधा मिलाकर लड़े थे, हमें मर्मान्तिक पीड़ा पहुँचा रही हैं।

"पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तकी सरकार द्वारा जारी की गयी विज्ञप्तिमें शेख़ अब्दुल्ला और कश्मीरका भी उल्लेख किया गया है। यहाँ यह बात स्मरण रखनी होगी कि अक्तूबर सन् १९४७ और उसके बाद पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तकी सरकारने और ख़ास तौरसे उसके 'प्रीमियर' (मुख्य मंत्री) ने छापामारोंको संगठित करनेमें और उनको कश्मीरमें प्रवेश करानेमें अत्यंत सक्रिय रूपसे भाग लिया था। यह बात विशेष रूपसे सबको मालूम है कि कश्मीरके बारेमें उनकी गतिविधियाँ अत्यंत आपत्तिजनक रही हैं।

"निष्कर्ष रूपमें, मैं इस बातको फिर दुहराना चाहूँगा कि पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तके बारेमें जारी की गयी इस विज्ञप्तिको हम अप्रामाणिक और दुर्भाग्यजनक समझते हैं। उसका भारत और पाकिस्तानके सम्बन्धोंपर, जिन्हें कि हम सुधारनेकी कोशिश कर रहे हैं, अच्छा प्रभाव नहीं पड़ेगा।"

ख़ान बन्धुओंके साथ पाकिस्तानकी सरकारने जो अमानवीय व्यवहार किया था, उसके विरोधमें सारे भारतमें सभाएँ की गयीं, और उनमें उन लोगोंके लिए एक गहरी चिन्ता व्यक्त की गयी।

मई मासमें पश्चिमी पंजाबकी सरकारने निम्नांकित प्रेस-नोट जारी किया :

"पश्चिमी पंजाबकी सरकारने खेदपूर्वक यह नोट किया है कि ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके, जो इन दिनों माान्टगोमरी जेलमें रोके गये हैं, कुछ मित्रोंने उनकी ओरसे काल्पनिक शिकायतें प्रकाशित करायी हैं।

"इसमें सबसे हालका प्रयास वह विवरण है जिसमें यह कहा गया है कि ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ एकान्त कारावासमें हैं और अधिकारियों द्वारा उनके स्वास्थ्यकी उचित देख-भाल नहीं की जा रही है। ये शिकायतें पूर्णतया असत्य हैं।

"ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको एक काफ़ी बड़ी बैरकमें रखा गया है, जिससे एक स्नान-गृह जुड़ा हुआ है। वहाँ उनको बिजलीके पंखे और पानीके नलकी सुविधाएँ दी गयी हैं और उनका खाना बनानेके लिए तथा बैरक एवं आँगन साफ़ करनेके लिए क़ैदी नौकरोंकी व्यवस्था की गयी है। बैरकमें सब्जियाँ और फूल उगानेके लिए एक काफ़ी बड़ा आँगन है। वे अपनी रुचिके अनुसार बग़ीचेकी देख-भाल करते रहते हैं। खोदनेमें और बीज बोनेमें वे विशेष दिलचस्पी लेते हैं। उनकी एक विशेष प्रार्थनापर सीमाप्रान्तकी हरिपुर जेलके 'बी' श्रेणीके दो क़ैदियोंको तबादला करके माण्टगोमरी जेलमें ले आया गया है और उनको उनकी बैरकसे जुड़ी हुई एक अलग बैरकमें रख दिया गया है। ख़ानको अकेले या अपने

साथियोंके साथ कसरत करनेकी इज़ाजत है। उनके लिए बैडमिण्टनकी व्यवस्था कर दी गयी है और उनको सप्ताहमें चार पत्र लिखनेकी अनुमति दी गयी है। उनको समाचारपत्र भी दिये जाते हैं.......।"

२७ मार्च सन् १९५० को परराष्ट्र मंत्रालयके लिए बजटकी मांग पेश करते हुए पं० नेहरूने संसदमें कहा :

"अबतक मैं सीमाप्रान्तकी घटनाओंके बारेमें बहुतसी बातें कहनेमें हिचकता रहा हूँ क्योंकि हमारी नीति पाकिस्तानके आंतरिक मामलोंकी आलोचना करने-की नहीं रही है। लेकिन कभी-कभी परिस्थितियाँ मुझको मेरे उन साथियों और मित्रोंके सम्बन्धमें थोड़ा-बहुत कहनेको विवश कर देती हैं जिन्होंने कि भारतके स्वाधीनता-संग्राममें हममेंसे बहुतोंसे अधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है इसलिए मेरे लिए या किसीके लिए यह कहना या कल्पना करना ही एक झूठ होगा या बहुत कुछ अमानवीय होगा कि हम उन लोगोंको कभी भूल सकते हैं जिन्होंने जिन्दगीभर हमारे कंधेसे कंधा भिड़ाकर आज़ादीकी लड़ाई लड़ी है। इसलिए हम लोग एक-दूसरेमें घनिष्ठताके साथ दिलचस्पी रखते हैं। अपनी इस विव-शतापर हमें खेद है कि हम केवल दूरसे ही एक-दूसरेमें दिलचस्पी रख सकते हैं और इस समस्याको हल करनेमें उनकी कोई मदद नहीं कर सकते।"

समूचे सीमाप्रान्त और कबायली इलाकेमें एक तीव्र असंतोष व्याप्त था। पाकिस्तानकी वायुसेनाने १७ मार्चसे लेकर २८ मार्च १९५० तक अनेक बार कुछ पख्तून गाँवोंके ऊपर बमबारी की। कराचीसे जारी की गयी एक विज्ञप्तिमें कहा गया: "अफ़गानिस्तानके छापामारोंके एक बहुत बड़े गिरोहने, जिसमें वहाँकी सेनाके लोग भी थे, ३० सितम्बरको पाकिस्तानकी सीमाको पार किया लेकिन जब पाकिस्तानके सैनिकोंने उनका सामना किया तब वे शीघ्रतासे पीछे हट गये।"

अफ़गानिस्तानके शाहने प्रतिनिधियोंके सदनका उद्घाटन करते हुए कहा :

"यद्यपि अफ़गानिस्तानने पाकिस्तानकी मैत्रीके आभारको स्वीकार किया है और उसे सहकार देनेकी अपनी इच्छा भी व्यक्त की है फिर भी डूरण्ड रेखाके उस पार बसनेवाले पठानोंकी स्वाधीनताकी उत्कृष्ट आकांक्षा और उनके लगातार विरोधकी ओर ध्यान देते हुए तथा न्यायके सिद्धांत और उनकी स्वाधीनताके अधिकारको आदर देते हुए, उनकी बहुइच्छित स्वतन्त्रताकी प्राप्तिके लिए वह (अफ़गानिस्तान) स्वयंपर एक उत्तरदायित्वका अनुभव करता है। अफ़गान सरकारने बड़े धैर्य और सहनशीलताके साथ इस बातकी प्रतीक्षा की कि ये

समस्याएँ शान्तिपूर्ण ढंगसे हल हो जायँगी लेकिन पाकिस्तानकी ओरसे अवतक कोई संतोषजनक उत्तर प्राप्त नहीं हुआ।

कुछ पख्तून कबीले पहली 'पख्तून प्राविंशियल पार्लियामेंट' के लिए अपने प्रतिनिधियोंका निर्वाचन कर चुके थे। इपीके फकीर इसके अध्यक्ष थे। अफरीदी खैलके नेतृत्वमें इसकी एक शाखा तिरहमें खोली गयी थी और दूसरी शाखा वज़ीरिस्तानमें, जिसके प्रति कुछ पख्तून कबीलोंकी सामान्य सभाने अपनी निष्ठा घोषित की थी। पख्तूनिस्तान आन्दोलनके नेता अपने कबीलोंमें अत्यंत प्रतिष्ठित व्यक्ति समझे जाते थे। स्वाधीन पख्तूनिस्तानका ध्वजारोहण हुआ और 'पख्तून नेशनल असेम्बली' द्वारा सारे पख्तूनों, समस्त मुस्लिम जगत् और संयुक्त राष्ट्र-संघको सम्बोधित करते हुए एक घोषणा प्रकाशित की गयी। इस उद्घोषणाको अफ़गानिस्तानकी सरकारकी एक रिपोर्टके साथ रेडियो काबुलसे प्रसारित किया गया।

इन्हीं दिनों खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँकी मृत्युकी अफ़वाहें उड़ीं जिनका कि पाकिस्तान सरकारने दिसम्बर १९५० में एक प्रेस नोट जारी करके खंडन किया। बादशाह खाँको १९५१ के अप्रैल महीनेमें एक्स-रेके लिए लाहौर ले जाया गया। वे 'प्लूरिसी', फेफड़ेकी झिल्लीके सूख जानेकी बीमारीसे ग्रस्त थे। माण्टगोमरी जेलकी उष्ण जलवायुमें एकान्त कारावासने उनके शरीरपर बहुत बुरा प्रभाव डाला था और उनका स्वास्थ्य टूट चुका था। वे अत्यंत दुर्बल हो गये थे। सरकारकी ओरसे यह जाननेकी कोशिशें की गयीं कि क्या वे शासनमें सम्मिलित होनेको तैयार हैं? उनकी प्रतिक्रिया क्या है? "जब मैं जेलमें तीन सालतक रह चुका था तब जेलके अधीक्षकने मुझसे पूछा कि क्या आप मुस्लिम लीगमें शामिल होना चाहते हैं? उसने लियाकत अली खाँका निर्देश प्राप्त होने-पर ही मुझसे यह प्रश्न किया था। हम लोगोंसे यह भी पूछा गया कि हम लोगों-के विभाजनके सम्बन्धमें क्या विचार हैं। इसे चलाया या खत्म कर दिया जाय? अंतिम सवालके जवाबमें मैंने उत्तर दिया कि एक क़ैदी होनेके कारण मैं यह नहीं चाहता कि मुझको किसी राजनीतिक बहसमें खींचा जाय। जहाँतक सरकार-में शामिल होनेकी बात थी मैंने उनसे कहा कि उनके लिए सरकार व्यक्तिगत शक्ति प्राप्त करनेकी एक साधन है और हम लोग उसे केवल सेवाका एक उप-करण मानते हैं। फिर हम लोग मिल ही कहाँ सकते हैं? इससे मुझे नज़रबन्दी-में चार साल और रखा गया।"

सज़ाकी तीन सालकी अवधि बीत जानेपर सन् १८१८ के बंगाल अधिनियमके

अन्तर्गत उन्हें पुनः एकान्त कारावास दंड भुगतना पड़ा जिसकी अवधि प्रत्येक छः सालके पश्चात् बढ़ा दी जाती थी।

३ जून सन् १९५१ को जब नेहरूजीसे फ़रीदाबादमें सरहदके शरणार्थियोंके लिए बनाये गये चिकित्सालयका नामकरण-समारोह सम्पन्न करनेको कहा गया तब उन्होंने एक गहरी वेदनाके साथ खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँका जिक्र किया। उन्होंने कहा कि उन्होंने जब कभी 'अपने पुराने मित्र और साथी बादशाह खाँ' का, जो जेलमें हैं, स्मरण किया है तब सदैव एक दर्दका अनुभव किया है। उन्होंने भारतकी स्वाधीनताके लिए अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया। अंग्रेजोंके शासनकालमें उनको लम्बी अवधियोंतक जेलोंमें रहना पड़ा। अब भी, जब कि हिन्दुस्तान और पाकिस्तान स्वतन्त्र हैं, वे जेलमें हैं। ब्रिटिश सरकारने महात्मा गांधीको जेलमें डालकर एक ग़लत काम किया था। बादशाह खाँ जैसे व्यक्तिको जेलमें रखकर पाकिस्तान दूसरोंकी दृष्टिमें ऊँचा नहीं चढ़ता। "हम इस मामलेमें अपनेको असहाय अनुभव करते हैं कि हम चाहते हुए भी उनके लिए कुछ नहीं कर सकते। कोई भी सरकार, जो उन जैसे व्यक्तिको जेलमें रखती है, एक ग़लती करती है। उन जैसी योग्यताके पुरुषको जेलमें रखकर पाकिस्तानकी सरकार अपनी प्रतिष्ठामें अभिवृद्धि नहीं करती। जिन लोगोंको बादशाह खाँके सम्पर्कमें आनेका सुयोग मिला है वे उनकी महानता और भद्रताको अनुभव करते हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि वे जहाँ भी होंगे वहाँ उनको अपने देशकी सेवाका सबसे अधिक ध्यान होगा। यहाँतक कि जेलकी कोठरीमें भी उनके जीवनके क्षण व्यर्थ नहीं जायँगे। इस समय, जब कि हम उनका स्मरण कर रहे हैं, हम उनकी शिक्षाओंको अपनी दृष्टिके आगे रखें और उनके ऊपर चलनेका प्रयास करें। इस चिकित्सालयका नाम बादशाह खाँके नामपर रखना ही उचित और उपयुक्त होगा।"

जुलाईमें बंगलोरके अखिल भारतीय कांग्रेस समितिके अधिवेशनमें नेहरूजीने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके प्रति अपना सम्मान व्यक्त करते हुए कहा : "भारतके श्रेष्ठतम पुरुषोंमेंसे अनन्य, उस व्यक्तिकी ओर हमारा ध्यान चला जाना स्वाभाविक है जो हमारे स्वाधीनता-संग्रामका एक महान् नेता रहा है और जिसने अपना समस्त जीवन जन-सामान्यकी सेवा और संघर्षको ही अर्पित कर दिया है। वे व्यक्ति हैं खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ। स्वयं वे तथा उनके बहादुर साथी पाकिस्तानकी जेलोंमें एकके बाद एक वर्ष निकालते जा रहे हैं, फिर भी यह कहा जाता है कि उनके देशमें स्वतंत्रता आ गयी है। यह केवल एक अर्थको ही व्यक्त

नहीं करता बल्कि यह आज़ादीके उस ढंगकी भी एक प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति है जो कि पाकिस्तानकी वीर और स्वतंत्रता-प्रिय आत्माओंकी प्रतीक्षा कर रहा है।"

पं० जवाहरलाल नेहरूने अपने व्याख्यानोंमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके जो उल्लेख किये थे, उनका पाकिस्तानकी सरकारने उग्र विरोध किया और उनको 'पाकिस्तानके आंतरिक मामलोंमें एक हस्तक्षेप' का नाम दिया।

भारत सरकारने इसके उत्तरमें २३ अगस्त १९५१ को पाकिस्तान सरकारको यह कड़ा पत्र लिखा :

"परराष्ट्र मंत्रालय इस प्रकारके विरोधकी न्याय-संगति समझ सकनेमें अपनेको असफल पा रहा है। पाकिस्तानके शासक और उसके भारत स्थित हाई कमिश्नर यह भली भाँति जानते हैं कि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ उस संघर्षके, जिसने भारत और पाकिस्तानको स्वाधीनता दिलायी, एक नायक रहे हैं और उनके साथी खुदाई खिदमतगार भी उस संघर्षसे सक्रिय रूपमें दीर्घ कालतक सम्बन्धित रहे हैं। निश्चित ही बादशाह खाँने अविभाजित भारतमें जन-सेवा और स्वतंत्रताके हेतुके लिए त्यागका एक ऐसा मानदंड स्थापित किया है जो कि अबतक शायद सबसे ऊँचा है। इसीलिए वे समग्र अविभाजित भारतमें सर्वप्रिय व्यक्ति समझे जाते थे। अपने निजके सीमा-प्रान्तमें भी वे एक ऐसे सर्वसम्मत, अद्वितीय नेता समझे जाते थे जिसने कि अपने यहाँके वीर लोगोंको एक शान्तिमय और प्रभावोत्पादक कार्य-प्रणाली सिखलायी थी। उनके भाई डॉ० खान साहब भी सीमा-प्रान्तके एक प्रख्यात, लोकप्रिय नेता रहे हैं। विभाजनसे कुछ दिनों पहलेतक वे मुख्य मंत्री पदपर थे। भारतीय जनता इन महान पुरुषोंको बड़ी श्रद्धाके साथ स्मरण करती है। इस मंत्रालयको इस बातमें कोई सन्देह नहीं है कि पाकिस्तानमें भी ऐसे लोगोंकी एक बहुत बड़ी संख्या है जो उनके प्रति स्नेह रखती है और उनके आभारको स्वीकार करती है। उन सबके लिए, जो स्वाधीनताको प्यार करते हैं और महानताको आदरकी दृष्टिसे देखते हैं, यह बड़े खेदका विषय है कि जिन्होंने अपने देशको साम्राज्यवादी नियंत्रणसे मुक्त करनेके लिए संघर्ष किये उन्हींको स्वतंत्रता मिल जानेपर उससे वंचित कर दिया गया। यह दावा, कि यह वीर पुरुष, जो जेलोंमें एकके बाद एक साल निकालते जा रहे हैं, भारतके अपने पूर्व-सहयोगियों और प्रशंसकोंसे सहानुभूतिकी खुली अभिव्यक्ति पानेके अधिकारी नहीं हैं, अनुभव करनेकी क्षमता और अभिव्यक्तिकी स्वाधीनता दोनों ही प्रकारसे मानव-प्रकृतिके विरुद्ध है। भारत एक स्वतंत्र देश है और उसके संविधानमें उसके प्रत्येक नागरिकको अपने विचारोंको प्रकट करनेकी स्वाधीनता दी गयी है।

निश्चय ही खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ और उनके साथियोंके बराबर लम्बे होते हुए इस बन्दी-जीवनसे यह निष्कर्ष निकालना असंगत न होगा कि यदि स्वाधी-नताके हेतु सेवाका इतना बड़ा रिकार्ड रखनेवाले व्यक्तिको एकके बाद एक करके अनेक वर्षोंतक जेलमें रखा जा सकता है तो पाकिस्तानमें स्वाधीनता केवल उन व्यक्तियोंका विशेषाधिकार है जो किन्हीं भी कारणोंसे शासक-वर्गके मतों और उनके कार्योंके प्रति अपनी पूर्ण सहमति प्रकट करनेके लिए सदैव तैयार रहते हैं। यह भी हो सकता है कि जो लोग इस संघर्षसे किसी प्रकारसे स्वयं सम्बन्धित न रहे हों या जिन्होंने उसका विरोध किया हो, वे खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके प्रति वैसी भावनाएँ न रखते हों जैसी कि आज़ादीकी लड़ाईमें भाग लेनेवाले हिन्दुस्तान और पाकिस्तानके लाखों लोग रखते हैं। आधुनिक इतिहासमें ऐसे अनेक उदाह-रण हैं जब कि प्रमुख राजनीतिज्ञोंने अपने मित्रके उस व्यवहारपर, जो कि उसने अपने राजनीतिक विरोधियोंके साथ किया है, जोरदार ढंगसे अपने मुक्त विचार व्यक्त किये हैं।

"भारत सरकारको इस बातका संतोष है कि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके बारेमें अपनी सम्मानजनक भावनाएँ प्रकट करते हुए भारतके प्रधान मंत्रीने ऐसा कुछ नहीं कहा जिसको कि नियमानुसार अपवाद रूपमें भी पाकिस्तानके मामलेमें हस्तक्षेप करना कहा जा सके या जिसे अन्तर्राष्ट्रीय कानूनका उल्लंघन करना समझा जा सके। बल्कि उन्होंने अदम्य, गहराईके साथ अनुभव किये गये भारत-की जनताके मतको सच्चाईके साथ प्रतिबिम्बित कर दिया।"

पाकिस्तानके धर्मोन्माद, घृणा और कुचक्रोंके वातावरणमें सन् १९५१ के अक्तूबर मासमें रावलपिंडीमें प्रधान मंत्री लियाकत अली खाँकी हत्या कर दी गयी। गवर्नर जनरल ख्वाजा निज़ामुद्दीनने प्रधान मंत्रीका कार्यभार सँभाल लिया और वित्तमंत्री मि० गुलाम मुहम्मद गवर्नर जनरल नियुक्त कर दिये गये।

काज़ी अतातुल्लाह खाँ, जो खान साहबके मंत्रिमंडलमें शिक्षा-मंत्री रह चुके थे तथा जो खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके एक निकटतम सहयोगी थे, तीन साल सात महीनेका एकान्त कारावास दण्ड भुगतकर फरवरी १९५२ में लाहौरके एक अस्पतालमें मर गये। 'पख्तून टाइम्स' में १ मार्चको मि० मुहम्मद याहिया का निम्नांकित वर्णन प्रकाशित हुआ :

"२७ फरवरी सन् १९५२ को मान्टगोमरी जेलमें जेलके अधीक्षक, उप-अधीक्षक और खुफिया पुलिसके सब-इंस्पेक्टरकी उपस्थितिमें मैंने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँसे भेंट की। पश्तो भाषा जाननेवाले सब-इंस्पेक्टरके न मिलनेके कारण

हम लोगोंसे उर्दूमें बातचीत करनेको कहा गया ...

"खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ वस्तुतः लगभग पिछले तीन महीनेसे वहाँ नज़र-बन्द हैं। उनके साथ दो क़ैदी साथी रख दिये गये थे। उनमेंसे एक मान्टगोमरी जेलसे रिहा कर दिया गया लेकिन उसे पेशावरमें फिर गिरफ्तार कर लिया गया और वहीं जेलमें रख दिया गया। दूसरा साथी सैयद आशिक़ शाह उनके द्वारा स्वर्गीय काज़ी अतातुल्लाह खाँके साथ रावलपिण्डी ले जाया गया। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको वापस अकेले मान्टगोमरी जेल ले आया गया और सैयद आशिक़ शाहको स्वर्गीय काज़ी साहबके साथके लिए रावलपिण्डी जेलमें ही छोड़ दिया गया। इस तरह खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ लगभग तीन माससे मान्टगोमरी जेलमें अकेले ही रह रहे हैं। इस अर्सेमें वे अपने हाथसे ही खाना बनाते रहे हैं। अब सैयद आशिक़ शाहको बड़ी गम्भीर हालतमें मान्टगोमरी जेल वापस ले आया गया है। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ उसकी देखभाल करते हैं, उसकी उप-चर्या करते हैं और उसके लिए खाना बनाते हैं।

"लगभग आठ महीने पहले खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको दांतोंके इलाजके लिए लाहौर ले जाया गया था। वहाँ उनके दाँतोंका नया सेट तैयार किया गया। लेकिन यह देखनेसे पहले ही कि नये दाँत उनके ठीक बैठते हैं या नहीं, उनको लाहौरसे वापस ले आया गया। उन दाँतोंने उनका मसूड़ा घायल कर दिया और वे उनको निकाल देने पड़े। तबसे बिना दाँतोंके ही खाना खाते हैं।

"जिस डॉक्टरने उनका रावलपिण्डीमें परीक्षण किया था और जिन्होंने उन्हें कुछ दिन पहले मान्टगोमरी जेलमें देखा है, उन्होंने यह बतलाया है कि दाँत निकाल देनेके बादसे उनकी तन्दुरुस्ती बहुत गिर गयी है।

"खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँसे मिलनेसे पहले मैंने पंजाबके मुख्य मंत्री मियाँ मुहम्मद मुमताज़ खाँ दौलतानासे मुलाकात की। प्रीमियरने मुझे यह आश्वासन दिया कि वे खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके जेल-जीवनको जितना भी आरामदेह बनाना सम्भव होगा, उतना बनायेंगे।"

अप्रैल सन् १९५२ में लाहौरके मेयो अस्पतालमें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँका ऑपरेशन हुआ। प्रधान मंत्री नेहरूने उनको स्नेहपूर्ण शुभ-सन्देश भेजा। उनको अफ़गान प्रधान मंत्रीसे भी एक संदेश मिला जिसमें उनके लिए गहरी चिन्ता व्यक्त की गयी थी। मक्कामें हज़ारों तीर्थ-यात्रियोंने बादशाह ख़ाँके आरोग्य लाभके लिए और उनकी कारा-मुक्तिके लिए प्रार्थनाएँ कीं।

सन् १९५३ के जनवरी मासमें हैदराबादमें अखिल भारतीय कांग्रेस समिति-

के वार्षिक अधिवेशनमें निम्नांकित प्रस्ताव पारित हुआ :

"कांग्रेस ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँकी लम्बी बीमारीके समाचारसे अत्यधिक चिंताका अनुभव करती है जिन्हें कि गत पाँच सालोंसे जेलमें रखा जा रहा है। ख़ान साहबको भारत और पाकिस्तान दोनोंमें सत्य-निष्ठ तथा शांतिप्रिय पुरुषके रूपमें तथा स्वाधीनताके एक वीर सेनानीके रूपमें स्मरण किया जाता है। उनका जीवन सेवा और त्यागका एक ज्वलंत आदर्श रहा है और उन्होंने एक न्याय-संगत उद्देश्यके लिए वीर पठानोंको अहिंसात्मक और शांतिपूर्ण संघर्षका मार्ग दिखलाया है। यह एक दुःखपूर्ण घटना है कि वह व्यक्ति, जिसने भारत और पाकिस्तानके लिए स्वतंत्रता लानेमें अत्यधिक योगदान किया और जिसे सम्मानित करनेमें किसी भी राष्ट्रको प्रसन्नता होती, उसी स्वाधीनताका शिकार बन जाय जिसे लानेमें उसका श्रम लगा था। जिन दिनों भारत विदेशी सत्ताके अधीन था, उन्होंने अपने जीवनके श्रेष्ठतम वर्ष पश्चिमोत्तम सीमा-प्रान्तकी जेलोंमें काट दिये। उन्हीं जेलोंने स्वाधीनताके बाद भी उनपर अपना दावा किया और उनकी लम्बी तथा गम्भीर बीमारी भी आज उनको इस अन्तहीन एकान्त कारावाससे मुक्ति दिलानेमें असमर्थ है। यह कांग्रेस ख़ान अब्दुल ग़फ्फार ख़ाँको अपनी आदरपूर्ण शुभ कामनाएँ और श्रद्धांजलि भेजती है।"

इस प्रस्तावपर बोलते हुए कांग्रेसके अध्यक्ष पं० नेहरूने यह स्पष्ट किया कि कांग्रेसने अबतक ख़ान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँके बारेमें कोई प्रस्ताव पारित क्यों नहीं किया और अब वह इस प्रस्तावको क्यों स्वीकार कर रही है। उन्होंने कहा कि प्रश्न ख़ान साहबको याद न करनेका नहीं है। हम लोग उनकी दीर्घ बीमारी और एकान्त कारावासके सम्बन्धमें बार-बार सोचते रहे हैं लेकिन हमने अनुभव किया कि यदि उनके बारेमें हम कोई प्रस्ताव स्वीकृत करते हैं तो उससे उसका मूल उद्देश्य ही हल न होगा। हमारे पाकिस्तानके मित्र कभी-कभी चीज़ोंको एक असामान्य और ग़लत ढंगसे देखते हैं। उन्होंने बादशाह ख़ाँ जैसे व्यक्ति पर यह आरोप लगानेका साहस किया है कि वे भारतसे मिलकर सब तरहके षड्यंत्र रच रहे हैं। मैं आपको यह बतला रहा हूँ कि पिछले पाँच वर्षोंमें हमारा एक-दूसरेसे कोई सम्बन्ध नहीं रहा है और हम लोगोंने सम्पर्क रखनेकी चेष्टा भी नहीं की है क्योंकि हमने यह अनुभव किया कि हमारा कोई भी प्रयत्न पाकिस्तान सरकारको उसके सन्देहको पुष्ट करनेमें सहायता दे सकता है। पिछले दिनों हमने यह निश्चय किया था कि हम कोई प्रस्ताव सामने नहीं लायेंगे। हमने सोचा था कि किसी भी स्थितिमें उनके प्रति हमारा प्रेम, स्नेह और आदरभाव तो है ही

और वह सर्वविदित भी है लेकिन अब मैं अनुभव करता हूँ कि वह समय आ गया है जब कि हमको खुले रूपमें अपने पूर्व विचार प्रकट करना चाहिए।"

इसके पश्चात् नेहरूजीने कहा कि यद्यपि उन्हें बहुत ही दुःखान्त घटनाएँ सहनी पड़ी हैं, फिर भी उन्हें सन्देह है कि शायद कोई बात हो जाय जो उनके लिए और भी बड़ी चिन्ताका कारण बन जाय, या कुछ हदतक अन्तरात्मापर एक चोट मार दे, क्योंकि वस्तुस्थिति यह है कि स्वाधीनताकी उपलब्धिके पश्चात् जब कि हम लोग अधिकारपूर्ण पदोंपर बैठे हुए हैं, जो हमारे सबसे वीर और सबसे श्रेष्ठ नेताओंमेंसे एक हैं, उस स्वाधीनतासे कोसों दूर हैं। बल्कि वे उससे भी कहीं अधिक कष्ट भुगत रहे हैं।

अपने अध्यक्षीय भाषणमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँका उल्लेख करते हुए नेहरूजीने कहा, "हम जानते हैं कि पाकिस्तान साम्प्रदायिकताकी संतान है और पंजाब संविधान सभाकी बेसिक प्रिंसिपल्स कमेटीके पिछले विवरणने यह स्पष्ट कर दिया है कि पाकिस्तानके वर्तमान नेता उसमें मध्ययुगका धर्मतन्त्र लाना चाहते हैं जहां कि गैर-मुस्लिमको सहन तो किया जा सकता है परन्तु उसे समान अधिकार या सम्मानित पद नहीं दिया जा सकता। इस संकीर्ण साम्प्रदायिक दृष्टिकोणके पीछे एक विस्तृत नीति है। हम लोग अपने देशमें जिस नीतिको लेकर चल रहे हैं उससे यह नीति नितान्त भिन्न है। यह बात कई तरीक़ोंसे साफ़ हो जाती है। सबसे अधिक तो वह इस तथ्यसे ध्यानमें आती है कि स्वतन्त्रता, शांति और सामंजस्यके वीरतम सेनानियोंमेंसे एक लगभग पाँच वर्षोंसे जेलमें पड़े हुए हैं। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ केवल हमारे ही नेता नहीं हैं बल्कि उनके भी नेता हैं जो अब पाकिस्तानमें रह रहे हैं। उनका यह सतत बन्दी जीवन एक दुःखान्त घटना है और एक बहुत बड़ी चेतावनी है। उनकी बात सोचकर मेरा दिल बैठने लगता है।"

सन् १९५३ में पाकिस्तानके संचार-मंत्री सरदार बहादुर खांने जेलमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँसे भेंट की। उन्होंने उनसे कहा कि सरकार उनको इस तरह से हमेशा जेलमें नहीं रखना चाहती बल्कि उनको मुक्त करना चहती है लेकिन वह यह सोचकर डर रही है कि उनके प्रति या उनके साथियोंके प्रति जो गम्भीर ग़लतियाँ हुई हैं उन्हें न वे लोग क्षमा कर सकते हैं और न भूल सकते हैं। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने कहा कि एक खुदाई खिदमतगार होनेके नाते और अहिंसाका एक उपासक होनेके कारण वे किसीके विरुद्ध प्रतिशोध अथवा प्रतिकारकी भावना नहीं रखते। परन्तु अधिकारियोंको चिन्तित होनेकी कोई आवश्यकता

नहीं है जवतक कि उनको अपनी निर्दोषताका पूरा भरोसा नहीं हो जाता या जवतक वे इस बातसे निश्चित नहीं हो जाते कि उन्हें उनसे (वादशाह खाँसे) डरनेका कोई कारण नहीं।

५ जनवरी १९५४को रेडियो पाकिस्तानने यह घोषणा की कि पाकिस्तानकी सरकारने ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको अपनी निगरानीसे मुक्त कर देनेका निर्णय कर लिया है। कराचीसे जारी किये गये एक प्रेस-नोटमें कहा गया : "अपनी रिहाईके पश्चात् ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ पंजावमें रहेंगे। समस्त राजनीतिक नज़रवन्द क़ैदी, जिनकी कुल संख्या ४५ है, मुक्त किये जा रहे हैं और उनकी सम्पत्ति उनको लौटायी जा रही है। ऐसे आदेश आज जारी कर दिये गये हैं।"

जिस समय ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ पाकिस्तानके संचार-मंत्री सरदार बहादुर खाँके साथ रावलपिण्डी जेलसे वाहर आये उस समय "वादशाह खाँ जिन्दावाद" के गगनभेदी नारोंसे जेलके वाहरका वायुमंडल गूँज उठा। इसके तुरन्त वाद उनको डाक्टरी परीक्षणसे लिए रावलपिण्डीके मिलिटरी अस्पताल में रोक लिया गया। जव ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँसे यह प्रश्न किया गया कि क्या वे पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तकी राजनीतिमें भाग लेंगे, तो उन्होंने कहा, "मैं एक राजनीतिज्ञ नहीं हूँ। मैं एक सिपाही हूँ। मेरा काम मानवताकी सेवा करना है जिसे कि मैं करता रहूँगा।"

सीमाप्रान्तके मुख्य मंत्रीके आदेशसे 'प्राविंशियल सेफ़्टी एक्ट' और 'फ्रंटियर प्राविन्स रेगूलेशन' के अन्तर्गत कुछ व्यक्तियोंपर सीमाप्रान्तमें आनेसे रोक लगा दी गयी, प्रतिवन्ध लगाया गया या उन्हें वाहर रोक लिया गया। इनमें ख़ान अब्दुल गफ्फ़ार खाँ, डा० ख़ान साहव और कुछ प्रमुख खुदाई खिदमतगार कार्य-कर्त्ता भी सम्मिलित थे। मुख्य मंत्रीने यह स्पष्ट कर दिया था कि उन्होंने यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण निर्णय इस वातको ध्यानमें रखकर किया है कि सीमाप्रान्तमें जो स्वस्थ वातावरण चल रहा है, वह वना रहे और सभी वर्गोंके लोगोंमें एक सद्भावना कायम रहे।

कांग्रेसने जनवरी १९५४ में अपने कल्याणीके अधिवेशनसे ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ, डा० ख़ान साहव, और अब्दुस्समद खाँके लिए वर्षोंके वाद की गयी उनकी आंशिक रिहाईपर अपनी शुभ कामनाएँ और आदर भावनाएँ भेजीं। इस अवसरपर वोलते हुए पं० नेहरूने कहा :

"मैं अपने पुराने साथी और नेता ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ, उस ईश्वरीय पुरुषकी एक लम्बे वंदी जीवनके छुटकारेपर, जो एक पीढ़ीसे भी अधिक काल-

तक सत्य और निर्भीकताका एक प्रतीक रहा है, अपनी गहरी प्रसन्नता व्यक्त करना चाहता हूँ और आशा करता हूँ कि आप सब लोग इसमें साझीदार होंगे। हम अपने पुराने साथी और आज़ादीके दो वीर सेनानी डा० खान साहब और अब्दुस्समदकी रिहाईपर भी अपना हर्ष प्रकट करते हैं जिनके कष्ट आज़ादीकी उपलब्धिके बाद भी समाप्त नहीं हुए। हम इन लोगोंको अपनी बधाइयाँ तथा स्नेहपूर्ण शुभकामनाएँ भेजते हैं।"

ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको रावलपिण्डी सेन्ट्रल जेलसे रिहा कर दिया गया लेकिन वे सर्किट हाउसमें ही एक बन्दी बना दिये गये। ५ फरवरीको जारी किये गये अपने एक प्रेस वक्तव्यमें उन्होंने शिकायत की : "मुझे अपने समस्त कृपालु मित्रोंको, जिन्होंने मुझे पत्र लिखे या टेलीफोन किये हैं, यह सूचित करते हुए अत्यंत खेद हो रहा है कि मैं उनके कृपापूर्ण सन्देशोंका उत्तर देनेमें असमर्थ हूँ। मुझे जेलमें चिट्ठियाँ लिखनेकी अनुमति थी लेकिन मुझे यहाँसे पत्र लिखने की इज़ाज़त नहीं दी गयी। इसलिए मैं अपने एकमात्र साधन, समाचार-पत्रोंके माध्यमसे आप लोगोंको धन्यवाद देता हूँ। मैं यह भी बतला देना चाहता हूँ कि अभीतक इस सर्किट हाउसके इस घेरेमें मैं बन्दी हूँ और मुझको रावलपिण्डीमें अपने मित्र तथा सम्बन्धियोंसे भी मिलनेकी इज़ाज़त नहीं है।" २५ फरवरीको उन्होंने लाहौरमें कहा कि वे अभीतक "बंगाल रेगूलेशनके बंधनोंसे जकड़े हुए हैं।" उन्हें इसका निश्चय नहीं है कि उनको कराचीमें संविधान सभाके अधिवेशनमें भाग लेनेकी अनुमति मिलेगी जिसमें कि वे सीमाप्रान्तका प्रतिनिधित्व करते हैं।

उनसे प्रश्न किया गया कि क्या वे कश्मीरके लोगोंपर अबतक अपना कोई प्रभाव रखते हैं? उनको पाकिस्तानके पक्षमें लेनेके पहले तो वे उनसे अपने घनिष्ठ सम्बन्धोंका दावा किया करते थे। इसके उत्तरमें ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने कहा कि यदि वे अब इस मामलेमें हस्तक्षेप करते हैं तो कश्मीरके लोग उनसे यह भी पूछ सकते हैं कि 'तुम कौन हो और तुम्हारा मतलब क्या है? क्या तुम हमको भी उसी नज़रबन्दीकी हालतमें भेजना चाहते हो जिसे तुम स्वयं भुगत रहे हो?' उन्होंने बतलाया कि पहले उन्होंने कश्मीरके झगड़ेको सुलझानेके लिए मि० जिनाको अपनी सेवाएँ अर्पित की थीं लेकिन अब यह झगड़ा बहुत अधिक उलझ गया है।

उन्होंने पत्रकारोंको यह भी जानकारी दी कि यद्यपि उनको रावलपिण्डीके सर्किट हाउसमें घूमने-फिरनेकी आज़ादी है लेकिन यहाँ पंजाबमें भी उनको कुछ कहने या करनेकी आज़ादी नहीं है।

मार्च सन् १९५४ में खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको कराचीमें पाकिस्तान पार्ल-मेन्टके बजट अधिवेशनमें भाग लेनेकी अनुमति दे दी गयी। २० मार्चको सदनको उर्दूमें सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा :

"अध्यक्ष महोदय, छः वर्षके लम्बे कारावासके पश्चात् आज मुझको यह अवसर प्राप्त हुआ है कि मैं इस सदनके सदस्योंसे मिलूँ और संक्षिप्त रूपमें अपने विचार उनके आगे रखूँ। मेरा इरादा भाषण करनेका नहीं है। आप जानते हैं कि मैं एक खुदाई खिदमतगार हूँ और मेरा काम भाषण करना नहीं बल्कि सेवा करना है। मैं आपको अपना पिछले छः वर्षका कटु अनुभव भी नहीं सुनाना चाहता लेकिन अब भी पाकिस्तानमें कुछ ऐसे स्वार्थी लोग हैं जो कि मेरे खिलाफ़ हैं और जो मुझे किसी तरहसे बदनाम करनेकी योजनाएँ बना रहे हैं। इसलिए मेरे बारेमें जो गलतफहमी फैला दी गयी है, उनको दूर करनेके लिए मैं आपसे दो शब्द कहना चाहता हूँ :

"श्रीमान्, मुझको इस सदनके माननीय सदस्योंके विरुद्ध भी एक शिकायत है। आपको यह विदित ही है कि मैं इस सदनका एक सदस्य हूँ और यह अपने आपमें एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न संस्था है और इस नाते इसके सदस्योंको कुछ अधिकार और सुविधाएँ भी मिली हैं। मुझे सीमाप्रान्त अपराध विनियमके अन्त-र्गत गिरफ्तार किया गया था जो कि नैतिक ढंगके अपराध करनेवाले लोगोंपर लागू किया जाता है। मुझसे नेकचलनीकी जमानत देनेको कहा गया, जिससे कि मैंने इनकार कर दिया। इसके फलस्वरूप मुझको तीन सालके कठोर कारावास-का दण्ड दिया गया। मुझे सरकारको इस दण्डके अनुसार तीन सालके बाद रिहा कर देना चाहिए था लेकिन इसके बाद मुझको जंगू (नामक जगह) में रखा गया और इसके बाद मुझको सन् १९१८ के बंगाल रेगूलेशनके अन्तर्गत, जो कि ईस्ट इण्डिया कम्पनीके समयमें जारी किया गया था, जेलमें नज़रबन्द कर दिया गया। पूरे तीन साल और दो मासकी इस नज़रबन्दीके बाद मुझको जेलसे बाहर आनेकी अनुमति दी गयी। लेकिन मेरे इस बंदी-जीवनकी अवधिमें आपने कभी सरकारसे यह नहीं पूछा कि मैंने क्या अपराध किया है। आप जानते हैं कि वास्तवमें मैं अभीतक एक बंदी हूँ। यहाँ यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि मुझको अंग्रेजोंके जमानेमें कई बार जेलमें जाना पड़ा है। यद्यपि उन दिनों हमारा उनके साथ एक शत्रुताका सम्बन्ध चल रहा था फिर भी उन्होंने जेलमें हमारे साथ अच्छा व्यवहार किया और वहाँके अंग्रेज अधिकारी भी किसी हदतक हमारे प्रति सहनशील और विनम्र रहे। लेकिन हमारे अपने इस्लामी राज्यमें मेरे साथ जो

व्यवहार किया गया है, उसे मैं आपसे कहना भी नहीं चाहता। मुझे इस बातने सबसे अधिक पीड़ा पहुँचायी है कि मैंने विदेशी राष्ट्रोंमें जो सहनशीलता और सौजन्य पाया, उसका हमारे अपने भाइयोंमें और मेरे अपने पाकिस्तानके लोगोंमें नितान्त अभाव है।

"छः वर्ष पहले मैंने आपसे इसी सदनमें कहा था कि पाकिस्तान मेरा अपना देश है और इसकी सुरक्षा करना तथा इसमें एकता बनाये रखना हमारा कर्त्तव्य है। मैंने यह भी कहा था कि यदि कोई दल पाकिस्तानकी प्रगति और निर्माणके हेतु कोई कार्यक्रम बनाता है तो उसे मेरा पूरा सहयोग मिलेगा। मैं अपने उन्हीं शब्दोंको एक बार पुनः दुहरा रहा हूँ। लेकिन फिर भी यहाँ कुछ ऐसे लोग हैं जो मेरी निष्ठाको सन्देहकी दृष्टिसे देखते हैं। इस सम्बन्धमें मैं केवल यह कहना चाहता हूँ कि मेरा जीवन उस संघर्षमें बीता है जिसके कारण आज एक स्वाधीन देशके रूपमें पाकिस्तान खड़ा दिखलाई देता है। यदि हम लोगोंने अंग्रेजोंको न निकाल दिया होता या उनको भारत छोड़नेको विवश न कर दिया होता तो पाकिस्तानका वजूद कहाँ होता? इसलिए जिस देशकी स्वतन्त्रताके लिए हम लोगोंने इतने कष्ट सहन किये हैं और जिसके लिए हमने अपनी जानकी बाजी लगायी है उसके साथ क्या हम कभी ग़द्दारी करेंगे? इसलिए मैं यह सलाह देना उचित समझता हूँ कि न केवल मेरी राज-निष्ठा अथवा देशद्रोहकी जाँचके लिए एक न्यायाधिकरण बैठाया जाय बल्कि चारसद्दाके कत्ले आम, आगजनी और लूटकी घटनाओंके लिए भी; स्त्रियों, बालकों और बूढ़ोंके साथ जो अपनमानजनक व्यवहार किया गया उसके लिए भी, और हम लोगोंका जो जेलोंमें दमन किया गया उसके लिए भी उसकी स्थापना की जाय।

"मेरा विश्वास है कि पाकिस्तानकी एकताके लिए यह आवश्यक है कि जनताके विभिन्न वर्ग आपसमें एक-दूसरेपर विश्वास करें और पारस्परिक अधिकारों, हितों और विशिष्ट गुणोंको आदरकी दृष्टिसे देखें। शायद आपको स्मरण होगा कि छः वर्ष पहले मैंने इस सम्बन्धमें कहा था कि पाकिस्तानकी स्थापनाके पश्चात् देशको मुस्लिम लीगकी आवश्यकता नहीं है। बंगालके पिछले निर्वाचनोंने मेरी इस मान्यताको सिद्ध कर दिया। आपको यह भी स्मरण होगा कि मैंने इस देशमें आर्थिक और सामाजिक आधारपर नये दल गठित करनेकी बात कही थी। इस बातका दुःख है कि उस समय लोगोंने मेरी सलाहको संदेहकी दृष्टिसे देखा और मेरे शब्द अपराध समझे गये। मैं इस समय भी उसी बातको दुहराना चाहता हूँ। मेरा आपसे यह कहना है कि आप इसपर ठंडे दिमाग़से सोचें।

"मेरा सदैवसे यह विश्वास रहा है कि अंग्रेजोंने हम पख़्तूनोंकी एकताको नष्ट किया है और हमें दुर्बल बनानेके लिए नये टुकड़ोंमें बाँट दिया है। पख़्तूनोंके समैक्यके लिए और उनके विभिन्न घटकोंमें पारस्परिक विश्वास जाग्रत करनेके लिए यह आवश्यक है कि पख़्तूनिस्तानकी एक इकाई बना दी जाय जिसके निवासी प्रजाति और संस्कृतिके आधारपर एक ही प्रकारके हों। इसी प्रकार पश्चिमी पाकिस्तानकी छोटी-छोटी इकाइयोंका विलयन करके तीन या चार बड़ी इकाइयाँ बना दी जानी चाहिए।

"लोग मुझसे यह अपेक्षा करते हैं कि मैं देशके आंतरिक और बाहरी मामलोंपर अपने विचार प्रकट कर सकूं लेकिन छः वर्ष लगातार जेलमें रह चुकनेके बाद अब मैं अपनेको इस स्थितिमें नहीं पाता कि मैं इन विषयोंपर आपसे निश्चित रूपसे कुछ कह सकूँ। वास्तवमें पंजाबको छोड़कर मैं अभीतक एक क़ैदी हूँ। मुझको पाकिस्तानके किसी भी हिस्सेमें जानेकी इज़ाज़त नहीं है। मेरे ख़ुदाई खिदमतगारोंके दलपर, जिसका एक उद्देश्य मानव-मात्रकी सेवा करना भी है, प्रतिबन्ध लगा हुआ है। हमारे राष्ट्रीय पत्र 'पख़्तून' का प्रकाशन पाकिस्तान बननेके दिनसे ही रोक दिया गया है और हमारा दो मंजिलका प्रशिक्षण-केन्द्र, जिसके बननेमें हमारे हज़ारों रुपये लगे थे और जिसमें ख़ुदाई खिदमतगारोंको समाज-सेवाका प्रशिक्षण दिया गया था, ज़मीनसे खोदकर फेंक दिया गया।

"फिर भी कुछ सिद्धांत हैं जिनके बारेमें मैं आपसे कुछ कहना चाहता हूँ। आप जानते हैं कि मैं सदैव अहिंसाका एक उपासक रहा हूँ। मैं अहिंसाको प्रेम और हिंसाको घृणाकी दृष्टिसे देखता हूँ। मैं कानूनके मुताबित चलनेवाला एक नागरिक हूँ और इसी बातकी मैं अपने यहाँके लोगोंसे भी अपेक्षा करता हूँ। पाकिस्तानको भी एक शान्तिप्रिय देश होना चाहिए। उसे अन्तर्राष्ट्रीय मामलोंमें भी एक शांतिपूर्ण भूमिका निभानी चाहिए। मैं चाहता हूँ कि आप विश्वके समस्त देशोंके प्रति मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखें चाहे वे किसी भी 'ब्लॉक' के क्यों न हों, या वे पूर्वके हों अथवा पश्चिमके। उसमें भी विशेष रूपसे हमें अपने पड़ोसियोंसे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखना चाहिए। यदि उनके साथ हमारा कोई झगड़ा उठ खड़ा होता है तो हमें उस झगड़ेको मित्रताके ढंगसे, आपसमें बातचीत या समझौतेके ढंगसे हल कर लेना चाहिए।

"अंतमें मुझे आपसे केवल यही कहना है कि मैंने यह आशा की थी कि पाकिस्तानकी जनताका जीवन-स्तर उठानेके लिए प्रयत्न किया जायगा लेकिन जो तथ्य सामने हैं, उन्होंने मेरी आशाओंपर तुषारापात कर दिया है। जो धनी थे, वे

और भी धनी होते जा रहे हैं और जो ग़रीब थे वे और भी ग़रीब। शरणार्थियों की स्थिति दयनीय है। देशमें नागरिक स्वतन्त्रता जैसी कोई वस्तु नहीं है। 'सेफ्टी ऐक्ट' और 'मार्शल लॉ' के अन्तर्गत लोग अब भी जेलोंमें पड़े हुए हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि सरकार और जनताके बीचकी खाई और भी चौड़ी हो गयी है। यदि समय रहते हुए इसपर ध्यान न दिया गया तो निश्चित ही कि इसके परिणाम भयंकर होंगे।"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ संविधान सभामें नियमित रूपसे उपस्थित होते थे और उसकी काररवाईमें गहरी दिलचस्पी लेते थे। ८ अप्रैलको उन्होंने 'बेसिक प्रिंसिपल्स कमेटी' की 'रिपोर्ट' पर विचार-स्थगनका प्रस्ताव रखा लेकिन यह प्रस्ताव गिर गया। मुस्लिम लीगके सदस्योंको छोड़कर केवल वे ही अधिवेशनमें उपस्थित थे। इस अवसरपर बोलते हुए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने कहा :

"हमारे माननीय प्रधान मन्त्री मौलवी फज़लुल हक़ने मंत्रिमण्डलके पदच्युत हो जानेके अवसरपर जो भाषण किया, उसपर मुझको कोई टिप्पणी नहीं करनी है और न उन आरोपोंको लेकर ही कोई बहस करनी है जो कि उन्होंने पूर्व पाकिस्तानके मुख्य मंत्रीके ऊपर लगाये हैं। फिर भी यह स्मरण दिलाना चाहता हूँ कि इससे पहले भी शासन द्वारा अन्य लोगोंपर इसी प्रकारके अत्यंत गम्भीर आरोप लगाये जा चुके हैं। हमारे सामने पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तका मामला है जहाँ कि बहुतसे व्यक्तियोंपर इसी प्रकारके अत्यंन्त गम्भीर आरोप लगाये गये थे और उनको कई सालतक जेलमें रहना पड़ा था लेकिन अंतमें हमारे शासकोंको यह पता चला कि वे आरोप सारहीन थे। उन्हें निरपराधियोंको दंड देनेपर खेद हुआ और उनको वे आरोप आधारहीन भी स्वीकार करने पड़े।

"अब मैं पूर्वी पाकिस्तानके दंगोंके जटिल प्रश्नको लेता हूँ। इस विषयको लेते समय किसीके लिए भी अपने उद्‌गार घोषित करना स्वयं उसे आकुल कर देनेवाली चीज है। मैं अहिंसाका विश्वासी हूँ और मेरी मान्यता है कि हिंसासे कभी कोई लाभ नहीं होता। वह केवल घृणा जगाती है और व्यक्तिकी उलझन को बढ़ाकर उसे हतबुद्धि कर देती है। तो भी मैं यह बिना कहे न रहूँगा कि पूर्वी पाकिस्तानकी कथित घटनाएँ उस नीतिके प्रत्यक्ष फल हैं जिसका कि आप विगत सात वर्षोंसे अनुसरण कर रहे हैं। आपने जनमतकी वाणीको अवरुद्ध कर दिया और बिना विचारणाके ही लोगोंको जेल भिजवा दिया। आपने प्रान्तीय विधान-मण्डलोंके रिक्त स्थानोंको भरनेकी चिन्ता नहीं की और जनताकी आकांक्षाओंकी ओर बिना ध्यान दिये हुए एक स्वेच्छाचारीकी भांति आप प्रान्तके

शासनको लेकर आगे बढ़ गये जब कि वहाँकी जनताकी सद्भावनाएँ आपके साथ होनी ही चाहिए थीं। वहाँ लोगोंको क्रूरतापूर्वक उत्पीड़ित किया गया और उसकी आवश्यकताओंको अनसुना किया गया। उनको हद दर्जेकी कठिनाइयाँ और अत्याचार सहन करने पड़े। इन सब कारणोंका धीरे-धीरे यह प्रभाव पड़ता गया कि मुस्लिम लीगको प्रान्तीय निर्वाचनमें नौ प्रतिशतसे अधिक स्थान प्राप्त न हो सके। पूर्वी पाकिस्तानकी जनताने अविश्वासके रूपमें मुस्लिम लीग और सरकार को अपना निर्णायक फैसला सुना दिया। लेकिन जान पड़ता है कि इस पाठका भी आपके ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है और आप लोग ऐसी राजनीतिमें फँसे हैं जो जनताकी भावनाओंको आपके प्रति और भी कड़ुवा बना देगी और ऐसी स्थितियाँ पैदा कर देगी जिनमें लोगोंको एक दूसरेपर विश्वास न रह जायगा और वे आपसमें सन्देहकी दृष्टिसे देखने लगेंगे। इन विभिन्न वर्गोंके बीच झगड़े उठ खड़े होंगे। आप लोग जन-साधारणकी वैध इच्छाओंका दमन करते हैं और एक वर्गको दूसरे वर्गके खिलाफ़ उठाते-गिराते हैं। जब मामला तूल पकड़ लेता है तो तत्काल एक बलिका बकरा पकड़ लिया जाता है और उसको सारे उपद्रवोंके लिए दोषी ठहरा दिया जाता है। मुझको भय है कि पश्चिमी पाकिस्तानमें घट-नाओंका प्रवाह जिस जोर बहता जा रहा है, वह इस ओर संकेत करता है कि इसके परिणाम भी उनसे सुखद नहीं होंगे जिनका कि हमने पिछले दिनों अपने देशके पूर्वी भागमें अनुभव किया है।

"माननीय प्रधान मंत्रीने मौलवी फज़लुल हक़के खिलाफ़ जो कुछ कहा, उसे मैंने सुना है और उसका आशय ग्रहण किया है। इस सम्बन्धमें सरकार द्वारा जो विभिन्न वक्तव्य प्रकाशित हुए हैं, वे भी मेरी दृष्टिके नीचेसे गुज़रे हैं। अपनी पिछली कराची यात्राके समय मौलवी फज़लुल हक़ और उनके मंत्रियोंने मुझे जो आश्वासन दिया था वह इनका खण्डन करता है। उन्होंने मुझसे कहा था कि पृथक् हो जानेकी बात तो वे कभी सोच भी नहीं सकते हैं। वे यह भी नहीं समझते कि उनको केन्द्रसे क्यों अलग होना चाहिए और उसमें पूर्वी पाकिस्तानका क्या लाभ है? उनके अलावा मौलाना भसानी, शहीद सुहरावर्दी और अन्य नेताओंके वक्तव्य भी समय-समयपर समाचार-पत्रोंमें प्रकाशित होते रहे हैं। लेकिन यह विचित्र स्थिति है। इसके सर्वथा विपरीत मैंने पश्चिमी पाकिस्तानके प्रभावशाली क्षेत्रोंमें फूट और विरोधकी एक भीतरी आवाज़ पायी है जो पृथक् होनेके प्रस्तावपर एक तुष्टि अनुभव करती है और उसका उद्देश्य पाकिस्तानकी दोनों भुजाओंको अलग-अलग कर देना है। कराचीमें हुए प्रदर्शन, उनमें लगाये

गये नारे, कराचीके समाचार-पत्रोंमें लगातार चलाया गया दुर्भावनापूर्ण प्रचार-अभियान और सार्वजनिक सभाओंमें किये गये भापण स्थितिके इस अध्ययनकी पुष्टि करते हैं। इन उपायोंसे बंगाली और गैर-बंगालियोंके बीच क्रोध और प्रति-हिंसाकी भावनाएँ जगायी जाती हैं। इस सम्बन्धमें मुझको और भी बहुतसी सूचनाएँ मिली हैं जिनको मैं यहाँ प्रकट नहीं करना चाहता।

"अंतमे मैं शासकोंसे यह निवेदन करूँगा कि वे इन प्रश्नोंपर स्थिर और शांत मनसे विचार करें और देशकी वर्तमान नोतिमें निहित संकटोंसे रक्षा करें।"

अमेरिकी लेखक मि० जेम्स डबल्यू० स्पेन, जिन्होंने सन् १९५८ में कराचीमें खान अब्दुल गफ्फ़ार ख़ाँसे भेंट की थी, अपनी पुस्तक 'दि ग्रेट वेज़ ऑफ पठान्स' में लिखा है :

"खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँके एक सम्बन्धी और सहयोगी मेरे लिए होटलके अहातेमें प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्होंने होटलकी तीसरी मंजिलपर एक कमरा ले रखा था। उन्होंने यह कहकर अपनी सेवाओंको एक दुभापियेके रूपमें प्रस्तुत किया कि वादशाह खाँ अंग्रेजी नहीं वोलते। कमरेके दरवाजेके वाहर दो पठान मामूली कपड़े पहने हुए पल्थी मारे वैठे थे। उन्होंने मुझको एक सूनी, उदासीन-सी दृष्टिसे देखा और पठानोंके लक्षणोंके प्रतिकूल मेरे अभिवादनका उत्तर नहीं दिया।

"हमने लम्बे और दुवले-पतले खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको एक शिकन पड़ी हुई चारपाईपर लेटे देखा। मानो इसराइलके बादशाहके फाटकपर रोगी यरमियाह (नबी) लेटा हो। वे एक घरका बुना (खादीका) सादा लम्बा कुरता पहने हुए थे जो बहुत कुछ सोनेके समय पहननेवाली कमीज़ जैसा जान पड़ता था। उनका भूरे बालोंवाला सिर खुला था। पठानोंकी विशेषता लम्बी नाकके ऊपर काली आँखें चमक उठीं और उन्होंने उस अल्प प्रकाशके धुँधलेसे कमरेको तात्का-लिक आवश्यकता—एक रोशनीसे भर दिया। वे उठे नहीं लेकिन उन्होंने अपना हाथ मेरी ओर बढ़ा दिया। उन्होंने मेरा हाथ इतना कसकर पकड़ लिया कि मैं उसको वापस न खींच सका और मैंने अपनेको उस कुर्सीपर ढीला छोड़ दिया जिसे उनके सहयोगीने धीरेसे मेरे घुटनोंके पास सरका दिया था।

"मेरा हाथ पकड़े हुए ही उन्होंने कुछ क्षण मेरी आँखोंकी ओर टकटकी लगाकर देखा और फिर पश्तोमें पूछा :

"आप हमारे यहाँके ग़रीब लागोंके बारेमें क्या जानना चाहते हैं ?"

"मैंने उनसे कहा, कि मुझको पठानोंकी हर एक चीज़में दिलचस्पी है लेकिन

इस समय मैं आपमें और आपके राजनीतिक विचारोंमें दिलचस्पी रख रहा हूँ। मैंने उनसे यह भी कहा कि मैं बहुतसे पठानोंसे मिला हूँ। यद्यपि आर्थिक दृष्टिसे वे निर्धन थे परन्तु मुझे वे गर्वीले और भावना-सम्पन्न जान पड़े।"

"आप ठीक कहते हैं।" उन्होंने मेरी बातसे सहमत होते हुए कहा, "हम पठान स्वाभिमानी लोग हैं, हालाँकि हमको सब तरहके अत्याचार सहने पड़े हैं, पहले अंग्रेजोंसे और अब इन बाबुओंसे जो अपनेको पाकिस्तानी कहते हैं। हम केवल यह चाहते हैं कि हम लोग एक आज़ादीकी ज़िन्दगी जी सकें। इतनेपर भी वे हम लोगोंको ग़द्दार कहते हैं और मुझे देशके प्रति द्रोही। मैं अपनी जनताके प्रति निष्ठावान् हूँ और उसीके प्रति मैं सदैव निष्ठावान् रहूँगा। कराचीके उन लोगोंकी बात सुननेकी बजाय आप अमेरिकावालोंको हमारी सहायता करनी चाहिए।" उन्होंने फिर कहा : "रूसवालोंको भी हमें मदद देनी चाहिए। हम आप सबका स्वागत करते हैं।'

"क्या आप यह स्वतंत्रता पाकिस्तानके बाहर चाहते हैं? क्या पाकिस्तानके भीतर स्वतंत्र नहीं हो सकते?" मैंने पूछा।

"यह कोई महत्त्वकी बात नहीं है।" खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने ज़ोर देते हुए कहा, "असली बात यह है कि हम अपना विकास करनेकी आज़ादी चाहते हैं। हमारे अपने यहाँके खान लोगोंको, जिन्होंने हमारे ऊपर अत्याचार किये हैं, हम एक झटका देना चाहते हैं, हम अपने कानून स्वयं बनाना चाहते हैं और अपनी निजकी भाषा बोलना चाहते हैं। इसके लिए वे कहते हैं कि मैं अफ़ग़ानिस्तानका एजेन्ट हूँ। इसके लिए वे मुझको ग़द्दार कहते हैं। यह झूठ है।'

"मुझको यह देखकर आश्चर्य हुआ कि थोड़ी देर बातचीत करनेके बाद उन्होंने अंग्रेजी बोलना शुरू कर दिया। मुझको ऐसा लगा कि उनका शब्द-ज्ञान कुछ सौ शब्दोंसे अधिक न होते हुए भी उन्होंने एक मंजे हुए वक्ताकी कुशलताके साथ, एक असाधारण ज़ोर देते हुए उनका प्रयोग किया है। जिस समय वे अपनी स्वाधीनताकी बात कह रहे थे उस समय उन्होंने आवेशमें अपने हाथोंको फैलाया जिससे मेरा हाथ उनके हाथसे छूट गया। लेकिन अपने अफ़ग़ानिस्तानके एजेन्ट होनेके आरोपका खंडन करते समय अपनी सच्चाईकी बात कहते हुए उन्होंने मेरा हाथ फिर अपने हाथमें ले लिया। यह कल्पना करना सरल था कि पश्तो बोलते समय उनका अपने पठान श्रोताओंपर कैसा प्रभाव पड़ता होगा—उन पठानोंपर जिनके लिए बोले गये शब्दोंका मूल्य है और जो उनके प्रशंसक हैं।

धर्मयुद्धकर्ता

१९५४-५७

अपने पड़ोसी देश भारतके विपरीत, जहाँ कि स्वतंत्र गणराज्यका संविधान सन् १९५० में लागू हो गया, पाकिस्तान १९५६ तक पराधीनताकालमें पारित विधानोंसे प्रशासित होता रहा। पाकिस्तानके संविधानके मसविदेकी चर्चा, बहुत पीछे सन् १९५० में शुरू हुई। संविधान निर्माणके दरम्यान बड़े ही तल्ख़ राजनयिक संघर्ष उठ खड़े हो गये। भावी संवैधानिक व्यवस्थाके संबंधमें स्वयं मुस्लिम लीगके अन्दर मतभेद उत्पन्न हो गये। सितम्बर सन् १९५० में जब संविधान सभामें वह अन्तरिम रिपोर्ट पेश की गयी जिसमें मूल प्रस्ताव दर्ज थे तो सत्ताधारी वर्गके परस्परविरोधी स्वार्थवाले गुटोंका संघर्ष प्रकट हुआ। इन प्रस्तावों में घोषित बुनियादी सिद्धांत लियाकत अली खाँके उन प्रस्तावोंपर आधारित थे जिनमें उन्होंने पाकिस्तान राज्यके स्वरूप और बुनियादी नागरिक अधिकारोंपर प्रकाश डाला था। एक ऐसे प्रजातान्त्रिक गणराज्यकी व्यवस्था की गयी थी जो स्वरूपमें संघात्मक हो और हर घटक प्रशासकीय इकाईको पूर्ण स्वायत्त शासनका अधिकार प्रदान करे और प्रत्येक मुसलमानको अपनी धार्मिक आस्थाके अनुसार जीवनयापन करनेका मौक़ा मुहैया करे। अधिकांश बुनियादी सिद्धान्तोंमें धर्मका पुट दिया गया था और एक ऐसे राज्यकी परिकल्पना की गयी थी जो पवित्र क़ुरानकी धर्माज्ञाओं द्वारा संचालित हो। मुल्ला लोगोंने यह फ़तवा दिया कि चूँकि पाकिस्तानके निर्माणमें मज़हबी उसूलोंने हथियारका काम किया है, इसलिए पाकिस्तानकी राजनयिक व्यवस्था भी वाजिबी तौरपर धर्मादेशोंके अनुसार ही चलायी जानी चाहिए। मुल्लाओंका जनसाधारणपर अतुल प्रभाव था।

जब संविधानके निर्माणकर्ता इन परिभाषित सिद्धांतोंको एक ठोस संवैधानिक योजनाके रूपमें ढालने लगे तो वे अपने असली उद्देश्योंको छिपा न सके। लीगके संसदीय गुटमें प्रांतोंकी विधानसभाओंमें सीटोंके बँटवारे और केन्द्रीय तथा प्रांतीय सरकारोंके पारस्परिक संबंध तथा राजभाषाके सवालपर उग्रतम मतभेद उठ खड़े हुए। बुनियादी सिद्धांत समितिकी रिपोर्टपर पंजाबी जमींदारों, उद्योगपतियों और अफ़सरोंके दबदबेसे असंतुष्ट पूर्व पाकिस्तानके प्रतिनिधियोंने तीव्र प्रतिवाद किया क्योंकि, प्रस्तावित मसविदेके अनुसार, देशकी आधेसे ज्यादा

आबादीवाले पूर्व पाकिस्तानको केन्द्रीय धारासभाओंमें तदनुरूप संख्यामें सीटें न मिलतीं और संविधान सभाके संसदीय दलमें भी उसकी हैसियत एक अल्पसंख्यक वर्गसे बेहतर न होती। उर्दू, जो कि बंगालियोंके लिए विदेशी भाषा जैसी थी, पाकिस्तानकी एकमात्र राजभाषा होती। सन् १९५१ की मर्दुमशुमारीके अनुसार उर्दू मात्र २४ लाख लोगोंकी मातृभाषा थी और यह संख्या पाकिस्तानकी कुल आबादीका केवल चार प्रतिशत थी। बंगला भाषाके साथ यह सौतेला व्यवहार पाकिस्तानके उन बहुसंख्यक लोगोंको, जिनकी मातृभाषा बंगला थी. बुरी तरह अखर गया।

राष्ट्रभाषाके रूपमें उर्दूको थोपकर सत्ताधारी गुटको आशा थी कि इससे पूर्व और पश्चिम पाकिस्तानमें एकता स्थापित होगी, पूर्व और पश्चिम बंगालके रागात्मक संबंध स्थापित होंगे और बंगालियों, पख्तूनों, सिन्धियों और बलूचियों-के राष्ट्रीय आंदोलनोंपर आघात होगा। राजभाषाके प्रश्नको लेकर पाकिस्तानमें तीव्र संघर्ष उठ खड़े हुए। पाकिस्तानके संस्थापकों—जिना और लियाकत अली-ने घोषण की थी: "पाकिस्तान एक मुस्लिम राज्य है और इसकी राष्ट्रभाषा एक मुस्लिम राष्ट्रकी भाषा होनी चाहिए और वह भाषा उर्दू ही हो सकती है, कोई दूसरी भाषा नहीं।"

जब सितम्बर १९५४ में संविधान सभामें बुनियादी सिद्धान्त समितिकी रिपोर्ट पर विचार हुआ, तो पश्चिम पाकिस्तानके प्रशासकीय विभागके पुनर्गठनकी योजना, जो 'एक इकाई' प्रस्तावसे भिन्न थी, मुख्यतया पूर्व पाकिस्तान और सिंधके प्रति-निधियोंके मतसे पारित हुई। इसमें पश्चिम पाकिस्तानमें छः प्रांतोंके निर्माणकी परिकल्पना की गयी थी: पंजाब, पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त, सिंध, बहावलपुर, खैरपुर और बलूचिस्तान। परंतु मुस्लिम लीगके पंजाबी नेताओंने संविधान सभा-के इस निर्णयका उग्र विरोध किया क्योंकि इससे उन्हें अपने प्रभुत्वपर आँच आनेकी आशंका थी। मियाँ मुहम्मद मुमताज खाँ दौलताना, मुश्ताक़ अहमद गुरमानी आदिने ऐलान किया कि पश्चिम पाकिस्तानके प्रस्तावित प्रशासकीय विभाजनसे पाकिस्तानका विघटन होगा अतः एक इकाई योजनाको ही क्रियान्वित किया जाय। पंजाबके जमींदारों और अन्य निहित स्वार्थवालोंके प्रतिनिधियोंको लगा कि यदि प्रस्तावित प्रशासकीय विभाजन चरितार्थ हुआ, तो उनकी हुकूमत खत्म हो जायगी। प्रधान मंत्री मुहम्मद अलीने एक इकाईके समर्थनमें ज़ोरदार अभियान चलाया और प्रांतवादके खतरेका हौवा खड़ा किया। सरकारने डॉ० खान साहब जैसे प्रभावशाली लोगोंको अपनी ओर मिलाकर विरोधी आवाज़ों

को कुंठित करनेका प्रयास किया। खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँ और मौलाना भसानी तथा कई अन्य लोगोंने एक इकाई योजनाका विरोध किया और एक महासमर छिड़ गया।

२४ अक्तूबर १९५४ को गवर्नर जनरलने एक फ़रमान निकाला कि संवैधानिक व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गयी है और सारे पाकिस्तानमें संकटकालीन स्थितिका ऐलान किया जाता है। आठ सदस्योंका मंत्रिमंडल गठित किया गया जिसमें मुहम्मद अली प्रधान मंत्री, अयूब खाँ रक्षामंत्री और डॉ० खान साहब कैबिनेट मंत्री बनाये गये।

२२ नवम्बरको प्रधान मंत्री मुहम्मद अलीने संपूर्ण पश्चिम पाकिस्तानको एक प्रशासकीय इकाईके रूपमें एकीकृत करनेके सरकारी निर्णयको रेडियो द्वारा प्रसारित किया। एक सप्ताहके अन्दर पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त, पंजाब और सिन्धकी विधानसभाओंने पश्चिम पाकिस्तानके प्रशासकीय एकीकरणको मतदान द्वारा समर्थित कर दिया। मुश्ताक अहमद गुरमानीने पंजाबके गवर्नर पदकी शपथ ली। शहीद सुहरावर्दीको क़ानून मंत्रालय मिला। दिसम्बरमें गवर्नर जनरल गुलाम मुहम्मदने केन्द्रीय मंत्रियों, गवर्नरों और मुख्य मंत्रियोंके एक इकाई सम्मेलनका उद्घाटन किया। सम्मेलनने तय किया कि एकीकृत पश्चिम पाकिस्तानका प्रशासकीय स्वरूप हर प्रकारसे सामान्य प्रान्तीय कैबिनेट जैसा होगा : एक गवर्नर, एक मंत्रिमंडल और एक विधानसभा। अप्रैल १९५५ में डॉक्टर खान साहब और गुरमानी पश्चिम पाकिस्तान प्रांतके क्रमशः मुख्य मंत्री और गवर्नर नियुक्त हुए।

मार्च १९५५ में खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने रावलपिंडीमें एक बयान प्रसारित किया कि अबतक उन्हें अपने प्रांतमें जानेके प्रतिबंधको सरकारने उठाया नहीं है। पिछले साल जनवरीमें जेलसे छूटते वक़्त उन्होंने सरकारको जता दिया था कि वे अपनी गतिविधिपर पाबंदी लगाये जानेकी अपेक्षा जेलमें बंद रहना पसंद करेंगे। "या तो सरकार मुझपर विश्वास करे और मुझे देशसेवा करनेका मौक़ा दे वरना मैं जेलमें ही रहना पसंद करूँगा। लेकिन उस वक़्त सरकारी प्रवक्ताने कहा था कि अविश्वासका तो कोई सवाल ही नहीं है, सरकार केवल कर्तव्यवश मेरी गतिविधियोंको प्रतिबंधित करना चाहती है और ये सारेके सारे प्रतिबंध दो या तीन माह बाद उठा लिये जायँगे। मैंने इसपर खूब सोचा है और इस नतीजेपर पहुँचा हूँ कि मेरा दोष यह है कि मुझे प्रजातंत्रपर अटूट आस्था है। जब मैंने मौजूदा सरकार और पिछली सरकारके मंत्रियोंसे एक इकाई प्रस्तावपर वार्ताकी थी तो जनताके फ़ैसलेके संबंधमें ही मेरा उनसे मतभेद रहा। मैंने कहा

कि इस मसलेका निर्णय जनताकी इच्छाको जान लेनेके वाद ही किया जाना चाहिए और पश्चिम पाकिस्तानमें इस सवालको लेकर चुनाव कराया जाना चाहिए।''

उन्होंने आगे कहा कि पिछले पन्द्रह माहमें, जवसे कि वे जेलसे छूटे हैं, उनके खयालसे सरकारका रुख उनके और उनकी पार्टीके प्रति परिवर्तित नहीं हुआ है। ''खुदाई खिदमतगार संगठन, जिसने देशके लिए त्याग किये हैं, आज भी प्रतिवंधमें है और हमारा राष्ट्रीय पत्र पख्तून, हमारी लगातार कोशिशोंके वाव-जूद, प्रकाशित करने नहीं दिया जा रहा है और मैं पूर्ववत् नज़रवंद हूँ। मैं पाकिस्तानमें पंजावके वाहर कहीं जा नहीं सकता और पंजावमें भी, अगर चाहूँ कि ग़रीवों और वेसहारा लोगोंकी मदद करके कोई सामाजिक कार्य करूँ, तो कर नहीं सकता। मुझपर शककी नज़रसे देखा जा रहा है। मैं जहाँ भी जाता हूँ, पुलिस मेरा पीछा करती है और जहाँ कहीं मैं ठहर जाता हूँ वहीं पुलिस चौकीदार वनकर लोगोंको मुझसे मिलनेसे रोक देती है। असलमें मैं जो काम करना चाहता हूँ वह किसी भी अच्छी सरकारका कर्तव्य माना जाता है और हमारी सरकारको चाहिए कि हमें इसमें मदद पहुँचाये। उल्टे वह मेरे मार्गमें वाधाएँ खड़ी कर रही है। पन्द्रह माहतक इंतजार कर चुकनेके वाद अव मैं सरकारको उसके उस वायदेकी याद दिलाना चाहता हूँ जो उसने मुझसे रावल-पिंडी सेन्ट्रल जेलसे मुक्त होते वक्त किया था।''

२५ मार्चको लाहौरमें पत्रकारोंसे मुलाकातके दरम्यान खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने पश्चिम पाकिस्तानके प्रशासकीय एकीकरणको कठोर समीक्षा की। अपने भाई डॉ० खान साहवसे अपना मतभेद व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा : ''मेरा यह विश्वास है कि सांस्कृतिक और भाषावाद क्षेत्रोंकी मौजूदगी और उनके उन्न-यनसे राष्ट्रीय एकताके माहौलकी कोई क्षति नहीं हो सकती। इस राष्ट्रीय मसले-पर जनताको अपना मत व्यक्त करनेका मौक़ा मिलना ही चाहिए। हमें अपने पड़ोसी देश भारतके अनुभवसे सवक लेना चाहिए, जहाँ तेलुगु भाषी जनताकी भावनाओंका सम्मान करते हुए मद्रास राज्यकी सीमाएँ निर्धारित कर दी गयीं।'' उन्होंने कहा कि यदि एक इकाई योजनाको जनतापर थोप दिया गया तो इससे प्रातीयताकी भावना घटनेके वजाय वढ़ेगी और इससे पाकिस्तान कमज़ोर होगा। उन्होंने वताया कि मैंने केन्द्रीय सरकारके कुछ मंत्रियोंसे कह रखा है कि योजना को जनतापर वरजोरी थोपा न जाय और यदि जनताकी राय ईमानदारीसे नहीं ली गयी तो मैं सदैव इसका विरोध करता रहूँगा।

यह पूछनेपर कि क्या सीमांत विधानसभा द्वारा एक इकाई योजनाका स्वागत जनसमर्थनका सूचक नहीं है, खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने कहा कि यदि मुझे सीमांप्रांतमें जानेकी इजाज़त दी जाय, तो मैं सारी दुनियाको दिखा दूँगा कि एक इकाई योजनाको सचमुच ही कितने लोग पसंद करते हैं।

एक सप्ताह बाद उन्होंने अपने आलोचकोंसे अर्ज की कि वे तुच्छ, व्यक्तिगत और राजनीतिक महत्त्वाकांक्षाओंको साधनेके लिए इस्लामका नारा देना बंद करें : "कुछ अखबारों और चंद राजनीतिज्ञों द्वारा योजनाबद्ध रूपसे, एक इकाई योजना द्वारा पश्चिम पाकिस्तानके एकीकरणके संबंधमें मेरे विचारोंको लेकर जनताको भुलावेमें डालनेकी कोशिश की जा रही है। मैंने यह स्पष्ट घोषणा कर दी है कि भाषावार और सांस्कृतिक इकाइयाँ राष्ट्रीय एकताके विरोधमें नहीं खड़ी हो सकतीं। पाकिस्तानके बननेके पहलेसे ही मेरा यह विचार बन चुका है। मैंने दलीलोंके आधारपर हमेशा यही कहा है कि क्षेत्रीय स्वायत्तता ही प्रांतीयता और संकीर्णताको समाप्त करनेकी एकमात्र राह है और इसीकी बुनियादपर एक प्रजातांत्रिक और प्रगतिशील राष्ट्र उभारा जा जकता है। मुस्लिम लीगके लाहौर अधिवेशनमें ही स्वशासित प्रांतीय इकाइयोंकी परिकल्पना की गयी थी। मेरा दृष्टि-कोण मेरे अतीतसे संगत है और मैं उसपर अटल हूँ।"

उन्होंने आगे कहा, "यह मेरा निजी दृष्टिकोण है। लेकिन मैंने यह हमेशा कहा है कि सभी मसलोंपर अंतिम निर्णय करना जनताका काम है। एक इकाई-वाला मसला भी उसे ही तय करना है। अगर वह एक इकाई चाहती है तो कोई बाहरी ताक़त उसपर अपना भिन्न निर्णय थोपनेकी कोशिश न करे। यदि, जैसा कि दावा किया जा रहा है, जनता निस्संदिग्ध रूपसे एक इकाईके पक्षमें है तो शासक लोग इस मसलेको तय करनेके लिए जनताके सामने पेश करनेसे घबराते क्यों हैं? मैं किसी भी स्थितिमें जनताकी उपेक्षा किया जाना पसन्द नहीं करूँगा।"

पाकिस्तानी अधिकारीगण एक इकाई योजनाको चलानेपर तुले हुए थे। इससे पश्तोभाषी लोगोंकी पृथक् क्षेत्रीय इकाईकी मांगकी जड़पर कुठाराघात होता था। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने इसका विरोध करके अधिकारियोंसे सीधी टक्कर मोल ली।

जुलाई १९५५ में जब रेडियो पाकिस्तानने पश्तो प्रसारण रोककर खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ परसे सीमाप्रांतमें जानेपर लगी रोक हटानेकी घोषणा की तो लोग वहाँ स्थान-स्थानपर गले मिलने और नाचने लगे। इस अप्रत्याशित चालपर

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँने लिखा है :

"उन लोगोंकी मंशा मुझे सात साल बाद भी आज़ाद छोड़नेकी नहीं थी। उन लोगोंने मुझे बंगाल रेगुलेशन्सके अन्तर्गत लगी रोकसे उबारकर पंजाबमें सुरक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत नज़रबन्द किया। मैं पहले वाहमें रहा और फिर चचमें। एक रोज़ मुझसे पत्रकारोंने बताया कि इस्कदर मिर्ज़ाने यह बात ज़ाहिर कर दी है कि सरकार मुझे गिरफ़्तार करना चाहती है। हमपर आरोप लगाया गया कि हम हिंदू हैं और भारतीय पंचमांगी हैं। वह आरोप निर्मूल सिद्ध हो गया। अब मुझपर यह आरोप लगाया जानेवाला था कि मैं अफ़गानिस्तानके साथ साँठ-गाँठ कर रहा हूँ।

"इसी बीच, पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तमें अब्दुल क़यूमके स्थानपर अब्दुल रशीद मुख्य मंत्री बने। १२ जुलाई १९५५ को मरीमें एक इकाई योजनापर बोलते हुए उन्होंने दावा किया कि एक भी शख्स न तो बंगाल रेगुलेशनके अन्तर्गत और न सुरक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत नज़रबंद है। एक बंगाली पत्रकारने मेरा नाम लेकर उनके कथनको चुनौती दी। इसपर अब्दुल रशीदने जवाब दिया कि मेरी नज़र-बंदीके लिए केन्द्रीय सरकार जिम्मेदार है। जहाँतक उनका सवाल है, वे सीमा-प्रान्तमें मेरी वापसीका स्वागत करेंगे।

"कार्यकारी गवर्नर जनरल इस्कंदर मिर्ज़ाको महसूस हुआ कि अब्दुल रशीद के इस बयानसे वे एक वेहूदी परिस्थितिमें डाल दिये गये हैं और उनकी कारर-वाईका कोई औचित्य न रहा और तब केन्द्रीय सरकारने मुझे प्रतिबंधित करने-वाले सारे आदेश मंसूख कर दिये और अब्दुल रशीद इसके बाद ज्यादा दिन मुख्य मंत्री पदपर रह नहीं सके।"

अटक पुलसे लेकर जहाँगीरातक, खान अब्दुल ग़फ्फार ख़ाँ अवामी लीगके नेता मंकी शरीफ़के पीर साहबके साथ मोटरकारोंके हुजूमके साथ ले जाये गये और रास्तेमें हर कहीं ग्रामीणोंने उनका शानदार स्वागत किया। 'बादशाह ख़ाँ ज़िंदा-बाद' के गगनभेदी नारे लगे और उन्हें ढेरों मालाएँ पहनायी गयीं। १७ जुलाई १९५५ को जहाँगीरामें सन् १९४८ में नज़रबंदीके बाद पहली बार भाषण करते हुए उन्होंने कहा : "पिछले सात वर्षोंके अंदर आप लोगोंने बहुत सारे उथल-पुथल देखे हैं। एक राष्ट्रके निर्माणमें ऐसा होना अवश्यम्भावी है। मुझे इस बात-की प्रसन्नता है कि आप लोग हर इम्तहानमें कामयाब साबित हुए। आप लोगोंमें राजनीतिक जागर्ति आ गयी है। आपके दिल मज़बूत हैं। आपके साथ दिक्क़त यह है कि आप लोग अपनी उपलब्धियोंको अपने पास संजोकर रख नहीं पा रहे

हैं। आप लोगोंने अंग्रेजोंको खदेड़कर आज़ादी हासिल कर ली। लेकिन स्वार्थके वशीभूत होकर आप आज़ादीको पुख्ता नहीं कर सके और फलतः आपका वतन हर प्रकारकी मुसीवतोंसे घिरा हुआ है : भुखमरी, अज्ञान, कपड़ों और अन्य वुनियादी ज़रूरतकी चीज़ोंकी क़हत। मैंने आप लोगोंको नसीहत दी थी कि आप अपना घर खुद खड़ा करें, सेवाकी भावना विकसित करें, स्वार्थ छोड़ें और सच्चे इनसान वनें। यह वड़े दर्दकी वात है कि आप लोगोंने मेरी वातोंपर ध्यान नहीं दिया और अपनी आत्माको कौड़ियोंके मोल वेच डाला।"

उन्होंने नौशेरा और पब्बीमें सार्वजनिक भाषण किये, जहाँ कि उन्हें मानपत्र दिये गये और हर मसलेपर उन्हें सहयोग देनेका वचन दिया गया। पेशावरमें उन्होंने पत्रकारोंसे कहा कि पश्चिम पाकिस्तान संवंधी एक इकाई योजनापर मेरे विचारोंमें कोई वदलाव नहीं आया है। उन्होंने आगे कहा : "मैं इस वक़्त इस मसलेपर ज़ोर देकर कुछ भी नहीं कहना चाहता क्योंकि सरकारसे मेरी वातचीत चल रही है और वार्ताका अन्तिम निर्णय शीघ्र ही घोषित किये जानेकी संभावना है।"

यह पूछे जानेपर कि क्या अव भी पख्तूनिस्ताकी उनकी मांग वदस्तूर जारी है और पख्तूनिस्तानकी उनकी निजी और अफ़गानिस्तानकी मांगोंमें क्या अंतर है; उन्होंने जवाव दिया कि अफ़गानोंकी मांगसे मेरा कोई संवंध नहीं और पख्तूनिस्तान प्रांतकी मेरी कल्पना पाकिस्तानके अविभाज्य अंगके रूपमें है।

पेशावरमें वोलते हुए उन्होंने कहा : "जनताको सेवा मेरी ज़िंदगीका सवसे वड़ा लक्ष्य है। मेरे राजनीतिक उद्देश्योंके संवंधमें स्वार्थी राजनीतिज्ञोंने वहम खड़े कर दिये हैं। एक खास तवक़ेके समाचारपत्रोंने इन वहमोंपर विश्वास करनेमें और उन्हें अधिकाधिक प्रचारित करनेमें कुछ भी उठा नहीं रखा है। मुझे किसीसे कोई शिकायत नहीं है और मैं अपने देशकी जनतासे यह अर्ज करता हूँ कि वह मेरे जीवनके उद्देश्योंके वारेमें गुमराह न हो और मेरे सार्वजनिक वयानोंकी ग़लत व्याख्या न करे और मेरे साथ ऐसी वातें न जोड़ी जायें जिन्हें मैंने कभी कहा या किया नहीं। मेरा जन्म पाकिस्तानकी धरतीपर हुआ है और उसकी अखंडता और प्रगति मेरी राजनीतिक आस्थाकी जान है। संवैधानिक मसलोंपर मेरी राय कुछ भी हो सकती है, लेकिन केवल इतनेसे ही कोई भी नेता, चाहे वह कितना ही महान् क्यों न हो, मेरी वतनपरस्तीपर शक़ करनेका हक़दार नहीं हो जाता।"

पेशावरसे खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ अपने सहकर्मियोंसे मिलने सरदरयाव

चले। २० जुलाईको डा० खान साहबने उनसे मुलाक़ात की और उन्हें एक इकाई योजनाके विरोधमें अभियान चलानेसे रोकनेकी नाकामयाब कोशिश की। एक रोज सवेरे वे बबरा गाँव गये और वहाँ उन्होंने उन मृत खुदाई खिदमतगारोंकी आत्माकी शांतिके लिए प्रार्थना की, जो सन् १९४८ में गोलियोंकी बौछारोंमें मारे गये थे। वहाँ जनताने उनका भव्य स्वागत किया। उस अवसरपर बबरा हत्याकांडपर विख्यात पख्तून कवि अब्दुल मलिक फ़िदाकी एक मार्मिक रचना पढ़ी गयी :

> "काँखमें दाबे कफ़न, मैदाने-जंगको मैं चला,
> अरी मौत, जरा ठहर, मैं गले लगने आ रहा हूँ,
> सिर हथेलीपर लिये, खुदाकी अदालतको मैं चल पड़ा हूँ
> मैदाने-जंगमें गूँजी आवाज़, 'फ़ख्र-अफ़ग़ान'
> तुम्हारी कामयाबीके वास्ते हम जाँ निसार करते हैं
> ये जमघट हमारा तुम्हारे दीदारके वास्ते है।"

इस मौकेपर खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ और बहुतोंकी आँखें छलछला आयीं।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँका समर्थन प्राप्त करनेके लिए मेजर जनरल इस्कंदर मिर्जाकी हफ्तों लंबी कोशिशें, गृहमंत्री और डाक्टर खान साहबकी कोशिशें २६ जुलाईको पेशावरमें नाकामयाबीमें समाप्त हुईं। गृहमंत्रीने पत्रकार संमेलनमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँपर यह दोषारोपण किया कि वे एक स्थायी और ताक़तवर पाकिस्तानके बनानेमें बाधक बन रहे हैं और ऐलान किया कि सरकार खुदाई खिदमतगार आंदोलनका पुनरुत्थान होने नहीं देगी। उन्होंने ज़ोर देकर कहा कि इस आंदोलनने "राज्यके जन्मकालमें शांति और व्यवस्थाको खतरा पहुँचाया था और आगे भी यह ऐसा कर सकता है।" सरकारने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँपरसे प्रतिबंध हटाकर उन्हें मौक़ा दिया है कि वे अपनेको देशभक्त सिद्ध करें। लेकिन मुझे अफ़सोस है कि उनकी हरक़तोंसे सरकारकी प्रत्याशाओंको आघात लगा है। मुझे इस बातकी आशंका है कि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ और उनका संगठन इस बातकी पूरी कोशिश करेंगे कि सरकार और उनके गुमराह साथियोंमें टक्कर हो जाय। "सरकारके खिलाफ़ चलाया जानेवाला आंदोलन, चाहे वह अहिंसात्मक ही क्यों न हो, एक ऐसी चीज़के खिलाफ़ है, जो जनताकी अपनी है।" उन्होंने आगे कहा कि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँकी गतिविधिको देखते हुए ऐसा सोचनेपर मज़बूर होना पड़ता है कि वे देशमें एक स्थायी और शक्तिशाली व्यवस्थाकी स्थापनाके खिलाफ़ हैं और उनके दिमाग़की बनावट रचनात्मक कार्यक्रमोंके विरोध

में है, क्योंकि उन्होंने ग्राम सहायता योजनामें मदद देनेके सरकारी प्रस्तावको ठुकरा दिया है। उन्होंने कहा कि, "कोई भी नमकहलाल सरकार खुदाई खिद-मतगार आंदोलनको बरदाश्त नहीं कर सकती" और सरकार एक इकाई योजना को लागू करनेके लिए कमर कसकर तैयार है।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने पाकिस्तान सरकारको चुनौती दी कि वह पश्चिम पाकिस्तानके एकीकरणके प्रश्नपर अविलम्ब चुनाव कराये। मैं जनताका फैसला शिरोधार्य करूँगा। उन्होंने कहा कि वर्तमान संविधान सभा प्रतिनिधि संस्था है ही नहीं और मैं एक इकाई योजनाके समर्थनमें दिया गया उसका निर्णय कभी भी नहीं मानूँगा। उन्होंने मांग की कि नयी संविधान सभा ईमानदारी और निष्पक्षता-पूर्वक गठित की जाय। सत्ताधारी लोग जनतापर एक इकाई योजनाको थोपनेमें निहित खतरोंको महसूस नहीं कर रहे हैं। उन्होंने कहा, "यह एक अजीब बात है कि जो लोग पीढ़ियोंसे अंग्रेजोंके गुर्गे रहते आये हैं वे अंग्रेजोंको खदेड़नेवालोंको ग़द्दार कह रहे हैं।" उन्होंने इस बातको मिथ्या कहा कि सरकारने उनपरसे प्रति-बंधोंको हटाकर उनपर विशेष रियायत की है। वरना ४८ घण्टे पहले गृहमंत्री मुझे कड़ी कारंरवाईकी धमकी देनेकी हिमाकत कैसे करते? उन्होंने इस्कंदर मिर्ज़ाके इस आरोपका प्रतिवाद किया कि वे अपने अनुयायियों और सरकारके बीच संघर्ष कराना चाहते हैं और इस बातपर ज़ोर दिया कि खुदाई खिदमत-गार अहिंसाके लिए कृतसंकल्प हैं।

उन्होंने इस बातपर ज़ोर दिया कि उनके संप्रदायमें प्रांतवादको क़तई जगह नहीं है और वे पंजाबियोंको अपना भाई समझते हैं। उन्होंने समझाया कि प्रांत-वाद एक इकाई योजनाके फलस्वरूप जन्मा है और इसे पंजाबके कुछ पत्र बढ़ावा दे रहे हैं। उन्होंने जनतासे अर्ज की कि वह ऐसे ज़हर-भरे अखबारोंको न पढ़े। उन्होंने कहा कि मुझे शक है कि ये पत्र सत्ताधारी लोगों और अन्य स्वार्थी गुटोंके इशारोंपर ही ऐसा अभियान चला रहे हैं। उन्होंने चेतावनी दी कि यदि पश्चिम पाकिस्तानके एकीकरणके पूर्व ही प्रान्तवाद भड़ककर गंभीर रूप धारण कर लेता है तो यह कहना बड़ा ही कठिन होगा कि भविष्यमें घटनाओंका रुख कैसा होगा।

उन्होंने गृहमंत्रीकी इस टिप्पणीका मज़ाक उड़ाया कि सरकारकी नीति कभी पाकिस्तानके किसी नागरिकको रोककर रखनेकी नहीं रही। पाकिस्तानके आठ वर्षके अस्तित्वमें सात वर्षसे अधिक समयतक या तो वे जेलमें रखे गये या प्रान्तसे बाहर। सरकार उनके साथ इससे अधिक क्या व्यवहार करना चाहती? उन्होंने पूछा।

जिन लोगोंके हाथमें सत्ता है वे दिन-रात लोकतन्त्रकी क़समें खाते हैं फिर भी वे अपनी ताक़तसे, बलसे स्वार्थ पूरे करनेपर तुले हुए हैं। यदि लोकतन्त्रका अर्थ जनतासे है, तो कोई भी बड़ा निर्णय लेनेसे पहले जनताकी अवश्य ही राय ली जानी चाहिए। ताक़तके ज़रिये की गयी चीज़ कभी स्थायी नहीं होती। उन्होंने आगे पूछा कि क्या सरकारसे मतभेद रखना कोई पाप है? लोकतन्त्र विचारके अन्तरकी तो पूर्व कल्पना कर लेता है। यहाँतक कि पैग़म्बर (मुहम्मद साहब) ने भी इसको स्वीकार किया है। लेकिन दुर्भाग्यवश पाकिस्तानमें मतभेदका तात्पर्य ग़द्दारी माना जाता है।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने यह घोषणा की कि वे इस बातको भली भाँति समझ चुके हैं कि पठानोंको एक राष्ट्रके रूपमें एक इकाई योजनासे हानि पहुँचेगी। यहाँकी जनतामें राजनीतिक दृष्टिसे भारतके किसी भी भागकी जनताकी अपेक्षा अधिक चेतना है। सीमाप्रांत ही अकेला ऐसा प्रान्त है जहाँ कि वे सचमुच जनताकी एक सरकार बना सकते हैं, यदि निर्वाचनमें कोई गड़बड़ी नहीं होती। पाकिस्तानके शेष प्रांतोंके साथ ऐसी बात नहीं है। उदाहरणके लिए पंजाबमें हमेशा गुरमानी, नून, तिवाना और दौलताना लोगोंका शासन बना रहेगा। उन्होंने ज़ोर देकर कहा कि राजनीतिक चेतनाकी दृष्टिसे पंजाब इतना पिछड़ा हुआ है कि वहाँ वे १९ महीनेके कठोर कार्यके बाद भी एक राजनीतिक कार्यकर्त्तातक तैयार न कर सके। इसी प्रकारसे सिंधमें मुट्ठीभर जागीरदार जनताके ऊपर शासन करते रहेंगे। उन्होंने यह घोषणा की कि जबतक पंजाब और पश्चिमी पाकिस्तानके अन्य भागोंमें वैसी ही राजनीतिक चेतना नहीं आ जाती जैसी कि पठानोंमें है तबतक सीमाप्रान्तको पश्चिमी पाकिस्तानमें विलीन कर देना उसके साथ न्याय करना नहीं होगा। उन थोड़ेसे लोगोंके लिए, जिनके उसमें स्वार्थ निहित हैं, पठान लोग क्यों तकलीफ़ झेलें? उन्होंने कहा कि विलीनीकरणकी योजनासे उन मुट्ठीभर व्यक्तियोंको छोड़कर, जिनका कि उसमें स्वार्थ निहित है, किसीको कोई लाभ नहीं होगा। पंजाबकी जनता भी उससे किसी प्रकारसे लाभान्वित नहीं होगी। उन्होंने सत्ताधारी लोगोंको यह चेतावनी दी कि वे कुछ स्वार्थोंकी पूर्तिके लिए राष्ट्रके हितोंका बलिदान न करें।

उन्होंने इस बातका आश्वासन दिया कि यदि जनताके ऊपर बलपूर्वक एक इकाई योजना नहीं लादी जाती तो वे देशकी कहीं भी, पूरी क्षमताके साथ सेवा करनेको तैयार हैं। उन्होंने "जिसकी लाठी उसकी भैंस" की नीतिको खतरनाक बतलाते हुए उसके लिए सरकारको सचेत किया।

२९ जुलाईको फ्रन्टियर अवामी लीग और खुदाई खिदमतगारोंका मंकी शरीफमें एक संयुक्त सम्मेलन हुआ। उसमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ और मंकी शरीफ़के पीर साहबको ये अधिकार दिये गये कि वे एक इकाई योजनाको लागू करनेके विरोधमें उपयुक्त क़दम उठायें। सम्मेलनने सात घंटेके विचारके पश्चात् छः प्रस्ताव पारित किये। उनमेंसे एक प्रस्तावमें यह कहा गया था :

"एक इकाई योजनाका प्रस्ताव यथार्थ रूपमें एक प्रशासन सम्बन्धी मामला नहीं, बल्कि आधार रूपसे एक संवैधानिक प्रश्न है जिसके लिए जनताको ही फैसला करना चाहिए। और यदि पश्चिमी पाकिस्तानका विलीनीकरण बिना जनमत-संग्रहके किया गया तो वह स्वीकार नहीं किया जायगा।" इस बातपर ज़ोर दिया गया कि पाकिस्तानकी परिकल्पना ही राजनीतिक स्वातन्त्र्यको लेकर की गयी है और एक इकाई योजना उस वचनके बिलकुल विपरीत है। "इसके अतिरिक्त प्रस्तावित विलीनीकरणसे राजनीतिक और आर्थिक दोनों दृष्टियोंसे सीमाप्रान्तकी हानि है। बलपूर्वक लागू किया गया विलीनीकरण छोटे प्रांतोंके मनमें एक संदेह उत्पन्न करेगा और एक घृणा जगायेगा।" सम्मेलनने सीमाप्रान्तकी जनतासे यह अपील की कि वह अपने दलगत मतभेदको भूलकर आपसमें संगठित हो और कागजी काररवाईके लिए अपनेको तैयार रखे।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ जहाँ भी गये वहाँ जनताको ओरसे उनको उत्साहपूर्ण समर्थन मिला। सरदरयावके केन्द्रके पुनर्निर्माणके फंडमें स्त्रियोंने मुक्त भावसे अपने गहने तथा मूल्यवान् वस्तुएँ भेंट कीं। एक इकाई योजनाके विरोधमें जेल जानेके लिए लगभग २०,००० स्वयंसेवकोंने अपने-आपको अर्पित किया। पेशावरकी बादशाह खाँ स्वागत समितिने उनको आमंत्रण दिया; उनसे यथासम्भव शीघ्र जिलेका दौरा करनेकी प्रार्थना की। उन्होंने लिखा : "यदि उनकी यह प्रार्थना स्वीकार नहीं की जाती तो इन ८०० गाँवोंके सारे बालिग लोग अपने राजनीतिक और आध्यात्मिक नेताके प्रति अपना सम्मान प्रदर्शित करनेके लिए सरदरयावतक पैदल यात्रा करेंगे।"

१६ सितम्बरको अपने सीमाप्रांतके दौरेको पूरा करके खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने पेशावरमें अपना यह इरादा घोषित किया कि वे बलूचिस्तानमें एक इकाई योजनाके विरोधमें एक अभियान आरम्भ करने जा रहे हैं। उनको वहाँ 'पख्तून भ्रातृत्व' संस्थाके संस्थापक, बलूची गांधी खान अब्दुस्समद खाँ द्वारा आमंत्रित किया गया था। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने कहा, उन्होंने यह सुना है कि बलूचिस्तानमें उनके प्रवेशपर प्रतिबन्ध लगा हुआ है। लेकिन वे उसे तोड़ेंगे। दूसरे

दिन खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने अपने दो साथियोंके साथ बलूचिस्तानकी सीमा में प्रवेश किया। वहाँ उनको बेलूरून गाँवमें गिरफ्तार कर लिया गया। तीनों व्यक्तियोंको माचकी सेन्ट्रल जेलमें ले जाया गया और वहाँ २६ सितम्बरको उनको रिहा कर दिया गया।

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने कराची, पंजाब, बंगाल और सीमाप्रांतकी एक इकाई योजनाके विरुद्ध अभियान छेड़ दिया। नवम्बरमें उन्होंने एक सार्वजनिक सभामें कहा : "मुझे अपने लिए कुछ नहीं चाहिए। मेरे पास सब कुछ है। मेरे बड़े भाई पश्चिमी पाकिस्तानमें मुख्य मंत्री हैं और पख्तून समाजमें बड़े भाईको पिताके समान आदर दिया जाता है। लेकिन इसके बावजूद मैंने एक इकाई योजनाके विवादास्पद प्रश्नपर अपनी असहमति प्रकट करनेका साहस किया क्योंकि मैं उसमें अपनी जनताकी एक बहुत बड़ी हानि देख रहा हूँ।" बादमें उन्होंने कहा, "डा० खान साहब पंजाबियोंको रिश्वत देकर पठानोंको बरबाद कर रहे हैं। मैं ऐसे लोगोंको राष्ट्रका प्रतिनिधि स्वीकार करनेको तैयार नहीं हूँ जो सत्ता और स्वार्थोंके लिए लोगोंको ईमानदार और बेईमान ठहराते हैं।"

१६ जून सन् १९५६ को उतमंजईसे आठ मील दूर शाही बाग़में वे गिरफ्तार कर लिये गये। उनपर यह आरोप लगाया गया कि वे जनतापर ऐसा प्रभाव डाल रहे हैं जो पाकिस्तानकी सुरक्षा और क्षेत्रीय समैक्यकी दृष्टिसे आपत्तिजनक है और वे कानून द्वारा स्थापित सरकारके प्रति एक घृणा और तिरस्कारकी भावना जाग्रत कर रहे हैं। उनपर यह दोष भी लगाया गया कि उन्होंने जनताके विभिन्न वर्गोंके बीच वैमनस्य, घृणा और शत्रुताकी भावनाएँ फैलायी हैं। इसके साथ ही पब्लिक सेफ्टी एक्टके अन्तर्गत खान अब्दुस्समदको भी क्वेटामें गिरफ्तार कर लिया गया।

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार ख़ाँको पेशावर ले जाया गया और फिर उनको हरिपुर जेलमें रख दिया गया। उनकी गिरफ्तारीके तत्काल बाद पेशावरमें एक इकाई योजनाका विरोध करनेवाले प्रमुख कार्यकर्त्ताओंके घरोंकी तलाशी ली गयी।

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँकी विचारणा कई बार स्थगित करनेके पश्चात् पश्चिमी पाकिस्तानके लाहौर स्थित उच्च न्यायालयमें ३ सितम्बर १९५७ को जस्टिस शबीर अहमदके आगे प्रारम्भ हुई। अदालतका कमरा भरा हुआ था—विशेष रूपसे सरहदके लोगोंसे। कई सार्वजनिक भाषणोंका उद्धरण देते हुए सरकारी वकीलने यह सिद्ध करनेकी कोशिश की कि खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ अपने भाषणोंमें बहुत जोरदार ढंगसे पाकिस्तानमें पठानोंके साथ दुर्व्यवहार होने-

की बात कहते हैं। उन्होंने खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँपर पठानोंको हिंसात्मक कार्योंके लिए भड़कानेका भी दोषारोपण किया। उन्होंने कहा कि पख्तूनिस्तान लेनेके लिए वे हत्याओंतकको न्यायसंगत बतलाते हैं। सरकारी वकीलने कहा कि उनके भाषण जनताके विभिन्न वर्गोंमें घृणा और वैमनस्य जगानेकी भावनासे प्रेरित थे, साथ ही वे देशके स्थायित्वको धमकियाँ दे रहे थे।

६ सितम्बरको खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने अदालतके सामने उर्दूमें १९ पृष्ठका एक वक्तव्य प्रस्तुत किया। उसका हिन्दी रूपान्तर यह है :

"यह दावा किया जाता है कि पाकिस्तान इस्लामी सिद्धान्तोंपर आधारित एक लोकतंत्र है। हदीस शरीफ़में यह लिखा है कि निरंकुश राजाके सामने सत्यका एक शब्द भी बोलना 'जिहाद' का सबसे ऊँचा रूप है। पैग़म्बर (मुहम्मद साहब) का अत्यंत आज्ञाकारी अनुयायी और सेवक होनेके नाते मैंने इस आदर्श-वाक्यको सदैव अपनी दृष्टिके आगे रखनेकी कोशिश की है। श्रीमान्‌के आगे मेरा हदीस शरीफ़के इस ज़िक्र करनेका उद्देश्य यह है कि आप फैसला सुनाते समय इसे अपने ध्यानमें रखें।

"श्रीमान् मेरे अभियोगोंके आरोपोंपर विचार करें, इससे पहले मैं विद्वान् न्यायाधीशके सामने अपने कार्य, अपने जीवन और अपने क्रिया-कलाप सम्बन्धी कुछ तथ्य प्रस्तुत करनेकी अनुमति चाहता हूँ :

"सन् १९०७ में जब मैंने अपनी मैट्रिक परीक्षा दी तब मेरे पिता इंजीनियरिंगकी शिक्षाके लिए मुझको इंगलैण्ड भेजना चाहते थे। हम दो भाई हैं। हममेंसे एक, जो इस समय डा० खान साहबके नामसे प्रसिद्ध हैं, उस समय इंगलैण्डमें डाक्टरी पढ़ रहे थे। घरपर मैं ही अकेला लड़का था। मेरी माँ मुझे इंगलैण्ड भेजनेके लिए राज़ी न हुई। अपनी माताको प्रसन्न करनेके लिए मैंने विदेश जानेका विचार त्याग दिया क्योंकि मैं माँकी इच्छाओंको मानकर उनके अनुसार कार्य करनेको श्रेष्ठतम गुण समझता था।

"उन दिनों हमारे यहाँकी जनता—पठान लोग अन्धेरेमें भटक रहे थे। हमारे क्षेत्रमें कोई विद्यालय न था और यदि कोई था भी तो मुल्ला लोग उन स्कूलोंमें बच्चोंको भेजनेका विरोध करते थे। वे सोचते थे कि ये विद्यालय अंग्रेजोंके स्थापित किये हुए हैं और उनमें शिक्षा प्राप्त करना इस्लामके विरुद्ध है।

"इसलिए शिक्षाके प्रसारके लिए, मैंने अपने कुछ सहयोगियोंके सम्मिलित प्रयाससे इस्लामी विद्यालयोंकी स्थापनाके लिए एक हलचल शुरू की। इसका फल यह हुआ कि हम बहुतसे स्कूल स्थापित करनेमें सफल हुए। इसी बीच

खिलाफत आन्दोलन प्रारम्भ हो गया और इस्लामका एक नम्र अनुयायी होनेके कारण मैं उसमें सम्मिलित हो गया। इस आन्दोलनके सिलसिलेमें मुझको तीन वर्षके कठोर कारावासका दण्ड दिया गया। उन दिनों मेरे मनमें यह भावना भी उत्पन्न हुई कि यद्यपि हमारे शैक्षणिक प्रयासोंमें विकास और सफलताके लक्षण दिखलाई दे रहे हैं लेकिन हमारी सामाजिक स्थितियाँ पहले जैसी ही खराब चल रही हैं।

"इसके कुछ समय पश्चात् खुदाई खिदमतगार आन्दोलन प्रारम्भ हो गया। वह शुद्ध रूपसे समाज-सुधार सम्बन्धी एक आन्दोलन था और उसका उद्देश्य हमारे समाजमें फैली हुई कुरीतियों और रूढ़ियोंको मिटाना था। लेकिन हमारा यह अभियान अभी कुछ मास पुराना भी न हो पाया था कि सरकारने हम लोगों-को गिरफ्तार कर लिया। इस घटनासे मेरे हृदयपर बड़ा आघात लगा। सरकार ने हमारे समाज-सुधार सम्बन्धी आन्दोलनको ऐसे अमानवीय तरीक़ोंसे कुचला जिनकी यहाँ चर्चा करनेमें भी मुझको लज्जा आती है। इस प्रकार वर्ष निकलते गये।

"सन् १९३० में मैं गुजरात जेल भेज दिया गया। उस समय इस कारागार-में केवल पंजाबके राजनीतिक क़ैदी रखे जाते थे। वहाँ मेरे दो-एक सहयोगी मुझसे मिलनेके लिए आये। ब्रिटिश सरकार हमारे यहाँके लोगोंपर जो अत्या-चार कर रही थी उसकी भयानक कथा उन्होंने मुझको सुनायी। उसे सुनकर हमारे हृदयपर एक धक्का लगा और आपसमें विचार-विमर्श करनेके बाद हमने अपने मित्रोंको दिल्ली, लाहौर और शिमला भेजा। हमने उनसे कहा कि वे इस सम्बन्धमें मुस्लिम लीगके नेताओंसे और अन्य मुस्लिम संगठनके नेताओंसे सम्पर्क स्थापित करें। हम उनको अपना मुस्लिम बन्धु समझते थे और हमें उनसे यह बड़ी आशा थी कि वे संकट और निराशाकी इस स्थितिमें हमारी अवश्य सहायता करेंगे। कुछ दिनोंके बाद मेरे मित्र फिर मेरे पास आये और उन्होंने यह बतलाया कि मुस्लिम लीगके नेता हमारी सहायता करनेको तैयार नहीं हैं क्योंकि हमारी लड़ाई ब्रिटिश हुकूमतके साथ है और वे ब्रिटिश राजके साथ झगड़ा मोल लेनेको तैयार नहीं हैं। इन परिस्थितियोंके अन्तर्गत हमने कांग्रेसके साथ मैत्रीके सम्बन्ध स्थापित किये। इस प्रकार हमारे प्रति अंग्रेजोंके अविश्वास और भयके कारण हमारा आन्दोलन, जो शुद्ध रूपसे एक सामाजिक आन्दोलन था, एक राजनीतिक आन्दोलनके रूपमें बदल गया। लेकिन इसके बावजूद खुदाई खिदमतगारोंके आन्दोलन और उसके समकालीन अन्य आन्दोलनोंमें एक बहुत बड़ा अन्तर था।

राजनीतिक होनेके बाद भी हमारा आन्दोलन धार्मिक और आत्मिक ढंगका था जिसमें सामाजिक और आर्थिक सुधारके लक्ष्य प्रतिबिम्बित होते थे।

"मैंने यहाँ वे परिस्थितियाँ बतलायीं जिनमें हम कांग्रेसमें शामिल हुए। आज भी पंजाबके समाचार-पत्रोंका एक वर्ग हमको कांग्रेसी कहता है; इतना ही नहीं, वह हमारे बारेमें ग़लतफ़हमियाँ फैलाकर हमें बदनाम करनेमें लगा हुआ है। इस बातका निर्णय करनेके लिए कि दोष हमारा था या मुस्लिम लीगका, इन तथ्योंपर दृष्टि डालना आवश्यक है। अकेले रहकर सीमाप्रान्तमें हम अंग्रेजोंके दमनका सामना न कर सके और इन परिस्थितियोंमें, जब कि मुस्लिम लीग और अन्य मुसलमान नेताओंने हमें सहायता देनेसे इनकार कर दिया, हमारे आगे कांग्रेससे मित्रता स्थापित करनेके अलावा और कोई चारा न रहा।

"सन् १९३१ में, जब कि गांधी-इरविन समझौता क्रियान्वित हुआ, मुझे और मेरे अन्य साथियोंको जेलसे रिहा कर दिया गया। उसी सालके अंतमें शिमलामें कांग्रेस कार्यसमितिका एक अधिवेशन हुआ, जिसमें मैंने भी भाग लिया। शिमला-में किसी कालेजके एक विद्यार्थीने हम लोगोंको सिसिल होटलमें दोपहरके भोजन के लिए आमंत्रित किया। तत्कालीन पंजाब मंत्रिमंडलके सदस्य सर फ़ीरोज़ खाँ नून भी उस दावतमें शरीक थे। सर नूनने मुझसे कहा कि कांग्रेसमें सम्मि-लित होकर हमने उनके साथ एक विश्वासघात किया है। मैंने उनसे कह दिया कि अंग्रेज सरकार हमारा, हम सीमाप्रान्तके लोगोंका दमन करना चाहती है और हम अकेले उसका सामना करनेमें असमर्थ थे इसलिए कांग्रेसमें सम्मिलित होनेके अतिरिक्त हमारे आगे और कोई चारा न था। मैंने उनसे यह भी कह दिया कि कि सहायता लेनेके लिए हम लोग सबसे पहले मुस्लिम लीगके पास पहुँचे। हमने मुस्लिम लीगके नेताओंको अपना मुसलमान भाई समझा और उनसे यह आशा की वे हमें इस स्थितिसे छुटकारा दिलानेके लिए आयेंगे लेकिन जब उन्होंने हमारी सहायता करनेसे इनकार कर दिया तब हम सहयोगके लिए कांग्रेसकी ओर झुके। मैंने सर फ़ीरोज खाँ नून तथा अन्य नेताओंसे कह दिया कि यदि वे मुसलमानोंका सर्वनाश नहीं चाहते तो अब भी कोई खास नुक़सान नहीं हुआ है। पंजाबके नेता हमसे अब भी एक समान उद्देश्य लेकर मिल सकते हैं। लेकिन यह सच है कि हम अंग्रेजोंसे तंग आ चुके हैं और हम आजादी चाहते हैं—और हम अपनी आजादी चाहते हैं। यदि मुस्लिम लीगके नेता आज़ादीकी लड़ाई छोड़नेको तैयार हैं तो हम भी महात्मा गांधीसे सम्बन्ध तोड़नेको और कांग्रेससे इस्तीफा देनेको

तैयार हैं। मैंने सर फीरोज़से यह कह दिया कि इसके लिए आपको अपने सरकारी पदसे त्याग-पत्र दे देना पड़ेगा। उन्होंने कहा कि अपने सहयोगियोंसे बातचीत करनेके वाद वे मुझको इसका उत्तर दे सकते हैं। आज भी मैं उस उत्तरकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

"सन् १९४६ के हिन्दू-मुस्लिम दंगोंके वाद संयोगवश सर फीरोज़ मुझको पटनामें मिल गये। उन्होंने मुझसे पूछा कि विहारके दंगोंके वाद अव आपके क्या विचार हैं? मैंने उनको वतला दिया कि उनमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ है।

"मैं कभी पाकिस्तानके विचारका विरोधी नहीं रहा लेकिन पाकिस्तानके सम्वन्धमें मेरे विचार कुछ भिन्न अवश्य रहे हैं। मेरी कल्पनाके अनुसार मुसलमानोंकी अपनी मातृभूमिके लिए पंजाव और वंगालका विभाजन आवश्यक न था। इसके अलावा, जैसा कि वहुतसे लोगोंका दावा था, मैंने कभी इस वातपर विश्वास नहीं किया कि लीगके नेताओंकी माँगें वास्तवमें मुस्लिम जनताके हितोंपर आधारित हैं। उनमेंसे अधिकांश मेरी दृष्टिमें अंग्रेजोंके समर्थक थे। उन्होंने अपने जीवनभर मुस्लिम जनताकी या इस्लामके हेतुकी सेवा नहीं की और न इन उद्देश्योंकी उपलब्धिके लिए कभी कोई प्रयत्न ही किया। मैं जानता था कि वे मुस्लिम जनताको पाकिस्तान और इस्लामके नामपर गुमराह करना चाहते हैं। ये नेता अपने निजके लाभके लिए पाकिस्तान चाहते थे और वे अपने प्रयोजनमें सफल भी हुए। मेरी रायमें हिन्दुओं और मुसलमानोंके वीचका झगड़ा धर्मके कारण न था वल्कि उसके कुछ आर्थिक कारण थे। मैं यह भी जानता था कि अंग्रेज सरकारने इस स्थितिका शोपण किया है और इन झगड़ोंको वढ़ाया है। मुझे इस वातका विश्वास था कि ब्रिटिश सरकारको उलट देनेके पश्चात् जव देश स्वतन्त्र हो जायगा और जव स्थितिपर काबू हो जानेके वाद इसकी अपनी जनताकी, अपनी राष्ट्रीय सरकार वनेगी तव सारा वातावरण वदल जायगा और हमारे सम्वन्ध सुधर जायँगे। लेकिन यदि इसके वाद भी धीरे-धीरे हिन्दू-मुसलमानोंके सम्वन्धोंका तनाव न हुआ तो हिन्दुओंका साथ छोड़ देंगे और इसके लिए हमको कोई नहीं रोक सकेगा। कांग्रेसने प्रांतोंके स्वायत्त शासनके सिद्धान्तको मान्यता दी है और प्रांतोंके इस अधिकारको स्वीकार किया है कि यदि किसी भी प्रांतकी जनता अपने वहुमतसे केन्द्रसे सम्वन्ध तोड़नेका निश्चय कर लेती है तो वह ऐसा कर सकती है और वह एक स्वायत्त शासित राज्य वन सकता है।

"पश्चिमोत्तर प्रदेशकी जनता अधिकांश मुस्लिम थी। वहाँ हमारा हिंदुओंके साथ कोई झगड़ा नहीं था। हम लोगोंने जो कुछ भी कहा उसे कांग्रेसने स्वी-

कार किया और उसके साथ हमारा किसी बातपर विरोध नहीं हुआ। कांग्रेसके नेताओंने यह स्वीकार किया कि देशकी स्वाधीनताके लिए हम लोगोंने प्रत्येक सम्भव त्याग किया है। शिमला कांफ्रेन्समें कुछ बुनियादी सिद्धान्तोंपर हमारे मतभेद हुए तो मैं सरदार अब्दुल रब निश्तरसे मिला। मैंने उनसे यह कहा कि यदि मि० जिना कांग्रेसका विरोध करना छोड़ दें तो गांधीजी मुसलमानोंको उनके वैध अधिकारोंसे भी अधिक अधिकार दिलानेको तैयार हैं। मैं स्वयं भी मुसलमानोंकी मांगोंको पूरा करनेका आश्वासन देनेको तैयार था और उनको इसका पूरा भरोसा देनेको भी तैयार था। मेरी इस बातको सुनकर सरदार साहब मि० जिनाके पास गये और उन्होंने उन्हें यह समझाने-बुझानेकी कोशिश की लेकिन वे अपने इस प्रयासमें सफल नहीं हुए। उनकी इस मुलाकातका कोई परिणाम न निकला।

"संयुक्त भारतमें मुसलमानों संख्या लगभग दस करोड़ थी और मैं सोचता था कि इतनी बड़ी जनसंख्याको सरलतासे दबाया नहीं जा सकता। मेरा विचार यह था कि कोई शक्ति हमको नष्ट नहीं कर सकती। और यदि हमको कोई गुलाम बनानेकी कोशिश करेगा तो हम स्वायत्त शासित राज्य संघसे अपना सम्बन्ध तोड़ लेंगे। मैं शासनके संघीय स्वरूपका इस विचारसे समर्थन कर रहा था कि यदि कांग्रेस हमारी शर्तोंको स्वीकार करनेको तैयार है और वह हम लोगोंको यह आश्वासन देती है कि भविष्यमें जो भी शासन होगा वह एक समाजवादी गणतन्त्र होगा तो मुसलमानोंको प्रस्तावित भारतीय स्वायत्त शासन संघमें सम्मिलित होना चाहिए और इसीमें उनका सच्चा हित निहित है। मेरी दृष्टिमें शासनके समाजवादी गणतन्त्रीय रूपमें मुसलमानोंके लिए सबसे बड़ा आकर्षण यह था कि हिन्दुओंकी स्थितिके विपरीत वे एक समुदायके रूपमें अपेक्षाकृत एक निर्धन वर्गके लोग हैं। यदि कांग्रेस इन शर्तोंको स्वीकार करनेको तैयार न होती तो उन सूबोंमें, जिनमें कि मुसलमानोंकी जन-संख्या अधिक थी, काफी विचार करनेके बाद हम लोग स्वायत्त शासन संघसे बाहर निकल जाते। आज भी मेरा यह विश्वास है कि इस रास्तेपर चलनेसे हम अधिक लाभान्वित होते क्योंकि इस योजनामें पंजाब और बंगालके विभाजनका प्रश्न ही न उठता। लेकिन भारतके मुस्लिम लीगके नेताओंने मेरे प्रस्तावको विचारके योग्य भी नहीं समझा और उनके द्वारा मुझे हिन्दू कहा गया।

"भारत और पाकिस्तानके बननेके समय एक भयानक दुःखान्त घटना हुई। लाखों आदमी अपने देशका त्याग करके दूसरे देशमें गये और हज़ारों निर्दोष

प्राणी मौतके घाट उतर गये। लोगोंने इतनी बड़ी संख्यामें देशका परित्याग किया कि उससे उत्पन्न समस्याओंको सुलझाना सरकारके लिए कोई आसान काम न रहा। बहुतसे व्यक्तियोंको कोई आश्रय न मिला और अनेक लोगोंको भ्रष्ट प्रशासनके कारण शरणार्थी शिविरोंमें कष्ट झेलना पड़ा। उनको चिकित्सा सम्बन्धी सुविधा न मिली और बहुत कम भले लोगोंने बीमार और घायल व्यक्तियोंकी देख-रेखके लिए अपनी सेवाएँ अर्पित कीं। उन्हीं दिनों मुहम्मद हुसेन अत्ता नामके एक सज्जन हमारे सरदरयावके केन्द्रीय मुख्यालयमें पहुँचे। वे सन् १९४२ में मेरे साथ जेलमें रहे थे। उन्होंने मुझे कोसना शुरू कर दिया और मुझसे बोले कि यदि हम खुदाई खिदमतगार होनेका दावा करते हैं तो हमको लाहौर जाना चाहिए और वहाँके शरणार्थियोंके दुःख और कष्टोंमें अपनेको एक हिस्सेदार बनाना चाहिए। मैंने उनसे कहा कि मैं तो शरणार्थियोंकी सेवा करनेको तैयार हूँ लेकिन अधिकारी हमें इस बातकी अनुमति नहीं देंगे। मैंने उनसे कहा कि वे लाहौर जायँ और शरणार्थियोंकी सेवाके हेतु खुदाई खिदमतगारोंके लिए अनुमति प्राप्त करें। मैंने उनसे यह भी कहा कि यदि अधिकारी हमें शरणार्थियोंकी सेवाके लिए अनुमति दे देते हैं और हम अपने कर्त्तव्यको पूरा नहीं करते तो आपको हमारे ऊपर इस तरहसे नाराज होनेका पूरा हक है। वे लाहौर गये लेकिन एक मासके बाद असफल होकर लौट आये। उन्होंने इस बातको स्वीकार किया कि मेरी बात अक्षरशः सत्य थी। वे यह बात भली भाँति समझ चुके थे कि लीग उनको मुस्लिम जनताकी दृष्टिमें गिरानेपर तुल गयी है। उन्होंने इस बातको स्वीकार किया कि मुस्लिम लीगके नेताओंको यह भय है कि यदि खुदाई खिदमतगारोंको जनताकी सेवा करने दी जाती है तो इससे उनका प्रभाव कम हो जायगा और खुदाई खिदमतगारोंके विरुद्ध उनका अभियान असफल हो जायगा।

"पाकिस्तान बन जानेके बाद सर जॉन कनिंघम हमारे सूबेके गवर्नर बने। वे एक अध्यवसायी तथा चतुर अंग्रेज अफ़सर थे। उनकी गणना मुस्लिम लीगके प्रबल समर्थकों और विश्वस्त मित्रोंमें की जाती थी। वे आठ वर्षतक मेरे प्रदेश-के गवर्नर रहे। उन्होंने सम्पूर्ण स्थितिका अध्ययन किया और फिर मेरे पुत्र ग़नीके द्वारा मुझसे मुस्लिम लीग और खुदाई खिदमतगारोंकी सम्मिलित सरकार-के लिए मेरी स्वीकृति चाही। मैंने उनको सूचित कर दिया कि मुस्लिम लीग इस प्रस्तावके लिए कभी तैयार न होगी। हम लोग सेवा और फिरसे नये निर्माणपर विश्वास करते हैं जब कि मुस्लिम नेता मुख्य रूपसे जनतापर शासन करनेके महत्त्वाकांक्षी हैं। इस बातने सर जॉनके प्रयत्नको व्यर्थ कर दिया। मैंने

गवर्नरसे यह कहला दिया कि यदि मुस्लिम लीगकी सरकार जनताका कल्याण करना चाहेगी तो हम विना सरकारमें सम्मिलित हुए ही उसे अपना सहयोग देनेको तैयार होंगे। परन्तु हम जनताकी सेवा करनेके इस अवसरसे भी वंचित कर दिये गये।

"सन् १९४८ में जब मैंने पहली बार पाकिस्तानकी पार्लमेण्टके अधिवेशनमें भाग लिया तब मैंने यह घोषणा की कि जो कुछ हो चुका, वह हो चुका। पाकिस्तान हम सबकी समान रूपसे मातृ-भूमि है। सत्तारूढ़ दल यदि देशकी सेवा करनेका इच्छुक है तो वह जिस ढंगसे भी चाहेगा हम उसे अपना सहयोग देनेको तैयार रहेंगे। मैंने आगे कहा कि मैंने किसी सरकारपर कभी आपना भार नहीं डालना चाहा। अब भी हम लोग अपना खर्च स्वयं उठा लेंगे। हम कुछ नहीं चाहते, सिवा देशकी निष्ठापूर्ण सेवाके। जिस समय मैं अधिवेशनमें बोल रहा था उस समय लियाकत अली खाँने मुझसे पूछा कि पाकिस्तानसे मेरा क्या अभिप्राय है। इसपर मैंने उनको बतलाया कि सही शब्द पाकिस्तान नहीं, पख्तूनिस्तान है और यह केवल एक नाम है। उन्होंने मुझसे पूछा कि इस अभिव्यक्तिका क्या महत्त्व है? तब मैंने उनको समझाया कि जैसे पाकिस्तानके सूबे पंजाब, बंगाल, सिन्ध और बलूचिस्तान नाम हैं वैसे ही पाकिस्तानके भवनके ढाँचेमें पख्तूनिस्तान भी उसके एक खंडका नाम है। मैंने यह भी कहा कि हम लोगोंको कमज़ोर करनेके लिए अंग्रेजोंने हमारे यहाँकी जनताको टुकड़ोंमें बाँट दिया और हमारे देशका नामतक खुरच डाला। हम लोग अपने पाकिस्तानी बन्धुओंसे यह निवेदन करते हैं कि वे अंग्रेजों द्वारा हमारे प्रति किये गये इस अन्यायको दूर करें, पख्तूनोंको संयुक्त करें और हमें अपने प्रान्तके नामके लिए अनुमति दें जैसा कि पंजाबके मामलेमें है। जब भी पंजाबका नाम आता है तो सुननेवाले यह समझ लेते हैं कि यह उसी प्रान्तका ज़िक्र है जिसमें पंजाबी रहते हैं। इसी प्रकार बंगाल, सिंध और बलूचिस्तानका उल्लेख आते ही उन क्षेत्रोंकी तस्वीर हमारे दिमाग़के सामने आ जाती है जिनमें बंगाली, सिंधी और बलूची रहते हैं। हम लोग केवल यह चाहते थे कि पाकिस्तानके उस भागको, जिसमें कि पश्तो भाषा बोली जाती है, पख्तूनिस्तान कहा जाय।

"पार्लमेन्टमें मेरे इस भाषणके बाद कायदे-आज़म जिनाने मुझे अपने साथ भोजन करनेके लिए आमंत्रित किया। खाना खानेके बाद हम लोग एक लम्बी चर्चामें लग गये। मैंने उनसे कहा कि वे इस बातको भली भाँति जानते हैं कि खुदाई खिदमतगार आन्दोलन वस्तुतः एक समाज-सुधार सम्बन्धी आन्दोलन था।

लेकिन अंग्रेज अधिकारियोंके अत्याचारोंने उसे एक राजनीतिक आन्दोलनके रूपमें परिवर्तित कर दिया। अब, जब कि देश स्वतंत्र हो गया, मेरी यह राय बनी कि जबतक जनता सामाजिक रूपसे पिछड़ी हुई है तबतक उसमें एक यथार्थ चेतना जाग्रत नहीं हो सकती। पिछड़े हुए लोगोंमें लोकतांत्रिक भावना कभी नहीं पनप सकती।

"कायदे-आज़म जिना मेरी बातसे बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने मुझसे हाथ मिलाया और मुझे यह आश्वासन दिया कि वे मुझको सब प्रकारकी सहायता देनेको तैयार हैं। हम लोग एक निश्चयपर पहुँच गये।

"जब मैं कराचीसे चलने लगा तब कायदे आज़मने मुझसे यह कहा कि अपने सीमाप्रान्तके अगले दौरेमें वे लाल कुर्ती दलके नेताओंसे अवश्य मिलेंगे। उन्होंने मेरे लिए कुछ चरखोंका आर्डर भी दे दिया था और यह आशा प्रकट की थी कि वे यथासम्भव शीघ्र मेरे पास भेज दिये जायँगे। हम लोगोंने यह समझौता किया कि हम जनतामें एक सामाजिक और आर्थिक कार्यक्रम चलायेंगे। जब मैं अपने प्रान्तमें पहुँचा तब मैंने अपने साथियोंसे उस लम्बी चर्चाका जिक्र किया जो मेरे और कायदे आज़मके बीच हुई थी। हमने अपने मुख्य कार्यालयमें कायदे आज़मके उपयुक्त स्वागतका निश्चय किया। जब सत्ताके लोलुपों और अंग्रेज अधिकारियोंको यह पता चला कि कायदे आज़म और खुदाई खिदमतगारोंके बीच एक समझौता हुआ है तब वे अत्यधिक उद्विग्न हो उठे। जो कुछ हुआ उससे उन्होंने अपनी एक हानि अनुभव की। उनको यह भय हुआ कि यदि कायदे-आज़मने हमारे हुए समझौतेपर अमल किया तो वे लोग कहींके न रहेंगे। यहाँ यह उल्लेख करना उपयुक्त होगा कि उस समयतक मेरे प्रान्तके सारे महत्त्वपूर्ण पद अंग्रेज अधिकारियोंके हाथोंमें थे। उस समय मैंने यह मांग की कि गवर्नरका पद और विभिन्न विभागोंके अन्य महत्त्वपूर्ण पदोंकी, जो कि अबतक अंग्रेज अधिकारियोंके हाथोंमें हैं, पूर्ति केवल पाकिस्तानके नागरिकों द्वारा होनी चाहिए। इस माँगने न केवल स्वर्गीय लियाकत अली खाँको बल्कि मेरे प्रान्तके अंग्रेज अधिकारियोंको भी नाराज़ कर दिया। इसलिए कायदे-आज़म जिना और खुदाई खिदमतगारोंके बीच हुई व्यवस्थाको भंग करनेके लिए नेता और अंग्रेज अधिकारी परस्पर मिल गये।

"इसी बीच सर जार्ज कनिंघमके स्थानपर सर ए० डी० एफ० डुंडाज़ सीमाप्रांतके गवर्नर बनकर आ गये। उन्होंने कायदे-आज़मपर यह दबाव डालनेके लिए अपना एक विशेष संदेशवाहक कराची भेजा कि वे हमारे आमंत्रणको

स्वीकार न करें, क्योंकि इससे खुदाई खिदमतगारोंकी प्रतिष्ठा बढ़ जायगी।

"जब कायदे-आज़म सीमा-प्रांतमें आये तो हम लोगोंको उनसे मिलनेका मौक़ा देनेसे भी इनकार कर दिया गया। प्रान्तके मुसलमान नेताओं और गवर्नरने कायदे-आज़मको यह विश्वास दिलाया कि खुदाई खिदमतगार अत्यन्त खतरनाक लोग हैं। उन्होंने उनके मनमें यह सन्देह भी जगा दिया कि हम जो उनको अपने केन्द्रीय कार्यालयमें लिये जा रहे हैं उसका उद्देश्य ही उनकी वहाँ हत्या कर देना है। हमको यह सूचित कर दिया गया कि कायदे आज़मने किसी भी ग़ैर-सरकारी समारोहमें भाग न लेनेका निश्चय किया है हालाँकि उसके बाद उन्होंने बहुतसे ग़ैर-सरकारी समारोहोंके आमंत्रणोंको स्वीकार किया और उनमें भाग लिया।

"हमारे आमंत्रणको अस्वीकार करनेके बाद भी वे खुदाई खिदमतगारोंसे पेशावरके राजभवनमें मिलना चाहते थे। यह निश्चय हुआ कि समस्त खुदाई खिदमतगारोंकी ओरसे मैं कायदे-आज़म जिनासे भेंट करूँ। दो घंटेकी लम्बी बात-चीतमें मैंने यह अनुभव कर लिया कि उनके सहयोगियोंने उनके दिमाग़में हमारे खिलाफ़ ज़हर भर दिया है। मैंने उनसे कहा कि एक मुसलमान होनेके नाते हमारी सब शक्ति उनकी शक्ति है और चूँकि वे मुसलमान हैं, मैं उनकी शक्ति-को अपनी शक्तिके स्रोतका उद्‌गम मानता हूँ। इसपर उन्होंने मुझे मुस्लिम लीग में आ जानेकी सलाह दी। मैंने उनसे पूछा कि वे इस बातके लिए इतने अधिक इच्छुक क्यों हैं? वे मुझसे काम लेना चाहते हैं या यह चाहते हैं कि मैं भी अन्य मुस्लिम लीगवालोंकी तरहसे उत्साहहीन हो जाऊँ? मुस्लिम लीगके नेताओंमेंसे अधिकांश बड़े ज़मींदार, जागीरदार या उनके मित्र थे और उन्होंने कभी देश-की कोई सेवा न की थी। अपने जीवनभर वे अंग्रेज अधिकारियोंके समर्थक और चापलूस रहे थे। कायदे-आज़मने मुझसे यह आग्रह किया कि मैं मुस्लिम लीगमें सम्मिलित हो जाऊँ। मैंने उनसे इस बातको दुहराया कि उन्हें स्वार्थी तत्त्व घेरे हुए हैं। जब उनको अपने कोई निजी स्वार्थ पूरे करने होते हैं तब वे उनके (जिना साहबके) आदेशोंतककी अवहेलना कर देते हैं, हालाँकि वे उनके केवल नेता ही नहीं हैं बल्कि गवर्नर जनरल भी हैं। कायदे-आज़मने मुझे अपने तर्कको सिद्ध करनेके लिए कहा। प्रमाणके रूपमें मैंने उनसे कहा कि हिन्दू लोग यहाँसे जाते समय पाकिस्तानमें करोड़ों रुपयोंकी सम्पत्ति छोड़ गये थे जिसे कि मुस्लिम लीगवालोंने लूट लिया। यह सम्पत्ति पाकिस्तानकी थी, लेकिन इसके बावजूद ये नेता उसमेंसे एक कानी कौड़ी भी सरकारको देनेके लिए तैयार न थे। मैंने उनसे कहा कि वे मुझको मुस्लिम लीगका एक भी ऐसा नेता बतला दें जिसने कि

इस लूटमें भाग न लिया हो।

"जब कायदे-आज़मने हमसे मुस्लिम लीगमें सम्मिलित होनेका आगे आग्रह किया तो मैंने उनसे यह कह दिया कि मैं आपके इस प्रस्तावको अपने साथियोंके आगे रखूँगा। उन लोगोंने निश्चय किया कि चूंकि वे लोकतंत्रके प्रेमी हैं और वे अबतक स्वतंत्रता और लोकतंत्रके लिए लड़ते रहे हैं इसलिए वे इस बातके लिए तैयार नहीं हैं कि एक दल अपने इच्छानुसार दूसरे दलको अपनेमें विलय कर ले।

"ऐसा विश्वास किया जाता है कि सीमा-प्रांतसे विदा लेते समय कायदे-आज़म खुदाई खिदमतगारोंका दमन करनेके लिए मि० खान अब्दुल क़यूम खाँ और सीमा-प्रांतके गवर्नर मि० डुंडाज़को पूरे अधिकार दे गये।

"मैं बहुत दिनोंसे कोहाट और बन्नू नहीं गया था। वहाँके लोगों की यह इच्छा थी कि मैं उनके इलाकेका दौरा करूँ। अतः मैं १५ जून १९४८ को नाजो और मुनीर खाँ सालारके साथ बन्नूके लिए चल दिया। बहादुर खैल पहुँचनेपर हमने देखा कि पुलिसने रास्ता रोक रखा है। मुझसे और मेरे साथियोंसे कारसे नीचे उतर आनेके लिए कहा गया। उसके बाद हम लोगोंको टेरी तहसील ले जाया गया जहाँ कि हम लोगोंको सारे दिन बिना खाना-पानीके रखा गया। शामको कोहाटका डिप्टी कमिश्नर वहाँ आया। मुझको उसके सामने पेश किया गया। उसने मुझे तुरंत ज़मानत दे देनेको कहा। मैंने उससे पूछा कि वह किस बातके लिए मेरी ज़मानत चाहता है। उसने मुझसे कहा कि आप पाकिस्तानके विरुद्ध हैं। जब मैंने उससे प्रमाण चाहा तब उसने कहा कि बेकार बहस करनेका कोई अर्थ नहीं है। मैंने ज़मानत देनेसे इनकार कर दिया। इसके बाद उसने फैसला किया और मुझे तीन वर्षका कठोर कारावास दंड सुना दिया। जो लोग मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे मुझे उनसे भी न मिलने दिया गया और न मुझको अपने कपड़े या अन्य आवश्यक सामान ले जानेकी इज़ाजत दी गयी। मुझे मान्टगोमरी जेल भेज दिया गया और वहीं मैंने अपनी कारावासकी अवधि पूरी की। लेकिन उसके बाद भी मुझे छोड़ा नहीं गया। उस समय मुझको सन् १८१८ की धाराके अन्तर्गत रोक लिया गया और अंतमें जनवरी १९५४ ई० में छोड़ा गया।

"कश्मीरकी गुत्थीको सुलझानेके लिए मैंने अपनी सेवाएँ अर्पित करनी चाहीं—एक बार कायदे-आज़म जिनाके जीवनकालमें और दूसरी बार उनकी मृत्युके पश्चात् लेकिन मेरा प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया गया। सत्तारूढ़ दलने यह निश्चय किया कि यदि हम लोगोंके द्वारा कश्मीरकी समस्या सुलझ जाती है तो इससे जनताके मनमें हमारे प्रति एक दुर्भावना उत्पन्न हो जायगी और इससे उन लोगों

की प्रतिष्ठाको एक धक्का लगेगा। स्वर्गीय लियाकत अली खाँके मनमें जो विचार चल रहा था उसकी झलक हमारे दो विधानसभाके सदस्योंसे की गयी उनकी बातचीतसे मिल जाती है। उस समय उन्होंने कहा था कि मि० जिनाकी मृत्युके पश्चात् वे कोई ऐसा नेता नहीं चाहते जो जनताके ऊपर अपने प्रभावसे शासन कर सके और उसे अपने साथ बहा ले जा सके। एक अन्य अवसरपर ममदोत के नवाब मान्टगोमरी जेलमें मुझसे मिलनेके लिए आये। उस समय हमने कश्मीर-समस्यापर बातचीत की और मैंने उनके आगे कुछ प्रस्ताव रखे। नवाब-ए-वक़्त हामिद निज़ामी साहब भी हम लोगोंकी इस चर्चाके समय उपस्थित थे। उस समय मुझको यह सुझाव दिया गया कि सरकार मेरे सुझावोंपर अत्यन्त सहानुभूतिपूर्वक विचार करेगी। लेकिन उसका परिणाम भी कुछ नहीं निकला। यदि सरकारने उस समय मेरे प्रस्तावोंको स्वीकार कर लिया होता तो कश्मीरका प्रश्न बहुत पहले ही सुलझ गया होता। मेरी धारणा है कि बड़े नेता कश्मीरकी समस्याको सुलझाना ही न चाहते थे बल्कि अपने स्थानको सुरक्षित रखनेके लिए स्थितिका शोषण करनेको उत्सुक थे।

"सन् १९५३ में, जब कि मैं जेलमें ही था, सरदार बहादुर खाँ रावलपिण्डी जेलमें मुझसे मिलनेके लिए आये। उन्होंने यह स्वीकार किया कि सरकारने खुदाई खिदमतगारोंके प्रति अत्यधिक अन्याय किया है और विशेष रूपसे अब्दुल क़यूम तो दमन और अत्याचारपर उतर आये हैं। कोई सम्मान करने योग्य सरकार इसको न्यायसंगत नहीं ठहरा सकती। उन्होंने कहा कि सरकार मेरी इस नज़रबन्दीको वैध नहीं मानती और वह मुझको छोड़ देनेके लिए उत्सुक है। लेकिन उसको यह भय है कि खुदाई खिदमतगारोंके साथ जो व्यवहार किया गया है, उसे न तो वे भूल सकते हैं और न क्षमा ही कर सकते हैं। मैंने उनको यह विश्वास दिलाया कि खुदाई खिदमतगार अहिंसापर विश्वास करते हैं और उन्होंने अपने दमनकारीसे कभी बदला लेनेकी कोशिश नहीं की। मैंने इस बातपर अपना आश्चर्य प्रकट किया कि अपनी भूलोंको स्वीकार करनेके बाद भी सरकार हम लोगोंके प्रति न्याय करनेको तैयार नहीं है! मैंने सरदार बहादुर ख़ाँसे कह दिया कि जबतक सरकार प्रत्येक ढंगसे मेरे और मेरे खुदाई खिदमतगार आन्दोलनसे पूर्ण रूपसे संतुष्ट नहीं हो जाती तबतक मैं अपनी रिहाईके लिए उत्सुक नहीं हूँ। बादमें वे फिर मेरे पास आये और बोले कि सरकारने मुझे रिहा कर देनेका फैसला कर लिया है।

"सन् १९५४ में जेलसे छूटनेके बाद मैं रावलपिण्डीके सर्किट हाउसमें रख

दिया गया। वहाँ मेरे ऊपर रोक लगी हुई थी। सर्किट हाउसकी नज़रबन्दीसे मैंने जेलकी नज़रबंदीको अच्छा समझा। मुझे डर था कि शायद मेरे खिलाफ़ कोई षड्यंत्र रचा जा रहा है। जैसा कि अर्बाब खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके साथ हुआ था। उनको पेरोलपर छोड़ दिया गया था लेकिन बादमें उनको फिर गिरफ्तार कर लिया गया था और यह अफ़वाह फैल गयी थी कि वे अफ़गान एजेन्टों के साथ षड्यंत्र रच रहे हैं।

"बादमें मुझको पंजाबमें प्रवेश करनेकी अनुमति दे दी गयी। इस प्रकार मुझको संविधान सभामें भाग लेनेका और उसमें अपनी बात कहनेका एक अवसर मिला।

"उन दिनों एक इकाई योजनापर गर्म बहसें चल रही थीं। मेरे पंजाबी भाइयोंको इस विवादग्रस्त विषयपर खान बन्धुओंके खिलाफ़ कुछ शिकायतें थीं। अधिवेशनके दौरान चौधरी मुहम्मद अली, मुश्ताक अहमद गुरमानी, सरदार बहादुर खाँ और पंजाबके तत्कालीन मुख्य मंत्री फीरोज़ खाँ नून मुझसे मिले और उन्होंने मुझे एक इकाई योजनाके लाभ समझानेकी कोशिश की। सिन्ध, बलूचिस्तान और पश्चिमोत्तर प्रदेशके लोगोंसे मिलनेके बाद मैं यह भली भाँति समझ गया कि जनता इस योजनाके पक्षमें नहीं है और इसे बलपूर्वक लागू किया गया तो यह पाकिस्तानके हितमें नहीं होगा। मैंने उनको यह बात समझानेकी कोशिश की कि इस मौक़ेपर एक इकाईका गठन लाभकारी नहीं होगा। मैंने उनसे यह भी कहा कि यदि वे इस दिशामें सचमुच गम्भीरताके साथ सोच रहे हैं तो पश्चिम पाकिस्तानकी दो इकाइयाँ बनाना अधिक उपयुक्त होगा जिनमेंसे एक पंजाब होगा और दूसरी इकाई शेष अन्य छोटे प्रान्तोंको मिलाकर बनायी जायगी। चौधरी मुहम्मद अलीने, जो इस समय प्रधान मंत्री हैं, यह कहा कि या तो एक बननी चाहिए या यथावत् स्थिति बनी रहनी चाहिए। इस प्रकार हमारी मुलाकात खत्म हो गयी।

"जिस समय इन विवादग्रस्त विषयोंपर वाद-विवाद चल रहा था उस समय केन्द्रीय सरकारने गवर्नर जनरलके द्वारा डा० खान साहबसे समझौतेकी चर्चा शुरू कर दी। मि० गुलाम मुहम्मदने इस तथ्यको स्पष्ट रूपसे स्वीकार किया कि खुदाई खिदमतगारोंके साथ बहुत बड़ा अन्याय किया गया है और उनके लिए इस व्यवहारको भूल जाना बहुत मुश्किल होगा। उन्होंने मुझे यह सुझाव दिया कि मैं अपने संगठनको भंग कर दूँ और उसकी जगह दूसरा नया संगठन प्रारम्भ कर दूँ। हम लोगोंने उन्हें विस्तारसे बतलाया कि समस्याका यह हल नहीं है।

केवल खुदाई खिदमतगारोंके साथ ही घोर अन्याय नहीं हुआ है बल्कि पूरे पख्तून समुदायके साथ हुआ है। लेकिन मैंने सरकारको यह विश्वास दिलानेकी कोशिश की कि हम उन बातोंको भविष्यमें भूल ही नहीं जायँगे बल्कि हमने तो उनको भुला दिया है। अब यह सकारका कर्त्तव्य है कि वह लोगोंके हृदयोंको जीते और उनपर विश्वास करे। डा० खान साहबसे यह प्रार्थना की गयी कि वे सरकार को यह बात समझा दें कि हम जनतापर सरकारके विश्वासको बहुत अधिक महत्त्व देते हैं।

"इसके अलावा हम यह जाननेके लिए भी उत्सुक थे कि क्या सरकारके लोग समता और बन्धुत्वके आधारपर हमारे साथ व्यवहार करनेको तैयार हैं या वे हमको एक नीचा दर्जा देना चाहते हैं ताकि हम दूसरोंके ऊपर आश्रित बन-कर रह सकें। तीसरी बात हम यह भी जानना चाहते थे कि क्या सत्तारूढ़ दल हमको अपने मुसलमान भाई समझता है? डा० खान साहबने गवर्नर जनरलको यह सुझाव दिया कि वे मुझसे सीधी बात कर लें। लेकिन अन्य नेताओंने गवर्नर जनरलको और ही राय दी। ये चर्चाएँ अभी चल ही रही थीं कि पंजाबी और बंगाली राजनीतिक नेताओंमें इस विवदास्पद प्रश्नपर एक मतभेद उठ खड़ा हुआ कि क्या संविधानके पारित होनेके पश्चात् और पाकिस्तानके एक गणराज्य घोषित होनेके पश्चात् मि० गुलाम मुहम्मद उसके राष्ट्रपति होंगे? बंगालियोंने कहा कि यह विवादग्रस्त विषय उस उपयुक्त समयपर तय होगा जब कि राष्ट्र-पतिके लिए संसदमें मतदान होगा। जब दोनों पक्षोंके मतभेद उभरकर ऊपर आ गये तो संसदके बंगाली सदस्योंने यह धमकी दी कि वे एक इकाई योजनाके प्रस्तावका समर्थन नहीं करेंगे।

"इसका परिणाम यह हुआ कि एक इकाई योजना संसदके द्वारा आगे नहीं बढ़ायी जा सकी और इसके स्थानपर क्षेत्रीय स्वायत्त शासित राज्य संघकी एक अन्य योजना सामने ले आयी गयी। सरदार बहादुर खाँके निवास-स्थानपर एक बैठक आयोजित की गयी जिसमें सरदार असद खाँ, सरदार अब्दुल रब, निश्तर, सर-दार बहादुर खाँ और मैंने भाग लिया। काफ़ी बहसके बाद मैंने क्षेत्रीय संघके सिद्धान्तको स्वीकार कर लिया। लेकिन मेरी शर्त यह थी कि पख्तूनोंके वे क्षेत्र, जो अंग्रेजोंने खंड-खंडमें विभाजित कर दिये हैं, फिरसे एक इकाईमें मिला दिये जायँगे और उसको उसके उपयुक्त कोई नाम दे दिया जायगा। अंग्रेज भारतमें मराठों और पठानोंको महत्त्वपूर्ण और खतरनाक युद्धप्रिय कौमें समझते थे और इसलिए उनको कमज़ोर बना देनेके लिए अंग्रेजोंने उनको टुकड़ोंमें बाँट दिया था

और उनके भू-भागको निकटवर्ती इकाइयोंमें मिला दिया था और अब भारतमें सारे मराठे फिरसे संयुक्त हो गये हैं तो फिर इस बातका कोई कारण नहीं है कि पाकिस्तान, जो एक मुस्लिम लोकतन्त्र होनेका दावा करता है, समस्त पठानोंको एक इकाईके रूपमें संयुक्त करनेको तैयार न हो। हमारी माँग यह है कि पठानों को संयुक्त रूपमें रहना चाहिए। हम बड़ी ईमानदारीके साथ आपको यह विश्वास दिलाते हैं कि हम सच्चे पाकिस्तानी हैं और अन्य पाकिस्तानियोंके भाई हैं। इस आश्वासनके बावजूद कुछ समाचारपत्र और नेता लोग हमारे ऊपर ग़द्दार होनेका आरोप लगाते हैं। हम, पख्तून लोग विभिन्न क्षेत्रोंमें बिखरे हुए हैं और हमारे संगठन तथा हमारे मुक्त रूपसे मिलने-जुलनेपर भी प्रतिबन्ध लगे हुए हैं। हम इस रवैयेका विरोध करते हैं और साथ ही नम्रतापूर्वक आपको यह बतला देना चाहते हैं कि जबतक पख्तून विभाजित और बिखरे हुए हैं तबतक पाकिस्तान एक शक्तिशाली राष्ट्र नहीं बन सकता। पख्तूनोंके प्रति न्याययुक्त व्यवहार करके ही आप पाकिस्तानको दृढ़ता दे सकते हैं और पाकिस्तानके एक महान् राष्ट्र बननेकी महत्त्वाकांक्षाको साकार कर सकते हैं।

"क्षेत्रीय संघकी योजनाको स्वीकार करनेमें संसद असमर्थ रही क्योंकि उसको हमारे बंगाली भाइयोंका समर्थन प्राप्त नहीं हुआ। इसलिए संसदके पंजाबी नेताओंको दूसरे नुसखेपर विचार करना पड़ा। उस समयतक समझौता लगभग संविधानके रूपतक पहुँच चुका था। पश्चिमी पाकिस्तानका केवल प्रान्तीय रूप बना रहने दिया गया था। तभी प्रधान मंत्री मुहम्मद अली डोगराको अमेरिका चला जाना पड़ा। अपनी विदेश यात्रासे पूर्व उन्होंने यह घोषणा की कि उनके वापस आ जानेपर संविधान पूर्ण कर लिया जायगा और वर्षकी समाप्तिसे पहले ही पाकिस्तान एक गणराज्य घोषित हो जायगा। लेकिन जब प्रधान मन्त्री लौटे तब संसद भंग हो चुकी थी और सारे देशको एक अनिश्चितताके गड्ढेमें फेंक दिया गया था।

"जब एक नये मंत्रिमण्डलका गठन हुआ तब उसमें सम्मिलित होनेके लिए डा० खान साहबको आमंत्रित किया गया। मैं उनके मंत्रिमण्डल बनानेके पक्षमें नहीं था। मेरी राय यह थी कि केबिनेटमें शामिल होकर वे देशका कोई उपयोगी कार्य नहीं कर सकेंगे। लेकिन उन्होंने इसकी विपरीत दिशामें सोचा। उनका खयाल था कि इस प्रकार वे पाकिस्तानकी निःस्वार्थ सेवाके लिए अन्य लोगोंको भी प्रेरित कर सकेंगे। यदि वे असफल होते हैं तो वे इस्तीफ़ा दे देंगे। एक इकाई योजनाको फिरसे सामने लाया गया। सरदार बहादुर खाँके मकान-

पर बैठक हुई और उसमें मुझको भी बुलाया गया। उसमें डा० खान साहब, मेजर जनरल इस्कंदर मिर्ज़ा और सीमाप्रान्तके तत्कालीन प्रीमियर सरदार अब्दुल रशीद खाँने भाग लिया। मैंने उनको सचेत किया कि जनतासे बिना राय लिये हुए उनको एक इकाई योजनाको लागू नहीं करना चाहिए। जहाँतक मुझको स्मरण है, यह निश्चित हुआ था कि एक इकाई योजनाको क्रियान्वित करनेसे पहले जनताकी राय ले ली जायगी। मैं मिर्ज़ा साहबके साथ बैठकसे बाहर आया। उन्होंने कहा कि मेरा सहयोग आवश्यक है। मैंने उनसे कहा कि यदि वे तथा शासनके लोग सचमुच यह चाहते हैं तो मैं अपना सहयोग देनेको तैयार हूँ।

"मैं कराचीसे पंजाब वापस चला गया क्योंकि इस प्रान्तमें मेरे प्रवेशपर प्रतिबन्ध लगा हुआ था। मैं कैम्पबेलपुर ज़िलेके घोरघसी गाँवमें रहने लगा। सीमाप्रान्तके लोग मुझसे मिलनेके लिए इस गाँवमें आया करते थे। हमारे संगठनके क्रिया-कलापपर, हमारे समाचारपत्रों और हम लोगोंपर सरकारने जो प्रतिबन्ध लगाये थे उनको वे लोग सरकारके अत्यन्त घृणास्पद क़दम समझते थे। वे इस बातसे निराश हो चुके थे कि वे सामान्य तरीक़ोंसे न्याय पा सकते हैं और उनमें से कुछ लोग तो सविनय आज्ञा-भंगका आन्दोलन छेड़ देना चाहते थे लेकिन मैंने उनको सलाह दी कि खुदाई खिदमतगार होनेके नाते उनको अपने प्रति किये गये प्रत्येक अपकारको झेलना चाहिए और कुछ समयतक और धैर्य रखना चाहिए। इसी बीच नयी संसद बन गयी और उसका पहला अधिवेशन मरीमें बुलाया गया।

"सन् १९५५ की ग्रीष्मऋतुमें नयी संसदके मरी अधिवेशनमें बंगाल और पंजाबके राजनीतिक नेताओंका तीव्र मतभेद फिर उभरकर सामने आ गया। सीमाप्रान्तमें मेरे प्रवेशपर अबतक प्रतिबन्ध लगा हुआ था और उन गुप्त पर्चोंमें-जिन्हें मि० दौलतानाने बाँटा था, यह कहा गया कि यदि मेरे साथ कोई समझौता कर लिया जाता है तो एक इकाई योजनाको प्रारम्भ करनेकी सम्भावनाओंको फिर एक खतरा उत्पन्न हो जायगा। फिर भी पार्लियामेण्टके मरी अधिवेशनमें मुझे नाटकीय परिस्थितियोंमें सीमाप्रान्तमें प्रवेश करनेकी अनुमति दी गयी।

"मरी छोड़नेसे पहले मरीके गवर्नमेन्ट हाउसमें मेरी तथा मंत्री लोगोंकी एक और बैठक हुई। मि० गुरमानीने मुझे एक इकाई योजना विस्तारसे समझायी और मैंने उनसे यह कह दिया कि मेरे विचारमें इस योजनाको लागू करनेका कोई कारण नहीं है। इसके बाद मि० गुरमानीने जलके साधन, बिजली, खानों, यातायात और वन-उद्योगोंके प्रबन्धके संयुक्त नियंत्रणपर बल दिया। मैंने उनके

सामने यह तर्क रखा कि ये सब उद्देश्य तो पश्चिमी पाकिस्तानकी क्षेत्रीय संघ योजनाके द्वारा भी पूरे किये जा सकते हैं। मैंने उनसे यह स्पष्ट रूपसे कह दिया कि एक इकाई योजना पख्तूनोंके राष्ट्रीय हितोंके विरुद्ध है। हमें प्रान्तकी भावना का आदर करना चाहिए और विभिन्न संस्कृतियोंकी रक्षा करनी चाहिए। मैंने यह भी कहा कि पंजाब, सिंध और बलूचिस्तानके लोग राजनीतिक चेतनाकी दृष्टिसे पश्चिमोत्तर प्रदेशके निवासियोंसे कम प्रगतिशील हैं। मेरा मत यह था सीमाप्रान्तके अपवादको छोड़कर पश्चिम पाकिस्तानके शेष सब प्रान्तोंमें निर्वाचनमें कट्टरपंथी, जागीरदार ही विधान-सभामें चुनकर आयेंगे। परन्तु सीमाप्रान्तमें, जहाँ कि जागीरदार बहुत सीमातक अपनी ताक़त खो चुके हैं, अधिकांश रूपमें प्रगतिशील तत्त्व विजयी होंगे। मैंने इस बातपर बल दिया कि यदि सारे पश्चिमी पाकिस्तानके लिए एक असेम्बली बनायी जाती है तो वह सीमाप्रान्तकी ईमानदारीसे साथ निर्वाचित विधानसभाकी अपेक्षा बहुत अधिक अनुदार होगी। इस प्रकार एक इकाई योजना पठान क्षेत्रोंके ऊपर एक अनुदार और कट्टरपंथी शासन लाद देगी, इसलिए मैंने प्रस्ताव किया कि पंजाबमें हमें एक व्यापक और सक्रिय राजनीतिक कार्यक्रम चलाना चाहिए।

"जब मैं एक इकाई योजनापर तैयार न हुआ और मैंने देशमें एक व्यापक, राजनीतिक कार्यकी आवश्यकतापर बल दिया तब तत्कालीन वित्तमंत्री चौधरी मुहम्मद अलीने मेरे आगे गाँवोंके उत्थानकी अपनी एक योजना रखी और मुझे उसकी व्यवस्थाका प्रधान बननेका आमंत्रण दिया। मैंने उनके इस प्रस्तावको इस शर्तके साथ स्वीकार कर लिया कि पहले एक इकाई योजनाका विवादग्रस्त प्रश्न न्यायोचित ढंगसे सुलझा लिया जायगा। मि० सुहरावर्दीने भी ग्रामोत्थानके महत्त्वपर बल दिया। उन्होंने मुझसे कहा कि सरकारकी बिना सक्रिय सहायताके कोई बड़ा उपयोगी काम नहीं किया जा सकता। इसलिए हमारी बैठक एक इकाई योजनापर बिना कोई निर्णय किये हुए ही समाप्त हो गयी।

"जब मैं सीमाप्रान्तमें वापस लौटा तब भी एक इकाई योजनापर विचार चल रहा था। जनरल इस्कंदर मिर्जा और डा० खान साहब दोनों हमारे प्रान्तके दौरेपर आये। हम सब लोग खान कुर्बान अली खाँके अतिथि थे। जनरल इस्कंदर मिर्ज़ाने मेरे आगे ग्रामोत्थानकी उस योजनाको विस्तार रूपमें रखा जिसपर मरीमें चौधरी मुहम्मद अली मुझसे पहले बातचीत कर चुके थे। जनरल मिर्ज़ाने मुझसे ग्रामोत्थानकी इस योजनाके प्रशासन-भारको सँभालनेके लिए कहा। मैंने उन्हें उत्तर दिया कि जबतक एक-इकाई योजनाका विवादग्रस्त प्रश्न

संतोषजनक ढंगसे सुलझ नहीं जाता तबतक मैं ग्राम-उत्थानकी इस सरकारी योजनाका कार्यभार सँभालनेको तैयार नहीं हूँ। इसपर जनरल मिर्ज़ाने मुझसे कहा कि एक इकाई योजना अब पाकिस्तानके लिए एक प्रतिष्ठाका प्रश्न बन गयी है। यदि इस स्थितिमें पाकिस्तान इस योजनाके सम्बन्धमें अपने कदमको पीछे हटा लेता है तो इससे उसकी प्रतिष्ठापर एक धक्का लगता है और अफ़गानिस्तानकी प्रतिष्ठा बढ़ जाती है। मैंने कहा कि एक इकाईको स्थापित करना या न करना पाकिस्तानका अपना एक घरेलू सवाल है और उसके बारेमें अफ़गान क्या सोचेंगे, इसपर हमें कोई महत्त्व नहीं देना चाहिए। मैंने अपने तर्कको आगे बढ़ाते हुए कहा कि यदि पाकिस्तानमें पठान प्रसन्न और संयुक्त रहेंगे तो पाकिस्तान भी एक शक्तिशाली और सुखी राष्ट्र बनेगा। इसके अलावा यदि पख़्तून क्षेत्रोंका एक पृथक् इकाई द्वारा सीमांकन कर दिया जाता है, जैसी कि वहाँके लोगोंकी इच्छा है, तो पाकिस्तानके विरुद्ध चलनेवाला सारा विदेशी प्रचार व्यर्थ हो जायगा।

"मैंने जनरल मिर्जा और डा० खान साहबसे कहा कि स्वयं उन्होंने एक इकाई योजनाके समर्थनमें सक्रिय प्रचार किया है और हालाँकि पाकिस्तान एक लोकतंत्रीय देश है, मुझे इस सम्बन्धमें अपने विचार व्यक्त करनेकी स्वाधीनतासे वंचित किया गया है। दोनों व्यक्तियोंने इसे स्वीकार किया कि मेरी बात तर्कसंगत है और मुझको भी जनताके आगे इस सम्बन्धमें अपने विचार रखनेका अधिकार है। इस प्रकार उन दोनोंकी स्वीकृति और समर्थनके पश्चात् जनताको राजनीतिक शिक्षण देनेके लिए मैंने अपना दौरा प्रारम्भ किया, ताकि उपयुक्त लोकतंत्रीय माध्यमसे जनता एक सही निष्कर्षपर पहुँच सके।

"माननीय महोदय, हमारे यहाँकी जनताका इतना दमन किया गया है और उसपर इतने अत्याचार किये गये हैं कि यदि मैं सरकारके विरुद्ध जनतामें घृणा जगानेकी इच्छा करता तो मेरे पास एक विद्रोहतकके लिए पर्याप्त सामग्री थी। परन्तु इसके विपरीत मैंने लोगोंको सदैव अहिंसाका सिद्धांत समझानेकी चेष्टा की और यह घोषित किया कि हमारे साथ जो अन्यायपूर्ण व्यवहार हुआ है अथवा हमारा जो अपमान किया गया है उसे हम भूल चुके हैं और उन लोगोंको क्षमा कर चुके हैं। सामान्य स्थितियोंमें कोई पठान न इन बातोंको भूल सकता है और न क्षमा कर सकता है।

"हम पंजाबियों, बंगालियों, सिन्धियों और बलूचियोंको अपना मुस्लिम और पाकिस्तानी भाई समझते हैं। हम उन लोगोंतकसे घृणा नहीं करते जो सरहदी

सूबेके स्वायत्त शासनके विनाशके लिए उत्तरदायी हैं। व्यक्तिगत रूपसे पंजाबियों-से घृणा करनेका मेरे पास कोई कारण नहीं है और न मैं उनसे घृणा करता ही हूँ। हमारे ऊपर एक इकाई योजना लादनेकी कोई ज़िम्मेदारी पंजाबकी जनता पर नहीं आती क्योंकि उसके लिए स्वयं उनसे भी सलाह नहीं ली गयी।

"मैं सदैव एक सच्चा मुसलमान और एक देशभक्त रहा हूँ। पाकिस्तानकी संस्थापनाके बादसे ही मैंने पाकिस्तानकी सेवा करनेकी और उसको शक्तिशाली बनानेकी कोशिश की है। मेरा यह दावा है कि यदि पाकिस्तानमें रहनेवाले पख्तून संयुक्त हो जाते हैं तो पाकिस्तान अपेक्षाकृत अधिक शक्तिशाली हो जायगा। अंग्रेजोंने पख्तूनोंको टुकड़े-टुकड़ेमें बाँट दिया है और उनके साथ एक अन्याय किया है। यदि पाकिस्तान इस अन्यायको दूर कर देता है, तो मेरा विश्वास है कि उसीमें पाकिस्तानकी महानताका रहस्य निहित है; अंग्रेजोंकी नीतियोंके अनुसरणमें नहीं बल्कि पख्तूनोंको पास लानेमें और उनकी एक इकाई बना देनेमें।

"अपना सारा राजनीतिक आधार आपके आगे रख चुकनेके बाद मैं सारा मामला श्रीमान्‌के ऊपर छोड़ रहा हूँ। एक इकाई योजनाके विरुद्ध किये गये अपने भाषणोंमें मैंने वही कहा है जो इस्लामी लोकतन्त्रका दावा करनेवाले देशके एक मुक्त नागरिक होनेके नाते मेरा अधिकार है और जिसको मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। मुझे इस माँगसे कोई चीज़ नहीं रोक सकती कि अंग्रेजोंने पख्तूनों-के साथ जो अन्याय किया है, उसे दूर किया जाय। यदि श्रीमान् इस निष्कर्ष पर पहूँचते हैं कि सरकारके आदेशोंका उल्लंघन करके मैंने अपने देशके लोगोंको हानि पहुँचायी है तो प्रसन्नताके साथ बिना किसीसे घृणा किये हुए उस दंडको स्वीकार कर लूँगा जो कि न्यायकी माँगपर मुझे दिया जायगा।"

लम्बी काररवाईके बाद जस्टिस बशीर अहमदने २४ जुलाई सन् १९५७ को अपना फैसला सुना दिया। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको अदालत उठनेतककी क़ैद-की सज़ा दी गयी और उनपर १४,००० रुपये जुर्माना किया गया। न्यायाधीशने यह आशा व्यक्त की कि अभियुक्त इसके बादसे किन्हीं भी ऐसे कार्योंमें भाग नहीं लेगा जो कि उस देशके, जिसका कि वह नागरिक है, अनिष्ट करनेके उद्देश्यसे प्रेरित होंगे।

वर्षके क़ैदी

१९५७–६४

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने एक इकाई योजनाका बड़ी दृढ़ताके साथ विरोध किया और हर एक तरहसे यह कोशिश की कि उनके प्यारे सरहदी सूबेका शेष पश्चिमी पाकिस्तानमें विलय न होने पाये। २७ जनवरी सन् १९५७ को उन्होंने पाकिस्तान नेशनल पार्टीमें शामिल हो जानेका अपना निर्णय घोषित कर दिया। यह दल छः विभिन्न विरोधी दलोंको मिलाकर संगठित किया गया था। बादशाह खाँने सरकारको यह सलाह दी कि देशमें एक स्वस्थ राजनीतिक जीवनको पनपानेके लिए निकट भविष्यमें सामान्य निर्वाचनोंका होना अनिवार्य है। उन्होंने ऐसा अभियान छेड़नेकी बात कही जो कि सरकारको शीघ्र सामान्य निर्वाचन करानेको बाध्य करे। उन्होंने अपनी निजकी सेवाएँ इस अभियानको अर्पित कीं। उन्होंने कहा कि केवल एक ही ढंगसे पाकिस्तान अपने राजनीतिक आधारको दृढ़ कर सकता है और वह उपाय यह है कि वह देशके शासनमें जनताको उसका उचित भाग दे दे। "जिस समय आपके शासकोंने पश्चिमी पाकिस्तानका एकीकरण किया था उस समय क्या आपसे राय ली गयी थी?" उन्होंने यह प्रश्न उठाया और स्वयं ही उसका उत्तर दिया, "नहीं, उस समय आपसे कोई राय नहीं ली गयी। मैं सरकारको इसके लिए मजबूर कर देना चाहता हूँ कि देशमें जनताकी अपनी एक आवाज़ हो और किसी भी निर्णयके पूर्व सदैव जनताकी राय ली जाय।"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने एक इकाई प्रस्तावके विरोधमें जो उग्र अभियान छेड़ा था उसने समस्त राजनीतिक दलोंमें एक नयी स्फूर्ति भर दी। उन्होंने पूरे पाकिस्तानका दौरा किया। नेशनल पार्टीने सार्वजनिक सभाओं, जुलूसों और हड़तालोंके द्वारा अपने विरोधका प्रदर्शन किया और उसमें भाषाके आधारपर क्षेत्रीय संघ बनानेकी माँग की। यह माँग इतनी व्यापक हुई कि मुस्लिम लीगके नेताओं और एक इकाई योजनाके सूत्रधारोंका भी इस ओर ध्यान आकृष्ट हुआ। इस आशामें कि पश्चिमी पाकिस्तानके बलपूर्वक किये गये एकीकरणके साथ असंतोषकी एक लहर उन्हें फिर शक्ति-सम्पन्नताकी ओर ले जायगी, उन्होंने अपने खोये हुए प्रभावको पुनः स्थापित करनेके लिए इस तनावपूर्ण स्थितिका लाभ ले

लेनेकी कोशिश की। इस उद्देश्यको दृष्टिमें रखकर मुस्लिम लीग संसदीय दलके सदस्योंने पश्चिम पाकिस्तानकी विधान-सभामें एक प्रस्ताव प्रस्तुत करा दिया। इस प्रस्तावमें यह कहा गया था कि पश्चिमी पाकिस्तानके संयुक्त प्रदेशका स्वायत्त शासी इकाइयोंके क्षेत्रीय संघ द्वारा अधिक्रमण होना चाहिए। सितम्बर सन् १९५७ में पश्चिमी पाकिस्तानकी विधान-सभामें वह प्रस्ताव एक बड़े बहुमतके साथ पारित हुआ जिसमें पश्चिमी पाकिस्तानको चार या पाँच प्रदेशोंमें बाँट देनेका समर्थन किया गया था। इस प्रस्तावको अस्वीकार करते हुए अध्यक्ष इस्कंदर मिर्ज़ाने एक वक्तव्य जारी किया। उन्होंने कहा कि प्रधान मंत्री श्री सुहरावर्दीके साथ उन्होंने इस समस्यापर विचार-विमर्श कर लिया है और वे इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि ऐसे महत्त्वपूर्ण मामलोंको लेकर संविधानमें फेर-बदल नहीं करना चाहिए, विशेष रूपसे ऐसे संकटकालमें। उस वक्तव्यमें यह भी कहा गया था कि सन् १९५८ में निर्धारित पहला सामान्य निर्वाचन इस मौजूदा संविधानके अन्तर्गत ही होगा। राष्ट्रपतिके आदेशके अनुसार विधान-सभाका अधिवेशन स्थगित कर दिया गया और पश्चिमी पाकिस्तानमें राष्ट्रपतिका शासन लागू कर दिया गया। सरकारका सारा काम, गवर्नर मि० गुरमानीने, जो संयुक्त पश्चिमी पाकिस्तानके एक प्रबल समर्थक थे, अपने हाथोंमें ले लिया। पश्चिमी पाकिस्तान-के मुख्य मंत्री डा० ख़ान साहबको ७ जुलाई १९५७ को पद-च्युत कर देना इस गहरी संकट-स्थितिका एक आभास देता है।

जुलाई सन् १९५७ में ढाकाके इस सम्मेलनमें ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ, प्रोफेसर भसानी, जी० एम० सईद और मियाँ इफ़्तिखारुद्दीनने नेशनल अवामी पार्टीकी स्थापना की। यह पूरे पाकिस्तानका एक लोकतंत्रिय संगठन था। उसीके कारण अक्तूबर सन् १९५७ में सुहरावर्दी सरकारका पतन हो गया। रिपब्लिकन और मुस्लिम लीग पार्टियोंके एक समझौतेके आधारपर मि० चुन्द्रीगर द्वारा एक नयी मिली-जुली सरकार बनी लेकिन इन लोगोंको एक महीनेके बाद हट जाना पड़ा। उनके उत्तराधिकारी सर फीरोज ख़ाँ नून मुश्किलसे एक सालतक टिक पाये। संकटकी स्थिति उत्तरोत्तर तेज़ीसे बढ़ती जा रही थी। शासक-वर्गके पारस्परिक मतभेद और दलगत झगड़े इसीके लक्षण थे। रिपब्लिकन पार्टीके नेता डा० खान साहबकी ९ मई सन् १९५८ के दिन हत्या कर दी गयी। यह दुर्घटना भी पश्चिमी पाकिस्तानकी तनावपूर्ण राजनीतिक स्थितिका एक परिचय देती है।

अपने बड़े भाईकी हत्याके पश्चात् लाहौरमें अपना पहला भाषण करते हुए १९ मईको खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने कहा कि डा० खान साहबकी हत्या उन

लोगोंने की जिनके लिए उन्होंने अपने लोगोंको छोड़ा था, जिनके लिए वे अपने दलसे अलग हुए थे और जिनके लिए अपने गौरवपूर्ण राजनीतिक जीवनकी अर्जित कीर्ति उन्होंने हवामें उछाली थी। स्वयं खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँकी समझमें भी यह बात नहीं आ रही थी कि डा० खान साहबकी हत्याका कारण क्या था। उन्होंने कहा कि मैं यह देख रहा हूँ कि पुलिस और सरकार मामलेकी कैसे तफ़तीश कर रही है। उन्होंने इस बातपर बल दिया कि डा० खान साहबकी हत्याके फलस्वरूप पंजाबियों और पठानोंके बीच घृणाकी भावना बलवती हो गयी है। उन्होंने पाकिस्तानके सभी लोगोंसे यह निवेदन किया कि वे आपसमें अपेक्षाकृत अच्छे सम्बन्ध स्थापित करें। उन्होंने चेतावनी दी कि यदि यही रवैया चलता रहा तो पंजाबियों और पठानोंको एक सड़कपर साथ-साथ चलना भी कठिन हो जायगा। इस समय पठानों, पंजाबियों और पाकिस्तानके अन्य लोगोंको आपसके इस निरन्तर बढ़ते हुए अविश्वास और घृणाके बारेमें विचार करना चाहिए और इसका कोई प्रभाव डालनेवाला उपचार खोजना चाहिए।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने सन् १९५८ में पश्तोमें एक पुस्तिका प्रकाशित करके उस नृशंस षड्यंत्रका भंडाफोड़ किया जो कि इस एक इकाई योजनाके पीछे चल रहा था :

"पख्तून बन्धुओ! मैं अपने-आपको आप लोगोंका एक सेवक मानता हूँ। राष्ट्र और समाजके आगे जो समस्याएँ खड़ी हैं उनपर विचार करते समय मेरी दृष्टिके आगे आपका कल्याण रहता है, वे कठिनाइयाँ या संकट नहीं, जिनमेंसे मुझको गुज़रना पड़ सकता है। यदि आप इतिहासका अवलोकन करें तो इस बातको महसूस करेंगे कि विगत कालमें आप एक बहुत बड़ी शक्ति थे; वह शक्ति जिसने कि कभी भारत और ईरानपर शासन किया था। लेकिन जब आपने अपनी बन्धुत्व-भावना, सामुदायिक जीवन, प्रेम, एकता और देशभक्तिको त्याग दिया और जब आप स्वार्थी बन गये तब न केवल आपका साम्राज्य विध्वंस हो गया बल्कि आपके अपने देशपर भी आपका राज न रहा। आप मुगलोंके, सिखोंके और फिर अंग्रेजोंके गुलाम बन गये।

"अभी पिछली शताब्दियोंमें ही अंग्रेजोंने अपनी 'फूट डालो और राज करो' की नीतिके द्वारा सारे भारतपर शासन किया। उसके बाद उनका ध्यान हम पठानोंकी ओर आकृष्ट हुआ। उन्होंने देशद्रोहियोंकी सहायतासे हमारे ऊपर आधिपत्य कायम करनेकी कोशिश की। उन्होंने हमारे देशका कुछ भाग छीन लिया लेकिन पठानोंके शौर्यपूर्ण प्रतिरोधके कारण वे हमारा पूरा देश न ले सके। उन

अंग्रेजोंने, जिनके साम्राज्यमें सूर्य कभी नहीं डूबता, हमारे देशको जीतनेमें अपनी सारी शक्ति लगा दी फिर भी हमारे देशका बड़ा अंश स्वाधीन ही बना रहा। जिस भूमिपर अंग्रेजोंका अधिकार हो गया था, उसके निवासी भी निरंतर अंग्रेजों का विरोध करते रहे। अंततः पख्तूनोंने प्रेम, बन्धुत्व और देशभक्तिकी भावनाओं का विकास किया और वे ईश्वरके नामपर, जनताकी सेवाके लिए खुदाई खिदमतगारोंके झण्डेके नीचे आपसमें मिले। उन्होंने अनेक कठिनाइयों और कष्टोंको सहन किया और बलिदान किये और सफलताके साथ ब्रिटिश आधिपत्यको समाप्त कर दिया। अंग्रेज पख्तूनोंकी ताक़तको पहचानते थे, यह उनकी पठानोंके प्रति पिछले दिनों अपनायी गयी नीतिसे स्पष्ट हो जाता है। उनको इस बातका विश्वास हो गया था कि यदि बन्धुत्व-भावना और सामुदायिक जीवनके प्रति उनकी आस्था ने पख्तूनोंको संगठित कर दिया तो फिर धरतीकी कोई शक्ति उनको दबाकर न रख सकेगी, इसलिए उन्होंने पठानोंको टुकड़ोंमें बाँट दिया और उनके देशके सुन्दर नामतकको खुरच डाला। यहाँसे हटते समय वे हम लोगोंको शेखीखोर विदूषकोंके हाथोंमें सौंप गये जिनका आज़ादीकी लड़ाईसे दूरका भी सम्बन्ध न था। उनके पुरखोंने अंग्रेजोंको मदद दी थी और देश, समाज और इस्लामके साथ ग़द्दारी की थी। अंग्रेजोंने अपने इन विदूषकोंतकको यह निर्देश दे दिया कि वे पठानोंके मुल्कपर अपना अधिकार जमाये रखनेके लिए उनको हमेशा दबाकर रखें। अंग्रेजोंके इस देशसे चले जानेके बाद भी और स्वाधीनता मिल जानेके बाद भी हमने अबतक आजादीके फलको नहीं चखा है, क्योंकि जिनके हाथोंमें बदलकर शक्ति आयी है उनको पठानोंसे कोई लेना-देना नहीं है और न उनको समाजसे प्रेम है और न इस्लामसे कोई सहानुभूति। उनकी केवल एक महत्त्वाकांक्षा है, वह यह कि वे देशके ऊपर शासन करते रहें। यही कारण है कि वे राष्ट्र-सेवकों तथा अंग्रेजोंके शत्रुओंको अपना निजका शत्रु समझते हैं। देशभक्तोंके प्रति उनका व्यवहार अंग्रेजोंके व्यवहारसे भी बदतर है। पिछले दिनों बिना किसी मुक़दमेके या बिना कोई कारण बतलाये हुए हज़ारों आदमियोंको जेलमें डाल दिया। निर्दोष बालकों, स्त्रियों, बूढ़ों, जवान लड़कियों और लड़कोंको गोली मार दी गयी, उनके घर बर्बाद कर दिये गये, उनकी स्त्रियोंकी इज्जतसे खेला गया। उनकी सम्पत्ति लूट ली गयी और पख्तून बालकोंको निराश्रित कर दिया गया। और यह सब इस्लामके नामपर हुआ।

"शुरूमें कुछ लोगोंने यह सोचा कि पाकिस्तानके शासकोंके दमनके लक्ष्य केवल खुदाई खिदमतगार हैं लेकिन तुरन्त ही वे यह अनुभव करने लगे कि

पाकिस्तानके शासकोंके हाथोंसे पूरा पख्तून समाज ही अपमानित होगा। जब ये शासक पख्तूनोंकी भावनाको कुचलनेमें सफल न हुए तब उन्होंने बाजीगरकी तरह अपनी पिटारीमेंसे 'एक इकाई-योजना' निकाली। प्रारंभमें उन्होंने संसदकी स्वीकृति प्राप्त करनेकी चेष्टा की। उन्होंने जिरगाके माध्यमसे तथा अन्य तरीक़ोंसे मुझसे भी मदद माँगी। जब एक-इकाई विधेयक संसदमें पारित न हो सका तब उन्होंने क्षेत्रीय संघ (ज़ोनल फेडरेशन) बनानेका प्रयत्न किया। जब वे इस बार भी पराजित हो गये तब गवर्नर जनरल गुलाम मुहम्मदने संसदको ही बर्खास्त कर दिया और उस संविधानको खुरचकर मिटा दिया, जिसका प्रारूप बड़ी मुश्किल से आठ सालोंमें तैयार हो पाया था। विचित्र बात यह है कि पाकिस्तान संसदका उस समय अस्तित्व था जब कि उसका संविधान न था और अब, जब कि उसका प्रारूप तैयार किया जा चुका है, संसदको उसके संविधानके साथ खुरचकर मिटा दिया गया है। नयी संसदने, जो पाकिस्तानके शासकोंने अपनी इच्छासे गठित की है, 'एक इकाई' योजनाको अपनी स्वीकृति दे दी है और यह उसकी सबसे पहली स्वीकृति है। संसदका अत्यावश्यक कार्य यानी संविधानको तैयार करनेके कार्य परे कर दिया गया है।

"वन-यूनिट प्लान' शीर्षक गुप्त प्रलेखको देख लेनेपर इसके पीछेका सारा मुख्य कारण स्पष्ट हो जाता है। इस गुप्त प्रलेखके तैयार करनेवाले हैं—गवर्नर जनरल गुलाम मुहम्मद, भूतपूर्व प्रधान मंत्री मुहम्मद अली, मुमताज़ दौलताना, मि० गुरमानी तथा कुछ अन्य प्रमुख पंजाबी। मैं पश्चिमोत्तर सीमाप्रांतके मुख्य मंत्री सरदार अब्दुल रशीद खाँका आभारी हूँ जिन्होंने इस गुप्त प्रलेखको संसदके सामने प्रस्तुत किया और इस भयानक षड्यंत्रके विरुद्ध लोगोंको सावधान कर दिया। मैं इस प्रलेखके कुछ अंश यहाँ उद्धृत कर रहा हूँ। मुस्लिम लीग बहुधा राष्ट्रीय एकता और समाकलनकी बात करती है लेकिन उसमें उसका कितना विश्वास है यह गुप्त प्रलेखके इन थोड़ेसे उद्धरणोंसे स्पष्ट है :

"एक इकाई क्यों ?" अध्यायके अन्तर्गत गुप्त प्रलेखमें पृष्ठ २ पर लिखा गया है :

"पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तानके बीचकी कड़ी जोड़नेके लिए भौगोलिक और प्रशासकीय कठिनाइयाँ विचार करने योग्य हैं। पाकिस्तानका विभाजन पूर्वी और पश्चिमी दो भागोंमें हुआ है जो कि एक दूसरेसे काफी दूरीपर स्थित हैं। इससे पाकिस्तानके आगे ऐसी कठिनाइयाँ आ खड़ी हुई हैं जिनको पार करना कठिन है। पूर्वी पाकिस्तान और पश्चिमी पाकिस्तानके बीचमें एक हज़ार मील-

को दूरी है और उनके बीचमें हिन्दुओंका पचड़ा है। एक और भी कठिनाई है, वह यह कि दोनों भागोंमें अलग-अलग भाषाएँ बोली जाती हैं। पूर्वी भागमें जन-संख्या अधिक है और उसमें आयके स्रोत कम हैं जब कि पश्चिमी भागकी आबादी कम है लेकिन उसका क्षेत्रफल बड़ा है और उसकी आयके स्रोत अधिक हैं। इन दोनों भागोंमें अलग-अलग ढंगके शासनकी आवश्यकता है। कठिन समस्याएँ भाषणोंसे नहीं सुलझायी जा सकतीं। ये कठिनाइयाँ मूलभूत और वास्तविक हैं। इन परिस्थितियोंमें दोनों भाग एक-दूसरेपर शंका करते रहेंगे और उससे कोई लाभ नहीं होगा।

''इस तर्कके अनुसार बंगाल और पूर्वी पाकिस्तानको पास आनेमें कठिनाइयाँ हैं लेकिन हम तो यह जानना चाहते हैं कि पश्चिमी पाकिस्तानके विभिन्न भाषा-भाषी प्रदेशोंके एकीकरणमें कोई कठिनाई है या नहीं ?

''गुप्त प्रलेखके पृष्ठ ४ और ५ में कहा गया है :

'पख्तूनोंके पास बिजली है, बलूचिस्तानके पास खनिज सम्पत्ति है और सिंधके पास खेतीके लिए विस्तीर्ण भूमि है। पंजाबको इस बिजलीसे लाभान्वित होना चाहिए। यह आवश्यक भी है। यदि बलूचिस्तान और कबायली इलाकोंसे खनिज सम्पत्तिको ले लिया जाता है तो इससे सामान्य जीवनमें एक समानता आयेगी। कबायलियोंको सिन्ध और बहावलपुरकी कृषि योग्य भूमिमें बसाया जा सकता है और यह कार्य चल भी रहा है लेकिन वस्तुतः इसमें बहुत कठिनाइयाँ हैं, जिनको दूर करनेके लिए पर्याप्त समय अपेक्षित है। उनके लिए एक नियोजित अभियानकी आवश्यकता है। यह सब तबतक नहीं हो सकता जबतक कि प्रान्तोंको भंग न कर दिया जाय। इन प्रान्तोंका गठन कुछ इस प्रकारसे किया गया है कि इनमेंसे केवल एक आत्म-निर्भर है और शेष एक-दूसरेपर आश्रित हैं। यह एक महाजन और उसके कर्जदारके बीचका ज़िन्दगीभरका लम्बा रिश्ता है।'

''इस उद्धरणसे यह स्पष्ट है कि इस योजनाको पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तकी बिजली, बलूचिस्तानकी खनिज सम्पति और सिन्धकी भूमिके लिए सेया जा रहा है।

''गुप्त प्रलेखमें पृष्ठ ७ पर लिखा गया है :

'मौजूदा हालत यह है कि समस्त वास्तविक शक्ति केन्द्रके हाथमें है जिसमें बंगालका मुख्य भाग है और हम लोगोंका इसमें बहुत थोड़ा हिस्सा है। 'एक इकाई' बन जानेपर सारी शासन-सत्ता पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तानके दो समान

भागोंमें बँट जायेगी। इस तरहसे पश्चिमी पाकिस्तानके हाथोंमें पहिली बार यथेष्ट सत्ता आ जायगी। बंगाल केन्द्रको अपनी आयके रूपमें जो धन दे रहा है उससे उसके ऊपर किया जानेवाला व्यय कहीं अधिक है। पश्चिमी पाकिस्तानके एक इकाई बन जानेके पश्चात् केन्द्रीय शासनपर बंगालका यह भार भी बहुत कुछ हल्का हो जायगा।'

"पृष्ठ संख्या ९ पर 'एक इकाई किस प्रकार बनानी चाहिए' शीर्षकके अन्तर्गत इस गुप्त प्रलेखमें कहा गया है :

'हमें सबसे पहले राजनीतिक शक्तिको अपने हाथमें ले लेनेकी कोशिश करनी चाहिए और इसके लिए हमें अपने सारे विरोधियोंकी आवाज़को दबा देना चाहिए जिससे कि हमारे रास्तेमें कोई बाधा न रहे। हम लोगोंको एक ऐसा वातावरण खड़ा कर देना चाहिए कि जनता केवल हमारी ही आवाज़ सुने और यह तभी सम्भव है जब कि हम अपनी राजनीतिक ताक़तको सख्तीके साथ काममें लायें। यदि हम अतिअल्प समयमें विरोधको बिलकुल ही न दबा सके और जबतक विरोधी लोग चुप हैं तबतक अपनी राजनीतिक स्थितिको अधिक सुदृढ़ न कर सके तो राजनीतिक बलको प्राप्त करनेकी दिशामें हमारा कार्यारम्भ खतरनाक सिद्ध हो सकता है। कोई भी असमंजस या कोरी धमकियाँ ही हमारे असली राजनीतिक बलको हासिल करनेके रास्तेमें आकर खड़ी हो सकती हैं।'

"प्रलेखमें पृष्ठ संख्या १० पर लिखा गया है :

'पाकिस्तानके निर्माणके समय जो उत्साह दिखलाई देता था, वह अब नहीं है। जनताको वशीभूत करनेकी पुरानी युक्तियाँ अब पर्याप्त नहीं रही हैं। जनतामें एक घोर निराशा और बेचैनीने घर कर लिया है इसलिए अब उसे किसी भी दिशामें ले जाया जा सकता है। हमारे कामके लिए यह अनुकूल अवसर है। ईश्वर जाने, हमें ऐसा मौक़ा फिर कभी मिलेगा भी या नहीं? जब हम ऐसी स्थिति उत्पन्न कर देंगे कि केवल हमारी ही आवाज़ सुनी जा सके तभी हम जनताको अपने पीछे ले जा सकेंगे।'

"प्रलेखके पृष्ठ १० पर इन पंक्तियोंको रेखांकित किया गया है :

'इस उद्देश्यके हेतु हमको प्रत्येक प्रान्तमें अपने निजके आदमी रखने चाहिए। हमें उनको शक्तिशाली बनाना चाहिए और पूरे अधिकार देने चाहिए ताकि वे एक प्रभावपूर्ण ढंगसे अनुकूल स्थिति बना सकें। हमको खैरपुरकी घटनासे सबक़ लेना चाहिए जिसमें कि विधान-सभामें 'एक इकाई'की काररवाईको हमारे मार्गमें एक बड़ा रोड़ा डालकर रद्द कर दिया गया। हमको प्रान्तीय विधानसभाओंपर

भरोसा नहीं करना चाहिए लेकिन स्वयं प्रस्तावका प्रारूप तैयार करके हम उनकी राय ले सकते हैं और अपने 'ह्विप' (सचेतक) के द्वारा उसे उनसे मनवा सकते हैं। हम प्रमुख व्यक्तियों द्वारा रेडियोसे अपने पक्षके वक्तव्य प्रसारित कर सकते हैं और स्वयं ही पत्रोंमें अपने प्रचार-कार्यको संगठित कर सकते हैं। हम छोटी पुस्तिकाओं और इश्तहारोंके द्वारा अपना व्यापक प्रचार कर सकते हैं और अपनी सूचीमें वकीलों, डॉक्टरों, अध्यापकों और विद्यार्थियोंको सम्मिलित कर सकते हैं।'

"पृष्ठ संख्या १२ पर कहा गया है :

'हमें एक इकाईके प्रचारके लिए मुल्ला लोगोंकी सेवाओंको भी अपने उपयोगमें लाना चाहिए। लेकिन हमको उनके प्रति सावधान रहना होगा क्योंकि वे लोग ऐसे नहीं हैं कि घटनासे पूर्व उनको सारी बात बतला दी जाय। हमारे सौंपे हुए कार्यको करते समय वे स्वार्थके लिए कुछ ऐसी बातें भी करेंगे जिनका हमारे उद्देश्यसे कोई सम्बन्ध नहीं होगा और इस प्रकार वे अपनी महत्ता क़ायम करनेकी कोशिश करेंगे इसलिए हमको केवल भाड़ेके मुल्लाओंको भर्ती करना चाहिए। हमारे लिए सार्वजनिक सभाओंका आयोजन भी आवश्यक है। उनमें पहलेसे तैयार किये हुए भाषण हों और उनमें एक भी शब्द न बदला जाय।'

"पृष्ठ संख्या १३ पर प्रलेखमें सावधान करते हुए कहा गया है :

'इस समय हम पंजाबमें एक इकाईके समर्थनपर अधिक ज़ोर न दें क्योंकि इससे छोटे प्रान्तोंकी जनता आतंकित हो जायगी और उसके मनमें शंका उत्पन्न हो जायगी। हमारे नेताओंको अपने वक्तव्य जारी करते समय सावधान रहना चाहिए। हम लोगोंको एक इकाईका दावा करनेवाले व्यक्तियोंके रूपमें कभी सामने नहीं आना चाहिए क्योंकि इससे हम लोग शोषण करनेवाले समझ लिये जायँगे। परन्तु स्मरण रखिए, इस कामके लिए हमको सुयोग्य और विश्वासपात्र कार्यकर्त्ता केवल पंजाबमें ही मिल सकते हैं। वे संगठित हों और आवश्यकताके समय कहीं भी जानेके लिए तैयार रहें। इस क्षणसे पंजाबके नेताओंको अपनेको संगठित कर लेना चाहिए ताकि उपयुक्त अवसर आनेपर वे स्थितिका पूरा लाभ ले सकें। उन समस्त प्रस्तावोंका, जो पंजाबमें पारित होंगे, मसौदा कराचीमें तैयार किया जायगा।'

"पृष्ठ १४ पर इस प्रलेखमें कहा गया है :

'एक इकाई योजनाके अन्तर्गत पंजाबकी जन-संख्या ५६ प्रतिशत हो जायगी और इकाईकी आबादी ४४ प्रतिशत रह जायगी।'

"पृष्ठ-संख्या २१ पर प्रलेखमें यह लिखा गया है :

'प्रत्येक व्यक्तिको यह बात ज़ाहिर कर देनी चाहिए कि केन्द्र एक इकाई योजनाका समर्थक है। मीर मुहम्मद अली तालपुर जैसे लोगोंको योजनाका विरोध करनेका कोई अवसर नहीं देना चाहिए। हमको बंगालियोंके दलकी ओर ध्यान देना चाहिए जो कि हमारा हमेशा विरोध करते हैं; वे इसपर तुल गये हैं कि न हम अपना फ़ायदा करेंगे और न दूसरोंका होने देंगे। उनका मुख्य उद्देश्य यह है कि यह सरकार अपनी जगहसे हट जाय।'

"इस गुप्त दस्तावेज़में पृष्ठ २२ पर ये शब्द अंकित हैं :

'सरहदी सूबेमें सारी स्थिति उलट गयी है। सरदार अब्दुल रशीद और पुराने मुस्लिम लीगियोंने निश्चय ही एक इकाई योजनाका समर्थन किया होता क्योंकि क़यूमके पतनने उनका रास्ता साफ़ कर दिया था। क़यूमका भ्रष्ट और विद्वेषपूर्ण शासन केवल प्रचारके बलपर चलता रहा। उसकी समाप्तिसे मुस्लिम लीगियोंका प्रभाव और भी अधिक बढ़ गया। लेकिन वहाँ स्थिति बिगड़ गयी क्योंकि क़यूमके स्थानपर उनकी अपेक्षा कहीं बड़ी शक्ति; दुर्जेय लाल कुर्तीवाले प्रकट हो गये। हम खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको कभी नहीं जीत सकते और न उनके ऊपर भरोसा कर सकते हैं। यदि लाल कुर्तीवालोंको बिना शर्तके न छोड़ा जाता तो अधिक लाभप्रद होता। उनके ऊपर काफ़ी पाबंदियाँ लगा देनी चाहिए थीं। कुछ लोग भ्रमवश डॉ० खान साहबको खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँसे अधिक महत्त्व दे बैठे हैं लेकिन शीघ्र ही वे अपनी मूर्खताका अनुभव कर लेंगे। यदि वे दोनों भाई साथ रहते हैं तो उनकी शक्ति संयुक्त रहती है। यदि वे पृथक् हो जाते हैं तो खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ तो अपनी स्थितिको यथावत् रखेंगे लेकिन डॉ० खान साहब अपने स्थानसे च्युत हो जायँगे क्योंकि व्यक्तिगत रूपमें उनकी कोई स्थिति नहीं है। रशीदको हमें अपना पूर्ण सहयोग देना चाहिए ताकि वे लाल कुर्तीवालोंकी उपेक्षा कर सकें और पुराने मुस्लिम लीगियोंको संगठित करने में उनको प्रोत्साहन मिले। लाल कुर्तीवालोंका सारे प्रान्तमें व्यापक प्रभाव है लेकिन अब उनकी इस रिहाईके बाद उसे खत्म कर देना होगा। यह कार्य कुर-बान अली खाँको सौंपा जा सकता है। वे इसे बड़े प्रभावोत्पादक ढंगसे पूरा कर सकते हैं। इसी अभिप्रायसे उनको सरहदी सूबेका गवर्नर बनाया गया है। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँकी पूरी तरहसे उपेक्षा की जानी चाहिए। उनके साथ हमारी सन्धिवार्ता उनके प्रभावमें वृद्धि करेगी लेकिन हमारा रहा-सहा प्रभाव भी समाप्त कर देगी। राजनीतिक दूरदर्शिता या सूक्ष्म बोधमें हममेंसे कोई उनका मुक़ाबला

नहीं कर सकता। मनोवैज्ञानिक दृष्टिसे पहले हमें जो सुविधा प्राप्त थी वह अब हमने खो दी है।'

"मुझको बार-बार जेल भेज देनेका यही कारण था। वे मुझको एक इकाई योजनाके विरोधमें कोई अभियान छेड़नेसे रोकना चाहते थे।

"पृष्ठ २३ पर प्रलेखमें कहा गया है :

'पंजाबके लिए सबसे अच्छी बात यह होगी कि वह इस मामलेमें चुप रहे। हमें पंजाबके मित्रोंको यह समझा देना होगा कि वे कोई भूल न करें क्योंकि मौजूदा नेतृत्व पंजाबका है और वह और भी प्रभावोत्पादक स्थिति होगी जब कि केन्द्र और इसी प्रकारसे लाहौरमें शासनकी पतवार पंजाबके प्रभावशाली और शिक्षित लोगोंके हाथोंमें होगी। बलूचिस्तानमें मुस्लिम लीगके नेता निश्चित ही कुछ सीमातक हमें मदद देंगे क्योंकि शाही जिरगाने अपने जीवन-कालमें कभी किसी शासन-सत्ताको असंतुष्ट नहीं किया। जब पश्चिमी पाकिस्तानपर हमारा नियंत्रण स्थापित हो जायगा तब हमें बंगालमें केवल एक नेताके साथ समझौता करना होगा, वे हैं सुहरावर्दी। सुहरावर्दी या तो खुलकर हमारा समर्थन करेंगे या तटस्थ हो जायँगे।'

"हम लोगोंको सिन्ध और सरहदमें राजनीतिक कार्य प्रारम्भ करनेके लिए वहाँके प्रभावशाली व्यक्तियोंके सम्पर्कमें रहना होगा। मंत्रालय सम्बन्धी और राजनयिक पदोंके रूपमें हमें कुछ लोगोंको घूस भी देनी होगी। अन्यथा वे इस भयसे कि कहीं उनका धंधा खतरेमें न पड़ जाय, एक इकाई योजनाका विरोध करेंगे। यह भी आवश्यक होगा कि विधानसभाओंमें एक इकाईका प्रस्ताव पारित कराया जाय। मुस्लिम लीग भी इसे स्वीकृत करेगी……

"इसी प्रकारसे हम बलूचिस्तान, बहावलपुर और अन्य राज्योंको भी अपने नियंत्रणमें ले सकेंगे। हम लोगोंको डिप्टी-कमिश्नरोंके ऊपर पूरी तरहसे निर्भर नहीं करना चाहिए। हमें उन लोगोंको अपने पक्षमें लाना चाहिए, जिनका राजनीतिक प्रभाव है।

"प्रलेखमें पृष्ठ २४ पर इस बातपर बल दिया गया है :

'कहा जाता है कि एक अन्य वैकल्पित व्यवस्था भी एक इकाईकी योजनाका स्थान ले सकती है। उदाहरणके लिए यह सुझाव दिय गया है कि पहले कुछ इलाक़ों और राज्योंका अपेक्षाकृत बड़े क्षेत्रोंमें विलय कर देना चाहिए। कराची और बलूचिस्तानका कुछ भाग सिन्धके साथ मिला देना चाहिए। बलूचिस्तानके कुछ अन्य हिस्सोंका पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तमें समाकलन कर दिया जाय और

बहावलपुर पंजाबमें समाहित हो जाय। सीमाप्रान्तको बनाये रखनेके लिए पंजाब और सिन्धको बादमें उसमें विलय कर देना चाहिए। कुछ लोगोंका विचार है कि यह अधिक सरल समाधान होगा। हमारे लिए यह इतना सरल नहीं है कि हम बहावलपुर और बलूचिस्तानको बड़ी इकाइयोंमें अपना विलय करनेके लिए राज़ी कर सकें लेकिन उनको पश्चिमी पाकिस्तानमें अपना विलय करनेके लिए तैयार किया जा सकता है। यदि हम इस वैकल्पिक योजनाको क्रियान्वित करनेमें जुट जाते हैं तो पश्चिमी पाकिस्तानमें एक इकाईकी जगह तीन इकाइयाँ हो जायँगी। यहाँ दो या तीन इकाइयोंका कोई अर्थ नहीं है क्योंकि यह पाकिस्तानकी उलझी हुई संवैधानिक समस्याके समाधानका कोई उपाय नहीं है। इस तरहसे हमें कुछ नहीं मिलेगा बल्कि हम अपने हाथोंसे ही पख्तूनिस्तानकी स्थापना कर देंगे।'

"पश्चिम पाकिस्तानके नेताओंको जितने शीघ्र इस एक इकाई योजनाकी स्वीकृति मिल जाय उनको अपने हाथोंमें तुरन्त अधिकार ले लेना चाहिए और उन्हें बंगालके लोगोंसे, विशेष रूपसे सुहरावर्दीसे बातचीत प्रारम्भ कर देनी चाहिए। सुहरावर्दी महत्त्वाकांक्षी हैं। वे हमसे वार्ता करनेको तैयार हो जायँगे। हम उनसे यह कह देंगे कि केन्द्र केवल चार विषयोंको आरक्षित कर लेगा और दो अर्थात् बंगाल तथा पश्चिमी पाकिस्तान स्वायत्तशासी प्रदेश बन जायँगे। केन्द्रमें भी दोनोंका प्रतिनिधित्व बराबर होगा। सुहरावर्दीके साथ हमारा यह सौदा वस्तुतः इतना महँगा नहीं है। जैसे ही वे यूरोपसे वापस लौटेंगे, हम उनके पूर्वी पाकिस्तानके लिए रवाना होनेसे पहले ही उनके साथ शीघ्र समझौता कर लेंगे।

"इस उद्धरणको पढ़ लेनेसे यह बिलकुल स्पष्ट हो जाता है कि इस एक इकाई योजनाको गढ़नेवाला कौन है और इसके पीछे उसका उद्देश्य क्या है? यह दावा किया जाता है कि इस एक इकाईके बन जानेपर विभिन्न प्रांतोंके मध्य समान बन्धुत्वकी भावना उत्पन्न हो जायगी और इससे ऐक्यभाव तथा ठोसपन आयेगा। लेकिन इन उद्धरणोंको पढ़ लेनेके बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि वे इस अभिप्रायसे एक इकाई नहीं बना रहे हैं और वे प्रेम, स्नेह तथा बन्धुत्वके रास्तेको ग्रहण करनेके पक्षमें नहीं हैं, बल्कि वे स्वार्थकी पूर्तिके लिए बल, षड्यंत्र, धोखा, घूस तथा अन्य अनुचित उपायोंको अपनाना चाहते हैं। यही कारण है कि प्रेमके स्थानपर घृणा, एकताके स्थानपर फूट और पारस्परिक विश्वासके स्थानपर अविश्वास उत्पन्न हुआ है।

"तीसरी चीज़, जिसका उन्होंने दावा किया है, यह है कि यदि एक इकाई

योजना बन जायगी तो व्यय कम हो जायगा और बचतकी इस निधिको जन-कल्याणके कार्योंमें लगाया जा सकेगा। लेकिन यह भी एक झूठ है। मैंने संसद-को यह चेतावनी दी थी कि अभी एक इकाई योजनाके लिए स्थितियाँ अनुकूल नहीं हैं। लेकिन यदि वे वास्तवमें बचत करना चाहते हैं तो उनको एक ऐसी इकाईकी अपेक्षा, जो क्रियान्वित ही न हो सके, तीन इकाइयाँ बनानी चाहिए। पंजाबी भाइयोंके लिए मैं दो इकाइयाँ बनानेतकपर तैयार था। उन लोगोंने यह दावा किया था कि एक इकाई बनाकर वे बीस करोड़की बचत कर लेंगे; मैं दो इकाइयाँ बनाकर दस करोड़की बचत तो कर ही रहा था परन्तु तत्कालीन वित्तमंत्री मि० मुहम्मद अलीने मुझसे कहा कि या तो एक इकाई बनेगी या स्थिति यथावत् रहेगी। इसके बाद आगे कोई विचार-विमर्श नहीं हुआ और हम वहाँसे चले आये।

"लोगोंको यह पता चला कि इस योजनामें खर्चकी कमीकी जगह करोड़ों रुपयोंका अधिक व्यय है। मुझे एक और बात याद आती है। जब हम लोग एक इकाई योजना और क्षेत्रीय संघपर चर्चा कर रहे थे तब पंजाबके नेताओंने कहा कि छोटे राज्योंके एकीकरणके पश्चात् पंजाब और शेष भागके बीच प्रतिनिधित्व-का अनुपात ६५ और ३५ का रहेगा। यह अनुपात न केवल विधान-सभा और मंत्रिमंडलकी सदस्यतापर बल्कि नौकरियों, व्यापार तथा अन्य धंधोंपर भी लागू होगा। मैंने इस प्रस्तावको अस्वीकार कर दिया क्योंकि मैंने इसमें पख्तूनोंकी राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक क्षति देखी। ऐसा जान पड़ता है कि उन लोगोंने पख्तूनोंमेंसे कुछ ऐसे व्यक्तियोंका सहयोगीके रूपमें समर्थन प्राप्त कर लिया था, जो कि अपने देशके विनाशकी ओरसे उदासीन थे।

"उन लोगोंने यह दावा भी किया था कि एक इकाईकी रचनाका परिणाम प्रशासनका एक सुधार होगा। लेकिन जब छोटे प्रदेशोंमें स्थानीय प्रशासनिक ढाँचेकी हालत सुधारी न जा सकी तो यह कैसे सम्भव होता कि चित्रालसे कराची तक फैले हुए एक विशाल प्रदेशका प्रशासन कुशलतापूर्वक चलता रहे? देश और सरकारके ज़िम्मेदार लोग इस बातको स्वीकार करते हैं कि एक इकाईके बननेके समयसे ही प्रशासनका ह्रास हुआ है और जनताको अत्यधिक असुवि-धाओंका सामना करना पड़ा है।

"ढाई वर्षोंका अनुभव यह सिद्ध करता है कि एक इकाईसे न तो हम लोगोंमें समैक्य बढ़ा है और न बन्धुत्व भावना, न उससे व्ययमें किसी प्रकारकी कमी हुई है और न प्रशासनमें ही कोई सुधार हुआ है। मेरे लिए यह एक रहस्यकी बात

है कि ये लोग गधेकी पूँछको क्यों कसकर पकड़े हुए हैं; ये एक ऐसी योजनामें फँसे हैं जिसने देशका कोई लाभ नहीं बल्कि हानि ही की है। इस एक इकाई योजनाको, जो कि हमारे लिए अनुपयुक्त सिद्ध हुई है, चलाते रहनेका भला क्या औचित्य है ? एक वार पश्चिमी पाकिस्तानकी विधान-सभामें एक इकाईको रद्द कर देनेके लिए एक प्रस्ताव लाया गया था, तब ३१० सदस्योंके सदनमें इस प्रस्तावको ३०६ सदस्योंका मत मिला था। मुश्किलसे चारने इस प्रस्तावका विरोध करनेकी हिम्मत की थी।

"इन लोगोंका यह कहना है कि चूँकि एक इकाई वन चुकी, इसलिए इसको रद्द नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे पंजावकी प्रतिष्ठाको आघात लगेगा। लेकिन वंगाल एक इकाई नहीं चाहता और न इसे सिन्ध, वलूचिस्तान और सीमाप्रान्त चाहते हैं। इस योजनाके निर्माता इससे चिपके रहना चाहते हैं क्योंकि इसमें उनका स्वार्थ निहित है और वे उसे जनताके ऊपर थोप रहे हैं।

"एक इकाईकी रचनाका प्रच्छन्न उद्देश्य और उसमें पख्तूनोंके लिए जो एक गुप्त ख़तरा है, उसे अब सबके आगे स्पष्ट ही हो जाना चाहिए। एक लोकतंत्रीय देशके नागरिक होनेके नाते यह हमारा कर्त्तव्य था कि हम जनताकी भावनाओंको सरकारतक पहुँचायें और हमने उससे यह निवेदन किया कि वह जनताकी स्वीकृतिसे इस मामलेका निर्णय करे। हम लोगोंसे यह कहा गया कि जनताके प्रतिनिधि असेम्वलीमें मौजूद थे और इसलिए जनतासे सीधी सलाह लेना आवश्यक न था। इस तर्कके आधारपर उन्होंने एक इकाईके विधेयकको विधान-सभामें पारित कर लिया और लोकतंत्रके नामपर उसको एक कानूनका रूप दे दिया। यद्यपि हमको उत्तेजित किया गया फिर भी हम लोग वैधानिक ढंगसे संघर्ष करते रहे और दो वर्षके दुःखद अनुभवके पश्चात् उसी विधान-सभाके सदस्य लौट-फिरकर हमारे ही ख़यालपर आ गये और उन्होंने यह वात अच्छी तरहसे समझ ली कि एक इकाई योजना एक गम्भीर भूल थी और इसे तुरन्त ही रद्द कर देना चाहिए। विधान-सभाकी बैठक हुई और एक इकाईके विरोधमें सर्व-सम्मतिसे एक प्रस्ताव पारित किया गया। वैधानिक तरीक़ा यह था कि इसके वाद उसे रद्द कर दिया जाय लेकिन स्वार्थी नेताओंने ऐसा नहीं किया। एक इकाई वननेके समय वलप्रयोग किया गया था और वही उसको वनाये रखनेके लिए भी इस्तेमाल किया गया। इन परिस्थितियोंके अन्तर्गत प्रश्न यह उठता है कि देश और समुदायसे सम्वन्धित इस प्रकारके महत्त्वपूर्ण मामलोंपर कैसे निर्णय लेना चाहिए और ये मामले, जिनपर देश और समाजका जीवन-मरण

निर्भर होता है, केवल राजनीतिक ही नहीं बल्कि आर्थिक, सामाजिक और साम्प्रदायिक भी होते हैं। लोकतंत्रीय देशोंमें राष्ट्र और समुदायकी माँगोंको स्वीकार करानेके दो ही तरीक़े हैं—एक रास्ता संवैधानिक है और दूसरा आन्दोलनका। लेकिन पिछले ग्यारह वर्षोंमें हमने यह देख लिया कि वे थोड़ेसे लोकतंत्रीय अधिकार भी, जो कि अंग्रेजोंने हमें दिये थे, पाकिस्तानके शासकों द्वारा एक या दूसरे बहानेसे हमसे छीन लिये गये। परिणाम यह है कि इन पिछले सारे वर्षोंमें कोई निर्वाचन नहीं कराया गया। जब ऐसे महत्त्वपूर्ण मामलोंको सुलझानेके लिए जनताको संवैधानिक और वैध तरीक़ोंसे भी वंचित कर दिया जाता है तब उसके पास एक ही रास्ता बच जाता है और वह रास्ता आन्दोलनका है।

"कुछ लोग यह सोच सकते हैं कि यह हमारी अपनी सरकार है। यदि वास्तवमें ऐसा ही होता तो उसे जनताकी कठिनाइयोंको दूर कर देना चाहिए था। यदि वह लोकतंत्रीय होती तो उसको विधान-सभाके निर्णयको आदर देना चाहिए था। इस्लाम एक भव्य आदर्श है। यदि यह हमारा एक इस्लामी राज्य है तो इसमें इस्लामी कानून लागू होना चाहिए था; यहाँसे व्यभिचार, मद्यपान, सूदखोरी, अनैतिकता, अनुचित कृत्य, घूस, एक-दूसरेपर आक्रमण और दमन लोप हो जाना चाहिए था। इस्लाम इस बातकी कभी आज्ञा नहीं देता कि एक मुसलमान दूसरे मुसलमानके अधिकारको कुचले या कोई मुसलमान दमनके आगे आत्मसमर्पण करे। दूसरेके अधिकारको दबाना, इस्लामकी दृष्टिमें सबसे बड़ा पाप है। उन लोगोंसे, जो इस बातपर बल देते हैं कि यह एक लोकतंत्रीय और इस्लामी देश है, मुझको यह कहना है कि यह देश हम सबका है और हम सब मुसलमान हैं। जो स्थिति इस समय चल रही है उसमें मैं उनसे यह पूछता हूँ कि जब हम एक मुस्लिम समाज क़ायम करना चाहते हैं तब लोगोंका क्या कर्त्तव्य है, और विशेष रूपसे विद्वान् व्यक्तियोंका ?

"निष्कर्ष रूपमें, मैं सरकारसे आदरपूर्वक यह निवेदन करना चाहता हूँ कि वह जनताको उसके लोकतंत्रीय और वैध अधिकारोंसे वंचित न करे। मैं सरकारको इस बातके लिए विवश कर देना चाहता हूँ कि वह ऐसे रास्तों और उपायोंको अपनाये जिससे कि जनताके मूलभूत और मानवीय अधिकार दृढ़ हों। जब भारत और पाकिस्तानने अपनी स्वाधीनता प्राप्त की, तब हिन्दुओंने भारतमें अपनी सरकार बनायी और मुसलमानोंने पाकिस्तानमें। जब हिन्दुओंने शासनसूत्र सँभाला तब उन्होंने उन लोगोंको पूरा मुआवज़ा दिया, जिन्होंने देशकी

आज़ादीकी लड़ाईमें भाग लिया था, जेल काटी थी और अनेक कष्ट सहन किये थे। इस मुआवजेमें उन्होंने उन लोगोंको पुरस्कार, भूमि और ऊँचे पद आदि दिये। और यहाँ मुसलमानोंके इस शासनमें जो लोग आज़ादीके लिए अंग्रेजोंसे लड़े थे, उनको जेलमें डाल दिया गया। उनको अनेक दुःख सहने पड़े और त्याग करने पड़े। उनको सींखचोंमें बन्द कर दिया गया, उनके घरोंको लूट लिया गया और उनको बहुतसे दूसरे तरीक़ोंसे तकलीफ़ झेलनी पड़ी। यह बात खेदजनक है कि यहाँ वह बन्धुत्वकी भावना नहीं है जो कि हिन्दुओंमें दिखलाई देती है।

"यदि ईश्वरने चाहा तो पख्तून अपनी कमर कसकर खड़े होंगे। वे अपने निश्चयपर दृढ़ होंगे और स्वार्थपरतासे छुटकारा पायेंगे। वे अपने निजके देशके मालिक होंगे और जैसे ही उनके हाथोंमें अधिकार आयेगा, वे सबसे पहले उन लोगोंको पूरा मुआवज़ा देंगे जिन्होंने कि देशकी स्वतंत्रताके लिए महान् त्याग किये हैं। यह हमारा एक इस्लामी कर्त्तव्य है।"

१३ सितम्बर सन् १९५८ को खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको क्वेटामें गिरफ्तार कर लिया गया। ज़िलाधीशके आदेशानुसार उनके बलूचिस्तानमें प्रवेश करनेपर प्रतिबन्ध लगा था और बादशाह ख़ाँने उसका उल्लंघन किया था। दूसरे दिन पश्चिमी पाकिस्तानके मुख्य मंत्रीने ज़िलेके अधिकारियोंको यह आदेश दिया कि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको पेशावर ले जाया जाय और वहाँ उनको छोड़ दिया जाय। जिस समय वे पुलिसकी हिफ़ाज़तमें क्वेटासे पेशावर जा रहे थे, उस समय उन्होंने पत्रकारोंसे बातचीत करते हुए लाहौर रेलवे स्टेशनपर कहा कि प्रेसीडेण्ट इस्कंदर मिर्ज़ा और मि० एम० ए० क्विजेलबशने उस आश्वासनको हवामें उछाल दिया जो कि उन्होंने पाकिस्तानके संविधानके संशोधनके सम्बन्धमें दिया था। उन्होंने अगले सामान्य निर्वाचनोंके बाद पश्चिमी पाकिस्तानके प्रदेशोंको फिरसे अलग कर देनेका वचन दिया था। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने निर्भीकताके साथ पाकिस्तान सरकारपर यह आरोप लगाया कि एक इकाईके प्रश्नपर उसने पंजाबियों और पठानोंके बीचमें एक झगड़ा खड़ा कर दिया। उन्होंने सरकारपर सामान्य निर्वाचनको स्थगित कर देनेका भी आरोप लगाया। उन्होंने घोषणा की : "फिर भी मेरा प्रयास यही रहेगा कि मैं सरकारकी इस चालको सफल न होने दूँ।"

११ अक्तूबर सन् १९५८ को खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ, मौलाना भसानी और पूर्वी पाकिस्तानके आठ प्रमुख नेता गिरफ़्तार कर लिये गये। पाकिस्तान सुरक्षा अधिनियमके अन्तर्गत ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको चारसद्दा तहसीलके एक

गाँवमें उनके पुत्र ग़नीके घरपर गिरफ़्तार कर लिया गया और उनको १४ वर्ष-का कठोर कारावास दण्ड दे दिया गया ।

ये सारी गिरफ्तारियाँ प्रेसीडेण्ट इस्कंदर मिर्जा और रक्षा-मंत्री अयूब खाँ द्वारा शासनका तख़्ता पलटनेके एक सप्ताहके भीतर ही हुईं। दूसरे, पाकिस्तान-में फौज़ी कानून, मार्शल लॉ घोषित कर दिया गया था । अयूब खाँने २७ अक्तू-वर १९५८ के सबेरे प्रधान मंत्रीके नाते क़सम ली । प्रेसीडेण्टके आदेशानुसार यह शपथ ग्रहण करनेके पश्चात् जनरल अयूब खाँने शामको टेलीविज़नकी एक भेंटके सिलसिलेमें प्रेसीडेण्ट इस्कंदर मिर्जाके साथ फोटो खिंचवाया । उस समय वे हँसते रहे और आपसमें मज़ाक करते रहे । इसके कुछ ही घंटों बाद अयूब खाँने अधि-कारपूर्ण ढंगसे इस्कंदर मिर्ज़ाको उनका पद छोड़ देनेको कहा । इस्कंदर मिर्ज़ा और उनकी पत्नीको क्वेटा भेज दिया गया और वहाँ उनको सर्किट हाउसमें नज़रबन्द कर दिया गया । जनरल अयूवने राष्ट्रपति पदका कार्य-भार सँभाल लिया और अपनी सशस्त्र सेनाके सर्वोच्च सेनापतिके पदपर नियुक्ति कर ली । इसके पश्चात् उन्होंने यह घोषणा की कि अब देशमें राष्ट्रपतिके शासनके प्रकारका मंत्रिमंडल रहेगा और तदनुसार प्रधान मंत्रीका पद तोड़ दिया गया । एक अधि-नायकके रूपमें अपनी स्थितिको सुदृढ़ करनेके लिए जनरल अयूब खाँने अपने सबसे अच्छे सहयोगियोंको सेवामुक्त कर दिया । वे अपने सैनिक पद या श्रेणीको बनाये रख सकते थे परन्तु सशस्त्र सेनाओंसे उनका सम्बन्ध तोड़ दिया गया । जिस समय जनरल अयूब ख़ाँ अपने मित्रोंको उनकी नौकरियोंसे अलग कर रहे थे उसी समय अपने आपकी 'फील्ड-मार्शल' के स्थानपर पदोन्नति भी कर रहे थे । विरोध पक्षके लोगों द्वारा किये गये विविध प्रकारके अपराधोंके लिए शासक वर्ग फौज़ी अदालतोंकी मशीनरीपर भरोसा कर रहा था । इन सैनिक न्यायालयों को प्राणदंडतक देनेका अधिकार दिया गया था। इनके अतिरिक्त मजिस्ट्रेट स्तरकी छोटी-छोटी अदालतें भी स्थापित कर दी गयी थीं जो एक वर्षका कारा-वास दंड और पन्द्रह कोड़ोंतककी सज़ा दे सकती थीं । नियमित न्यायालयोंको इनके फैसलोंपर पुनर्विचार करनेका अधिकार नहीं दिया गया था । इन्हीं दिनों सीमाप्रान्त और बलूचिस्तानमें कुछ उपद्रवकी घटनाएँ हुईं और सैनिक प्रशासन द्वारा गोली चलायी जानेसे कुछ व्यक्ति मारे गये ।

फौजी कानूनके इस कालमें शासक वर्गने जो बड़े महत्त्वपूर्ण निर्णय लिये उनमेंसे एक राजधानीका परिवर्तन भी था जो कि कराचीसे रावलपिंडी ले आयी गयी थी । राष्ट्रपतिने जलवायुके आधारपर रावलपिण्डीको पाकिस्तानकी राजधानी

बनानेका समर्थन किया था परन्तु वस्तुस्थिति यह थी कि उन्होंने सेनापर अपनी पकड़को बनाये रखनेके लिए वहाँ अपनी राजधानी बदली थी। आखिर वे राज्यके प्रधान तथा रक्षामन्त्रीके अतिरिक्त प्रधान सेनापति भी थे। राजधानीके रावलपिण्डी आ जानेसे पंजाबियोंको एक प्राथमिकता मिली; मुख्य रूपसे राजनीति और व्यापारमें।

जनरल अयूब खाँने 'पब्लिक आफिसेज डिस्क्वालिफिकेशन आर्डर' जारी कर दिया और उसमें एक्जीक्यूटिव बॉडीज़ डिस्क्वालिफिकेशन आर्डर भी जोड़ दिया जिसका उद्देश्य पुराने राजनीतिक नेताओंको सन् १९६६ तक राजनीतिसे पृथक् रखना था। उनमेंसे अधिक नेता काफी वृद्ध हो चुके थे और उन लोगोंके बारेमें यह अनुमान किया जाता था कि या तो वे उस समयतक मर जायँगे या उनका शरीर इस योग्य न रहेगा।

४ अप्रैल १९५९ को खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ 'पाकिस्तानके किसी अज्ञात स्थान'से, जहाँ कि वे नज़रबन्द थे, रिहा कर दिये गये। सरकारकी एक प्रेस विज्ञप्तिमें कहा गया कि 'उनको वृद्धावस्था और अस्वास्थ्य' के कारण मुक्त कर दिया गया है। उसमें यह भी कहा गया, "सरकार समझती है कि अब वे किसी ऐसे कार्यमें भाग नहीं लेंगे जो पाकिस्तानके समैक्य और सुरक्षाके लिए हानिप्रद हो।" खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको पहले हरिपुर जेलमें रखा गया और इसके बाद पुलिसके एक भारी जत्थेकी निगरानीमें उच्च न्यायालयमें उपस्थित होनेके लिए उनको लाहौर भेज दिया गया जहाँ कि गत वर्ष राजद्रोहके मामलेमें, अपराधसिद्धिके विरोधमें उनकी अपील खारिज कर दी गयी थी।

अपनी रिहाईके पश्चात् खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ उतमंज़ई चले गये। अनचहेते राजनीतिज्ञोंको सार्वजनिक जीवनसे निकाल फेंकनेके लिए जिस विशेष न्यायाधिकरणकी नियुक्ति की गयी थी उसके द्वारा खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको एक नोटिस दी गयी। उसमें उनसे पूछा गया था कि आपको सार्वजनिक जीवनके अयोग्य करार क्यों न दिया जाय जब कि आपने अलग-अलग कालोंमें विध्वंसकारी कार्योंमें भाग लिया है और उनके लिए आपको जेलोंमें भी जाना पड़ा है? खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने न तो इनकार किया और न यह बहस की कि उनके विरुद्ध नज़रबन्दीके आदेश हुए थे। परिणामस्वरूप वे सन् १९६६ के अन्ततक किसी भी ऐसी संस्थाकी सदस्यतासे वंचित कर दिये गये जिसमें कि निर्वाचन होते हों।

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने अपना सीमाप्रान्तका दौरा प्रारम्भ कर दिया और

उन्होंने प्रतिवन्ध सम्वन्धी आदेशोंके विरोधमें गाँवों और कस्वोंमें भाषण किये। मार्च सन् १९६१ में वन्नू जिलेकी एक मस्जिदमें वोलते हुए उन्होंने कहा :

"आज मैं आपको रसूल पाकके कुछ उपदेशों और उनके विश्वासोंके वारेमें कुछ वतलाना चाहता हूँ। एक वार जव उनसे मुसलमानकी परिभाषा करनेको कहा गया तव उन्होंने कहा कि मुसलमान वह है जो किसी दूसरे मुसलमानको चोट न पहुँचाये। यदि हमने अपने पैग़म्वर (मुहम्मद साहव) की शिक्षाओंका पालन किया होता तो हमारे जीवनमें श्रेष्ठताका समावेश होता और हमको एक संतोप मिला होता।"

"उन्होंने यह भी घोषणा की थी कि यदि उनके अनुयायी मुख्य रूपसे अपना लगाव धन और ऐश-इशरतसे रखेंगे तो उनकी दोनों दुनिया—यह और वादकी—नष्ट हो जायगी। हम क्षुद्र, महत्त्वहीन प्रलोभनोंमें अपना धर्म और अपना समाज वेच देते हैं। हम धनके लिए लालच करते हैं। हमारी वर्तमान दुर्दशा इसीका परिणाम है। रसूल पाकने हमको वतलाया है कि अपने समाज और राष्ट्रको प्रेम करना और उसकी सेवा करना ही हमारे धर्मके अभिन्न अंग हैं। इसके विपरीत हम अपने लोगोंसे ही शत्रुताका व्यवहार करते हैं और एक-दूसरेसे प्रतिस्पर्द्धा करते हैं।

"इस्लामका अर्थ कार्यशीलता है। रोज़ा, नमाज़ और तसवीह इस्लाम नहीं है। यदि इस्लाम कार्य और विचारोंका पर्यायवाची न होता तो हमारे पैग़म्वर इतनी भयंकर कठिनाइयोंको न झेलते; इतनी परीक्षाओंको पार न करते।

"ईश्वरने हमको स्वर्ग-तुल्य देश दिया है जिसमें वहुतसे खजाने छिपे हुए हैं। लेकिन हममेंसे कोई उससे लाभान्वित नहीं हुआ। आप इस वातसे वेखवर हैं कि आप लोग नहीं वल्कि दूसरे लोग इस देशके साधनोंसे लाभ उठा रहे हैं। इसका नतीजा यह है कि आप लोग भूखे मर रहे हैं और एक जगहसे दूसरी जगह फिर रहे हैं। यदि आप इस देशमें रह सकें और शान्तिपूर्वक एकताके साथ रह सकें तो आप अपने इस देशको सुसम्पन्न वना सकते हैं और अपनी दोनों दुनियाओं-को अच्छा वना सकते हैं। कुरान शरीफ़में ईश्वरने यह कहा है कि विश्वास न होनेके कारण वह लोगोंको दण्ड नहीं देता। यदि ऐसा न होता तो अमेरिका, सोवियत रूस और यूरोप वहुत पहले ही नष्ट कर दिये गये होते। वे उत्तरोत्तर ऊँचे चढ़ते जा रहे हैं। ईश्वर उनको दण्ड देता है और उनका नाश करता है, जो कि अत्याचारी हैं, जिनमें एकता नहीं है और जो उसके प्रति कृतघ्न हैं।

ईश्वर आपके ऊपर इतना कृपालु है कि उसने आपको अंग्रेजोंकी दासताके जुएसे मुक्त कर दिया। जब आप अंग्रेजोंके शासनको उतार फेंकनेकी कोशिश कर रहे थे तब हमारे वर्तमान स्वामी यह सोच भी नहीं सकते थे कि यह भी सम्भव है। बहुतसे धनी, सुसम्पन्न ख़ान, ज़मींदार और धार्मिक नेता आज़ादीके सिपाहियोंको पागल समझते थे। उनका खयाल था कि ये लोग किसी पहाड़को धक्के दे रहे हैं। क्या कोई किसी पहाड़को हिला सकता है? क्या वे कभी यह सोचते भी थे कि एक दिन अंग्रेज भारत छोड़कर चले जायेंगे और उनका साम्राज्य बिना किसी रक्तपातके लुप्त हो जायगा? परन्तु ईश्वरने हमको संसारकी सबसे बड़ी शक्तिसे मुक्त कर दिया।"

इसके कुछ दिनों बाद खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको १२ अप्रैल सन् १९६१ के दिन डेरा इस्माईल ख़ाँमें उस समय गिरफ़्तार कर लिया गया जिस समय वे दक्षिणी ज़िलोंका दौरा कर रहे थे। उनको 'मेनटेनेन्स ऑफ पब्लिक आर्डर आर्डिनेन्स' के अन्तर्गत गिरफ़्तार किया गया। उनके ऊपर यह अभियोग लगाया गया था कि उन्होंने राज्य विरोधी क्रिया-कलापमें भाग लिया है। इसके साथ उन्होंने सरकारके प्रति द्वेष-भावना फैलायी जिससे जनतामें एक निराशा और आतंक व्याप्त हो गया। इसके अतिरिक्त उन्होंने जनताके विभिन्न वर्गोंमें एक घृणाकी भावना उत्पन्न की। पहले खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँको पनियालामें नज़रबन्द रखा गया और उसके बाद उनको सिन्धमें हैदराबाद जेलमें भेज दिया गया।

उनकी नज़रबन्दीके तुरन्त बाद उनके कई सौ सहकर्मी भी गिरफ्तार कर लिये गये। रावलपिंडीमें एक पत्रकार-गोष्ठीको सम्बोधित करते हुए राष्ट्रपति अयूब ख़ाँने इस टिप्पणीसे ही चर्चा प्रारम्भ की :

"खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ यह चाहते थे कि सरहदी सूबा हिन्दुस्तानका एक हिस्सा बन जाय। अपने इस प्रयासमें असफल होनेपर उन्होंने पाकिस्तानमें एक अलग प्रान्त बनानेकी माँग की जहाँ कि वे बादशाह बनना चाहते थे। इसके बाद उन्होंने यह चाहा कि सरहदका इलाक़ा अफ़गानिस्तानका एक हिस्सा बन जाय।" उन्होंने अपनी बातको यह कहकर ख़त्म किया कि जिन लोगोंकी माँगें तर्कसंगत नहीं होंगी उनके साथ कठोरताके साथ पेश आया जायगा।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँकी नज़रबन्दीकी अवधि हर छः महीनेके बाद बढ़ा दी जाती थी। दिसम्बर सन् १९६२ में 'एम्नेस्टी इण्टरनेशनल' नामक एक ग़ैर-राजनीतिक संस्था द्वारा उनकी रिहाईकी माँग की गयी। 'एम्नेस्टी इण्टर-

नेशनल' ने तमाम देशोंके सारे राजनीतिक क़ैदियोंकी मुक्तिके लिए एक अभियान चला रखा था। इसके एक वक्तव्यमें यह कहा गया :

"अहिंसाके भी अपने शहीद हैं। उनमेंसे एक खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको 'एम्नेस्टी इण्टरनेशनल'ने 'वर्षके बंदी' के रूपमें चुना है। उनका उदाहरण सारे विश्वके उन लाखों लोगोंकी अत्यधिक यातनाका प्रतीक है जो कि अपनी अंतरात्माके लिए जेलोंमें पड़े हुए हैं।" उसमें इस बातपर बल दिया गया था कि पठानोंके अधिकारोंके लिए एक अभियान चलानेके अपराधमें उनको सन् १९४८ से प्रायः निरन्तर जेलमें रखा गया है। इस वक्तव्यमें आगे यह भी कहा गया था, "अपीलोंके बावजूद इन वृद्ध पुरुषको अबतक जेलमें रखा जा रहा है।"

अब्दुल वली खाँने मई सन् १९६३ में इस रहस्यका उद्घाटन किया कि उनके पिताके पख्तून अनुयायी, जिनकी संख्या लगभग तीन सौ है, अबतक अवरोधन कैम्पोंमें पड़े हुए हैं और उनकी सम्पत्ति, जिसका मूल्य ४२ करोड़ रुपयोंसे भी अधिक है, जब्त कर ली गयी है।

जुलाई सन् १९६३ में पाकिस्तान नेशनल असेम्बलीके अध्यक्षने उस स्थगन प्रस्तावको नियम-विरुद्ध ठहरा दिया जिसमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँकी, जो उन दिनों लाहौर जेलमें बीमार थे, निरंतर नज़रबन्दीपर चर्चा करनेकी माँग की गयी थी। गृहमंत्रीने सबसे हालकी डाक्टरी रिपोर्टका हवाला देते हुए कहा : "खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँका स्वास्थ्य सामान्य है। वे नियमित रूपसे भोजन करते हैं। उनके पैरोंमें कुछ पुरानी तक़लीफ़ है और उसका विशेषज्ञ इलाज कर रहे हैं।"

इसके एक पखवाड़ेके बाद यह सरकारी घोषणा की गयी कि खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँका, 'जो कि पिछले काफ़ी दिनोंसे गम्भीर रूपसे बीमार हैं' अपनी इच्छाके चिकित्साधिकारीके साथ 'उनकी अपनी प्रार्थनापर' मुलतान तबादला कर दिया गया है। इस घोषणामें आगे कहा गया कि उन्होंने किसी भी डाक्टर-से, जो उनकी इच्छाका न हो, इलाज करानेसे इनकार कर दिया। और फिर वे तीन दिनके अनशनपर उतर गये।

वली खाँने दिसम्बर सन् १९६३ में अपने पितासे लाहौर जेलमें मुलाक़ात की। इसके बाद उन्होंने गृह-मंत्रीसे शिकायत करते हुए कहा, "वे नज़रबन्द हैं और उनको मजबूर होकर अपने हाथसे अपना खाना बनाना पड़ता है।" उन्होंने इस बातपर ज़ोर दिया कि अभी कुछ दिनों पहले ही ग़लत दवा दे देनेके कारण

उनके पिता बहुत बीमार पड़ गये थे। उन्होंने अपने पिताके लिए एक शिष्ट, मानवीय व्यवहारकी माँग की।

खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँका स्वास्थ्य जब अत्यधिक क्षीण हो गया और उनकी हालत खतरनाक हो गयी तब ३० जनवरी सन् १९६४ को उनको हरिपुर सेण्ट्रल जेलसे रिहा कर दिया गया। पाकिस्तानका शासक-वर्ग यह नहीं चाहता था कि उनकी जेलमें ही मृत्यु हो जाय और उसकी निन्दा की जाय। उसने उन्हें उनके घरपर ही क़ैदी बना दिया। शायद अधिकारियोंने यह सोचा था कि अब वे जीवित नहीं बचेंगे। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँको अपने गाँवके लोगोंतकसे मिलनेकी अनुमति नहीं दी गयी थी और न उनको कोई सार्वजनिक वक्तव्य देनेकी इजाज़त दी गयी थी।

राष्ट्रपति अयूबके फौज़ी कानूनके शासनकालपर टिप्पणी करते हुए खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँ लिखते हैं :

"मैंने फौज़ी कानूनके दो शासन-कालोंको देखा है। सन् १९१९ में अंग्रेजोंने मार्शल लॉ घोषित किया था। उस समय वे एक ओर अफ़गानिस्तानके साथ युद्धमें संलग्न थे और दूसरी ओर उनको सारे भारतमें अहिंसात्मक विद्रोहका सामना करना पड़ रहा था। उनके आगे एक जटिल परिस्थिति आ गयी थी। लेकिन फिर भी उनका फौजी कानून मुश्किलसे चार महीने चला। सन् १९५० में जब पाकिस्तानमें फौजी कानून घोषित किया गया तब देशकी स्थिति शांतिपूर्ण थी और उसकी सरहदोंके ऊपर कोई बाह्य शक्ति धमकी नहीं दे रही थी। लेकिन थोड़ेसे लोगोंके शासनको बलपूर्वक क़ायम करनेके लिए, जनताको उसके लोकतंत्रीय अधिकारोंसे वंचित करनेके लिए और सामान्य निर्वाचनोंको रोकनेके लिए अनायास ही फौजी कानून घोषित कर दिया गया। यह फौज़ी कानून चार वर्षतक चलता रहा।

"अंग्रेजोंके फौज़ी कानूनने लोगोंमें विदेशी शासनका जूआ उतारकर फेंक देनेकी एक प्रेरणा जाग्रत की। उसका फल यह निकला कि स्वाधीनताके आन्दोलनकी गति तीव्र हो गयी और अंतमें अंग्रेजोंको भारत छोड़कर जाना पड़ा। पाकिस्तानके फौजी कानूनने जनताकी इस भावनाको दृढ़ कर दिया कि पाकिस्तान की सरकार एक प्रतिनिधि सरकार नहीं है। बल्कि वह बल, दमन और धोखेसे उसके ऊपर लाद दी गयी है। यदि देशको अपनी सच्ची स्वाधीनता प्राप्त करनी है तो उसके लिए इसे उतार फेंकना आवश्यक है। बलके द्वारा अपना शासन हमेशा चलाते रहनेमें अंग्रेजोंको सफलता नहीं मिली और वे चले गये। इसी

तरह पाकिस्तानके शासक भी एक दिन लुप्त हो जायेंगे ।

"सही विश्वासको ग्रहण करना और सही मार्गपर चलना आवश्यक है। सही लोगोंको इस मार्गपर चलनेके लिए आगे आना चाहिए ताकि वे अपने विश्वास या पंथके लिए एक धर्मयुद्धकर्त्ता बनें। अपने लक्ष्यतक पहुँचनेके लिए जनता निश्चित ही उनका अनुसरण करेगी ।

विश्वास, एक संघर्ष

१९६४-६५

पं० जवाहरलाल नेहरूको इस बातकी बड़ी चिन्ता थी कि उनके प्रिय मित्र खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँका स्वास्थ्य बराबर गिरता जा रहा है और उनके कष्टोंका अन्त नहीं हो रहा है। उनको इसका गहरा दुःख भी था कि उनको पुराने साथीकी सहायता करनेका कोई रास्ता नहीं दिखलाई दे रहा है। "हमारी कोई भी कोशिश बादशाह खाँकी मुसीबतोंको और भी बढ़ा सकती है।" २७ मई सन् १९६४ को पं० जवाहरलाल नेहरूकी जीवन-लीला पूरी हो गयी। उनकी पुत्री श्रीमती इन्दिरा गांधीको खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने अपने गाँवसे जो समवेदनाका पत्र लिखा, उसमें उन्होंने लिखा :

"पृथ्वी माताके एक महानतम पुत्रके निधनसे मुझको एक गहरा धक्का लगा है। भारतकी स्वाधीनताके संग्रामके वे एक अभिजात सेनानी थे। उन्होंने इस धरतीपर प्रेम और शान्तिके आदर्शोंको कार्यान्वित किया था। मैं सर्वशक्तिमान् ईश्वरसे यह प्रार्थना करता हूँ कि उनके उदात्त आदर्श भारतकी जनताको सतत प्रेरणा देते रहें। मैं चाहता था कि इस राष्ट्रीय शोकमें मैं इस समय तुम्हारे निकट होता।"

अपनी बीमारीके दिनोंमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ अपने गाँवमें रखे गये। सितम्बर १९६४ में उनको अपने इलाजके सिलसिलेमें ब्रिटेन जानेकी अनुमति दे दी गयी। जिन दिनों वे लन्दनमें थे, सीमा-प्रान्तके भूतपूर्व गवर्नर सर ओलफ़ कैरो उनसे मिलनेके लिए आये। फिर वे खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको विश्रामके लिए अपने घर ले गये। सर ओलफ़ने उनके साथ अत्यन्त सज्जनताका व्यवहार किया और उनके प्रति अपना हार्दिक आदर प्रकट किया। एक दिन 'पीस सोसायटी'के सदस्योंको, जो 'फ्रैण्ड्स' कहे जाते थे, सम्बोधित करते हुए खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने कहा : "यह एक अच्छी बात हुई कि मैं आपके देशमें आया क्योंकि पिछले दिनोंतक मैं आपके देशके लोगोंके बारेमें कोई अच्छी राय न रखता था। भारतमें मैं जिन अंग्रेजोंसे मिला वे कुछ भिन्न प्रकारके थे। ईश्वरको धन्यवाद है कि मैं यहाँ आ गया और आप लोगोंके बारेमें मेरी ग़लतफहमी दूर हो गयी।"

जिस समय इन्दिरा गांधी वहाँ पहुँचीं उस समय खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ

उनसे इतने प्रेमसे मिले जैसे उनकी अपनी पुत्री ही वहाँ पहुँच गयी हो। खान अब्दुल गफ्फार खाँने श्री प्यारेलालको अपने एक पत्रमें लिखा :

"मनुष्य सुखके दिनोंमें अपने मित्रोंको भूल जाता है लेकिन जो लोग दुःखमें हैं वे किसीको नहीं भूलते। अपनी विपत्तिके इन दिनोंमें मैं सबकी याद कर लिया करता हूँ। यदि महात्माजी जीवित होते तो निश्चय ही उन्होंने हमें स्मरण किया होता और वे हमारी सहायता करनेको आये होते। यह हम लोगोंका दुर्भाग्य है कि आज वे इस संसारमें नहीं हैं और बाकी लोग हमको भूल चुके हैं।

"शायद आप यह जानते हों कि मैं अपने इलाजके सिलसिलेमें यहाँ आया हूँ। यहाँ आनेपर मेरे स्वास्थ्यमें थोड़ा-बहुत सुधार भी हुआ है लेकिन सर्दी बढ़ती जा रही है। डाक्टरोंकी राय है कि यहाँकी सर्दी मेरे स्वास्थ्यके लिए अनुकूल नहीं होगी। उन्होंने मुझको अमेरिका चले जानेकी सलाह दी है। वहाँकी जलवायु न अधिक शीत है और न अधिक उष्ण। मैंने अपने हाई कमिश्नरको पासपोर्टके लिए प्रार्थना-पत्र भेजा है। यदि मुझको पारपत्र प्राप्त हो जायगा तो मैं अमेरिका चला जाऊँगा। आप अपनी प्रार्थनाके समय मुझको स्मरण कीजिएगा और ईश्वरसे प्रार्थना कीजिएगा कि वह मुझको अपने प्राणियोंकी सेवा करनेके लिए आरोग्य प्रदान करे।"

बादमें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने संयुक्त राज्य जानेके विचारको छोड़ दिया। लन्दन स्थित अमेरिकी राजदूतावास उनकी 'एक स्कूलके लड़केकी तरह' परीक्षा ले रहा था। इस सम्बन्धमें उनको कई बार राजदूतावास भी बुलाया गया। "कई सप्ताहके कुण्ठामय इस विलम्बके कारण मैंने अब कैलीफोर्निया जानेका विचार त्याग दिया।" अमेरिकाकी सरकार उन्हें प्रवेश-पत्र 'वीज़ा' देनेमें भी हिचक रही थी। उसका एक कारण यह भी था, "जो सज्जन लाल कुर्तीदलके नेताकी ज़मानत कर रहे थे, वे संयुक्त राज्यमें पख्तूनिस्तान आन्दोलनको प्रारम्भ करनेवाले डा० औरंगजेब शाह थे।" आगे यह भी कहा गया, "पख्तूनिस्तानका मसला स्थितिको और भी उलझा देगा। उसके बिना ही पाकिस्तानमें भारतको शस्त्रोंकी सहायता देनेके लिए और चीनको लेकर संयुक्त राज्यके प्रति काफ़ी असन्तोष है।"

पाकिस्तानके शासकोंने अमेरिकाकी सरकारपर इस बातके लिए ज़ोर डाला कि वह खान अब्दुल ग़फ्फार खाँको 'वीज़ा' देनेसे इनकार कर दे और वे वहाँ इलाजके लिए न जा सकें। पाकिस्तानके लन्दन स्थित राजदूतावासने उनके अफ़गानिस्तान जानेका भी विरोध किया। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँसे कह दिया गया कि वे बेरूत, तेहरान या काहिरा जा सकते हैं जहाँ कि पाकिस्तानके अधिकारी

उनके इलाजकी व्यवस्था कर सकें। नवम्बरमें जब वे काहिरा पहुँचे तब उनको इस तथ्यका पता लगा कि पाकिस्तानकी सरकारने अपने राजदूतको अफ़गान राजदूतावाससे यह कहनेका आदेश दिया है कि वह उनको अफ़गानिस्तानके लिए 'वीजा' न दे। लेकिन इसमें कुछ विलम्ब हो गया। तबतक अफ़गानिस्तानकी सरकार खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँको अपने देशमें आनेके लिए अपनी स्वीकृति दे चुकी थी।

दिसम्बर सन् १९६४ में जब खान अब्दुल गफ़्फ़ार खाँ काबुल पहुँचे तब अफ़गानिस्तानके प्रधान मंत्री तथा उनके मंत्रिमण्डलके सहयोगी सदस्य बादशाह खाँको लेनेके लिए हवाई अड्डेपर आये। हज़ारों अफ़गानोंने "फ़ख्रे-अफ़गान ज़िन्दाबाद", "पख्तूनिस्तान ज़िन्दाबाद" के नारे लगाकर उनका हार्दिक स्वागत किया। खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने उनको बतलाया कि वे केवल डाक्टरी इलाज-के लिए अफ़गानिस्तान आये हैं।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँने अपने एक पत्रमें श्री प्यारेलालको लिखा :

"जिन विपत्तियोंको हम झेल चुके और जिन्हें हम अबतक झेल रहे हैं, उनसे बड़ी मुसीबतें और कुछ नहीं हो सकतीं। निजी हानिको मैंने कभी कोई महत्त्व नहीं दिया। मुझे इस बातने सबसे अधिक क्लेश पहुँचाया है कि हम लोगोंने भारतकी स्वाधीनताके लिए कोई त्याग करनेसे मुँह नहीं मोड़ा लेकिन जब वह मिल गयी तब कांग्रेसने हमें त्याग दिया। वे लोग सुखोपभोग करने लगे और उन्होंने हम लोगोंको कष्ट झेलनेके लिए अकेला छोड़ दिया। अबतक हम लोगोंको प्रच्छन्न हिन्दू कहा जाता है।···कांग्रेसने हमारे प्रति अन्याय किया है। हम लोग पीड़ित हैं और पीड़ितोंकी सहायता करना अपने सच्चे मानेमें धर्मका सार है।"

श्री विनोबा भावेने ५ अप्रैल सन् १९६५ के एक पत्रमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको लिखा :

"प्रिय बादशाह खाँ,

यह स्वीकार करते हुए मुझे जो दुःख हो रहा है उसे मैं अपने शब्दों द्वारा व्यक्त नहीं कर सकता कि आज़ादीकी लड़ाईमें आपके साथ एक बहुत बड़ा अन्याय हुआ है और सचमुच हमारे मित्रोंने आपकी ओर ध्यान नहीं दिया है परन्तु आपने इन सबको भी अपार धैर्य और दृढ़ताके साथ सहन किया है। आप-का आदर्श हम सबके लिए प्रेरणाका एक स्रोत रहा है।.... इन दिनों मेरे मनमें यह धारणा जमती जा रही है कि आणविक अस्त्रोंके इस युगमें यह तथाकथित राजनीति एक बीते हुए युगकी वस्तु बन गयी है और राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय

समस्याएँ केवल आध्यात्मिकता, 'रूहानियत' का आश्रय लेकर ही सुलझायी जा सकती हैं। मैं यह जानता हूँ कि आप एक राजनीतिक व्यक्तिकी अपेक्षा मूल-रूपेण एक गहन आत्मिक विश्वाससे युक्त एक ईश्वरके पुरुष हैं। आपका अहिंसा और आत्म-पीड़नपर सदैव दृढ़ विश्वास रहा है। सम्भव है कि ऐसी कठिन परीक्षामें डालकर प्रभु विश्वकी समस्याओंको सुलझानेके लिए आपको अपना एक उपकरण बनाना चाहता हो। अपनी हालतके शुभ समाचार दीजिए।"

इसके लगभग एक मास पश्चात् इस पत्रके उत्तरमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने लिखा :

"आपके दिनांक ५ अप्रैल १९६५ के स्नेहपूर्ण पत्रने मेरे हृदयको स्पर्श कर लिया है। उस व्यक्तिके मनको, जो न केवल प्रतिपक्षियोंके साथ बल्कि अपने निजके लोगोंके साथ एक हारी हुई लड़ाई लड़ रहा हो, आप जैसे सुयोग्य व्यक्तिके प्रोत्साहनके दो शब्द अत्यधिक दृढ़ता प्रदान करते हैं। इन लोगोंको पाकिस्तानकी अत्याचारी सरकारके प्रति एक निराशापूर्ण अरुचि उत्पन्न हो गयी है और ये लोग अहिंसाकी 'क्रीड' परसे अपना विश्वास खोते जा रहे हैं—उस विश्वासको जिसे कि मैंने बहुत कष्ट सहकर अपने हृदयोंमें संचित किया था। इनका तर्क यह है कि अंग्रेज एक सुसभ्य देशके लोग थे और वे प्रजातंत्रीय परम्पराओंमें पले हुए थे इसलिए अहिंसा उनके ऊपर अपना कुछ प्रभाव डाल सकती थी परन्तु पाकिस्तानके लोगोंपर, जो कि नैतिक मूल्योंको कोई महत्त्व नहीं देते, उसका कुछ भी असर नहीं होगा।

"पाकिस्तानको बने हुए अठारह साल हो चुके। पिछले पन्द्रह वर्ष मुझको जेलके सींखचोंके भीतर, अधिकतर नज़रबन्दीमें रहना पड़ा। इस अवधिमें मुझे जेलके वार्डरोंके तरह-तरहके ताने सुनने पड़े और अपमान झेलने पड़े। यह सब केवल मेरी तक़दीरमें ही न था, सभी खुदाई खिदमतगारोंको ऐसा ही बल्कि इससे भी बदतर व्यवहार सहन करना पड़ा। यह तो आप जानते ही हैं कि हमारे यहाँ इन लोगोंकी संख्या अत्यधिक थी। सरकारने उनकी सम्पत्ति जब्त कर ली है और इस समय उनके बच्चे तथा परिवार बड़ी मुसीबतमें अपने दिन काट रहे हैं क्योंकि उनके जीविका कमानेवाले जेलोंमें बन्द हैं। यदि आप इस सूचीमें बलूचिस्तान और कबायली क्षेत्रकी बर्बरतापूर्ण बमबारीको भी शामिल कर लेते हैं तो सचमुच एक बहुत शोचनीय स्थिति दिखलाई देने लगती है। बलूचिस्तान और बाजोड़ आज भी पाकिस्तानकी सेनाकी सामरिक भूमियाँ बने हुए हैं। उन्होंने बहुत बड़े-बड़े क्षेत्रोंको घेर रखा है; उनकी सैनिक गतिविधियाँ वहाँ

उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही हैं। मेरे यहाँके शांत नागरिकोंके ऊपर आये दिन जो गोली चलती रहती है उसका ज़िक्र मैं नहीं करूँगा। आज इन पाशविक कार्योंकी बाह्य विश्वको जानकारीतक नहीं मिल पाती। हमारे समाचार-पत्रोंपर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है। हमारी संस्थाएँ ग़ैरकानूनी घोषित कर दी गयी हैं, हमारे केन्द्रोंका नाम-निशान मिटा दिया गया और हमको समस्त मानवीय अधिकारोंसे वंचित कर दिया गया। हमारी विरोधी अंग्रेज सरकारने हमें जो अधिकार दे रखे थे, वे भी हमसे छीन लिये गये। जब हम अपना मुँह खोलते हैं या जनतामें हिलते-मिलते हैं तो पाकिस्तानकी सरकार और वहाँके लोग हमको 'हिन्दू' कहने लगते हैं। मैंने पाकिस्तानकी जनताकी सेवा करनेकी बहुतेरी कोशिश की परंतु मुझे वह नहीं करने दी गयी। मेरा सम्बन्ध पिछले दिनोंमें कांग्रेससे रहा है इस-लिए वे लोग किसी भी बातके लिए मुझपर विश्वास नहीं करते। हम लोग एक महानाशकी ओर बढ़ते जा रहे हैं।

"विनोबाजी, मेरे प्रति यह सब व्यवहार उस समय किया गया है, जब कि मैंने पाकिस्तानके खिलाफ़ एक उँगली भी नहीं उठायी है और न इस सरकारके विरोधमें कोई आन्दोलन, अभियान या कार्य किया है, यद्यपि वह इससे कहीं अधिककी पात्र है। मैं यह नहीं समझ पा रहा हूँ कि इस समय मुझको क्या करना चाहिए। कृपया इस स्थितिपर विचार कीजिए और मुझको अपनी सलाह दीजिए। आपकी सलाह निश्चित ही संसारभरमें मेरे लिए सबसे अधिक क़ीमती होगी। क्या मैं अपने यहाँके लोगोंको इस दशामें छोड़ दूँ? यह तो सम्भव नहीं है लेकिन उनके लिए कुछ भी कर सकना मेरे लिये सम्भव भी नहीं रखा गया है।

"इस समय भारतमें मेरे साथी लोग सरकार बनाये हुए हैं। वे लोग मेरी कठिनाइयोंको अनुभव कर सकनेमें असमर्थ हैं क्योंकि उनका अपना एक वर्ग बन गया है। वे इसमें कोई बुराई नहीं देखते। उनके लिए अब मैं एक अलग ही दुनियाका आदमी बन गया हूँ। यद्यपि उनके प्रति विश्वासी रहनेके कारण और उनके साथ अच्छे सम्बन्ध रखनेके कारण ही मेरी और मेरे यहाँके लोगोंकी ऐसी दुर्दशा हुई है। मैं नहीं जानता कि उनकी अन्तरात्मा क्या कहती है। यदि उनके स्थानपर मैं होता तो मानवताके नामपर ही, उनको न्याय दिलानेके लिए अन्य पथ ग्रहण किया होता। कष्ट देनेके लिए क्षमा करें।"

जुलाई सन् १९६५ में 'हेल्सिन्की पीस क़ॉन्फ्रेन्ससे वापस लौटते हुए भारतीय प्रतिनिधि-मण्डलने काबुलमें खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँको बुलाया। इस प्रतिनिधि-

मण्डलमें लगभग अस्सी सदस्य थे। उनमें कई संसद-सदस्य, सामाजिक कार्यकर्त्ता तथा कांग्रेस-जन थे। राज्यसभाके सदस्य अकबर अलीने अपने एक भाषणमें उन लोगोंका परिचय देनेके बाद कहा कि आपने (खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने) भारतके स्वाधीनता संग्राममें अपना जो महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है उसके लिए आपको सब लोग स्मरण करते हैं और अपनेको आपका आभारी अनुभव करते हैं। महात्मा गांधी और पं० जवाहरलाल नेहरूने हम लोगोंको जो पथ दिखलाया है, उसपर हम लोग चलनेकी कोशिश कर रहे हैं। सारा भारत उनके लिए प्रेम और श्रद्धाकी जो भावनाएँ रखता है, उसमें भागीदार होकर, उसे लेकर ही वे यहाँ आये हैं।

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँने इसका उत्तर देते हुए कहा कि जिस प्रेम और स्नेहको आपने प्रकट किया, उसका मेरे निकट बहुत मूल्य है। उन्होंने इसके लिए प्रतिनिधि-मंडलको धन्यवाद भी दिया, परन्तु वे यह बिना कहे न रह सके कि, "भारतको मुक्त करनेके हेतु वे तथा उनके खुदाई खिदमतगार कोई भी त्याग करनेमें पीछे न हटे परन्तु आज़ादी मिल जानेके बाद भारतके लोग उनको भूल गये और उन्होंने उनको भेड़ियोंके आगे फेंक दिया। खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने पूछा कि यदि उनके साथ भी यही व्यवहार किया जाता तो क्या होता? भारतके लोग अपनी स्वाधीनताके फलोंका उपभोग कर रहे हैं लेकिन उस स्वतन्त्रताकी प्राप्तिके लिए उनके साथ जो कंधेसे कंधा भिड़ाकर लड़े थे, उनको उस स्वाधीनतासे वंचित कर दिया गया है। उनके ऊपर दमन और अत्याचार किये गये हैं। उन्होंने कहा, लेकिन जैसी कि एक पुरानी कहावत है, यदि सवेरेका भूला हुआ शामतक घर लौट आये तो वह भूला हुआ नहीं, बल्कि देरमें घर लौटा हुआ कहलाता है। क्या वे भारतसे और कांग्रेसके अपने साथियोंसे यही अपेक्षा कर सकते हैं?"

जुलाईके अन्तिम सप्ताहमें श्री विनोबा भावेके आदेशसे श्री प्यारेलाल, खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँसे मिलने तथा उनको अपनी सहानुभूति और स्नेहपूर्ण आदर देने काबुल गये। श्री प्यारेलालके ब्यौरेसे खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँके विचारों और उनके कार्योंपर एक प्रकाश पड़ता है:

"मैं शामके समय 'दार-उल-अमन' पहुँचा जहाँ कि बादशाह खाँ राज्यके अतिथिके रूपमें ठहरे हुए थे। उनको सरकारने कई कमरोंका, प्रत्येक आधुनिक सुविधासे युक्त एक सुन्दर बँगला दे रखा है। वहाँ कुछ नौकर तथा एक मोटरकारके साथ उसका ड्राइवर भी रख दिया गया है।

"जिस समय मैं वहाँ पहुँचा उस समय वे अपने उस बँगलेके सामनेके लॉन-में कुर्सी डाले बैठे थे और कुछ मुलाक़ाती लोग उनको घेरे हुए थे। उनका सिर, जिसके सब बाल सफेद हो चुके हैं, खुला था। वे, पुराने ढंगकी ढीली-ढाली हल्के नीले रंगमें रँगी हुई कमीज और पाजामा पहने हुए थे और उनके पाँवोंमें चप्पलें थीं। जब उनके मिलनेवाले चले गये तब हम लोग भीतर आ गये और रेडियोकी खबरें सुनने लगे। इसके पश्चात् हमने भोजन किया। भोजन काफ़ी सादा था। अफ़ग़ानोंके आतिथ्यके अनुसार उनके लिए रोज महँगा खाना तैयार किया जाता है लेकिन वे उसे स्वीकार नहीं करते क्योंकि वे राजकीय कोषपर एक भार नहीं बनना चाहते। ब्यालू कर चुकनेके बाद हम लोग बीती हुई स्मृतियोंको ताज़ा करते हुए लगभग एक घंटा टहलते रहे।

"पचहत्तर वर्षकी आयुके होते हुए भी मुझे उनका स्वास्थ्य वास्तवमें असाधारण रूपसे अच्छा जान पड़ा। चलते समय उनके डग स्थिर, सधे हुए पड़ते हैं। उनकी बोलनेकी, देखनेकी और सुननेकी शक्ति अभी क्षीण नहीं हुई है और स्मरण-शक्ति तो बहुत तीव्र है। उनके मुखपर एक गहन पीड़ाने अपने चिह्न छोड़ दिये हैं परन्तु उनके नेत्रोंमें एक चमक है, साथ ही एक गहरी करुणा है। एक कृपामय वायुमण्डल उनको सदैव अपनेमें घेरे रहता है। भारतके विभाजनके परिणामस्वरूप उनको तथा उनके यहाँके लोगोंको अनेक कष्ट सहन करने पड़े। हम लोगोंकी ओरसे भी उनके प्रति विभाजनके पश्चात् एक उपेक्षा बरती गयी फिर भी उनके स्वभावमें द्वेष या कटुताकी जो अनुपस्थिति रही वह उनकी एक विरल विशिष्टता है। जिस रास्तेको उन्हें पार करना पड़ा उससे उनके मित्र, कांग्रेसके उनके सहयोगी तथा भारतकी जनता अप्रभावित रही फिर भी उनके मनमें इन लोगोंके प्रति प्रेम और आदर बना रहा। यह उनकी अपार विशाल-हृदयताका ही द्योतक है।

"जबसे बादशाह ख़ाँ अफ़ग़ानिस्तानमें आये हैं तभीसे पाकिस्तानी राजदूत उनको भाँति-भाँतिके आश्वासन और वचनोंका लालच देकर वापस पाकिस्तान ले जानेकी कोशिश कर रहा है। लेकिन वे कहते हैं कि वे अब उन लोगोंकी सारी चालबाज़ियोंको समझ चुके हैं और उनके फंदेमें फँसनेवाले नहीं हैं। वे अब वापस पाकिस्तान नहीं जायँगे। उनको यह भली भाँति भरोसा हो चुका है कि वहाँ केवल जेलमें मृत्यु देरसे उनकी प्रतीक्षा कर रही है।

"ऐसा जान पड़ता है कि जेलमें उनके साथ जो व्यवहार किया गया है उससे उनकी शारीरिक दशाको एक स्थायी क्षति पहुँची है। उनका हृदय दुर्बल

हो गया है। उनकी शिराओंमें समुचित रूपसे ऊपरसे नीचे रक्तका संचार नहीं हो पाता। इसका परिणाम यह हुआ है कि अक्सर उनको अपनी टाँगोंमें चेतना-शून्यता-सी अनुभव होने लगती है। उनकी भूख कम हो गयी है और रातमें उनको नींद भी बहुत कम आती है। उन दिनों चेकोस्लोवाकियाका एक चिकित्सक उनके स्वास्थ्यकी देखभाल करता था। जिन दिनों मैं वहाँ था, उन दिनों उनको जाँच और इलाजके लिए दो बार अस्पताल जाना पड़ा। डाक्टरने उनको टाँगोंकी मालिश करानेकी राय दी।

"बादशाह ख़ाँ बहुत तड़के साढ़े चार बजे ही उठ बैठते हैं। वे सबेरे छः बजे हल्की चाय लेते हैं और साढ़े सात बजे नाश्ता करते हैं। उनके नाश्तेमें चाय, अंडे और डबलरोटीके दो-एक सिके हुए टुकड़े रहते हैं। उनके मध्याह्नके भोजनमें एक तश्तरी उबली हुई सब्जी, नान (रोटी), थोड़ा-सा दही और फल रहते हैं। शामका भोजन भी लगभग यही रहता है। सोनेसे पहले वे एक प्याला दूध लेते हैं। वे प्रतिदिन सुबह और शाम नियमित रूपसे टहलने जाते हैं। सबेरे नौ बजेसे दोपहरतक उनके मिलनेवालोंका ताँता लगा रहता है। साढ़े तीन बजे-से यही क्रम पुनः चालू हो जाता है। इन मिलने-जुलनेवालोंमें शासनके सदस्य, विद्यार्थी, कबीलोंके सरदार और धार्मिक पुरुष रहते हैं।

"कभी-कभी वे अपने मित्रों, सहकर्मियों तथा स्थानीय महत्त्वपूर्ण व्यक्तियोंके साथ बाहर भी भोजन किया करते हैं। इन दावतोंका पख्तून समाजमें बहुत कुछ वैसा ही स्थान है जैसा कि हमारे यहाँ सार्वजनिक सभाओंका। इनमें परिवारके सदस्य और अतिथि आदि भी सम्मिलित होते हैं और उनमें शरीक होनेवालोंकी संख्या एक दर्जनसे कई बीसीतक पहुँच जाती है। इन भोजोंमें बाजोंके ऊपर देशभक्तिपूर्ण गीत गाये जाते हैं और समसामयिक राजनीति, कबायलियोंकी समस्याएँ, सामजिक सुधार या कोई नया छिड़ा आन्दोलन इन लोगोंकी चर्चाके विषय होते हैं। अंतमें जब सब लोग चले जाते हैं तब पर्दानशीन औरतें बादशाह ख़ाँकी 'ज़ियारत' करने आती हैं। बादशाह ख़ाँकी जिस दावतमें मैं गया था, उसका मेज़बान एक अफ़रीदी सरदार था, जिसके नीचे ६०,००० सशस्त्र व्यक्ति थे।

"जब मैं वहाँ था, तब बादशाह ख़ाँने उससे इस बातको कई बार दोहराया कि यदि उन्होंने केवल पाकिस्तानकी योजनाको स्वीकार कर लिया होता तो पख्तूनोंको पख्तूनिस्तान या और कुछ मिल सकता था। विभाजनसे पहले, विभाजनके समय और विभाजनके बाद अंग्रेज सरकार, मि० जिना और पाकिस्तान

सरकारके सदस्योंने, जिनमें लियाक़त अली, गुलाम मुहम्मद और इस्कंदर मिर्ज़ा भी थे, वारी-वारीसे उनके आगे प्रलोभनोंसे भरे हुए प्रस्ताव रखे और यह चाहा कि बादशाह ख़ाँ राष्ट्रीयताके सम्बन्धमें अपनी प्रिय धारणाओंसे समझौता कर लें। वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेससे अपने सम्बन्ध तोड़ लें और मुस्लिम लीगसे हाथ मिला लें। लेकिन उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया। विभाजनके समय गांधीजीने उनसे कहा था कि यदि उन लोगोंके ऊपर दमन किया जायगा तो भारत उनकी सहायताके लिए निश्चित ही आगे आयेगा। यह वचन पूरा नहीं हुआ। यदि गांधीजी जीवित रहते तो उन्होंने ऐसा कभी न होने दिया होता। भारत इसके लिए उन लोगोंका और गांधीजीका ऋणी है और इसके लिए उसे प्रायश्चित्त करना चाहिए।

"खुदाई खिदमतगारोंने जो उत्पीड़न और दमन सहन किये हैं, उनकी खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँके पास एक लम्बी और कड़वी कहानी है। पख़्तूनोंको उनके स्वतंत्र साहचर्य और वाक्-स्वातंत्र्यके अधिकारसे वंचित रखा गया। खुदाई खिदमतगारोंके आन्दोलनको ग़ैरकानूनी करार दे दिया गया। पश्तो भाषाको दबा दिया गया और उसके ऊपर ज़बरदस्ती उर्दू थोप दी गयी। उनको पख़्तून पत्र प्रकाशित करनेकी अनुमति नहीं दी गयी जब कि अंग्रेज लोग उनके उस पत्र, 'पख़्तून' पर प्रतिबन्ध लगानेका साहस नहीं कर सके। पठानोंको अपना किसी प्रकार का कोई प्रचार-कार्यकी भी इज़ाजत नहीं दी गयी। उनको कुचला गया, उनकी नैतिकताकी भावना नष्ट कर दी गयी और उनमें यत्नपूर्वक घूस-प्रलोभन, दमन और अफीम तथा चरसका प्रसार करके उनको भ्रष्ट कर दिया गया। यह सब पाकिस्तानकी सरकारके द्वारा हुआ। न केवल पख़्तून बल्कि सिन्ध, बलूचिस्तान और पूर्वी पाकिस्तानके लोगोंपर भी अत्याचार किया गया। वे लोग पाकिस्तानके जुएको घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं और उनके लिए पाकिस्तानी सरकारका अर्थ केवल पंजाबी मुसलमानोंका राज्य और उनके द्वारा शोषण है।"

मैंने उनसे पूछा कि उनकी तात्कालिक योजनाएँ क्या हैं? इसपर उन्होंने बतलाया कि वे अफ़गान सरकारकी स्वीकृति और सहयोगसे पुनः खुदाई खिदमतगार-आन्दोलन प्रारम्भ करना चाहते हैं।

मैंने उनसे पूछा कि क्या उनको इस बातका निश्चय है कि अफ़ग़ान सरकारकी पख़्तूनिस्तानकी परिकल्पना वही है जो कि स्वयं उनकी है या वे लोग केवल डूरण्ड रेखामें एक संशोधन करना चाहते हैं? इसपर उन्होंने इस तथ्यकी ओर संकेत किया कि पठानोंने ही वर्तमान शासकके पिता नादिर शाहको उनकी

गद्दी दिलायी थी। यह तो आपसमें एक-दूसरेको उपकृत करनेका प्रश्न है। 'जिस समय वे विपत्तिमें थे उस समय हम उनकी सहायता करनेके लिए गये थे। आज जब हम मुसीबतमें हैं तब उनसे यह अपेक्षा करते हैं कि वे हमारी सहायता करने के लिए आयें।'

"मैंने उनसे कहा कि आपने पृथ्वीके सबसे भयानक योद्धाओंको अहिंसाका अतुलनीय सैनिक बना दिया है और इस दिशामें एक उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की है। जिस प्रणालीसे आपने यह कार्य किया उसका रहस्य क्या है? इसके उत्तरमें उन्होंने कहा कि यह कार्य केवल व्यक्तिगत सम्पर्कसे दी गयी सीधी शिक्षाके कारण सम्भव हो सका है। मैंने अपना अधिकांश समय गाँवोंमें, वहाँके लोगोंके घरपर, उनके बीचमें रहकर गुज़ारा है। मैंने उनको दैनिक जीवनकी प्रारम्भिक बातें बतलायीं: 'स्वच्छ कैसे रहा जाय, आप किस प्रकार स्वस्थ रह सकते हैं, आप एक दूसरेके साथ शांतिपूर्ण ढंगसे कैसे रह सकते हैं और कुरीतियों तथा रूढ़ियोंको कैसे मिटा सकते हैं आदि। हमने खुदाई खिदमतगारोंसे कहा कि वे केवल ईश्वरके प्राणियोंकी सेवा करके ही ईश्वरकी सेवा कर सकते हैं।'

"आपको अपने वर्तमान आन्दोलनमें किन कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा?" मैंने पूछा। उन्होंने कहा कि कुछ स्वार्थी तत्त्व लोकतंत्रसे भय खाते थे, इसलिए मुझसे भी भय खाते थे। स्वार्थी तत्त्वों द्वारा यह भय कुछ समयतक अपना काम करता रहा। लेकिन उनमें भी बड़ी तेजीसे विश्वास लौटने लगा। हम खान लोगोंसे कहते, 'हम लोग यह नहीं चाहते कि आप खान न रहें लेकिन और लोगोंको खान बननेमें मदद देनी चाहिए। क्या आप इससे डरते हैं?' 'निश्चित ही नहीं।' उनका उत्तर होता।

"हमारे साथ अत्यधिक लोग हैं।" उन्होंने आगे कहा, "आपने देखा होगा कि जब मैं हेरातमें अपने दौरेपर गया तब घरोंकी छतोंपर लड़के, लड़कियाँ, पुरुष और स्त्रियाँ लदे हुए थे, यहाँतक कि कुछ लोग पेड़ोंपर भी चढ़े थे। जब लोग मेरे पास आये तब मैंने उनसे कहा, 'आप मेरा 'दीदार' करनेके लिए, मेरे हाथ का चुम्बन लेनेके लिए और मुझे 'शुकराना' देनेके लिए यहाँ आये हैं क्योंकि आपको यह बतलाया गया है कि इससे आपको 'सवाब' (पुण्य) मिलेगा। लेकिन यह एक मिथ्या उपदेश है और यह उन लोगोंके द्वारा दिया गया है जो कि अपने व्यक्तिगत लाभके लिए आपकी इस श्रद्धासे लाभ उठाना चाहते हैं। मैं इनमें आपसे कुछ नहीं चाहता। मैं केवल आपकी सेवा करना चाहता हूँ। मैं आपको खुदाई खिदमतगार बननेकी शिक्षा देना चाहता हूँ। ईश्वरके प्राणियोंकी सेवा

किये बिना ईश्वरकी कभी सेवा नहीं की जा सकती।"

"मैंने उनसे यह कहना चाहा कि जो आन्दोलन उन्होंने छेड़ा है उसको क्या वैसा ही जन-प्रिय उत्तर मिल रहा है जैसा कि पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेशमें खुदाई खिदमतगार आन्दोलनको मिला था या इसमें कुछ अन्तर है ?" उन्होंने कहा कि इन दोनोंमें अन्तर है। इस समय उनको अपेक्षाकृत अधिक अनुकूल उत्तर मिल रहा है। पहले आन्दोलनमें लोग ब्रिटिश शासन द्वारा भ्रष्ट कर दिये गये थे और उनकी नैतिकता नष्ट कर दी गयी थी। उस समय उनकी मनोवृत्ति एक गुलामकी मनोवृत्ति थी। जिन लोगोंमें वे इस समय कार्य कर रहे हैं वे शुद्ध हैं और यदि आपेक्षिकताके साथ कहा जाय तो वे लोग भ्रष्ट नहीं हैं। उन लोगोंका पालन स्वाधीनतामें हुआ है। बादशाह खाँने कहा कि इससे उनका कार्य अपेक्षाकृत सरल हो गया है। लोग अब अपनी स्वतःकी इच्छासे उनको अनुकूल उत्तर दे रहे हैं।

"मैंने उनसे अगला प्रश्न यह पूछा कि इन लोगोंको अनुशासित करना क्या आपको एक धीमी तथा कठिन प्रक्रिया नहीं जान पड़ती ?" उन्होंने कहा कि लड़ाके होनेके कारण वे पहलेसे ही अनुशासित होते हैं। वे केवल उस अनुशासनको एक अहिंसात्मक मोड़ दे देते हैं।

"मेरे मनमें एक भय छिपा हुआ था, उसको व्यक्त करते हुए मैंने उनसे पूछा, 'यदि भारत उनके निमित्तको स्वीकार कर लेता है तो इससे क्या उनको व्यक्तिगत रूपसे कोई हानि नहीं पहुँचेगी ? उनके और पाकिस्तानकी सरकारके बीच यदि कोई समझौतेका मौक़ा भी आया तो क्या इससे उसे क्षति न होगी ?" उन्होंने उत्तर दिया कि जहाँतक व्यक्तिगत रूपसे उनका सम्बन्ध है वे अपनी जगह अटल हैं और जहाँतक पाकिस्तानके साथ सन्धिकी बात है, उसकी सम्भावना नहींके बराबर है। उन्होंने कहा कि मैंने इसका प्रत्येक उपाय करके देख लिया है और विवश होकर मुझको यह निष्कर्ष निकालना पड़ रहा है कि पाकिस्तानसे सम्बन्ध सुधर नहीं सकते। उदाहरणके रूपमें उन्होंने कहा कि यदि भारत पाकिस्तानको एक नहीं बल्कि आधा दर्जन कश्मीर दे दे तो भी वह यह देखेगा कि पाकिस्तानके साथ उसकी सन्धि स्थापित नहीं हो सकती। उसके प्रति अब उन्हें कोई विश्वास नहीं रह गया है। पाकिस्तानके साथ कैसे भी सम्बन्ध रहें, इस बारेमें उनकी अब कोई इच्छा नहीं है। वे करेंगे या मरेंगे—या तो वे पख्तूनिस्तान लेंगे या लड़ते हुए मर जायँगे।

"क्या जनता तैयार है ? क्या संभाव्य परिणाम आशाजनक हो सकते हैं ?"

मैंने पूछा। उन्होंने इसके उत्तरमें कहा, "केवल तैयार ही नहीं बल्कि वे इसके लिए अधीर हैं। ब्रिटिश शासन-कालमें मुझे जनताका इतना अधिक और इतना स्वेच्छिक सहयोग कभी नहीं मिला।" मैंने उनसे पूछा कि "क्या रचनात्मक कार्य करनेवाले पुराने कार्यकर्त्ताओंमेंसे कुछ, जिनको कि वे पहलेसे जानते हैं, उनके कार्यमें सहायक हो सकेंगे ?" इसके उत्तरमें उन्होंने कहा, "सचमुच उन लोगोंसे मुझको अत्यधिक सहायता मिलेगी।" साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि उनके पास अब अधिक समय नहीं है। उसके पास इस समय जो भी साधन तैयार हैं, उन्हींको लेकर उन्हें कार्य करना है। यदि वे इस समय हिचकिचा जाते हैं तो पठान उनके हाथसे बाहर हो सकते हैं और निराश होकर वे कुछ दुस्साहसपूर्ण कार्य भी कर सकते हैं। इस दुःखान्त प्रकरणको रोकनेके लिए उनको सोच-विचार कर एक जोखिम लेनी ही चाहिए। वे अपने यहाँके लोगोंको इस बातकी कभी अनुमति न देंगे कि वे कुचले जायँ, उनकी नैतिकता नष्ट की जाय या सदाके लिए वे एक घृणित पराधीनताके आगे आत्म-समर्पण कर दें। वे एक गुलामीसे दूसरी गुलामी बदलनेके लिए अंग्रेजोंसे नहीं लड़े हैं।

"मैंने बादशाह खाँसे पूछा कि 'क्या वे भारत आयेंगे ?' उन्होंने इसके उत्तरमें कहा, 'अवश्य, लेकिन वहाँके दृश्य देखनेके लिए नहीं, जिस निमित्तको लेकर वे जीवित हैं, उनके भारत आनेसे यदि वह आगे बढ़ता है; यदि भारत गांधीजी-की प्रतिज्ञाको स्वीकार करके पख्तूनोंके मसलेको अपना निजका मामला मान लेता है तो वे अवश्य भारत जायँगे।' मैंने उनसे अगला प्रश्न किया कि क्या वे भारतके जनमतको अपने पक्षमें करनेके लिए भारत-यात्राकी योजना नहीं बनायेंगे ? उन्होंने इसका उत्तर दिया कि यह भारत सरकारके दृष्टिकोणपर निर्भर है। मेरा उनसे अंतिम प्रश्न यह था कि क्या वे खुदाई खिदमतगार आन्दोलनका भारतमें विस्तार नहीं करेंगे, जैसा कि एक बार गांधीजीने अपना विचार प्रकट किया था ? मेरे इस प्रश्नके उत्तरमें उन्होंने कहा कि यदि भारतकी जनता और भारत-सरकार यह चाहेगी तो निश्चित ही वे इसपर विचार करेंगे। लेकिन यह तभी हो सकेगा जब कि उनका आन्दोलन पख्तूनोंके बीच अपनी गहरी जड़ें जमा लेगा।

"बादशाह खाँ यह अनुभव करते हैं कि यदि भारत और अफ़गानिस्तान उनको अपना पूर्ण सहयोग देते हैं तो पख्तूनिस्तानका प्रश्न बिना बाहरी सहायता के या बिना लड़ाईके ही सुलझ जायगा। मैंने उनसे पूछा कि 'जो लोग इससे सम्बन्धित हैं, उनके ऊपर नैतिक, आर्थिक और कूटनीतिक दबाव डालकर भारत

ऐसा करनेमें समर्थ है। सम्मानकी दृष्टिसे भारत उस गम्भीर वचनसे बँधा हुआ है जो कि विभाजनके समय गांधीजीने उन्हें दिया था। उन्होंने कहा था कि जब उन लोगोंके आगे कोई महत्त्वपूर्ण मसला आकर खड़ा हो जायगा तब भारत उनके लिए जो कुछ भी कर सकेगा, अवश्य करेगा।'

"जिस समय मैंने बादशाह खाँसे विदा ली, उस समय मेरे मनमें सबसे ऊपर ईश्वरके इस पुरुषकी अपराजेय आत्माके प्रति एक आश्चर्य और विस्मयकी भावना थी। इस व्यक्तिने उन वस्तुओंको, जिन्हें कि उसने अपनी ज़िन्दगी दी, जेलके सींखचोंके पीछेसे, रक्त टपकते हुए हृदयसे टूटते हुए देखा और अब, जब कि उसकी जीवन-संध्या घिर आयी है, वह घिसे हुए औज़ारोंसे, अत्यधिक विरोधोंके बीचमें बिना रुके उन्हें फिरसे बना रहा है।"

पख़्तूनोंको शिकायत है कि वे कभी पाकिस्तानमें शामिल नहीं हुए बल्कि उन्हें उसमें ज़बरदस्ती घुसा दिया गया। सन् १९४६ में लण्डीकोतलमें एक सभा को सम्बोधित करते हुए लार्ड वेवलने उनको यह वचन दिया था : "हिज़ मेजेस्टी की सरकारकी ओरसे मैं आपको यह आश्वासन देता हूँ कि भारतमें होनेवाले नये राजनीतिक परिवर्तन आपके स्वाधीनताके अधिकारके ऊपर प्रभाव नहीं डालेंगे।" किसी पख़्तून जिरगाने किसी संविधान सभामें कोई भाग नहीं लिया और न उसने राज्य प्रारम्भ होते समय उसकी किसी क्रिया-विधिपर हस्ताक्षर ही किये। पख़्तून कबीलोंके किसी नेताने अपनी जनताकी ओरसे कार्य भी नहीं किया। उनको पाकिस्तान द्वारा अचानक झपट लिया गया। वे आत्म-समर्पण करनेको विवश हो जायँ इसलिए उनपर लगातार बमबारी भी की गयी। लेकिन वे झुकेंगे नहीं।

३१ अगस्त सन् १९६५ को पख़्तूनिस्तान दिवसका उद्घाटन करते हुए काबुलके पख़्तूनिस्तान स्क्वायरमें मेयर श्री मुहम्मद असगरने कहा कि अफ़गान सरकार प्रति वर्ष पख़्तूनिस्तान दिवस मनाती है। जबतक उसके पख़्तून बन्धुओं-को स्वतंत्रता नहीं मिल जाती है तबतक वह उनको अपनी मदद देती रहेगी। इस अवसरपर एकत्रित विशाल जन-समुदायमें अफ़गान मंत्रिमण्डलके सब सदस्य तथा ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ भी थे। भाषणके पश्चात् नगरप्रमुखने पख़्तूनिस्तान का झण्डा फहराया। इसके पश्चात् समस्त जन-समूह गाज़ी स्टेडियम गया जहाँ कि अफ़गान झंडेके साथ, पख़्तूनिस्तानका झण्डा लहरा रहा था।

स्टेडियममें ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँका परिचय एशियाके एक महान नेताके रूपमें दिया गया जिसने कि साम्राज्यवाद और उपनिवेशवादके विरुद्ध संघर्ष

किया । पख्तूनोंके स्वातंत्र्य-संग्राममें निरन्तर सहायता देनेके लिए खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने अफ़गानिस्तानके शाह, अफ़गान सरकार और राष्ट्रको धन्यवाद दिया । ५०,००० श्रोताओंके विशाल जन-समुदायमें खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने अपने जोशीले भाषणमें कहा कि पख्तून मिलकर एक राष्ट्र बनाते हैं । उनके संघर्ष और बलिदानके कारण स्वाधीनता मिली, अंग्रेज भारतसे निकल गये और पाकिस्तानकी रचना हुई । उन्होंने कहा, "हम पाकिस्तानसे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखना चाहते हैं ।" उन्होंने पख्तूनोंको उनके अधिकारसे वंचित रखनेके लिए पाकिस्तान सरकारकी भर्त्सना की । इतना ही नहीं, उन्होंने पख्तूनोंको धनलोलुप बना देनेके लिए भी पाकिस्तान सरकारकी निन्दा की और उसपर यह आरोप लगाया कि वह उनको उनके बलूचिस्तान, वज़ीरिस्तान और कश्मीरके बन्धुओंसे लड़वा रही है ।

अपनी एक भावनापूर्ण अपीलमें उन्होंने पठानोंको सलाह दी कि अपने आपसी झगड़ोंको भूलकर एक हो जायँ ताकि पाकिस्तान उनको उनके अधिकार देनेके लिए विवश हो जाय । उन्होंने अपनी बातपर बल देते हुए कहा कि पाकिस्तान बड़े जोर-शोरसे यह प्रचार चला रहा है कि वह एक इस्लामी राष्ट्र है और अयूब खाँ एक पठान हैं । खान अब्दुल ग़फ्फ़ार खाँने यह माननेसे इनकार किया कि पाकिस्तान एक इस्लामी राष्ट्र है क्योंकि वह इस्लामके उसूलोंका पालन नहीं करता । इस्लामके सिद्धान्तके अनुसार तो एक भाई भी अपने भाईको उसके अधिकारसे वंचित नहीं कर सकता । "इस्लाम समता और समानाधिकारपर बल देता है । पख्तून केवल अपना घर बनानेकी माँग कर रहे हैं ।"

उन्होंने कहा, "अयूब खाँ मेरा आदर करते हैं और वे मुझे चाचा कहते हैं लेकिन वे पख्तूनिस्तानकी सुख-समृद्धिके आकांक्षी नहीं हैं । अयूब खाँ कैसे पठान हैं जब कि वे पठानोंको बरबाद कर देनेपर तुले हुए हैं ? पाकिस्तानमें पख्तूनोंके ऊपर विश्वास नहीं किया जाता । पठान सेनाधिकारी सेनामेंसे पदच्युत कर दिये जाते हैं और असैनिक पठान अधिकारियोंको उनके अपने क्षेत्रोंसे इतनी दूर फेंक दिया जाता है कि वे अपने यहाँके लोगोंसे किसी प्रकारका सम्पर्क न रख सकें । उनकी सम्पत्ति छीन ली गयी है और वे मामूली रिश्वतोंसे खरीद लिये जाते हैं। पाकिस्तानमें पंजाबी लोग सर्वोच्च पदोंपर आसीन हैं । पठानोंकी आर्थिक स्थिति बिगड़ चुकी है और वही दशा चलती जा रही है ।"

अंतमें उन्होंने कहा कि जबतक पठानोंका उद्देश्य पूरा नहीं हो जाता तब-तक वे संघर्ष करते रहेंगे । "पख्तून देश हमारी मातृभूमि है । एक बाहरी तत्त्वने

आकर हमारी माँका अपमान किया है; उसके घूँघटपर अपना पैर रखा है अब यह आपके ऊपर है कि आप इस पैरको हटा दें या अपनी माँको उसकी दयाके ऊपर छोड़ दें।"

खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँका पठानोंके लिए यह जीवन-संदेश है :

"मैंने ईश्वरको साक्षी करके यह शपथ ली है कि मैं अपने प्यारे देश और अपने समाजकी सेवा करूँगा। मेरी सर्वशक्तिमान् प्रभुसे यह प्रार्थना है कि इस प्रयासमें शहीद होऊँ। मेरे 'मिशन' में मेरा साथ दीजिए। आप दोनों हाथोंसे साहस बटोरिए और जबतक लक्ष्यकी प्राप्ति नहीं होती तबतक लड़ते रहिए। पैग़म्बर [मुहम्मद साहब] भी अकेले सफलता न प्राप्त कर सके। फिर भला मैं अकेला क्या कर सकता हूँ। किसी देश या समाजका भाग्य किसी एक व्यक्तिपर आश्रित नहीं होता बल्कि वह सब लोगोंकी सेवा और त्यागपर निर्भर होता है।"

व्यवस्थित ज़िलों [सेटिल्ड डिस्ट्रिक्ट्स] और कबायली क्षेत्रोंमें निवास करनेवाले पख्तूनोंके सम्बन्धमें बादशाह खाँने कहा :

"पख्तूनोंमें मेरे प्रति जो प्रेम है और उनमें जो देशभक्तिकी भावनाएँ हैं उनको मैं निधिकी भाँति संचय करता जाता हूँ और जीवनके अंतिम दिनोंतक करता रहूँगा। ब्रिटिश शासनने और वैसे ही पाकिस्तानकी सरकारने हमें कभी इस बातकी अनुमति नहीं दी कि हम एजेन्सियों और राज्योंमें बसनेवाले अपने प्यारे पड़ोसियोंसे हिलें-मिलें और उनकी मुसीबत और दुःखमें उनके साथ खड़े हों। ब्रिटिश सरकारकी और उसके बाद पाकिस्तानकी सरकारकी वास्तविक मंशा यह रही कि हम हमेशा छोटी-छोटी इकाइयोंमें और अलग-अलग कबीलोंमें बँटे रहें। वह हमें एक संयुक्त बन्धुत्व स्थापित करनेसे रोकना चाहती है।

"पुराने ज़मानेमें अत्याचारियोंने हज़ारों मनुष्योंकी हत्याएँ की हैं। ब्रिटिश और पाकिस्तानी राजनीतिके परिणामस्वरूप लाखों पठान, जो कि एशियाका एक शक्तिशाली राष्ट्र बनाते और जिन्होंने मानवताके हेतु सेवा की होती, विभाजित हो गये और उजड़ गये। उनके राष्ट्रका नाम विश्वके नक्शेपरसे धीरे-धीरे खुरच डाला गया और फिर पोंछ दिया गया। आज मैं इस अन्यायके विरोधमें ही धर्म-युद्ध कर रहा हूँ। इन भले पठानोंने कौनसे अपराध किये हैं कि इनका नाम इतिहासके पृष्ठोंपरसे मिटा दिया जाय और स्वार्थपरता द्वारा इनको कब्रमें धकेल दिया जाय?

"मैं चाहता हूँ कि बलूचिस्तानसे चित्रालतक पख्तूनोंके जो कबीले बँटे और बिखरे हुए हैं, उनको मैं एक समाजके, एक बन्धुत्वके सूत्रमें गूँथ दूँ ताकि वे अपने

कष्टों और दुःखोंमें एक-दूसरेके भागीदार हो सकें और मानवताकी सेवामें एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकें। हमारे विरोधी संसारकी दृष्टिमें हमें बुरे व्यक्तियों के रूपमें चित्रित करते रहे हैं। हमारे द्वार बन्द रहे हैं और किसीको हमारे पास आनेकी इजाज़त नहीं रही है। हमको संसारके आगे असभ्य, जंगली कबीलोंके झुण्डके रूपमें प्रस्तुत किया जाता रहा है। इस विद्वेषपूर्ण प्रचारसे प्रत्येक मानव-हृदयपर एक चोट लगती है। हमारे कबायली बन्धुओंके साहसको जंगलीपन और उनकी स्वाधीनताकी उत्कट इच्छाको कानूनको स्वीकार न करना बतलाया गया है। पठानका अतिथि-सत्कार एक कहावत बन गया है लेकिन उनके उसी आतिथ्यके लिए यह कहा गया कि पठान भीख माँगकर, उधार लेकर या लूटमार करके अतिथिका सत्कार करते हैं जिसके बिना वे रह नहीं सकते। सदियोंतकके इन अन्धकारपूर्ण कुदिनोंमें, जो कि मुग़ल सल्तनसे लेकर ब्रिटिश शासनकालतक और पाकिस्तानी हुकूमततक चले हैं, ये असहाय लोग सदैव अत्याचारके नीचे पिसते रहे हैं। इनके भाग्यमें यही रहा है कि ये पहाड़ियोंके किनारे पड़े हुए शुष्क भू-भागमें किसी तरह जीवन काटें। इन बंजर क्षेत्रोंमें जीवन-यापन एक कठिन समस्या है। अनुर्वर खेतोंकी उपज उनके लिए पर्याप्त नहीं हो पाती। परिवहन, संचार और समुचित साधनोंके अभावमें व्यापारसे कोई फल नहीं निकलता। कलात्मक प्रतिभाके विकास और व्यवसायकी रुझानके लिए इन लोगोंको कभी कोई अवसर नहीं दिया गया। औद्योगिक विकासके लिए शान्तिपूर्ण अस्तित्वकी जो एक लम्बी अवधि अपेक्षित है, उसका उपभोग उन्होंने शायद ही कभी किया हो। उन्होंने सदियोंतक शान्तिको नहीं जाना। वे बार-बार बमबारी, युद्ध और नरसंहारसे ही विनष्ट होते रहे। उनका इलाक़ा लड़ाई-का एक क्षेत्र, साम्राज्यवादी शक्तियोंके लिए प्रशिक्षणका एक मैदान है। उनके यहाँ न विद्यालय हैं और न चिकित्सालय। अरक्षित, वन्य गुलबहारकी भाँति वे पहाड़ोंके किनारे खिलते हैं और मुरझाते हैं। उनको जीवनकी समस्त आवश्य-कताओंसे वंचित कर दिया गया है; उनके पास न रोटी है और न पानी; न कृषिके योग्य उपजाऊ खेत, न व्यापार-केन्द्र और न बाजार। मुझको आश्चर्य है कि उनकी ओरसे उदासीन संसार उनसे क्या अपेक्षा करता है! संसारको इन सुन्दर, स्वस्थ, तरुणाईसे भरे लड़के और लड़कियोंको मुक्त रूपसे अपना प्रेम और सहानुभूति देनी चाहिए लेकिन बजाय इसके उनके ऊपर मनुष्य-भक्षी छोड़ दिये गये हैं जो उनके ऊपर चोट तो करते ही हैं, उनका अपमान भी करते हैं। यह मेरी एक प्रबल अभिलाषा है कि मैं इन भले, वीर, स्वाभिमानी, देशभक्त और

शौर्यसे पूर्ण पख़्तूनोंको विरोधियोंके अत्याचारसे बचाऊँ और इनके लिए एक ऐसे मुक्त संसारकी रचना करूँ जहाँ कि ये सुख, शान्ति और आरामसे रह सकें।

"पशुतुल्य मनुष्योंने जिनके घरोंको उजाड़ दिया हैं, मैं उनके खंडहरोंके ढेर-की मिट्टीको चूमना चाहता हूँ। मैं अपने हाथोंसे उनके खूनमें सने हुए कपड़ोंको धोना चाहता हूँ। मैं उनकी गलियोंको और उनकी मिट्टीकी सादी झोपड़ियोंको बुहारना चाहता हूँ। मैं मस्तक उठाये हुए, उनको अपने पैरोंपर खड़े हुए देखना चाहता हूँ और उसके बाद यह चुनौती फेंकना चाहता हूँ : मुझको इन लोगों जैसी और कोई शिष्ट, सज्जन और सभ्य जाति दिखला दो!"

ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ एक विश्वासी पुरुष हैं। विश्वास एक संघर्ष है। विश्वासी अन्ततक लड़ता है। उसके लिए हथियारकी जरूरत नहीं होती।

सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

(कुछ चुने हुए ग्रन्थ)

अली, आसफ :

रिपोर्ट ऑन दि नॉर्थ-वेस्ट प्राविन्स एण्ड बन्नू रेड्स, १९३८। वर्किंग कमेटी ऑव् दि इंडियन नेशनल कांग्रेस, दिल्ली ।

एण्ड्रूज़, सी० एफ० :

दि चैलेन्ज ऑव् दि नार्थ-वैस्ट फ्रंटियर, १९३७, जार्ज एलेन एण्ड अन्विन, लन्दन ।

केरो, औल्फ :

दि पठान्स, १९५८, मैकमिलन एण्ड कम्पनी, लन्दन ।

क़ैयूम अब्दुल :

गोल्ड एण्ड गन्स ऑव् दि पठान फ्रंटियर, १९४५, हिन्द किताब्स, बम्बई ।

ग़नी खाँ :

दि पठान्स, १९४७, दि नेशनल इन्फ़ार्मेशन एण्ड पब्लिकेशन्स, बम्बई ।

गैन्कोव्सी वाइ, वी., और गोर्डन-पोलोनस्काया :

ए हिस्ट्री ऑव् पाकिस्तान १९४७-५८, १९६४, नउका पब्लिशिंग हाउस, मास्को ।

डेवीस, सी० सी० :

प्रोब्लम ऑव् दि नार्थ-वेस्ट फ्रंटियर, कैम्ब्रिज यूनीवर्सिटी प्रेस, लन्दन ।

तेन्दुलकर, डी० जी० :

महात्मा ८ खण्ड, १९६३, पब्लिकेशन्स डिवीजन, दिल्ली ।

देसाई, महादेव :

टू सर्वेन्ट्स ऑव् दि गॉड, १९३५, हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, दिल्ली ।

पटेल वल्लभ भाई :

पेशावर इन्क्वायरी कमेटी १९३०, वर्किंग कमेटी ऑव् दि इंडियन नेशनल कांग्रेस, दिल्ली।

प्यारे लाल :

ए पिलग्रिम फॉर पीस १९५०, नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद।

दि लास्ट फेज़, १९६६, नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद।

थ्रोन टू दि वोल्वस्, १९६६, ईस्ट लाइट, बुक हाउस, कलकत्ता।

फूशे, ए० :

नोट्स ऑन दि एन्शिएन्ट ज्यॉग्रफी ऑव् गन्धार, १९१५, आरक्योलॉजिकल सर्वे ऑव् इंडिया।

वार्टन, सर विलियम्स :

इंडियाज़ नॉर्थ वैस्ट फ्रंटियर १९३९, जॉन मरे, लन्दन।

ब्राईट, जे० एस० :

फ्रंटियर एण्ड इट्स गांधी १९४४, एलाइड इंडियन पब्लिशर्स, लाहौर।

यूनुस, मोहम्मद :

फ्रंटियर स्पीक्स् १९४७, हिन्द किताब्स, वम्बई।

सेन गुप्ता, ज्योति :

इक्लिप्स ऑव् ईस्ट पाकिस्तान, रैनको, कलकत्ता।

स्पेन्स, जेम्स डब्ल्यू :

दि पठान वॉर्डर लैण्ड, १९६३, माउटन एण्ड कम्पनी, दि हेग।

दि वे ऑव् दि पठान्स, १९६२, रॉबर्ट हेल, लन्दन।

•

शब्दानुक्रमणिका